Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 01

02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 06/07

03. Referee Board 08

(Science / विज्ञान)

04. Antidiabetic And Triglyceride Activity By Ethanolic Extract Of *Coccinia Indica* Fruits In Streptozotocin Induced Diabetic Rats (V. K. Shakya) 10

05. Conservation Of Gharial In Ken Reserve Panna, India (Dr. Sunita Shakle) 14

06. Need Of An Applied Research For Management Of Green Water Ecosystem - An Overview (Dr. Pramod Pandit) 17

07. Study Of Ethnomedicinal Plants Used By Tribals Of Sehore District Of Madhya Pradesh (Dr. Dinisha Malviya) 21

08. Ethnobotanical Study Of Medicinal Plants Used By Banjara People In The Region Of District- Neemuch Madhya Pradesh (India) (Dr. H. K. Tugnawat, Anurag Titove) ... 26

09. Impact Of Fly Ash On Some Vegetable Crops (Glycine Max, Brassica Nigra And Zea Mays) (Dr. Nand Kishor Bhagat, Dr. S. P. Singh) 30

10. Mercury As A Toxicant (Ramesh Chand Meena) 34

11. Screening Of Phytochemicals In Different Extract Of Blackpepper (Keerti Samdariya, R. S. Nigam) 37

12. Impact On The Yamuna Water Quality Due To The Discharge Of Industrial And Domestic Effluents (Dr. Alka Yadav) 39

(Home Science / गृह विज्ञान)

13. घरेलू हिंसा एवं महिलायें (जयंती जोशी) 42

14. प्रभावशाली व्यक्तित्व के गुण एवं तकनीक 'व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में' (कृष्णा शर्मा) 44

15. जनजातीयों की जीवनशैली में हो रहे परिवर्तन का समाज पर प्रभाव(झाबुआ जिले की भील जनजाति के विशेष संदर्भ में) (डॉ. नंदिनी रेखड़े, मंजू सोनगरा) 46

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

16. The Impact Of Liberalisation In Life Insurance Industry Of India (Vikas Jain, Dr. Ramesh Mangal) 48

17. A Study Of Non Performing Assets With Special Reference To Management Of ICICI Bank (Prof. Pooja Yadav) 52

18. Impact Of Celebrity Endorsement On Sale Of A Product (Dr. Tabassum Patel, Minaz Khan) 56

19. Recent Developments In Merchant Banking And Challenges In India 59
(Priyanka Pamecha, Dr. L. N. Sharma)

20. Problems Faced By Micro, Small And Medium Enterprises In India (Shilpa Jain) 63

21. राजस्थान सरकार के राजस्व का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. एल. एन. शर्मा) 65

22. बिलासपुर शहर के विभिन्न व्यवसासियों के व्यवसाय पर विज्ञापन का प्रभाव (राकेश कुमार गुप्ता, डॉ. के. के. शर्मा) 71

23. मुख्यमंत्री भावान्तर योजना एवम् कृषि विकास (डॉ. डी. सी. कुमरावत) 75

24. आदिवासी महिलाओं के उत्थान में दीनदयाल स्वरोजगार योजना की भूमिका – झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में 78
(दीपक कुमार ठाकुर, डॉ. डी. के. सिंघल)

25. सार्वजनिक एवं निजी बैंकों में गैर निष्पादन सम्पत्तियों की समस्या का तुलनात्मक अध्ययन (एस.बी.आई तथा 80
आईसीआईसीआई बैंक के विशेष संदर्भ में) (डॉ. अभय पाठक, डॉ. हरिओम अग्रवाल)

26. म.प्र. के पश्चिमी निमाड़ क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति के आर्थिक सामाजिक उन्नयन में बैंकिंग सुविधाओं का विकास 82
(डॉ. एन. एल. गुप्ता, रणजीत सिंह रावत)

27. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी अधिनियम का ग्रामीणों के आर्थिक एंव सामाजिक विकास में योगदान 84
(डॉ. राकेश महाराज, तृप्ति आगस्त्य)

(Economics / अर्थशास्त्र)

28. Impact Of Foreign Direct Investment (FDI) On Indian Tourism 86
(Nisar Ahamad Vani, Dr. Pawan Kumar Srivastava)

29. A Comprehensive Study Of GST In India 89
(Mohammad Latief Khan, Dr. Pawan Kumar Srivastava)

30. मध्यप्रदेश राज्य के किसानों के लिए मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना का प्रभाव – एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 92
(डॉ. रिखबचन्द जैन)

31. बेरोजगारी एवं निर्धनता की समकालीन समस्या का गाँधीवादी विश्लेषण एवं समाधान (सुनील कुमार त्रिपाठी) 96

32. किसानों की समृद्धि के लिए बनायी गयी योजनाओं का अध्ययन (डॉ. शक्ति जैन) 100

33. लघु एवं कुटीर उद्योग (सीमा नागर) 103

34. शिक्षा, रोजगार के अवसर और नैतिक मूल्य (डॉ. अमोल मांजरेकर) 105

35. गरीबी मुक्त भारत (डॉ. विमला जैन) 106

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

36. भीम राव अंबेडकर, संविधान और नारी (वनिता रानी) 107

37. भारतीय समाज एवं नारी (डॉ. गरिमा पारीक) 110

38. पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का एकात्म मानववाद का सिद्धान्त (डॉ. वर्चसा सैनी) 113

39. पंडित दीनदयाल उपाध्याय के राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद संबंधी विचारों का अध्ययन (डॉ. पी. के. चतुर्वेदी) 115

40. भारीया जनजाति के राजनीतिक संगठन में आधुनिक ग्राम पंचायतों के प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 117
(पातालकोट के विशेष संदर्भ में) (कंचन ठाकुर)

41. भारतीय लोकतन्त्र और चुनाव (डॉ. गरिमा पारीक) 119

(History / इतिहास)

42. वैदिक काल में नारी सशक्तिकरण (डॉ. भावना तिवारी) 121

43. रीवा जिलें की प्रमुख बावलियों का ऐतिहासिक महत्व (डॉ. मो. स्वालकीन खान) 124

44. संस्कृति का स्वरूप (डॉ. सुनीता शुक्ला) 127

45. गुप्तकालीन स्त्रियों के वस्त्राभूषणों का अध्ययन (डॉ. ममता खोईयां) 129

46. भारिया जनजाति की धार्मिक समस्यायें एवं निराकरण (पातालकोट घाटी के संदर्भ में) (डॉ. अमित कुमार सातनकर) 131

(Geography / भूगोल)

47. मण्डला जिले की बैगा जनजातीय के सामाजिक एवं शैक्षिक विकास में निरंतरता एवं परिवर्तन का अध्ययन 134
(एकता मथनियाँ, डॉ. ए. एल. महोबिया)

48. भूमि उपयोग परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव (जबलपुर जिले के विशेष संदर्भ में) (श्रुति तिवारी, डॉ. सुमनलता पुरोहित) 138

49. कटनी जिले में पर्यटन की संभावनाओं का एक अध्ययन (डॉ. सुकचैन सिंह धुर्वे) 141

50. सरदार सरोवर बांध – मध्यप्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र (मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में) (डॉ. एस. एस. बघेल) 144

(Sociology / समाजशास्त्र)

51. An Honour Killing - A Curse To Indian Society (Prof. Akshata Amitkumar Gawades) 147

52. महाविद्यालय में छात्र/छात्राओं में धार्मिक वृत्तियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन (आभा सिंघल) 151

53. कामकाजी महिलाओं के प्रति परिवार के वयोवृद्ध की अपेक्षाओं के विभिन्न आयाम (राकेश शिंदे) 155

54. साइबर अपराध (एक सामाजिक चुनौती) (डॉ. रश्मि दुबे) 158

55. छत्तीसगढ़ की जनजातीय परम्पराएं एवं धार्मिक विश्वास (डॉ. एस. एन. लदेर) 160

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

56. Dalit Voices In Indian English Fiction (Dr. Rajkumari Sudhir) 162

57. K.A. Porter's Is Observation That "We Are Born To Know Death' In Pale Horse, Pale Rider 166
(Dr. Anita Tripathi)

58. Cultural Reorientation Of The Nursery Rhymes - The Practical Approach 169
(Dr. Mehzbeen Sadriwala, Ravi Teja Mandapaka)

59. Fresh Perspectives On Post Modern Society - A Thematic Study Of The Plays Of 172
Mahesh Dattani (Dr. Poonam Matkar, Dr. Vikas Jaoolkar)

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

60. आधुनिक काल की कविताओं में राष्ट्रबोध (डॉ. अमित शुक्ल) 174
61. घनानंद– काव्य की सहज प्रेम–व्यंजना, स्वच्छंदता तथा उदात्तता – एक विवेचन (डॉ. आईशा खान) 177
62. राष्ट्रकवि पं. सोहन लाल द्विवेदी के काव्य में राष्ट्रवाद के विविध रूप (डॉ. इला द्विवेदी) 180
63. हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं की भाषा शैली (डॉ. अंजली सिंह) 183
64. चन्द्रकान्त देवताले की कविता – आदिवासी चिन्तन (उमेश कुमार चरपे, डॉ. के. आर. मगरदे) 186
65. शरद जोशी का व्यंग्य लेखन (डॉ. रश्मि सिलारपुरिया) 188
66. अज्ञेय का सृजनात्मक साहित्य और स्वाधीन चेतना की अभिव्यक्ति (डॉ. अनुकूल सोलंकी) 190
67. अनामिका की कहानियों में मूल्यबोध (डॉ. वन्दना अग्निहोत्री, आशा शरण) 192
68. डॉ. रामनारायण शर्मा – खड़ी बोली और बुन्देली के सशक्त कवि (लोकेश कुमार) 194
69. डॉ. प्रेमभारती का शैक्षणिक अवदान (डॉ. सुरेश खाड़े) 196
70. मीता – मेरा (लघु उपन्यास) – डैफोंडिल जल रहे है – मृदुला गर्ग (डॉ. संध्या खरे) 198
71. श्री शांति प्रिय द्विवेदी हिन्दी के निबंध– एक विमर्श (डॉ. अंजली सिंह) 200
72. झारखंड का हिन्दी कथा साहित्य और श्रवन कुमार गोस्वामी के उपन्यास (डॉ. अजय कुमार दास) 202

(Sanskrit / संस्कृत)

73. आधुनिक परिप्रेक्ष्य में संस्कृत की आवश्यकता (डॉ. भावना श्रीवास्तव) 203
74. अष्टावक्रगीता का उपमा–लावण्य (डॉ. विनोद कुमार शर्मा) 206
75. जैन एवं वैदिक पुराणों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सावित्री मिश्रा) 209
76. महाकवि भवभूति के नाटकों में नारी का स्थान (डॉ. मुकाम सिंह भँवर) 211
77. परमाचार्य जिनसेन का व्यक्तित्व तथा कृतित्व (डॉ. सावित्री मिश्रा) 213

(Education / शिक्षा)

78. A Comparative Study Of Student's Perception Towards Counseling Needs Of Class XII 214
Students Studying In Integrated & Non-Integrated Courses (Nikhil Chaudhary)
79. पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन 218
(डॉ. कौशिक वी. पाण्ड्या, डॉ. अनिल कुमार श्रीवास्तव, समन्दर सिंह)
80. मानवाधिकार शिक्षा (आरती खंडेलवाल, डॉ. अश्विनी कुमार गौड़) 221
81. माध्यमिक स्तर के शहरी व ग्रामीण विद्यार्थियों में खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन 224
(डॉ. राजेन्द्र कुमार)
82. शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर एक अध्ययन (डॉ. निशा श्रीवास्तव, हितेश्वरी रावते, पिंकी देवांगन) 226

(Others / अन्य)

83. Aspects And Indicators Of Women Empowerment In Indian Context (Dr. Bharti Joshi) 228
84. Analysis Of Emotional Intelligence Of Married And Unmarried Women (Dr. Rashmi Sharma) ... 231
85. Constitutional Position Of Governor In India (Dr. Kusum Sharma) 233
86. The Fifty Second Amendment Of Indian Constitution 'Anti-Defection Law' (Mamta Goswami).... 236
87. स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत ठोस अपशिष्ठ पदार्थो का प्रबंधन (मनीष उपाध्याय) 238
88. संवेगात्मक संतुलन में प्राणयाम व ध्यान की भूमिका (डॉ. रंजू गुप्ता) 241
89. ख्याल शैली – एक यात्रा (डॉ. दीप्ति गेड़ाम परमार) 243
90. सूफी मत में गुरू महिमा (डॉ. अनूप शर्मा) 246
91. योग के परिपेक्ष्य में नाडी वर्णन– एक परिचय (डॉ. श्याम सुन्दर पाल) 248
92. देवात्मा के दर्शन में ईश्वर (डॉ. आशा चौधरी) 250
93. संगीत चिकित्सा का उपयोग तनाव प्रबंधन में (डॉ. श्रीपाद आरोणकर) 252
94. मथुरा कला में उत्कीर्ण यक्ष एवं नाग मूर्तियां (डॉ. सुदीप शर्मा) 254
95. विश्व की महानत् सभ्यताओं का पुरातात्त्विक प्रमाण है– कुम्भ अद्य पुरातन वैज्ञानिक है– कुंभकार 257
महान मृदा संस्कृति के प्रवर्तक (जनक) कुम्भकार प्रजापति (डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति)
96. Diversity of Gastropods from Uran, Navi Mumbai West coast of India (Aamod N. Thakkar) 261
97. Physical Parameters of Water Quality (Dr. Shobha Gupta) 264
98. हिन्दी व्यंग्य में महिला व्यंग्यकारों की भूमिका (डॉ. सुनीता यादव) 267
99. Floriculture and Rose Cultivation in Pushkar Valley (Rajendra Singh) 270
100. The Impact of the English Language on Employability (with a Specific Focus on 273
Chhattisgarh) (Dr. Syed Saleem Aquil, Sabiha Aquil)
101. Role of Communication in the Success of Business (Dr. Syed Saleem Aquil, Sabiha Aquil)..... 276
102. बिलासपुर जिले में सविनय अवज्ञा आन्दोलन(डॉ. रीता बाजपेयी) 279
103. पूर्व मध्यकालीन भारत में सांस्कृतिक संघर्ष (प्रताप कुमार पाण्डेय) 281
104. खिलचीपुर राज्य में कला एवं लोककला का ऐतिहासिक अध्ययन (प्रो. ओमप्रकाश गेहलोत) 283
105. जनजाति समाज में नाता प्रथा एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य (डॉ. विनीता लवानिया) 286
106. वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (डॉ. दिलीप पीपाड़ा, डॉ. सुनिल कुमार दलाल) 288
107. Profit with Purpose: The Rise of Sustainable Business Models 291
(Dr. Ravindra Kumar Katewa, Dr. Chandra Prakash Kulshreshtha)
108. सुमेलित जोड़े एवं प्रकृति प्रेम (डॉ. चक्रपाणि उपाध्याय) 295
109. बुंदेलखण्ड में अंग्रेजों का आगमन व नीतियाँ (डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख) 297
110. Effect of Agnihotra in A Yagya on High Energy Photon Intensity (Dr. Nira Talesra) 299
111. An Overview of Deficiency of Haemoglobin Among Youth (Vinita Rathore) 301
112. महाराजा शिवाजी राव होलकर का वैभव – ''दरिया–महल'' (डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख) 303
113. याज्ञवल्क्य स्मृति में श्राद्ध विधि (डॉ. विद्या आचार्य) 306
114. हिंदी की मार्क्सवादी आलोचना और डॉ. रामविलास शर्मा – 1 (डॉ. अजय कुमार विन्द) 308
115. An Overview of Nutrition, Health Services and Major Government Schemes in Banda, ... 310
Uttar Pradesh (Dr. Manorama Yadav)
116. विखंडनवाद और सूफी प्रेमाख्यान: एक पुनर्पाठ (मध्यकालीन प्रेमाख्यानक काव्य का समीक्षात्मक अध्ययन) (डॉ. रमेश यादव) 314
117. The Impact of Digitalization on Business Relationships: Transforming 316
Communication, Trust, Collaboration, and Customer Engagement (Dr. Bhavna Sharma)

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. N.S. Rao - Director, Janardhanrai Nagar Raj. Vidhyapeeth University, Udiapur (Raj.) India
8. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
9. Prof. Dr. P.P. Pandey - HOD, Commerce(Dean), Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
10. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
11. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
12. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
13. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
14. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
16. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
17. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
18. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
19. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
20. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
21. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
22. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
23. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
24. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
25. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
26. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
27. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
28. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
29. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
31. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
32. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
33. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
34. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
35. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
36. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
37. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - Former Controller, Madhya Pradesh Professional Examination Board Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls PG College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management Deptt. Shri Atal Bihari Vajpai Hindi University, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls PG College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. PG College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.K. Jain - Professor, Commerce, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh PG College, Jaora (M.P.) India
26. Prof. Dr. Tapan Chore - HOD,Economics, Vikram University, Ujjain (M.P.) India

****

Referee Board

Maths	-	(1)	Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics	-	(1)	Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science	-	(1)	Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry	-	(1)	Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany	-	(1)	Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science	-	(1)	Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
	-	(2)	Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics	-	(1)	Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science	-	(1)	Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology	-	(1)	Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology	-	(1)	Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science	-	(1)	Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci.	-	(1)	Anurag D. Zaveri, **Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)**
			***** Commerce *****
Commerece	-	(1)	Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
			***** Management *****
Management	-	(1)	Prof. Dr. Rameshwar Soni, HOD, Research Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources	-	(1)	Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration	-	(1)	Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)
			***** Law *****
Law	-	(1)	Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)
			***** Arts *****
Economics	-	(1)	Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls PG College, Neemuch (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
Political Science	-	(1)	Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy	-	(1)	Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology	-	(1)	Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. PG College, Dhar (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
Hindi	-	(1)	Prof. Dr.Vandana Agnihotri,Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)

		(2)	Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
		(5)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
English	-	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls PG College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. PG College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography	-	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls PG College, Chhindwara (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)
			***** Home Science *****
Diet/Nutrition	-	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
Science		(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human	-	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
Development		(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource	-	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela,
Management			Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)
			***** Education *****
Education	-	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
			***** Architecture *****
Architecture	-	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)
			***** Physical Education *****
Physical Education	-	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
			***** Library Science *****
Library Science	-	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

****

Antidiabetic And Triglyceride Activity By Ethanolic Extract Of *Coccinia Indica* Fruits In Streptozotocin Induced Diabetic Rats

V. K. Shakya *

Abstract - *Coccinia indica* is a famous for the hypoglycemic and antidiabetic properties in Indian therapeutics. Fruit extract of *C. indica* Wight & Arn. were evaluated for their antidiabetic activity in STZ induced diabetic rats. Streptozotocin (STZ: 50mg/kg bw, IP) was injected to albino rats to induced diabetes. Oral administration of freshly prepared plant alcoholic extracts to each for the animal was given to STZ-induced diabetic rats until 4 weeks at a dosage of 100, 250 and 500 mg/kg bw to diabetic rats. Significant antidiabetic activity was observed in alcoholic extract decrease in blood sugar level and serum triglyceride level when compared to diabetic control. After 28 day treatment by *C. indica* extract blood sugar level (BSL) and Triglyceride (TG) were measured. Data analysis showed that BSL reduced by 61.46 ($P<0.05$) and TG 51.86 % ($P<0.01$) in STZ induced diabetic rats. The effect of the ethanolic extract particularly at 500 mg/kg bw was quite comparable to that of standard drug Glibenclamide (500 µl/kg bw) and standard herbal drug Diabecon (500 mg/kg bw) . The present study results conclude *C. indica* ethanolic extract to be effective in treatment not only diabetes but also significant decrease serum triglyceride level.
Key Words - Triglyceride, *Coccinia indica, S*treptozotocin, Intraperitoneal, Hypoglycemia.

Introduction - Diabetes mellitus is a major public health problem in developed as well as in the developing countries. It ranks fifth amongst the leading causes of death. In particular, the increasing prevalence of Type 2 diabetes affects life expectancies and more so for the obese people. Long term complications of diabetes mellitus include retinopathy with potential loss of vision, nephropathy leading to renal failure, peripheral neuropathy with risk of foot ulcers, amputation and charcoal joints. However, much of clinical and economic toll of diabetes arises from complications of the disease, such as capillary basement membrane thickening, retinopathy, nephropathy, neuropathy and accelerated arteriosclerosis. Concurrently, phytochemicals identified from traditional medicinal plants are presenting an exciting opportunity for the development of new types of therapeutics. This has accelerated the global effort to harness and harvest those medicinal plants that bear substantial amount of potential phytochemicals showing multiple beneficial effects in combating diabetes and diabetes-related complications. Therefore, as the disease is progressing unabated, there is an urgent need of identifying indigenous natural resources, in order to procure them and study in detail of their potential on different newly identified targets in order to develop them as new therapeutics. It is quite apparent that the allopathic drugs, which are used to treat diabetes cause several side effects, therefore, there is a need for an alternative, safer agents with minimal adverse effects, which can be taken for a long duration. Recently, the search for hypoglycemic agents has been focused on the plants used in traditional medicinal system because they are prepared from the natural products, which have bitter principles. India is a big reservoir of natural resources. It has a wide range of flora from Alpine forest to the Western Ghats' hot spot. India has a rich history of traditional medicines in the indigenous system of medicine. Numbers of plants have been mentioned in the literature for the cause of 'Madhumeha'. Some of them have been experimentally evaluated and active principles have been isolated by some prominent workers like **Smith** and **Pogson** (1981)[1] and **Kapur** *et.al.* (1998)[2].

George *et.al.* (2007)[3] have worked on phytochemical investigation of the insulin plants (*Costus pictus*). Similarly, **Neeli** *et.al.* (2007)[4] have reported the antidiabetic activity of herb (*Cynodon dactylon* Linn.) in alloxan induced diabetic rats and Euglycemic rats. **Matsuda** *et.al.* (2002)[5] have reported antidiabetogenic constituents from several natural medicines including *Gymnema sylvestre*. **Hussain** (2002)[6] have mentioned that traditional Indian plant *Azadirachta indica* possess antidiabetic principle. **Shukla** and **Mehta** (2007)[7] have noticed the antidiabetic and antimicrobial activity of *Ficus bengalensis.* **Eshrat** (2003)[8] have mentioned the effect of *Coccinia indica* and *Abroma augusta* on glycemia, lipid profile and the organs damaged in STZ induced diabetic rats. **Mahdi** *et.al.* (2003)[9] reported that Indian herbal plants like *Allium sativum*, *Ocimum sanctum*, *Azadirachta indica*, *Momordica charantia*, not only possess hypoglycemic activity but some of them are antioxidant also. Type 1 diabetes can be control by insulin therapy, but Type 2 diabetes is the most common and usually starts at the age of 40 & above. In this diabetes, the Islets cells of

*Asst. Professor (Zoology) Govt. Sanjay Gandhi Smriti P.G. College, Ganj Basoda, Vidisha (M.P.) INDIA

pancreas produce insulin but output is inadequate for the body needs and this results hyperglycemia. Numbers of paper have talked about the systems of diabetes. **Socolsky** *et.al.* (2003)[10] have isolated glycosides constituents from a Fern to be used against diabetes. **Babu** *et.al.* (2003)[11] have reported the antidiabetic activity of ethanolic extract of *Cassia kleinii* leaves in STZ induced rats. **Latha** and **Pari** (2004)[12] have noticed the blood glucose, plasma insulin and some polyol pathway in the experimental rats using aqueous extract of *Scoparia dulcis*. **Galletto** *et.al.* (2004)[13] observed antidiabetic and hypolipidemic effects of *Gymnema sylvestre* in alloxan induced diabetic rats. **Satav** and **Katyare** (2004)[14] have reported the mitochondrial energy-linked effects during diabetes. **Prakasam***et.al.* (2004)[15] have reported the influence of *Casearia esculenta* root extract on protein metabolism in STZ induced diabetic rats.

Materials And Methods -

(a) Experimental Animals - Wister albino rats (150-250 gm) were obtained from germ free animals house of Bharat Traders Jhangirabad, Bhopal. Laboratory was maintained on 12 h light and dark cycle with allowed food standard pellet diet from Golden Feeds suppliers, New Delhi and water ad libitum. They were kept under grilled cages, divided into various groups in air controlled room where the congenial temperature 25 ± 50ºC, relative humidity 55-70 % maintained. All the doses of extract were administrated orally. The experimental was conducted according to the ethical norms approved by Institutional Animals Ethics Committee (IAEC) and CPCSEA guidelines. (Approval No. 803/03/CA/CPCSEA)

(b) Plant Material - *Coccinia indica* (Wight & Arn.) commonly known as 'kanduri' is a member of the Cucurbitaceae family. The fruits are boiled to make a decoction that is taken orally to treat diabetes in a day. It is a perennial climbing herb. It is found in warm and humid climate. It is creeper herb, which is found on ground, trees walls as well as supports around it. It flowers in August to October. After proper identification by the department of botany, a voucher specimen (S.No. 23) has been deposited in the Past Control and Ayurvedic Drug Research Laboratory as herbarium record. Fruits of *Coccinia indica* were collected from surrounding areas of Vidisha and Raisen districts during winter session.

(c) Extraction - The air-dried part of the plant used was grinded to powdered material about 40-60 mesh size. 500 gm known amount of powdered material of plant fruits extracted in soxhlet apparatus with water as solvent. The crude extract obtained filtered with the help of filter paper No. 1 and dried in vacuum evaporator at 50-55^{0}C under reduced pressure. The extract stored in refrigerator for further studies. The yield was observed 28.60 % with ethanolic extract. The antidiabetic effects were evaluated by oral administration of the extract to the streptozotocin induced diabetic rats.

(d) Induction of diabetes - Diabetes was induced by a single intra-peritoneal injection of a freshly prepared streptozotocin solution 50 mg/kg bw in 0.1 M cold sodium citrate buffer (pH 4.5). The animals was fasted but allowed to drink 5 % glucose solution overnight to overcome, the drug induced hyperglycemia. After 72h confirmation of diabetes by STZ administration was carried out. The diabetic rats with blood glucose concentration of up to 300 mg/dl were used for the further experiment.

(e) Experimental Design - All the diabetic animals were randomly divided into seven groups with six animals in each. Group I - normal healthy control was given only normal saline and fed on normal diet. Group II- served as diabetic control and received only saline. Group III, IV, and V as diabetic treated by *C. indica* extract at the doses of 100, 250 & 500 mg/kg bw respectably. Group VI & VII as diabetic received reference drug, Diabecon 500 mg/kg and Glibenclamide 500 µg/kg bw. At the end of 7th, 14th and 21st day blood was collected in tubes containing EDTA solution for the estimation of glucose and cholesterol level. Blood sugar level was determined by O-toludine method (Strove *et. al.*1989)[16]

(f) Statistical analysis - The data were expressed as mean ± SEM for six animals in each group. Statistical signification was calculated by using one way analysis of variance (ANOVA) followed by least significant differences test. Diabetic rats were compared with control rats and *C. indica* extract treated diabetic rats were compared with diabetic rats as well as standard drug.

Result And Observation - In the present study ripened fruits of *Coccinia* powdered material; when extracted on soxhlet apparatus gives maximum yield 28.60 % with ethanolic extract. In other extracts shows percentage of yield as shown in Table (1). The yield was ethanolicextract was found to be effectives hence, it was used for experimental bioassay. The results maintained in Table (2) and Table (3), showed hypoglycemic water extract at three different doses ranging from 100-500 mg/kg bw when given orally. Maximum hypoglycemic activity observed at 500 mg dose, which was found 288.24 ± 7.48 to 111.08 ± 12.18 after 28 day treatment ($P<0.05$). Similarly, higher dose of *C. indica* shows triglyceride level reducing from 310.15 ± 8.29 to 149.28 ± 8.4. The results when compared with student t-test give the level of significance at $P<0.01$.

Table 1 (See in the next page)
Table 2 (See in the next page)
Table 3 (See in the next page)

Discussion- It had been concluded that in our study, decrease in the concentration of blood glucose and triglyceride were observed in both normal and STZ diabetic rats treated with crude extract of the *C.indica.* The

antihyperglycemic activity of crude powder of *Gymnema sylvestre* leaves was confirmed in the multiple dose experiments on streptozotocin-induced diabetic rats. The increased levels of blood glucose in STZ induced diabetic rats were found lowered by the administration of *G. sylvestre* crude leaf powder. Fastig blood glucose was improved with the continuos treatment with the plant powder. The similar anti-diabetogenic effect were reported by **Kanetkar et.al.**[17] Rats treated with alloxan (120mg/kg), for 2 consecutive days, showed an increase in the concentration of glucose, triglycerides, cholesterol, LDL cholesterol, VLDL cholesterol and a decrease in the level of HDL cholesterol and hemoglobin content.[18]

The study on the water extract of *Coccinia indica* fruits revealed that the plant extract can reduce the blood sugar and cholesterol level in streptozotocin induced rats after 7th, 14th, 21stand 28th days intervals. Similar results have been observed in crude leaf powder of *Gymnema sylvestre* also improved the glycosylated haemoglobin and increase in serum insulin levels. The marked increase in serum triglycerides, total cholesterol, LDL-cholesterol and decreased HDL-cholesterol observed in diabetic rats is in agreement with the finding of **Nikkila and Kekki.**[19] In the present study, administration of the crude cetract of *C. indica* fruits to the STZ induced diabetic rats significantly improved these parameters. Various plant part of *C. indica* which grown abundantly in india have been widely used in the traditional treatment for diabetes. Antidiabetes activity of stem of *C. indica* and hypogllycemic activity of leaves of the plant reported.[20-21] Treatment of *C. indica* increase the serum insulin level as compare to control group. Increases in triglyceride and total cholesterol were observed in diabetic group. Treatment of plant part prevented the elevation of lipid profile significantly in comparison to control diabetic rats.[22] In the present study result showed significantly nearer to diabetes treated group. Thus, as regard the dose compensation 500 mg/kg dose was found to be most effective. In the light of the results of the present study, it was indicated that *C. indica* fruits extract have not only showed antidiabetic activity but also triglyceride activity in STZ induced diabetic rats.

References :-

1. **Smith** S.A. and **Pogson** C.I. (1981) The methabolism of L-tryptophan by liver cells prepared from adrenalectomized and streptozotocin diabetic rats. *Biochem. J.*; **200**: 605-609.
2. **Kapur** A., Shishoo S., Ahuja MMS, Sen V. and Mankame K. (1998) Diabetes care in India - Physicians perceptions, attitudes and practices. *Int. J. Diab. Dev. Countries*; **18**: 124-130.
3. **George** A., Thankamma A., Devi V.K.R. and Fernandez A. (2007) Phytochemical investigation of insulin plant (*Costus pictus*). *Asian J. Chem.*; **19(5)**: 3427-3430.
4. **Neeli** G.S., Girase G.S., Kute S.H., Karki S.S. and Shaikh M.I. (2007) Antidiabetic activity of herb of *Cynodone dactylon* Linn. (Pars.) in alloxan induced diabetic rats and in Euglycemic rats. *Indian drugs*; **44(8)**: 602-605.
5. **Matsuda** H., Morikawa T. and Yoshikawa M. (2002) Antidiabetogenic constituents from several natural medicines. *Pure Appl. Chem.*; **74 (7)** 1301-1308.
6. **Hussain** H.E.M.A. (2002) Reversal of diabetic retinopathy in streptozotocin induced diabetic rats using traditional Indian antidiabetic plants, *Azadirachta indica* (L.). *Ind. J. of Clinical Biochemistry*; **17(2)**: 115-123.
7. **Shukla** S. and **Mehta** A. (2007) Antidiabetic and antimicrobial activity of *Ficus bengalensis* Linn. *Bhartiya Vigyan Sammelan, Bhopal*; 362-364.
8. **Eshrat M.H.** (2003) Effect of *Coccinia indica* (L.) and *Abroma augusta* (L.) on glycemia, lipid profile and on indicators of end organ damage in streptozotocin induced diabetic rats. *Ind. J. of Clinical Biochemistry*; **18(2)**: 54-63.
9. **Mahdi** A.A., Chandra A., Singh R.K., Shukla S., Mishra L.C. and Ahmad S. (2003) Effect of herbal hypoglycemic agents on oxidative stress and antioxidant status diabetic rats. *Ind. J. of Clinical Biochemistry*; **18(2)**: 8-15.
10. **Socolsky** C., Salvatore A. Asakawa Y. and Bardon A. (2003) Bioactive new bitter-tasting *p*-hydroxystyrene glycoside and other constituents from the fern *Elaphoglossum spathulatum*. *ARKIVOC*: 347-355.
11. **Babu** V., Gangadevi T. and Subranoniam A. (2003) Antidiabetic activity of ethanol extract of *Cassia kleinii* leaf in streptozotocin induced diabetic rats and isolation of an active fraction and toxicity evaluation of the extract. *Indian J. of Pharmacology*; **35**: 290-296.
12. **Latha** M. and **Pari** L. (2004) Effect of an aqueous extract of *Scoparia dulcis* on blood glucose, plasma insulin and some polyol pathway enzymes in experimental rat diabetes. *Brazilian J. of Medical and Biol. Res.*; **37**: 577-586.
13. **Galletto** R., Siqueira V.L.D., Ferreira E.B., Oliveira A.J.B. and Bazotte R.B. (2004) Absence of antidiabetic and hypolipidemic effect of *Gymenema sylvestre* in Non-diabetic and alloxan diabetic rats. *Brazilian Arch. of Biol. and Tech.*; **47(4)**: 545-551.
14. **Satav** G.J. and Katyare S.S. (2004) Effect of streptozotocin induced diabetes on oxidative energy metabolism in rat liver mitochondria - A comparative study of early and late effects. *Ind. J. of Clinical Biochemistry*; **19(2)**: 23-31.
15. **Prakasam** A., Sethupathy S. and Pugalendi K.V. (2004) Influence of *Casearia esculenta* root extract on protein metabolism and marker enzymes in streptozotocin induced diabetic rats. *Pol. J. Pharmacol*; **56**: 587-593.
16. **Stroev** E.A. and Makarowa V.G. (1989) V.G. Laboratory manual in Biochemistry. *Mir publishers, Mascow* : 143.
17. **Kanetkar** P. Singhal R., Kamat M. (2007) *Gymnema sylvestre*: a memoir. *J. Clin Biochem Nutr;* **13**: 977-983
18. **Radhika** S., Smila K.H. and Muthezhilan R. (2011)

Antidiabetic and Hypolipidemic Activity of *Punica granatum* Linn on Alloxan Induced Rats. *World Journal of Medical Sciences;* **6 (4)**: 178-182, 2011

19. **Nikkila** E.A. and **Kekki** M. (1973) Plasma transport kinetics in diabetics mellitus. *Metab;* 22: 1-5
20. **Purintrapiban** J., Keawpradub N. and Jansakul C. (2006) Role of water extract from *Coccinia indica* stem on the stimulation of glucose transport in L6 myotubes, Songklanakarin. *J. Sci Technol*; **28:** 1199-1208
21. Akhtar A., Rashid M., Wahed Mll, Islam M.R. Shaheeb SM, Islam MA, Amran M.S. and Ahmed M.(2007) Comparison of long-term antihyperglycemic and Hypolipidemic effect between *Coccinia cordifolia* (Linn) and *Catharanthus roseus* (Linn) in Alloxan induced diabetic rats. *Res. J. Medicine & Med Sci.;***2**: 29-34
22. Dhanabal S.P., Koate C.K., Ramanathan M, Elango K. Suresh B. (2004) The hypoglycemic activity of *Coccinia indica* Wight & Arn and its influence on certain biochemical parameterm. *Ind. J. Pharmacol;* **36**: 244-250

Table 1 - Percentage yield of *Coccinia indica* plant crude extract in different solvent

S. No.	Solvent used	Volume of solvent	Weight of powdered materials	Weight of extract	Percentage yield
1.	Petroleum ether (40-60)	450 ml	500 gm	41.36 gm	8.27 %
2.	Chlorofrom	450 ml	500 gm	65.08 gm	13.01 %
3.	Ethyl acetate	450 ml	500 gm	38.92 gm	7.78 %
4.	Ethanol	450 ml	500 gm	170.8 gm	28.60 %

Table - 2 - Effects of *C. indica* fruits extract on blood glucose level STZ induced diabetic rats after 28 days

Group(s)	Effective Doses (mg/kg bw)	Before Treatment	After Treatment (28 days)	% After drug treatment
I	Normal Control (Normal Saline)	92.84 ± 4.14	93.65 ± 7.15	-0.87
II	Diabetic Untreated (Normal Saline)	284.46 ± 8.71	326.40 ± 16.35****	-14.76
III	Diabetic + *C. indica* (100 mg)	289.02 ± 6.67	170.20 ± 14.36***	+41.11
IV	Diabetic + *C. indica* (250 mg)	290.88 ± 5.12	136.57 ± 15.84***	+53.04
V	Diabetic + *C. indica* (500 mg)	288.24 ± 7.48	111.08 ± 12.18**	+61.46
VI	Diabetic + Diabecon (500 mg)	286.31 ± 4.75	114.88 ± 13.74***	+59.87
VII **(P<0.05)	Diabetic + Glibenclamide (500 g)	291.73 ± 8.43	118.29 ± 12.05**	+59.45

Table 3 Effects of *C. indica* fruits extract on Triglyceride level STZ induced diabetic rats after 28 days

Group(s)	Effective Doses (mg/kg bw)	Before Treatment	After Treatment (28 days)	% After drug treatment
I	Normal Control (Normal Saline)	105.49 ± 5.69	146.95 ± 7.2	-39.30
II	Diabetic Untreated (Normal Saline)	258.23 ± 8.22	262.81 ± 9.6*	-01.77
III	Diabetic + *C. indica* (100 mg)	312.40 ± 14.9	192.13 ± 10.9**	+38.49
IV	Diabetic + *C. indica* (250 mg)	307.02 ± 9.77	168.59 ± 8.7*	+45.08
V	Diabetic + *C. indica* (500 mg)	310.15 ± 8.29	149.28 ± 8.4*	+51.86
VI	Diabetic + Diabecon (500 mg)	302.88 ± 13.6	150.72 ± 11.3**	+50.23
VII *(P<0.001)	Diabetic + Glibenclamide (500 g)	308.91 ± 13.7	152.88 ± 7.9*	+50.50

****

Conservation Of Gharial In Ken Reserve Panna, India

Dr. Sunita Shakle *

Abstract - The Gharial or crocodile is a common and widespread crocodilian species in India. The crocodile population of reportedly declining due to illegal hunting for skin and indigenous medical purpose habitat destruction. Protect and conserve this endangereel species it has been categorized as a vulnerable species in the red list of IUCN and red list of threatenedreptilian species. It is placed schedule of wild like protection act 1972.

Introduction - Study area – The present study was conducted in Ken reserve Panna. The Ken reserve is situated Chhatarpur district India. It lies at $24^0$0' N to $24^0$5' N attitude and $80^0$0' E to $80^0$5 E longitude Ken is the 16 perennial river of M.P. The Ken meanders for about 55 km. through the reserve from south to north and lends it some of the most spectacular wilderness scenery. Ken River is spread on 42.50 sq. km.

Material and Method - The visual ground survey method was used to identifythe morphological characteristics and study of behavioral responses direct counting method and capture and release Technique were used to estimate the population of Gharial. The indirect evidence such as foot prints sing of body impressionwas also studied.

The sample of water and soil were collected from the pointed study sites and were sent to laboratory of regional office Environmental conservation board Chhatarpur India.

Observation and Result - Various physio-chemical parameters of water samples and peodological characteristics were observed during the large study (from 2016-2017) the observed various parameters were discussed as under -

(a) Analysis of water sample: Monthly variation of water temperature at five sites of Ken Reserve Panna (2016-2017).

Monthly variation of water temperature at five sites of Ken Reserve, Panna in (^{0}C) (2016-2017) (See in the next page)

(b) Analysis of soil sample- Physio-chemical nature of the soil analysis of Ken Reserve Panna at five sampling site S_1-S_2 during in Ken Reserve Panna (2016-2017)

Parameters Sampling station of the Ken River (See in the next page)

(c) Number of monitoring : Percentage of survival in all age class of Gharial in the Ken Reserve Panna (2016-17)

(d) Nesting behavior: Gharial requires high slopy blanks slightly deep water with fine sandy bank where on mugger can egglay egg anywhere- if the condition are available mugger also lays in a hole like that of gharial mugger and gharial used hind todignests trial nesting has been observerdbothing mugger and gharials.

(e) Behavioral responses- The activity and behavioral responses of the gharial were observed from 08.00 am to 05.00 p.m.

(f) Basking behavior : the gharial is cold blooded and uses sun basking to warm up and water to cool down, during the cold season. Where the air temperature typically is about 18^0C water about 17^0C basking accures throughout the dayduring warm season, where the air temperature basking typically is about 35^0C and water 25^0C.gharials bask less and avoid midday basking.

(g) Breeding status : peak summer season is the breeding season of gharial. In the month of February to April 30-50 eggs were layed by females. Egg were incubated for 90 days.

(Table see in the last page)

Conclusion - The Gharial has been categorized as a Vulnerable species to conserve and to reduce people gharial conflicts a gharial conservation reserve is established in Ken Reserve Panna district Chhatrpur, India.

The Phycio chemical factors effect the distribution and population of gharial reported that gharial population is threatened on low wake water quality. The variation and access limits of physicochemical parameters were cause of harmful effect on population of gharial.

Acknowledgement - Author are thankful to field staff and residents of Ken Reserve Panna district Chhatrpur, India for providing supports during the instigation period.

Reference:-

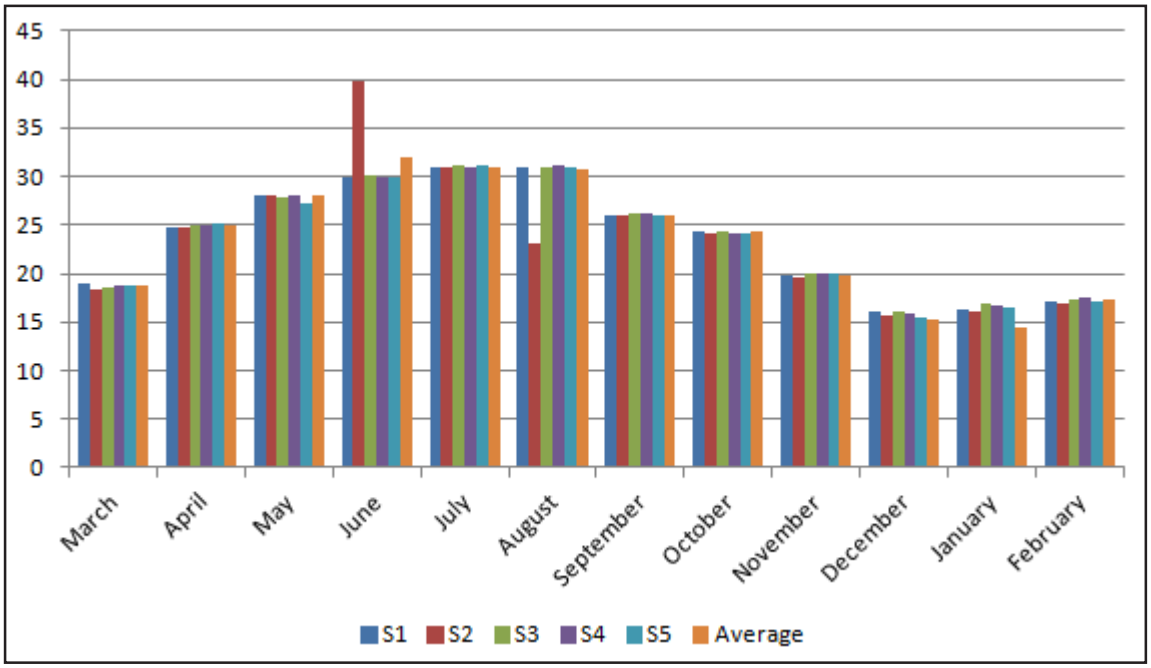
1. Aleorn, J.B. (1993) Indigeneeus peoples and conservation .
2. American public Health Association (1971). Standard methods for examination of water, American Public

*Asst. Professor (Zoology) B.L.P. Govt. P.G. College, Mhow (M.P.) INDIA

Health Association New York.
3. Andrews, H. and P. Mc.Eachern (1994) Crocodile conservation in Nepal, IVCN Nepal And US AID Khathmandu, Nepal.
4. Andrews H.V. & Others (2004) Captive breeding and reproductive biology of the Indian GharialGavialisgangeticus (Gmelin) in : Crocodiles.
5. Annin(1993) crocodile Conservation and management in India.
6. J.M. and A. cadi (2005). Gharial Conservation in Royal Chitawan Project PP 1-14
7. Chapman, R.N. (1928) Ecology .9 111-122.
8. Maskey, t.M. and H.F. Percival (1994) status and conservation of gharial in Nepal. In crocodiles proceeding of the 12th working meeting of the CSG, IVCN, Gland, Switzerland.
9. Ruttner, f. (1963) Fundamentals of limnology.
10. Satheesh, S. (1992) A preliminary status surver of mugger crocodile in Tamilnadu. 295 PP
11. Sharma, R.K. (1995), Gharial Census in National Chambal Sanctuary, Journal of Tropical forestry P 159-161.

Monthly variation of water temperature at five sites of Ken Reserve, Panna in (^{0}C) (2016-2017)

S.No.	Month	Sampling Stations					
		S1	S2	S3	S4	S5	Average
1	March	18.9	18.4	18.6	18.8	18.8	18.7
2	April	24.8	24.8	25.0	24.9	25.1	24.92
3	May	28.0	28.1	27.9	28.0	27.2	27.96
4	June	30.0	39.8	30.1	29.9	30.0	31.96
5	July	31.0	30.9	31.1	31.0	31.1	31.02
6	August	31.0	23.1	31.0	31.2	31.0	30.66
7	September	26.0	25.9	26.1	26.2	25.9	26.02
8	October	24.4	24.2	24.3	24.2	24.1	24.24
9	November	19.8	19.6	20.0	19.9	20.1	19.88
10	December	16.0	15.6	16.1	15.9	15.4	15.28
11	January	16.2	16.1	16.9	16.6	16.4	14.44
12	February	17.2	17.0	17.4	17.6	17.2	17.28
	Range	16.0 to 31.0	15.6 to 39.8	16.9 to 31.1	15.9 to 31.2	15.4 to 31.1	14.44 to 96



Parameters	Sampling station of the Ken River					
	S1	S2	S3	S4	S5	Average
pH	7.5	7.0	7.2	7.5	7.6	7.36
Bulk density (gm/cc)	1.38	1.32	1.34	1.36	1.30	1.34
True density (gm/cc)	2.43	2.68	2.65	2.60	2.58	2.58
Sand%	28.00	27.50	34.50	37.5	43.80	34.26
Silt%	28.80	25.50	31.8	33.8	32.5	30.48
Clay%	42.0	42.0	34.5	28.5	25.6	34.52
Electrical Conductivity (dsm-1)	0.30	0.28	0.68	0.65	0.35	0.45
Water Holding Capacity	30.6	28.2	27.1	26.5	29.0	28.28
Infiltration (mm/hr.)	6.8	6.3	7.2	6.8	6.8	6.78

S.No.	Description	Years		
		2014	2015	2016
1	Number of Eggs collected	310	543	264
2	Number of Eggs Hatched	162	294	187
3	Percentage of Hatched	52.25%	54.24%	70.83%
4	Number of serviving of Hatched	107	144	125
5	Percentage of serviving Hatch	66.05%	48.97%	66.82%
6	Number reaching beyond 4 months	122	152	125
7	Percentage reaching beyond 4 months	75.30%	51.36%	66.84%

****

Need Of An Applied Research For Management Of Green Water Ecosystem - An Overview

Dr. Pramod Pandit *

Abstract - The first most basic, simplest but unique chemical i.e. water, the cradle of life, of this blue planet i.e. earth, is now in danger. In the current global scenario, water, ecosystem and sustainable development of the society are intrinsically linked and interdependent.

In our country (India) the management of water sources is concerned only upto quantitative management where as the qualitative aspect is almost ignored.

Conventionally quality management of water resources in the country has been dealt under separate disciplines of chemistry, engineering, geology, ecological sciences and policy studies.

This article discusses the various components that impact water management in relation to ecosystem and society and also the causes, challenges and remedial measures for the maintains of safe and green water ecosystem for society and whole living environment which is facing the risks of different health hazards of various water contaminations.

Key Words - Sustainable Development, qualitative management, Pesticides, socio-economic development.

Introduction - Water, a basic necessity of life is needed for drinking, domestic uses, for irrigation of crops, production of different goods and for recreation purposes. Global studies show a challenging future and a chaotic view when considering total use and water availability, in third millennium. Most Asian countries will have severe water problem by the year 2025. Over 2 billion people, or half of the world population have suffered from diseases due to drinking polluted water. More than 250 million new cases of water borne diseases are reported each year, resulting in more than 10 million deaths and nearly 75% of these water borne disease cases occur in tropical areas. WHO in one of their surveys have estimated that 80% of deaths of infants in rural areas of developing countries including India, are due to water borne diseases.

More so, in a vast distributed, multicultural society of India where high rates of mortality and morbidity due to water borne diseases are well known, without adequate supply and scientific management of water resources sustained socio-economic development is difficult to achieve to meet the needs of the fast growing population, agriculture and rising industrial production sectors is deeply affecting the water ecosystem of the nature.

Water Quality and National Water Policy - Enhancing the quality of life of the unserved and underserved by meeting their basic needs are the central concern of our development process. Water is one of the three (air, water and food) most basic needs for the survival of human beings. There is a needs of realization that along with quantity, quality of water is most vital factor. WHO study have revealed that almost 80% of the sickness by which our people suffer and 30% of the death particularly the high infant mortality in the developing countries are attributable to unsatisfactory quality of water. Safe water is defined as the water, that is free from pathogenic micro-organisms, poisonous substances, excessive amount of minerals and organic matter which would produce undesirable physiological effects. It should be free from colour, turbidity, taste and odour and of moderate temperature and aerated. To provide assured quality of drinking water in adequate quality. Govt. of India has taken up measures during last decade. Irrigation and multipurpose project should invariably include a drinking water component. Wherever there is no alternative source of drinking water needs of human- being and animals should be the first charge on any available water and both surface water and ground water should be regularly monitored for quality.

Drinking Water Standards :Adopted under National Water Policy - The saints have said, water is nectar, water is life and given directions to maintain its purity. A number of factors enter into the choice of a best available raw source water for drinking water supply. The source water quality in most tropical areas differs from that of temperate areas in 3 major ways: Physical and chemical, Biological and Social and economic. To monitor drinking water supply on sustain basis water quality standards have been laid down by WHO at international level and by different countries at their respective national levels. In India water quality standards have been laid down by Ministry of Health (ICMR), BIS, ISI and Ministry of Works and Housing (CPHEEO). The quality

*H.O.D. (Chemistry) S.B.N. Govt. P.G. College, Barwani, K.B. State Highway, Barwani (M.P.) INDIA

of water definced by the standard values is such that it is suitable for human consumption and for all usual domestic purposes, including personal hygiene.

Water Quality Upgradation and Assurance - The first step in developing standards, it is essential to establish scientifically based recommendations for each assignable use of water. Establishment of recommendations implies access of practicable methods for detecting and measuring the specific physical, chemical, bacteriological, biological and aesthetic characteristics. Majoriry of water quality problems are related to bacteriological or other biological contamination, although a significant number of very serlous problem may occur as a result of chemical contamination of water sources as that of fluoride and arsenic contamination in certain pockets of our country. In upgradation of drinking water quality related to bacteriological contamination following points should be considered: source, quality, surveillance and control sanitary inspection, collection of water sample, bacteriological analysis, determination of residual chlorine, remedial and preventive measures, community education and movement. Monitoring of water quality is required to undertake at village, district, state and regional levels in order to eradicate and control water borne diseases and ensure safe water supply. Physical, chemical, bacteriological and radiological tests wherever necessary are undertaken for following parameters -

Examination	Parameters
Physical	Colour, odour, taste, turbidity, pH, conductivity and total dissolved salts
Chemical	Organic compounds, inorganic salts and metals
Bacteriological	Faecal indicators, sulphate reducing bacteria, iron bacteria and different worms
Radiological	Naturally occurring Sr and Ra

Water and Excreta Related Diseases - Water and sanitation related diseases have been found to remain in single most important cause of mortality and morbidity. Water related diseases may be divided into those caused by a biological agent of disease (a pathogen) and those caused by some chemical substances in water. The first group may be called the water related infections and may include some of the greatest causes of disease and death in the developing countries (for instance diarrhoeal diseases and malaria). These water related infections have 4 transmission routes, which are explained in table 5. The second group includes chemical related diseases, such as fluorosis (linked to high fluoride levels in drinking water) and infantile metheamoglobinaemia (related to high nitrate levels in drinking water). The latter groups are overwhelmingly overshadowed by the water related infections in the developing countries, but some of them are slowly gaining importance in India, particularly due to industrial developments and large scale pollution of surface as well as ground water. The arsenic contamination of ground waters in west Bengal, affecting large number of people, altered state and central Government authorities.

Table - 1 - (See in the last page)

Table - 2 -WHO Guidelines for Aesthetics Related Substances

Substances	Value (ppm)
Aluminum	0.2
Chlorine	250.0
Copper	1.0
Hardness (as $CaCO_3$)	500.0
Iron	0.3
Manganese	0.1
pH	6.5-8.5
TDS	1.000
Sulphate	400.0
Turbididity, NTU	5.0
Zinc	5.0

Table - 3 - Drinking Water Standards Regarding Toxic Substances -

(Laid-down by WHO and ICMR)

Trace metal	WHO ICMR			Effects
(ppm)	1984	1998	2002	
*Arsenic	0.5	0.05	0.2	Cancer
*Barium	1.0	-	-	Heart, Blood vassels and nerves
*Cadmium	0.01	0.005	-	Kidney
Copper	1.0-1.5	1.0	0.5-1.5	Large doses – liver damage
*Chromium	0.05	0.05	0.05	Cancer
*Cyanide	0.2	0.1	0.01	Biological activity and death
Iron	0.1-0.5	0.3	0.1-1.0	Colour and bad taste
*Lead	0.05	0.05	0.01	Lead poisoning
Manganess	0.1-0.5	0.1	0.1-1.5	Colour and bad taste
Mercury	-	0.001	-	Liver and Brain (CNS)
*Selenium	0.01	0.01	0.05	Cancer and dental caries
Silver	-	-	(USPHS, 0.050)	Argyria (Skin and eyes)
Zinc	5-15	5	5-15	-
*Toxic				

Table - 4 -WHO Guidelines for Health Related Substances -

Organics Substances	Value (ppm)
Alddrin and dieldrin	0.00003
Benezene, 1 , 2 – dichloroethane, pentachlorophenol, tetrachloroethane and 2, 4, 6 -trichlorophenol	0.01
Benzo – pyrene and hexachlorobenzene	0.00001
Carbontetrachloride and lindane	0.003
Chloroform	0.03

2,4, D (chlorophenoxy)	0.1
DDT	0.001
1,1-Dichloroethane	0.0003
Heptachlor and heptachlor epoxide	0.0001
Methoxychlor	0.03

Table - 5 - Environmental Classification of Water Related Infections -

Category	Infection	Pathogenic Agent
Faecal-oral (water borne or water washed)	Diarrhoeas and dysenteries	P
	Amoebic dysentery	P
	Balantidiasis	B
	Campylobacter enteritis	B
	Chloera	B
	E. coli dilarrhoea	P
	Giardiasis	B
	Rotavirus dirrhoea	P
	Solmonollosis	V
	Shigellosis (bacillary dysentery)	B
	Yerainiosis	B
	Enteric fevers	B
	Typhoid	B
	Paratyphoid	B
	Polimyelitis	V
	Hepatitis A	V
	Leptospirosis	S
	Ascariasi S	H
	Trichuriasis	H
Water Washed Skin and Eye infections	Infectious skin diseases	M
	Infectious eye diseases	M
	Louse-borne typhus	R
	Louse- borne relapsing fever	S
Other Water Based penetrating Skin -ingested	Schistosomiasis	H
	Guinea worm clonorchiasis	H
	Diphyllobothriasis	H
	Fasciolopsiasis	H
	Paragonimiasis	H
Other Water related Insect vector biting	Sleeping sickness	P
	Filariasis	H
near Water bodies	Malaria	P
	River blindness	H
Mosquito –borne	Yellow fever	V
virusus	Dengue	V
	Other	V

Note - B-Bacteria; P- Protozoan, S- Sphe. ; M-Miscellaneous; H-Helminth; R-Richettain; V-Virus.

Conclusion - Almost all social and productive uses of water introduce pollutants into it. However, the principal burden on water quality comes from household (municipal waste), industry and agriculture.

In our country assured drinking water supply even in all major cities can not be guaranteed at every consumer and particularly in monsoon months, when some of the other areas suffer from water borne disease outbreaks. The present system is not fully geared to undertake quality assurance for entire population.

In this massive efforts the water quality management (WQM) issue have not been addressed effectively. Due to in - efficient WQM, impact of such massive water supply input on health status in hardly visible. High mortality and morbidity of water born disease still continuing as a cause of our serious concern.

The experience and learning from the various approaches so fair initialed as well as the existing information and knowledge are considered not reasonably adequate for evolving and developing such system. Need of an Applied Research which can help in acquiring practical in sight to the issue have strongly being felt. Evolving a long term strategy without carefully evaluating its impact may result to waste of resources without achieving desired result. It is proposed to carry out an applied research

References :-

1. Balkrishnan, V. and S. Karuppusamy (2005). “Physico - chemical characteristics of drinking water samples of Palani (T.N.).” J. Ecotoxicol. Environ. Monit. 15: 235 - 238.
2. Gopal, R. (1999). “Challenges in water for drinking and domestic use and remedies.” Indian J. Env. Prot. 19(8): 567 - 572.
3. Goswami, A.K. (2003). “Water resource management in India - An overview.” Indian J. of Public Administration XLIX. (3): 245 - 247.
4. Gupta, P.K. (2004). “Methods in Environmental Analysis Water, Soil and Air.” Published by Agrobios, Jodhpur, India. : 5 - 92.
5. ISI, (1993). “Indian standards specification for drinking water.” IS I- 10500, Indian Standard Institute, New Delhi, India.
6. Khoshoo, T.N. (1983). “Water quality management in India: Retrospect and Prospect.” Seminar on ‘strategy and technology for water quality management’, I I T Powai : 53 - 67.
7. Reddy, A. Ranga (2003). “Water resources: Need for a holistic approach.” Indian J. of Public Administration. XLIX. (3): 555 - 557.
8. WHO, (1998). “Guidelines For drinking water quality. Vol.-I. Recommendations.” World Health Organization, Geneva, Switzerland: 1 - 130.

Table - 1 - Drinking and Domestic Water Quality Standard Values:
(Laid-down by BIS, ISI, ICMR and WHO)

Parameters	BIS (1991)		ISI (1993)		ICMR (1995)		WHO (1998)	
	Permissive	Excessive	Permissive	Excessive	Permissive	Excessive	Permissive	Excessive
Colour	–	–	Unobjection able	–	Unobjection able	–	Unobjection able	–
Odour & Taste	Disagree able	Nothing	Disagree-able	Nothing	Unobjection able	Nothing	Disagree able	–
Temperature (^{0}C)	–	–	–	–	–	–	–	–
Turbidity (NTU)	10.0	250	–	–	5.0	25.0	5.0	25
pH	6.5 – 8.5	9.0	7.0	8.5	7.0 - 8.5	8.0 - 9.2	6.5 - 8.5	6.5 - 9.2
EC (µS/cm)	400	–	750	2250	300	750	–	–
Salinity	–	–	–	–	–	–	–	–
TDS	500	2000	500	1500	500	1500	500	1000
Total Alkalinity	172	400	200	400	–	–	120	–
Total Hardness	300	600	300	600	300	600	300	500
Fluoride (F^-)	0.6	1.5	0.7	1.5	1.0	1.5	0.8	1.5
Chloride (Cl^-)	250	1000	250	1050	200	1000	250	600
Nitrate (NO_3^-)	45	100	50	80	20	50	10	45
Sulphate (SO_4^{-2})	150	400	250	400	200	400	200	400
Phosphate (PO_4^{-3})	–	–	0.10	–	0.10	–	–	–
Sodium (Na^+)	25	75	–	–	25	80	20	75
Potassium (K^+)	08	12	–	–	–	–	5	10
Calcium (Ca^{+2})	75	200	–	–	77	200	75	200
Magnesium (Mg^{+2})	30	100	30	100	50	150	30	150
DO	5.0	–	–	–	4.0	6.0	6.0	–
BOD	3.0	5.0	2.0	5.0	2.0	5.0	5.0	–
Coliform (MPN/ 100 ml)	50.0	240	50.0	-	4.0	10.0	3.0	10.0

Note - [All values, Except Colour, Odour, Temperature, Turbidity, pH, EC and Coliform count, are in mg/l].

****

Study Of Ethnomedicinal Plants Used By Tribals Of Sehore District Of Madhya Pradesh

Dr. Dinisha Malviya*

Abstract - Plants play an important role in human life. There is no single aspect of human life where plant don't play any direct or indirect role. Keer, Bhilala, Korku,Gond etc. tribals reside in sehore district. In the present study total 50 plants belonging to 29 families have been evaluated for their ethnomedicinal use.
Key Words - Ethnomedicine, Tribals, Sehore, wound, Diseases.

Introduction - "Healthy mind lives in healthy body" - is the famous proverb-Nature who has gifted the health, has also provided numerous natural resources to maintain it. (Mishra, 1997). The association of plants and man is an age-old process starting from human civilization. Beside food, fuel, clothes and shelter, plants also provides various drugs to human \being against various ailments or diseases. Ethnobotany deals with the immediate relationship between human society and plants. It has been recognized as a multidisciplinary science comprising many interesting and useful aspects of plants science. Its important has been realized mainly in respect of varied economic uses of plants among the primitive human society. Nowadays ethnobotany has attained new significance and a new dimension as a results of modern civilization. The aim of this study is to know the laws and ways of nature for making optimum sustainable use of the plants resources gifted to man by mother nature, to record new and lesser known medicinal uses of plants from local people by harvesting tribal knowledge bank and conservation of these plants resources.

Looking to the importance of ethno medicinal plants, in the changing scenario of the world, the tribal population is depleting fastly due to fast urbanization, migration to the urban areas in search of bread. The indigenous resources all depleting day by day, forest wealth is getting reduce very fastly as such their livelihood is affected. Therefore, it was thought to recollect the knowledge from the tribal population of Sehore district of M.P. in India as much as it can be. Further, it was proposed to revealed maximum information from the tribal population so that a Scientific documentary may prepared before their knowledge is lost in antiquity Thus, the main aims and objective of the present study was.

1. To collect the knowledge and information on herbal drugs from the ethnic population .
2. Communicate this ethnic knowledge to the urban society for human welfare.

Material And Methods - Sehore district of Madhya Pradesh represents one of the greatest emporia of ethnomedicinal wealth. A number of tribal group of people live more or less isolated from modern influence and continue to live in close association and vital dependence with their surroundings vegetation, The main tribal group have their own culture and knowledge of plants, acquired from generation to generation without proper documentation. They also conserve many indigenous land races of crops, which has to be conserved before they are lost to anonymity.

The Tribes Of Study Areas - There are many tribal groups in this region like. *Gond, Bhilala, Dhurvey, Markam* etc. The tribal district live in hills forest and other isolated regions and known as Vanyajati, Janjati, Pahari and so on Sehore district is having large areas of forest cover and natural forest wealth.

Livelihood Of Tribes In Study Site - The tribal population of Sehore district depends upon petty contractors of forest produce for their daily livelihood. They work as a Mazdoor (Labour) of odd Jobs. Such as minor forest produce collection and crop harvesting etc.

Survey Of The Study Area - Various locality of Sehore district were periodically survey for collection of ethnomedicinal plants for the fulfillment of this For the fulfillment of this purpose a fortnightly survey was carried out in the remote areas of the Sehore district and first of all acquaintance with the tribal people of that area, was made Local tribes, Vaidya and Hakim were contacted and information were gathered from them. Some questionnaires (Proforma mentioned in below page no.6) were collected in their local language. Some middle man like school boys help was also sought to get the local languages converted in understandable language. After continuous effort and visiting them regularly, some information was collected. It is a well known fact that tribal people know some very good plant information which they use in their day to day ailment.

* Deptt. of Botany, C.S.A. Govt. P.G. Nodal College, Sehore (M.P.) INDIA

On spot study and identification the plants were collected from the tribals and their identification was carried out using various ethnomedicinal books, like Glossary of Indian medicinal plant of Chopra et. al. (1956), Indian medicinal plants Kirtikar & Basu (1933). Flora of the upper Gangatic plain and of the adjacent Siwalik and sub Himalayan tracts by J.F. Duthie. (1994) and the flora of Bhopal by Oomachan (1977).

Result & Discussion - The present study was aimed to investigate the ethnomedicinal plant in a tribal pockets of Sehore district of Madhya Pradesh. On the basis of the folklore information, the following 50 plants as listed in table (1) have been identification for their ethnomedicinal uses. Result mentioned in table (1) shows these 50 plants belong to total 29 families of Angiosperm. Among these families Liliaceae was found to be quite dominating in that particular area which is represented by 6 species. This was followed by Euphorbiaceae & Solanaceae, which are represented by 5 & 4 species such as Apocynaceae, Amaranthaceae, Combrataceae and Rutaceae were represented 2 species each. Twenty two families were found to be represented by single species of medicinal plants.

(See in the last page)

Acknowledgement -

I am highly thankful to Dr. G.S. Chauhan, Deputy Secretary of University Grants commission-Central regional office bhopal,for sanction grants for M.R.P.

I also wish to express my deep sense of gratitude to Dr. Pushpa Dubey Principal of Chandra Shekhar Azad Govt. P.G. Nodal College Sehore. & finally to Miss Priya Bhadoriya for her encouragement and valuable suggestions.

References :-

1. Chopra R.N., chopra I.C. & Nayar S.L. (1956). “Glossary of Indian medicinal plants”. CSIR New Delhi : 265-274
2. Duthie J.F. (1994). Flora of upper gangetic plain and of adjacent Siwalik and sub-Himalayan tracts. Repr. Edn. Bishan Singh. Mahendra Pal Singh Dehradun: 1-283.
3. Kirtikar K.R. & Basu B.D. (1933). Indian medicinal plants. Bishan Singh, Mahendra Singh Dehradoon:2793
4. Mishra A. (1997). An ethnobiological studies of Bundelkhand region. Ph.D. Thesis in Botany.Dr. H.S. Gaur Univ. Sagar :1-210.
5. Oomachan M.(1977). The flora of Bhopal. J.K. Jain Brothers Motia Park Sutlania Road Bhopal (M.P.): 1-475.

F.No.	Botanical Name	Verranacular Name	Habit	Family	Therapeutic Application	Parts Used	Type Of Extract	Mode of Application
1	*Achyranthes aspera Linn.*	Adhdhajhara/ Apamarg	Bushy Herb	Amaranthacese	Cut & Wound, Rheumatism.	Whole Plant	Poultise & Juice	Topically & Orally
2	*Adhatoda vasica nees*	Adusa	Subherbacious bush	Acanthaceae	Asthma, Cut & Wound	Leaves	Paste	Topically
3	*Aegle marmelos (Linn.) Corr.*	Belpatra	Tree	Rutaceae	Skin disease, Diarhhoea	Fruit	Juice	Orally
4	*Allium Cepa Linn.*	Piyaz	Biennial Herb	Liliaceae	Cough & Cold, Asthma, Eye disease, Malaria	Bulb	Decoction	Orally
5	*Allium Sativaum Linn.*	Lahsun	Annual Herb	Liliaceae	Cough & Cold	Bulb	Juice	Orally
6	*Aloe vera Mill.*	Gwarpatha	Fleshy Herb	Liliaceae	Skin disease, Cut & Wound, Inflamation	Petiole	Paste	Topically
7	*Amaranthus spinosus Linn.*	Katill Chaulai	Fleshy Herb	Amaranthaceae	Wound healing	Whole Plant	Paste	Topically
8	*Anthocephales Cadamba (Roxb) Miq.*	Kadamb	Tree	Rubiaceae	Diarhhoea	Bark	Paste	Ointment
9	*Argemone maxicana Linn.*	Pili Katili	Annual Prickly Herb	Papavaraceae	Skin disease, Cough, Wound	Leaves & Fruits	Juice & Poultice	Topically & Orally
10	*Asparagus racemousus willd.*	Satabar	Climber	Liliaceae	Diarhhoea & Wound	Tuber	Juice	Orally
11	*Bryonopsis laciniosa Linn.*	Chitrakoti/ Shivlingi	Climber	Cucurbitaceae	Cough & Cold	Fruit	Juice	Orally
12	*Bryophyllum pinnatum Linn.*	Patharchata	Herb	Crassulaceae	Stone problem, Wound	Leaves	Juice	Orally
13	*Calotropis procera (Linn.) R. Br.*	Aak	Shrub	Asclepiadaceae	Wound, Asthma, Gastrointestinal trouble	Leaves, Roots, Latex	Poultice	Ointment
14	*Cassia fistula Linn.*	Kirbora	Herb	Fabaceae	Malaria, Wound Dysentry	Fruit	Decoction	Orally
15	*Cassia Sophera Linn.*	Badi kasondi	Shrub	Fabaceae	Wound	Leaves	Poultice	Ointment
16	*Cassia tora Linn.*	Puar	Small tree	Fabaceae Diarrhroea	Rheumatism,	Fruit	Juice & Poultice	Topically & Orally
17	*Cissus qudraangularis Linn.*	Haddijod	Climber	Vitaceae	Bone fracture	Whole Plant	Juice	Orally
18	*Cleome gynandra Linn.*	Hurara	Herb	Capparidaceae	Wound, Diarhhioa	Leaves & Fruits	Juice & Poultice	Topically & Orally
19	*Curcuma longa linn.*	Haldi	Herb	Zingiberaceae problem	Wound, skin	Rhizome	Juice & Paste	Topically & Orally
20	*Datura alba Linn*	Datura	Herb	Solanaceae	Wound	Leaves & Fruits	Poultice	Topically

F.No.	Botanical Name	Verranacular Name	Habit	Family	Therapeutic	Parts	Type Of	Mode of
21	*Datura metal Linn.*	Kala Dhatura	Herb	Solanaceae	Asthma	Leaves & Fruits	Poultice & Decoction	Topically & Orally
22	*Emblica officinalis Gaertn.*	Amla	Tree	Euphorbiaceae	Wound	Leaves & Fruits	Paste	Topically Orally
23	*Euphobia hirta Linn.*	Dudhai	Small Creeping latexy herb	Euphorbiaceae	Wound	Leaves	Paste	Topically
24	*Ficus glomerata Linn.*	Gular	Tree	Moraceae	Wound, Dysentry	Bark	Decoction	Orally
25	*Ficus religiosa Linn.*	Peepal	Tree	Moraceae	Skin Problem	Leaves & Fruits	Decoction	Orally
26	*Gloriosa superba Linn.*	Laren	Creeping herb	Liliaceae	Skin disease, Wound	Tuber	Decoction & Paste	Topically & Orally
27	*Jatropa curcas Linn.*	Ratanjot	Thorny Shrub	Euphorbiaceae	Wound	Leaves	Paste	Topically
28	*Lantana camara (Linn.)*	Nagar	Shrub	Verbenaceae	Cut & Wound	Leaves	Poultice	Topically
29	*Lawsonia alba Lamk.*	Mehndi	Shrub	Lythraceae	Wound	Leaves	Poultice	Topically
30	*Moringa olifera Lamk.*	Munga	Tree	Moringaceae	Diarrhoea & Dysentry	Flower & Fruits	Infusion	Orally
31	*Murraya koenigii (Linn.) Spreng*	Mithi Neem	Shrub	Rutaceae	Skin disease	Leaves	Paste	Topically
32	*Musa paradisica Linn.*	Kela	Herb	Musaceae	Stone problem, Wonud	Stem	As Vege table	Orally
33	*Nerium indicum Mill.*	Safed Kaner	Shrub	Apocynaceae	Eye flew	Leaves	Juice	Eye Drops
34	*Nyctanthes arbortristis Linn.*	Parijat	Shrub	Nyctanthaceae	Malaria, Cough & Cold, Skin disease	Flower	Decoction	Orally
35	*Ocimum sanctum Linn*	Tulsi	Herb	Lamiaceae	Cough & Cold & Cold, Skin disease	Whole Plant	Decoction	Orally
36	*Oxalis corniculata Linn.*	Khattibuti	Herb	Oxialidaceae	Wound	Leaves	Paste	Topically
37	*Phyllanthus niruri Linn.*	Bhu Amla	Herb	Euphorbiaceae	Diarhhoea	Whole Plant	Juice	Orally
38	*Pongamia pinnata (Linn.) Pierre*	Karanj	Tree	Fabaceae	Wound & Skin Problem, Infammation	Leaves	Paste	Topically
39	*Rauwolfia serpentina Linn. Benth. ex. Kurz.*	Sarpgandha	Herb	Apocynaceae	Wound	Seeds, roots Leaves	Paste	Topically
40	*Ricinus communis Linn.*	Arandi	Shrub	Euphorbiaceae	Skin disease	Leaves	Paste	Orally

F.No.	Botanical Name	Verranacular Name	Habit	Family	Therapeutic	Parts	Type Of	Mode of
41	*Solanum nigrum Linn.*	Makoi	Herb	Solanaceae	Wound, Cough, Skin disease, Asthma	Fruit	Paste & Juice	Orally
42	*Solanum xanthocarpum Schrad. & Wendi*	Bhatkatai	prickly herb	Solanaceae	Cough, Asthama, Skin disease	Flowers	Decoction & Poultice	Topically Orally
43	*Sphaeranthus indicus Linn.*	Gorakhimundi	Herb	Asteraceae	Skin disease	Leaves	Paste	Topically
44	*Syzigium jambolana Linn. Alston*	Jamun	Tree	Myrtaceae	Diarhheoa & Dysentry	Fruit	Decoction	Orally
45	*Termialia arjuna (Roxb.) Weight & Arn.*	Kona	Tree	Combretaceae	Wound	Bark	Decoction & Poultice	Topically Orally
46	*Terminalia tomentosa weight & Arn.*	Saj	Tree	Combretaceae	Wound	Bark	Decoction & Poultice	Topically Orally
47	*Tinospora cordifiolia (willd.) Miers ex Hook, F. & Thoms.*	Gurbel	Climber	Menisper-maceae	Malaria, Wound	Leaves & Stem	Decoction	Orally
48	*Tridex procumbens Linn.*	Ghamara	Herb	Asteraceae	Wound	Leaves	Paste	Topically
49	*Urginea indica (Roxb.) kunth*	Jangli Piyaj	Herb	Liliaceae	Asthma, Rheumatism, Bone fracture	Bulb	Juice	Orally
50	*Withania somnifera (Linn.)*	Ashw gandha	Under Shrub	Solanaceae	Rheumatism	Flower/ Leaves	Juice Decoction	Orally Orally

Ethnobotanical Study Of Medicinal Plants Used By Banjara People In The Region Of District- Neemuch Madhya Pradesh (India)

Dr. H. K. Tugnawat * Anurag Titove **

Abstract - Neemuch district has a valuable source of ethnbotanical and ethnomedicinal uses of herbal remedies.The Banjara people in the region of district Neemuch (M.P.) living in remote forest areas still depends to a great extent on the indigenous system of medicine cultivation. So far studies done in this regard have reported the use of medicinal plants and need of nutritive food by small group of Banjara people of the west part of Madhya Pradesh which is the meeting place of Malwa and Mewar region on the other side of Arawali hills. The information about the medicinal use of Plants has been gathered by personal interviews with Banjara people. These medicinal plants are used by the Banjara people for the treatment of various diseases like dysentery, headache,toothache, skin disease,fever,urinary discharges, antiseptic cough and many diseases. The present paper focuseson the need of nutritive food and medicinal uses of plants by the Banjara folks inhabiting the Neemuch District . The main aim of the present survey is to highlight that Banjara people's knowledge and culture can play an important role in healthresource management. The paper also focuses on the diversity of ethnobotanical plants in the region and their future uses.The study will provide frameworkfor creating awareness among the people to use the medicinal plants and herbs to remedy different types of healthproblems.

Keyword - Ethnobotany,ethnomedicinal plant, nutritive food, Banjara people , rural people, District Neemuch (M.P.).

Introduction - Neemuch district is known for its valuable heritage of ethnobotanical and ethnommedicinal knowledge . The Banjara people living in the remote areas still depend toa great extent on the indigenous system of medicine. Life of the Banjara people reflects ecological and cultural contrast between the hills and plains. There are also significant elements of continuity and the folk culture is still vital in this region. The knowledge on the wonderful and effective use of the ethno medicines by the Banjara people acquired through observation and experienceare passed on from one generation to another through oral traditions as a guarded secret of certain families. The term ethnobotany was coined by John William Harshburger in 1890. The word Ethnobotany is made from two words "ethno and botany" which mean the study of people and plants. This represents good relationship between wild plants(herbs, shrubs and trees) and the ethnic groups inhabiting the region. Ethnobotany is a branch of ethnobiology. Ethnobotany studies the complete information about plants and their medicinal uses. The Banjara people uses wild plants in many different types of ways to meet their basic needs such as food, shelter and clothing. These are the basic needs of human beings. Plants are used as a medicine for treatment of internal and external diseases. Wild plants are also source of income and employment in the rural areas.

In developed countries such as United states, Canada, Germany,Australia and New Zealand 20-25% drugs collected from the medicinal plants contribute to the total drug used in the country. While in the fast developing countries such as China, India, Brazil, Indonesia,and Russia 80-85% contribution comes from the medicinal plants. In these countries out of the 250000 higher plant species known on earth, more than 85000 plant species are medicinal. India is a rich country in medicinal plants because India is characterized by Megha-diversity. District Neemuch is very important part of Madhya Pradesh. A large part of district Neemuch is covered by forest which yields many types of medicinal plants. These medicinal plants are used in Ayurvedic medicines for thousands of years bythe people.

Material andmethod - The ethnobotanical data (Local names,mode of preparation and medicinal uses) were collected through interviews and discussion with the Banjara people or ethnic groups,practitioners in their local language. The interviews provided descriptive responses about the different medicinal uses of plants, detailed information about mode of preparation (decoction ,paste,oil, powder and juice) and the mode of their uses either fresh or dried mixtures of the plants as ingredients .

Observation - The collected plants were identified taxonomically using the Indian medicinal plant literature to provide them nomenclature.The use of medicinal plants for the treatment of different types of diseases by the Banjara people of the region of District- Neemuch (M.P.). The observational details are given below:-

Botanical Name - Adhatoda vasica Linn.

***Asst. Professor, Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA**
****Associate Professor, Govt. Madhav Science College, Ujjain (M.P.) INDIA**

Family - Acanthaceae
Local Name - Adusa
Part used - Leaves &root
Method of used - Direct taken to cure toothache,cough and urinary problem.
Botanical Name - Emblica officinalis
Family - Euphorbiceae
Local Name - Amla/Aawla
Part used - Seed, Fruit,leaf, Bark .
Method of used - The fruit is crushed / directly eaten to cure Digestive, Constipation ,itching ,diabetes and skin problems.
Botanical name –Bauhinia variegate Linn.
Family – Euphorbiaceae
Local name – Kachnar
Part used – Leaf &bark
Method of use – A decoction of the leaf and bark is made. A cup of this decoction is taken to cure dysentery and diarrhea.
Botanical name –Callotropis proccera Linn.
Family - Asclepiadaceae
Local Name - Aakada/Aak
Part used - Leaves and milky latex .
Method of use – Leaves are warm and rubbed on the injured part to provide relief in pain and the milky latex is used to cure the region of cut and wound.
Botanical name - Dhatura strumonium Linn
Family - Solanaceae
Local Name - Dhatura
Part used - Leaves.
Method of use - The fresh leaves are warm and applied on the injured parts to provide relief in pain.
Botanical name - Evovulus alsinoides Linn
Family - Convolvulaceae
Local Name - Shankhpushpi
Method of use - Stem and leaves. A decoction of the leaves and stem is made. A cup of this decoction is taken to cure Vomiting, Headache, diabetes, Weakness and to improve memory.
Botanical name - Ficus glomerata Roxb.
Family - Moraceae
Local Name - Gular
Part used - Fruit milky latex.
Method of use - fruit pulp or milky latex is directly eaten to cure Piles, asthma,diabetes and urinary problem.
Botanical Name - Mimosa pudica Linn.
Family - Fabaceae
Local Name - Lajwanti
Part used - Leaves and root
Method of use - Leaves /roots are crushed (2-3 Table spoon) and immersed in a cup of warm water to cure swelling, jaundice, diarrhea and indigestion.
Botanical name - Temarindus indica Linn.
Family – Caesalpinaceae
Local name – Imali
Part used – Seed
Method of use – 10-20 seeds are roasted and taken to cure stomach pain and diarrhea.
Botanical name - Syzygium Cumini. Linn
Family - Myrtaceae
Local Name - Jamun
Part used - Fruit and seed
Method of use - 10- 20 seeds are driedand crushed in the form of powder (two table spoon) and takento cure diabetes, loose motion and vomiting.
Botanical name - Psidium guyava Linn
Family - Myrtaceae
Local Name - Amrud/ Jamphal
Part used - Leaves
Method of use - Young Leaves and fruits are eaten for diarrhea.
Botanical name - Tinospora Cardifaiia (wild) Linn.
Family - Menispermaceae
Part used - Whole plant .
Method of use - Stem and leaves are crushed in the form of pest (01- 2 spoon) and immersed in a cup of warm water. This infusion is taken to cure fever, jaundice and arthritis.
Botanical name - Withnania somnifera .Linn.
Family - Solanaceae
Local Name - Ashwagandha
Method used - Young leaves are crushed in the form of pest/dry roots are crushed in the form of powder (2 table spoon)and immersed in a cup of warm water. This infusion is taken to cure cough,stimulant, ulcer, fever, and arthritis.
Botanical name - Chlorophytum tubrosum (wild) . Linn
Family - Araceae
Local Name - Safed musaly
Part used - Root
Method used - Fresh Roots are directly eaten to cure Tuberculosis and improve male impotency.
Botanical name - Cissus quandrangularis .Linn.
Family - Vitaceae
Local Name - Hadjor
Part used - Stem
Stem is crushed (2-3 table spoon)and immersed in a cup of warm water. This infusion is taken to cure fracture of bones.
Botanical name - Pangamia pinnata Linn.
Family - Fabaceae
Local Name - Karanj
Part used - Seed and leaf
Method of use - Crushed in the form of pest. The infected skin is covered by the paste to cure Leucoderma and immersed in a cup of warm water. This infusion is taken to cure, Parasitic ide, Malaria.
Botanical name - Madhuka indica Linn.
Family - Sapotaceae
Local Name - Mahua
Part use - Leaves , Flower and seed.
Method of use - Leaves are boiled with water (green tea)to cure body ache and fresh flowers are directly eaten to cure cough and cold.
Botanical Name - Oscimum basilicum. Linn.
Family - Lamiaceae
Local Name - Bun tulsi /Van tulsi
Part used - Leaves and seeds
Method of use - Green tea to cure giddiness, cough and cold .
Botanical name - Azadiracta indica . Linn

Family - Meliaceae
Local Name - Neem.
Part used - Leaves , Bark and seed.
Method of use- Leaves are boiled with water (green water) and its bath is taken to cure skin diseases and etching . A fresh leaf is eaten or its juice is taken to cure feverand heart problem.
Botanical name - Curculigo orchioides. Gertn.
Family - Hipoxidaceae
Local Name- Kalimusali.
Part used - Root .
Method of use - A root juice to cure dysentery.
Botanical name - Asparagus racemosus Wild . Linn
Family - Liliaceae
Local Name - Satawari.
Part use - Root
Method of use- A Fresh root is eaten to cure weakness, headache,fever and urinary disorders. ,
Botanical name - Peppaver somniferum Linn.
Family - Peppavraceae.
Local Name - Aphim .
Part used- BlackLatex.
Botanical name- A small part of the dry leaf and latex(1-2 Gram) is taken to cure dysentery and giddiness.
Botanical name - Acacia nilotica Wild.Linn.
Family - Fabaceae (sub –Family – Mimoceae)
Local Name - Indian Babul.
Part use - stem, leaves and fruit .
Method of use - A small twinge of stem is used as tooth brush to cure toothache.
Botanical name- Boerhaavia diffusa Roxb.
Family - Nyctaginaceae .
Local Name - Punarnava**.**
Part use - Stem and leaves .
Method of use - Leaves and stem juice is used to cure Kidney stone and arthritis .
Botanical Name - Acacia catechu.Linn.
Family - Fabaceae (sub –Family – Mimoceae).
Common Name- Katha, Khair.
Part use - Bark, wood, juice,leaf and flower.
Method of use - The hard wood, leaf or bark juice is used to cure Toothache, Stomach pain and cough &cold.
Botanical name - Albizia lebbek. Benth.
Family - Fabaceae
Local Name - Siris
Part use - The root, Flower seed, and bark
Method of use - pest or juice is used to cure migraine, Hydrocel,toothache, wound and cut .
Botanical name - Jatropha curcas Linn.
Family - Euphorbiaceae .
Local Name - Ratanjot .
Part use - Oil seed .
Method of use - Its oil (1/2 Table spoon) is taken to cure Rheumatic pain and blindness.
Botanical name - Aegal marelos .Linn.
Family - Rutaceae .
Local Name - Bel .
Part use - Leaf and fruit.
Method of use - Its leaf is crushed in the mouth and its fruit juice is taken to cure mouth ulcer , headache, diabetes, dysentery, piles,fever and chest seed pain.
Botanical name - Aloeo vera . Linn
Family - Liliaceae
Local Name - Gwar patha
Part use - Leaves
Method of use - Its jell of leaves is used to cure burn, cuts and wound ache and diabetes.
Botanical name - Hibiscus rosa sinensis .Linn.
Family - Malvaceae
Local Name - Gudhal
Part use - Leaves and seed **.**
Method of use - juice of leaves and seed pest is used to cureCough and cold ,male impotency , hair fall and stomach pain .
Botanical name - Lawsonia inermis . Linn
Family - Lythraceae .
Local Name - Mehandi.
Part use - Leaves
Method of use - pest of leaves is used to cure hair fall and colouring, burn part of body ,headache,jaundice and stomach problem.
Botanical name - Bombex Ceiba.Linn.
Family - Malvaceae .
Local Name - Semal /Semer .
Part use - Leaves and bark .
Method of use - A paste of leaves and bark is used to cure Piles, leprosy, anemia, liver and spleen diseases.
Botanical name - Carissa carandus.Linn.
Family- Apocynaceae .
Local Name - Karonda
Part use - Root and fruit.
Method of use - Its fruit is eaten to cure anemia and constipation.
Botanical name - Bryophyllum pillatum .Linn.
Family - Crassulaceae .
Local Name - Patharchata .
Part use - Leaf and stem.
Method of use - A Juice of leaf and stem is prepared to cure Kidney stone, skin diseases and headache .
Botanical name - Ricinus communis.Linn .
Family - Euphorbiaceae .
Local Name - Arandi .
0Part use - seed oil .
Method of use - Its seed oil is used aspurgative to cure piles, joint pain,headache and skin diseases.
Botanical name - Euphorbia hirta .Linn.
Family - Euphorbiaceae .
Local Name - Dudhi .
Part use - Root and leaf .
Method of use - A juice of root and leaves (1/2table spoon) is prepared and taken to cure cough and dysentery.
Botanical name - Cuscuta reflexaRoxb.
Family - Convolvulaceae.
Local Name - Amar bel.
Part use - Whole plant.
Method of use - A juice of the whole plant is prepared andis taken to cure conjunctivitis, respiratory disorder, piles,ulcer and stomach problem.
Botanical name - Butea monosperma . (Lamk) Taub.
Family - Fabaceae.

Local Name - Palas.
Part use - Root, flower, seed and gum.
Method of use - Semi liquid of Root, Flower, seed and gum (1/2 table spoon) is taken to cure Night blindness, Abdominal warm and arthritis .
Botanical name - Abrus precatorius .Linn.
Family - Fabaceae .
Local Name - Ratti .
Part use - Seed .
Method of use - A paste of seed istaken to cure snake bite and fever.
Botanical name - Centella asitica .Linn.
Family - Apiaceae .
Local Name - Brahmi /Brahmni.
Part use - Leaf and whole plant **.**
Method of use- A juice of the whole plant (2-3 table spoon)is taken to enhance memory and cure blood pressure and chicken pox .
Botanical name - Cynodon dactylon Linn.
Family - Poaceae .
Local Name - Doob ghas .
Part use - whole plant / Leaves .
Method of use - A juice of the whole plant (250 ml – 500 ml) is taken to cure Nasal bleeding , headache and urinary problems.

Conclusion - The present study hasrevealed ethnobotanical and ethnomedicinal knowledge of the Banjara people inhabiting the region of district Neemuch (M.P.). It provided many medicinal details about identified plants with their botanical names, family, local name,part used for medical treatment,methods of uses and medicinal properties. The various observations revealed that district Neemuch is rich in wild plants having ethnobotanical and ethnomedicinal values. It can be seen from the observations made that there are a wide variety of plantsused for every day common ailments and diseases. It is recommended to undertake detailed ethnobotanical/ethnomedicinal studies focusing on the present day situation of the increasing exploitation of plants and natural resources .The main reason for pursuing studies in the field of ethnobotany is its vast outcome that is beneficial for every living being. Nature has gifted us with rich plant diversity that can be brought into sustainable use. The study will provide new information about the medicinal uses of the plants and herbs of the region and how to continue using them in future.

The result of the present study shall have significant contribution andimportant role in the health care system of Banjara people and shall also pave the way for freshefforts to conserve the ethnomedicinal plants.

References :-

1. Ling Ling Zhang, Zhan Zhan Chai, Yu Zhang Yanfui and Yuahua Wang (2005) **Ethnobotanical study of traditional edible plants used by the Naxi people during droughts.This reaserch paper published 2016 . In journal of Ethnobotany &Ethnomedicine .**
2. B K Dutta and P K Dutta (2005) **Potential of Ethnobotanical studies in North East India. This reaserch paper published 2005. In indian journal of Traditionanl knowledge ,Vol. 4 (1) pp7-4.**
3. Luiz Rodrigo Saldanha Gazzaneo, Reinaldo farias Paiva de Lucena and Ulysses, Paulino de Albuquerque (2005), **Knowledge and use of medicinal plant by local specilities in an region of Atlantic Forest in the state of Pernambuco (North Eastern Brazil).** This reaserch paper published 2005 . In journal of Ethnoboilogy &Ethnomedicine . doi :10.1186 /1746-1-9.
4. ALbert L Sajem and Kuldeep Gosai (2006), **Traditional use of medicinal plants by Taintia tribes in North Caehr the district of Assam, North East India. A reaserch paper published 2006 . In journal of Ethnobiology & ethnomedicine . Biocentral.**
5. K. Choudhary, M Singh and U. Pillai- (2008), **Presented ethnobotanical survey of Rajasthan**. This paper published 2008 . In American –Eurasion Journal of Botanny, 1 (2)38-45 , ISSN1995-8951.
6. A A Mao, T M Hynniewla & M Sanjappa- (2008), **Research on plant wealth of North East India, with reference to ethnobotany. A reasech published 2009 In Indian journal of Traditional Knowledge .Vol.8 pp96103.**
7. Chandra Prakash Kala- (2009), **Ethnomedicinal botany of the Apatani in the Eastern Himalayan region of India.This research paper published 2005 . In journal of Ethnobiology &Ethnomedicine . doi :10. 1186 /1746-4269-1-11.**
8. S P Jain and J.Singh (2009), **Research on traditional medicinal practices among the tribal people of Rajgarh (Chhattisgarh) India. This research paper published 2010 . In journal of Natural Product and resources . Vol. I (1) 109-115.**
9. Himanshu Sharma and Ashwani Kumar (2010), **Research paper on ethnobotanical studies on medicinal plants of Rajasthan (India).A research paper published 2011 . In Journal of Medicinal Plants reaserch . Vol. 5-(7)pp ISSN1996-o875.**
10. Jay Shree Rout, Albert L Sajem, Minaram Nath (2010), **Traditional medicinal knowledge of the Zeme (Naga) tribes of North Cachar Hills District, Assam on the treatment of Diarrhoea. A reaserch paper published 2010. In Assam University Journal of Science & Technology ;Biological and Environmental Science . Vol. 5**
11. Jitin Rahul (2010-11), **An Etano botanical study of medicinal plants in Tain dol Village, District Jhansi, Region of Bundelkhand, Uttar Pradesh, India. This paper published 2013 . In Journal of Medicinal Plants Studies . Vol. I ,ISSN 2320-3862.**
12. Benasree Nath, B K Datta & S.B. Paul (2011), **Research on medicinal plants used in curing major ailments by the Jaintia and Rongnai Naga tribes settled in Barak Velly**.A research paper published 2011 . In Journal of Science & Technology , ISSN -0975-2773
13. P Shreedevi, T P Ijinu, S Anzar, A J Bency, V George, S Rajshekharan and Pushpangadan (2013), **Research on ethnobiology, ethnobotany, ethnomedicine and traditional knowledge with special reference to India. This research paper published 2013 , In Annals of Phytomedicine , An Intrnational Journal , ISSN-2278-9839.**
14. Pankaj K Sahu, Vanee Masih, Sharmistha Gupta, Devki L Sen, Anushree Tiwari (2014), **Ethnomedicinal plant used in the healthcare system of tribes of Dantewada, Chhattisgarh, india. This paper published 2014 , In American Journal of Plant Science -1632-1643.**

Impact Of Fly Ash On Some Vegetable Crops (Glycine Max, Brassica Nigra And Zea Mays)

Dr. Nand Kishor Bhagat * Dr. S. P. Singh**

Abstract - Fly ash is chemically heterogeneous in nature on account of being composed of a large number of trace and heavy metals in variable proportions. Fly ash addition in soil generally has shown positive impact on plant biomass production and nutrient uptake. Fly ash addition alters physical properties of soil such as texture, bulk density, water holding capacity and particle size distribution. Addition of 10% ash increased the water holding capacity (WHC) by factors of 7.2 and 13.5 for fine and coarse sands, respectively. Studies on some of the vegetable crops like Glycine max, Brassica nigra and Zea mays indicate yield enhancement due to fly ash application from 10 to 30 percent. Fly ash use as soil ameliorating agent, disease control agent in different vegetable production system and it is also a rich source of micronutrients, so it can improves micronutrient deficiency of vegetable crops.-
Key Word - Fly ash, Vegetation.

Introduction - In our country the power sector is the largest consumer of non-coking coal. Consumption of coal in thermal power plants produces a variety of residues like fly ash, bottom ash, flue gas scrubber sledge etc.

Fly ash is chemically heterogeneous in nature on account of being composed of a large number of trace and heavy metals in variable proportions. Field and greenhouse studies have shown that fly ash can help in growing agricultural crops and forestry species. The presence of relatively large concentrations of elements like K, Mg, Fe, Zn, and Ca in available form can alleviate deficiencies of these elements (Ciravolo and Adriano. 1979). Fly ash addition generally has shown positive impact on plant biomass production and nutrient uptake (Ciravolo and Adriano, 1979: Elfving et al., 1981). It can be used for wasteland reclamation, agriculture and forestry as it plays a vital role in altering physical, chemical and microbiological status of soil. Judicious application of fly ash can bring about favorable alterations in the nutrient status of soil, provided all aspects are constantly monitored for overall benefit. Fly ash helps in restoring the ion balance in wastelands thereby rendering them suitable for raising plants and an absorption medium for industrial effluents. The use of fly ash in agriculture and wasteland reclamation can be important from the point of management of this solid waste. It gains additional importance since soils have a tremendous buffering and diluting effect on these materials. Therefore, disposal and utilization of fly ash needs careful assessment in order to prevent conversion of arable land into landfills and use it as an ameliorant for problem soils (Jala and Goyal. 2004). Restoration and utilization of fly ash dumps for biomass production will be an adjunct to these efforts. The following review highlights the various attributes of fly ash for its application in agriculture and for deriving agronomic benefits.

Application of fly ash for increasing the pH of acidic soils (Phung et al., 1979) and improving soil texture (Chang et al., 1977) was investigated for agronomic benefits (Plank et al., 1975, Adriano et al., 1980; Elseewi et al., 1981 and El-Mogazi et al., 1988) and improving the nutrient status of soil (Doran and Martens 1972 Schnappinger et al., 1975, Hill and Lamp 1980, Wallace et al., 1980, Elseewi and Page. 1984).

Material And Methodology - Fly ash samples were collected as per standard methods from, Sanjay Gandhi Thermal Power Station district Umaria, (M.P.).And healthy seeds of each vegetable crop namely Onion, Barbati and Tomato were obtained from an authorized supplier of seed from Shahdol (MP). All the seed was sterilized with 0.1% mercury chloride for five minutes to avoid fungal contamination and washed with distilled water for three times and soaked in water for five hours. The soaked seeds were evenly sown in a pot, filled with the concentration of fly ash in soil as 10%, 30%, 50%, 70%, and 100%. 15 different seeds and 15 saplings (control) were planted in each pot of different concentration.

The plants were irrigated with tap water at regular routine avoiding over saturation of soil and subsequent seepage of water from the pots. Pots were lined with polythene sheet to avoid leaching.

Result And Discussion - Plant Growth Studies and Estimation of Moisture, Carbohydrate, Chlorophyll, Calcium, Phosphorus, and Iron of Different percentage of fly ash. The results of analysis for moisture, chlorophyll,

*Asst. Professor, Govt. P.G. College, Satna (M.P.) INDIA
**Professor, Govt. Girls College, Shahadol (M.P.) INDIA

carbohydrate, calcium, phosphorus and iron contents of plants of *Glycine max, Brassica nigra and Zea mays* when treated with different percentage concentrations of Fly ash, concentration are given in the table 1,2 &3.

- Analysis of 15, 30 and 45 days old pants of all the species treated with lower percentage of Fly ash (either 10% or up to 30%) the percentage of moisture, chlorophyll, carbohydrate, calcium, phosphorus and iron shows promotary character, when compared with control.
- Whereas, in the case of plants treated with higher concentration of Fly ash (From 50% to 100%) shows the decreasing order.
- From 10% to 100% fly ash, the concentration of fiber shows increasing order when compared with control.

1. **Order of toxicity of Fly ash on Moisture of 15, 30 and 45 days old plants.**
   15 days - BN <ZM<GM
   30 days - BN< GM <ZM
   45 days - BN<GM<ZM
2. **Order of toxicity of Fly ash on Chlorophyll of 15, 30 and 45 days old plants.**
   15 days - GM<ZM<BN
   30 days - GM<ZM<BN
   45 days - GM<ZM <BN
3. **Order of toxicity of Fly ash on Carbohydrate of 15, 30 and 45 days old plants.**
   15 days - BN<GM<ZM
   30 days - BN<GM<ZM
   45 days - BN<GM<ZM
4. **Order of toxicity of Fly ash on Fiber of 15, 30 and 45 days old plants**.
   15 days - GM< ZM<BN
   30 days - GM< ZM <BN
   45 days - GM< ZM <BN
5. **Order of toxicity of Fly ash on Calcium of 15, 30 and 45 days old plants.**
   15 days - GM< ZM<BN
   30 days - GM< ZM<BN
   45 days - ZM<GM<BN
6. **Order of toxicity of Fly ash on Phosphorus of 15, 30 and 45 days old plants.**
   15 days - BN<GM<ZM
   30 days - BN<GM<ZM
   45 days - BN<GM<ZM
7. **Order of toxicity of Fly ash on Iron of 15, 30 and 45 days old plants.**
   15 days - BN<ZM<GM
   30 days - BN<ZM<GM
   45 days - BN<ZM<GM

The presence of metabolites of metal ion of fly ash retards the water absorption and other metabolic activities of plants. Due to retardation of water absorption and other metabolic activities of plants, Plant - water stress occurs whenever the loss of water in the transpiration exceeds the rate of absorption of water. The plant -water stress reduces the rate of photosynthesis along with the reduction in leaf area. Increasing in the percentage concentration of moisture, chlorophyll, carbohydrate, calcium, phosphorus and iron contents of plants when they are treated with a lower concentration of Fly ash (up to 30 %) indicates that lower concentrations of fly ash does not inhibit the rate of absorption and metabolism of Nitrogen as well as the rate of photosynthesis in treating plants. When the percentage concentration of fly ash concentration is higher than 50% it causes a significant decrease in the total chlorophyll content of plants. Reduction in Chlorophyll content may also be due to the Osmotic effect of high concentration of ions which reduces the uptake of Magnesium, Potassium and other mineral ions thereby inhibiting the synthesis of pigments and thus affecting the photosynthetic activities of plants.

So it can be concluded for the decrease observed in moisture, chlorophyll, carbohydrate, calcium, phosphorus and iron of plants when plants are treated with a higher percentage of Fly ash concentration , (<50%) , is due to the effects of the above said factors . Better growth and chlorophyll may be due to the presence of some essential plant nutrients such as Ca, Mg, K, and P in fly ash . Amendment of fly ash also increased soil's porosity, and WHC which may be beneficial for the growth and chlorophyll of plants. Lower concentration of fly ash (up to 30%) had a beneficial effect on plant growth, soil microorganism, were somewhat inversely effected (This may be due to the presence of toxic heavy metal in the fly ash). Use of beneficial microorganism improved growth and chlorophyll of all three species.

References:-

1. Adriano, D.C., Page, A.L., Elseewi, A.A., Chang, A.C., Straugham, I., 1980. Utilization and disposal of fly-ash and coal residues in terrestrial ecosystem: a review Journal of Environmental Quality 9, 333–344.
2. Chang, A.C., et al.,1977. Physical properties of fly ash amended soils. J. Doran, J.W., Martens., D.C., 1972. Molybdenum availability as influenced by application of fly ash to soil. J. Environ. Qual. 1, 186-189Environ. Qual. 6 (3), 267-270.
3. El-Mogazi, D., Lisk, D.J., Weinstien, L.H., 1988. A review of physical, chemical and biological properties of fly ash and effects on agricultural ecosystems. Science of the Total Environment 74, 1–37.
4. Elseewi, A.A., Grimm, S.R., Page, A.L., Straughan. I.R., 1981. Boron enrichment of plants and soils treated with coal ash. J. Plant Nutr. 3. 409-427.
5. Elseewi, A.A., Page, A.L., 1984. Molybdenum enrichment of plants grown on fly ash treated soils. J. Environ. Qual .13, 394-398.
6. Elseewi, A.A., Grimm, S.R., Page, A.L., Straughan. I.R., 1981. Boron enrichment of plants and soils treated with coal ash. J. Plant Nutr. 3. 409-427.
7. Elfving, D.C., Bache, C.A., Gutenmann, W.H., Lisk D.J., 1981. Analysis of crops grown on waste amended soils. Biocycle 12. 44-47.

8. Hill, M.J., Lamp, C.A. 1980. Use of pulverized fuel ash from Victorian brown coal as a source of nutrients for pasture species. Aust. J. Exptl. Agric. Animal Husb. 20, 377-84.
9. Jones, L.H. and Lewis A.V., 1960. Weathering of fly ash. Nature (London), 185:404-405.
10. Jala S., Goyal D.(2004). Characterization of fly ash for agronomic advantage . Indian Journal of Environmental Protection 24 (10), 731-736.
11. Jala S., Goyal D.(2004). Fly ash as a soil ameliorant for improving crop production – a review. Bioresour. Technol.
12. Phung, H.T., Lam. H.V., Lund L.J., Page, A.L., 1979. The practice of leaching Boron and salts from fly ash amended soils. Water. Air and Soil Polka. 12, 247- 254.
13. Schnappinger, M.G. Jr., Martens, D.C., Plank, C.O., 1975. Zinc availability as influenced by application of fly ash to soil. Environ. Sci. Technol. 9,258-261.
14. Wallace, A., Alexander, G.V., Soufi. S.M., Mueller, R.T., 1980. Micronutrient supplying power of pyrite and fly ash. J. Plant Nutr-. 2, 147-153.

Table -1. ANALYSIS OF 15,30& 45 DAYS OLD Glycine max PLANT IN DIFFERENT % OF FLY ASH

S.No.	Conc. Of Fly Ash	Moisture in %			Chlorophyll (mg/g)			Carbohydrate (gm)			Fiber (gm)			Calcium(gm)			Phosphorus (gm)			Iron (mg)		
	Days - >	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45
1	Cont.	70	78	78.45	2.2	2.28	2.34	30.16	31.45	32.23	9.05	9.1	9.19	0.4	0.42	0.43	0.26	0.38	0.36	3.43	3.48	3.48
2	10%	76	80	79.34	2.23	2.31	2.42	31.19	31.78	33.04	9.11	9.17	9.21	0.43	0.45	0.46	0.29	0.4	0.4	3.48	3.52	3.49
3	30%	74	79	78..45	2.21	2.29	2.36	30.88	31.49	32.44	9.19	9.24	9.3	0.41	0.43	0.44	0.28	0.39	0.39	3.46	3.5	3.48
4	50%	68	76	76.44	2.01	2.26	2.31	29.14	30.12	31.89	9.22	9.29	9.37	0.38	0.41	0.42	0.24	0.33	0.34	3.43	3.47	3.47
5	70%	65	75	75.43	1.96	2.23	2.29	28	29.78	31.07	9.29	9.38	9.43	0.36	0.38	0.4	0.22	0.31	0.32	3.41	3.46	2.99
6	100%	59	73	73.38	1.91	2.14	2.21	27.87	28.55	29.3	9.32	9.42	9.5	0.35	0.37	0.38	0.2	0.29	0.3	2.9	3.44	2.94

Table - 2. ANALYSIS OF 15,30& 45 DAYS OLD Brassica Nigra PLANT IN DIFFERENT % OF FLY ASH

S.No.	Conc. Of Fly Ash	Moisture in %			Chlorophyll (mg/g)			Carbohydrate (gm)			Fiber (gm)			Calcium(gm)			Phosphorus (gm)			Iron (mg)		
	Days - >	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45
1	Cont.	$0.67	$2.67	$2.22	1.8	2.21	2.22	32.78	38.68	39.08	6.22	6.33	6.4	0.28	0.26	0.3	0.54	0.57	0.59	4.67	4.87	4.8
2	10%	$0.98	$2.98	$3.32	1.85	2.23	2.26	33.56	38.86	39.66	6.33	6.41	6.48	0.29	0.3	0.34	0.56	0.61	0.6	4.74	4.84	4.85
3	30%	$0.88	$1.88	$2.87	1.83	2.19	2.24	33.23	37.93	39.33	6.41	6.49	6.51	0.28	0.29	0.31	0.55	0.57	0.62	4.67	4.78	4.83
4	50%	$0.54	$1.67	$1.98	1.78	2.15	2.15	32.49	37.27	38.67	6.55	6.62	6.68	0.27	0.23	0.29	0.49	0.54	0.56	4.53	4.63	4.8
5	70%	$0.48	$0.89	$1.89	1.69	2.097	2.1	32.17	36.87	37.47	6.63	6.73	6.79	0.26	0.22	0.25	0.48	0.44	0.51	4.52	4.62	4.72
6	100%	$0.32	$0.77	$0.87	1.58	2.056	2.05	31.55	34.85	35.15	6.71	6.78	6.81	0.24	0.2	0.23	0.46	0.43	0.5	4.47	4.57	4.67

Table - 3. ANALYSIS OF 15,30& 45 DAYS OLD Zea Mays PLANT IN DIFFERENT % OF FLY ASH

S.No.	Conc. Of Fly Ash	Moisture in %			Chlorophyll (mg/g)			Carbohydrate (gm)			Fiber (gm)			Calcium(gm)			Phosphorus (gm)			Iron (mg)		
	Days - >	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45	15	30	45
1	Cont.	74.98	77.96	74.99	2.1	2.18	2.24	19	20.02	21.94	8.02	8.1	8.19	0.3	0.37	0.47	0.25	0.26	0.35	4.43	4.18	4.51
2	10%	76.77	75.77	75.45	2.13	2.22	2.28	19.45	21.3	22.99	8.1	8.19	8.21	0.35	0.38	0.48	0.27	0.3	0.39	4.46	4.22	4.56
3	30%	75.96	75.98	75.46	2.11	2.25	2.26	19.07	21.04	21.56	8.19	8.22	8.31	0.34	0.36	0.5	0.25	0.28	0.36	4.45	4.24	4.5
4	50%	73.99	74.99	74	2.03	2.16	2.22	18	20.01	21.03	8.2	8.3	8.44	0.28	0.34	0.46	0.24	0.24	0.34	4.4	4.16	4.2
5	70%	72.48	74.45	73.98	1.97	2.1	2.19	17.3	18.96	19.65	8.31	8.41	8.52	0.26	0.32	0.43	0.22	0.2	0.32	4.38	4.14	3.98
6	100%	72.44	73.44	73.55	1.9	2.08	2.11	16.96	16.88	18.76	8.42	8.5	8.61	0.23	0.3	0.39	0.21	0.19	0.3	4.36	4.11	3.72

Mercury As A Toxicant

Ramesh Chand Meena *

Abstract - Mercury has been used by human for thousands of years. Although several adverse health effects of mercury have been known for a long time, exposure to it continues, and is even increasing in some part of the world, in particular in less developed countries, those emissions have declined in most developed countries over the last 70 years. Physical and chemical characterizations of mercury need to be treated with caution, as the metal involved are not always consistently defined. As well as being relatively dense, heavy metal tend to be less reactive than lighter metals and have much less soluble sulfides and hydroxides. Mercury is relatively scarce in the Earth's crust but are present in many aspects of modern life. Elemental and methyl mercury are toxic to the central and peripheral nervous systems. The inhalation of mercury vapors can produce harmful effects on the nervous, digestive and immune systems, lungs and kidneys, and may be fatal. The mercury has been studied and their effects on human health regularly reviewed by international bodies such as the WHO. In India, a study by centre for Science and Environment and Indian Institute of Toxicology Research has found that in the country's energy capital singrauli, mercury is slowly entering people's homes, food, water and even blood.

Introduction - Mercury is a chemical element . It is normally known as quicksilver and was formerly named hydrargyrum. A heavy, silvery element ,mercury is the only metallic element that is liquid at standard conditions for temperature and pressure, the only other element that is liquid under these conditions is bromine, those metals such as gallium and rubidium melt just above room temperature. The mercury compound cinnabar (HgS), was used in pre-historical cave paintings for red colours, and metallic mercury was known in ancient Greece where it was used as a cosmetic to lighten the skin. The largest occupational group exposed to mercury is dental care staff. Several experimental studies have shown that mercury vapour is released from amalgam fillings, and that the release rate may increase by chewing. A high dietary intake of mercury from consumption of fish has been hypothesized to increase the risk of coronary heart disease.

Sources of mercury exposure - Compounds of mercury tend to be much more toxic than either the elemental form or the salts. These compounds have been implicated in causing brain and liver damage. The most dangerous mercury compound, dimethylmercury, is so toxic that even a few microliters spilled on the skin, or even on a latex glove, can cause death.

Organic mercury compounds - Methylmercury is the major source of organic mercury for all individuals. Due to bioaccumulation it works its way up through the food web and thus biomagnifies, resulting in high concentrations among populations of some species. Top predatory fish, such as tuna or swordfish, are usually of greater concern than smaller species. A 2006 review of the risks and benefits of fish consumption found, for adults, the benefits of one to two servings of fish per week outweigh the risks, even (except for a few fish species) for women of childbearing age, and that avoidance of fish consumption could result in significant excess coronary heart disease deaths and suboptimal neural development in children. The period between exposure to methylmercury and the appearance of symptoms in adult poisoning cases is long Ethylmercury is a breakdown product of the antibacteriological agent ethylmercurithiosalicylate, which has been used as a topical antiseptic and a vaccine preservative (further discussed under Thiomersal below). Its characteristics have not been studied as extensively as those of methylmercury. It is cleared from the blood much more rapidly, with a half-life of seven to 10 days, and it is metabolized much more quickly than methylmercury. It is presumed not to have methylmercury's ability to cross the blood–brain barrier via a transporter, but instead relies on simple diffusion to enter the brain. Other exposure sources of organic mercury include phenylmercuric acetate and phenylmercuric nitrate.

Inorganic mercury compounds - Mercury occurs as salts such as mercuric chloride (HgCl2) and mercurous chloride (Hg2Cl2), the latter also known as calomel. Because they are more soluble in water, mercuric salts are usually more acutely toxic than mercurous salts. Their higher solubility lets them be more readily absorbed from the gastrointestinal tract. Mercury salts affect primarily the gastrointestinal tract and the kidneys, and can cause severe kidney damage; however, as they cannot cross the blood–brain barrier easily, these salts inflict little neurological damage without continuous or heavy exposure. Mercuric cyanide (Hg(CN)2) is a particularly toxic mercury compound

*Assistant professor (Botany) Govt. College Thanagazi, Alwar (Raj.) INDIA

that has been used in murders, as it contains not only mercury but also cyanide, leading to simultaneous cyanide poisoning.

Elemental mercury - Quicksilver (liquid metallic mercury) is poorly absorbed by ingestion and skin contact. Its vapor is the most hazardous form. Animal data indicate less than 0.01% of ingested mercury is absorbed through the intact gastrointestinal tract, though it may not be true for individuals suffering from ileus. Cases of systemic toxicity from accidental swallowing are rare, and attempted suicide via intravenous injection does not appear to result in systemic toxicity, though it still causes damage by physically blocking blood vessels both at the site of injection and the lungs. In humans, approximately 80% of inhaled mercury vapor is absorbed via the respiratory tract, where it enters the circulatory system and is distributed throughout the body. The most prominent symptoms include tremors (initially affecting the hands and sometimes spreading to other parts of the body), emotional lability (characterized by irritability, excessive shyness, confidence loss, and nervousness), insomnia, memory loss, neuromuscular changes (weakness, muscle atrophy, muscle twitching), headaches, polyneuropathy(paresthesia, stocking-glove sensory loss, hyperactive tendon reflexes, slowed sensory and motor nerve conduction velocities), and performance deficits in tests of cognitive function.

Mercury poisoning - Mercury poisoning is a type of metal poisoning due to mercury exposure. Symptoms depend upon the type, dose, method, and duration of exposure. They may include muscle weakness, poor coordination, numbness in the hands and feet, skin rashes, anxiety, memory problems, trouble speaking, trouble hearing, or trouble seeing. High level exposure to methylmercury is known as Minamata disease. Methylmercury exposure in children may result in acrodynia (pink's disease) in which the skin becomes pink and peels. Long-term complications may include kidney problems and decreased intelligence. The effects of long-term low-dose exposure to methylmercury is unclear. Forms of mercury exposure include metal, vapor, salt, and organic compound. Most exposure is from eating fish, amalgam based dental fillings, or exposure at work. In fish, those higher up in the food chaingenerally have higher levels of mercury. Less commonly poisoning may occur as an attempt to end one's life. Human activities that release mercury into the environment include the burning of coal and mining of gold. Tests of the blood, urine, and hair for mercury are available but do not relate well to the amount in the body.

Signs and symptoms - Common symptoms of mercury poisoning include peripheral neuropathy, presenting as paresthesia or itching, burning, pain, or even a sensation that resembles small insects crawling on or under the skin (formication); skin discoloration (pink cheeks, fingertips and toes); swelling; and desquamation (shedding or peeling of skin). Mercury irreversibly inhibits selenium-dependent enzymes (see below) and may also inactivate S-adenosyl-methionine, which is necessary for catecholamine catabolism by catechol-O-methyl transferase. Due to the body's inability to degrade catecholamines (e.g. epinephrine), a person suffering from mercury poisoning may experience profuse sweating, tachycardia (persistently faster-than-normal heart beat), increased salivation, and hypertension (high blood pressure). Affected children may show red cheeks, nose and lips, loss of hair, teeth, and nails, transient rashes, hypotonia (muscle weakness), and increased sensitivity to light. Other symptoms may include kidney dysfunction (e.g. Fanconi syndrome) or neuropsychiatric symptoms such as emotional lability, memory impairment, or insomnia.Thus, the clinical presentation may resemble pheochromo cytoma or Kawasaki disease. Desquamation (skin peeling) can occur with severe mercury poisoning acquired by handling elemental mercury.

Causes - Exposure to mercury can occur from breathing contaminated air, from eating foods that have acquired mercury residues during processing, from exposure to mercury vapor in mercury amalgam dental restorations, and from improper use or disposal of mercury and mercury-containing objects, for example, after spills of elemental mercury or improper disposal of fluorescent lamps. Human-generated sources, such as coal-burning power plants emit about half of atmospheric mercury, with natural sources such as volcanoes responsible for the remainder. An estimated two-thirds of human-generated mercury comes from stationary combustion, mostly of coal. Other important human-generated sources include gold production, nonferrous metal production, cement production, waste disposal, human crematoria, caustic soda production, pig iron and steel production, mercury production (mostly for batteries), and biomass burning. Small independent gold-mining operation workers are at higher risk of mercury poisoning because of crude processing methods. Mercury and many of its chemical compounds, especially organomercury compounds, can also be readily absorbed through direct contact with bare, or in some cases (such as methylmercury) insufficiently protected, skin. Mercury and its compounds are commonly used in chemical laboratories, hospitals, dental clinics, and facilities involved in the production of items such as fluorescent light bulbs, batteries, and explosives. Many traditional medicines, including Ayurvedic medicine and Traditional Chinese medicine contain mercury and other heavy metals

Mercuric agents - These are some common mercuric agents, which is uses by human in their modern life style. These products are show many adverse effect.

Dental amalgam - Dental amalgam is a possible cause of low-level mercury poisoning due to its use in dental fillings. Discussion on the topic includes debates on whether amalgam should be used, with critics arguing that its toxic effects make it unsafe.

Cosmetics - Some skin whitening products contain the toxic mercury(II) chloride as the active ingredient. When applied, the chemical readily absorbs through the skin into the bloodstream. The use of mercury in cosmetics is illegal in the United States. However, cosmetics containing mercury are often illegally imported. Symptoms of mercury poisoning have resulted from the use of various mercury-containing cosmetic products. The use of skin whitening

products is especially popular amongst Asian women

Fluorescent lamps - Fluorescent lamps contain mercury, which is released when bulbs break. Mercury in bulbs is typically present as either elemental mercury liquid, vapor, or both, since the liquid evaporates at ambient temperature. When broken indoors, bulbs may emit sufficient mercury vapor to present health concerns, and the U.S. Environmental Protection Agency recommends evacuating and airing out a room for at least 15 minutes after breaking a fluorescent light bulb. Breakage of multiple bulbs presents a greater concern. A 1987 report described a 23-month-old toddler who suffered anorexia, weight loss, irritability, profuse sweating, and peeling and redness of fingers and toes. This case of acrodynia was traced to exposure of mercury from a carton of 8-foot fluorescent light bulbs that had broken in a potting shed adjacent to the main nursery. The glass was cleaned up and discarded, but the child often used the area to play in.

Treatment - Identifying and removing the source of the mercury is crucial. Decontamination requires removal of clothes, washing skin with soap and water, and flushing the eyes with saline solution as needed.

Chelation therapy - Chelation therapy for acute inorganic mercury poisoning can be done with DMSA, 2,3-dimercapto-1-propanesulfonicacid (DMPS), D-penicillamine (DPCN), or dimercaprol (BAL). Only DMSA is FDA-approved for use in children for treating mercury poisoning. However, several studies found no clear clinical benefit from DMSA treatment for poisoning due to mercury vapor. No chelator for methylmercury or ethylmercury is approved by the FDA; DMSA is the most frequently used for severe methylmercury poisoning, as it is given orally, has fewer side-effects, and has been found to be superior to BAL, DPCN, and DMPS. á-Lipoic acid (ALA) has been shown to be protective against acute mercury poisoning in several mammalian species when it is given soon after exposure; correct dosage is required, as inappropriate dosages increase toxicity. Although it has been hypothesized that frequent low dosages of ALA may have potential as a mercury chelator, studies in rats have been contradictory.[50] Glutathione and N-acetylcysteine (NAC) are recommended by some physicians, but have been shown to increase mercury concentrations in the kidneys and the brain. Chelation therapy can be hazardous if administered incorrectly. In August 2005, an incorrect form of EDTA (edetate disodium) used for chelation therapy resulted in hypocalcemia, causing cardiac arrest that killed a five-year-old autistic boy.

Conclusion - Recent data indicate that adverse health effect of mercury exposure, primarily in the form of neurological damage. Methylmercury, although certain groups with high fish consumption may attain blood levels associated with a low risk of neurological damage to adults. Since there is a risk to the fetus in particular, pregnant woman should avoid a high intake of certain fish, such as shark, swordfish and tuna. Fish, such as pike, walleye and bass, taken from polluted fresh waters should especially be avoided. There has been a debate on the safety of dental amalgams and claims have been made that mercury from amalgam may cause a variety of diseases, but to date no studies have been able to show any associations between amalgam fillings and ill health.

References:-

1. Gerber, Jeffrey S.; Paul A. Offit (2009). "Vaccines and Autism: A Tale of Shifting Hypotheses". Clinical Infectious Diseases. 48 (4): 456–461. doi:10.1086/596476. PMC 2908388/ PMID 19128068. Archived from the original on 2013-10-31.
2. Doja A, Roberts W (2006). "Immunizations and autism: a review of the literature". Can. J. Neurol. Sci. 33 (4): 341–6. doi:10.1017/s0317167100000528x. PMID 17168158.
3. Counter SA (December 16, 2003). Whitening skin can be deadly. The Boston Globe. Archived from the original on September 1, 2009.
4. "FDA Proposes Hydroquinone Ban". Archived from the original on 2007-07-03.FDA bans hydroquinone in skin whitening products
5. "NYC Health Dept. Warns Against Use of "Skin-lightening" Creams Containing Mercury or Similar Products Which Do Not List Ingredients". January 27, 2005. Archived from the original on May 24, 2007.
6. Counter SA, Buchanan LH. "Mercury exposure in children: a review" (PDF). Archived from the original (PDF) on 2007-06-30.
7. Mahaffey KR. Dynamics of Mercury Pollution on Regional and Global Scales. doi:10.1007/0-387-24494-8_15.
8. In a survey, 28% of Koreans and 50% of Philippians say that they use skin whitening products."Skin lightening in Asia? A bright future?". Archived from the original on 2007-05-25.
9. Bray M (2002-05-15). SKIN DEEP: Dying to be white. CNN. Archivedfrom the original on 2010-04-08. Retrieved 2010-05-12.
10. Aucott M, McLinden M, Winka M (2003). "Release of mercury from broken fluorescent bulbs". J. Air Waste Manag. Assoc. 53 (2): 143–51. doi:10.1080/10473289.2003.10466132. PMID 12617289.
11. "Spills, disposal and site cleanup". U.S. Environmental Protection Agency. 2009-07-13. Archived from the original on 2009-07-01. Retrieved 2009-06-30.
12. Tunnessen WW Jr; McMahon KJ; Baser M (1987). "Acrodynia: exposure to mercury from fluorescent light bulbs". Pediatrics. 79 (5): 786–9. PMID 3575038.
13. Russian lawyer suspects mercury poisoning Archived 2011-12-17 at the Wayback Machine., USA Today.com
14. German inquiry into 'poisoning' of Russian dissidents Archived 2010-12-29 at the Wayback Machine., Telegraph.

****

Screening Of Phytochemicals In Different Extract Of Blackpepper

Keerti Samdariya* R. S. Nigam**

Abstract - The piperaceae family is a source of many biologically active phytochemicals with tremendous potential for medicinal uses. Phytochemical investigation of peripheral aerial parts of the plants revealed that the plant have a large quantity of tartaric acid, acetic acid, gums, pectin, sugars, tannins, phenols, alkaloids, flavonoids & glycosides.These components are very helpful for treatment of pain relief, rheumatism, chills, flu,colds, muscular aches and fever. Pepper is also used in folk medicine as aphrodisiac carminative, stomachic, antiseptic diuretic and for the treatment of arthritis, peripheral neuropathy, melanoderma and leprosy. Black pepper contains several powerful antioxidants and it is one of the most important spices for preventing and curtailing oxidative stress.
Key Words - Black pepper, Piperine, glycosides,flavonoids.

Introduction - Black pepper (*Piper nigrum* L.) is a very widely used spice, known for its pungent constituent piperine. Medicinal herbs as a source of medication have been used throughout the globe in various cultures. According to the WHO, about 80% of world's population use herbal and traditional medicines as a whole or part of the treatment. It is also stated that about 25% of all modern medicines are directly or tindirectly obtained from higher plants. Piper *nigrum* Linn. fruits are commonly known as black pepper , it is one of the most significant and oldest condiments. It is known as the king of spice and valuable for its pungency and flavor. It contains various medicinal properties and is valuable for numerous pathophysiological conditions .*P. nigrum* fruits contains volatile oil, starch,proteins, alkaloids, saponins, carbohydrates and amygdalin but not tannins . Piperine is reported to be the principle pungent alkaloid and the most abundant active constituent of *piper* species. piperine has been found to have immunemodulatory , anti-oxidant, anti-asthmatic, anti-carcinogenic, anti-inflammatory, anti-ulcer, and anti-amoebic properties .

Aim Of The Study - The aim of this study is to determine the phytochemical activity of black pepper in different extracts .

Materials And Method -

1. **Collection and drying -** Fresh peppercorn of *Piper nigrum* was collected from market of satna (m.p.). The black pepper was washed thoroughly three times with sterile distilled water. The materials were air dried under hot air oven at 55°C for 3 hours and powdered. The powdered samples were sealed in separate polythene bags until the time of the extraction.

2. **Extract preparation -**

1. **water extraction -** 50 gm of powder was taken in soxhlet apparatus and add 250 ml distilled water. After 48 hours extract was collected in a beaker till the solvent appeared colourless.
2. **Ethanol extract -** 50 gm powder of piper nigram was taken in soxhlet apparatus and add 250 ml ethanol .After 8 hours extract was collected in a beaker till solvent appeared colourless

Phytochemical analysis -

1. **Test for saponins -** Two g of the powered sample was boiled in 20 ml of distilled water in a water bath. Ten ml of the filterable was mixed with 5 ml of distilled water shaken vigorously for a stable persistent froth. The following was mixed with 3drops of Olive oil and shaken vigorously. Then observed for the formation of emulsion.
2. **Test for tannins -** A quantity of 0.5 g of the dried powdered sample was boiled in 20 ml of water and filtered. A few drops of 0.1%Ferric chloride was added and observed for brownish or bluish black colour .
3. **Test for alkaloids (Meyer's test) -** A quantity of 0.5 g of the dried powdered sample was boiled in 20 ml of water and filtered. To a few drops of the filtrate, a drop of Meyer's reagent was added by the side of the test tube. A creamy or white precipitate indicates the test is positive.
4. **Test for flavonoids -** A portion of the powdered sample was heated with 10 ml of Ethyl acetate over a steam bath for 3 minutes and then mixture was filtered. 4ml of the filtrate was shaken with diluted Ammonia. Yellow coloration indicates the presence of flavonoids.

*Asst. Professor (Biochemistry) AKS University, Satna (M.P.) INDIA
**Dean (Education) AKS University, Satna (M.P.) INDIA

5. **Test for cardiac glycosides -** About 0.5 g of the extract was dissolved in 2 ml of glacial acetic acid containing 1 drop of 1% FeCl3. This was underlaid with conc. H2SO4. A brown ring obtained at the interface indicated the presence of a deoxy sugar, characteristic of cardiac glycosides. A violet ring may appear below the ring while in the acetic acid layer, a greenish ring may form just above ring and gradually spreads throughout this layer.
6. **Test for phenolic compounds (Ferric chloride test)-** Three hundred mg of extract was diluted to 5 ml of distilled water and filtered. To the filtrate 5 % of ferric chloride was added. Dark green color indicates the presence of Phenolic compounds.

Table - 1 - Phytochemical analysis of *Piper nigrum* ethanol extract (See)

Table - 2 - Phytochemical analysis of *Piper nigrum* distilled water extract (See)

Results And Discussion - Phytochemical analysis of ethanol extract and distilled water extract of *Piper nigrum* showed the presence of tannins, alkaloids and cardiac glycosides and results are given in the Table – 1&2

References :-

1. F. A. Draughon, *Food Technology*, **2004**
2. M. M. Cowan, *Clinical Microbiology Reviews*, **1999**.
3. P. K. Lai, J. Roy, *Current Medical Chemistry*, **2004**
4. N. S. Sashidhar, Osmania University, **2002**, Hyderabad, India. CSIR, Council of Scientific and Industrial Research, New Delhi, **1989**
5. P. Saranraj, S Sivasakthi, Global Journal of Pharmacology, **2014**
6. B. Mahesh, S. Satish, *World Journal of Agricultural Sciences,* **2008**
7.]S. P. Swadhini, R. Santhosh, C. Uma, S. Mythili, A. Sathiavelu, *International Journal of Pharma and BioSciences,* **2011**
8. Nisar, A., Fazal, H., Abbasi, B.H., Farooq, S., Ali, M., Khan, M.A.,Asian Pac J Trop Biomed 2012
9. Srinivasan, K., Crit Rev Food Sci Nutr 2007, 47, 735-748.
10. Parmar, V.S., Jain, S.C., Bisht, K.S., Jain, R., Taneja, P., Jha, A. et al.,
11. Phytochemistry 1997, 46, 597-673.
12. Reshmi, S.K., Sathya, E., Devi, P.S., African J Pharma Pharmacol 2010, 4, 562-573

Table - 1 - Phytochemical analysis of *Piper nigrum* ethanol extract

S.No	Test	Inference	Result
1	Saponins	No Frothing	Absent
2	Tannins	Brownish Green color was appeared	Present
3	Alkaloids	Alkaloids Creamy white precipitate was appeared	Present
4	Flavonoids	No yellow color	Absent
5	Cardiac glycosides	Greenish and violet ring appeared	Present
6	Phenolic compounds	No dark green color	Absent

Table - 2 - Phytochemical analysis of *Piper nigrum* distilled water extract

S.No	Test	Inference	Result
1	Saponins	No Frothing	Absent
2	Tannins	Brownish Green color was appeared	Absent
3	Alkaloids	Alkaloids Creamy white precipitate was appeared	Present
4	Flavonoids	No yellow color	Absent
5	Cardiac glycosides	Greenish and violet ring appeared	Present
6	Phenolic compounds	No dark green color	Present

****

Impact On The Yamuna Water Quality Due To The Discharge Of Industrial And Domestic Effluents

Dr. Alka Yadav *

Abstract - Observed concentrations of various pollutants and values of oxygen demands during two year of study were averaged and by using total discharge factor produced from the various drains, total load of various pollutants were calculated. There is a remarkable difference in the water quality of river Yamuna from upstream to downstream.

Introduction - Environmental Impact Assessment (EIA) is one of the primary tools to date for the environmental manager and a useful guide for decision making. It is a produce for bringing out the potential effects of human activities on environmental systems (T.N. Khoshoo)[1].

Effluent characteristics differ from country to country, city to city and even from street to street. The characteristics of industrial and domestic effluent within a city affect the water quality of receiving stream in different ways. Further effluent properties also vary with season, depending upon the availability of fresh fruits, vegetables, holidays and tourism. Finally sewage and its composition changes over the years with variation in prosperity, food habits, use of disposable paper and other products and types of various industrial effluents.

The municipal corporation of Agra is scattered over an area of 63 km^2 with a population of about 16 lacs. The population produces a large quantity of sewage, spoiling the water quality of the Yamuna. The problem is aggravated with an increase in population as more and more people are migrating from rural areas to the city. A large number of industries also originated in the city every year to further deteriorating the situation. It is imperative to know the impact of the various drains on the water quality of river Yamuna to develop proper strategies for their sage and hygienic disposal and to design a better disposal system. For example, the design of a system to generate energy from waste will require detailed information on the amount and composition of waste to be handle. The present investigation aims at evaluating the impact of industrial and domestic effluents on the river water quality to propose suitable measurements for a better management of industrial and domestic waste and river water in Agra.

To evaluate the impact of industrial and domestic effluents on the water quality of the Yamuna river, the following objectives were set forth to study.

(i) Total load exerted by various drains.

(ii) Increase in the pollutant concentrations from upstream to downstream.

Calculation - The discharge factor (63.23 MLD) was equal to the total discharge of all the drains produced per day. The increase in the concentration of the various pollutants from upstream to downstream was made by calculating an average value for each parameter at both stations and differences were presented in percentage.

Table - 1 Total Discharge of Various Pollutants in Kg/Day **(See in the last page)**

Table - 2 Average Increase in the Pollutants (Physico-chemical) from Upstream to Downstream at Agra **(See in the last page)**

Table - 3 Average Increase in the Pollutants (Heavy Metal) from Upstream to Downstream at Agra **(See in the last page)**

Results - Total load exerted by 18 drains on the river Yamuna at Agra, is presented in Table 1 and Ave. Increase from upstream to downstream are shown in Table 2 and 3.

Discussion - It was clear to the above data that total BOD and COD load exerted per day by city were 15055.88 Kg and 49342.8 Kg respectively. COD load was about three fold to BOD load. The average increase in BOD and COD from upstream to downstream were 97.4% and 135.83%. The cause of this increase in the Oxygen demands may be due to the addition of untreated effluents of a large number of distilleries and tanneries. Large volume of city sewage is another reason for the increase in organic pollution in the river. The organic pollution is essentially of two types; industrial effluents and urban waste.

Regarding industrial pollution, there are about 132 medium and large industries; 86 in U.P., 3 in Bihar, and 43 in West Bengal. Out of the 86 in U.P. nearly 59 are tanneries. Though most of the large industrial units have effluent treatment plants in operation but they are not able to achieve the prescribed standards. In terms of BOD discharge in Kg/day, the relative load of the three state is given in table. It is obvious, while maximum pollution load though domestic sources is from West Bengal, that of industrial source is

*Deptt. of Chemistry, St. John's College, Agra (U.P.) INDIA

from Uttar Pradesh.

Table - 4 BOD discharge in Ganga from Three states (Figures in brackets are in percentage)

State	BOD discharge in kg per day	
	Domestic	Industrial
Uttar Pradesh	371,626(34.1)	718,274(65.9)
Bihar	56,172(52.5)	50,828(47.5)
West Bengal	266,076(70.2)	112,924(29.8)

By volume, cities contribute 82% and industries 18% of pollution, but way of BOD it may be about as equal. Cd, Cu, Cr, Fe, Mn, Ni, Pb and Zinc were found in small amounts 5.27, 3.71, 184.80, 75.4, 4.67, .60 and 77.56 ¼g l^{-1} respectively at upstream but an enormous increase 0.24, 12.25, 6.82, 240.91, 53.50, 3.87, 0.61 and 130.34 respectively in the amount was found at downstream. The increase in the amount of copper and chromium was due to the metal plating effluents which contains concentrations of chromium and copper below 10 mg l^{-1}. Sometimes, if the electrolyte is not allowed to drip off the article before its washings, the concentrations of poisons can rise up to as high as 1000 mg/litre (N.F. Voznaya)[3]. The increase in sodium (6.99 mg l^{-1} or 52.04%) may be due to the printing industries effluents. N. Khan and N. Rajashekaran[4] observed 357 and 1355 mg l^{-1} of sulphate and sodium in the paper factory effluent. Among the heavy metals iron and manganese was discharged in large quantities (58.98 and 13.02 Kg) into the river. However other metals are relatively in small quantities. The cause of high quantity of iron and manganese in the downstream may be attributed to the discharge by steel plant effluents.

Conclusion - As there is a remarkable difference in the water quality of river Yamuna from upstream to downstream it clearly reveals that there is a significant impact of urbanisation and industrialisation of the river Yamuna at Agra.

References :-

1. Khoshoo, T.N.; Key note Address at the 33rd Annual Convention of the Institute of Indian Foundrymen, New Delhi on 19th March (1984).
2. Chaudhuri, N.; Water and Air Quality Control: The Indian Context. Tenth Anniversary of the 1972 Stockholm Conference on Human Environment. (1982).
3. Voznaya, N.F.; Chemistry of Water & Microbiology Mir Publishers Moscow'. (1981).
4. Kannan, N. And Rajasekaran, N.; Indian J. Environ. Hlth., 33(3), 330-335 (1991).

Table - 1 Total Discharge of Various Pollutants in Kg/Day

Physico-chemical			Heavy Metals		
Pollutant	Average value (mg l^{-1})	Total Quantity Kg	Pollutant	Average value (¼g l^{-1})	Total Quantity Kg
TDS	1030.58	65194.49	Cadmium	0.73	0.046
BOD	238.06	15055.88	Copper	51.60	3.26
COD	780.46	49342.8	Chromium	16.29	1.03
Calcium	134.36	8499.61	Iron	932.4	58.98
Magnesium	50.19	3175.01	Manganese	205.96	13.02
Chloride	312.8	19787.72	Nickel	13.37	0.84
Fluoride	1.17	74.01	Lead	1.905	0.12
Sodium	76.7	4852.04	Zinc	192.54	12.18
Nitrate	13.15	831.86	Total Coliforms	8180231.5	5.17×10^{15}
Phosphate	7.78	492.16		(per 100 ml)	per day

Table - 2 Average Increase in the Pollutants (Physico-chemical) from Upstream to Downstream at Agra

Pollutant	Average Concentration at Upstream (Kailash) (mg l^{-1})	Average Concentration at Downstream (Taj) (mg l^{-2})	Average Increase Difference (mg l^{1})	In percents
BOD	11.07	21.86	10.79	97.47%
COD	53.25	125.58	72.33	135.83%
Chloride	149.0	179.16	30.16	20.24%
Fluoride	0.60	0.80	0.20	33.33%
Phosphate	4.24	5.86	1.62	38.20%
Nitrate	1.46	2.40	0.94	64.38%
Sodium	13.43	20.42	6.99	52.04%
Potassium	10.40	14.82	4.42	42.50%
Calcium	71.79	9.36	27.66	38.57%
Magnesium	34.41	36.88	2.47	7.17%
TDS	461.0	659.33	198.33	43.02%

Table - 3 Average Increase in the Pollutants (Heavy Metal) from Upstream to Downstream at Agra

Pollutant	Average Concentration at Upstream (Kailash) (¼g l^{-1})	Average Concentration at Downstream (Taj) (¼g l^{-1})	Average Increase Difference (¼g l^{-1})	In percents
Cadmium	ND	0.24	0.24-	
Copper	5.27	17.52	12.25	232.44%
Chromium	3.71	10.53	6.82	215.14%
Iron	184.80	425.71	240.91	130.36%
Manganese	75.40	128.90	53.50	70.95%
Nickel	4.67	8.54	3.87	82.86%
Lead	0.60	1.21	0.61	101.66%
Zinc	77.56	207.9	130.34	168.05%

****

घरेलू हिंसा एवं महिलायें

जयंती जोशी *

प्रस्तावना – 'घरेलू हिंसा वह अभिशाप है जो नारी के तन–मन और आत्मा पर आघात पहुँचाती है।'

घरेलू हिंसा स्त्रियों के विकास को अवरूद्ध करने का एक हथियार है। स्त्रियों के विरूद्ध हिंसा का विषय आज सभी सांस्कृतिक, भौगोलिक, नस्लीय, जातीय वर्गीय सीमाओं को तोड़ता हुआ सार्वभौमिक विषय हो गया है।

लगता था आजादी के बाद महिलाओं की स्थिति बेहतर होगी, नई शिक्षा एक नई आधुनिकता समाज में जाग्रति लाएगी और महिलाए पुरूषों की तरह समाज में समान अवसर पाकर एक नये समाज की संरचना में हाथ बटाँएगी, लेकिन दुर्भाग्य से वैसा हुआ नहीं है। महिलाए आगे जरूर आई है और आज लगभग हर क्षेत्र में वह पहले की तुलना में ज्यादा दिखाई दे रही है पर महिला उत्पीड़न की घटनाए कम नहीं हुई है। नतीजा यह है कि महिलाए आज भी अपने को असुरक्षित महसूस करती है। दहेज, हत्या, बलात्कार, शारीरिक, मानसिक उत्पीड़न के चलते समाज में स्त्रियों को कई अवरोधो का सामना करना पड़ रहा है। यह एक सच्चाई है कि उत्पीड़न के तौर तरीके में भले ही फर्क हो पर शहरी और ग्रामीण स्त्रियाँ समान रूप के अवहेलना उपेक्षा और दमन का शिकार हो रही है।

घरेलू हिंसा से महिलाओं का सरंक्षण अधिनियम 2005 की धारा 3 में दी गई परिभाषा के अनुसार

'परिवार में किसी भी महिला के साथ उसके पति अथवा परिजनों द्वारा किया जाने वाला प्रत्येक ऐसा कृत्य घरेलू हिंसा माना जायेगा जिससे महिला का परिवार में जीना दूभर हो जाए अथवा उसे शारीरिक व मानसिक पीड़ा हो, उस पर अद्यतन हमला या उसके साथ अनैतिक आचरण सहित सभी प्रकार की क्रूरता इसमें शामिल है। महिलाओं के साथ होने वाली हर तरह की प्रताड़ना को इसमें शामिल किया गया है।'

इस अधिनियम में कुल 37 धाराए है जिनके अंतर्गत घरेलू हिंसा सरंक्षण अधिनियम का परिपालन किया जाता है। इस अधिनियम में घरेलू हिंसा को चार भागों में विभक्त किया है।

- **शारीरिक हिंसा –** इसमें मारना, पीटना, धक्का देना, थप्पड़ मारना, लात, घुसे मारना या अन्य तरीके से शारीरिक पीड़ा या क्षति पहुंचाना शामिल है।
- **लैंगिक हिंसा –** इसके अंतर्गत बलात लैगिंक संबंध बनाना अश्लील साहित्य या फिल्म सामग्री देखने के लिए मजबूर करना, अश्लील हरकत करना।
- **मौखिक हिंसा –** इसके अंतर्गत अपमान, गाली–गलौच करना, ताने देना, व्यंग करना शामिल है।
- **आर्थिक हिंसा –** महिला या उसे बच्चों के अनुरक्षण के लिए धन उलपब्ध न करना, खाना कपड़े दवाईयों उपलब्ध न करवाना, महिला का वेतन छीन लेना घर से बाहर निकलने के लिए मजबूर करना।

संयुक्त राष्ट्रसंघ की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में 15 से 49 वर्ष की 70 प्रतिशत महिलाए घरेलू हिंसा की शिकार होती है।

डॉ.राम आहूजा के द्वारा घरेलू हिंसा से संबंधित अध्ययन से निकाले गए निष्कर्ष के अनुसार

- 25 वर्ष से कम आयु की स्त्रियों के साथ मारने पीटने की घटनाए अधिक होती है।
- शिक्षित स्त्रियों की तुलना में अशिक्षित स्त्रियों को अधिक पीटा जाता है।
- जो लोग बचपन में हिंसा के शिकार होते है वे बड़े होने पर पत्नी को पीटने में अधिक रूझान रखते है।
- ह्यूमन डेव्लपमेंट सोसायटी के अध्ययन (अम्टूबर 1985 से 2005) के बीच डेढ़ लाख प्रसुतियों पर किए गए सर्वे से सामने आया की घरेलू हिंसा का सबसे अधिक प्रभाव गर्भस्थ बालिकाओं पर पड़ता है।
- 'वूमन वायस' के अध्ययन के अनुसार देश के सबसे साक्षर राज्य होने के बावजूद केरल में महिलाओं को खिलाफ घरेलु हिंसा के मामलों की दर ऊँची है।
- 2007–08 के दौरान लगभग 59 प्रतिशत विवाहित महिलायें घरलु हिंसा की शिकार हुई साथ ही दहेज हत्या के 1.172 मामले सामने आए।
- घरेलु हिंसा के मामलों में भारत के पांच राज्यों में मध्यप्रदेश (17.61 प्रतिशत) उत्तर प्रदेश (15.7 प्रतिशत) महाराष्ट्र (13.9 प्रतिशत) आन्ध्रप्रदेश (7.9 प्रतिशत) तथा राजस्थान (7.5 प्रतिशत) घरेलु हिंसा का प्रतिशत रहा।

भारत ही नहीं विश्व के अधिकांश देशों में महिलाए इससे पीड़ीत है। दुनिया की हर छटी महिला घरेलु हिंसा की शिकार है। ब्रिटेन में 25 प्रतिशत श्रीलंका में 60 प्रतिशत पाकिस्तान में 80 प्रतिशत एवं बांग्लादेश में 47 प्रतिशत महिलाए घरेलू हिंसा की शिकार है।

घरेलू हिंसा के कारण –

- आर्थिक आत्मनिर्भरता न होना
- पारिवारिक दबाव
- गरीबी
- अशिक्षा
- सामाजिक मान्यताए

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

- आत्मविश्वास में कमी
- पुरूष का अहम
- कुप्रथाए
- नशा
- संवेगात्मक परिपक्वता का अभाव

घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 –महिला उत्पीड़न रोकने के लिये कई कानून बने लेकिन महिलाओं के साथ होने वाले घरेलू हिंसा के मामले रूके नहीं या उनसे बचने के रास्ते निकाल लिए गए। संयुक्त राष्ट्र की एक समिति ने वर्ष 1989 में यह अनुशंसा की समस्त देशों को महिलाओं के प्रति किसी भी प्रकार की हिंसा को रोकने के लिए कार्य करना चाहिये विशेष तौर पर जब वह हिंसा परिवार/कुटुम्ब में घटित हो रही हो।

इस परिस्थितियों में घरेलु हिंसा घटित होने से रोकने के लिए संसद में 'घरेलू हिंसा महिला संरक्षण अधिनियम 2005' अधिनियमित किया गया जो दिनांक 26 अक्टूम्बर 2006 में प्रभावशाली हुआ एवं सम्पूर्ण देश में लागू कर दिया गया।

घरेलू हिंसा महिला संरक्षण अधिनियम 2005 के प्रभावी अनुपालन के लिये विकास खण्ड स्तर पर संरक्षण अधिकारी नियुक्त किये जाते है जिसमें एकीकृत बाल विकास परियोजना अधिकारी ही संरक्षण अधिकारी के रूप में काम करता है। पीड़ित महिला को अपनी शिकायत संरक्षण अधिकारी के पास दर्ज करानी पड़ती है। संरक्षण अधिकारी प्रारूप एक में रिपोर्ट तैयार कर मजिस्ट्रेट को देता है एवं उसकी प्रतियां स्थानीय थाना प्रभारी, पीड़ित एवं सेवा प्रदाता को दी जाती है। इसके पश्चात् पीड़िता द्वारा धारा 12 के तहत् प्रारूप दो में घरेलु हिंसा से राहत पाने के लिए मजिस्ट्रेट को आवेदन करती है।

मजिस्ट्रेट तीन दिन के अंदर सुनवाई एवं 60 दिन के अंदर निपटारा करने का प्रयास करते है। न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 18 से 22 तक के प्रावधानों के तहत् संरक्षण निवास, राहत राशि, भुगतान, सजा आदि के फैसले दिये जाते है।

घरेलू हिंसा के प्रकरणों में यह जरूरी नहीं कि पीड़ित महिला के साक्ष्य की पुष्टि में अन्य सबूत भी उपलब्ध हो यदि महिला के स्वत: के साक्ष्य विश्वसनीय है तो उस साक्ष्य पर न्यायालय भरोसा कर सकता है। इस कानून के तहत दोषी को जुर्माना तथा जेल तक की सजा का प्रावधान है।

अगर किसी केस से संबंधित अधिकारी अपनी ड्यूटी के प्रति लापरवाह अथवा आरोपी से मिला हुआ या संरक्षण आदेश का उल्लघंन करते हुये पाया गया तो उसे भी सजा के साथ जुर्माना भरना पड़ सकता है।

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं के अधिकार –

- घरेलू हिंसा से पीड़ित महिला को नि:शुल्क कानूनी सहायता संबंधित राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराए जाने का प्रावधान।
- घरेलू हिंसा के कृत्यों से स्वयं और स्वयं के बालकों के लिए संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार।
- यदि पीड़ित महिला के पास निवास की व्यवस्था नहीं है, तो उसे अस्थायी आश्रय उपलब्ध कराने का प्रावधान।
- चिकित्सा सहायता, आश्रय, परामर्श आदि सहायता प्राप्त करने का अधिकार।
- किसी खतरे के बचाव से पुलिस या संरक्षण अधिकारी की सहायता लेने का अधिकार।
- घरेलू हिंसा के कारण हुई शारीरिक मानसिक क्षति हेतु क्षतिपूर्ति का अधिकार।
- स्त्रीधन, आभूषण, कपड़ों और दैनिक उपयोग की वस्तुओं को वापस कब्जे में लेने का अधिकार।
- की गई शिकायतों, आवेदनों, चिकित्सकीय व अन्य परीक्षण रिपोर्ट की प्रतियां प्राप्त करने का अधिकार।
- घरेलू हिंसा के संबंध में किसी प्राधिकारी द्वारा लिखित कथन की प्रतियां प्राप्त करने का अधिकार।

इस कानून की संभावनाए –

- यह कानून हमारे देश का पहला कानून है, जो घरेलू हिंसा को कानूनी मान्यता देता है।
- यह कानून महिला के मौलिक अधिकारों का दायरा बढाते हुये बिना किसी डर के सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार देता है।
- यह कानून घरेलू हिंसा को महिला के मानव अधिकारों के हनन के रूप में देखता है।
- इस कानून के अंतर्गत घरेलू हिंसा को रोकने की जिम्मेदारी केन्द्र व राज्य सरकार की है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 'महिला संरक्षण अधिनियम 2005' घरेलू हिंसा को रोकने के लिए उठाया गया महत्वपूर्ण कदम है। परन्तु क्या केवल अधिनियम बना देने से घरेलू हिंसा रूक सकती है? भारत के गांवों में रहने वाली 60 प्रतिशत महिलाओं की दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है। गरीबी, कुपोषण और अशिक्षा के दुष्चक्र में फसी ये महिलायें कैसे इस कानून का लाभ उठा सकती है? यहां तक की गांवों में ही नहीं शहरों की भी अनेक महिलाओं को इस अधिनियम एवं इसके प्रावधानों की जानकारी नहीं है। अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि कानून बनाने से अधिक महत्वपूर्ण है इस कानून को जन–जन तक पंहुचाया जाए।

इस कानून की जानकारी शहरी व ग्रामीण महिलाओं को होना आवश्यक है ताकि वे न केवल स्वयं विधिक जागरूक हो सकें बल्कि किसी प्रकार की हिंसा को झेल रही अपने आस–पास रहने वाली महिला चाहे वह उनकी सहेली, रिश्तेदार, काम वाली बाई, सहकर्मी हो को भी इस कानून से अवगत करा सकें व अपने हितों के प्रति जागरूक कर सकें।

घरेलू हिंसा को रोकने के लिए हमें सामाजिक रूप से प्रत्यत्न करने होगे जिसमें समाज सेवी संस्थाओं गैर शासकीय संगठनों तथा शासन को मुख्य भूमिका निभानी होगी।

महिलाओं की शिक्षा पर जोर देना होगा उन्हें आर्थिक आत्मनिर्भर बनाना होगा क्योंकि महिला सशक्तिकरण इसके बगैर संभव नहीं है।

जब तक नारी स्वयं जागृत नहीं होगी तब तक ज्यादा बदलाव आने वाली नहीं है। महिलाओं को स्वयं अपनी स्वरक्षा करनी होगी उसे अपनी मानसिकता और सोच को सबल व सशक्त बनाने की जरूरत है। महिलाओं को महिला हिंसा का विरोध करना होगा। निरंकुशता व अन्याय के विरूद्ध दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ आगे आना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मानवाधिकार एवं महिलाए – डॉ.एम.एन. सिंह।
2. घरेलू हिंसा एक विश्लेषण (लेख) – डॉ.रानू राठौर।
3. घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 के विविध आयामडॉ.भावना शर्मा।
4. घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 – संतोष डहेरिया एवं संवित डहेरिया।

प्रभावशाली व्यक्तित्व के गुण एवं तकनीक 'व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में'

कृष्णा शर्मा *

प्रस्तावना – आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व व्यक्तित्व के लिए पर्सनालिटी शब्द का उपयोग किया जा सका था। 'परसोनाब लैटिन भाषा का शब्द हैं जिसका अर्थ नकाब अथवा वेष–भूषा हैं। दूसरे शब्दों में 'परसोना' का अर्थ हैं– एज वन एपीयर टू अदर।

'व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक गुणों का वह गत्यात्मक सगंठन हैं, जो व्यक्ति वातावरण के प्रति अपूर्व समायोजन को निर्धारित करता है।'

– जी0 डब्लू0 आलपोर्ट

'व्यक्तित्व की परिभाषा उस अति विशेषापूर्ण संगठन के रूप में की जा सकती हैं, जिसमें व्यक्ति की संरचना,व्यवहार के ढंग रूचिया अभिवृतियाँ क्षमताएँ ,योग्यताएँ सम्मिलित है। – एम0 एन0 मन

व्यक्तित्व का अर्थ – 'व्यक्तित्व की परिभाषा विभिन्न व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार से की है। व्यक्तित्व के अर्थ के सम्बन्ध में कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिकों के विचार निम्नलिखित हैं—

'व्यक्तित्व व्यक्ति के संरचना व्यवहार के तरीके रूचि अभिवृति क्षमता योग्यता तथा झुकाव का एक विशिष्ट संगठन हैं।'

– मन

'व्यक्तित्व वातावरण के साथ लगातार समायोजन का परिणाम होता हैं।'' – बोरिंग

प्रभावशाली व्यक्तित्व के लिए निम्नलिखित गुण एवं तकनीति अपनाई जा सकती है

जिम्मेदारी – जिम्मेदारी का मनुष्य के जीवन में बहुत महत्व हैं। इसे समझना एवं स्वीकारना चाहिए, जिम्मेदारी से मुह मोड़ना छोटेपन की निशानी होती है। अच्छे व्यक्तित्व हेतु अपनी जिम्मेदारी को निष्ठापूर्वक पूर्ण करना चाहिए।

सोच – सोच हमेशा सही व सकारात्मक रखना चाहिए। मनुष्य जो सोचता है, उसका उसके व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पडता है। सबकी जीत में हमेशा अपनी जीत सुनिश्चित होती है एवम् सेवा भाव से जीत हासिल होती है। ये विचार रखना चाहिए।

सकारात्मक विचार – आलोचना व शिकायत न करे, पर सही आलोचना अवश्य करे। मद्द करने के लिए आलोचना अवश्य करे पर किसी को नीचा नहीं दिखाए। अपनी बात को सकारात्मक रूप से तथा प्रशंसा के साथ खत्म करना चाहिए।

मुस्कुराहट – मुस्कुराना एक कला है। एवम् दूसरों को खुश रखना जीवन से जुडा एक महत्वपूर्ण तत्व है। इसीलिए सदा मुस्कुराये तथा दयालुता के भाव को ध्यान में रखना चाहिए। मुस्कुराते हुए चेहरे को सभी पंसद करते हैं। परंतु मुस्कान सदा असली होना चाहिए! दिखावटी नहीं।

व्यवहार – व्यवहार में हमेशा नम्रता का भाव होना चाहिए। दूसरों के व्यवहार का सही अर्थ लगाना चाहिए। अच्छे व्यवहार से अच्छे रिष्ते निर्मित होते है। व्यवहार का व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पडता है।

अच्छा श्रोता – अच्छे श्रोता बने। दूसरो को बोलने के लिए उत्साहित करें सवाल पूछे यह आपकी दिलचस्पी को दिखाता है। बीच में नहीं बोलना चाहिए एवम् विषय नहीं बदलना चाहिए । सम्मान व समझ का भाव होना चाहिए बात को ध्यान से सुने तथा संदेश पर ध्यान दे न कि बोलने के तरीके पर।

विनम्रता – विनम्रता व्यवहार की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती हैं। विनम्रता के बिना आत्मविश्वास अहंकार के समान होता हैं। यह महानता को दर्शाती हैं तथा बड़प्पन की पहचान है। सही विनम्रता में आकर्षण होता है। लेकिन गलत में प्रतिकर्षण होता हैं

विश्वसनीयता – सही चरित्र हेतु विश्वसनीयता होनी चाहिए। विश्वास में बहुत ताकत होती है और किसी का विश्वास जीतने में बहुत समय लगता है।

तहजीब – तहजीब अदब या शिष्टाचार अच्छे व्यक्तित्व की निगरानी है। अच्छी तहजीब वाला या शिष्ट व्यवहारी बनना चाहिए। बोलचाल में तहजीब वाले शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। दूसरों का मजाक न उड़ायें अच्छे दोस्त बनें। सहानुभूति दिखये दुसरो के साथ वैसा व्यवहार करें जो कि स्वयं को पसंद हो।

उत्साह – उत्साह व सफलता साथ–साथ चलती है। उत्साह आत्मविश्वास को बढ़ाता है। किसी से बात करने के तरीके से उसके उत्साह को महसूस किया जा सकता। जिन्दगी को उत्साह एवम् जिंदादिली से जीना चाहिए।

ईमानदारी – व्यक्तित्व के निर्माण में ईमानदारी की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। किसी कि प्रशंसा ईमानदारी व सच्चाई से करनी चाहिए। व्यवहारिकता में भी ईमानदारी का होना आवश्यक होता है। व्यक्ति का चीरत्र उत्तम तभी होता है, जब वह ईमानदार हो।

तर्क – तर्क करने से तार्किक क्षमता विकसित होती है। परंतु तर्क को तकरार नहीं बनने देना चाहिए। तकरार या बहस बुरी होती है। बहस करके हासिल जीत भी हार है। तर्क व बहस में अंतर है बहस से आग निकलती है। व तर्क से आग बूझती है एवं तर्क में ज्ञान की मात्रा होती है।

वचनबद्धता – अपने द्वारा किए हुए वादों को पूर्ण करने की जबावदारी लेना चाहिए। वचनबद्धता एक ऐसा वादा होता है, जो हर हाल में पूरा करना चाहिए। जिससे विश्वास एवं रिश्तों मे दृढता बढ़ती है।

कृतज्ञता – कृतज्ञता का भाव एक अच्छे व्यक्तित्व की निशानी है। किसी के आकार को मानकर कृतज्ञता प्रकट करना चाहिए।

द्वेष – किसी से बैर, शत्रुता या द्वेष नहीं रखना चाहिए मित्रव्त व्यवहार रखना चाहिए। क्षमा करने की भवना रखना चाहिए। अच्छी बातो को याद

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान)शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

रखकर बुरी बातों को भूल जाना चाहिए।

'तुम मुझे एक बार धोखा देते हो तो तुम पर लानत है, तुम मुझे दोबारा धोखा देते हो तो मुझ पर लानत है।'

समस्या समाधान तकनीक – समस्या समाधान के संबंद्ध में कुछ अधिक कहने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि समस्या का अर्थ क्या है, एण्ड्रीयाज ने समस्यात्मक स्थिति को पांच अवयवों के आधार पर समझाया है।

1. प्राणी के लिए लक्ष्य का होना
2. उद्दीपक संकेतों का प्राप्त होना.
3. उद्दीपक संकेतों के प्रति अनुक्रियाओं
4. उद्दीपको का अनु – क्रियाओं से अलग– अलग संबंधित होना।
5. गलत और सदी अनुक्रियाओं की सूचना प्राप्त होना।

जॉनसन के अनुसार – ' जब प्राणी लक्ष्य पहुॅचने के लिए अभिप्रेरित होता है। परंतु लक्ष्य प्राप्ति के प्राथमिक प्रयास में वह असफल हो जाता हैं। तो इस अवस्था में उस प्राणी के लिए समस्या उत्पन्न हो जाती है।'

समस्या समाधान का अर्थ एवं विशेषताएँ –

आइजेक और उनके साथियों के अनुसार – समस्या समाधान वह प्रक्रिया है। जिसमें प्राथमिक (ज्ञानात्मक) परिस्थितियों से प्रारंभ कर इच्छित लक्ष्य तक पहुॅचना अपेक्षित है।

समस्या – जॉनसन ने समस्या समाधान से संबंधित छः समस्याओं का वर्णन किया है। जो नि.लि. है।

1. व्यवहार लक्ष्य निर्देशित होता है और व्यवहार में निरंतरता पाई जाती है।
2. व्यवहार अथवा क्रियाओं में निरंतरता उस समय समाप्त हो जाती है। जब लक्ष्य प्राप्त हो जाता है
3. समस्या समाधान मे प्राणी भिन्न–भिन्न प्रकार से प्रयास अथवा अनुक्रियाएँ करता है।
4. एक ही जाति के प्राणी एक ही समस्या का समाधान भिन्न–भिन्न प्रकार से करते है अर्थात् समस्या समाधान में वैयक्तिक भिन्नता पाई जाती है।
5. जब प्राणी किसी समस्या का समाधान प्रथम बार करता है। तो समय अधिक लगता है। परंतु उसी समस्या का समाधान जब उसे दोबारा करना होता है। तो समय कम लगता है।
6. समस्या समाधान चिंतन का एक विशिष्ट रूप है।

प्रकृति –

1. समस्यात्मक स्थिति में जीव के सामने निश्चित रूप से एक अथवा अधिक लक्ष्य होते है।
2. समस्यात्मक स्थिति में जीव को विभिन्न प्रकार के संकेत या उद्दीपक प्राप्त होते है।
3. समस्यात्मक स्थिति में जीव को विभिन्न प्रकार की अनुक्रियाएँ समाधन हेतु करता है।
4. समस्यात्मक स्थिति में जीव की विभिन्न प्रकार की अनुक्रियाएँ विभिन्न प्रकार की उत्तेजनाओं से अनुबंधित होती है, यह अनुबन्धन गत अनुभवों के आधार पर स्थापित होता है।
5. समस्यात्मक स्थिति में जीव सही अनुक्रिया कर रहा है या गलत अनुक्रिया कर रहा है, इसका अनुभव जीव को हो जाता है।

लक्षण –

1. समस्यात्मक स्थिति में प्राणी का समस्त व्यवहार लक्ष्य की ओर उन्मुख होता है तथा उसके इस प्रकार के वयवहार में निरंतरता होती है।
2. समस्यात्मक स्थिति में प्राणी अनेक प्रकार की अनुक्रियाएँ करता है।
3. समस्यात्मक स्थिति में विभिन्न व्यक्तियों की अनुक्रियाएँ भिन्न – भिन्न होती है।
4. समस्या समाधान में यदि प्राणी की सीधी हुई अनुक्रियाओं का उपयोग है तो समस्या समाधान मे समय कम लगता है।
5. समस्या समाधान के प्रारंभिक प्रयासो में समय अधिक और बाद के प्रयासों मे समय कम लगता है।
6. समस्यात्मक स्थिति के अनुभवों का केन्द्रीय नाडी संस्थान में प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व होता है।
7. समस्यात्मक स्थिति से संबंधित लक्ष्य प्राप्त होने पर प्राणी की समस्त अनुक्रियाएँ समाप्त हो जाती है।

तकनीकी –

1. अनुक्रिया पदानुक्रम – समस्या समाधान की इस मेकेनिज्म का अर्थ है कि प्रयोज्य की अनेक अनुक्रियाएँ एक उद्दीपक स्थिति से अनुबंधित होती है, अध्ययनों में यह देखा गया है। कि उद्दीपक से संबंधित वे अनुक्रियाएँ समस्या समाधन के समय शीघ्र उत्पन्न होती है जिनका उद्दीपक स्थिति के साथ प्रबल साहचर्य रहा है। प्रयोज्य उद्दीपक के उपस्थित होने पर बहुधा समस्या समाधान के लिए उस अनुक्रिया को दुहराता है जिस अनुक्रिया ओर उद्दीपक के बीच साहचर्य अधिक प्रबल होता है।

2. अप्रकट प्रयत्न और भूल – समस्या समाधान संबंधी प्रयोग मे देखा गया है कि मानव प्रयोज्य भी अप्रकट प्रयत्न और भूल अनुक्रियाएँ बहुधा प्रतीकात्मक स्तर पर होती है, प्रयोज्य कल्पना और चिन्तन के स्तर पर बहुत से उपाय सोचेगा और प्रत्येक उपाय की उपयोगिता की जॉच करेगा। उसे उपाय त्रुटिपूर्ण लगेगा उसे वह छोड़ देगा फिर चिंतन स्तर पर प्रयत्न करके अगला उपाय सोचेगा।

3. मध्यस्थताकारी सामान्यीकरण – व्यवहारवादियों ने समस्या समाधान की व्याख्या के लिए इस मेकेनिज्म का भी उपयोग किया है यह एक प्रकार का प्रत्यक्षपरक प्रक्रम है यह देखा गया है कि भौतिक उद्दीपक यथापि एक–दूसरे से भिन्न होते है परंतु इनमें कुछ प्रकार की सामान्यता पाई जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, शर्मा एण्ड शर्मा।
2. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, अरूण कुमार सिंग।

****

जनजातीयों की जीवनशैली में हो रहे परिवर्तन का समाज पर प्रभाव(झाबुआ जिले की भील जनजाति के विशेष संदर्भ में)

डॉ. नंदिनी रेखड़े * मंजू सोनगरा **

शोध सारांश – हमारा देश 21वी सदी में प्रवेश करने के साथ-साथ विकासशील देशों की श्रृंखला में अग्रणीय स्थान पर है। मध्य प्रदेश को भारत का हृदय कहा जाता है। जिसमें कई जनसमुदाय निवासरत् है। जिनमें एक भील जनजाति है। इनका मुख्य निवास मध्य प्रदेश का पश्चिम भाग है। जिसकी सीमाएँ राजस्थान, गुजरात से लगी है। इसके अंतर्गत झाबुआ, अलिराजपुर, धार, बड़वानी एवं पश्चिम निमाड़ जिले है। आबादी के लिहाज से झाबुआ म.प्र. का सबसे बड़ा जनजातीय जिला है। भील जनजाति में संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलन है। इनके विवाह में कन्या मूल्य का प्रचलन है। प्राचीन समय की तुलना में वर्तमान समय में जनजातीयों की जीवनशैली में काफी परिवर्तन है। जिसका समाज पर सकारात्मक प्रभाव देखा गया है।

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही भारत में जनजातीयों का अस्तित्व रहा है। जिनका रहन-सहन ग्रामीण एवं नगरीय समाज के लोगों से पूर्णत: भिन्न है। जनजातीयाँ सामान्यत: गाँवों व नगरों से दूर पहाड़ों और दुर्गम वन्य प्रदेशों से भिन्न है। इनकी अदभूत संस्कृति और नैसर्गिक जीवनशैली ने हमें सदैव आकर्षित किया है। भील जनजाति भारत की तीसरी तथा मध्य प्रदेश की सबसे बड़ी जनजाति है, भील जनजाति मध्य प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र में निवास करने वाली जनजाति है। भीलों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को पहले की अपेक्षा ठीक कहा जा सकता है। क्योंकि यह कृषि के साथ-साथ पशुपालन व मजदूरी करते है तथा शिक्षा को महत्व देने लगे है। इनका प्रमुख भोजन मक्का, ज्वार, दालें हैं, परन्तु वर्तमान समय में इनके खान-पान, रहन-सहन, वैशभूषा जीवनशैली आदि में परिवर्तन देखा जाता है। प्रदेश के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक क्षेत्र में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। मध्य प्रदेश का अधिकांश भाग आदिम जनजातीयों से भरा है जिनमें गौड़, भील, बैगा, कोली, सहरिया एवं कोरकू आदि प्रमुख है। मध्य-प्रदेश का जनजातीय समाज काफी प्राचीन और अपनी सांस्कृतिक एवं सामाजिक विषेषताओं से युक्त है। जनजातीय संस्कृति, धार्मिक विश्वास, गीत-संगीत, नृत्य उत्सवों आदि से भरपूर है। इसी प्रकार इनकी जीवनशैली, परम्पराएँ एवं मान्यताएँ है।

2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश की जनसंख्या 7,25,97,565 है जिसमें जनजाति जनसंख्या 22.32 प्रतिशत भील जनजाति है, जो भारत की तीसरी बड़ी जनजाति है।

झाबुआ जिले की कुल जनसंख्या – 10,25,048 जो कुल जनसंख्या का 87 प्रतिशत है।

भीलों की मुख्य चार उप शाखाएँ है, इनमें भील मूल है – भीलाला, द्रविडियन, परिवार के है। द्रविड भाषा में 'बील' शब्द का अर्थ तीर होता है, इसी से 'भील' शब्द बना है। ये प्राय: जंगलों में रहना पसंद करते है।

जीवनशैली – जीवनशैली से आशय है, जीवन के तौर-तरके जीवन-यापन के ढंग को जीवनशैली कहा जाता है। इसके अंतर्गत निवास-स्थान, रहन-सहन, वेशभूषा, आभूषण, खान-पान, आदतें, व्यवसाय (शारीरिक क्रियाशीलता) को सम्मिलित कर सकते है।

भील जनजाति की पारंपरिक जीवनशैली – झाबुआ जिले के ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी क्षेत्र में बसे भील प्राय: अपनी कृषि भूमि पर ही घर बनाते है, जो जीवन की समस्त गतिविधियों का केन्द्र है। इनका जीवन परंपराओं से भरा होता है। भील अत्यंत रंगप्रिय और श्रृंगार प्रिय जनजाति है। ये आर्थिक दृष्टि से पहले की अपेक्षा ठीक है क्योंकि इनका शिक्षा स्तर पहले से ठीक होने के साथ जागरूक भी हुए है। ये परिश्रमी, संघर्षशील जीवन से भरपूर है।

निवास स्थान – भीलों के गाँवों की विरल श्रृंखला में लकड़ी बांस-बल्ली, घास और कवेलुओं तथा मिट्टी-ईंट से बनी झोपड़ियाँ होती है। कहीं-कहीं झोपड़ियों का समूह भी होता है जिसे फलिया कहते है। प्राय: अपने-अपने खेतों पर ही झोपड़ी बनाकर रहते हैं। ताकि खेतों की सुरक्षा हो सके। भील पुरुष शंकालु, हठी होने के कारण भी इनके निवास दूर-दूर होते है।

रहन-सहन – भीलों का रहन-सहन सीधा सरल होता है। निर्धनता के कारण अभाव से घिरे रहते है, इनके कच्चे मकान छोटे-छोटे व प्रकाश का अभाव होता है। ये लोग शिक्षित होने के बावजूद अपने वस्त्र व शरीर की स्वच्छता पर विशेष ध्यान नहीं देते है, जिनके कारण कई बिमारीयों से ग्रसित हो जाते है।

खान-पान – भीलों का मुख्य भोजन मक्का की रोटी व राबड़ी के रूप में उपयोग करते है। भील मांसाहारी है। इसीलिए ये मूर्गी, बकरी को पालते है। भील संस्कृति में शराब का अत्यन्त महत्व है, जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न अवसर शराब की धार से ही प्रारंभ होते है, वर्तमान समय में आदिवासी लोगों में खान-पान के प्रति जागरूकता देखी गई है। पहले की अपेक्षा इनके भोजन में अन्य भोज्य पदार्थ को शामिल किया जाने लगा है जिससे समाज पर अच्छा प्रभाव देखा जा रहा है। परन्तु ये लोग आर्थिक स्तर से पिछड़े हुए हैं जिसका प्रभाव शिक्षा के क्षेत्र तथा समाज दोनों पर पड़ता है।

शिक्षा – शिक्षा के क्षेत्र में पहले की अपेक्षा भील जनजाति के लोगों में काफी सुधार देखा गया है। परन्तु ये वर्तमान समय में भी आर्थिक स्तर के

* प्राध्यापक (बाल विकास) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान) (आहार एवं पोषण) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कारण पिछड़े हुए है। जिसका प्रभाव शिक्षा तथा समाज दोनों पर पड़ता है। 2011 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या 92.3 प्रतिशत है, और साक्षरता दर 44.5 प्रतिशत जिसमें ग्रामीण क्षेत्र की साक्षरता दर 40.1 है, और नगरीय क्षेत्र में 84.7 प्रतिशत है। झाबुआ जिले की कुल जनसंख्या 10,25,048 और यहाँ की साक्षरता दर 43.3 प्रतिशत है। पुरुष की साक्षरता दर 54.65 प्रतिशत और महिलाओं की साक्षरता दर 34.2 प्रतिशत है। पुरुष की अपेक्षा महिलाओं का शिक्षा स्तर कम है। न्यूनतम साक्षरता दर वाले जिले में से झाबुआ जिला दूसरे स्थान पर है।

भारत में दलित वर्ग के प्रथम पद ग्रहण (25,7,1997) करने वाले राष्ट्रपति डॉ. के.आर. (कोचेरिल रमण) नारायण थे जिसके बाद द्वितीय पद ग्रहण (25,7,2017) करने वाले राष्ट्रपति डॉ. रामनाथ कोविन्द है, जो वर्तमान में पदस्थ है।

मनोरंजन – भील लोग प्रकृति-प्रेमी होते है – इनके पर्व, त्यौहार, उत्सव प्रकृति की तरह निराले ढंग के होते है। इनके मनोरंजन के साधन बन जाते है। भगोरिया गल-गढ़ नवई, चलावड़ी, जातरा (मेला), गाय-गौहरी आदि। इनके पारंपरिक पर्व है, जिनमें सभी उत्साह से भाग लेते है। ढोल-मांदल, कुंडी, थाली, वाहली आदि प्रमुख वाद्य यंत्र है।

वैशभूषा – भील स्त्री-पुरुष रंग व श्रृंगार प्रेमी होते है, इनके वस्त्र चटकदार, गहरे रंगों के होते है, पुरुष – धोती, कमीज, बंडी, साफा, फेटा व लंगोट पहनते है।

महिला – घेरदार घाघरा, काचली, लम्बा ब्लाउज, लुगड़ा व गोवन (मेहरून व काले रंग की प्रिंट वाला तुगड़ा) पहनती है।

आभूषण – भीलों में चांदी व गिलट (कथीर) के आभूषण प्रचलन में है। इनके आभूषणों में प्रमुख है –

पुरुष –कानों में मुरकियाँ व चांदी की लड़िया, हाथों में कड़े (भोरिये), कमर में चांदी का पट्टा, कमीज व बंडी में लड़ियों वाले बटन पहनते है।

महिला सिर पर बोर, राखड़ी, छिमड़ा टोटियाँ, गले में तागली (हंसली), साँकली (पान के आकार का पेंडल व चांदी की पाँच-छः चैन वाली), हाथों में बाजूबंद, सादी व गेंदे वाली चूड़ियाँ, हाथ फूल, कंदोरा पैरों में कड़े, पायजेब आदि पहनती है।

इसके अलावा पुरुष अपने साफे पर 'गोफन' लपेटते है व महिलाएँ रंग-बिरंगे मोतियों के विविध प्रकार के हार बना कर पहनती है, बालों में रंगीन रिबन व फूंदे रंग-बिरंगे क्लिप, बिंदी, काजल लगाती है।

व्यवहार – भील जनजाति के सदस्य सहृदय, मिलनसार एवं सहयोगी होते है। अतिथि को ईश्वर-तुल्य मानते है। भीलों की पारंपरिक जीवन-शैली अनूठी, सरल, सीधी-सादी व अद्भूत है।

प्राचीन काल की अपेक्षा वर्तमान समय में भील जनजातीयों का समाज में अच्छा प्रभाव देखा गया है, जैसे – शिक्षा के क्षेत्र में, राजनैतिक, सांस्कृतिक, चिकित्सकय क्षेत्र में आदि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्ता, एम.एल., शर्मा, डी.डी. (2008), समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ.क्र. 218-220।
2. गुप्ता, शीतल कुमार, मीना, पी.एस. जायसवाल, पूनम, ए.के. (2012), पुणेकर एम.पी.एस.सी., पुणेकर पब्लिकेशन, खजूरी बाजार, इन्दौर (म.प्र.)
3. शर्मा ब्रह्मदेव (1986) आदिवासी विकास, तृतीय संस्करण, प्रकाशक – मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ.क्र. 97-107।
4. लावरिया एम.एल., जैन शशि – भारत में जनजातीयों का समाजशास्त्र रिसर्च पब्लिकेशन, जयपूर पृ.क्र. 72-84।

****

The Impact Of Liberalisation In Life Insurance Industry Of India

Vikas Jain * Dr. Ramesh Mangal **

Abstract - Insurance sector in India has been facing radical changes in terms of its nature, scope, business, profitability, regulation and transparency. In 1994, the Malhotra Committee has submitted its report to make regulations for the entry of private sector; to permit the foreign companies in India to increase healthy competition, to encourage new products and services in the insurance sector and to establish a competent authority to control and regulate the insurance sector.

Finally, in 1999, Insurance Development and Regulation Authority (IDRA) Act was passed and IDRA was setup. With the opening of insurance sector for the private company in 1999, major changes have been made in the financial arena of the country. Now all insurance companies established in country followed the rules of Insurance Development and Regulation Authority (IDRA) Act. So far IDRA has permitted the license to 23 Companies.

Introduction - Literature Review

The review of literature to identify and understand the implications of different issues related to impact of liberalisation on insurance industry in India. Review of literature provides a direction, framework of theoretical advancement that have been consider in the present research impact of liberalisation on insurance industry.

Market liberalization of insurance services involves removing restrictions to foreign and domestic investment and allowing firms the freedom to set rates. In the process of liberalizing markets, governments generally set minimum capital requirements for insurers, introduces solvency margins and allow firms to engage in brokerage and perhaps insurance activities (Drury, 2000; Swiss Re, 2000). In view of the above research literature, although various aspects of insurance industry have been studied and their impact has well been discussed. No such evidence, which would have highlighted post liberalization insurance performance, is known until date.

Research Methodology-

Objectives -

1. To study liberalisation in field of life Insurance in India.
2. To evaluate the impact of liberalisation on insurance business and life insurance business.

Data type and data collection - For data to be useful effective method of data collection, our observations need to be organized so that we can get some patterns and come to logical conclusions.

Secondary data - Different reports notifications and occasional papers of Insurance , special reports of Insurance Development and Regulation Authority (IDRA) act, Policy of Government, Departments of Finance, Statistical Department and Gazetteers, Economic Survey, International and National Research Papers, Annual Reports of LIC & other Insurance company.

Analysis & Interpretation- Analysis primarily deals with the interpretation of the data incorporated in the proforma financial statements of a life insurance Company and the presentation of the data in a form in which it can be utilised for a comparative appraisal of the data.

Researcher want to study the impact of liberalisation on life insurance business so study about LIC, being the oldest player in the existing insurance market and 23 private sector insurers companies.

For the above analysis and interpretation researcher uses the following table & graph:

1.1 Comparative study of premium income of LIC & other private insurance company.

1.2 Comparative study of number of new policy issue by LIC & other private insurance company:

1.3 Study of Amount collected for funds by LIC & other private insurance company:

Table No. 1 (1) - Income of Life Insurance Corporation from Premium (See in the last page)

Table No. 1(2) - Income of Private Life Insurance Company from Premium (See in the last page)

Table No. 1(3) - Gross Total Premium of Life Insurance Company (See in the last page)

Conclusion - After analysis It may be recalled that in 2000-01, when the private industry was opened up, the life insurance premium was Rs.34898.48 Crore out of which LIC business 99.98 percent (Rs 34892.02 crore) which

***Associate Professor & Principal, Compfeeders Aisect College of Professional Studies, Indore (M.P.) INDIA**
****Former Head, SOC Devi Ahilya Vishwa Vidhyalaya, Indore (M.P.) INDIA**

comprised of Rs.6960.95 crore of regular premium, Rs.2740.45 crore of single premium and Rs.25191.07 crore of renewal premium. While Private insurer (just start business) business was 00.02 percent it's included only single premium in 2000-01 were Rs.06.45 crore.

Whereas Life insurance industry recorded a premium income Rs. 265447.25 Crore during 2009-10 out of which LIC business was 70.10 percent its included Regular premium, single premium and renewal premium in 2009-10 were Rs. 26184.48 crore, Rs. 45337.42 crore, and Rs. 114555.41 crore, respectively. While Private insurer (23) business was 29.90 percent its included Regular premium, single premium and renewal premium in 2009-10 were Rs. 34529.67 crore, Rs 3842.34 crore and Rs 45217.94 crore respectively.

In the 2012-13 when compare the data with 2000-01, it shows that total life insurance premium income is registering seven times Growth. it show that overall market of LIC increase but market share declined from 99.98 percent to 70.10 percent , **it shows that Private insurance company give heavy challenge to LIC.**

Finding- Insurance is a big opportunity in a country like India with a large population and untapped potential. The life insurance business has been registered a growth. This has been resulting increasing insurance penetration in the country.

After opening up of insurance in private sector, various leading private companies including joint ventures have entered the fields of insurance both life and non-life business.

Premium of Life Insurance Company- Total life insurance premium income has been increased at faster rate during the sample period. While private sector insurers posted tremendous growth by twelve thousand five hundred times Growth in new market segmentation & LIC recorded six times Growth in their total premium income after liberalisation & Private insurance started business. It is revealed from the Table that shows overall market of LIC increase but market share decline, it show that Private insurance company gave heavy challenge to LIC. The main reasons are is the increasing penetration of life insurance, which is providing better services in comparison with LIC. Secondly, the network of Private insurance company are spread in Major cities of the country and the flow of money is higher in cities, targeted corporate, and accounts with big turnover of cash. Growth of premium has shared in their market share ratio during the period.

Market Share of Life Insurers - We can say that overall market of LIC increased but market share declined, it show that Private insurance company gave heavy challenge to LIC. The second important function of the life insurance company is to give security to customer through new insurance policy and it does depend on customer satisfaction. The market share of Private insurance company has increased by faster rate as shown in Table No. 1(3). The main reason behind it is LIC and Private insurance company were growing and gaining market share. it show that overall income of LIC increased but market share declined from 99.98 percent to 70.10 percent, hence, Private insurance company gave heavy challenge to LIC.

Conclusion - India is among the important emerging insurance markets in the world. Life insurance will grow very rapidly over the next decades in India. The following conclusions have drawn in the light of objectives, which were frame for carrying out the study.

To study liberalisation in field of life Insurance in India - Considering Data Analysis, it is clear that Total life insurance premium income has been increase at faster rate during the study period. While private sector insurers posted tremendous growth by twelve thousand five hundred times Growths in new market segmentation & LIC recorded six times Growth in their total premium income after liberalisation & Private insurance started business. **It shows that overall Business of LIC has been increased but market share declined from 99.98 percent to 70.10 percent.**

To evaluate the impact of liberalisation on insurance business and life insurance business: Data Analysis & interpretation clearly shows that Total life insurance premium business has been increased at faster rate; it shows 7 times growth during the study period. It shows that overall Business of LIC has been increased but market share declined from 99.98 percent to 70.10 percent. Total life insurance new policies are registering two times Growth. LIC registered a growth in the number of policies, while private sector insurers posted tremendous growth by hundred percent Growths in new market segmentation in their total no on new policies after liberalisation & Private insurance started business.

Analysis and interpretation clearly indicates that LIC is better in Policy, Premium income, renewal premium and Market share observe that LIC & other private life insurers continue increased, its good symbol to show faith by insured about improvement of quality (Customer satisfaction level increase). Therefore, researcher concluded that life insurance business especially LIC have better control on new policy and maintain the growth on business performance in all sector of life insurance.

The above-mentioned research shows that the liberalization has an overall positive impact on the growth and performance of life insurance industry in India.

References :-

Thesis & Research Papers -

1. Tapen sinha "Privatisation of the insurance market in India (from the British raj to monopoly raj to swaraj) Centre for Risk & Insurance Studies, paper discussion series 2002.
2. Mr. N. KANNAN & Dr. N. THANGAVEL "overview of Indian insurance sector" ISSN 1311-4360/volume 22, 2008.
3. Peter Drucker (1999). Innovate or Die, Journal of

Economist, 25th Dec. 1999.
4. Skipper et al., 2000, "The European Single Insurance Market: Overview and impact of the liberalization and deregulation processes", Insurance and private pensions compendium for emerging economy, Book 1, Part 1:6) b, OECD.
5. Skipper, Jr., Harold D., 2001, "Insurance in the General Agreement on Trade in Services" AEI Press Washington USA P 1-84.

Books -

1. Prof. Bhagwati Prasad and Prof. Rajeev Jain, Principle and practices of insurance, Himalaya Publishing House.
2. Dr. R.L. Nolakha, Element of Insurance, Ramesh Book Dipo, Jaipur.
3. Dr. R.K. Vishnoi, Principles of insurance, Sahitya Bhawan Publishing and Distributing Pvt.Ltd, Agra.
4. Dr. P.K. Gupta, Insurance and Risk Management, Himalaya Publishing House.
5. Pandey, I. M, Financial Management, 2009, Vikas Publishing House Pvt. Ltd, New Delhi, 109.

Periodicals -

1. Business Today (2004-2008) – Best Banks Survey, New Delhi, Business India Group Publication.
2. Indian banker regular monthly magazine of Indian Banks' association.
3. Business India and Business World magazines.
4. Economic Times, Times of India, Business standard, Bhaskar Money.
5. Annual General Report of Life Insurance Corporation India.
6. Annual General Report of Life Insurance Corporation India Indore Division.
7. Annual General Report of other Private Insurance Corporation.
8. Insurance Bulletins of Insurance Companies.
9. IRDA Journal (Various Journals)

Webliography -

1. http://www.licindia.in
2. https://www.irda.gov.in

Table No. 1 (1) - Income of Life Insurance Corporation from Premium

Year	First year Regular Premium	First year single Premium	First year (including single Pre)	Renewal premium	Total Premium
2000-01	6960.5	2740.45	9700.95	25191.07	34892.02
2001-02	10492.72	9096.05	19588.78	30233.13	49821.91
2002-03	10630.80	5345.96	15976.76	38651.73	54628.49
2003-04	11759.47	5229.83	17347.62	46185.81	63533.43
2004-05	11658.24	8994.82	20653.06	54474.23	75127.29
2005-06	13728.03	14787.80	28515.87	62276.35	90792.22
2006-07	29886.35	26337.22	56223.56	71599.28	127822.84
2007-08	26222.00	33774.56	59996.57	89793.42	149789.99
2008-09	19140.61	34038.47	53179.08	104108.96	157288.04
2009-10	26184.48	45337.42	71521.90	114555.41	186077.31

Table No. 1 (2) - Income of Private Life Insurance Company from Premium

Year	First Yr Regular Premium	First year single Premium	First year (including single Pre)	Renewal premium	Total Premium
2000-01	0	6.45	6.45	0	6.45
2001-02	170.49	98.02	268.51	4.04	272.55
2002-03	629.95	328.18	965.69	153.37	1119.06
2003-04	2045.52	395.18	2440.71	679.62	3120.33
2004-05	4223.09	1341.48	5564.57	2162.94	7727.51
2005-06	7547.73	2721.94	10269.67	4813.87	15083.54
2006-07	15472.59	3921.11	19425.65	8827.35	28253.00
2007-08	28666.15	5049.8	33715.95	17845.47	51561.42
2008-09	30229.95	3597.2	34152.00	26125.42	64497.43
2009-10	34529.67	3842.34	38372.01	45217.94	79369.94

Table No. 1(3) - Gross Total Premium of Life Insurance Company

Total Premium of Life Insurance Company					(Rs. Crore)	
Year	LIC (Total Premium Income)	Percentage	Pvt. Insurance Comp (Total Premium Income)	Percentage	Gross Premium	Percentage
2000-01	34892.02	99.98	6.45	0.02	34898.47	100
2001-02	49821.91	99.46	272.55	0.54	50094.46	100
2002-03	54628.49	97.99	1119.06	2.01	55747.55	100
2003-04	63533.43	95.32	3120.33	4.68	66653.76	100
2004-05	75127.29	90.67	7727.51	9.33	82854.8	100
2005-06	90792.22	85.75	15083.54	14.25	105875.76	100
2006-07	127822.84	81.90	28253.00	18.10	156075.84	100
2007-08	149789.99	74.39	51561.42	25.61	201351.41	100
2008-09	157288.04	70.92	64497.43	29.08	221785.47	100
2009-10	186077.31	70.10	79369.94	29.90	265447.25	100

Source - Information from various years IRDA annual & quarterly report

****

A Study Of Non Performing Assets With Special Reference To Management Of ICICI Bank

Prof. Pooja Yadav *

Abstract - A strong banking sector is important for flourishing economy. The failure of the banking sector may have an adverse impact on other sectors. Non-performing assets are one of the major concerns for banks in India, NPAs reflect the performance of banks. A high level of NPAs suggests high probability of a large number of credit defaults that affect the profitability and net-worth of banks and also erodes the value of the asset. The NPA growth involves the necessity of provisions, which reduces the overall profits and shareholders value.

The issue of Non Performing Assets has been discussed at length for financial system all over the world. The problem of NPAs is not only affecting the banks but also the whole economy. In fact high level of NPAs in Indian banks is nothing but a reflection of the state of health of the industry and trade.

This report deals with understanding the concept of NPAs, its magnitude and major causes for an account becoming non-performing, projection with special reference to ICICI bank.

Key Words - Non Performing Assets (NPAs), Key Factors, ICICI Bank, Basel committee report etc.

Introduction - The crucial role of bank economists in transforming the banking system in India, Economists have to be more 'mainstreamed" within the operational structure of commercial banks. Apart from the traditional functioning of macro-scanning, the inter linkages between treasuries, dealing rooms and trading rooms of banks need to be viewed not only with the day-to-day needs of operational necessity, but also with analytical content and policy foresight. Banking sector reforms in India has progressed promptly on aspects like interest rate deregulation, reduction in statutory reserve requirements, prudential noms for interest rates, asset classification, income recognition and provisioning.[1,2] But it could not match the pace with which it was expected to do.

The accomplishment of these norms at the execution stages without restructuring the banking sector as such is creating havoc. During pre-nationalization period and after independence, the banking sector remained in private hands Large industries who had their control in the management of the banks were utilizing major portion of financial resources of the banking system and as a result low priority was accorded to priority sectors. Government of India nationalized the banks to make them as an instrument of economic and social change and the mandate given to the banks was to expand their networks in rural areas and to give loans to priority sectors such as small scale industries, self-employed groups, agriculture and schemes involving women.[3]

To a certain extent the banking sector has achieved this mandate. Lead Bank Scheme enabled the banking system to expand its network in a planned way and make available banking series to the large number of population and touch every strata of society by extending credit to their productive endeavours. This is evident from the fact that population per office of commercial bank has come down from 66,000 in the year 1969 to 11,000 in 2004. Similarly, share of advances of public sector banks to priority sector increased form 14.6% in 1969 to 44% of the net bank credit. The number of deposit accounts of the banking system increased from over 3 crores in 1969 to over 30 crores. Borrowed accounts increased from 2.50 lakhs to over 2.68 crores.[4,5]

Need Of The Study The banks not only accept the deposits of the people but also provide them credit facilities for their development. Indian banking sector has the nation in developing the business and service sectors. But recently the banks are facing the problem of credit risk. It is found that many general people and business people borrow from the banks but due to some genuine or other reasons are not able to repay back the amount drawn to the banks. The amount which is not given back to the banks is known as the non performing assets. Many banks are facing the problem of NPAs which hampers the business of the banks. Due to NPAs the income of the banks is reduced and the banks have to make the large number of the provisions that would curtail the profit of the banks and due to that the financial performance of the banks would not show good results. The main aim behind making this report is to know how public sector banks are operating their business and how NPAs play its role to the operations of the public sector

* Deptt. of Management, Renaissance Institute of Professional Studies, Indore (M.P.) INDIA

banks.[6] The report NPAs are classified according to the sector, industry, and state wise. The present study also focuses on the existing system in India to solve the problem of NPAs and comparative analysis to understand which bank is playing what role with concerned to NPAs. Thus, the study would help the decision makers to understand the financial performance and growth of public sector banks as compared to the NPAs. This report explores an empirical approach to the analysis of Non-Performing Assets (NPAs) with special reference of ICICI bank in India. The level of NPAs is one of the drivers of financial stability and growth of the banking sector. This report aims to find the fundamental factors which impact NPAs of banks. A model consisting of two types of factors, viz., macroeconomic factors and bank-specific parameters, is developed and the behavior of NPAs of the three categories of banks is observed. The empirical analysis assesses how macroeconomic factors and bank-specific parameters affect NPAs of a particular category of banks. The macroeconomic factors of the model included are GDP growth rate and excise duty, and the bank-specific parameters are Credit Deposit Ratio (CDR), loan exposure to priority sector, Capital Adequacy Ratio (CAR), and liquidity risk.[7] The results show that movement in NPAs over the years can be explained well by the factors considered in the model for the public and private sector banks.

Factors For Rise In NPAs The banking sector has been facing the serious problems of the rising NPAs. But the problem of NPAs is more in public sector banks when compared to private sector banks and foreign banks. A strong banking sector is important for a flourishing economy. The failure of the banking sector may have an adverse impact on other sectors. The Indian banking system, which was operating in a closed economy, now faces the challenges of an open economy. On one hand a protected environment ensured that banks never needed to develop sophisticated treasury operations and Asset Liability Management skills. On the other hand a combination of directed lending and social banking relegated profitability and competitiveness to the background. The net result was unsustainable NPAs and consequently a higher effective cost of banking services. The problem India Faces is not lack of strict prudential norms but i. The legal impediments and time consuming nature of asset disposal proposal. ii. Postponement of problem in order to show higher earnings. iii. Manipulation of debtors using political influence. Macro Perspective Behind NPAs A lot of practical problems have been found in Indian banks, especially in public sector banks. For Example, the government of India had given a massive wavier of Rs. 15,000 Crs. under the Prime Minister ship of Mr. V.P. Singh, for rural debt during 1989-90. This was not a unique incident in India and left a negative impression on the payer of the loan. Poverty elevation programs like IRDP, RREP, SUME, SEPUP, JRY, PMRY etc., failed on various grounds in meeting their objectives. The huge amounts of loan granted under these schemes were totally unrecoverable by banks due to political manipulation, misuse of funds and non-reliability of target audience of these sections. Loans given by banks are their assets and as the repayments of several of the loans were poor, the qualities of these assets were steadily deteriorating. Credit allocation became 'Lon Melas', loan proposal evaluations were slack and as a result repayments were very poor. There are several reasons for an account becoming NPA.[8]

External Factors - Ineffective recovery tribunal The Govt. has set of numbers of recovery tribunals, which works for recovery of loans and advances. Due to their negligence and ineffectiveness in their work the bank suffers the consequence of non-recover, their by reducing their profitability and liquidity.

Willful Defaults There are borrowers who are able to payback loans but are intentionally withdrawing it. These groups of people should be identified and proper measures should be taken in order to get back the money extended to them as advances and loans.

Natural calamities This is the measure factor, which is creating alarming rise in NPAs of the PSBs. every now and then India is hit by major natural calamities thus making the borrowers unable to pay back there loans. Thus the bank has to make large amount of provisions in order to compensate those loans, hence end up the fiscal with a reduced profit. Mainly ours framers depends on rain fall for cropping. Due to irregularities of rain fall the framers are not to achieve the production level thus they are not repaying the loans.

Industrial sickness Improper project handling , ineffective management , lack of adequate resources , lack of advance technology , day to day changing govt.[9] Policies give birth to industrial sickness. Hesnce the banks that finance those industries ultimately end up with a low recovery of their loans reducing their profit and liquidity.

Lack of demand Entrepreneurs in India could not foresee their product demand and starts production which ultimately piles up their product thus making them unable to pay back the money they borrow to operate these activities. The banks recover the amount by selling of their assets, which covers a minimum label. Thus the banks record the non recovered part as NPAs and has to make provision for it.

Internal Factors - Defective Lending process There are three cardinal principles of bank lending that have been followed by the commercial banks since long. i. Principles of safety ii. Principle of liquidity iii. Principles of profitability i. Principles of safety By safety it means that the borrower is in a position to repay the loan both principal and interest. The repayment of loan depends upon the borrowers: a. Capacity to pay b. Willingness to pay Capacity to pay depends upon:

1. Tangible assets 2. Success in business Willingness to pay depends on: 1. Character 2. Honest 3. Reputation of borrower The banker should, there fore take utmost care

in ensuring that the enterprise or business for which a loan is sought is a sound one and the borrower is capable of carrying it out successfully .he should be a person of integrity and good character.

% of Net NPA of ICICI Bank from 2013 to 2017

S. No.	Year	ICICI Bank NPA %
1.	2017	4.89
2.	2016	2.67
3.	2015	1.61
4.	2014	0.97
5.	2013	0.77

NPA's of ICICI Bank from 2013 to 2017[12] (See in the next page)

Problems Due To Npa 1. Owners do not receive a market return on there capital .in the worst case, if the banks fails, owners loose their assets. In modern times this may affect a broad pool of shareholders. 2. Depositors do not receive a market return on saving. In the worst case if the bank fails, depositors loose their assets or uninsured balance. 3. Banks redistribute losses to other borrowers by charging higher interest rates, lower deposit rates and higher lending rates repress saving and financial market, which hamper economic growth. 4. Non performing loans epitomise bad investment. They misallocate credit from good projects, which do not receive funding, to failed projects. Bad investment ends up in misallocation of capital, and by extension, labour and natural resources. 5. Non performing asset may spill over the banking system and contract the money stock, which may lead to economic contraction. This spill over effect can channelize through liquidity or bank insolvency: a) when many borrowers fail to pay interest, banks may experience liquidity shortage.[10] This can jam payment across the country, b) illiquidity constraints bank in paying depositors .c) undercapitalised banks exceeds the banks capital base. What caused such high NPAs in the system until 1995? Some key reasons for huge NPAs until mid-1990s are as follows:

- Absence of competition: The entire banking sector was state-owned; there was complete absence of any kind of competition from the private sector.[11]
- Lack of focus and control: The government-controlled operations of banks resulted in favoritisms in terms of lending, besides lack of focus on quality of lending. Managements of banks lacked any control on operations of their banks, while directors largely were influenced by the will of power-circles.
- Collateral-based lending and a dormant legal recourse system: Collateral was considered king. Under the name of collateral, large sums of loans were disbursed, and in the absence of an active legal recovery system, loan repayment and quality considerations took a back seat.
- Corruption and bureaucracy: Political interference and lack of supervision increased corruption and redtapism in the banking system.

Company Profile Icici Group

In 1955, The Industrial Credit and Investment Corporation of India Limited (ICICI) incorporated at the initiative of the World Bank, the Government of India and representatives of Indian industry, with the objective of creating a development financial institution for providing medium-term and long-term project financing to Indian businesses. Mr.A.Ramaswami Mudaliar elected as the first Chairman of ICICI Limited. ICICI emerges as the major source of foreign currency loans to Indian industry. Besides funding from the World Bank and other multi-lateral agencies, ICICI was also among the first Indian companies to raise funds from international markets OVERVIEW ICICI Group offers a wide range of banking products and financial services to corporate and retail customers through a variety of delivery channels and through its specialised group companies, subsidiaries and affiliates in the areas of personal banking, investment banking, life and general insurance, venture capital and asset management. With a strong customer focus, the ICICI Group Companies have maintained and enhanced their leadership position in their respective sectors. ICICI Bank is India's second-largest bank with total assets of Rs. 3,997.95 billion (US$ 100 billion) at March 31, 2008 and profit after tax of Rs. 41.58 billion for the year ended March 31, 2008. ICICI Bank is second amongst all the companies listed on the Indian stock exchanges in terms of free float market capitalisation. The Bank has a network of about 1,308 branches and 3,950 ATMs in India and presence in 18 countries. ICICI Prudential Life Insurance Company is a 74:26 joint venture with Prudential plc (UK). It is the largest private sector life insurance company offering a comprehensive suite of life, health and pensions products.

Conclusion - Effect of Financial Crisis The major financial crisis of the 21st century involves esoteric instruments, unaware regulators, and nervous investors. Starting in the summer of 2007, the United States experienced a startling contraction in wealth, triggered by the sub prime crisis, thereby leading to increase in risk spreads, and decrease in credit market functioning. During boom years, mortgage brokers enticed by the lure of big commissions, talked buyers with poor credit into accepting housing mortgages with little or no down payment and without credit checks. Higher default levels, particularly among less credit-worthy borrowers, magnified the impact of the crisis on the financial sector. The same financial crisis, which started last summer, is back with a vengeance. Paul Krugman describes the analogy between credit – lending between market players and the financial markets, and motor oil to car engines. The ability to raise cash on short notice, i.e. liquidity, is an essential lubricant for the markets and for the economy as a whole. The drying liquidity has closed shops of a large number of credit markets. Interest rates have been rising across the world, even rates at which banks lend to each other. The freezing up of the financial markets will ultimately lead to a severe reduction in the rate of lending, followed by slowed and drastically reduced business investments, leading to a recession, possibly a nasty one. A collapse of trust between market players has decreased the willingness

of lending institutions to risk money. The major reason behind this lack of trust being the bursting of the housing bubble, which caused a lot of AAA labeled investments to turn out to be junk.

References :-

1. Alok Majumdar, NPAs : Recovery Blues, Treasury Management (Dec.2000) pp. 46-49.
2. Special Report: NPAs Grossly Mis-understood, Business India (Feb. 1999) pp. 60-62.
3. M.S.A. Rao, A Better Future for Banks, Indian Management (july 2001) pp. 1 4-16.
4. Vasanth C. Joshi & Vinay V. Joshi, Managing Indian Banks – Challenges ahead.
5. M.Y. Khan, How to Tackle Credit Defaults, Business Line (Feb. 2000) pp 6.
6. George Cherian & Mayur Shetty, As Good As it Gets, Money & Banking, The Economic Times (Sept. 2000), pp.7
7. Some Aspects & Issues relating to NPAs in Commercial Banks, RBI : Study, RBI Publications (July 1999).
8. Banking Annual-1998-99, Business Standard (Nov.1998).
9. Pramita Mukherjee, Dealing with NPAs: Lessons from International Experiences, ICRA bulletin – Money & Finance, (Jan-Mar. 2003), pp. 64 – 69.
10. G.P. Muniappan, Deputy Governor of RBI, The NPA overhang – Magnitude, solution, Legal Reforms, Text of address at CII – Banking Summit 2002, Mumbai.
11. Nacheket Mor & Bhavana Sharma, Rooting out NPAs, sept. 2002, ICICI researchcenter.org.
12. N.a. "ICICI Bank Yearly Results, ICICI Bank Financial Statement & Accounts." Moneycontrol.com. n.d. Web. 23 Jan. 2018. <http://www.moneycontrol.com/financials/icicibank/results/yearly/ICI02>

NPA's of ICICI Bank from 2013 to 2017[12]

NPA Ratios :	Mar 17	Mar 16	Mar 15	Mar 14	Mar 13
i) Gross NPA	42,551.54	26,720.93	15,094.69	10,505.84	9,607.75
ii) Net NPA	25,451.03	13,296.75	6,255.53	3,297.96	2,230.56
iii) % of Gross NPA	7.89	5.21	3.78	3.03	3.22
Return on Assets %	1.10	1.49	1.86	1.78	1.70

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Impact Of Celebrity Endorsement On Sale Of A Product

Dr. Tabassum Patel * Minaz Khan **

Abstract - "Today celebrity endorsement is among the multimillion industries in the world. It has become a widespread trend in the advertisement industry to endorse celebrities with the products in order to increase the sales as well as to change the perception of the buyers as regards to the products. This research primarily focuses on celebrity endorsement and its impacts on sale of a product and the change in the customer's perception due to the above reason.The data of 100 students as respondents was collected through questionnaire and the result was analyzed. It was concluded that there was a significant impact of celebrity endorsement on the buying behavior of the student, celebrity endorsed ads are found to be more attractive as appealing on comparison with non-endorsed ads."
Keywords- Advertisement, Brand, Celebrity, Credibility, Endorsement.

Introduction - People perceive celebrity as their role model and are willing to do anything for the purpose of becoming like their role model. This knowledge is used very effectively by the marketers. They endorse their products with celebrities in order to captivate the buyers and ultimately increasing the popularity and sales of their products.

Celebrity endorsement if used effectively makes the brand stand out, brand recall and facilitates instant awareness. To achieve this, the marketer needs to be really disciplined in choice of a celebrity. Hence the right use of celebrity can escalate the Unique Selling Proposition of a brand to new heights; but a cursory orientation of a celebrity with a brand may prove to be fruitful for a brand. A celebrity is a means to an end, and not an end.

Litrerature Review - Advertisers seek strategies to differentiate their products from that of their rivals. A celebrity representative is more likely to be used to grab customer's attention. People are readily and easily influenced because of the eye catching personality traits of celebs. Celebrities have forever to be highly successful in striking customers. Due to this very reason sales have increased tremendously. A number of research studies prone that use of famous and eye catching celebs have caused in a reasonable customer inclination towards the advertisement.Use of celebrity endorsement for the purpose of advertisement has proven effective in changing customer's mind-set and their perception regarding the product.

Friedman & Friedman(1979) explains The term "celebrity" refers to an individual who is known to the public, such as actors, sport figures,entertainers and others of the like for his or her achievement in areas other than that of the product class endorsed. Copper (1984) explained that the general belief among advertisers is that advertising messages delivered by celebrities provide a higher degree of appeal, attention and possibly message recall than those delivered by non-celebrities. Marketers also claim that celebrities affect the credibility of the claims made, increase the memorability of the message, and may provide a positive effect that could be generalized to the brand. (Ohanian 1991) The use of (by corresponding standards) attractive people is common practice in television and print advertising, with physically attractive communicators having proved to be more successful in influencing customers attitudes and beliefs than unattractive spokespersons.

Researchers have proved that the celeb endorsements have a positive impact on the sales of a product.

Objectives -

1. To know the impact of sales after opting for celebrity endorsement as a method for sales promotion
2. To measure the impacts of advertisements endorsed by celebrity.

Advertisement - Ad plays a crucial role in stimulating the buyers. They are made4 keeping in mind recent trends in order to attract a large number of customers. It is very effective tools for boosting the sales of a product.

Celebrity Endorsement - Celebrity endorsement is done in order to attract customers. Marketers use famous celebrities in order to create a unique identity of their products and also to maximum their profit. Although, it may not yield positive results every time

Presence And Popularity - Celeb endorsement is used to grab customer's attention. Well known people are used to convey the main motives of the products.

Demand - When consumers are in need of a particular

*H.O.D., (Manangement) SYSITS, Ratlam (M.P.) INDIA
** B.Com. (Hon.) 2nd year, Shri Ahrihant College, Ratlam (M.P.) INDIA

products/service they'll search for it. What to buy from the various alternatives available is of prime importance is determining the demand of a product.

Factors Affecting Sales Of Products -

Several factors which affects the sales -

1. **Consumer's preferences**- what people desire influence demand.
2. **Fashion**- recent trends in society.
3. **Competition**- products of rivals.

Impact Of Celebrity Endorsement On Sales Of A Products - The message spread through endorsement of a product is very loud and clears as well as appealing there is a positive relation between endorsement and sales.

Methodology -

Theorectical Explanation - The main 3 attributes of a celebrity are, first, attractiveness which comprises of beauty, charm, looks, etc. the other one is credibility which includes trustworthiness, sincerity and authority of the celebrity and third is transfers which means how he/she charges the meaning of the brand/products. These attributes have a direct impact on buying behavior.

Research Design - The research is quantitative and descriptive in nature. Primary and secondary date is collected.

Size of the sample used for research comprises of 100 university student.

Questionnaire which is used in the research process is being borrowed from the research study on the topic impact of celebrity endorsement on the product by Muhammad ali Jinnah university.\

Model - The below table and chart shows the framework for understanding the effects of consumer behavior on celebrity endorsement **(Table & Chart see in the next page)**

Conclusion - In an age where everyone spends most of their day on social media, there's no doubt that celebrities have an impact on our lives. For some people more and some less.

Marketing values have changed throughout the year as well. From once using a products attributes as the key point of selling to involving celebrities, today it's mainly about how well a company manages to educate consumers about the personal values, benefits and quality of product. It's about being less transactional and more personal. Brands need to provide tools to help consumer validate the individual fit of a product or service for their individual situation. What may work and look on beyonce must not necessarily do so for members of the beyhive. And most consumers know it.

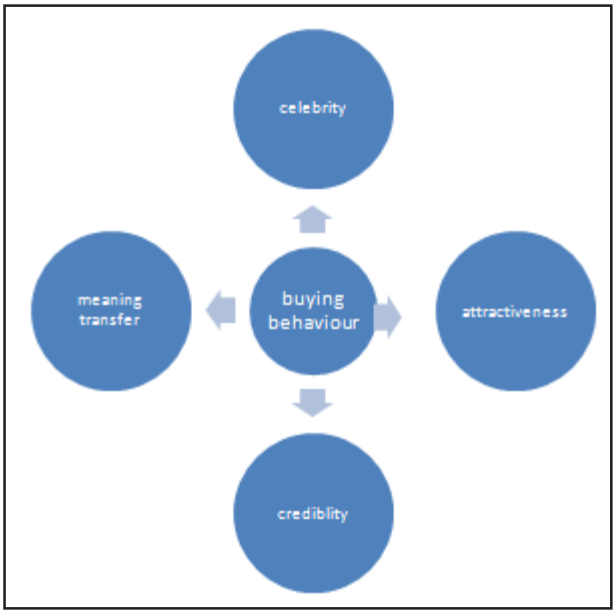
At the end of the day, a brand must let consumer know why to buy their products, not the celebrity. They are the ones that need to advice, convince and help shoppers decide, not the celebrity.

Limitation Of Study - Lack of resource and time as it was not possible to conduct survey at large level. During data collection many employees are unwilling to fill the questionnaire due to lack of time .they were having the feeling of wastage of time for them and finding are entirely based on perception of people so the nature variant may be biasing factor.

References :-

1. Choi, S.M. and Rifon, J.N. (2007) "Who is the Celebrity in Advertising? Understanding Dimensions of Celebrity Image", Journal of Popular Culture, 40(2), pages 304-325.
2. Cooper, Michael (1984) "Can Celebrities Really Sell Products?" Marketing and Media Decisions, Vol.19, 6465.
3. Dinesh Kumar Gupta (2007), "Impact of Celebrity Endorsement on Consumer Buying Behavior and Brand Building" available at. http://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=1203322.
4. Friedman, H. H., & Friedman, L. (1979). "Endorser Effectiveness by Product Type."Journal of Advertising Research, Vol. 19(5), pages67 -71.
5. Goldsmith, R.E., Lafferty, B.A. and Newell, S.J., (2000) "The impact of corporate credibility and celebrity credibility on consumer reaction to advertisements and brands."Journal of Advertising , Vol. 29(3), pages 43-54.
6. Joshi, V. and Ahluwalia, S. (2008) " The Impact of Celebrity Endorsements on Consumer Brand Preferences " [online] Available at:
7. http://www.indianmba.com/Faculty_Column/FC706/fc706.html.
8. Kulkarni, A.S and Gaulkar, U.S.,(2005) "Impact of Celebrity Endorsement on Overall Brand"
9. [online] Available at: http://www.indianmba.com/Occasional_Papers/OP88/op88.html.

Models explaining celebrity endorsements	Basic theory	Source of influence on consumers	Consumer perception/ behavior/buying
SourceAttractivenessModel	Expertise, trustworthiness of celebrity.	Identification process	Positive insight of ad, celebrity and brand when knowledge and dependability high.
Source credibilityModel	Familiarity, likeability and similarity of celebrity.	Internalization process	Optimistic discernment of ad, celebrity and brand when personality is well-known and likeable.
Meaning transfer model	Process of transfer of meaning from celebrity to brand and to consumer	Transfer process of meaning from celebrity to brand to consumer.	The just right match between properties of brand and celebrity meaning haggard from his/her take for granted role the higher the livelihood of consumers observation and fraud of products meaning



****

Recent Developments In Merchant Banking And Challenges In India

Priyanka Pamecha* **Dr. L. N. Sharma****

Abstract - The objective of this article is to lay the groundwork for a theory of merchant banking in India. Merchant Banking is a financial institution which provided number of services that helps in the growth of the corporate sector which ultimately strengthen the economic development of a country. Merchant Banks are mainly engage in a several functions like underwriting,portfolio management, underwriting , consultancies, advisory, issue management and host of other activities.

Merchant banking is a combination of banking and consultancy services. It provides consultancy to its clients for financial, marketing, managerial and legal matters. Consultancy means to provide advice ,guidance and services for a fee. It helps a businessman to start a business, to raise finance, to expand, modernize the business and in restructing of a business. It also helps to revive sick units.

In this context researcher highlight the Merchant banking in India and recent development of merchant banking and challenges ahead in India. Currently merchant banking activity has developed rapidly in the Indian capital market with more than 1450 merchant bankers and more than 930 has registered with SEBI. Merchant Banking in India has a very bright future in coming years and has all potential in competing with International countries.

Key Words - Merchant banking, Financial Institutions, Issue Management, Underwriting, Portfolio Management.

Introduction - Meaning and Definition of Merchant Banking In the Indian Context, merchant bank has been defined by V.Gangadhar and M.Sunder as a service activity. In other words ,banking departments rendering non fund based services of arranging funds rather than providing them to the needing Industrial concerns is called Merchant Banking. The first authoriative definition for the term,'Merchant Banker ' has been given in the Rule 2(e) of SEBI (Merchant Bankers) Rules 1922. Accordingly , "A merchant banker means any person who is engaged in the business of Issue Management Consultant, Advisor of rendering Corporate Advisory Services in relation to such Issue Management".

In banking , a merchant bank is a traditional term for an Investment Bank. It can also be used to describe the Private Equity activities of banking. This article is about the history of banking as developed by Merchants from the middle age onwards.

Merchant Banking is an important service provided by a number of financial institution that help in growth of the Corporate Sector which ultimately reflects into the Overall economic development of the country. In fact, Merchant Banking implies a wider range of specialist services, such as -

1. Capital Restructing Finance
2. Corporate Counseling and pre-investment studies
3. Credit Syndication
4. Issue management and underwriting
5. Bankers to issue
6. Portfolio management
7. Venture Capital Financing
8. Leasing
9. Non-resident investment
10. Acceptance credit and bill discounting
11. Working Capital Finance
12. Merger Amalgamation and take over
13. Foreign currency finance
14. Mutual Funds
15. Project appraisal
16. Fixed deposit
17. Brokering

Objectives Of The Study -

1. To develop the ability to study the functioning of Merchant Banking in India & learn& apply multi disciplinary concepts, tools and techniques to solve vital problems.
2. To familiarize with the various servcies provided by Merchant Bankers.
3. To recognize prime objective of Merchant Banking.
4. To understand the organization and nature of Merchant Banking units.
5. To find out the growth potential of Merchant Banking in India.

***Research Scholar (Commerce) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA**
****Professor (Commerce) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA**

6. To know the functions of merchant banking services.
7. To understand the recent development in merchant banking and challenges ahead.

Research Methodology - There is an abundance of empirical theory and research on merchant banking issues, problems, challenges and policy measures which was applied as basic framework in this paper. However, while using the existing research for analyzing merchant banking problems ,issues and challenges in focus, this paper is a contribution to an academic research through qualitative method of data collection, secondary data was collected through literature reviews, books, periodicals, newspaper, journals , internet etc.

Literature Review - S.N.Tripati in 'Handbook on A to Z of Banking ' expalined merchant bank is an agency ,retained by a company to advise and assist in Capital structuring restructing and its mobilization with the prescribed and regulatory framework..Thus the Merchant Banker'srole can be institutional in loans syndication,institutional placements, advisory services including mergers /acquistion /alliance and primary market.

In the words of skull,a merchsant bank could be best defined as a financial advice and investment services whose organization is characterized by a high proprotion of Professional staff able to approach problems in an innovative to and to make and implement decision rapidly.

D.N.Ghosh ,former chairman State Bank of India,"Commercial bankers are financiers but merchant bankers are financial engineers or architects & commercial banker most of the time strives on his financial muscles.A merchant banker has to strain his grey cell. He has to think up new ideas. A commercial banker, especially in the administrative regime like ours,can choose to react but merchant bankers to anticipate and innovate."

Stanley chqpman (1984) stated in his book about the evolution of the role of the merchant bankers, specially the market leaders like Rothschilds Barrings, Warburgs, Schroders.

Valentine V.Craig (2001) in his article described the evolution of private equity market in the United States as the term merchant banking generally understood private equity investment made in the unregistered securities of public or privately held companies.

H.R.Machiraju (2004) examined a comprehensive and updated version of the functions of merchant bankers apart from mandated functions.

Organization Of Merchant Banking Units - The structure of organiztion of merchant banks reveals certain similar characteristics -

1. a high proportion of professional to total staff
2. a substaintial delegation of decision making
3. a short chain of command
4. rapid decision making
5. flexible organization structure
6. innovative approaches to problem solving and
7. high level of financial sophistication

In the words of skull, a merchant bank could be best defined as a financial advice, and investment services whose organization is characterized by a high propotion of professional staff to approach problem in an innovative manner and to make and implement decision making. Securities and exchange board of India (SEBI) has divided merchant bankers into four categories, which are as follow:

Categories	Activities	Net Worth
Category- I	to carry on the activity of issue management and to act as advisor, consultant, management, underwriter, portfolio manager.	Rs. 1 Crore
Category- II	To act as advisor, consultant, Co-manager, underwriter, portfolio manager.	Rs. 50 lakh
Category-III	To act as underwriters advisor or cosultant to an issue.	Rs. 20 lakh
Category-IV	To act only as advisor on consultant to an issue.	Nil

Leading Merchant Bankers In India - In India, there are public sector private sector as well as foreign players in the merchant banking indutry. Some of the sky players are listed below -

1. **Public Sector -** SBI capital market, Punjab National Bank, IFCI Financial Services.
2. **Private Sector -** ICICI securities, Axis Bank, Bajaj Capital, Tata capital Markets, Yes Bank, Kotak Mahindra Capital Company, Reliance Securities.
3. **Foreign Merchant Sector -** Goldman Sachs (India) Securities, Mogan Stanely India, Barclays Securities (India), Bank of America, Citi group, Global Markets in India.

Recent Developments In Merchant Banking - The recent developments in Merchant Banking are due to certain contributory factors in India. They are -

1. The merchant Banking was as its best during 1985-1992 being whom there were many new issues. It is expected that 2010 that it is going to be party time for Merchant banks as, many new issue are coming up.
2. The foreigh investors -both in the form of Portfolio investment and through foreign direct investment are venturing in Indian Economy. It is increasing the scope of merchant bankers in many ways.
3. Disinvestment in the government sector in the country gives a big scope to the merchant banks to function as consultants.
4. New financial instruments are introduced in the market time and again. This basically provides more and more

opportunity to the merchant banks.

5. The mergers and corporate restructing along with MOV and MOA are giving immense opportunity to the merchant bankers for consultancy jobs.
6. Though there has been a susbtaintial expansion in their size, coverage and operations with considerable government encouragement particularly in the post liberalization era.

Need & Importance Of Merchant Banking System In Indian Economy - The economy of a country is often affilicted with different unpredictable conditions like inflation, unemployment, stagnation and so forth The need to sustain a steady growth is necessary for corporation and individuals which is possible only with a long term strategy and financial options. The merchant banking services provide solutions and financial options.

Need and importance of Merchant Banking in India due to excess demand of capital for expanding industry and trade with the mounting deamand for funds there was strain on capital market that stimulates the commercial banks, share brokers and financial consultancy firms to enter into the filed of Merchant banking and share the growing capital market.

These banks provide advisor services to clients based on a particular fee. They also provide other financial services to mergers and clients. It is the only financial institute that invests its capital in the clients company. It acts as intermediary between those who possess capital and those who need capital.

4) Limitation Of The Study -

1. Due to parity of time only limited information can be collected.
2. There can be a possibility of “individual biasness”on the part of respondents.
3. Study would be confined to only some public and Private sector merchant Banking Companies.
4. Sample size to be taken may not be the true representative of the population.

5) Scope Of Merchant Banking Activities - Merchant Banking activity helps -

1. In channelizing the financial surplus of the general public into productive investment avenues.
2. To coordinate the activities of various intermediaries to the share issue such as the registrar, bankers, advertising agency, printers, underwriters, brokers etc.
3. To ensure the compliance with rules and regulations governing the securities market.

6) Future Prospectus In India - The future prospectus of merchant banking in Infia is as follows -

1. Growth of Primary market.
2. Entry of foreign investors.
3. Changing policy of financial institutions.
4. Development of debt market.
5. Corporate restructuring.

7) Challenges Ahead In The Merchant Banking - The most anticipated equity culture is trading and on the other hand debt and private placement markets are swinging. Few of general challenges faced by merchant bankers in India.

1. SEBI guidelines have constrained their operations to Issue managment and Portfolio management to some extent. As a result, the scope of work is limited.
2. In efficiency of the clients are often blamed on to the merchant banks, so they are into trouble without any fault of their own.
3. The net worth prerequisite is very high in categories I and II in particular, so many professionally experienced person/organizations cannot come into the picture.
4. Poor New issues market in India is drying up the business of the merchant bankers.
5. Frequent changes in the guidelines also have been affecting the growth of merchant banking business Limited range of merchant banking activities handed by public sector banks and inferior quality of the services in contrast to lending private sector merchant bankers and foreign merchant bankers is also responsible for the depression in merchant banking services.
6. Product development is one of the weak areas of the public sector banks. No attempt has been made to introduce non fund based products. This has to be tackled if the public sector banks are to survive in a competitive environment.

8) Suggestions - Non Interest Income In Bank Merchant - Increase in the competition in the banking sector, every bank try to adopt new and innovative strategy to increase customers -

1. Banks should reduce the commission, exchange, brokerage fee to attract more and more customers.
2. Can increase more use of Mobile banking and the concept is new in banking operation. This is very customer friendly, safe and secure when compared to internet banking. A customer can also enjoy the services from any mobile number, any brand handset and any network operator.
3. Offer excellent customer service at the customer where customers are more satisfied with their banking services.
4. Open branches in areas where there is large inflow and outflow of non-banking activities.
5. Charge higher commission for issuing drafts of large amount.
6. Banks should provide concession for the lockers and safe custody to those customers who have more deposits in their current accounts.
7. Banks should offer PLR to borrowers to give the banks substaintial non-fund business.
8. Banks should give concession to the importers/ exporters in issuing drafts, LC, LG etc., and some other concession.
9. Service charges for credit cards should be increased atleast to the bearable extent.

9) Conclusions - Inspite of distinct problems, merchant banking in India has vast scope to develop because of lot of domestic as well as foreign businesses booming here. Indian Economy provides an amicable environment for these firms to set up, flourish and expand here. Merhcant banking is one of the oldest and specialized financial intermediaries in the primary market. Merchant banking in India has emerged as an indispensible financial advisory activity. Merchant banking in India has a great demand over the globe, attracting many companies to try their hands in this field. Compnaies need to build a strong image and some are still at initial stages to leave a mark in the international market. Merchant banking in India has very bright future in the coming years and has all potential in competing with International countries. In the coming year's merchant banking have reason to believe, they will be promoted with government and market support to compete internationally.

- Long standing client relationship.
- Strong position in high growth client and product inches.
- Multiple revenue growth intiatives are in place with detailed and concrete action plans and with rigorous follow up mechanisms.
- Growth is controlled by a sound Risk Managment System and disciplined cost management.
- Small and Medium Scale enterprises SME's need immediate attention from merchant bankers to get aceess to finance.
- SMER's are facing still competition from large scale companies.

References :-

1. Narasmihah, M.S. and Ramana, L.V. (1995), Pricing of Intitial Public offerings : Indian Experience with Equyity Issues , The ICFAI Journal of Applied Finance, Vol. 1, pp. 26-39.
2. Ritter, J.R. (1991), The logn Rum Performance of Initial Public Offerings, Journal of Fianance, Vol. 46, pp. 3-28.
3. Agarwal, Pramod Kumar (1997), Merhcant Banking in India, Delta Publishing House, New Delhi.
4. Gordon, J.E., and Nararajan K. (2004), Fianancial Markets & Institutions, Himalayas Publishing House, New Delhi.
5. Hans. Peter Bauer, What is a Merchant Bank, The Banker, July 1976, p. 795.
6. Goldsmith, R., Financial Structure and Development, 1969, Yale University Press.
7. New Haven, Meckinnon, R.I., Money and Capital in Economic Development, The Brookings Institution, Washington, DC.
8. www.academia.edu/4582419/merchant_banking_in_india.
9. http://www.mbanknol.com/financial-management/importance-and-needof-merchant-banking-in-india/
10. http://www.selfgrowth.com/articles/role-of-merchant-banking-services-in-our-economy.
11. http://www.themanagermentor.com/EnlightenmentorAreas/finance/fm/MerchantBanking. htm.
12. https://en.wikipedia.org/wiki/Merchant_bank.
13. www.academia.edu/4582419/merchant_banking_in_india.
14. www.indiacom.com/yellow-pages/merchant-banks/.
15. www.preserverarticles.com/…/merchant-banking-meaning-and-functions.

****

Problems Faced By Micro, Small And Medium Enterprises In India

Shilpa Jain *

Abstract - In present scenario of business, the micro, small and medium enterprises have been accepted as the engine of growth for promoting equitable development. The MSME'S also have the vital role in dispersal of industries and generation of employment opportunities .The MSME'S are providing job more than 6 crore people . The MSME sector is contributing 8% of country's GDP, 45% of manufacture and 36% its exports. The MSME's sector has consistently registered higher growth rate compare to the overall industrial sector. The distribution of MSME's in all over India is not equal because of unavailability of raw material, unawareness or lack of entrepreneurial skills development and lack of support of financial and technical assistance from concerning local authorities at district or state and central level. The unavailability of adequate and timely credit facility, high cost of credit, lack of modern technology , no research and innovations, insufficient training and skill development, complex labor laws are the main problems of the MSME'S. Although, there are various opportunities are available in the development of MSME'S. The MSME'S sector can also attract to the foreign investment and technology .The employment is more possible through the development of MSME'S. The MSME'S will be able to satisfy the needs of the customers up to a great extent after considering their expectations primarily. Migration of rural youths can stopped by providing them chance to work at their place. The mutual change of technology among the different types of MSME'S, financial and technical assistance, liberal labour laws , training and skills formation will assist in the development of MSMES'S . There must be a detailed survey and research to know the problems and difficulties of MSME'S so that a rapid growth can be attained.
Key Words - MSMEs, problems of MSMEs, equitable development, Indian Economy.

Introduction - Economic development of any country, to great extent, depends on the industrial development. Industrial development depends on the various factors like infrastructure development, government support, market, baking facilities, government policies etc. The sustained industrial development, development of various types of industries is necessary. Among various types of industries, Micro, Small and Medium Enterprises (MSME) plays an important role because of its special nature. MSME require small investment and create more employment. Special nodal agencies have been established by many countries to oversee the development of MSME and provide government support for the same. MSMEs play a vital role in the Indian economy by providing support to national priorities of employment, removing poverty and regional imbalances.

In the case of India, also MSME establishment has for the first time been defined in terms of separate Act, governing promotion and development of Micro, Small and Medium Enterprises (MSME) development Act, 2006 (which has come into force from 2nd Oct, 2006) the Office of Development Commissioner (Micro, Small and Medium Enterprises) functions as the nodal Development Agency under the Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises (MSME). The main objective of the Act is to impart greater vitality and growth impetus to the Micro, Small and Medium Enterprises (MSME) in terms of output, employment and exports and instilling a competitive culture based on heightened technology awareness. Government of India (Govt. of India) has been taking proactive steps in the direction of strengthening the competency of Indian MSMEs. The Five-year plans of the Government have placed emphasis on the MSME sector for achieving various growth parameters.Despite being such an important contributor to Indian Economy, MSMEs face number of problems. They are as under:

1. Problem of Raw Material - A major problem that the micro, small and medium enterprises have to contend with is the procurement of raw material. The problem of raw material can be in form of an absolute scarcity or poor quality of raw materials or high cost.

The majority of these enterprises mostly produced items dependent on local raw material. Then, there was no severe problem in obtaining the required raw materials. The small units that use imported raw material face raw material problem with more severity mainly due to difficulty in obtaining this raw material either on account of the foreign exchange crisis or some of other reasons. Even the micro

*Research Scholar (Management) Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur (Raj.) INDIA

and small enterprises that depend on local resources for raw material requirements face the problem of other type. An example of this type is handloom industry that depends for its requirement of cotton on local traders. These traders often supply their cotton to the weavers on the conditions that they would sell their ready clothes to these traders only. Then, what happens that the traders sell cotton to them at fairly high prices. This becomes a clearest example of how the poor weavers are subjected to double exploitation at the hands of traders. Keeping in view the raw material problem of micro and small enterprises, the Government makes provisions for making raw material available to these units. Nonetheless, micro and small enterprises with no special staff to liaise with the official agencies, these units are left with inadequate supplies of raw material. As a result, they have to resort to open market purchases at very high prices. This, in turn, increases their cost of production, and, thus, puts them in an adverse position vis-a-vis their larger rivals.

2. Problem of Finance - An important problem faced by micro, small and enterprises in the country is that of lack of availability of finance which is mainly due to two reasons. Firstly, it is partly due to scarcity of capital. Secondly, it is partly due to weak credit worthiness of such enterprises. Due to their weak economic base, they find it difficult to take financial assistance from the commercial banks and financial institutions. As such, they are bound to obtain credit from the money lenders on a very high rate of interest and are, thus, exploitative in character. Although the availability of institutional credit to micro and small enterprises is certainly increasing. Nevertheless, the fact remains that the criterion of 'credit worthiness' still weights heavily with the nationalised commercial banks. There is a need to change the outlook of the banks towards MSMEs. For this, it is necessary to further liberalise the rules and practices of banking in the country.

3. Problem of Marketing - One of the main problems faced by the micro small and medium enterprises is in the field of marketing. These units often do not possess any marketing organisation. In consequence, their products compare unfavourably with the quality of the products of the large-scale industries. Therefore, they suffer from competitive disadvantages vis-a-vis large-scale units. In order to protect micro and small enterprises from this competitive disadvantage, the Government of India has reserved certain items for the small- scale sector. Besides, the Trade Fair Authority of India and the State Trading Corporation (STC) help the small-scale industries in organising their sales. The National Small Industries Corporation (NSIC) is also helping the small units in obtaining the government orders and locating export markets. Ancillary units face the problems of their own types like delayed payment by parent units, inadequacy of technological support extended by parent units, non-adherence to quality and delivery schedules, thus, disturbing the programmes of the parent units and absence of a well-defined pricing system and regulatory laws.

4. Other Problems - In addition to the problems enumerated above, the micro small and medium enterprises have been constrained by a number of other problems also. These include technological obsolescence, inadequate and irregular supply of raw materials, lack of organised market channels, imperfect knowledge of market conditions, unorganised nature of operations, inadequate availability of credit facility, constraint of infrastructure facilities including power, and deficient managerial and technical skills. There has been lack of effective co-ordination among the various support organisations set up over the period for the promotion and development of these industries. Quality consciousness has not been generated to the desired level despite various measures taken in this regard. Some of the fiscal policies pursued have resulted in unintended splitting up of these capacities into uneconomic operations and have inhibited their smooth transfer to the medium sector. All these constraints have resulted in a skewed cost structure placing this sector at a disadvantage vis-a-vis the large industries, both in the domestic and export markets.

Conclusion - MSMEs are the real asset for the country. It is very important to empower the MSME sector to utilize the limited resources in an optimum manner. The MSMEs need to be educated and informed of the latest developments taking place globally and helped to acquire skills necessary to keep pace with the global developments. Government should create necessary mechanism to solve the problems of MSME so that they can grow in an environment of global opportunities. MSME Act need to the strengthened to provide autonomy and support to the industries. Various seminars, workshops and training programmes need to be organized to educate and create awareness among MSME.

References :-

1. Dr. A.S. Shiraleshatti; "Prospects and Problems of MSMEs in India- A study; International Journal of in Multidisciplinary and Academic Research (SSIJMAR); Vol. 1, No. 2, July-August; ISSN 2278-5973; pp. 1-7.
2. MSME at Glance: Government of India Report-2016.
3. Rajib Lahiri; Problems and Prospects of Micro, Small and Medium enterprises (MSMEs) in India in the era of Globalization.
4. http://msme.gov.in/

****

राजस्थान सरकार के राजस्व का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. एल. एन. शर्मा *

शोध सारांश – राजस्थान सरकार के राजस्व में कुल प्राप्तियों में वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 11 प्रतिशत की वृद्धि दर में वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 27 प्रतिशत की कमी हुई, जो निराशाजनक है। इसी प्रकार कुल प्राप्तियों में राजस्व प्राप्तियों में वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 15 प्रतिशत की अभूतपूर्व वृद्धि आशाजनक है, जबकि 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 32 प्रतिशत की कमी निराशाजनक है। इसी प्रकार कुल प्राप्तियों में पूंजीगत प्राप्तियों में वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 06 प्रतिशत की कमी दर्शाई गई है और 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 03 प्रतिशत की कमी दर्शाई गई है। राजस्थान सरकार के राजस्व स्त्रोतों में कुल व्ययों के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि वर्ष 21012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जबकि 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 33 प्रतिशत की अप्रत्याशित कमी हुई है, जो निराशाजनक है। राजस्थान सरकार के राजस्व स्त्रोतों में राजस्व आधिक्य से यह ज्ञात हुआ है कि वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 39 प्रतिशत की कमी निराशाजनक है, जबकि 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 04 प्रतिशत सुखद है। राजस्थान सरकार को राजस्व स्त्रोतों में वृद्धि हेतु नये राजस्व की खोज करना होगी।

शब्द कुंजी – लोकवित्त, राजस्व, कर अपवंचन, अनुदान, लोक ऋण, राजस्व आधिक्य।

प्रस्तावना – 'राजस्व ' दो अक्षरों से बना है – 'राजन् + स्व ' जिसका अर्थ होता है राजा का धन। अत: राजस्व में राजा धन कहाँ से और किस प्रकार लाता है और व्यय करता है। अंग्रेजी के पब्लिक फायनेंस का अर्थ भी जन वित्त या सार्वजनिक वित्त होता है। अत: सार्वजनिक सत्ताओं के आय–व्यय संबंधी कार्यो के अध्ययन को ही राजस्व कहते है। डॉ. डाल्टन के अनुसार – राजस्व के अतंर्गत लोक सत्ताओं के आय–व्यय तथा उनके पारस्परिक समायोजन और समन्वय का अध्ययन किया जाता है। प्रो. प्लेहन द्वारा भी इसी की पुष्टि में कहा गया है कि राजस्व वह विज्ञान है, जो राजनीतिज्ञों की उन क्रियाओं का अध्ययन करता है, जो कि राज्य के उचित कार्य के सम्पादन हेतु भौतिक साधनों की प्राप्ति एवं प्रयोग के लिए करते है। जबकि जे.के. मेहता मानते है कि राजस्व राज्य के मौद्रिक तथा साख संबंधी साधनों का अध्ययन है। विकासशील देशों के सदंर्भ में राजस्व सरकार की वित्तीय क्रियाओं का अध्ययन है ताकि आर्थिक विकास तीव्र व निर्बाध गति से हो सके जबकि विकसित देशों में राजस्व उन वित्तीय क्रियाओं का अध्ययन है, जिनमें आर्थिक स्थिरता प्राप्त की जा सकें, राजस्व में राज्य और उससे संबंधित संस्थाऐं सामाजिक कल्याण के लिऐ किस प्रकार धन एकत्र करती है और उसका उपयोग किस प्रकार करती है, वह सम्मिलित है।

शोध का उद्देश्य – आज वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संपूर्ण विश्व विकास की राह पर चल पड़ा है। प्रत्येक देश तीव्र गति एवं निर्बाध रुप से विकास चाहता है। जिसमें भारत देश भी एक है। उसी प्रकार भारत के सभी राज्य भी तेजी से विकास चाहते है। उसमें राजस्थान राज्य भी एक है, अनेकों विपरीत परिस्थितियों के बावजूद भी राजस्थान ने विकास की राहें तेज की है। राजस्थान के विकास में राजस्व का महत्वपूर्ण योगदान है। उक्त शोध पत्र से यह ज्ञात करना प्रमुख उद्देश्य है कि राजस्थान सरकार के राजस्व में उनके स्त्रोतों की क्या और कितनी भूमिका है, विभिन्न स्त्रोतों में किस स्त्रोत की भूमिका अधिक है और किस स्त्रोत की कम है, अधिक है, तो उसके क्या कारण है, और कम है, तो उसके क्या कारण है यह ज्ञात करना ही शोध का प्रमुख उद्देश्य है। साथ ही उन सुझावों को समावेश करना है, जिससे राजस्व में वृद्धि हो एवं राजस्थान राज्य का तेजी से विकास हो सके।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में राजस्थान राज्य के राजस्व संबंधित द्वितीय समंकों का अध्ययन किया गया है तथा चार वित्तीय वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 के बजट अनुमानों के ही राजस्व में कुल प्राप्तियों एवं कुल व्ययों का ही तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

राजस्थान सरकार के राजस्व स्त्रोतों का तुलनात्मक अध्ययन –

तालिका क्रं. 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 1 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. राजस्थान सरकार के बजट अनुमान में कुल प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। परंतु वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 24 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2013–14 से वर्ष 2014–15 की तुलना करने पर राजस्व की कुल प्राप्तियों में 35 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

16 की तुलना करने पर यह वृद्धि 08 प्रतिशत ही रही अर्थात् राजस्व को कुल प्राप्तियों में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 27 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।

2. कुल प्राप्तियों की अलग अलग मदों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल राजस्व प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर 37 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर राजस्व प्राप्तियों में 05 प्रतिशत की वृद्धि ही हुई अर्थात् राजस्व प्राप्तियों में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 32 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।

3. पूंजीगत प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर 23 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 06 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है। जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना में पूंजीगत प्राप्तियों में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 03 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है अर्थात पूंजीगत प्राप्तियों में 03 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।

4. कुल व्यय में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 24 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2013–14 में 2014–15 की तुलना करने पर 38 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 14 प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि हुई है। जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर कुल व्यय का केवल 05 प्रतिशत ही वृद्धि हुई अर्थात कुल व्यय में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 33 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।

5. कुल व्यय की अलग अलग मदों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल राजस्व व्यय में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई, वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 16 प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि हुई, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर राजस्व व्यय में 05 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई अर्थात राजस्व व्यय में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 33 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।

6. पूंजीगत परिव्यय में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर 39 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 10 प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि हुई है, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर पूंजीगत परिव्यय में 03 प्रतिशत की वृद्धि हुई अर्थात् पूंजीगत परिव्यय में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 36 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी हुई।

7. राजस्व आधिक्य में वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 28 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 39 प्रतिशत की कमी हुई है, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर 24 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 04 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

राजस्थान सरकार के राजस्व में कुल प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन – **तालिका क्रं. 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

राजस्थान सरकार की कुल प्राप्तियों का वृत्त चित्र द्वारा प्रदर्शन **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रं. 2 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. राजस्थान सरकार के बजट अनुमान में कुल प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 24 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 35 प्रतिशत बढ़ी। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 08 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 27 प्रतिशत की कमी आई।

2. कुल प्राप्तियाँ की अलग अलग मदों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि राज्य कर में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 27 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 19 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 12 प्रतिशत की कमी हुई, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 03 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई।

3. केंद्रीय करों के हिस्से में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 12 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में 03 प्रतिशत की कमी हुई, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 27 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से

2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 15 प्रतिशत वृद्धि दर में वृद्धि हुई।

4. कर भिन्न राजस्व में वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 41 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 23 प्रतिशत की कमी हुई, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 04 प्रतिशत की वृद्धि हुई, इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 14 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।
5. केंद्र से सहायता अनुदान में वर्ष 2012–13, 2013–14 एवं 2014–15 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 05 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 174 प्रतिशत की अभूतपूर्व वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 169 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना में केवल 28 प्रतिशत की कमी हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 202 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई है।
6. उधार एवं अग्रिम की वसूली में वर्ष 2012–13, 2013–14 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 26 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 21 प्रतिशत की कमी आई है। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 47 प्रतिशत की कमी हुई, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 से तुलना में 497 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में कुल 518 प्रतिशत वृद्धि दर में वृद्धि हुई है।
7. शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2012–13, 2013–14 से 2015–16 में लगातर वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 24 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जबकि वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 23 प्रतिशत की वृद्धि हुई तथा वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 01 प्रतिशत की कमी हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार कुल 07 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी हुई है।
8. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 61 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 44 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई। इस प्रकार वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में वर्ष 2013–14 से 2014–15 में 17 प्रतिशत की कमी हुई, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 17 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में 27 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी आई है।

राजस्थान सरकार के राजस्व में कुल व्ययों का तुलनात्मक अध्ययन –

तालिका क्रं. 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

राजस्थान सरकार के राजस्व के कुल व्ययों का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रं. 3 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. राजस्थान सरकार के बजट अनुमान में कुल व्यय में 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है, परंतु वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 24 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2013–14 से 2014–15 की तुलना में कुल व्यय में 39 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में 15 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 05 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई। इस प्रकार कुल व्यय की वृद्धि दर में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 34 प्रतिशत की कमी आई है।
2. कुल व्यय की अलग अलग मदों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि कुल आयोजनेत्तार व्यय में 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में 06 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में वृद्धि दर 12 प्रतिशत ही हुई। इस प्रकार वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 04 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई है।
3. कुल आयोजना व्यय में 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2013–14 से 2014–15 की तुलना में कुल आयोजना व्यय में 49 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में 19 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में केवल 23 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई है। इस प्रकार कुल वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 26 प्रतिशत वृद्धि में कमी आई है।

सुझाव –

1. राजस्थान सरकार के राजस्व स्त्रोतों का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह ज्ञात हुआ है कि कुल प्राप्तियॉ वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार बढ़ रही है। परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 27 प्रतिशत की कमी निराशाजनक है। इसमें वृद्धि के उपाय आवश्यक है।
2. कुल प्राप्तियों में राजस्व प्राप्तियॉ वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार बढ़ी है जो शुभ संकेत है। परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में 32 प्रतिशत की कमी चिंताजनक है। इसमें वृद्धि के उपाय आवश्यक है।
3. पूंजीगत प्राप्तियॉ वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार बढ़ी है। परंतु इनमें वृद्धि दर क्रमश: 06 प्रतिशत और 03 प्रतिशत की कमी यह दर्शाती हैं कि वृद्धि दर में वृद्धि भी आवश्यक है।
4. कुल व्ययों में वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई

है। परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में 33 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी निराशाजनक है। व्यय विकास का प्रतीक है। अत: इसकी वृद्धि दर में वृद्धि आवश्यक है।

5. राजस्व व्यय वर्ष 2012-13 से 2015-16 तक लगातार बढ़े है। परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 33 प्रतिशत की कमी निराशाजनक है। इसमें वृद्धि हेतु उपाय आवश्यक है।
6. पुंजीगत परिव्यय में वर्ष 2012-13 से 2015-16 तक लगातार वृद्धि हुई है। परंतु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में 36 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी चिंताजनक है। इसकी वृद्धि दर में वृद्धि आवश्यक है। अत: इसके लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता है।
7. राजस्व आधिक्य में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में वृद्धि हुई है। परंतु 2013-14 से 2015-16 तक लगातार कमी चिंताजनक है। इसी प्रकार 2012-13 से 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में 39 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी विशेष चिंताजनक है। अत: राजस्व आधिक्य में भी वृद्धि हो ऐसे विशेष प्रयास किए जाने चाहिये।
8. राजस्थान सरकार द्वारा राजस्व स्त्रोतों में वृद्धि हेतु एक विशेष अध्ययन दल का गठन किया जाना चाहिए,ताकि यह दल देश के अन्य प्रांतों के राजस्व स्त्रोतों का अध्ययन कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि कौन कौन से स्त्रोतों में वृद्धि हो सकती है और वृद्धि किस प्रकार से हो सकती है।
9. राजस्थान सरकार को राजस्व वृद्धि हेतु नये नये राजस्व स्त्रोतों की खोज करने हेतु विशेष प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजस्व - जे.सी. वार्ष्णेय।
2. राजस्व एवं रोजगार सिद्धांत - डॉ.वी.सी. सिन्हा।
3. समष्टिगत अर्थशास्त्र एवं राजस्व - डॉ. वी.सी. सिन्हा।
4. लोकवित्त के सिद्धांत एवं व्यवहार - डॉ.डी.एन. गुर्टू।
5. व्यावसायिक वित्त - डॉ. आर.एम. कुलश्रेष्ठ।
6. लोक अर्थशास्त्र - डॉ. माहेश्वरी, डॉ. गुप्ता।
7. अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एवं राजस्व -डॉ. वी.पी. सिन्हा।
8. नवीन शोध संसार (यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2320-8767
9. द्विव्य शोध समीक्षा अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2394-3807
10. Public Finance - S.N. Chand
11. Research in Finance - Abdul Rahman
12. www.finance.raj.gov.in.

राजस्थान सरकार के राजस्व स्त्रोतों का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 1 (करोड़ में)

क्रं.	मद	बजट अनुमान 2012-13	बजट अनुमान 2013-14	बजट अनुमान 2014-15	बजट अनुमान 2015-16	वृद्धि (प्रतिशत में)		
						2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	कुल प्राप्तियाँ	7707185	9520848	12827600	13788769	24	35	08
2	राजस्व प्राप्तियाँ	6314683	7722060	10612467	11136166	22	37	05
3	पूंजीगत प्राप्तियाँ	1392502	1798788	2215133	2652603	29	23	20
4	कुल व्यय	7667523	9487195	13142689	13771339	24	38	05
5	राजस्व व्यय	6221922	7619474	10538719	11080485	22	38	05
6	पूंजीगत परिव्यय	1445601	1867721	2603970	2690854	29	39	03
7	राजस्व आधिक्य	92761	102586	73748	55681	11	-28	-24

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

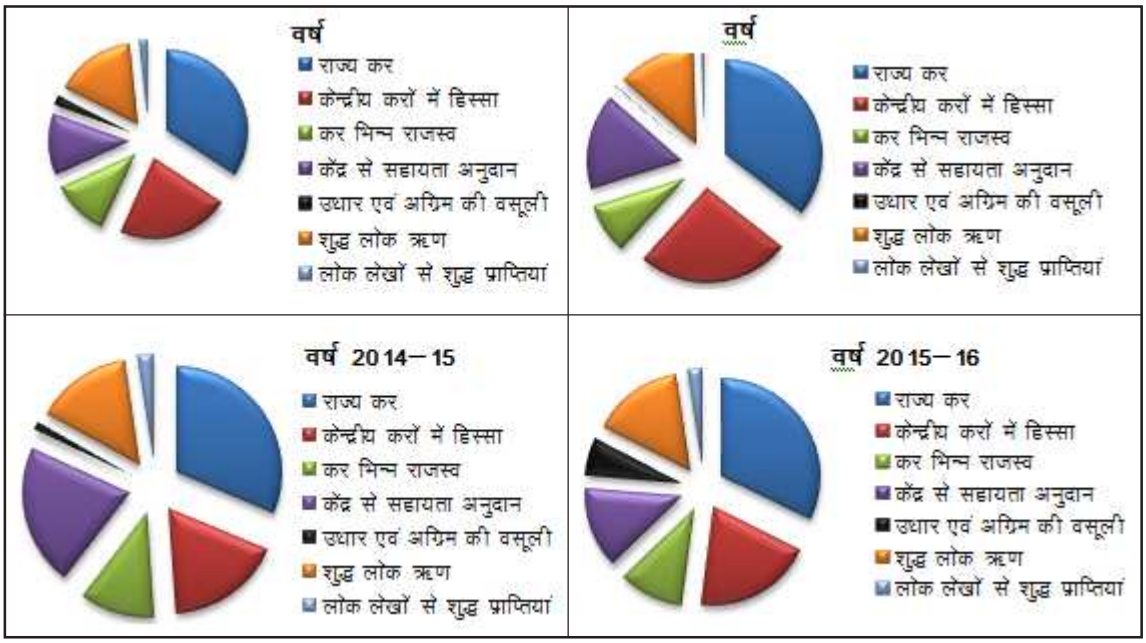
राजस्थान सरकार के राजस्व में कुल प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 2 (करोड़ में)

क्रं.	कुल प्राप्तियों के शीर्षक	बजट अनुमान 2012-13	बजट अनुमान 2013-14	बजट अनुमान 2014-15	बजट अनुमान 2015-16	वृद्धि (प्रतिशत में)		
						2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	कुल प्राप्तियाँ	7707185	9520848	12827600	13788769	24	35	08
2	राज्य कर	2683231	3405313	4065496	4709604	27	19	16
3	केंद्रीय करों में हिस्सा	1770685	2036090	2275554	2892483	15	12	27
4	कर विभिन्न राजस्व	895113	1265443	1493861	1549599	41	18	04
5	केंद्र से सहायता अनुदान	965653	1015214	2777556	1984479	05	174	-28
6	आधार एवं अग्रिम की वसूली	15118	19119	15143	90353	26	-21	497
7	शुद्ध लोक ऋण	1249788	1544523 +30000	1903717	2216499	24	23	16
8	लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	127595	205144	296273	345750	61	44	17

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

राजस्थान सरकार की कुल प्राप्तियों का वृत्त चित्र द्वारा प्रदर्शन



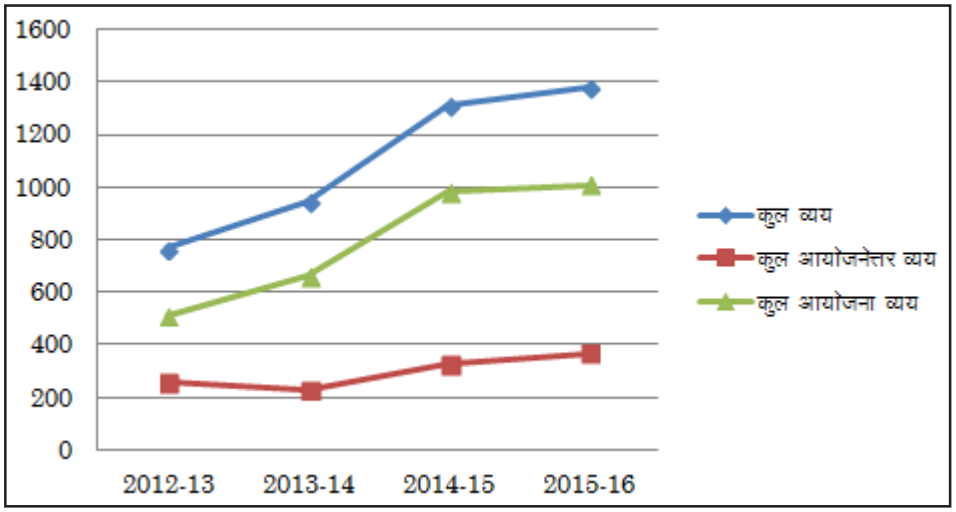
राजस्थान सरकार के राजस्व में कुल व्ययों का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 3 (करोड़ में)

क्रं.	व्यय के शीर्षक	बजट अनुमान 2012-13	बजट अनुमान 2013-14	बजट अनुमान 2014-15	बजट अनुमान 2015-16	वृद्धि (प्रतिशत में)		
						2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	कुल व्यय	7667523	9487195	13142689	13771339	24	39	05
2	कुल आयोजनेत्तर व्यय	2559086	22814412	3269278	3675045	10	16	12
3	कुल आयोजना व्यय	5108437	6642783	9873411	10096294	30	49	23

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

राजस्थान सरकार के राजस्व के कुल व्ययों का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन



****

बिलासपुर शहर के विभिन्न व्यवसासियों के व्यवसाय पर विज्ञापन का प्रभाव

राकेश कुमार गुप्ता * डॉ. के. के. शर्मा **

प्रस्तावना – जीवन का कोई भी क्षेत्र विज्ञापन के जादू से अछूता नहीं हैं। वाणिज्य, शिक्षा, मनोरंजन, राजनीति, उत्पाद, खेल, पानी, बिजली, परिवहन आदि का कोई भी क्षेत्र क्यों ना हो एक ना एक विज्ञापन हमेशा ही उनकी पैरवी कर रहा होता है। विज्ञापन हमारी सामाजिक व्यवस्था का एक अंग बन गया है। पहले विज्ञापन का उद्देश्य सीमित था किन्तु अब परिस्थितियाँ बदल गई है, सभी प्रचार-प्रसार के माध्यम अपने व्यापक अर्थो में विज्ञापन से जुड़ गए है। विज्ञापन की प्रगति विज्ञान के साथ-साथ कदम मिला रही है। जैसे-जैसे नये-नये आविष्कार होते गए वैसे-वैसे विज्ञापनों के भी नये-नये रूप सामने आते गए।

स्टीफन ली काक के अनुसार – 'विज्ञापन एक ऐसा विज्ञान है, जिसके द्वारा इन्सान की बुद्धि को उस समय तक जकड़ा जाता है, जब तक उसके जेब से पैसे ना निकाल लिए जाए।'

विलियम ग्लेडस्टोन के अनुसार –'व्यवसाय के लिए विज्ञापन का वहीं महत्व है, जो उद्योग में ऊर्जा का।'

अध्ययन के उद्देश्य – अध्ययन का उद्देश्य बिलासपुर शहर के व्यवसायियों के द्वारा अपनाए जाने वाले विज्ञापनों का अध्ययन तथा उन विज्ञापनों का व्यवसाय पर क्या प्रभाव पड़ रहा है का अध्ययन करना है। और इसके साथ ही साथ विज्ञापन के प्रति व्यवसायियों का क्या दृष्टिकोण है का भी अध्ययन करना कि वे विज्ञापन को विनियोग मानते है या व्यर्थ। प्रस्तावित अध्ययन का उद्देश्य निम्न है –

1. बिलासपुर शहर के व्यवसायियों के द्वारा अपनाए जाने वाले विज्ञापनों का अध्ययन करना।
2. उत्पादक को लाभ पहुँचाना, उपभोक्ता को शिक्षित करना, विक्रेता की मदद करना, व्यापारियों को अपनी ओर आकर्षित करना और विज्ञापन व उपभोक्ता के मध्य मधुर संबंध बनाना।
3. विज्ञापन के प्रति व्यवसायियों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना कि वे विज्ञापन को व्यर्थ मानते हैं या दीर्घकालीन विनियोग।
4. व्यवसायी अपने विज्ञापन से संतुष्ट हैं या नहीं का अध्ययन करना।
5. ग्राहकों का अध्ययन करना कि ग्राहक किन कारणों से वस्तु को क्रय कर रहे हैं।

बिलासपुर भारत के छत्तीसगढ़ राज्य का एक जिला है। जिसका मुख्यालय बिलासपुर है, जो राज्य की राजधानी नया रायपुर से 113 किमी. की दूरी पर उत्तर में स्थित है तथा प्रशासनिक दृष्टि से राज्य का दूसरा सबसे बड़ा शहर है। छत्तीसगढ़ राज्य का उच्च न्यायालय भी इसी शहर (बोदरी गाँव) में स्थित है, जिस वजह से इसे छत्तीसगढ़ के **न्यायधानी** के नाम से जाना जाता है। यह शहर बिलासपुर जिले का प्रशासनिक मुख्यालय है। बिलासपुर नॉर्थ ईस्ट छत्तीसगढ़ क्षेत्र के वाणिज्यिक और व्यापार केंन्द्र है। यह भारतीय रेलवे के लिए भी एक महत्वपूर्ण शहर है, क्योंकि यह दक्षिण पूर्व मध्य रेलवे जोन और बिलासपुर डिवीजन का मुख्यालय है। बिलासपुर देश का 16वाँ रेल जोन तथा सबसे पुराना रेलमण्डल है। यहाँ साउथ ईस्टर्न कोल्फील्ड्स लिमिटेड का भी मुख्यालय है।

बिलासपुर सुगंधित दूबराज चावल की किस्म के लिए भी प्रसिद्ध है। इसके अलावा यहाँ हथकरघा उद्योग से निर्मित कोसे की साड़ियाँ भी देशभर में विख्यात हैं। बिलासपुर सांस्कृतिक रूप से भी समृद्ध है और यहाँ की संस्कृति अनेक विविधताओं एवं रंगों को समाहित किये हुए है।

बिलासपुर शहर के प्रमुख व्यवसायिक क्षेत्र – बिलासपुर शहर लगभग 70-80 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है तथा जो आसपास के ग्रामीण क्षेत्र हैं वे भी शहर से जुड़ते जा रहे हैं बिलासपुर शहर में बड़े बड़े बाजार हैं जो इस शहर की खास विशेषता बताते हैं जैसे गोलबाजार कपड़े व सौन्दर्य प्रसाधन के लिए, जरहाभाठा मोटरपार्ट्स के लिए, दयालबंद टेन्ट के लिए आदि, शहर के कुछ प्रमुख व्यवसायिक क्षेत्र निम्न है –

1. **सदर बाजार** – यह बिलासपुर शहर का प्रमुख बाजार है, यहाँ लगभग सभी प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं। यहाँ शहर के हर वर्ग के लोग खरीददारी करने के लिए आते हैं। यहाँ प्रतिष्ठित दुकानों की संख्या ज्यादा है, यहाँ कपड़े, सोने-चाँदी, बर्तन, दवाई आदि दुकानों की संख्या ज्यादा है।
2. **गोल बाजार** – यह शहर का पुराना व आधुनिक बाजार है, यहाँ लगभग 100 दुकानों की गोल श्रृंखला है, जिसकी वजह से इसका नाम गोलबाजार पड़ा। यह शहर का सबसे प्रमुख व्यवसायिक क्षेत्र है, यहाँ कपड़े व सौन्दर्य प्रसाधन की सामग्री ज्यादा मिलती है व यहाँ वस्तुओं की कीमत अन्य बाजारों से थोड़ी अधिक होती है।
3. **तेलीपारा** – तेलीपारा क्षेत्र का विकास बहुत तेजी से हो रहा है, यह गोल बाजार व बस स्टैंड को जोड़ता है, तेलीपारा में ही नरेश बाजार स्थित है। जहाँ कपड़ो का व्यवसाय होता है।
4. **पुराना बस स्टैंड** – यह सरकारी व निजी दोनों प्रकार की बसों का स्टैंड है, यहाँ प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति आते हैं अत: यहॉ प्रत्येक प्रकार की वस्तुओं का विक्रय होता है।
5. **बुधवारी बाजार** – बुधवारी बाजार थोक व्यवसाय का प्रमुख क्षेत्र है, यहॉ सभी प्रकार के फुटकर व्यापारी खरीददारी के लिए आते हैं। यह बाजार रेल्वे स्टेशन के काफी करीब है,जिससे यहाँ वस्तुओं का आयात-

* सहायक प्राध्यापक, डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
* सहायक प्राध्यापक, डी.पी.विप्र. महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

निर्यात भी होता है अत: यहाँ बिलासपुर के लगभग सभी क्षेत्रों के व्यवसायी थोक क्रय हेतु आते है।

6. **शनिचरी बाजार** – यह बाजार सब्जी तथा अनाज के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ खरीददारी और बिक्री के लिए शहर के आस–पास के क्षेत्रों के लोग आते हैं, इसे साप्ताहिक बाजार भी कहते है परन्तु यहाँ हर दिन एक जैसा ही व्यवसाय होता है।
7. **जरहाभाठा –** यह क्षेत्र बिलासपुर–रायपुर मार्ग पर स्थित है तथा यहाँ आवागमन के साधनों का दबाव ज्यादा होता है, जिसके कारण यहाँ मोटर गाड़ियों में प्रयोग होने वाले कलपुर्जो एवं उनमें उपयोग होने वाली वस्तुओं का व्यवसाय यहाँ अधिक मात्रा में होता है।



यह सब प्रमुख व्यवसायिक क्षेत्र के अंतर्गत आते है इसके अलावा कई ऐसे बाजार हैं, जो व्यवसायिक क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं जो कि निम्न है –

1. माल धक्का 2. लिंक रोड 3. तोरवा क्षेत्र
4. नेहरू चौक क्षेत्र 5. तारबाहर क्षेत्र 6.राजकिशोर क्षेत्र आदि

बिलासपुर के व्यवसायियों के व्यवसाय पर विज्ञापन से पड़ने वाले प्रभाव – अध्ययन में परीक्षण कर यह पता लगाया कि बिलासपुर शहर के विभिन्न व्यवसायियों के व्यवसाय पर विज्ञापन से कितना प्रभाव पड़ रहा है, और जो व्यवसायी विज्ञापन नहीं करते हैं, उन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इसके बाद जो परिणाम हमें प्राप्त हुए हैं, वो निम्नलिखित हैं जिसे तालिका द्वारा स्पष्ट किया गया है–

तालिका से स्पष्ट है कि विज्ञापन के प्रभाव की कोई निश्चित दर नहीं है तथा यह विज्ञापन सभी व्यवसायियों के व्यवसाय पर एक निश्चित प्रभाव नहीं डालती है, तालिका से हम देखते हैं कि जहाँ कपड़ों के एक व्यवसायी को विज्ञापन से 50 प्रतिशत तक की वृद्धि हो रही है, वहीं हम दूसरे व्यापारी को देखते हैं, तो उसे विज्ञापन से मात्र 15 प्रतिशत तक की वृद्धि हो रही है।

तालिका – व्यवसाय का प्रकार **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

आरेख (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इसी प्रकार यदि व्यवसाय की प्रकृति पर हम नजर डाले तो, सबसे पहले विज्ञापन पर हमारी नजर पड़ती है, विज्ञापन से सबसे अधिक लाभ की प्राप्ति होती है लेकिन हम देखते हैं कि विज्ञापन से, मेडिकल स्टोर्स वालों को मात्र 2 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है और वहीं कपड़ा व्यवसायी को 32 प्रतिशत तक की वृद्धि हो रही है, इसका प्रमुख कारण व्यवसाय की प्रकृति है इसके अलावा अन्य बातों का भी प्रभाव पड़ता है, जैसे स्थान, यहाँ गोलबाजार और बस स्टैण्ड कपड़ो के लिए जाना जाता है, तो सबसे पहले लोग यहीं जाना पसंद करेंगे क्योंकि यहीं सबसे ज्यादा मात्रा में कपड़े मिलते हैं कपड़ा खरीदने के समय उपभोक्ता सबसे पहले यहीं जाना पसंद करते हैं यहाँ हर तरह के बाजार हैं, छोटे–बड़े, जहाँ उच्च व मध्यम वर्गीय उपभोक्ता दोनों की जरूरतों का समान उपलब्ध हो जाता है। विज्ञापन का माध्यम, जैसे बिलासपुर शहर में समाचार पत्र, बैनर, होर्डिंग, रेडियो, पम्पलेट आदि द्वारा विज्ञापन माध्यम अपनाया जाता है, जिसे देखकर उपभोक्ता प्रभावित होते हैं। समाचार पत्र जिसे आजकल हर व्यक्ति पढ़ता है। आए दिन समाचार पत्र में कुछ ना कुछ विज्ञापन दिया होता है जिसे देखकर उपभोक्ता प्रभावित होते हैं, बैनर का प्रयोग किया जाता है। विज्ञापन के लिए जिस पर उपभोक्ता की नजर जल्दी से पड़ती है और वे उस विज्ञापन के तरफ आकर्षित होते जाते हैं, पम्पलेट हम देखते हैं कि आजकल हर अखबार के साथ एक पम्पलेट रहता ही हैं, जो व्यापारी हैं। वे अपने व्यापार का प्रचार पम्पलेट से भी करते हैं वे उसके द्वारा उपभोक्ताओं को अपनी ओर आकर्षित करते हैं जैसे एक समान के साथ दूसरा समान मुफ्त या फिर आज कपड़ो में 50 प्रतिशत तक की भारी छूट आदि, इसका प्रमुख कारण मूल्य आधार है जिसे देखकर उपभोक्ता उनकी ओर आकर्षित होते हैं लेकिन बहुत से उपभोक्ता ऐसे होते हैं जो विज्ञापन देखकर भ्रमित होकर वस्तु क्रय कर ही लेते हैं परन्तु वस्तु के मूल्य के साथ–साथ उपभोक्ता वस्तु की गुणवत्ता को भी देखता है और वह मुफ्त मिलने वाली वस्तुओं को खरीदने से पहले सोचता है, रेडियो में भी विज्ञापन दिया जाता है। रेडियो शहरो और गाँवों दोनों जगह के लोग सुनते हैं, रेडियो पर व्यापारी अपने व्यापार का प्रचार–प्रसार करता है जिसे सुनकर उपभोक्ता प्रभावित होता है और टेलिविजन जहाँ हर चीज दिखाई देता है रंग–बिरंगें कपड़े, खाने का सामान, सौन्दर्य प्रसाधन आदि चीजें जो टीवी पर दिखाई जाती है उससे भी उपभोक्ता बहुत जल्दी प्रभावित हो जाते हैं।

बिलासपुर के व्यवसायियों का विज्ञापन के प्रति दृष्टिकोण – हमने अपने अध्ययन में बिलासपुर के व्यवसायियों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया कि वे लोग विज्ञापन को दीर्घकालीन विनियोग मानते हैं या व्यर्थ। यही मेरे अध्ययन का उद्देश्य भी था। इसके लिए मैंने उन लोगों से साक्षात्कार लिया और इसके साथ ही 10 प्रकार के व्यवसायियों को इसमें शामिल किया इस प्रकार 150 व्यवसायियों का अध्ययन किया जिनका दृष्टिकोण निम्न हैं।

तालिका

विज्ञापन को विनियोग एवं व्यर्थ मानने वालो की तुलना

क्र.	व्यवसाय का प्रकार	विनियोग मानने वाले	व्यर्थ मानने वाले
1	कपड़ा व्यवसाय	80%	20%
2	घरेलू उपकरण	89%	11%
3	किराना स्टोर्स	20%	80%
4	जनरल स्टोर्स	50%	50%
5	मेडिकल स्टोर्स	15%	85%
6	मोटर गाड़ियाँ	100%	00%
7	फुटवियर	55%	45%
8	मशीनरी सामान	25%	75%
9	भवन निर्माण सामग्री	70%	30%
10	पुस्तक स्टोर्स	48%	52%

बिलासपुर शहर के व्यवसायियों का विज्ञापन के प्रति दृष्टिकोण – अध्ययनकर्ता का मुख्य उद्देश्य बिलासपुर शहर के व्यवसायियों का विज्ञापन

के प्रति क्या दृष्टिकोण है का अध्ययन करना था। अध्ययन कर पाया कि सबसे अधिक मोटरगाड़ियों का व्यवसाय करने वाले व्यापारी विज्ञापन माध्यम अपनाते हैं और साथ ही साथ वे इसे एक ऐसा विनियोग मानते हैं जिसका लाभ उन्हें बाद में प्राप्त होता है, इसके बाद अध्ययनकर्ता ने देखा कि घरेलू उपकरण के व्यवसायी विज्ञापन के प्रति सकारात्मक रूख अपनाते हैं और विज्ञापन पर काफी पैसे व्यय करते हैं।

इसी प्रकार कपड़ों के व्यवसायियों को अध्ययनकर्ता देखते हैं, तो पाते हैं कि, कपड़ा व्यवसायी के 80 प्रतिशत लोग विज्ञापन को दीर्घकालीन विनियोग मानते हैं और इस पर अच्छा खासा धन खर्च करते हैं। इसके बाद भवन निर्माण के व्यवसायी, जो इस पर अच्छा खासा व्यय करते हैं, जनरल स्टोर और फुटवियर के व्यवसायी भी विज्ञापन के प्रति सकारात्मक रूख अपनाते हैं और इस पर धन खर्च करते हैं, जिसका उन्हें पूरा लाभ तो नहीं लेकिन अपेक्षित लाभ के आस-पास ये लोग अपना लाभ देखते हैं, तथा अध्ययनकर्ता ने देखा कि और जो बाकी व्यवसाय के जो व्यवसायी हैं। वे विज्ञापन की ओर ज्यादा ध्यान नहीं देते हैं लेकिन यदि हम विज्ञापन का माध्यम अपनाने वालो का प्रतिशत देखें तो पता लग जाएगा कि इसका प्रतिशत कितना कम है, लेकिन यदि अध्ययनकर्ता दोनों कि तुलना करें तो पता चलता है कि विज्ञापन को विनियोग मानने वालो का प्रतिशत ज्यादा है। अत: इसलिए अध्ययनकर्ता ऐसा कह सकते हैं कि बिलासपुर शहर के व्यवसायियों का विज्ञापन के प्रति दृष्टिकोण विज्ञापन को विनियोग मानने के तरफ ज्यादा है।

विज्ञापन का व्यवसाय पर पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययन का विश्लेषण – अध्ययनकर्ता ने अपने अध्ययन में देखा कि व्यवसाय कोई भी हो विज्ञापन के प्रभाव का कोई निश्चित क्रम नहीं है। किसी व्यवसाय पर विज्ञापन के प्रभाव से 50 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है, तो किसी पर इसका प्रभाव 15 प्रतिशत तक ही रहा पर एक बात जो सामने आई है, वह यह है कि जिस व्यवसायी ने भी विज्ञापन माध्यम अपनाया, चाहे वह किसी भी प्रकार का माध्यम क्यों ना हो, उसे लाभ जरूर हुआ है फिर चाहे लाभ का प्रतिशत जो भी हो। दरअसल लाभ में वृद्धि के अंतर का प्रमुख कारण व्यवसाय की प्रकृति है क्योंकि कुछ व्यवसाय के लिए विज्ञापन काफी अनिवार्य है। अत: उनमें लाभ का प्रतिशत भी काफी अधिक होता है, परन्तु जिस व्यवसाय में विज्ञापन की आवश्यकता नहीं है फिर भी कुछ नये-नये व्यवसायी विभिन्न प्रकार के विज्ञापन माध्यम का प्रयोग करते हैं तथा उन्हें लाभ की मात्रा में कम वृद्धि मिली है।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

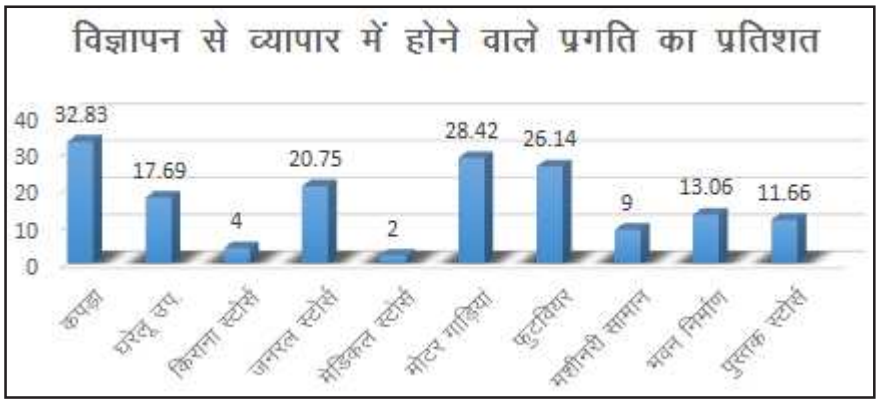
निष्कर्ष – अध्ययनकर्ता ने अपने अध्ययन का क्षेत्र विस्तृत कर यह पता लगाया कि ग्राहकों का क्रय आधार क्या है तथा यह भी पता लगाया कि इस शहर के व्यवसायी विज्ञापन हेतु कौन-कौन से माध्यम प्रयोग में ला रहे हैं तथा साथ ही साथ यह भी जानने का प्रयत्न किया कि उनके द्वारा अपनाए जाने वाले विज्ञापन माध्यम का उनके व्यवसाय पर क्या प्रभाव पड़ रहा है और उनके व्यवसाय में वृद्धि का प्रतिशत भी जानने का प्रयास किया। इससे अध्ययनकर्ता को काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। अत: कुछ व्यवसाय पर 50 प्रतिशत की वृद्धि को दर्शाता है कि विज्ञापन को व्यर्थ व्यय नहीं समझना चाहिये बल्कि विज्ञापन एक ऐसा विनियोग है, जिसका लाभ हमें प्रारंभ में कम तथा भविष्य में अधिक मात्रा में मिलने की संभावना है। कुछ व्यवसाय ऐसे है, जिनके लिए व्यवसाय अनिवार्य है कुछ इसे वस्तु की लागत में जोड़कर ग्राहकों से ही उसकी कीमत वसूल लेते हैं। विज्ञापन चाहे किसी भी प्रकार का हो और किसी भी माध्यम से प्रसारित किया जाता हो, उसका लक्ष्य मात्र उपभोक्ता वर्ग को अधिक से अधिक जानकारी देना व आकर्षित करना है। समय के रहते संचार माध्यमों के विकास के साथ विज्ञापन के विविध प्रकार आज हमें उपलब्ध हैं।

सुझाव – इस युग में किसी भी क्षेत्र से जुड़ी जानकारी जनमानस तक पहुँचाने के लिए विज्ञापन का सहारा अति आवश्यक सिध्द होता जा रहा है। विज्ञापन व्यापारियों के बीच प्रतिस्पर्धा समाप्त कर वस्तु की ओर ध्यान आकृष्ट करने का काम करता है। आज के युग में विज्ञापन की महत्ता का वर्णन एक या दो वाक्यों में नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यह आज के युग में रीढ़ की हड्डी बन चुका है। जिसके बिना वस्तु या किसी भी चीज की जानकारी प्राप्त करना असंभव है। विज्ञापन को सकारात्मक दृष्टि से अपनाया जाए तो यह उत्पादक व उपभोक्ता दोनों के लिए ही विनियोग है। अत: हम यह कह सकते हैं कि विज्ञापन एक दीर्घकालीन विनियोग है न कि व्यर्थ व्यय। अत: यह कहा जा सकता है कि विज्ञापन एक ऐसी चीज बनती जा रही है जिसकी महत्ता को नकारा नहीं जा सकता।

तालिका

व्यवसाय का प्रकार

क्र.	कपड़ा व्यवसाय	घरेलू उपकरण	किराना स्टोर्स	जनरल स्टोर्स	मेडिकल स्टोर्स	मोटर गाड़ियाँ	फुटवियर	मशीनरी सामान	भवन निर्माण	पुस्तक स्टोर्स
1	30	08	03	30	01	30	25	09	15	09
2	35	–	–	–	–	39	–	–	30	15
3	25	16	–	18	–	26	30	–	–	06
4	33	–	–	28	03	28	34	–	–	–
5	29	28	02	23	–	29	35	10	20	–
6	34	25	–	20	–	25	–	–	–	–
7	–	20	–	–	02	20	–	–	08	08
8	60	09	–	–	–	23	–	–	–	–
9	–	08	–	–	–	38	22	–	09	–
10	28	13	07	06	–	36	–	–	07	–
11	–	15	–	–	–	–	18	–	30	04
12	16	26	–	19	–	35	–	–	09	–
13	39	29	–	–	–	34	–	08	–	–
14	44	06	–	22	–	18	–	–	07	28
15	21	27	–	–	–	17	19	–	01	–
औसत वृद्धि	**32.83**	**17.84**	**4.00**	**20.75**	**2.00**	**28.42**	**26.14**	**9.00**	**13.06**	**11.86**



****

मुख्यमंत्री भावान्तर योजना एवम् कृषि विकास

डॉ. डी. सी. कुमरावत *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था एक कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है। हमारे देश में कृषि को भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। वर्तमान में कृषि देश में जीविकोपार्जन का साधन ही नहीं है, वरन् एक व्यवसाय बन गई है। स्वतंत्रता के पश्चात देश के औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने की नीति के बावजूद भी भारतीय अर्थव्यवस्था आज भी आर्थिक विकास के लिए कृषि पर ही आश्रित है। यह सामान्यत: माना जाता है कि जिस देश में कृषि उत्पादन अधिक होता है, उस देश की आर्थिक विकास दर ऊँची होती है। इसके विपरीत कृषि क्षेत्र में अल्प वर्षा के कारण सूखा पड़ने, अतिवृष्टि या फसलों को बीमारी लगने इत्यादि कारणों से कृषि उत्पादन में कमी हो जाती है, तो इसका देश की आर्थिक विकास दर पर गहरा असर पड़ता है, जिसके फलस्वरूप देश के उद्योग–धन्धें, विदेशी व्यापार, विदेशी मुद्रा का अर्जन, देश की प्रति व्यक्ति आय एवम् राष्ट्रीय आय तथा रोजगार पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि सन् 1951 से लेकर वर्तमान तक जितनी भी पंचवर्षीय योजनाए लागू की गयी है, उनमें कृषि के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है।

कृषि विकास के लिए सर्वप्रथम कृषकों का विकास किया जाना आवश्यक है। जब तक कृषकों को उनकी कृषि उपज का उचित मूल्य नही मिल जाता, तब तक कृषि विकास की बात करना बेमानी है। कृषको को उनकी उपज का उचित मूल्य मिल सके, इसके लिए केन्द्र सरकार और विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा समय समय पर अनेक योजनाए लागू की है। इस दिशा मध्यप्रदेश राज्य भी पीछे नहीं है। राज्य में प्रतिवर्ष एक बड़ी संख्या में कृषकों द्वारा फसलों के नुकसान, ऋण भार, कृषि उपज के मूल्य में कमी इत्यादि कारणों से आत्म हत्या की जा रही है, जिसे रोकने के लिए एक प्रभावी कदम के रूप में प्रदेश में **'मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना'** 22 अगस्त, 2017 को मुख्यमंत्री श्री शिवराजसिह चौहान द्वारा लागू की गई है। इस महत्वाकांक्षी योजना के अंतर्गत सरकार द्वारा प्रदेश की मण्डियों में बेची जाने वाली कृषि उपज के बिक्री मूल्य और लाभकारी मूल्य के बीच में होने वाले अन्तर का भुगतान सीधें कृषकों के बैंक खातों में किये जाने का प्रावधान किया गया है।

मुख्यमंत्री भावान्तर योजना के उद्देश्य– 'मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना' का मुख्य उद्देश्य किसानों को आर्थिक सहयोग प्रदान करना है। इस योजना की सहायता से सरकार राज्य के किसानों की आर्थिक रूप से मदद करेगी, ताकि उन्हें बदहाली से तंग आकर आत्महत्या करने से बचाया जा सकें। साथ ही, सरकार द्वारा यह भी तय किया गया है कि इस योजना के सम्बन्ध में किसी भी तरह के विवादित मामले में रिपोर्ट प्राप्त होने पर उस पर त्वरित कार्यवाही की जायेगी और 90 दिनों के अन्दर उसका निराकरण किया जायेगा। इस योजना के अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य निम्नलिखित है –

1. कृषकों को उनके द्वारा उगायी गयी फसलों पर सार्थक लाभ प्राप्त हो सकें।
2. फसलों के मण्डी मूल्य और बिक्री मूल्य के अन्तर की राशि को सीधे कृषकों के बैंक खातें में जमा करना।
3. गिरदावरी मोबाईल एप्लीकेशन की सहायता से किसानों के कृषि भूमि, फसल आदि के सम्बन्ध में डाटा का संग्रहण करना।
4. सरकार द्वारा किसी फसल के लाभदायक मूल्य का निर्धारण कृषि उत्पाद की लागत को ध्यान में रखकर किया जाना।
5. यदि किसी किसान की भूमि बँटवारें अथवा अन्य किसी तरह की प्रक्रिया से गुजरती है, तो उसके सम्बन्ध में 3 माह के अन्दर जानकारी एकत्र करना।
6. यदि कोई किसान इस तीन माह की अवधि व्यतीत हो जाने के बाद यह दावा करता है कि उसका मामला अविवादित होते हुऐं भी उसें निष्क्रिय रखा गया है और उसे इस योजना का लाभ प्राप्त नही हो पाया है तो उस किसान को इस कारण हुई क्षति की पूर्ति सरकार द्वारा की जाना और क्षतिपूर्ति की राशि की वसूली सम्बन्धित दोषी व्यक्तियों से करने के साथ साथ उनके विरूध्द दण्डात्मक कार्यवाही की जाना।

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के अन्तर्गत पंजीयन और योजना की प्रगति – मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के अंतर्गत सर्वप्रथम किसानों को अपना ऑन लाईन नि:शुल्क पंजीयन करवाने हेतु आवेदन करना होता है। तत्पश्चात ही वे इस योजना के अन्तर्गत पात्र समझें जायेगें। साथ ही उन्हें मध्यप्रदेश का मूल निवासी होना भी आवश्यक है। मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के अंतर्गत अब तक 118.57 लाख किसानों द्वारा अपना पंजीयन कराया जा चुका है। किसानों को अपनी फसल के अधिकतम बिक्री मूल्य और मॉडल दर के बीच के अन्तर की राशि का भुगतान सरकार द्वारा किया जायेगा, जिसे निम्नलिखित तालिका माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है –

फसलों का मॉडल रेट का ट्रेण्ड (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

वर्ष 2018 के लिये सरकार द्वारा घोषित फसलों के सम्भावित समर्थन मूल्य (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करने के लिये सरकार ने राज्य स्तर पर एक कण्ट्रोल रूम स्थापित किया है। किसान चाहे तो 0755–2550495 पर फोन कर प्रात: 7 बजे से रात्रि 11 बजें तक अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकते है। योजना के अंतर्गत हितग्राही किसानों को एक और महत्वपूर्ण राहत प्रदान

* एसोसिएट प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

की है कि अब सरकार किसानों को अपने खेत से मण्डी तक फसल बेचने के लिए पहुँचने के लिए होने वाले खर्च का भी भुगतान करेगी। यदि 15 किलोमीटर या इससे अधिक दूरी होने पर मण्डी समिति द्धारा किसानों को किराये की प्रतिपूर्ति की जायेगी।

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के हितग्राही किसान को 10,000रूपयें से अधिक राशि का भुगतान किये जाने की दशा में आयकर विभाग एवम् मण्डी-बोर्ड से प्राप्त जानकारी के अनुसार व्यापारी को सम्बन्धित किसान के खसरा, खतौनी, ऋण पुस्तिका बी-वन और बी-टू की नकल, आधार कार्ड/पेनकार्ड की फोटो कॉपी रखना आवश्यक है।

भावान्तर भुगतान योजना के अंतर्गत कुल 118.57 लाख पंजीकृत किसानों में से 64.35 लाख किसानों से 2415.62 लाख मिट्रीक टन अनाज खरीदा गया, जिस पर 69,111 करोड़ रूपयें का भुगतान किया गया। इस योजना में शामिल किसानों में 60 प्रतिशत किसानों की भूमि का रकबा 1 से 2 हेक्टेअर है, 25 प्रतिशत किसानों की भूमि का रकबा 2 से 5 हेक्टेअर है और 15 प्रतिशत किसान की भूमि का रकबा 5 हेक्टेअर या उससें अधिक है। इस प्रकार यह योजना छोटे किसानों के लिये बहुत हितकारी है।

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना हेतु सुझाव - यद्यपि 'मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना' लघु और सीमांत किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य दिलाने की दिशा में उठाया गया एक सराहनीय कदम है और इससे किसानों को अपनी फसल का अपेक्षित मूल्य न मिलने की हताशा से भी निजात मिलेगी। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव उपयोगी सिध्द हो सकते है -

1. जहाँ तक भावान्तर भुगतान योजना का सम्बन्ध है, नि:संदेह सरकार द्धारा बिना किसी पूर्वाग्रह के लघु और सीमांत किसानों के कल्याण के लिए लागू की है, मगर फिर भी इस योजना का दुरूपयोग होने की आशंका से इंकार नहीं किया जा सकता है। जब किसान अपनी फसल को बेचने के लिए मण्डी में जाता है, तो व्यापारियों द्धारा कार्टेल बनाकर कृत्रिम रूप से कृषि उपज के दाम कम कर दिए जाते है, जिससे किसानों को अपनी उपज का अपेक्षित मूल्य नहीं मिल पाता है और उन्हें लागत से भी कम मूल्य पर अपनी फसल बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है। ऐसी स्थिति में इस योजना के लागू होने पर जहाँ एक ओर किसानों को अपनी उपज का समुचित मूल्य नहीं मिल पायेगा, वही दूसरी ओर भावान्तर भुगतान के फलस्वरूप सरकारी खजाने पर करोड़ों रूपयों का बोझ बढ़ जायेगा। अत: सरकार को चाहिये कि वह मण्डियों में व्यापारियों द्धारा कार्टेल बनाये जाने पर सख्ती से रोक लगाये, ताकि योजना के सकारात्मक परिणाम प्राप्त हो सकें।
2. मण्डियों में किसानों की फसल की निलामी न्यूनतम समर्थन मूल्य पर ही होनी चाहिये, अन्यथा न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित किए जाने का कोई औचित्य नहीं रह जायेगा।
3. सुदूर ग्रामीण इलाकों में आज भी मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के सम्बन्ध में किसानों को पर्याप्त जानकारी नहीं है। यद्यपि सरकार द्धारा राज्य स्तर पर योजना सम्बन्धी जानकारी देने के लिए कण्ट्रोल रूम अवश्य स्थापित किया गया है, लेकिन सुदूर ग्रामीण इलाकों में नेटवर्क न मिलने की समस्या के चलते चाहते हुए भी इन इलाकों के किसान योजना के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त नहीं कर पाते है, जिसका फायदा व्यापारियों द्धारा उठाया जाता है। इसलिये सरकार को योजना के प्रचार प्रसार के लिए विकास खण्ड स्तर पर कण्ट्रोल रूम स्थापित किए जाने चाहिये ताकि किसानों को योजना की जानकारी मिल सके और वे उससे लाभान्वित हो सकें।
4. कपास मध्यप्रदेश और विशेषकर निमाड़ की एक मुख्य व्यापारिक फसल है, लेकिन उसे मुख्यमंत्री भावान्तर योजना में शामिल नहीं किया गया है। कपास को भी भावान्तर योजना में शामिल करना श्रेयस्कर होगा।
5. गाँवों में लघु और सीमांत किसानों को प्रतिवर्ष नई फसल लगवाने के पूर्व खाद-बीज और रासायनिक कीटनाषकों को खरीदने के लिये अधिकांशत: साहूकार एवम् महाजनों से कर्ज लेना पड़ता है और उसके एवज में वे किसानों की खून पसीने से उगाई गई फसल को औने पौने भाव में खरीद लेते है, जिसके कारण किसान सदैव कर्ज से घिरा रहता है और मानसिक हताशा में आत्म हत्या तक कर बैठता है। अत: प्रदेश में विकास खण्ड स्तर पर नाबार्ड और राष्ट्रीयकृत बैंकों की सहायता से 'किसान विकास बैंक' की स्थापना की जाना चाहिये, जो किसानों को सस्ती ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध करायें ताकि किसान उचित समय पर खाद बीज और उर्वरक खरीद सकें और भावान्तर योजना के अंतर्गत अपनी पैदावार को बेचकर अपना और अपने परिवार का भरण पोषण कर सकें।

यदि उपर्युक्त सुझाावों को अमल में लाया जाता है, तो विगत वर्षों में मध्यप्रदेश को मिले 'कृषि कर्मण्य पुरस्कार' की प्रामाणिकता स्वत: सिध्द हो जायेगी, कृषि और कृषक के विकास के साथ साथ प्रदेश देश के आर्थिक एवम् औद्योगिक विकास में अपना अमूल्य योगदान प्रदान करेगा-इसमें कोई संदेह नही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Indian Economy written by shri Ramesh Singh – MacGraw Hill Education (India) Pvt.Ltd.
2. Yojna and Other Magazines
3. Daily News Papers, e.g.Dainik Bhashkar, Nai Dunia etc.

फसलों का मॉडल रेट का ट्रेण्ड

क्र.	फसल का नाम	अधिकतम बिक्री मूल्य	मॉडल दर	भावान्तर(प्रति क्विंटल)
01	उड़द	5,400	3,000	2,400
02	सोयाबीन	3,050	2,580	470
03	मूंग	5,675	4,120	1,456
04	तिल	5,300	54,000	100
05	मक्का	1,425	1,190	235

स्रोत – M.P. On-line mp-bhavantar-bhugtan-yojna

वर्ष 2018 के लिये सरकार द्वारा घोषित फसलों के सम्भावित समर्थन मूल्य

क्र.	फसल का नाम	सम्भावित समर्थन मूल्य (प्रति क्विंटल)
01	बाजरा	1,425रूपये
02	ज्वार	1,700 से 1,725 रूपये
03	अरहर	5,050 से 5,250 रूपये
04	मूंग	4,120 रूपये
05	उड़द	3,070 रूपये
06	मूंगफली	3,570 रूपये
07	सोयाबीन	2,640 रूपये
08	तिल्ली	5,300 रूपये
09	मक्का	1,110 रूपये

स्रोत – M.P. On-line mp-bhavantar-bhugtan-yojna

****

आदिवासी महिलाओं के उत्थान में दीनदयाल स्वरोजगार योजना की भूमिका – झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में

दीपक कुमार ठाकुर * डॉ. डी. के. सिंघल **

प्रस्तावना – किसी भी देश के सामाजिक – आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण होता हैं। महिलाएं समाज की अभिन्न अंग है। अत: महिलाओं का विकास करके ही सार्वभौमिक विकास की कल्पना को साकार करना संभव हैं। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भी इसी तथ्य को पुष्ट करते हुए कहा है कि – 'यदि आपको विकास करना हैं, तो महिलाओं का उत्थान करना होगा महिलाओंका विकास होने पर समाज का विकास स्वत: हो जाएगा।' वर्तमान युग में महिलाओं को सशक्त बनाने, उनकी क्षमताओं और कौशल विकास करने हेतु विभिन्न योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं जिसके कारण देश में शनै: शनै लैंगिक भेदभाव की दिवारें ढह रही हैं। महिलाओं के स्वास्थ्य, पोषण व विकास में उत्तरोत्तर सुधार दर्ज किया जा रहा हैं, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की प्रभावी सहभागिता बढ़ रही हैं।

महिलाओं को आर्थिक दृष्टिाकोण से सबल बनाने के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा निरंतर प्रयास की सार्थकता भी सामने आ रही हैं कल तक घर में कैद रहने वाली महिलाएं आज समाज के विभिन्न क्षेत्रों में परचम लहरा रही हैं

मध्यप्रदेश की पश्चिम सीमा पर स्थित झाबुआ एक पिछड़ा आदिवासी राज्य बहूल आबादी वाला जिला हैं। झाबुआ जिला रतलाम, धार, आलीराजपुर जिलों की सीमा से लगा हैं। वही पश्चिम में राजस्थान के बांसवाडा जिला तथा केवल 16 कि.मी. की दूरी पर गुजरात राज्य की सीमा से लगा हुआ है। इस का क्षेत्रफल 6782 कि.मी. हैं। जिले की कुल जनसंख्या 10,25,048 है। जिले में अनुसूचित जनजाति की कुल आबादी 8,91,818 है। जिसमें पुरूष 4,46,359 एवं महिला 4,45,459 हैं, जो कुल आबादी का 87.3 प्रतिशत भाग अनुसूचित जनजाति का हैं।

जिले के निवासियों की अर्थव्यवस्था का मुख्य कृषि हैं। कृषि आज भी परंपरागत एवं पुरानी विधियों से की जा रही है, वहीं औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े जिलों की 'स' श्रेणी में झाबुआ जिला है। कृषि तथा उद्योग से रोजगार के इतने अवसर उपलब्ध नहीं हो पाते की, परिवार का भरण– पोषण हो सके, फलस्वरूप जिले की हजारों कि संख्या में आदिवासी महिलाओं को रोजगार की तलाश में इंदौर ,भोपाल, धार, रतलाम, सुरत, बडोदा, अहमदाबाद, बांसवाडा आदि शहरों में रोजगार के लिए पलायन करती हैं।

नि:संदेह वर्तमान में जिले की प्रमुख समस्या बेरोजगारी ही हैं। जिले का युवा महिला वर्ग इस ज्वलंत समस्या से ग्रसित होकर कुण्ठित हो रहा है। इस ज्वलंत समस्या का निदान शासकीय नौकरी अथवा अन्य नौकरियों से संभव नहीं हैं, आवश्यक है कि देश के युवा शिक्षित बेरोजगार स्वयं का उद्यम स्थापित करें ताकि स्वरोजगार के अतिरिक्त अन्य के लिए वह स्वयं नियोक्ता बन सकें।

केन्द्रीय व राज्य शासन की यह मंशा हैं कि इस योजना के माध्यम से जिले के शिक्षित बेरोजगार महिलाओं की एक बडी संख्या स्वरोजगार के द्वारा अपना स्वयं का व्यापार/उद्योग स्थापित करेंगी , जो पूंजी के अभाव में अपनी सोच का मूर्त रूप प्रदान करने में असफल रही है। साथ जिले की शिक्षित बेरोजगार महिलाएं इस योजना से लाभान्वित होकर स्वावलंबी जीवन की ओर अग्रसर होगी।

केन्द्र व राज्य शासन के द्वारा झाबुआ जिल में संचालित दीनदयाल स्वरोजगार योजना के माध्यम से अनुसूचित जनजाति को पलायन से रोके के लिए इस दिशा में एक कारगर कदम उठाया हैं।

दीनदयाल स्वरोजगार योजना 'मध्य प्रदेश शासन द्वारा संचाालित एक ऐसी योजना हैं, जो मध्यप्रदेश के शिक्षित बेरोजगारों को अपना स्वयं का स्वरोजगार स्थापित करने के लिए सहायता प्रदान करती हैं। इस योजना के अतंगर्त शिक्षित बेरोजगारों को अपना स्वयं का रोजागार स्थापित करने के लिए ऋण सहायता तथा मार्जिन – मनी (अनुदान राशी) दी जाती हैं। दीनदयाल स्वरोजगार योजना 01 अगस्त 2004 से प्रारंभ की गई हैं। इसमें उद्योग क्षेत्र, सेवा क्षेत्र,एवं व्यवसाय क्षेत्र में अलग– अलग ऋण सहायता एवं मार्जिन मनी की सहायता दी जाती हैं। इस योजना में शिक्षित महिलाओं को स्वरोजगार के लिए प्राथमिक तथा विशेष रियायतें दी जाती हैं तथा उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने

उद्देश्य – जिले के शिक्षित बेरोजगार युवक/युवतियों को उद्योग, सेवा/ व्यवसाय के क्षेत्र में स्वरोजगार स्थापना के लिये बैंकों/ वित्त संस्थाओं द्वारा दिये जाने वाले ऋण के विरूद्ध अपेक्षित मार्जिन मनी को जमा करने में सहायता करना है।

पात्रता– आवेदक जिले का मूल निवासी होना आवश्यक हैं। आवेदक जिनकी आयु 18 से 40 वर्ष के मध्य है, 10वीं कक्षा या आई.टी.आई. उत्तीर्ण है, परिवार की समस्त स्त्रोतों से वार्षिक आय 1.50 लाख से अधिक नहीं है, रोजगार कार्यालय में जीवित पंजीयन है।

मर्जिन मनी सहायता– बैंक या वित्तीय संस्था द्वारा स्वीकृत परियोजना लागत का उद्योग क्षेत्र में 10 अधिकतम 40,000/–रुपए सेवा क्षेत्र में 7.5 प्रतिशत अधिकतम 15000 रुपये एवं व्यवसाय क्षेत्र में 5 प्रतिशत अधिकतम 7500 रुपये मार्जिन मनी स्वीकृत की जा सकती है। वे आवेदक जिनकी शैक्षणिक योग्यता स्नातक या अधिक है। उन्हें उद्योग या सेवा गतिविधि के लिए अधिकतम सीमा क्रमश: रुपये 50000/– एवं रुपये

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

25000/– की पात्रता होती है। मार्जिन मनी सहायता हितग्राही द्वारा लगाई जा रही योजनान्तर्गत 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होती है। प्राथमिकता तकनीकी संस्थाओं व उद्यमिता विकास कार्यक्रम में प्रशिक्षित आवेदक महिला आवेदक, गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवार की सर्वे सूची में अंकित एवं औद्योगिक गतिविधियों की स्थापना करने वाले हितग्राहीयों को प्राथमिकता दी जाती है।

आवेदन कि प्रक्रिया – नि:शुल्क आवेदन पत्र हितग्राही संबंधित जिले के जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र को प्रस्तावित गतिविधि योजना की प्रति साथ प्रस्तुत की जाती है।

पात्रता का निर्धारण व चयन समिति – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र स्तर पर प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गठित फोर्स समिति पात्रता का निर्धारण कर प्रकरण अनुमोदित करेगें इस समिति में महाप्रबंधक, जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र अध्यक्ष अग्रणी बैंक के प्रतिनिधि, जिला रोजगार अधिकारी, लघु उद्योग सेवा संस्थान के प्रतिनिधि एवं अन्य दो शीर्ष बैंको के प्रतिनिधि सदस्य होते है।

समीक्षा हेतु समिति – योजना के सुचारू रूप से क्रियान्वयन बैकों/वित्त संस्थाओं में लंबित प्रकरणों की समीक्षा व हितग्राहियों की समस्याओं के निराकरण व उनके मार्गदर्शन के लिये यह समिति कार्य करती है। इस समिति में सबंधित जिले का कलेक्टर अध्यक्ष जिला अग्रणी बैंक प्रबंधक,तीन प्रमुख बैंकों के प्रतिनिधि, सेडमैप एमपीकॉन/जिला प्रतिनिधि, एसआईएसआई के प्रतिनिधि, जिला महिला बाल विकास अधिकारी, जिला रोजगार अधिकारी पॉलीटेक्निक एवं आई.टी.आई के प्रतिनिधि सदस्य व महाप्रबंधक, जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र सदस्य सचिव होगें।

विधि – एक ही परिवार के सदस्यों के बीच भागीदारी के प्रकरणों पर इस योजना के अंतर्गत विचार किया जा सकता है। पात्रता होने पर इस योजना के अंतर्गत स्थापित की जाने वाली औद्योगिक इकाईयों को उद्योग विभाग के नियामनुसार अन्य सुविधाए भी प्राप्त हो सकेंगी/योजना की व्याख्या व संसोधन हेतु वाणिज्य, उद्योग और रोजगार विभाग सक्षम होता है। जिला स्तरीय समिति से प्राप्त प्रकरण/संदर्भ राज्य स्तरीय बैंकर्स कमेटी में समीक्षा के लिये रखे जाते है।

शोध प्रविधि

द्वितीयक समंक – प्रस्तावित शोध कार्य हेतु सूचनाएँ एवं सांख्यिकीय समंक निम्नलिखित विभागों से एकत्रित किये जावेगें।

जिला पंचायत, ग्रामीण विकास विभाग, जिला सांख्यिकीय विभाग, जिला रोजगार कार्यलाय, जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र, राष्ट्रीयकृत बैंक व राज्य सहकारी बैंक एवं अन्य वित्तीय संस्थाएं इत्यादि।

प्रस्तावित शोध कार्य में शासकीय प्रकाशकों एवं प्रतिवेदनों तथा विद्धानों की पुस्तके एवं पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों का भी उपयोग किया जावेगा।

शोध अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तावित शोध अध्ययन का क्षेत्र झाबुआ जिला है। वर्तमान में झाबुआ जिले में 5 तहसीले है। झाबुआ जिले में पेटलावद, थांदला, मेघनगर, झाबुआ, राणापुर तहसील है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. दीनदयाल रोजगार योजना के कितने महिला हितग्राहीयो को लाभ प्राप्त हुआ।
2. दीनदयाल रोजगार योजना अपने उद्देश्य में सफल रही हैं या नहीं।

इस योजना के अंतर्गत दी गई सुविधा की विवेचना तालिका क्रमांक 01 स्पष्ट किया गया है–

तालिका क्रमांक 01

झाबुआ जिले में दीनदयाल स्वरोजगार योजना की स्थिति

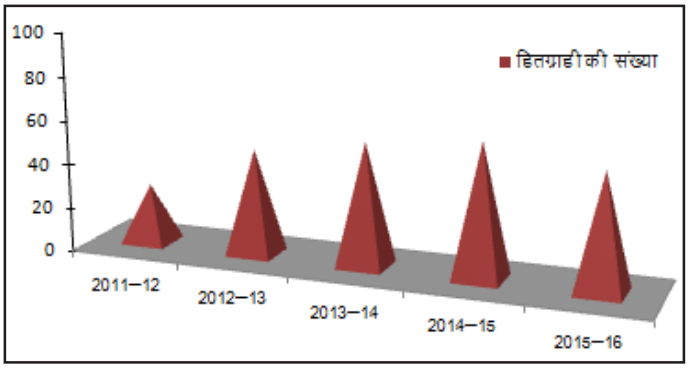
वर्ष	हितग्राहियों की संख्या	स्वीकृत (लाख रुपये में)
2011–12	27	21.52
2012–13	48	33.64
2013–14	56	37.49
2014–15	61	47.56
2015–16	53	41.97

स्रोत– जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि झाबुआ जिले में दीनदयाल स्वरोजगार योजना के अंतर्गत वर्ष 2011–12 में 27 हितग्राहीयों को 21.52 लाख रुपये स्वीकृत किया गया। इस प्रकार सतत् रूप से हितग्राहियों की संख्या बढ़कर वर्ष 2014–15 के 61 रही, जिन्हें 47.56 लाख 2015–16 में हितग्राहीयों की संख्या घटकर 53 हो गई। जबकि स्वीकृत ऋण बढ़कर 41.97 लाख रूपये रही है। इस प्रकार हमें कह सकते हैं कि यह योजना अपनें उद्देश्य में काफी हद तक सफल रही हैं।

आरेख क्रमांक 01

झाबुआ जिले में दीनदयाल स्वरोजगार योजना की स्थिति



संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मासिक पत्रिका कुरूक्षेत्र नई दिल्ली –बालिका सशक्तिककरण जनवरी 2016 अंक 03
2. मासिक पत्रिका योजना नई दिल्ली– महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण ,अक्टूबर 2008
3. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ से प्राप्त प्राथमिक समंक।
4. दैनिक भास्कार, नई दूनिया, आदि समाचार पत्र के विभिन्न अंक।
5. विभागीय पत्रिका, दीनदयाल रोजगार योजना 2011–12, 2012–13, 2014,–15

****

सार्वजनिक एवं निजी बैंकों में गैर निष्पादन सम्पत्तियों की समस्या का तुलनात्मक अध्ययन (एस.बी.आई तथा आईसीआईसीआई बैंक के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अभय पाठक * डॉ. हरिओम अग्रवाल **

प्रस्तावना – बैंकिंग के संदर्भ में जोखिम – जोखिम से तात्पर्य है भविष्य की घटनाओं और उनके परिणामों के प्रति अनिश्चितता। यह किसी भी घटना की संभाव्यता और प्रभाव को परिभाषित करता है, जिससे किसी भी संगठन के उद्देश्यों के प्रति असर पड सकता है। **जोखिम** ज्ञात करने का निम्न सूत्र है

जोखिम = संभाव्यता x परिणाम

बैंकिंग के संदर्भ में जोखिम की पहचान करने में किसी उत्पाद अथवा सेवा के लेनदेन से जुडे प्रत्येक जोखिम का प्रकार ज्ञात करना और उनकी व्याख्या करना शामिल होता है। जोखिम का मूल कारण सूचना में कमी, विषय के ज्ञान में कमी, उचित समय पर उचित निर्णय न लेना, एवं रख रखाव में असावधानी होती है। कोई भी संस्था लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से जोखिम भरा कार्य करती है। एक सिद्धांत भी है 'जितना अधिक जोखिम उतना अधिक लाभ अथवा कम जोखिम कम लाभ' बैंकों का प्रमुख कार्य ही वित प्रदान करना हैं, जहां वित्त होगा वहां जोखिम भी अधिक होगा। अधिक जोखिम लेना कभी कभी इतना अहितकर हो जाता है कि संस्था को दिवालिया होने की नोबत आ जाती है। यही कारण है कि हाल के वर्षो में जोखिम प्रबंधन एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में विकसित हुआ है।

भारतीय बैंकों के लिए कार्यकुशल और प्रभावी ढंग से जोखिमों का प्रबंधन करना आवश्यक हो गया है, किसी जोखिम की पहचान हो जाने पर बैंक के समक्ष यही अवलम्बन रह जाता है कि वह कुछ प्रभावी कार्यवाही करे ताकि उस विशिष्ट जोखिमपूर्ण घटना के कारण होने वाली हानि को कम किया या रोका जा सके। जोखिम निर्धारण की प्रभावी रणनीतियों और सूचना प्रणालियों को सही परिप्रेक्ष्य में कार्यान्वित किए जाने के फलस्वरूप जोखिम से बचने के लिए सामयिक उपाय किए जाने होते है। जोखिम प्रबंधन गंतव्य नहीं अपितु एक यात्रा है 'यह एक बार किए जाने वाला कार्य नहीं अपितु आजीवन अपनाई जाने वाली पद्धति है, जिसे बार-बार लागू किया जाना आवश्यक होता है।

उदारीकरण के इस दौर में जोखिम प्रबंधन और विश्लेषण भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अत्यावश्यक हो गया है। जोखिम को समझना और उचित प्रबंधन करना, बैंकिंग क्षेत्र में आज की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक बन गया है। बैंकिंग के व्यापार का मूल स्वभाव जोखिम के खतरे को अपने में आत्मसात किए हुए है। संसाधनों के चाहने और प्राप्त करने वालों के बीच मध्यस्थता रखना ही बैंकों की मुख्य भूमिका होती है। कॉर्पोरेट स्तर पर जोखिम प्रबंधन के लिए सभी जोखिम (ऋण, बाज़ार या परिचालन जोखिम) को एक समग्र उपाय में बदलना होता है। इसलिए इस विषय पर ऐसे शोध की अति आवश्यकता है, जिससे जोखिम प्रबंधन के उपायों को सुझाया जा सके जिन्हें बैंक अपनी विशिष्ट परिस्थितियों और निवेश के अनुसार ढाल सके।

शोध प्रविधि –

शोध का उद्देश्य – इस शोध का उद्देश्य बैंक के प्रबंध तंत्र को उसके समस्त कार्यो में कुशलता प्राप्त करने में मदद करना।, जोखिम घटकों की पहचान और उसका निदान करना।जोखिम प्रबंधन के लिए अधिक संगठित और सुनियोजित दृष्टिकोण अपनाने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करना।

शोध का क्षेत्र सार्वजनिक क्षेत्र की एसबीआई और निजी क्षेत्र की आईसीआईसीआई बैंक है। इसमें इन दोनों बैंकों के मुख्य कार्यालय से जारी समग्र संमकों का विश्लेषण का आधार बनाया गया है।

इस शोध में 2001-02 से 2010-11 के एस.बीआई और आईसीआईसीआई के संमकों को द्धितीय स्त्रोंतो से संकलित किया गया है। ये स्त्रोत है, आईबीआई की वार्षिक रिपोर्ट, आरबीआई पब्लिकेशन,आरबीआई की आर्थिक समीक्षा, आरबीआई, एस.बी.आई. और आई सी आई सी आई की वेबसाईट आदि।

शोध परिकल्पना – सार्वजनिक बैंकों की तुलना में निजी बैंको का जोखिम प्रबंधन अधिक कुशल है।

शोध विश्लेषण – इस शोध में प्रस्तुत समंकों से निष्कर्षो की प्राप्ति के लिए माध्य, प्रमाप विचलन, विचरण, गुणाकं तथा एन.पी.ए. कुल अस्ति अनुपात का प्रयोग किया गया है।

किए गए कार्यो की समीक्षा – यू.एस.पालीवाल(2002) का अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि समेकित जोखिम प्रबंधन का ढांचा जोखिम प्रबंधन के लिए एक अधिक सुनियोजित और समेकित दृष्टिकोण प्रदान करता है। **।के.प्रसाद (2002)** ने यह यह सुझाव दिया कि बैंकिग कम्पनी की साख या उसके नाम की रक्षा करने का प्रश्न बैंको के निर्देशक मण्डल के लिए एक आवश्यक दायित्व है, । **प्रहलाद सबनानी (2002)** का यह सुझाव है कि ऋण जोखिम बजट तथा जोखिम आधारित पर्यवेक्षण के साथ ही शाखाओं की अंकेक्षण रेटिंग प्रणाली को भी ऋण जोखिम प्रबंधन कार्य प्रणाली से जोडा जाना चाहिए उनके अनुसार आने वाले समय में ऋण जोखिम प्रबंधन एक आवश्यकता बन जाएगा।**सल (2002)** ने इस शोध में निष्कर्ष दिया कि जोखिम वहन क्षमता के स्तर निर्धारित किये जाने का विचार व्यक्त किया है। उनके अनुसार बजट निर्धारित प्रणाली के तहत यह पता लगाया जाना चाहिए कि जोखिम वहन क्षमता के भीतर है या नही। जोखिम को वहन क्षमता के भीतर रखने के लिए सुधारात्मक उपाय भी बताए है। **दीपकसिंह नागी (2002)** ने शोध निष्कर्ष दिया कि बैंकिग क्षेत्र में बदलते परिदृश्य में जोखिम आधारित पर्यवेक्षण की भूमिका न केवल महत्वपूर्ण बल्कि

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

अनिवार्य भी होगी। इस आवश्यकता ने पर्यवेक्षण तंत्र में नए सिद्धांतों को जन्म दिया है।

अध्ययन का महत्व – भारतीय बैंकों में जोखिम प्रबंधन पर जो शोध कार्य हुए है, वे व्यापक स्तर पर पत्रिकाओं में आलेख अथवा समाचार पत्रों के लेखों के माध्यम से ही सम्पन्न हुए है, जो केवल परिकल्पना को ही जन्म देते है। अभी तक इस क्षेत्र में तुलनात्मक स्तर पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है। इस अध्ययन द्वारा इसी कमी को दूर करने का एक प्रयास किया गया है।

शुद्ध एन.पी.ए. कुल आस्ति अनुपात का तुलनात्मक मूल्यांकन – वर्ष 2001-02 से 2010-11 तक के 10 वर्षो के एसबीआई बैंक तथा आईसीआईसीआई बैंक के शुद्ध एन.पी.ए कुल आस्ति अनुपात को (प्रतिशत में) निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

वर्ष	भारतीय स्टेट बैंक	आईसीआईसीआई बैंक
2001-02	1.96	NA
2002-03	1.64	2.64
2003-04	1.33	1.14
2004-05	1.16	0.90
2005-06	0.99	0.42
2006-07	0.93	0.58
2007-08	1.03	0.87
2008-09	0.99	1.20
2009-10	1.03	1.06
2010-11	1.01	0.59
माध्य	1.208	1.044
प्रमाप बिचलन	0.34	0.702
बिचरण गुणांक (%)	28.17	67.24

Source - Collected and compiled from year wise RBI data base]

उक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि एसबीआई बैंक का शुद्ध एन.पी.ए वर्ष 2001-02 में 1.96 था जो वर्ष 2010-11 में घटकर 1.01 रह गया है तथा आईसीआईसीआई बैंक का शुद्ध एन.पी.ए. वर्ष 2002-03 में 2.64 था, जो वर्ष 2010-11 में घटकर 0.59 रह गया है। यह दोनों बैंकों के लिए शुभ संकेत है।

उक्त तालिका यह भी दर्शाती है कि एसबीआई, शुद्ध एन.पी.ए.कुल आस्ति अनुपात वर्ष 2001-02 में अधिकतम 1.96 तथा वर्ष 2006-07 में न्यूनतम 0.93 था। इसी प्रकार आईसीआईसीआई बैंक में शुद्ध एन.पी.ए. कुल आस्ति अनुपात वर्ष 2002-03 में अधिकतम 2.64 तथा वर्ष 2005-06 में न्यूनतम 0.42 था।

इससे यह स्पष्ट होता है कि विचरण गुणांक एसबीआई में 28.17 तथा आईसीआईसीआई बैंक 67.24 है। जो यह सिद्ध करता है कि आईसीआईसीआई बैंक में एनपीए अधिक विचरणशील है।

आईसीआईसीआईबैंक का जोखिम प्रबंधनएसबीआई की तुलना में बेहतर है, इस अनुपात का कोई निश्चित आदर्श मानक नहीं है, लेकिन इस अनुपात को धीरे धीरे कम करने और लगभग शून्य करने की उम्मीद की जाती है। ?

परिकल्पना परीक्षण – शोध परिणामों से प्राप्त अंतिम निष्कर्ष निम्न है।

परिकल्पना – सार्वजनिक बैंकों की तुलना में निजी बैंको का जोखिम प्रबंधन अधिक कुशल है।

सुझाव – केन्द्रीयकृत संगठन ढांचा होना चाहिए ताकि समग्र जोखिम की शुद्ध गणना की जा सके।

संस्थागत स्तर पर जोखिम प्रबंधन सम्बन्धित कार्य जोखिम प्रबंधन समिति या उच्च कार्यकारी समिति को दिया जाना चाहिए।

जोखिम उठाने सम्बंधी मार्गदर्शिका प्रत्येक संस्था में होनी चाहिए।

जोखिम का निरन्तर पुनरावलोकन और मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

जोखिम को मापने के लिए परिष्कृत जोखिम मॉडल का उपयोग किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

Shri M.Narasimham "The Report of the Committee on the Financial System 1991" RBI, Mumbai 1991.Shri M.Narasimham "Committee on Banking Sector Reforms (1998) (popularly known as Narasimham Committee II), RBI, Mumbai 1998 .Dr.Rakesh Mohan, Dy. Governor, Rese of reforms - Accelerating growth momentum of the economy" Speeat the International Monetary Fund, Washington D.C. on September 2, 2004) .Dr.Y.V.Reddy, Governor, Reserve Bank of India "Banking Reforms in India, anat overview" theInstituteof Bankers Add of Pakistan, Karachi on May 18, 2005 .Mrudul Gokhale "Capital Adequacy Standards-where do we stand? published in the Indian Banker, July 2009, Volume IV, No.7 (2009) .Ramasastri A.S. and Achamma Samuel in India 1980-2005.No.1 and 2, Summer and Monsoon 2006 Occasional papers published by the Reserve Bank of India,2006. Pp 178-205.V.Subbulaxmi and Reshma Abraham "BIcfai University Press 2006 pp212.Mr.C.Rangarajan "The Indian-Way Forward Banking SICOM .Silver Jubilee Memorial Lecture delivered by in-

****

म.प्र. के पश्चिमी निमाड़ क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति के आर्थिक सामाजिक उन्नयन में बैंकिंग सुविधाओं का विकास

डॉ. एन. एल. गुप्ता * रणजीत सिंह रावत **

प्रस्तावना – भारत गॉवो का देश है। देश की लगभग 80 प्रतिशत आबादी गॉवो में निवास करती है। वस्तुत: गॉवो को मानवीय सभ्यता का प्रथम सोपान कहा जाता है, लेकिन दुर्भाग्य से भारतीय गॉवो की दशा आज भी चिंतनीय है। आर्थिक रूप से कमजोर या निर्धन व्यक्ति या परिवार गॉवो में निवास करते है और उनमें प्रमुख है, अनुसूचित जनजाति।

अनुसूचित जनजाति द्वारा दुर्गम स्थानो पर निवास करने के कारण उनके पास पहुॅच मार्ग, संचार साधनों और बैंकिंग सुविधाओं का पूर्णत: अभाव रहा है। सभ्य समाज के सम्पर्क में न आने के कारण विकास की किरणें उन तक नहीं पहुॅच पाई है और वे अपनी संस्कृति के आरम्भिक धरातल पर जीवनयापन कर रहे है। इस वजह से वे समाज के प्रशासक, ठेकेदारो, महाजनों, व्यापारियों के शोषण जाल में फँसे हुए है और अत्यंत पिछड़ी अवस्था में है। इसलिए समान्यत: इन्हे पिछड़े हुए मानव समूह भी कहा जाता है। खाद्यान्न, आवास, ऋणग्रस्तता, झूम कृषि का अभाव , जंगल सम्बंधित समस्याओं से ग्रसित आदिवासी सभ्य समाज की नजरों में अपना स्थान नहीं बना पाए है और इस वजह से इन्हें सामाजिक अन्याय का सामना करना पड़ा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हमारे संविधान में समानता पर आधारित समाज की कल्पना की गई, जिसमें सामाजिक अन्याय को समाप्त कर सभी वर्गो व क्षेत्रों के लोगों के विकास का संकल्प किया गया क्योंकि अनुसूचित जनजाति लोग मूल धारा से अलग- थलग रहे है। इसलिए उनकी प्रमुख समस्या गरीबी और आधुनिक सुविधाओं जैसे बैंकिंग, संचार के साधनों से वंचित होना है। सन् 1955-60 के दशक में सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ कर आदिवासी समुदाय के लिए विकास प्रारम्भ किया गया लेकिन उनकी समस्याओं का सही आकलन और वास्तविक रूप से समाधान के लिए विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है। इसलिए अखिल भारतीय ग्रामीण साख समिति सर्वेक्षण समिति के सुझावो को स्वीकार करते हुए स्टेट बैंक को ग्रामीण विकास का दायित्व दिया जाना सुनिश्चित किया गया और इसी उद्देश्य से सन् 1968 में बैंको पर सामाजिक नियंत्रण लागू किये गए। इसके माध्यम से पिछड़े और उपेक्षित क्षेत्रों में बैंको के द्वारा समाज के उपेक्षित लोगों को ऋण सुविधाऍ उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया।

इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया और उन पर ग्रामीण एवं आदिवासी विकास का दायित्व सौंपा गया। इस प्रयास के परिणामस्वरूप, देश के पिछड़े व आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाओं का विस्तार होने लगा और आज लगभग प्रत्येक तहसील में कम से कम एक बैंक शाखा कार्यरत है जो अनुसूचित जनजाति के लोगों को ऋण और साख संबंधी सुविधाएँ उपलब्ध करा रही है।

म.प्र. के पश्चिमी निमाड़ के खरगोन एवं बड़वानी जिले के अनुसूचित जनजाति एवं जाति के बहुल्य जिले के रूप में माने जाते है। इसलिए केन्द्रीय विकास नीति के अनुरूप इसके विकास के लिए नियोजित ढंग से प्रयास किए गए है। म.प्र. क्षेत्रफल की दृष्टि से देश का दूसरा बड़ा राज्य है और इसकी कुल आबादी में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का अनुपात 12.61 प्रतिशत एवं 16.85 प्रतिशत है। लगभग इसके 23 प्रतिशत क्षेत्रफल वनों से आच्छादित है। दूर और दुर्गम स्थानों में अनुसूचित जनजाति एवं जाति निवास करती है। जो आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछडे उवं निर्धनता की रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे है। म.प्र. में निमाड़ की पहचान अनुसूचित जनजाति एवं जाति बहुल और पिछड़े क्षेत्र के रूप में की गयी है। अनुसूचित जनजाति के लोग स्वभाव से मस्त मौला होते है। भविष्य के प्रति निश्चिन्तता उनका स्वाभाविक गुण है। ये लोग वर्तमान में विश्वास रखते है। बीते हुए कल और आने वाले कल के प्रति चिन्तित नहीं होते है। अत: जनजातिय लोगो के स्वभाव में धन बचाने की प्रवृत्ति नहीं होती है। जनजाति लोगों में व्याप्त गरीबी व बेरोजगारी के कारण वैसे भी इनके पास धन की प्रचुरता नहीं होती है। अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए इनमें खर्च करने की प्रवृत्ति अधिक होती है। यही कारण है कि उन्हें थोड़ी सी आय प्राप्त होती है तो ये उसे शीघ्र ही खर्च कर देते है। खाने पीने की सामग्री के अतिरिक्त सजने संवरने पर भी ये लोग अधिक खर्च करते है। मेले उत्सव आदि सामाजिक दायित्वों में भी इनका हाथ ज्यादा खर्चीला माना जाता है। चाँदी के गहने पहनने का इन्हें लगाव है।

इससे यह ज्ञात होता है अनुसूचित जनजाति लोगों में बचत की आदत नहीं होती है और ना ही इनके पास बचाने के लिए पर्याप्त धन है। ये लोग अपनी क्षमता से अधिक खर्च करने की प्रवृत्ति रखते है। अत: अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में बचत और बैंकिंग आदत का विकास करना कठिन चुनौती है।

बैंक द्वारा इस कठिन चुनौती को स्वीकार किया गया और अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में तीव्र गति से बैंकिंग सुविधाओं का विकास हुआ। बैंकों को अनुसूचित जनजाति लोगों से जोड़ने के लिये बैकों के बारे में जानकारी देना आवश्यक था। तभी वे बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं का लाभ ले पाते। केन्द्र और राज्य सरकारो द्वारा अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए संकल्प व्यक्त किया जाता रहा है और सुदूर क्षेत्रों के विकास के साधनों के साथ-साथ बैंकों की स्थापना कर साख सुविधाऍ उपलब्ध कराई जा रही है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी, जिला – बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार तथा ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिए ग्रामीणों को रिसायती दर पर वित्तीय सुविधाएँ उपलब्ध कराने के उद्देश्य से देश में क्षेत्रीय ग्रामीण विकास बैंकों की स्थापना की गई है। देश में क्षेत्रीय ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना के लिए सितम्बर 1975 में अधिनियम पारित किया गया, जिसके अनुसार 4 राज्यो में 5 ग्रामीण विकास बैंक स्थापित किए गए। वर्तमान समय में देश के सभी राज्यो के सभी जिलों में ग्रामीण बैंक कार्यरत है। इन बैंकों की लगभग 83 प्रतिशत से भी अधिक शाखायें ग्रामीण अंचलों में कार्यरत है। इन बैंकों का मुख्य कार्य ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करना, ग्रामीणों में बैंकिंग आदत का विकास करना, ग्रामीण क्षेत्रों में सुगम व सस्ती दरो पर साख सुविधायें उपलब्ध कराना, कृषि , व्यापार, कुटीर उद्योग इत्यादि के लिए ऋण उपलब्ध करना आदि है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का कार्यक्षेत्र कुछ निश्चित जिलों तक ही सीमित रहता है।

अंत में कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजाति के आर्थिक सामाजिक विकास के लिए शासन की ओर से वित्तीय संसाधन राष्ट्रीयकृत बैंकों के माध्यम उपलब्ध कराया जाता है। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा जो प्रयास किए गए है, वे राज्य की अन्य गैर-सरकारी संस्थाओं की तुलना में अधिक प्रतीत होते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'भारत में बैंकिंग विधि एवं व्यवहार', डॉ. यू.एस. रस्तोगी एवं डॉ. बी.के. अग्रवाल, राम प्रसाद एण्ड संस, भोपाल।
2. 'बैंकिंग सेवाएँ एवं आदिवासी', डॉ. राकेश दशोरा, शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, उदयपुर।
3. 'जनजातीय भारत', श्री नदीम हसनैन, जवाहर पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
4. मध्यप्रदेश में आदिवासी विकास के पाँच दशक - अक्टूम्बर 2008, मध्यप्रदेश शासन, आदिम जाति एवं अनुसूचित जाति कल्याण विभाग।

****

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी अधिनियम का ग्रामीणों के आर्थिक एंव सामाजिक विकास में योगदान

डॉ. राकेश महाराज * तृप्ति आगरत्य **

प्रस्तावना – भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् से ही भारत के शहरी एंव ग्रामीण विकास पर ध्यान दिया गया। शहरों में विकास की गति काफी तेज रही जबकि ग्रामीण विकास धीरे-धीरे हुआ। भारत कृषि प्रधान देश है एंव भारत को समझने के लिए, भारत का विकास करने के लिए गॉवों को समझना एंव गॉवों का विकास करना आवश्यक है। भारतीय अर्थव्यवस्था में प्राचीन एंव आधुनिक लक्षय दोनों व्याप्त है। आज भी 72 प्रतिशत आबादी गॉवों में निवास करती है। जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि है, हालार्कि राष्ट्रीय आय में कृषि आय में कृषि का योगदान 52 प्रतिशत से घटकर 28 प्रतिशत हो गया है। भारत की राष्ट्रीय आय में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। राष्ट्रीय आय में कृषि का भाग 1950-51,1960-61,1965-66,1979-80, 1987-88,1991-92 और 2003-04 वर्षो में क्रमश: 56.2 प्रतिशत,52.5 प्रतिशत, 44.2 प्रतिशत, 42.9 प्रतिशत, 41.2 प्रतिशत, 34 तथा 28 प्रतिशत रहा है। भारत की अधिकांश जनसंख्या गॉवों में रहती है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार देश की कुल संख्या का 72 प्रतिशत भाग गांवों में रहता है तथा 28 प्रतिशत भाग शहरों में रहता है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि भारत की जनसंख्या के प्रत्येक 5.5 व्यक्तियों में से 4 व्यक्ति गॉव में रहते है, जबकि अमेरिका में 18 प्रतिशत, कनाडा में 36 प्रतिशत तथा ब्रिटेन में केवल 19 प्रतिशत जनसंख्या ही गॉवो में निवास करती है। भारत में वर्ष 2003 में प्रति व्यक्ति आय केवल 480 डॉलर थी। अमेरिका,जापान,जर्मनी व ब्रिटेन में कई गुना अधिक है जबकि भारत में बेरोजगारी तथा अदृश्य बेरोजगारी काफी मात्रा में पायी जाती है। वर्ष 1950 में भारत में बेरोजगारी की संख्या 50 लाख थी,जो वर्तमान में बढकर 1 अरब 20135 करोड हो चुकी है। यहाँ पर शिक्षित एंव अशिक्षित दोनों प्रकार की बेरोजगारी बढ रही है। भारत में श्रम की अधिकता सदैव रही है। देश में जिस अनुपात में जनसंख्या बढी उस अनुपात में रोजगार के अवसरों का निर्माण संभव नहीं हो सका। यह एक अर्थव्यवस्था के लिए चिन्तनीय बात है। भारत में कुल श्रम शक्ति की 18 प्रतिशत लोग बेरोजगारी के जीवन जीने को मजबूर है। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी कि स्थिति शहरी क्षेत्रों से अलग है,अर्थात वहां अल्परोजगार अधिक है। काम से पर्याप्त आय नहीं होती। ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी भयावह रूप ले चुकी है। इस समस्या को दूर करने के हेतु सर्वप्रथम 1979-80 में रायबरेली में लघुकृषक योजना, 1980-81 में एकीकृत ग्रामीण विकास ष्योजना, 15 अगस्त 1993 को प्रधानमंत्री रोजगार योजना 01 अप्रैल 1997 को स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना, 01 अप्रैल 1999 से स्वर्ग जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का सम्पूर्ण भारत में लागू की गई किन्तु सभी योजनाओं में ग्रामीण विकास के लक्ष्य को सफलता तो मिली पर वास्तविकता में फिर भी सम्पूर्णता नहीं पाई गई। अत: उपरोक्त समस्या के निदान फलस्वरूप केन्द्र शासन द्वारा 05 सितम्बर 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार अधिनियम पारित किया गया जिसका क्रियान्वयन 02 फरवरी 2006 सें म.प्र. में किया जा रहा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम – राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी अधिनियम जिसे मनरेगा के नाम से भी जाना जाता है। एक ऐसा अधिनियम है, जिसके अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र में निवास कर रहे ग्रामीणों को रोजगार मांगने का अधिकार है एवं 15 दिनों में रोजगार उपलब्ध कराने की गांरटी है, तथा 15 दिनों में रोजगार नही मिलने पर बेरोजगारी भत्ता प्राप्त करने का अधिकार है, इसमें एक वित्तीय वर्ष में परिवार के एक सदस्य को 100 दिवस का रोजगार प्रदान किया जाता है। ग्रामीण व्यस्क होना चाहिए, उसे रोजगार हेतु ग्राम पंचायत में आवेदन देना चाहिए,आवेदन प्राप्त करने के पश्चात ग्राम पंचायत 5 वर्ष के लिए जॉब कार्ड बनाती है। एंव कार्यस्थल पर जॉब कार्डधारी के मृत्यु या स्थायी अपंगता होने पर 25000/- राज्य सरकार आर्थिक सहायता के रूप में भुगतान करती है। कुल मजदुरों में एक तिहाई महिलाऐं होती है। योजना में जल संरक्षण एंव संवर्धन, वनरोपण,सिचाई हेतु नहरें, लघु एंव मध्यम सिंचाई कार्य,भूमि सुधार, जल निकासी, सडक निर्माण तथा राज्य एंव केन्द्र सरकार द्वारा जो कार्य प्रदान किया जाए वह करवाया जाता है।

योजना का ग्रामीण के आर्थिक एंव सामाजिक विकास में योगदान – म.प्र. के देवास जिले में इस योजना संबंधित शोधकार्य हेतु छ: तहसील से 10 जॉब कार्डधारियों का चयन किया गया। इस प्रकार कुल 60 जॉब कार्डधारियों से जो जानकारी प्राप्त हुई। उससे ज्ञात होता है कि जिले की जनसंख्या का 68 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्र में निवास करता है। वर्ष 2001 जनगणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में 61 प्रतिशत ग्रामीण श्रमिक है। जो मजदूरी कर अपना जीवन यापन करते है। इस योजना के लागू होने के पश्चात सभी परिवारों के एक सदस्य को 100 दिन का रोजगार प्राप्त हुआ है। जिससे कि ग्रामीणों क्षेत्र में रोजगार के अवसर आसानी से उपलब्ध हुए है। वर्ष 2012-13 में इस योजना में 246836 व्यक्तियों को रोजगार मिला है।जो कि रोजगार मांगने वालों के 100 प्रतिशत थे। देवास जिले में मजदूरी दर वर्ष 2012-13 में 150 रूपये प्रतिदिन थी, एंव इसमें एक तिहाई महिलाऐं भी थी, जिन्हें समान भुगतान प्राप्त हुआ।सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि 100 प्रतिशत व्यक्ति को रोजगार मिला,90 प्रतिशत व्यक्तियों का आर्थिक एंव सामाजिक सुधार हुआ, 92 प्रतिशत व्यक्तियों को साहूकारों के चगुंल से मुक्ति मिली है। महिलाओं के सम्मान में वृद्धि हुई है। सभी व्यक्तियों

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) अ.शा.रा.म. शासकीय महाविद्यालय,सोनकच्छ (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी (वाणिज्य) वाणिज्य अध्ययनशाला, उज्जैन (म.प्र.)

के बच्चों को शिक्षा प्राप्त हो रही है। क्योंकि अब उन्हें गांवों में भी रोजगार उपलब्ध होता है, जिसके कारण उन्हें बच्चें गॉवों के विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर सकते है। जिले में यह योजना ग्रामीणों के आर्थिक एंव सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान कर रही है।

निष्कर्ष – राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम देश के ग्रामीणों के लिए किसी वरदान से कम नहीं है। क्योंकि यह ग्रामीणों को अपनें ही गांवो में रोजगार उपलब्ध करा रहा है।

ग्रामीणो की आय,सामाजिक सम्मान में वृद्धि कर रहा है। महिलाओं को बराबरी का अधिकार दे रहा है। तथा ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक सुधार लाकर, आपराधिक गतिविधियों को नियंत्रित कर रहा है। इस योजना से ग्रामीणों को नई दिशा मिल रही है, एंव युवा पीढी को शिक्षा तथा ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जा रही है। यह योजना एक महत्वपूर्ण योजना है,जो कि ग्रामीणों के आर्थिक एंव सामाजिक विकास में योगदान दे रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.नागर विष्णुदत्त,डॉ.मेहता वल्लभदास 'भारतीय अर्थव्यवस्था'।
2. मिश्र श्रीकांत ओ.एस.'मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास'।
3. विकास के कार्यक्रम म.प्र. शासन पंचायत विकास विभाग भोपाल।
4. म.प्र.ग्रामीण रोजगार गांरटी योजना –म.प्र.शासन।
5. जिला सांख्यिकीय विभाग देवास।

****

Impact Of Foreign Direct Investment (FDI) On Indian Tourism

Nisar Ahamad Vani * Dr. Pawan Kumar Srivastava**

Abstract - Since the independence foreign direct investment inflow (FDI) has not grown significantly in most developing countries epically in India till 1990,s, foreign direct investment has started after the 1990s. A lot of developing countries have made policies aimed at reducing FDI barriers. Foreign capital globalization, particularly FDI inflow is increased significantly in developing countries, due to the fact that FDI is the most stable and prevalent component of foreign capital inflows (Adams, 2009) Foreign direct investments are a very important factor for the development of a country in general and tourism sector in particular India has still much to be done to encourage tourism sector . The authors are trying to give the answer to the question that how does foreign direct investment in the India affect the tourism sector? The authors have identify that the FDI (foreign direct investment) have shown the positive impact on economic growth on tourism sector .

Key Words - FDI foreign direct investment, tourism sector, economic growth, India.

Introduction - One of the most striking developments during the last two decades is the spectacular growth of FDI in the global economic landscape. This unprecedented growth of global FDI in 1990 around the world make FDI an important and vital component of development strategy in both developed and developing nations and policies are designed in order to stimulate inward flows. In fact, FDI provides a win – win situation to the host and the home countries. Both countries are directly interested in inviting FDI, because they benefit a lot from such type of investment.

Tourism Industry in India - Tourism sector holds immense potential for Indian economy. It can provide impetus to other industries through backward and forward linkages and can generate huge revenue earnings for the country. Tourism is no longer looking at it as a leisure activity, but as a major source of employment. The labor capital ratio per million rupee of investment at 1985-86 prices in the tourism sector is 47.5 jobs as against 44.7 jobs in agriculture and 12.6 jobs in case of manufacturing industries (Market plus Report, Min. of Tourism). Tourism is one of the third largest net earners of foreign exchange for the country and also one of the sectors, which employs the largest number of manpower. In order to develop tourism in India in a systematic manner, position it as a major engine of economic growth and to harness it's direct and multiplier effects for employment and poverty eradication in an environmentally sustainable manner the state and central governments formulated several policies. But it continues to suffer from lack of consistent and comprehensive policy. While little effort has been made to tap the potential of the tourism sector over the last few decades, the central tourism ministry is formulating policies to facilitate private investments through public private partnership and focus on development of this sector.

Reasons to invest in this sector -

1. Economic liberalization has given a new impetus to the hospitality industry.
2. The Indian hospitality industry is growing at a rate of 17 percent annually. The current gap between supply and demand expected to widen further as the economy opens and grows.
3. The government forecasts an additional requirement of 200,000 rooms by the turn of the century.
4. This increase in the number of tourist arrivals in the country lifted the country's standing in the world of tourist destinations. The country is ranked fourth among the world's must see countries. The sector continues to face certain problems.
5. The country continues to be marred by poor infrastructure facilities like poor road management, rail,air and sea connectivity. However, the present government in its endeavor has taken a few initiatives like opening of the partial sky policy. This allows private domestic airline operators to fly on the Indian skies. Some states continue to be in political uncertainties.

Reasons for Low FDI in Indian Tourism - The following are the some of the reasons for low foreign direct investment in this sector. They are -

Multitude of taxes - Ours is the highest tax structure on tourism projects in the Asia Pacific region. Multitude of central and state taxes is the fundamental problem plaguing the tourism sector. Expenditure Tax of 10% is charged in

*Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
**Associate Professor (Economics) Govt. P.G. College, Shivpuri (M.P.) INDIA

hotel's where in room charges for any unit of residential accommodation are Rs.3000 or more per day while, simultaneously, States levy Luxury Tax ranging from 5% to 25% on the hotel tariff. Taking into account heavy administrative costs of collection of HET by Central Govt. and Luxury Tax by State Govt's. The net benefit to the economy is considerably smaller and is not compatible with the loss in revenue accruing due to diversion of tourists to lesser-taxed destinations. The problem has got magnified due to increase in the threshold limit, which used to be Rs.2000 per day per individual to Rs.3000 per day during Union Budget 2002-03. With the removal of the words "per individual", the benefits of raising the threshold limit were nullified and therefore benefits could not be passed on to tourists.

High Taxes - One of the fundamental problems plaguing the Indian tourism sector is a multitude of Central and State level taxes, which lead to an increased cost to the tourists. A comparison of the Corporate Tax level in India, which affects the hospitality sector, in comparison with our neighbors, shows India's poor competitive positioning. **(Graph See in the next page)**

Corporate Taxes in comparison with other tourist destinations in Asia - On the indirect taxes front also, India fairs poorly as compared to competing destinations. The following table and figure showcases tourism related major indirect taxes benchmarked across comparable locations.

Delay in FDI Approvals & Govt. Policies - Huge delay in Foreign Direct Investment approvals in Hotel & Tourism sector. Due to delay in approvals and lack of guidelines in the tourism policy, the Alfred Ford's proposed Himalayan Sky Village is pending since last three years. If it is approved it is one of the highest FDI in the country in tourism sector with US$ 300 million which also provides employment to around 3000 people.

Highest import duty on imported liquor used in hotels- Under the WTO Negotiations for Market Access under the Agreement of Agriculture (AoA), India had bound its tariffs at 100% for primary products, 150% for processed products (this is the relevant category for liquor) and 300% for edible oils, except for certain items (comprising about 119 tariff lines), which were historically bound at a lower level in the earlier negotiations.

With the additional duties and sales tax levied by the State Governments the cost of alcoholic spirits sold in hotels to bonafide guests is exorbitant. The international precedence for liquor related levies also do not substantiate the current level of taxes. Rationalization of the tax on liquor is therefore important to make Indian hotels competitive internationally and enable them to extend facilities, considered important by tourists, on par with the hotels in competing destinations.

Service Tax on Tour Operators - The services provided by a tour operator typically includes a wide range of services covering transportation, boarding and lodging arrangements, local sight-seeing and guide services, etc. which are procured through sub-agencies. Even though 60% abatement is provided, taxation of the gross service amount leads to double taxation and increases the burden for the tourists.

Benchmarking of tourism related taxes to taxes across comparable tourist destinations -

Tourism and Economic Development - Comparison of other tourism expenses with neighboring Asian Countries **(Graph See in the next page)**

Recommendations -

1. There was need to rationalize the taxation on the hotel industry and adopt a single luxury tax across the country. For provision of single-window clearances at the local, State and Central Government levels to reduce procedural delays.
2. Tax holiday would encourage FDI in this sector and more players to set up hotels, to bridge the shortage of rooms which according to Government estimates stood at one lakh rooms.
3. Section 72 (A) of the Income Tax Act should be amended such that it is made applicable to the Hospitality sector also by using the word 'undertaking' in lieu of 'industrial undertaking'.
4. It is recommended to increase the depreciation rate to 100% in order to incentives hotels to install pollution control equipment and energy generating devices to protect the environment.
5. For the calculation of Book profit for the MAT provisions under Sec. 115 JB, Sec 80HHD profits should be allowed as a deduction on par with the deduction available to Sec 80HHC/E/F profits, as under these relevant sections all the assesses deal with foreign Exchange.
6. Service Tax should be computed based on the value of service provided, in the nature of VAT; rather than on the gross amount

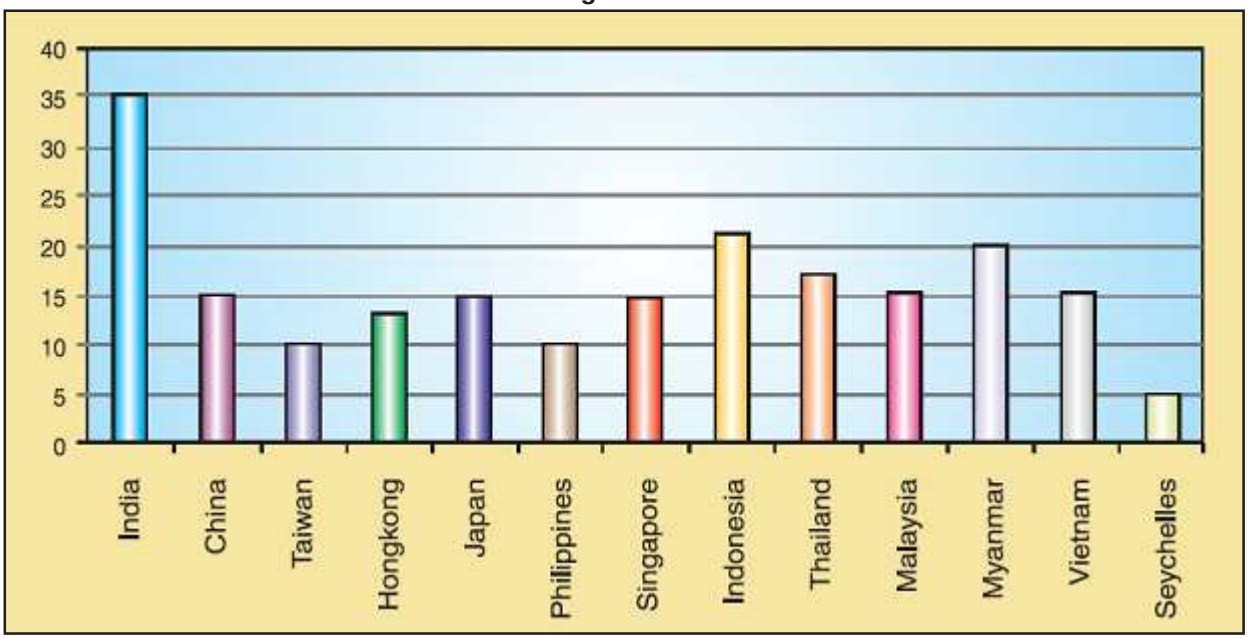
The Travel & Tourism industry provides tremendous opportunity to India in terms of contribution to its GDP and employment generation. According to CII estimates, an additional 1 million visitors can help generate revenues of Rs.4, 300 crore annually. Thus, Government policies, which would focus at increasing tourist arrivals in the country and facilitate investments in tourism infrastructure, would lead to significantly higher multiplier effect on the key economic parameters of the Indian economy.

References :-

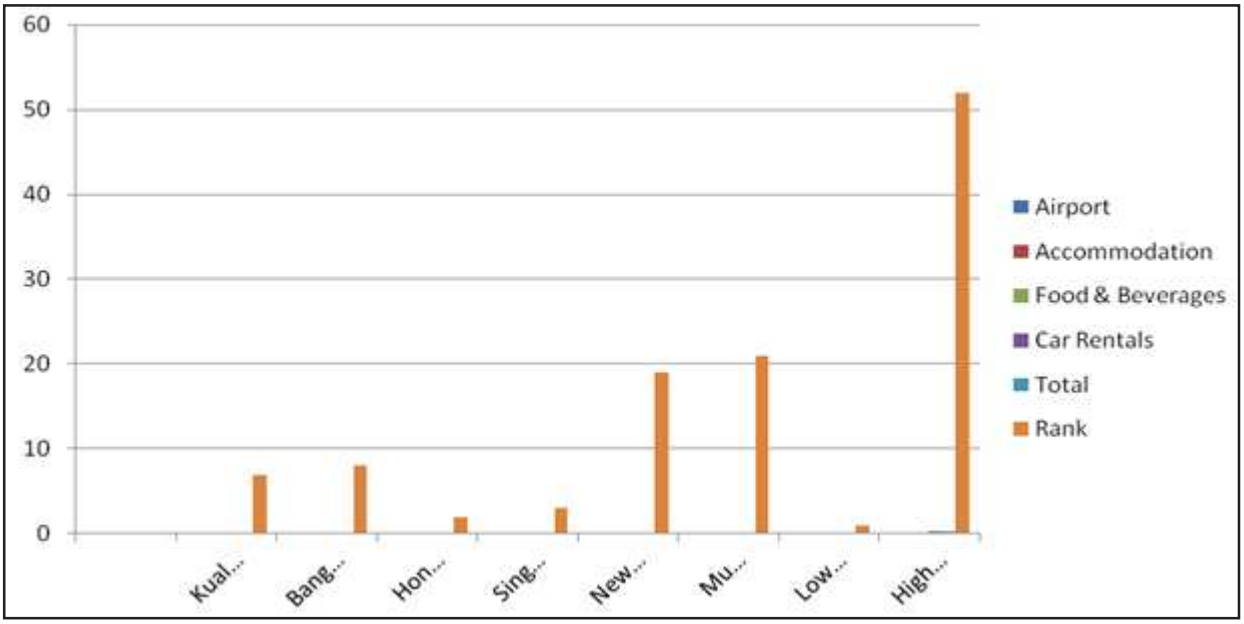
1. Batra G.S., Tourism in the 21st century, (1996) Anmol publications Pvt. Ltd.,.245 Pgs
2. Dirk William velde and Swapna Niar, (2005), Foreign Direct Investment, service trade negotiations and development -
3. The case of tourism in Caribbean, Overseas Development Institute.
4. Federation of Hotels & Restaurants Association of India ltd,
5. Govt. to review FDI in Tourism Sector, News and

Features, New Delhi, February 13, (2013).
6. Investment opportunities in Tourism Sector, Government of India portal Investment Commission.
7. Manpower recruitment in Hotel industry, A market plus report of Ministry of tourism, Government of India.
8. Meyer, D, Foreign Direct Investment in Tourism - The Development Dimension - Expert Advisory Committee (2005-2006). Funded by United Nations Conference on Trade and Development, Geneva, Switzerland.
9. Meyer, D. (2006) FDI in Tourism: The Development Dimension. Case Study Sri Lanka. Geneva: UNCTAD.
10. Usha C.V. Haley, (2001), Tourism and FDI in Vietnam, Haworth Press, pp 67-90

High Taxes



Comparison of other tourism expenses with neighboring Asian Countries



****

A Comprehensive Study Of GST In India

Mohammad Latief Khan * Dr. Pawan Kumar Srivastava **

Abstract - The tax system which was prevailing in India till 30th of June 2017 posses the cumbersome process of paying tax and was also a multiple tax system that is we are paying tax in different forms ,broadly those forms have been categories into two; direct tax and indirect tax. Indirect tax has replaced by a new tax system called Goods and Service Tax (GST) which is also called single tax system. The reason behind the implementation of new tax system is that it eliminates all the drawbacks of the former tax system and also giving people of India a feeling of unity (i.e. one country one tax). In this paper i have discussed GST in detail and its impact on different sections of the society.
Key words - tax, GST

Introduction - As we are all familiar about the fact ,that tax is the blood vein of an economy and it keeps economy alive all the time , so tax system should be that which must be in circulation all the time in clean and clear form. So far government of India from time to time has left no stone unturned to make the tax system neat and clean and finally they reach the conclusion that India should have such a tax system which must provide wellbeing to the people of India in general and weaker section in particular. Till 30th of June 2017 the tax system was prevailing in India was multistage tax and was divided in two categories namely direct tax which includes income tax, wealth tax and gift tax and second category is indirect tax which includes service tax, excise duty, custom duty ,sales tax etc. Indirect tax is now replaced by GST.Taxes in India are levied by the Central Government and the State Governments. Some minor taxes are also levied by the local authorities such as Municipality or Local Council. The authority to levy tax is derived from the Constitution of India which allocates the power to levy various taxes between Centre and State.

Taxes which levied by central government were - CENVAT**,** Customs Duty**,** Service Tax

Some of the important State taxes were - State Sales Tax**,** CST**,** Works Contract Act**,** Entry tax **and** Other local levied

The Major Tax reforms has been introduced in india are listed below - In 1974 Report of LK Jha Committee suggested VAT, 1986 Introduction of a restricted VAT called MODVAT, 1991 Report of the Chelliah Committee recommends VAT/GST and recommendations accepted by Government,1994 Introduction of Service Tax, 1999 Formation of Empowered Committee on State VAT, 2000 Implementation of uniform floor Sales tax rates, Abolition of tax related incentives granted by States, 2003 VAT implemented in Haryana in April 2003, 2004 Significant progress towards CENVAT, 2005-06 VAT implemented in 26 more states, 2007 First GST stuffy released By Mr. P. Shome in January,2007 F.M. Announces for GST in budget Speech,2007 GST phase out starts in April 2007,2007 Joint Working Group formed and report submitted,2008 EC finalises the view on GST structure in April 2008,2009 proposed to be implemented from 1.4.2010. The idea of GST was first given by the then Union Finance Minister in his Budget speech for 2006-07. Initially, it was proposed that GST would be introduced by 01stApril, 2010. The Empowered Committee of State Finance Ministers (EC) which had formulated the design of State VAT was requested to come up with a roadmap and structure for the GST. Joint Working Groups of officials having representation of the States as well as the Centre were set up to examine various aspects of the GST and draw up reports specifically on exemptions and thresholds, taxation of services and taxation of inter-State supplies. Based on discussions within and between it and the Central Government, the Empowered Committee released its First Discussion Paper on the GST in November, 2009. This spells out the features of the proposed GST and has formed the basis for discussion between the Centre and the States so far.

Goods And Service Tax (GST) - Now govt of India has brought major tax reform in India to overcome all the difficulties and limitation of the existing tax reform and give India a new look on world tax map. India's biggest indirect tax reform since 1947 looks like it has finally arrive the Goods and Service Tax (GST).The new tax system is goods and services tax has been replaced by indirect tax. With

***Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA**
****Associate Professor (Economics) Govt. PG College, Shivpuri (M.P.) INDIA**

the implemenataion of GST India became one country one tax nation. It has been implemented from july 1, 2017 in all states and uni1on territories except jammu and Kashmir.

Why GST is implemented in india ? - GST is a better and fairer tax system compared to SST (Sales & Service Tax) as GST will Lower business cost, Increase global competitiveness. ,Enhance compliance ,Reduces red tape, Equity, Fair pricing to consumers,Greater transparency *and* Benefit to Consumers.

The GST is being introduced not only to get rid of the current patchwork of indirect taxes that are partial and suffer from infirmities, mainly exemptions and multiple rates, but also to improve tax compliances. The spread of GST in different countries has been one of the most important developments in taxation over the last six decades. Owing to its capacity to raise revenue in the most transparent and neutral manner, more than 150 countries have adopted the GST.

The final print - The Bill, cleared by the cabinet on Dec. 17 and thereafter introduced in the parliament, has attempted to introduce the definition of GST.

The primary reason for introducing the Bill is to pave the way for the centre to tax sale of goods and the states to tax provision of services. The Bill further proposes that the central government will have the exclusive power to levy GST on imports and inter-state trade.

The bill has also recognized the need to have a GST council. The union finance minister, the union minister of state in charge of revenue or finance, and the minister in charge of finance or taxation or any other minister nominated by each state government would constitute the council to ensure that both the centre and the states are on an equal footings.

In addition, the Bill proposes to set up a Dispute Settlement Authority that would look into disputes between the States and the Centre. Appeals from the authority would directly lie with the Supreme Court.

But, for the time being, the Bill has kept certain goods out of the purview of GST, which have been a point of contention between state governments and the centre.

These include:

- Petroleum crude
- High speed diesel
- Petrol
- Natural gas
- Aviation turbine fuel
- Alcohol for human consumption.

States shall have the power to levy taxes on these items, except in the case of imports and inter-state trade.

Another important feature of the Bill is a proposal to levy additional tax on supply of goods on inter-state trade. The additional tax will not exceed 1% and will be collected by the central government for a period of two years. Finally, the amount so collected will be assigned to the states from where the supply originates.

How does GST is beneficial - A unified GST is an economically efficient solution even for the multinationals, which have to compete with the companies in unorganized sector, as it simplifies the indirect tax structure to one general rate that can be paid by all companies.

Under the GST structure, every company gets a deduction on the taxes already paid by its suppliers. That results in every buyer ensuring that his supplier has paid his part to claim his deductions.

With the introduction of the Bill, the signal that the Modi government seems keen to send is that all the key decisions could well be in the hands of the GST Council. With both representatives from centre and states in place, the latter would likely have a say in the implementation of tax laws in their territories.

Moreover, full compensation for the first three years for any kind of revenue loss may work wonders to dilute the initial apprehensions of the states regarding losing income post the introduction of GST.

With the central government going that extra mile to take care of the interest of the states, one will have to wait and see if the states too return the favour byratifying similar bills in their assemblies with the much needed two-third majority.

GST Rates List Item Wise in India -

0% GST RATE **-** Milk, Meat, Sindoor etc.

5% GST Rate – Paneer, Stent, Vegetables etc.

12% GST Rate – Agarbatti, Bhutia, Animal Fat etc.

18% GST Rate – Cameras, Steel Products, Mineral Water.etc.

28% GST Rate – Automobiles, ATM, Shampoos etc

GST Positive impact on Indian economy - Speeds up economic union of India.

Better compliance and revenue buoyancy Replacing the cascading effect [tax on tax] created by existing indirect taxes.

Tax incidence for consumers may fall Lower transaction cost for final consumers.

By merging all levies on goods and services into one, GST acquires a very simple and transparent character.

Uniformity in tax regime with only one or two tax rates across the supply chain as against multiple tax structure as of present Increased tax collections due to wide coverage of goods and services.

Improvement in cost competitiveness of goods and services in the international market.

The advantages for manufacturers and traders are the following -

- **One tax -** The common base for charging GST for Centre and the state will consist of a subsuming of several center tax and state taxes which will enable them to give one tax rather than multiple tax.
- **Common market -** There will be a common market in the absence of CST and entry tax. At present, goods are being sold mostly within the state in order to avoid paying the CST which is not credited at the stage of

manufacture or in course of trading. Good quality products being manufactured in one part of the country will find more market in the farthest part of the country because there will be no CST and no entry tax

- **Distinction between goods and services will go -** In some cases, there is a distinction between goods and services when they are sold as a package. These controversies will go.
- **Invoicing will be simpler -** At present, the invoices are more detailed since taxes on goods and services are written separately for one transaction. With the introduction of GST only one rate will be written.
- **No entry tax -** The Economist November 8, 2014 has reported (page 67) that India's long distance truckers are parked 60 per cent of the time. This also leads to delaying of delivery of goods at destinations. The abolition of entry tax will be a great boon for the movement of goods by road transport.
- **Common exemptions between Centre and states -** Now the exemptions given by the Centre and the states being different, the final price becomes different in different states. In the GST regime, exemptions will be common between the Centre and the states which will make the rates of duty same all over India.

References :-

1. Azaria, N.T and Others, The revenue raising capabilities of a VAT system in Developing Countries, South African Journal of Economic and Management Sciences, N.S, March 2005, 8 (1), pp.63-76.
2. Damania, R., The Impact of Goods and Services Tax on Product Market Competition, Australian Economic Review, 33(4), December 2000, pp 330-36.
3. Pramod Kumar Rai, The challenges of Tax Collection in Developing Economies (with special reference to India), The University of Georgia Law Athens, Georgia, 2004.
4. Kumar Satyakam, Goods and Services Tax: Future of India, Symbiosis Law College, Pune, 2010.
5. A Model and Roadmap for Goods and Services Tax in India, Empowered Committee of State Finance Ministers, New Delhi, 2008.
6. Govinda Rao M., India Tax reform in India: Achievements and Challenges, AsiaPacific Development Journal, Vol. 7, No. 2, December 2000.
7. Poddar, Satya and Amaresh Bagchi, Revenue-neutral rate for GST, The Economic Times, November 15, 2007.

****

मध्यप्रदेश राज्य के किसानों के लिए मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना का प्रभाव – एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. रिखबचन्द जैन *

शोध सारांश – 10 जनवरी 2018 को नीति आयोग की बैठक में राजीव कुमार ने बताया कि किसानों की आय दुगुनी करने पर सबसे ज्यादा ध्यान है क्योंकि किसान का उत्पादन बढ़ने पर कीमत नहीं बढ़ती बल्कि और कम हो जाती है। उक्त विचार को मध्यप्रदेश शासन ने पूर्व में ही भाँप लिया और 16 अक्टूबर 2017 को इस योजना का शुभारम्भ करते हुए आठ फसलें सोयाबीन, मूंगफली, तिल, रामतिल, मक्का, मूंग, उडद, तुअर शामिल की इसके पश्चात 10 जनवरी 2018 को प्याज, चना, मसूर एवं सरसों को भी शामिल कर लिया है इस योजना में किसान को न्यूनतम समर्थन मूल्य एवं मॉडल मूल्य के अन्तर की राशि का भुगतान हो सकता है। मॉडल मूल्य मध्यप्रदेश व अन्य दो राज्यों के औसत मूल्यों के आधार पर गणना होती है। इस योजना से किसानों को अपनी उपज का लाभकारी मूल्य प्राप्त हो रहा है मण्डी में उपज की आवक में वृद्धि होने से व्यापारी खुश है, तो सरकार की आय में भी वृद्धि हो रही है। इन सब लाभों की प्राप्ती के साथ–साथ चुनौतियाँ भी है, परन्तु उन चुनौतियों को राजस्व अमला सर्तकता पूर्वक कार्य करते हुए किसान व कृषि विकास के लिए अवसर पैदा कर रहा है।

शब्द कुंजी – भावान्तर योजना, न्यूनतम समर्थन मूल्य, माडल मूल्य, औसत उत्पादकता।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश सरकार राज्य में किसानों के कल्याण और कृषि क्षेत्र में बेहतर भविष्य की संभावनाओं के लिए प्रोत्साहित करने को मुख्यमंत्री भावान्तर योजना आरम्भ की गई है। जिसमें प्रदेश के किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्रदान करने के लिए राज्य शासन के द्वारा प्रयास किए जा रहे है। इसके अन्तर्गत खरीफ 2017 के समर्थन मूल्य तथा किसानों के द्वारा कृषि उपज मण्डी समिति (अधिसूचित मण्डी) के प्रागंण में उपज विक्रय किए जाने पर पाए वाले घोषित मॉडल मूल्य या विक्रय मूल्य के अंतर की राशि को इस योजना में प्रतिपूर्ति के रूप में भुगतान किया जाएगा। खरीफ 2017 के क्रियान्वयन की समीक्षा के पश्चात अगले फसल चक्र के क्रियान्वयन पर निर्णय लिया जाएगा, अर्थात किसान भाईयो को उनकी कृषि फसलों के लाभकारी मूल्य दिलाने के लिए मध्यप्रदेश सरकार की अभिनव पहल है।

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना का शुभारम्भ 16 अक्टूबर 2017 को खुरई तहसील मुख्यालय सागर से म.प्र. के मुख्यमंत्री शिवराजसिंह चौहान द्वारा किया गया। जिसके अन्तर्गत खरीफ 2017 की आठ फसलों को शामिल किया गया है, जिनमे मुख्य तिलहन व दलहन फसले है। 16 अक्टूम्बर 2017 को इस योजना में सोयाबीन, मूगंफली, तिल, रामतिल, मक्का, मूंग, उड़द, एवं तुअर को शामिल किया गया है। इस योजना का विस्तार करते हुए रबी फसल 2018 के लिए 10 जनवरी 2018 को प्याज, चना, मसूर, एवं सरसों को शामिल कर लिया जिनका विक्रय 01 मार्च 2018 से आरम्भ होगा, इस प्रकार किसानों की इस हितेषी योजना की समीक्षा करते हुए विस्तार के रूप में खरीफ के साथ रबी फसल को भी शामिल कर लिया है।

शोध उद्देश्य – मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के अध्ययन के उद्देश्य निम्नानुसार है।

1. इस योजना का प्रचार प्रसार करके किसानो का अधिक से अधिक पंजीकरण करना।
2. इस योजना का किसानो, व्यापारियों, सरकार एवं उपभोक्ताओ पर प्रभाव ज्ञात करना।
3. योजना को और प्रभावी बनाने हेतु सुझाव ज्ञात करना।

शोध प्रविधि – यह अध्ययन प्राथमिक समंको में व्यक्तिगत मौखिक साक्षात्कार जो किसानो, व्यापारीयों, सरकारी अधिकारियों, उपभोक्ताओं से किया गया तथा द्वितीयक संमको को वेबसाइट व कृषि मंडी से एकत्र करके अध्ययन किया गया।

योजना के उद्देश्य – मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के उद्देश्य निम्नानुसार है।

1. यह योजना सुनिश्चित करेगी कि किसानों को उनके द्वारा उत्पादित माल का लाभकारी मूल्य मिले।
2. किसानों की सहायता करने और कृषि क्षेत्र में बढ़ते व्यावसायिकरण वाले किसानों के लिए वित्तीय जोखिम को कम करने के लिए सरकार द्वारा एक अच्छी पहल।
3. मुख्य रूप से तिलहन एवं दलहन फसलों के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए।
4. फसल की लाभकारी कीमतों का सुझाव मध्यप्रदेश कृषि उत्पाद लागत और विपणन आयोग द्वारा किया जाएगा।
5. समर्थन मूल्य और विक्रय की कीमत के बीचअंतर राशि को राज्य सरकार द्वारा किसानों के बैंक खाते में सीधे जमा करना।
6. नीति ओयाग की बैठक दिनांक 10 जनवरी 2018 को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को अध्यक्षता एवं उपाध्यक्ष राजीव कुमार ने बताया की किसानों की आय दुगुनी करने पर ज्यादा जोर दिया है क्योंकि यह अक्सर देखा जाता है कि उत्पादन बढ़ने के साथ–साथ कीमत नहीं बढ़ती है बल्कि और कम हो जाती है। नीति आयोग के इस उददेश्य की प्राप्ति हेतु भावान्तर योजना का क्रियान्वयन।

* ऐसोसिएट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोतर महाविद्यालय,नीमच (म.प्र.) भारत

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना की राशि की गणना – (उदाहरण)

अ) सोयाबीन का न्यूनतम समर्थन मूल्य = रूपये 3050 प्रति क्विंटल

ब) मॉडल विक्रय मूल्य = रूपये 2580 प्रति क्विंटल

यदि किसान द्वारा रू. 3050 या 3100 प्रति क्विंटल से बेची योजना का लाभ नहीं।

यदि किसान द्वारा रू. 2750 प्रति क्विंटल की दर से बेची।

= न्यूनतम समर्थन मूल्य 2750
= 3050 2750
= रूपये 300 प्रति क्विंटल देय

यदि किसान द्वारा रू. 2400 प्रति क्विंटल की दर से बेची।

= न्यूनतम समर्थन मूल्य माडल मूल्य
= 3050 2580
= रूपये 470 प्रति क्विंटल देय

यदि किसान द्वारा रू. 2000 प्रति क्विंटल की दर से बेची

= न्यूनतम समर्थन मूल्य माडल मूल्य
= 3050 2580
= रूपये 470 प्रति क्विंटल देय

योजना के लाभ – मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना का कृषकों, व्यापारियों एवं सरकार को लाभ हो रहा है जो निम्नांकित है–

1. किसानों को अपनी उत्पादित फसल का लाभकारी मूल्य प्राप्त हो रहा है।
2. फसलों का अच्छा दाम मिलने से किसान संतुष्ट है।
3. जनजातीय जिलों के दूरस्थ क्षेत्रों में 20 साप्ताहिक हाट बाजारों में भी फसल की आवक हो रही है
4. कृषि मण्डी में कृषि उत्पाद की आवक बढ़ी जिससे लोगों को रोजगार मिला।
5. म.प्र. में 51 उपमण्डियों को भी क्रियाशील कर दिया जहाँ किसान उपज लेकर आते है।
6. म.प्र. में दिनांक 14/11/17 तक 171 लाख मिट्रीक टन अनाज की आवक हो चुकी है।
7. दिनांक 16/10/17 से 14/11/17 तक अवधि में कृषि मण्डियों की आय 28 करोड़ रूपये अधिक हुई हैं।
8. आदिवासी कृषक जो 15 कि.मी. से अधिक दूरी पर है कि उपज को मण्डी तक लाने में विशेष वाहनों की व्यवस्था से किसान संतुष्ट है।
9. प्रदेश को भण्डारण एवं लॉजस्टिक हब के रूप में विकसित करने की योजना।
10. भावान्तर योजना में राज्य स्तर पर 0755–2550495 न. पर कृषक अपनी समस्या के बारे में पूछ सकता है तथा नीमच के लिए 7000198022 है।
11. किसान द्वारा अपनी उपज को लाइसेंसी गोदाम में अधिकतम चार माह तक रखनें पर प्रति क्विन्टल प्रति माह अधिकतम 9.90 रूपये अनुदान मिलेगा बशर्ते विक्रय मूल्य उसके समर्थन मूल्य से कम हो।
12. योजना से प्रदेश के किसानों को उनकी उपज का न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलना सुनिश्चित होगा।
13. मण्डी दरों में गिरावट से होने वाली हानि से बचाने में यह योजना सुरक्षा कवच सिद्ध होगी।
14. इस योजना से तिलहन एवं दलहन का उत्पादन बढ़ेगा।
15. इस योजना से सरकार की आय में वृद्धि होगी।
16. किसानों को भण्डारण कम करना पड़ेगा जिससे भण्डारण हेतु व्यवस्था कम करनी पड़ेगी।
17. बाजार में कृषि उत्पाद की आपूर्ति आवश्यकतानुसार बनी रहेगी क्योंकि मण्डियों में माल की आवक होती रहेगी।

तालिका से स्पष्ट है कि सोयाबीन की मॉडल रेट बढ़ती जा रही है। इस योजना में सोयाबीन का योगदान लगभग 60 प्रतिशत है। अत: जिन किसानों ने योजना के आरम्भ में विक्रय किया, उन्हें अधिक लाभ मिला है। साथ–साथ मूंग व उड़द का माडल मूल्य भी बढ़ रहा है। अधिसूचित मण्डी में लगभग 85 प्रतिशत उपज सोयाबीन व उड़द की है और दोनों में माडल रेट बढ़ी। साथ ही यह भी परिलक्षित हो रहा है कि जब मण्डी में आवक कम थी औसत मूल्य कम था जैसे जैसे आवक बढ़ी औसत मूल्य भी बढ़ रहे है।

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना 2017 (मध्यप्रदेश) **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

किसान को पंजीयन कराने हेतु आवश्यक अभिलेख –

1. आधार कार्ड
2. समग्र आईडी
3. बैंकपास बुक
4. ऋण पुस्तिका (जमीन की पावती)
5. मोबाइल नम्बर

योजना हेतु किसान की योग्यताएँ – मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना का लाभ लेने के लिए निम्नांकित शर्ते है–

1. किसान मध्यप्रदेश का मूल निवासी होते हुए पंजीयन अनिवार्य है पोर्टल के समय किसान का आधार कार्ड, समग्र क्रमांक, बैंक खाता एवं मोबाइल नम्बर दर्ज कराना अनिवार्य है।
2. कृषि उत्पाद प्रदेश में ही उत्पादित होना चाहिए।
3. योजना का लाभ अधिसूचित मण्डी परिसर में निर्धारित अवधि में विक्रय मूल्य पर देय होगा।
4. योजना का लाभ जिलावार औसत उत्पादकता की सीमा तक ही देय होगा।
5. राजस्व विभाग द्वारा भावान्तर योजना की 8 फसलें तथा ई–उपार्जन की गेहूँ, ज्वार, बाजरा, की एक्जाई जानकारी का निरीक्षण किया जायेगा सही पाये जाने पर ही योजना का लाभ मिलेगा।
6. कृषि उपज मण्डी के कर्मचारी द्वारा विक्रय उपरान्त जारी किए जाने वाले अनुबंध पर्ची, तोल पर्ची, भुगतान पत्रक में किसान का पंजीयन क्रमांक, नाम, पता, विक्रय की गई मात्रा एंव विक्रय दर आदि का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।
7. यदि माडल मूल्य समर्थन मूल्य से ऊँचा है, तो योजना लागू नहीं मानी जायेगी।
8. विक्रय मूल्य समर्थन मूल्य से अधिक या उसके बराबर होने पर लाभ देयनहीं होगा।
9. किसान द्वारा कृषि उपज का गोदाम में 4 माह तक भण्डारण करने पर यदि विक्रय मूल्य न्यूनतम समर्थन मूल्य से कम है, तो केवल भण्डारण अनुदान के अलावा कोई राशि देय नहीं होगी।

भावान्तर योजना की कमियाँ – इस योजना के बारे में कृषि उपज मण्डी में व्यापारी, किसान, कृषि अधिकारी,उपभोक्ता से व्यक्तिगत मौखिक साक्षात्कार करने पर कमियां भी परिलक्षित हुई जो निम्नांकित है–

1. किसान उच्च गुणवत्तायुक्त कृषि उत्पाद के प्रति कोई विशेष प्रोत्साहित नहीं क्योंकि किसान को इस योजना से समर्थन मूल्य के बराबर तो मिल ही जाता है। यदि वह उच्च गुणवत्ता उत्पाद भी करेगा तो अंतर केवल न्यूनतम समर्थन मूल्य से ही मिलेगा जबकिउच्च गुणवत्तायुक्त उत्पाद में लागत ऊँची आ जाएगी।
2. राजस्व अमले के कार्य में वृद्धि–पंजीयन, जमीन की मात्रा, बोया गया रकबा, फसल का प्रकार, अंतर राशि का भुगतान इत्यादि कार्य बहुत सावधानी से करने होगें।
3. बहुत से किसानों द्वारा फार्म हाउस जो केवल हाउस होते है फार्म नहीं की भूमि को भी भावान्तर योजना में शामिल कर लेना जिससे कि जिले की औसत उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है।
4. कई किसान ऐसे है, जो अपनी पंजीकरण, भूमि रकबा, बोई गई फसल आदि को बार–बार बदलते रहते है।
5. कुछ व्यक्ति कृषि उपज को बाजार से क्रय कर लेते है और अपनी भूमि के रकबे के आधार पर भावान्तर का लाभ उठा लेना जिससे छोटे कृषक को हानि होती है।
6. आनलाइन भुगतान में तकनीकी त्रुटि से किसान का रूपया जमा न होने से उसे बार–बार मण्डी के चक्कर लगाने पड़ते है।

मुख्यमंत्री भावान्तर योजना की सफलता हेतु सुझाव – व्यक्तिगत मौखिक साक्षात्कार एवं द्वितीयक समंको के आधार पर इस योजना की सफलता हेतु सुझाव निम्नांकित है–

1. राजस्व अमले को भूमि का रकबा, फसल, औसत उत्पादकता गणना का आधार इत्यादि पर सावधानीपूर्वक निरीक्षण करना चाहिए। निरीक्षण के स्तर एक दूसरे से जुड़े होने चाहिए फसल बोने के समय ही यह सब ज्ञात कर लेना चाहिए।
2. राजस्व अमले द्वारा गणना उक्त खेत के स्थल पर जाकर ही करना चाहिए।
3. जिनके पास फार्म हाउस है, उनकी विशेष सर्तकता से फसल व भूमि का रकबा की गणना करनी चाहिए।
4. इस योजना में पंजीकरण कराने में किसानों को विशेष सहयोग करना चाहिए।
5. किसान का उपज यदि न्यूनतम समर्थन मूल्य से ऊँचा विक्रित होता है तो उसे प्रोत्साहन स्वरूप राशि प्रदान करनी चाहिए ताकि वह उच्च गुणवत्ता वाली उपज के प्रति प्रोत्साहित हो।
6. भावान्तर की राशि अधिकतम एक सप्ताह में भुगतान निश्चित रूप से करना चाहिए।
7. न्यूनतम समर्थन मूल्य में राज्य सरकार के बोनस मूल्य को भी जोड़ना चाहिए।

निष्कर्ष – इस प्रकार इस क्रांतिकारी योजना का असर शनै: शनै: परिलक्षित होने लगा है। इस योजना के माध्यम से भविष्य में किसानों को उनकी फसलों के उत्पादन के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। सुरक्षा कवच प्राप्त होगा और प्रदेशों में खुशहाली समृद्धि आयेगी।

संक्षेप में, कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूती से खड़ा करने के हर पहलू का ध्यान भावान्तर भुगतान योजना में रखा गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह योजना माध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था में एक नई गति लायेगी बल्कि कृषि एवं किसान को आत्मनिर्भर बनाने और उनके जीवन स्तर ऊँचा उठाने में भी बेहद मददगार साबित होगी। यहीं नहीं भारत के सपनों को भी ऊँची उड़ान देगी। बस जरुरत है इस योजना का सही ढंग से क्रियान्वयन होता रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योजना–दृष्टि पत्र में कृषि –योगिन्दर के अलघ, जन. 2012, पृष्ठ 29
2. कुरुक्षेत्र, किसान क्रेडिट कार्ड ने बदली किसानों की तकदीर – हिमांशु शेखर, दिस. 2013, पृष्ठ 19
3. Rane:A.A., Deorukhkar A.C. (2012) Economics of Agriculture New Delhi, Atlantic Publishers and Distributors (P) Ltd. P.P. 216-218
4. Shend: Arvind, Upagade: Vijay (2014), Research Methodology, New Delhi, S.Chand & Compnay pvt. ltd., P.P. 197-182
5. सचिव एवं अध्यक्ष, कृषि उपज मण्डी नीमच (म.प्र.)।
6. उपसचांलक, कृषि कल्याण एवं कृषि विकास विभाग नीमच।
7. ई–मण्डी कार्यालय, नीमच।
8. सचिव एवं अध्यक्ष, व्यापारी संघ नीमच।

मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना 2017 (मध्यप्रदेश)

फसल	मुख्यमंत्री भावान्तर भुगतान योजना के लिए मण्डियों में विक्रय की अवधि	मण्डियों में माडल विक्रय दर की गणना के राज्य म.प्र. के अलावा दो अन्य राज्य	समर्थन मूल्य रूपये प्रति क्विंटल	16 अक्टूबर 17 तक विक्रय की मॉडल रेट रूपय प्रति किंवटल		1 नवम्बर 2017 से 30 नवम्बर 2017 तक विक्रय की मॉडल रेट रूपये प्रति किवन्टल		1 दिसम्बर से 31 दिसम्बर 2017 तक विक्रय की मॉडल रेट रूपये प्रति किवन्टल	
				माडल रेट	अन्तर	माडल रेट	अन्तर	माडल रेट	अन्तर
तिलहन फसले सोयाबीन	16 अक्टूबर 2017 से 31 दिसम्बर 2017	महाराष्ट्र, राजस्थान	3050	2580	470	2640	410	2830	220
मूगंफली	16 अक्टूबर 2017 से 15 दिसम्बर 2017	गुजरात, राजस्थान	4450	3720	730	3570	880	3610	840
तिल	16 अक्टूबर 2017 से 15 दिसम्बर 2017	उड़ीसा, छत्तीसगढ़	5300	–	–	–	–	–	–
रामतिल	16 अक्टूबर 2017 से 15 दिसम्बर 2017	पश्चिम बंगाल, राजस्थान	–	–	–	–	–	–	–
खाद्यान्न फसल मक्का	16 अक्टूबर 2017 से 31 दिसम्बर 2017	कर्नाटक, महाराष्ट्र	1425	1190	235	1110	315	1130	295
दलहनी फसल मूगं	16 अक्टूबर 2017 से 15 दिसम्बर 2017	राजस्थान, महाराष्ट्र	5575	4120	1455	4120	1455	4530	545
उड़द	16 अक्टूबर 2017 से 22 दिसम्बर 2017	राजस्थान, उत्तरप्रदेश	5400	3000	2400	3070	2330	3300	2100
तुअर	1 फरवरी 2018 से 30 अप्रेल 2018	महाराष्ट्र, गुजरात	5450	–	–	–	–	–	–

स्त्रोत – कृषि उपज मण्डी नीमच (म.प्र.)

****

बेरोजगारी एवं निर्धनता की समकालीन समस्या का गाँधीवादी विश्लेषण एवं समाधान

सुनील कुमार त्रिपाठी *

शोध सारांश – 'बेरोजगारी और निर्धनता वर्तमान भारत की गंभीर समस्याएँ हैं, जो हमारे अर्थव्यवस्था के लिए गंभीर त्रासदी हैं। गांधी ने इन दोनों ही समस्याओं के कारणों और निवारणों पर अपना मौलिक चिन्तन दिया है। वस्तुत: गांधी जी का हृदय भारत में व्याप्त बेरोजगारी और गरीबी को देखकर बेहद द्रवित था और उन्होंने लिखा कि अपने देश में जो भयानक गरीबी और बेकारी है उसे देखकर उन्हें रोना आता है। गांधी ने मशीनीकरण और औद्योगिकीकरण को निर्धनता और बेरोजगारी का मूल कारण बताया है। उनका मानना था कि मशीनों की जरूरत पश्चिमी देशों के लिए है, जहाँ पर लोग कम और काम ज्यादा है। भारत जैसे देशों में जहाँ पर काम के लिए अनेक लोग खाली बैठे हैं, मशीनरी की जरूरत नहीं है। गाँधी ने श्रम के महत्व की स्थापना करके बेरोजगारी और गरीबी की समस्याओं के समाधान का मौलिक उपाय ढूढ़ा है। उन्होंने गरीबी और बेरोजगारी के समाधान के लिए अपने संरक्षकता के सिद्धान्त की मौलिक दृष्टि प्रस्तुत की है।'

प्रस्तावना – वर्तमान में भारत में शहरी एवं ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में व्यापक रूप से बेरोजगारी विद्यमान है। बेरोजगारी मानवीय संसाधन का अपव्यय है। शहरी क्षेत्रों में मुख्यत: दो प्रकार की बेरोजगारी है– औद्योगिक बेरोजगारी एवं शिक्षित बेरोजगारी। शिक्षित बेरोजगारी की विद्यमानता भारत जैसी नवोदित अर्थव्यवस्था के लिए एक गंभीर त्रासदी है, क्योंकि देश में पूँजी की कमी होने के बाद भी विद्यार्थियों की शिक्षा पर लम्बे समय तक भारी मात्रा में आर्थिक संसाधनों का विनियोग किया जाता है। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात जब उन विद्यार्थियों में विशिष्ट योग्यताओं का सृजन हो जाता है, तब उनकी सेवाओं का उपयोग अवसर की कमी के कारण नहीं किया जा पाता। इस स्थिति में अर्थव्यवस्था को दोहरा नुकसान होता है – प्रथम विद्यार्थियों की शिक्षा पर जो पूँजीगत संसाधनों का निवेश किया गया, परन्तु उससे कोई उत्पादक प्रतिफल प्राप्त नहीं हो पाया तथा द्वितीय, जिस कालावधि में विद्यार्थियों ने अध्ययन किया, यदि उसी समयावधि में वे अध्ययन के स्थान पर दूसरा आर्थिक अर्जन का उत्पादन कार्य कर रहे होते, तो उससे अर्थव्यवस्था के विशुद्ध आर्थिक संसाधनों में विद्यार्थियों के योगदान से अतिरिक्त वृद्धि हुई होती। वस्तुत: यह देश में प्रचलित अनुपयुक्त शिक्षा प्रणाली का परिणाम है। इस संदर्भ में गुन्नार मिर्डल ने ठीक ही कहा है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली से शिक्षित लोग न सिर्फ अल्पशिक्षित हैं अपितु सच पूछा जाए तो इनकी शिक्षा गलत प्रकार की है। जो शिक्षा मानव स्रोतों का विकास नहीं करती वह लोगों को व्यापक स्तर पर रोजगार भी नहीं दिला सकती।[1] गाँधी जी ने इन समग्र स्थितियों को उनके मौलिक रूप में समझा और शिक्षा संबंधी विसंगतियों को दूर करने हेतु उन्होंने सामान्य शिक्षा के साथ–साथ रोजगार संबंधी प्रशिक्षण शिक्षा, शारीरिक शिक्षा एवं नैतिक गुणों के विकास से संबंधित शिक्षा प्रदान करने पर बल दिया है। इससे न सिर्फ शिक्षित बेरोजगारी की समस्या का समूल समाधान हो जाता है, अपितु नैतिक शक्ति से युक्त स्वस्थ, उदार, कार्य–निपुण एवं चरित्रवान नागरिकों के माध्यम से राष्ट्र में एक नयी ऊर्जा एवं शक्ति का संचार भी होता है। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्य रूप से मौसमी बेरोजगारी एवं प्रच्छन्न बेरोजगारी पायी जाती है। गाँधी जी ने बेरोजगारी के इन स्वरूपों के समाधान के लिये ग्रामोद्योगों को अपनाने पर बल दिया है।

गाँधी जी ने ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने हेतु एवं आरोग्यता में वृद्धि करने हेतु मशीनों के स्थान पर मानवीय श्रम के प्रयोग पर बल दिया है। इस संदर्भ में उनका यह दृष्टिकोण पूर्ण यथार्थ है कि 'हिन्दुस्तान की सभ्यता पश्चिम की सभ्यता से निराली है। जहाँ जमीन ज्यादा हो और लोग कम, और जहाँ जमीन कम हो और लोग ज्यादा, उसमें तो फर्क होना ही चाहिए। मशीनें उन अमेरिका वालों के लिए जरूरी होगी ही जहाँ लोग कम और काम ज्यादा है। किन्तु हिन्दुस्तान में जहाँ एक काम के लिए अनेक लोग खाली है, मशीनरी की जरूरत नहीं और न इस प्रकार भूखों मरकर समय बचाना ही ठीक है। यदि हम खाना भी यन्त्र द्वारा खाए तो मैं समझता हूँ कि आप कभी वह पसंद न करेंगे। इसीलिए हमें उस खाली या बेकार जनता का उपयोग कर लेना चाहिए।'[2] प्रोफेसर जे.के.गालब्रेथ के इस मत से गाँधी जी के मत की पुष्टि होती है कि 'बेकारी के साथ जुड़े हुये अधिक उत्पादन की अपेक्षा सब लोगों को पूरा काम देना अधिक वांछनीय है।'[3]

आर्थिक लाभ, आरोग्य की वृद्धि एवं समय का सदुपयोग करने के दृष्टिकोण से गाँधी जी का मत था कि दैनिक जीवन–चर्या के जो कार्य शरीर–श्रम द्वारा हो सकते हैं, उन कार्यों को मशीनों के स्थान पर शरीर–श्रम द्वारा ही किया जाना चाहिए। उदाहरण स्वरूप मशीनों से पिसाकर जिस आटे का उपयोग किया जाता है वह नि:सत्व होता है। आटा तो रोज घर की चक्की में पीसकर ताजा खाना चाहिये। घर में आटा पीसने के दो फायदे हैं, प्रथम – हमें शुद्ध शक्तियुक्त भोजन खाने को प्राप्त होता है। जिससे हम दीर्घजीवी हो सकते हैं, और द्वितीय, इस बहाने व्यायाम हो जाएगा जिससे स्वास्थ्य लाभ प्राप्त हो सकेगा और साथ ही मशीन से पिसवाने के लिए दिए जाने वाले पैसों की भी बचत होगी। इससे आम के आम और गुठली के दाम भी मिल जाते हैं। यह अर्थशास्त्र की बात नहीं, अनुभव की बात है।[4]

भारत में व्याप्त बेरोजगारी एवं गरीबी को देखकर गाँधी जी का हृदय द्रवित था। इस संदर्भ में गाँधी जी ने लिखा है, 'अपने देश में जो भयानक

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अ. प्र. सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

गरीबी और बेकारी है, उसे देखकर मुझे रोना आया है। लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इस स्थिति के लिए हमारी अपनी उपेक्षा और अज्ञान ही जिम्मेदार है। शरीर-श्रम करने में जो गौरव है, उसे हम नहीं जानते। उदाहरण के लिये मोची जूते बनाने के सिवा कोई दूसरा काम नहीं करता, वह ऐसा समझता है कि दूसरे काम उसकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है। यह गलत ख्याल दूर होना चाहिए। उन सब लोगों के लिए जो अपने हाथों और पांवों से ईमानदारी के साथ मेहनत करना चाहते हैं, हिन्दुस्तान में काफी धंधा है। ..... ईमान की कमाई करने की इच्छा रखने वाले को चाहिए कि वह किसी भी काम को नीचा न माने। जरूरत इस बात की है कि ईश्वर ने हमें जो हाथ-पांव दिए हैं, उसका उपयोग करने के लिए हम तैयार रहें।'[5] वस्तुत: गाँधी जी का यह दृष्टिकोण पूर्ण सत्य है तथा सरकारी नीति से इतर यदि वर्तमान में देश में बेरोजगारी की समस्या का समाधान करना है, तो समाज को श्रम-गौरव से संबंधित वास्तविक धारणा को, जिसे गाँधी जी द्वारा प्रस्तुत किया गया, अपनाना चाहिए।

निर्धनता एक अभिशाप है। किन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि आज हमारे देश की जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा निर्धनता की स्थिति में जीवन-यापन करने को विवश है। योजना आयोग द्वारा जारी किए गए आंकड़ों के अनुसार 2011-12 में देश में 21.9 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा में नीचे थी।[6] नोबेल पुरस्कार विजेता प्रसिद्ध कल्याणवादी अर्थशास्त्री प्रोफेसर अमर्त्यसेन का यह मानना पूर्ण यथार्थ है कि यह जानना ही काफी नहीं है कि कितने लोग गरीब है, अपितु यह जानना भी महत्वपूर्ण है कि गरीब लोग कितने गरीब है।[7] संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की वर्ष 2013 की मानवता विकास रिपोर्ट के अनुसार 2005-06 में भारत की 53.7 प्रतिशत जनसंख्या (अर्थात् 61 करोड़ से अधिक व्यक्ति) बहुआयामी निर्धनता से पीड़ित थे। इसके अतिरिक्त भारत में 28.6 प्रतिशत जनसंख्या गंभीर निर्धनता में जीवन-यापन कर रही है।[8] भारतीय योजनाकारों ने गरीबी निवारण के लिए 'रिसन प्रभाव' पर अपनी निर्भरता दिखायी।[9] लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था में रिसन प्रभाव गरीबी निवारण हेतु कारगर साबित नहीं हुआ है।

महात्मा गाँधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान देश के दारुण आर्थिक दारिद्र्य को उसके मौलिक रूप में देखा।[10] इसीलिए उन्होंने कहा, 'गरीबों के लिये रोटी ही अध्यात्म है। भूख से पीड़ित उन लाखों करोड़ों लोगों पर किसी और चीज का प्रभाव पड़ ही नहीं सकता। कोई दूसरी बात उनके हृदयों को छू ही नहीं सकती। लेकिन उनके पास आप रोटी लेकर जाइए और वे आपको ही भगवान की तरह पूजेंगे। रोटी के सिवा उन्हें और कुछ सूझ ही नहीं सकता।'[11] निर्धनों से एकाकार की इसी अनुभूति को पहले स्वामी विवेकानंद ने इन शब्दों में प्रस्तुत किया 'मैं सारे भारत में घूम चुका हूँ ..... पर हे बन्धुओं यह मेरे लिए दारूण कष्ट था, मैंने जनसाधारण की भयंकर निर्धनता और पीड़ा को अपनी आँखों से देखा और मैं अपने आँसू न रोक सका। अब मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि बिना पहले उनकी गरीबी और कष्ट दूर किए, उनमें धर्म का प्रचार करना व्यर्थ है।'[12] ऐसे विपन्न लोगों में ही गाँधी जी ने अपने ईश्वर को पाया और इन लोगों की सेवा करने को ही अपने जीवन का ध्येय बनाया।[13] वस्तुत: गाँधी जी देश की भीषण गरीबी को देखकर भूखे रहकर आत्महत्या करने की इच्छा का संवरण इस विश्वास के आधार पर ही कर पाए कि भारत में इस विनाशकारी गरीबी से उबरने की सामर्थ्य है।[14]

महात्मा गाँधी ने निर्धनता-निवारण का रामबाण उपाय मानव समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। उन्होंने बताया कि यदि मनुष्य परिग्रह करना छोड़ दे तो गरीबी और आर्थिक असमानता का अस्तित्व ही समाप्त हो जाए। अमीरों के यहाँ उनको न चाहिए वैसी चीजें भरी पड़ी होती हैं, वे लापरवाही से खो जाती हैं, बिगड़ जाती हैं, जब कि इन्हीं चीजों की कमी के कारण करोड़ों लोग भटकते हैं, भूखों मरते हैं, ठंड से ठिठुर जाते हैं। सभी व्यक्ति यदि अपनी जरूरत की चीजों का ही संग्रह करें, तो किसी को तंगी महसूस न हो और सबको संतोष हो। वस्तुत: सही सुधार, सच्ची सभ्यता का लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है अपितु सोच समझकर और अपनी इच्छा से उसे कम करना है। ज्यों -ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं, त्यों त्यों सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ता जाता है, सेवा की शक्ति बढ़ती जाती है।[15] गाँधी जी ने गरीबी निवारण हेतु मानवीय संवेदना की पराकाष्ठा की स्थिति को समाज द्वारा अपनी स्वाभाविक स्थिति में अपनाने का आह्वान करते हुए कहा है कि 'सुनहला नियम तो यह है कि जो चीज लाखों लोगों को नहीं मिल सकती, उसे लेने से हम भी दृढ़ता पूर्वक इंकार कर दें। त्याग की यह शक्ति हमें कहीं से एकाएक नहीं मिल जाएगी। पहले तो हमें ऐसी मनोवृत्ति पैदा करनी चाहिए कि हमें उन सुख-सुविधाओं का उपयोग नहीं करना है, जिनसे लाखों लोग वंचित है। और उसके बाद तुरन्त ही अपनी इस मनोवृत्ति के अनुसार हमें शीघ्रतापूर्वक अपना जीवन बदलने में लग जाना चाहिए।'[16] 'वास्तव में गाँधी जी का यह यथार्थ दृष्टिकोण है । ईसा, मुहम्मद, बुद्ध, नानक, कबीर, चौतन्य, शंकर, दयानंद, रामकृष्ण आदि ऐसे व्यक्ति थे, जिनका लाखों करोड़ों व्यक्तियों पर गहरा प्रभाव पड़ा और जिन्होंने उनके चरित्र का निर्माण किया। वे संसार में आये तो उससे संसार समृद्ध हुआ है। और वे सब ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने गरीबी को जान-बूझकर अपनाया।'[17] ये सभी संसार के आदर्श हैं और आज हमें इन आदर्शों के वचनों को जीवन में उतारकर गरीबी के कलंक से देश को मुक्त कर देना चाहिए और इस प्रकार मानवता के प्रति अपने सच्चे कर्तव्य का पालन करना चाहिए। इस संदर्भ में एक आपत्ति यह की जाती है कि इस आदर्श विचार को जन सामान्य द्वारा पूर्ण रूप से व्यावहारिक जीवन में अपनाना संभव नहीं हो पाएगा। वस्तुत: हम सभी मनुष्य हैं और अपने बहन-भाई तथा अन्य गरीब मनुष्यों के प्रति अपने कर्तव्य का स्मरण करते हुए हमें अपनी आन्तरिक मानसिक शक्ति पर विश्वास रखना चाहिए और साहसपूर्वक जिस मात्रा में आदर्श स्थिति की ओर ईमानदारी पूर्वक बढ़ना संभव हो, उस मात्रा में हमें बढ़ने का प्रयास अवश्य करना चाहिए। महात्मा गाँधी ने मानव समाज के समक्ष अर्थशास्त्र का एक अभिनव सिद्धान्त प्रस्तुत किया - 'संरक्षकता का सिद्धान्त। आधुनिक काल में संरक्षकता के सिद्धान्त का सर्वप्रथम दर्शन स्वामी विवेकानंद जी के विचारों में होता है, लेकिन उनके द्वारा राजनीतिक संदर्भ में संरक्षकता के सिद्धान्त का प्रस्तुतीकरण किया गया था। गाँधी जी ने आर्थिक क्षेत्र में संरक्षकता के सिद्धान्त को प्रस्तुत करके तथा अपने व्यक्तिगत जीवन को इसका ज्वलंत उदाहरण बनाकर मानव समाज के समक्ष एक नया आदर्श प्रस्तुत किया तथा समाज को एक नयी दृष्टि से सम्पन्न किया। इस सिद्धान्त में गाँधी जी ने बताया कि यदि किसी व्यक्ति को विरासत में प्रचुर सम्पत्ति मिल गयी हो, तो उसे जानना चाहिए कि वह सम्पत्ति उसकी नहीं है, बल्कि उसका तो उस सम्पत्ति पर इतना ही अधिकार है कि जिस तरह करोड़ों व्यक्ति अपना जीवन-निर्वाह करते हैं, इसी तरह वह भी सम्मान के साथ अपनी गुजर भर करें। उसकी शेष सम्पत्ति पर राष्ट्र का हक है और उसी के हितार्थ उसका प्रयोग होना आवश्यक है।[18] ईश्वर ने उसे उस सम्पत्ति का सिर्फ 'ट्रस्टी' बनाया है, और उसे अपने ट्रस्टी के दायित्व का ईमानदारी से पालन करना चाहिए।

जीवन के वास्तविक धरातल पर देखा जाए तो प्रत्येक मनुष्य अपने पास उपस्थित सम्पत्ति का कुछ समय (वर्षो) के लिए मात्र ट्रस्टी ही होता है। उसकी इहलीला के सम्पन्न होने के पश्चात् कोई अन्य व्यक्ति इसका ट्रस्टी बन जाता है किन्तु अज्ञानवश मनुष्य स्वयं को उस सम्पत्ति का स्वामी मान बैठता है। वस्तुत: गाँधी का संरक्षकता का सिद्धान्त अद्वैत–वेदान्त के दर्शन की निष्पत्ति है जिसका प्रतिपादन विवेकानंद के गुरु श्री रामकृष्ण के विचारों में हुआ है।[19] 'श्री राम कृष्ण देव के इस कथन से भी गाँधी जी के मत की पुष्टि होती है कि 'जब तक उपाधियाँ है, तभी तक अज्ञान है। मैं पंडित हूँ, मैं ज्ञानी हूँ, मैं धनी हूँ, मैं मानी हूँ मैं कर्ता हूँ पिता हूँ, गुरू हूँ – यह सब अज्ञान से होता है। मैं यंत्र हूँ, तुम यंत्री हो–यह ज्ञान है। यह भाव आने पर सब उपाधियाँ दूर हो जाती है। काठ के जल जाने पर न शब्द होता है, न ताप रहता है। सब ठंडा हो जाता है। शांति:, शांति: शांति:।' गाँधी जी का ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त एक व्यावहारिक सिद्धान्त है और मनुष्यों को अपने जीवन में रहते ही इसके अनुसार आचरण करना चाहिए अन्यथा जीवन की इतिश्री के उपरान्त प्रकृति ही इस नियम का पालन करवा लेती है। गाँधी जी का यह कथन पूर्णत: सत्य है कि यदि धनी लोग इस सिद्धान्त के अनुसार आचरण नहीं करते हैं, तो इससे धनी व्यक्तियों की कमजोरी ही साबित होती है। इससे यह स्पष्टत: प्रमाणित होता है कि धनिक वर्ग का लोभ, स्वार्थ एवं संकुचित दृष्टिकोण उनके विवेक पर हावी है। वस्तुत: आर्थिक समानता के लिए अहिंसा के साथ किसी दूसरे सिद्धान्त का मेल ही नहीं बैठता है। अहिंसक मार्ग की विशेषता यह है कि यदि अन्यायी अपना अन्याय दूर नहीं करता तो वह स्वयं ही अपना नाश कर लेता है। क्योंकि अहिंसक असहयोग के कारण या तो वह अपनी गलती देखने और सुधारने के लिए बाध्य हो जाता है, या वह बिलकुल अकेला पड़ जाता है।[20] महात्मा गाँधी उत्तराधिकार में सम्पत्ति हस्तान्तरण के पक्ष में नहीं थे। इस संबंध में उन्होंने कहा है, धनवानों के लडकों के बारे में भी मुझे यही कहना है कि मेरा आदर्श तो यह है कि धनवान लोग अपनी संतान के लिए धन के रूप में कुछ न छोड़ें। हाँ, उनको अच्छी शिक्षा दें, रोजगार धन्धे के लिए तैयार करें और स्वावलम्बी बना दें।[21] इस प्रकार गाँधी जी ने संरक्षक के रूप में पूँजीपति के लिए राष्ट्र के लिए अपने कर्तव्य निर्वहन के साथ ही सच्चे अभिभावक के रूप में अपनी संतति के प्रति उत्तरदायित्व निभाने का मार्ग सुझाया है। राज्य की मान्य स्थितियों में गाँधी जी संरक्षक को अपना उत्तराधिकारी चुनने का अधिकार प्रदान करते हैं। गाँधी जी संरक्षकता के सिद्धान्त की सफलता के लिए जनमत की शक्ति को जागरूक रहने की प्रेरणा देते हैं।[22] यदि जन सामान्य इतना जागरूक हो जाय कि वह पूँजीपति से अहिंसात्मक रूप से यह निवेदन करे कि वह सम्पत्ति के स्वामी होने के बजाय संरक्षक के रूप में अपने दायित्वों का निवर्हन करे, तो पूँजीपति उस जाग्रत जनता के विनयपूर्वक निवेदन को अस्वीकार नहीं कर सकता।

गाँधी जी ऐसी जड़ समानता का निर्माण करना नहीं चाहते थे, जिसमें कोई व्यक्ति अपनी योग्यताओं का पूरा उपयोग ही न कर सके। गाँधी जी मानते थे कि लोगों को ईमानदारी पूर्वक अपनी प्रतिभा का पूर्ण उपयोग करते हुए धन कमाना चाहिए, लेकिन उनका उद्देश्य उस धन को सभी के कल्याण हेतु समर्पित कर देने का होना चाहिए। गाँधी जी को यह विचार मानवता को शाश्वत संदेश प्रदान करने वाली श्रीमद्भागवद्गीता से प्राप्त हुआ है।[23] यह विचार मानवता के संरक्षण, पोषण एवं संवर्धन का एक महत्वपूर्ण आधार है। यह सिद्धान्त एक सर्वकालिक एवं शाश्वत सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त को अपनाकर मनुष्य पहले से अधिक कार्यशील, सुखी एवं समृद्ध हो सकता है, लेकिन इसे अपनाने के लिए नैतिक बल अपेक्षित है। गाँधी जी के योगदानों एवं विचारों से प्रभवित होकर अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने कहा कि साठ वर्षों से ज्यादा हो गये हैं लेकिन दुनियाँ आज भी उनके आदर्शो से रोशन हो रही है।[24]

भारत सहित आज समूचे विश्व में अलगाववादी प्रवृत्तियाँ बलवती हो रही है। हिंसा पर आधारित इन अलगाववादी प्रवृत्तियों का मूल कारण आर्थिक असमानता एवं आर्थिक शोषण की प्रक्रिया के विरूद्ध आक्रोश है। भारत में भी हिंसा पर आधारित नक्सलवादी आन्दोलन देश के कई राज्यों में विस्तारित है। इनमें पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, झारखण्ड, बिहार, छत्तीसगढ, मध्यप्रदेश, तेलंगाना, आन्ध्रप्रदेश,आदि राज्यों के कई जिले नक्सली हिंसा से प्रभावित है। इन राज्यों में इस आन्दोलन के फैलने का प्रमुख कारण समाज में संसाधनों के स्वामित्व में व्याप्त आर्थिक असमानता तथा आर्थिक शोषण की बदस्तूर जारी निर्मम प्रक्रिया है। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों का आर्थिक विकास अवरूद्ध हुआ है। इन अशांत क्षेत्रों में पूँजीपति अपनी पूँजी का निवेश करके विभिन्न उत्पादक इकाइयाँ स्थापित करना नहीं चाहते हैं। इन क्षेत्रों मे लोगों के आर्थिक जीवन में भीषण गरीबी के साथ साथ आर्थिक जड़ता विद्यमान है। इस समस्या के समाधान के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा किए जाने वाले प्रयास प्रभावी साबित नहीं हुए हैं। लेकिन इस समस्या एवं इसी प्रकार की वैश्विक स्तर पर विशेषत: अफ्रीकन देशों एवं लेटिन अमेरिकन देशों में फैली समस्याओं के स्थायी समाधान का उपाय हमें गाँधी जी के विचारों में प्राप्त होता है। गाँधी जी ने बताया कि आय एवं धन का असमान वितरण एवं शोषण की प्रवृत्ति हिंसा है। हिंसा पर आधारित व्यवस्था कभी भी स्थायी नहीं हो सकती है। इस लिए मनुष्य को अंहिसा के शाश्वत नियम के आधार पर अपने आर्थिक जीवन का गठन करना चाहिए। इस हेतु किसी व्यक्ति को अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जितनी वस्तुओं की आवश्यकता है, उतनी ही वस्तुएँ रखनी चाहिए, उससे ज्यादा नहीं। तथा ऐसी वस्तुओं को भी नहीं रखनी चाहिये जिनकी व्यक्ति को तात्कालिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार हमें अपनी जरूरतों का नियमन करना चाहिए और स्वेच्छा पूर्वक अभाव भी सहना चाहिए, जिससे भीषण गरीबी से त्रस्त हमारे बहन–भाइयों को कपड़ा और अन्न प्राप्त हो सके।[25]

स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् 1965 ई. के भारत और पाकिस्तान के युद्ध के समय जब देश में खाद्यान्न की भारी कमी हो गयी तब तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री जी के आह्वान पर देश के करोड़ों नागरिक दिन भर में केवल एक बार भोजन करते थे ताकि सभी को भोजन की प्राप्ति अधिकतम मात्रा में सुनिश्चित हो सके। यह गाँधी जी के विचारों का संकट के समय अधिकांश देशवासियों द्वारा प्रयोग का अत्यन्त महत्वपूर्ण उदाहरण है। इससे यह प्रमाणित होता है कि गाँधी जी के आर्थिक विचार केवल सैद्धान्तिक ही नहीं अपितु पूर्ण व्यावहारिक है और यदि वे संकटकालीन स्थितियों में भी उपयोगी है तो सामान्य आर्थिक स्थितियों में वे बहुत अधिक लाभदायक साबित होगें। गाँधी जी ने बताया कि आत्मत्याग का स्वाभाविक क्रम यह होता है कि व्यक्ति समाज के लिए त्याग करता है समाज जिले के लिए त्याग करता है जिला प्रान्त के लिए त्याग करता है, प्रान्त राष्ट्र के लिये त्याग करता है और राष्ट्र सारे जगत के लिए त्याग करता है।[26] गाँधी जी की अहिंसा, शांति एवं त्याग की नीति पूर्ण प्रासंगिक है। यह बात अर्नाल्ड टॉयनवी के इस कथन से भी प्रमाणित होती है, 'वर्तमान युग में हमारा भय और हमारी अन्तरात्मा दोनों हमसे ऐसी नीति अपनाने का तकाजा करते हैं,

जिसका अनुसरण करने की प्रेरणा सम्राट अशोक को अपने समय में केवल अन्तरात्मा से प्राप्त हुई थी।'[27]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मिर्डल, गुन्नार, एशियन ड्रामा, खण्ड–II (न्यूयार्क 1966 ई.), पृ.–1647
2. गाँधी, मोहनदास करमचंद, मेरे सपनों का भारत, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद–14, 2006 ई.,पृ.–52
3. वही, पृ.–52
4. गाँधी, मोहनदास करमचंद, पूर्वोक्त 14, पृ.–53
5. वही, पृ.–55
6. प्रतियोगिता दर्पण, भारतीय अर्थव्यवस्था अतिरिक्तांक, आगरा–2, 2014 ई., पृ.–80
7. मिश्र, एस.के. तथा पुरी, वी.के., पूर्वोक्त 03, पृ.–193
8. वही, पृ.–197
9. अनेक अर्थशास्त्रियों ने यह तक दिया है कि आर्थिक संवृद्धि का लाभ स्वत: रिस–रिस कर जनसंख्या के सभी वर्गों को प्राप्त हो जाता है जिससे निर्धनता अपने आप कम हो जाती है। इसे 'रिसन प्रभाव' कहा जाता है – वही, पृ.–197
10. चंपारन के नील आंदोलन के दौरान एक बार गाँधी जी कस्तूरबा के साथ मितीहरवा गाँव के पास छोटी सी बस्ती में गए। वहाँ की कुछ महिलाए एकदम ही गंदी–घिनौनी दीख रही थीं। गाँधी जी ने कस्तूरबा से कहा, 'इन औरतों से कहो कि कुछ सफाई से रहें। कपड़े धो लिया करें।' वे औरतें कस्तूरबा कोअपने झोंपड़े में ले गयीं और अंदर के हालात बताकर कहने लगीं, ' देखिए, यहाँ कोई अलमारी या आला नहीं है जहाँ हमने कोई कपड़े रखे हों। एकमात्र साड़ी हमारे बदन पर है। महात्मा गाँधी जी से कहिए कि वे हमें दूसरी साड़ी दिलवा दें। हम वादा करते हैं कि कभी गंदे नहीं रहेंगे।' एक दूसरे गाँवमें दो औरतें झोंपड़ी में से निकल ही नहीं रहीं थीं। मामला क्या था, यह पता लगाने हेतु कस्तूरबा झोंपड़ी में चली गयीं। अंदर दो स्त्रियाँ दिगम्बर अवस्था में बैठी हुई थीं। उनके पास तन ढँकने को कपड़ा तक नहीं था कि वे बाहर सड़क पर निकल सकती थीं। घर का कामकाज भी रात के अंधियारे में कर लेती थीं ताकि उनके शरीर की लाज बची रहे। यह थी गरीबी की पराकाष्ठा मगर इस स्थिति में भी सभ्यता एवं सौन्दर्य का बोध जीवित था। इस दारूण निर्धनता को देखकर गाँधी जी को मूँगफली और खजूर का आहार भी महँगा लगने लगा थ और ऐसा स्वादिष्ट भोजन करने में संकोच होता था। उन गरीबों के स्तर की सादगी अपनाने के इरादे से गाँधी जी उन दिनों मुट्ठीभर चावल और बिना नमक उबला करेला खाकर काम करते थे। यह खुराक सस्ती थी और स्वास्थ्यकर भी थे। देवदास गाँधी कई आर चावल और करेला साथ ही उबाल देते थे – कुलकर्णी, सुमित्रा गाँधी, महात्मा गाँधी : मेरे पितामह (आजादी के नीतिकार), खण्ड 2, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2009 ई., पृ.–35–36
11. गाँधी, मोहनदास करमचंद, पूर्वोक्त 14, पृ.–56
12. रोलां, रोमां, विवेकानंद की जीवनी, अद्वैत आश्रम (प्रकाशन विभाग), कोलकाता, अक्टूबर 2010 ई., पृ.–27
13. इस संबंध में गाँधी जी ने कहा है, 'हमारे लाखों मूक देशवासियों के हृदयों में जो ईश्वर निवास करता है, उसके सिवा मैं किसी दूसरे ईश्वर को नहीं जानता। वे उसकी उपस्थिति का अनुभव नहीं करते, मैं करता हूँ। और मैं सत्यरूप ईश्वर या ईश्वररूप सत्य की पूजा इन मूक देशवासियों की सेवा के द्वारा ही करता हूँ।'– वही, पृ.–58
14. गाँधी जी के शब्दों में, 'भूखा रहकर आत्महत्या करने की इच्छा का संवरण मैं अपने इसी विश्वास के कारण कर पाया हूँ कि भारत जागेगा और यह कि उसमें इस विनाशकारी गरीबी से अपना उद्धार कर सकने की सामर्थ्य है। यदि इस संभावना में मेरा विश्वास न हो, तो मुझे जीने में कोई दिलचस्पी न रहे।'– वही, पृ.–57
15. वही, पृ.–58
16. वही, पृ.–59
17. वही, पृ.–59
18. वही, पृ.–71
19. कथन देना है, फिर– कोहली, नरेन्द्र, तोड़ो कारा तोड़ो (साधना), भाग–2, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006 ई., पृ.–87
20. गाँधी, मोहनदास करमचंद, पूर्वोक्त 14, पृ.–73–74
21. पटेल, राजेश, महात्मा गाँधी के आर्थिक सोच एवं विचार, रावत प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2014 ई., पृ.–57
22. वही, पृ.–57
23. गाँधी, मोहनदास करमचंद, पूर्वोक्त 14, पृ.–74
24. ओबामा, बराक, अमेरिकी राष्ट्रपतिख उद्धृत दैनिक जागरण, लखनऊ, 07 फश्रवरी 2011 ई.
25. गाँधी, मोहनदास करमचंद, पूर्वोक्त 14, पृ.–75
26. गाँधी, मोहनदास करमचंद, ग्राम स्वराज्य, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, अप्रैल 2007 ई., भूमिका,पृ.–9
27. वही, पृ.–10

****

किसानों की समृद्धि के लिए बनायी गयी योजनाओं का अध्ययन

डॉ. शक्ति जैन *

प्रस्तावना – भारत किसानों का देश है, जहां ग्रामीण आबादी का अधिकतम अनुपात कृषि पर आश्रित है। केन्द्र सरकार के समक्ष देश की लगभग 49 प्रतिशत आबादी की आर्थिक हालत बदलने की चुनौती है वर्तमान सरकार ने नवभारत का सपना संजोया है, भारत के समृद्ध, स्वस्थ्य, शिक्षित और हरे-भरे राष्ट्र के रूप में देखना वर्तमान सरकार का महत्वाकांक्षी दृष्टिकोण है। हमारी कृषि प्रधान अर्थव्यवस्थाए इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए मुख्य मुद्दा बना हुआ है, कृषि लगभग 55 प्रतिशत श्रमशक्ति के जीवनयापन का जरिया है तथा राष्ट्रीय जीडीपी में 14 प्रतिशत कृषि का योगदान भी है इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने पिछले तीन वर्षो में कृषि क्षेत्र को उच्च प्राथमिकता दी है तथा कई सुधार लागू किए हैं और इसे बढावा देने के लिए भारत सरकार ने आजादी की 75 वीं वर्षगांठ पर वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दुगुना करने की प्रतिबद्धता जतायी है। लेकिन नेशनल सैंपल सर्वे के 70 वें राउण्ड के मुताबिक देश में एक किसान परिवार की औसत आय 6427 रूपये प्रतिमाह है। यह आय कृषि और अन्य कृषि सम्बन्धी व्यवसाय को मिलाकर है। केवल कृषि से होने वाली आय का औसत 3091 रूपये प्रतिमाह ही है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में केन्द्र सरकार किसानों की आय बढ़ाने के संकल्प के साथ आगे बढ़ रहा है। कृषि के विकास से किसानों का विकास तथा इससे ही गांवों का विकास जुड़ा है। अत: किसानों की समृद्धि व कृषि विकास के लिए केन्द्र सरकार द्वारा निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। किसानों की समृद्धि के लिए वर्तमान में कई योजनाए चल रही हैं जिनमें प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना, परंपरागत कृषि विकास योजना, कृषि वानिकी और नीमलेपित यूरिया योजना, राष्ट्रीय कृषि बाजार, डिजिटल इंडिया (मोबाइल एप किसानों के लिए शुरू किया गया) किसान चैनल, कृषि मौसम विज्ञान सेवा, राष्ट्रीय गोकुल मिशन तथा पशुपालन, डेयरी और पशु चिकित्सा शिक्षा मत्स्य पालन, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान को प्रोत्साहन, कृषि विज्ञान केन्द्र, मेरागांव मेरा गौरव, दीनदयाल अन्त्योदय मिशन आदि है तथा म.प्र. सरकार द्वारा प्रारंभ की गयी भावान्तर योजना भी महत्वपूर्ण योजना है।

इस शोध आलेख में प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का विस्तृत रूपरेखा तथा अन्य योजनाओं का संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की जा रही है। यह सभी योजनाए किसानों की संमृद्धि व गांवों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई) – यह योजना एक समग्र योजना है सरकार की सबसे महत्वाकांक्षी योजनाओं में प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस योजना की शुरूआत 1 जुलाई 2015 से हुई। इस योजना का मुख्य उद्धेश्य हर खेत को पानी पहुंचाना है तथा खेतों में ही जल को इस्तेमाल करने की दक्षता बढ़ाना ताकि पानी के अपव्यय को कम किया जा सके एवं सिचाई में निवेश में एकरूपत लाना है। प्रधानमंत्री जी का मानना है कि जब तक हर खेत को पानी नहीं मिलेगाा तब तक न तो भरपूर उत्पादन हो सकता है न ही किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है। इस योजना में कृषि योग्य क्षेत्र का विस्तार किया जाएगा क्योंकि देश में अभी भी कृषि का एक बड़ा भाग सिंचाई से वंचित है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार विश्व की कुल भूमि का 2.5 हिस्सा भारत के पास है तथा विश्व की लगभग 17 प्रतिशत जनसंख्या भारत में है भारत में कुल भूमि क्षेत्रफल लगभग 329 मिलियन हेक्टेयर है। इसमें 144 मिलियन हेक्टेयर में खेती होती है लगभग 185 मिलियन हेक्टेयर भूमि बंजर है। 144 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्यस भूमि में से लगभग 65 प्रतिशत में सिंचाई सुविधा नहीं है 47.25 मिलियन हेक्टेयर भूमि को परती भूमि के रूप में चिन्हित किया गया है जो देश की कुल भू-क्षेत्र का 14.19 प्रतिशत है। अत: इस दृष्टि से इस योजना का बहुत अधिक महत्व है।

वर्तमान में चल रही तीन योजनाएं – त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम, एकीकृत जल ग्रहण प्रबंधन कार्यक्रम और खेतों में जल प्रबंधन योजनाओं का विलय कर प्रधानमंत्री कृषि सिचाई योजना बनायी गयी है। हर खेत तक पानी पहुंचाने, सही सिंचाई और पानी को बचानें की तकनीक अपनाना, हर बूंद अधिक फसल के उद्धेश्य से किसानों की समृद्धि की यह महत्वपूर्ण योजना है। वर्षा आधारित कृषि भूमि के अतिरिक्त छह लाख हेक्टेयर क्षेत्र का सिंचाई के अन्तर्गत लाने के लिए योजना के कार्यान्वयन में पहले एक वर्ष में 5300 करोड़ रूपये का आवंटन किया गया है। इसके पहले सिंचाई क्षेत्र में छह दशकों के निवेश के बावजूद सुनिश्चित सिंचाई के तहत 142 मिलियन हेक्टेयर कृषि भूमि में से केवल 45 प्रतिशत ही कवर हो पाया है लेकिन प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना 'हर खेत को पानी' देने पर ध्यान केन्द्रित करने की दिशा में एक सटीक प्रयास है। इसके अन्तर्गत मूल स्थान पर जल संरक्षण के जरिये किफायती लागत और बांध आधारित बड़ी परियोजनाओं पर भी ध्यान दिया जाएगा। भारत की अगले पांच वर्षो 2015-16 से 2019-20 में सिंचाई योजनाओं पर 50 हजार करोड़ खर्च करने की योजना है। अब तक 56226 जल संचयन संरचनाएं और 113976 हेक्टेयर की सिंचाई क्षमता सृजित की गई। 675 जिला सिंचाई योजनाए तैयार की गई। वित्त वर्ष 2014-17 के दौरान राज्यों को कुल 4509 करोड़ रूपये जारी किये गये और सूक्ष्म सिंचाई योजना के अन्तर्गत 18.38 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को लाया गया तथा वर्ष 2017-18 के लिए 'प्रति बूंद अधिक फसल' के अन्तर्गत 3400 करोड़ रूपये की राशि आवंटित की गयी। इस योजना को

*प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

कमान क्षेत्र विकास सहित दिसम्बर 2019 तक चरणबद्ध तरीके से 76.03 लाख हेक्टेयर के क्षमता के साथ 99 वृहद और मध्य सिंचाई परियोजना को पूर्ण करने के उद्देश्य से मिशन मोड में कार्यान्वित किया जा रहा है। मनरेगा के तहत वर्ष 2016-17 में वर्षा पोषित क्षेत्रों में 5 लाख तालाबों और कुओं की व्यवस्था का भी प्रावधान रखा गया है।

इस योजना के लिए मौजूदा वित्त वर्ष में 1000 करोड़ रूपये का बजटीय आवंटन किया गया है तथा हर खेत तक सिंचाई जल पहुंचाने के लिए योजनाएं बनाने व उनके कार्यान्वयन की प्रक्रिया में राज्यों को अधिक स्वायत्ता व धन के इस्तेमाल की लचीली सुविधा दी गयी है इस योजना में केन्द्र 75 प्रतिशत अनुदान देगा और 25 प्रतिशत खर्च राज्यों के जिम्में होगा। इस तरह कृषि के समग्र विकास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण योजना है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना – सरकार की किसानों के हित के लिए चल रही योजनाओं में से एक महत्वपूर्ण महत्वाकांक्षी योजना प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना है। 13 जनवरी 2016 को इस योजना का बड़ा तोहफा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के द्वारा किसानों को दिया गया। इस योजना में बहुत कम प्रीमियम पर किसानों की फसल का बीमा किया जाता है। यह योजना उन किसानों पर प्रीमियम का बोझ कम करने में मदद करेगी जो अपनी खेती के लिए ऋण लेते हैं।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के महत्वपूर्ण बिन्दु –

- इस योजना की मुख्य बात यह है कि इस योजना में खाद्य फसलें, तिलहन, वार्षिक, व्यवसायिक या साग सब्जी का बीमा होता है जबकि पहले चल रही बीमा योजना में कुछ ही फसलें और तिलहन का बीमा होता था।
- इस योजना में खरीफ की फसल में 2 प्रतिशत प्रीमियम, रबी की फसल में 1.5 प्रतिशत तथा वार्षिक वाणिज्यिक एवं वागवानी फसलों में 5 प्रतिशत प्रीमियम रखा गया है।
- इस योजना में 33 प्रतिशत फसल नष्ट होने पर फसल का बीमा मिलता है जबकि पहले चल रही बीमा योजना में किसानों की 50 प्रतिशत फसल नष्ट होने पर मुआवजा मिलता था।
- इस योजना में बीमित किसान यदि प्राकृतिक आपदा के कारण बोनी नहीं कर पाता है, तो उस किसान को भी दावा राशि मिलेगी।
- ओला, जल भराव और लैण्ड स्लाइड जैसी आपदाओं को स्थानीय आपदा माना जाएगा और इस योजना में इसे स्थानीय हानि मानकर प्रभावित किसानों का सर्वे कर उन्हें दावा राशि प्रदान की जाएगी।
- पोस्ट हार्वेस्ट नुकसान भी इस योजना में शामिल है अर्थात् फसल कटने के 14 दिन तक यदि फसल खेत में है और उस दौरान कोई आपदा आ जाती है, तो किसानों को दावा राशि प्राप्त हो सकेगी।
- योजना में टेक्नालॉजी का उपयोग किया जाएगा जिससे कि फसल कटाई व नुकसान का आकलन शीघ्र व सही हो सके और किसानों को दावा राशि त्वरित रूप से मिल सके। किसान मोबाइल के माध्यम से अपनी फसल के नुकसान के बारे में आकलन कर बता सके।
- सरकार सब्सिडी पर कोई ऊपरी सीमा नहीं है यदि बचा हुआ प्रीमियम 90 प्रतिशत है तो सरकार द्वारा वहन किया जाएगा। शेष प्रीमियम बीमा कम्पनियों को सरकार द्वारा दिया जाएगा ये राज्य तथा केन्द्र सरकार में बराबर-बराबर बांटा जाएगा।
- भूमिहीन व लीज पर खेती करने वाले किसानों को इसमें शामिल किया जायेगा।
- यह योजना एक राष्ट्र एक योजना विषय पर आधारित है अर्थात देश में एक जैसी होगी और इसका प्रीमियम भी समान होगा। बड़े राज्यों में दो बीमा कंपनी योजना में शामिल की जाएगी।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के उद्देश्य –

- प्राकृतिक आपदाओं, कीट और रोगों के परिणामस्वरूप अधिसूचित फसल में से किसी को विफलता की स्थिति में बीमा कवरेज और वित्तीय सहायता प्रदान करना।
- कृषि में किसानों की सतत प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए उनकी आय को स्थायित्व देना।
- किसानों को कृषि में नवाचार एवं आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।
- कृषि क्षेत्र में ऋण के प्रवाह को सुनिश्चित करना।

इस तरह यह योजना किसानों के लिए संजीवनी का काम करेगी। किसानों के समग्र विकास के लिए यह बहुत ही महत्वपूर्ण योजना है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना – किसानों द्वारा उर्वरकों का संतुलित उपयोग एक बड़ी चुनौती रही है, कैमिकल फर्टिलाइजर के गैर जरूरी उपयोग के चलते भूमि की उर्वराशक्ति बुरी तरह प्रभावित हुई है। इसमें फसल की उत्पादकता प्रभावित हुई। इसमें बदलाव के लिए केन्द्र सरकार ने फरवरी 2015 में पूरे देश में मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना की शुरूआत की इस योजना के तहत खेतों की मिट्टी की परीक्षण करके किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराया जा रहा है ताकि किसान जरूरत के हिसाब से अपने खेतों में फर्टिलाइजर और दूसरे न्यूट्रिएट इस्तेमाल कर सके इसके चलते मिट्टी उपजाऊ होगी और किसानों की बचत भी होगी योजना के तहत अगले 3 सालों में 14.40 करोड़ किसानों को कार्ड मुहैया कराना है जुलाई 2016 तक 1.84 करोड़ मृदा स्वास्थ्य कार्ड वितरित किए जा चुके हैं तथा 2017 में देश भर में खेतों की मिट्टी में व्यापक विश्लेषण के आधार पर अब तक किसानों को 7.1 करोड़ से अधिक मृदा स्वास्थ्य कार्ड जारी किए जा चुके हैं। 2018 तक सभी किसानों को यह कार्ड पहुँचाने का लक्ष्य है।

परम्परागत कृषि विकास योजना – (पीकेबीबाई) जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए परंपरागत कृषि विकास योजना को आरंभ किया गया है। इसके तहत आर्गेनिक खेती को बढ़ावा देकर किसानों की आय में बढ़ोत्तरी पर जोर दिया गया है तथा केमिकल फर्टिलाइजर और पेस्टीसाइड के उपयोग में कमी लाना है। बजट 2016-17 में योजना के माध्यम से 3 साल में 5 लाख एकड़ क्षेत्र में जैविक खेती करने का लक्ष्य रखा गया है। इसमें विलेज कलेस्टर बनाए जाने हैं जिनमें प्रत्येक कलेस्टर में 50-50 किसानों को शामिल किया जाना है कुल मिलाकर देश में 10 हजार केलस्टर बनाए जाने हैं। अब तक 9186 कलेस्टर बनाये गए। योजना के लिए सरकार ने 300 करोड़ रूपए के बजट (2016 में) का प्रावधान किया है इसमें से इस वर्ष 197 करोड़ रूपये जारी किए जा चुके हैं। हर कलस्टर के हर किसान को प्रति हेक्टेयर 50,000 रूपए की आर्थिक सहायता तथा 20 हेक्टेयर वाले 10 हजार आर्गेनिक कलेस्टर विकसित होगें।

कृषि वानिकी और नीमकोटेड यूरिया योजना – राष्ट्रीय कृषि वानिकी कार्यक्रम हेतु पहली बार 2016-17 के बजट में 75 करोड़ केन्द्राश का प्रावधान किया गया है। इससे 'मेड पर पेड़' अभियान की गति मिलेगी। कृषि योग्य भूमि पर पट्टी और अंतराल पर वृक्षारोपण कर पेड़ विकसित किया जाएगा। मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए देश में नीम कोटेड यूरिया को बढ़ावा देने का कदम उठाया गया है। मोदी सरकार ने खाद की किल्लत दूर करने के

लिए नीम कोटेड यूरिया का प्रयोग शुरू किया और उसके बाद से खाद का उपयोग सिर्फ और सिर्फ खेती में होना सुनिश्चित हो गया, खाद की कालाबाजारी रूक गयी। अब किसानों को समय पर पर्याप्त मात्रा में यूरिया मिलती है तथा खाद की कमी नहीं रहती।

राष्ट्रीय कृषि बाजार – यह एक राष्ट्रीय स्तर का इलेक्ट्रानिक पोर्टल है जिसे भारत सरकर के कृषि मंत्रालय द्वारा विकसित किया गया है। किसानों की उपज का सही मूल्य दिलाने हेतु सरकार द्वारा सामान्य ई–मार्केट प्लेटफार्म शुरू करने के उद्देश्य से 1 जुलाई 2015 को राष्ट्रीय कृषि बाजार योजना की शुरूआत की गई। इस योजना में अगले दो वर्ष के लिए 200 करोड़ रूपये का प्रावधान किया है। इस योजना के जरिए देश की 595 मंडियों को ई–प्लेटफार्म में जोड़ा जाएगा। यह योजना किसानों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य दिलाने में मदद करेगा। इस योजना के तहत 14 अप्रैल 2016 को डॉ. भीमराव अम्बेडकर के जन्म दिवस पर ई–ट्रेडिंग प्लेटफार्म शुरू किया गया इस कार्य को पूरा करने के लिए सितम्बर 2016 तक 200 मण्डियों, मार्च 2017 तक अन्य 200 मण्डियों एवं मार्च 2018 तक शेष सभी मन्डियों को सामान्य ई–मार्केट प्लेटफार्म पर जोड़ा जाएगा। वर्तमान सरकार द्वारा किसानों व कृषि हित के लिए प्रारंभ योजनाओं से किसानों को बहुत लाभ हुआ है जैसे :–

खाद की किल्लत दूर हो गयी – खाद का उपयोग सिर्फ खेती में होना सुनिश्चित हो गया, नीमकोटिंग यूरिया का प्रयोग से खाद की कालाबाजारी रूकी, किसानों को समय पर पर्याप्त मात्रा में यूरिया मिलने लगा।

न्यूनतम समर्थन मूल्य में वृद्धि – सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य में बढ़ोत्तरी कर किसानों को राहत दी। 2016–17 की खरीफ फसल की दालों में अरहर के समर्थन मूल्य को 4625 रूपये से बढ़ाकर 5058 रूपये प्रति क्विंटल कर दिया। उड़द के मूल्य को 4625 रूपये से बढ़ाकर 5000 रूपये प्रति क्विंटल कर तथा मूंग के लिए 4850 से बढ़ाकर 5250 रूपये तक कर दिया गया है, अन्य फसलों के समर्थन मूल्य में भी वृद्धि हुई। जिससे किसानों को लाभ मिला।

धान की खरीदी में लेवी प्रणाली को खत्म करने से किसान अपनी उपज सीधे सरकारी केन्द्रों पर बेच सकते हैं कोई विचौलिया उन्हें परेशान नहीं कर सकता है इससे धान की कीमत भी अच्छी मिलने लगी तथा कीमत की वसूली का रास्ता भी सरल हो गया।

डिजिटल इंडिया की पहल – ई–नेम के रूप में देशव्यपी स्तर पर एक ऐसा ई–प्लेटफार्म तैयार किया गया है जिनसे किसानों के साथ देश की कृषि मंडियां आपस में जुड़ी है। यहां किसान अपनी उपज को बेच सकता है ई–नाम पर 455 मंडियां जुड़ी हुई हैं इससे किसानों के लिए बाजार की जरूरत पूरी हो गयी है।

कृषि मौसम विज्ञान सेवा की शुरूआत होने से किसानों को फायदा हुआ है। मौसम के बारे में किसानों को एसएमएस से मिलने वाली सूचना से हर दिन के काम को सही ढंग से करने में मदद मिली है। 2014 में 70 लाख किसानों को सूचना पहुंचती थी आज 2 करोड़ 10 लाख किसानों तक सूचनाएं पहुंच रही है।

किसानों के किसान चैनल का प्रारम्भ – 26 मई 2015 को शुरू किया किसान चैनल से कृषि तकनीक का प्रसार, पानी के संरक्षण और जैविक खेती जैसे विषयों की जानकारी देता है। इसमें किसानों को उत्पादन, वितरण, जोखिम, बचने के तरीके, खाद बीज वैज्ञानिक कृषि के बारे में पूरी जानकारी दी जाती है। जो किसानों के लिए लाभदायक है।

ब्लू रिवोल्यूशन (नीली क्रान्ति) से मत्स्य उत्पादन बढ़ा है। मत्स्य प्रबंधन और विकास के लिए अगले पांच साल में 3000 करोड़ रूपये की योजना दी है।

राष्ट्रीय गोकुल मिशन – मिशनमोड में लागू की गयी योजना का उद्देश्य देश की पशुधन संपदा को संवर्द्धित करके किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारना है। इससे देशज पशुधन के जेनेटिक स्टाक संवर्द्धित होगा दूध उत्पादन बढ़ेगा, इस योजना में 14 गोकुल गांव स्थापित किए गए हैं। ये सभी किसानों की समृद्धि के लिए है।

कृषि शिक्षा और अनुसंधान को बढ़ावा दिया जा रहा है, इसके अन्तर्गत केन्द्रीय कृषि विश्व विद्यालय इम्फाल के अन्तर्गत छह नये कालेज खोले गये पूर्वोत्तर भारत में पिछले दो वर्षो में कृषि कालेजों की संख्या में लगभग 85 प्रतिशत से ज्यादा बढ़ोत्तरी हुई, म0प्र0 में रानी लक्ष्मीबाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय झांसी के अन्तर्गत 4 नये कालेज खोले गये, पूसा अनुसंधान संस्थान, बिहार में राष्ट्रीय समेकित कृषि अनुसंधान केन्द्र तथा गंगटोक, सिक्किम में देश के सबसे पहले राष्ट्रीय जैविक कृषि अनुसंधान संस्थान का निर्णय लिया गया तथा असम में भी अनुसंधान संस्थान की स्थापना की जा रही है। इस तरह कृषि शिक्षा और अनुसंधान किसानों की समृद्धि व कृषि विकास के लिए सराहनीय प्रयास है।

वर्तमान सरकार की किसानों की समृद्धि के लिए बहुआयामी प्रयास किए जा रहे हैं इन सभी योजनाओं को जानकर ऐसा लगता है कि सरकार ने जो लक्ष्य रखा है कि 2022 तक किसानों की आय को दुगुना करेंगे वह अवश्य पूरा हो सकता है। यद्यपि इन समस्त योजनाओं में कृषि से सम्बन्धित कोई क्षेत्र नहीं छोड़ा गया है, जहां के विकास के लिए कोई योजना न हो। अब आवश्यकता है, किसान भाई इन सभी योजनाओं का लाभ उठाए, इन योजनाओं को जानें समझें आशावादी दृष्टिकोण रखें। सरकार पूरी तरह से आपके साथ है। आत्महत्या जैसे कदम न उठाए, बल्कि अपनी समस्या को सरकार तक पहुंचाने का प्रयत्न करें। सभी योजनाओं में सरकार सहायता कर रही है लेकिन आवश्यकता है इन सभी योजनाओं से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को उत्साह दिखाने की, आगे आने की तभी किसानों की समृद्धि दिखेगी देश की समृद्धि दिखेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. http(www.nerendramodi.in pradhanmantri youjana. com.
2. कुरूक्षेत्र पत्रिका – जून 2016
3. कुरूक्षेत्र पत्रिका – सितम्बर 2016
4. कुरूक्षेत्र पत्रिका – नवम्बर 2017
5. योजना पत्रिका – अक्टूबर 2017

****

लघु एवं कुटीर उद्योग

सीमा नागर *

प्रस्तावना – प्राचीनकाल से ही भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। ये उद्योग राष्ट्रीय आय तथा रोजगार के प्रमुख स्त्रोत थे। ब्रिटिश शासन काल में इनका तीव्र गति से पतन हुआ किन्तु ये पूरी तरह समाप्त नहीं हुए अपितु समय के साथ–साथ धीरे–धीरे बढ़ते रहे। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद इनमें तेजी से विस्तार हुआ। स्वतंत्रता के बाद इन उद्योगों के विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रमों का व्यापक स्तर पर क्रियान्वयन प्रारंभ हुआ।

सामान्यत: औद्योगिक ढाँचे को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है– बड़े उद्योग, लघु उद्योग एवं कुटीर उद्योग। इन उद्योगों में विभाजन विभिन्न आधारों पर किए जाते हैं जैसे– औद्योगिक इकाई में प्रयुक्त पूँजी की मात्रा, कार्यरत श्रमिकों की संख्या, संगठन व प्रबंध का स्वरूप, यांत्रिक शक्ति का प्रयोग आदि। इन आधारों में समय तथा स्थिति के अनुसार परिवर्तन होते रहते हैं। वर्तमान में वे सभी औद्योगिक इकाईयाँ लघु उद्योग के अंतर्गत आती हैं जिनके प्लांट और मशीनरी में निवेशित पूँजी की सीमा 25 लाख रूपये से 5 करोड़ रूपये है।

लघु उद्योगों में प्राय: शक्तिचालित मशीनों एवं आधुनिक उत्पादन विधियों का प्रयोग होता है। इनमें सामान्यत: बाहरी श्रमिकों को काम पर लगाया जाता है।

कुटीर उद्योग प्राय: ग्रामीण एवं अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में स्थापित होते हैं तथा अंशकालीन रोजगार प्रदान करते हैं। इनमें निवेशित पूँजी व तकनीकी स्तर अपेक्षाकृत निम्न होता है तथा स्थानीय कच्चे माल तथा कुशलता का प्रयोग किया जाता है। ये उद्योग अधिकांशत: स्वयं मालिक द्वारा या अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से चलाए जाते हैं। इनमें उत्पादन प्राय: हाथ से किया जाता है तथा शक्तिचालित यंत्रों का उपयोग अपेक्षाकृत कम होता है। भारत के प्रमुख कुटीर उद्योग इस प्रकार हैं – पशुपालन , हथकरघों पर बुनाई, रस्सी बनाना, मिट्टी के बर्तन बनाना, खिलौने बनाना आदि।

भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्व – भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था में जहाँ पूँजी की कमी, निर्धनता तथा बेरोजगारी का साम्राज्य है वहाँ लघु एवं कुटीर उद्योग आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा तकनीकी सभी पहलुओं से औद्योगिक विकास की आधारशिला हैं। गाँधीजी के अनुसार, 'भारत का मोक्ष उसके कुटीर धन्धों में निहित है।' स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने लघु व कुटीर उद्योगों के महत्व को स्वीकार करते हुए इनके विकास हेतु विशेष बल दिया। यह अनुभव किया गया कि ये उद्योग बेरोजगारी, निर्धनता तथा आय के वितरण की असमानताओं को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। 1948 में घोषित देश की प्रथम औद्योगिक नीति में लघु व कुटीर उद्योगों के महत्व पर प्रकाश डाला गया। योजना आयोग ने भी पंचवर्षीय योजनाओं में इनके विकास की संस्तुति की।

लघु व कुटीर उद्योग श्रम प्रधान होते हैं तथा इनमें कम पूँजी निवेश द्वारा रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाए जाते हैं। भारत में कृषि के सहायक धन्धों के रूप में कुटीर उद्योगों का विशेष महत्व है। लघु व कुटीर उद्योगों से देश में उद्योगों के विकेन्द्रीकरण में सहायता प्राप्त होती है। इससे स्थानीय प्रतिभा तथा स्थानीय साधनों का उचित उपयोग हो जाता है। इन उद्योगों के कारण कृषि पर जनसंख्या के भार में कमी होती है। ये उद्योग परम्परागत एवं कलात्मक वस्तुओं को संरक्षण प्रदान करते हैं। इनकी स्थापना में कम तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है। इनके कारण निर्यात में वृद्धि तथा आयात में कमी होती है। ये बड़े उद्योगों के सहायक के रूप में कार्य करते हैं जिससे औद्योगिक समस्याओं को कम किया जा सकता है। साथ ही इनमें उत्पादन भी शीघ्र ही प्रारंभ हो जाता है। भारी उद्योगों की अपेक्षा ये उद्योग पर्यावरण को कम हानि पहुँचाते हैं।

छठवीं आर्थिक जनगणना 2013 के अनुसार इस क्षेत्र में 4 करोड़ 53 लाख इकाईयाँ शामिल हैं और यह क्षेत्र 11 करोड़ 70 लाख से अधिक लोगों को रोजगार प्रदान करता है। यह कुल विनिर्माण उत्पादन का 45 प्रतिशत उत्पादित करता है और 40 प्रतिशत देश के निर्यात के लिए उपलब्ध करता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि लघु एवं कुटीर उद्योगों का देश के आर्थिक तथा सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण स्थान है। लघु तथा कुटीर उद्योग बड़े पैमाने पर तत्काल रोजगार प्रदान कर राष्ट्रीय आय के न्यायपूर्ण वितरण का आश्वासन देते हैं तथा पूँजी व अन्य संसाधनों का सर्वोत्तम विदोहन करने में सहायक होते हैं।

भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों की समस्याएँ – भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इन उद्योगों को उचित स्थान प्रदान किया गया है। सरकार द्वारा इनके विकास के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं फिर भी इन उद्योगों को अभी भी आधारभूत समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनकी सबसे महत्वपूर्ण समस्या वित्त की है। विभिन्न संस्थाओं से ऋण प्राप्त करने में कई व्यावहारिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। इन उद्योगों के समक्ष कच्चे माल की उपलब्धि की समस्या भी बनी रहती है, जो उन्हें उचित मूल्य व उचित समय पर नहीं प्राप्त होता है। शिक्षा के अभाव के कारण परम्परागत तकनीकों के प्रयोग के कारण उत्पादकता निम्न हो जाती है तथा लागत अधिक होती है। उपभोक्ता की रूचि में परिवर्तन, विज्ञापन तथा प्रचार के सीमित साधन, बड़े उद्योगों में निर्मित वस्तुओं से प्रतियोगिता आदि के कारण विपणन की समस्या उत्पन्न होती है। इन उद्योगों को सही समय पर सूचना एवं परामर्श प्राप्त नहीं

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

होने के कारण विकास में बाधा उपस्थित होती है। इन्हें विद्युत शक्ति उचित मात्रा व मूल्य पर उपलब्ध नहीं होती है। साथ ही इनमें उत्पादित माल के प्रमाणीकरण की सुविधा नहीं होती है। इनके अतिरिक्त प्रबंध योग्यता में कमी, परिवहन सुविधाओं का अभाव, स्थानीय ऊँचे कर, अनुसंधान की कमी, रूग्ण उद्योगों की विद्यमानता आदि समस्याएँ इन उद्योगों के विकास के मार्ग में रोड़ा साबित होती हैं।

लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास हेतु सरकारी प्रयास – भारत में लघु व कुटीर उद्योगों की समस्याएँ हल करने तथा उन्हें सुविधाएँ उपलब्ध करवाने का प्राथमिक उत्तरदायित्व राज्य सरकारों का होता है। भारत में केन्द्र सरकार सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उद्योगों के विकास एवं प्रोत्साहन के लिए अखिल भारतीय स्तर पर कदम उठाने तथा नीति निर्माण की आवश्यकता को अनुभव करती है तथा राज्य सरकारों को विभिन्न तरीकों से योगदान दे रही है। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास (एमएसएमईडी) अधिनियम 2006 भी इसी का एक परिणाम है। 9 मई 2007 को सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के लिए अलग से मंत्रालय बनाया गया।

इस मंत्रालय तथा उसके संगठनों द्वारा कई प्रकार की योजनाएँ एवं कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं जो इस प्रकार हैं–

1. ऋण गारंटी योजना।
2. प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम।
3. सूक्ष्म वित्तीय कार्यक्रम।
4. प्रौद्योगिकी उन्नयन तथा आधुनिकीकरण के लिए सहयोग।
5. समेकित अवसंरचनात्मक सुविधाएँ।
6. आधुनिक परीक्षण सुविधाएँ और गुणवत्ता प्रमाणन।
7. समुचित प्रशिक्षण सुविधाओं के माध्यम से उद्यमिता विकास और कौशल उन्नयन।
8. कारीगरों तथा श्रमिकों का कल्याण।
9. उत्पादक के विकास, डिजाइन और पैकेजिंग के लिए सहयोग।
10. घरेलू एवं निर्यात बाजारों में बेहतर पहुँच के लिए सहायता।
11. कच्चा माल सहायता योजना।
12. बिल में छूट।
13. सूचना एवं मीडिया सेवाएँ।
14. एक स्थान पर पंजीकरण।
15. कॉयर विकास योजना।
16. पारंपरिक उद्योगों के पुनरूद्धार के लिए कोष पुनर्निर्माण योजना।
17. कृषि उद्योग व उद्यमिता नवाचार के लिए प्रोत्साहन योजना।
18. मुद्रा योजना।
19. तरजीही खरीद।
20. कम्पोजीशन स्कीम।

एमएसएमई मंत्रालय युवा उद्यमियों को विनिर्माण एवं सेवा क्षेत्र में नये सूक्ष्म उद्यमों की स्थापना के लिए सहायता हेतु ऋण से जुड़ी अनुदान योजना प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम को लागू कर रहा है। इसी क्रम में स्टार्ट–अप मूवमेंट शुरू किया गया है। जिसका उद्देश्य उद्यमशीलता को बढ़ावा देना है। स्टार्टअप बिजनेस में तीन साल तक छूट, अटल इनोवेशन मिशन आदि से नये उद्यमियों को सहायता प्राप्त हो रही है।

सरकार ने लघु व कुटीर उद्योगों को राहत देने के लिए ऋण गारन्टी निधि शुरू की है। इसमें लघु उद्योगों के लिए जमानत के तौर पर या तीसरे पक्ष की गारंटी के बिना 100 लाख तक के ऋणों के लिए गारंटी कवर प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही विपणन समस्याओं को हल करने के लिए सरकार ने सार्वजनिक खरीद नीति की घोषणा की है। इसके तहत सरकारी उपक्रमों को तीन वर्षों की अवधि के बाद अनिवार्य रूप से कुल खरीद का बीस प्रतिशत सूक्ष्म एवं लघु उद्यमों से खरीदना होगा।

कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों की श्रृंखला के रूप में परंपरागत ग्रामीण उद्योगों से संबंधित विभिन्न उच्च प्रौद्योगिकियों पर कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं, जिसके अंतर्गत समाज के कमजोर वर्गों को नि:शुल्क प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

इनके अतिरिक्त सरकार उद्यम हेल्पलाईन नम्बर पर प्रोत्साहन योजनाओं के विषय में सूचना दे रही है। मिल रेट प्राइस योजना और स्फूर्ति योजना भी चलाई जा रही है। मुद्रा बैंक से ऋण दिया जा रहा हैं। मुद्रा योजना से कई करोड़ युवाओं को स्वरोजगार के माध्यम से रोजगार सुनिश्चित हुआ है। कुछ राज्यों में हस्तशिल्प केन्द्रों की वस्तुओं को वैश्विक बाजारों तक पहुँचाने के लिए ई–कॉमर्स का उपयोग किया जा रहा है। ग्रामीण भारत के युवा स्टार्ट अप में दूसरों को भी रोजगार मुहैया करवा रहे हैं। आधारभूत संरचना में सुधार के कारण देश में कई औद्योगिक गलियारे बने हैं, जो कि त्रिचुर, मुरादाबाद, सूरत, लुधियाना, मुर्शिदाबाद जैसे औद्योगिक क्लस्टरों को सृजित करेंगे। इसके साथ ही अधिक कृषि उत्पाद वाले क्षेत्रों में खाद्य प्रसंस्करण पार्कों की स्थापना से कृषकों की आय में भी वृद्धि होगी। विमुद्रीकरण तथा वस्तु व सेवाकर लागू होने से अर्थव्यवस्था में अधिक रोजगार के अवसर उत्पन्न होंगे।

इस प्रकार सरकार द्वारा लघु व कुटीर उद्योगों के लिए कई योजनाएँ एवं कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं जो तभी सार्थक होंगे जबकि इनका लाभ वास्तव में प्राप्त हो।

निष्कर्ष – स्पष्ट है कि भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के लिए सरकार द्वारा व्यापक स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। सरकार की नीति इन्हें प्रोत्साहित करने की रही है। विभिन्न सुविधाओं, रियायतों, उत्प्रेरणाओं एवं मार्गदर्शनों के रूप में इन प्रयासों ने लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास में महत्वपूर्ण एवं रचनात्मक योगदान दिया है। इससे जहाँ इन उद्योगों की प्रतियोगी शक्ति में वृद्धि हुई है वहीं इनके भावी विकास की संभावनाएँ भी बढ़ी हैं। सरकार एवं विभिन्न संस्थाओं के सहयोग से ये उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रथ सूची :–

1. औद्योगिक अर्थशास्त्र – डॉ. एस.सी. जैन।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था – डॉ. जे.सी. पन्त एवं डॉ. जे.पी. मिश्रा।
3. योजना – भारत सरकार का प्रकाशन।
4. भारतीय आर्थिक नीति – डॉ. पी.डी. माहेश्वरी एवं डॉ. शीलचन्द्र गुप्ता।
5. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2016–17

****

शिक्षा, रोजगार के अवसर और नैतिक मूल्य

डॉ. अमोल मांजरेकर *

प्रस्तावना – शिक्षा व्यक्तित्व निर्माण की आधारशीला है। शिक्षा का जीवन से गहरा संबंध है। जीवन का आधार शिक्षा ही है। यह भी निर्विवाद सत्य है कि किसी भी राष्ट्र के विकास में शिक्षा, शिक्षा पद्धति, शैक्षिक पर्यावरण तथा नैतिक मूल्यों का विशेष महत्व है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यदि शिक्षा को रोजगार के अवसरों से जोड़कर देखें तो विदित होता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त रोजगार के अवसर प्राप्त करने हेतु चाहे वे समय-समय पर कम हों या ज्यादा, नैतिक मूल्यों का हनन होता जा रहा है।वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षितों के आंकड़े तो निरंतर वृद्धि को दर्शाते हैं एवं भौतिक स्तर पर शिक्षा में निरंतर नये नये कीर्तिमान भी स्थपित हो रहे हैं। व्यावसायिक शिक्षा संस्थानों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। चिकित्सा शिक्षा के क्षेत्र मे, नर्सिंग के क्षेत्र में शिक्षा प्राप्त करने के अवसर लगातार बढ़ रहे हैं। सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाए तो पता चलता है कि सरकार द्वारा समय-समय पर शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने एवं उसे रोजगारपरक बनाने हेतु नई शिक्षा नीति बनाने की पहल की जाती है एवं इस हेतु समितियों का गठन भी किया जाता है। वर्ष 2017 में नई शिक्षा नीति के आने की सबसे बड़ी संभावना बनी थी। टी.एस.आर. सुब्रह्मण्यम की अध्यक्षता में नीति निर्माण का प्रारूप तैयार करने वाली समिति ने मई 2016 मे अपना मसौदा केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री को सौंपा। इसमें कई विरोध और सुझाव प्राप्त हुए। सरकार ने एक और समिति वैज्ञानिक डॉक्टर कस्तुरीरंगन की अध्यक्षता मे गठित की। कहा गया कि नई शिक्षा नीति का प्रारूप दिसम्बर 2017 तक आ जाएगा।

नई शिक्षा नीति से अनगिनत अपेक्षाएं हैं। नई शिक्षा नीति में हम गुणवत्ता, रोजगार के अवसर व नैतिक मूल्यों से जुड़े प्रश्नों के उत्तर खोजना चाहेंगे। गुणवत्ता तभी पूर्ण मानी जाएगी जब वह कौशल विकास रोजगार प्राप्ति के अवसर एवं नैतिक मूल्यों में तादात्म्य स्थपित कर सकें।

आज के शैक्षिक परिदृष्य पर विचार किया जाए तो यह बात समझ में आती है कि व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा में भविष्य में रोजगार के क्षेत्र में अधिक संभावनाएं प्राप्त होने की उम्मीदें होती है। अत: इस क्षेत्र में प्रवेश प्राप्ति हेतु प्रारम्भ से ही सीटे प्राप्त करने की दिशा में भ्रष्टाचार का प्रारम्भ हो जाता है। सीमित सीटें दिखाकर अधिक से अधिक संख्या में धनार्जन प्राप्त कर प्रवेश दिये जाते है। कुछ समयोपरांत उसकी छानबीन होने के पश्चात जांच कमेटियां नियुक्त की जाती है। अपराध उजागर होने के बाद अवैध प्रवेश प्रक्रिया निरस्त कर दी जाती है एवं विद्यार्थियों का भविष्य अंधकारमय हो जाता है। स्पष्ट है कि रोजगार प्राप्ति हेतु जिस उत्कृष्ट शिक्षा को प्राप्त करने की आशा की जाती है, उसकी बुनियाद में ही नैतिक मूल्यों को ताक पर रखते हुए जीवन को अंधकारमय बनाने की शुरूआत हो चुकी होती है। निश्चित ही आज नैतिक मूल्यों का पतन भविष्य के सुनहरे जीवन की दिशा में एक प्रश्न चिन्ह उपस्थित करता है। जीवन में भैतिक सुख प्राप्त करने हेतु नैतिक मूल्यों की अवहेलना कर येन केन प्रकारेण अग्रिम कतार में आने के प्रयास किए जा रहे है। युवा जगत में इन दिनों खोखलापन निर्माण होने लगा है। अंतिम साध्य की प्राप्ति हेतु र्माग भूलता सा प्रतीत होता है।हम वर्तमान की चुनौतियों एवं परिवर्तनों का सामना करने मे स्वयं को अक्षम पा रहे है। हमें ऐसे मूल्यों को अपनाना है जो प्रतियोगिता की ओर नहीं सहयोग की ओर प्ररित करे, शत्रुता की ओर नही सामंजस्य की ओर प्ररित करे, भोगवाद की ओर नहीं संयमवाद की ओर ले जाते हो।

अंतिम निष्कर्ष में 'मूल्योन्मुख शिक्षा' ही हमें अपनी वास्तविकता का दिग्दर्शन कराने में सक्षम हो सकती है। हमें ऐसी शैक्षणिक रणनीति अपनानी होगी जो कि मानव के लिये कल्याणकारी सिद्ध हो सके। इस हेतु हमें अपनी शैक्षिक सोच में पुन: परिवर्तन करना होगा जिससे हमारे कल्पनाशील एवं संवेनदशील विचारकों के द्वारा अधिक कल्याणकारी एवं पूर्ण पद्धतियों का प्रतिपादन किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर – 25 दिसम्बर 2017
2. इक्कीसवी सदी का भारत – ओमेगा पब्लिकेशन मुद्दे, विकल्प और नीतियां दिल्ली – 110002 डॉ वीरेन्द्र सिंह यादव ।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

गरीबी मुक्त भारत

डॉ. विमला जैन *

प्रस्तावना – राज्य का यह उत्तरदायित्व है कि देश के निवासियों की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करें। निवासियों को भोजन, कपड़ा, मकान, पीने का स्वच्छ पानी, अनिवार्य शिक्षा प्राप्त हो। परन्तु जिन व्यक्तियों को ये बुनियादी आवश्यकताऐं भी प्राप्त नहीं होती है, मोटे तोर से उनको गरीबी की रेखा से नीचे माना जाता है। भारत में लगभग 29.8 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन व्यतीत करते है।

सरकार द्वारा सतत् प्रयास किए जाते रहे है कि भारत गरीबी मुक्त भारत हो। भारत जैसी विकासषील अर्थव्यवस्था में गरीबी का दुष्चक्र कार्य करता है। इस चक्र के अनुसार कम आय – कम बचत – कम निवेष – कम उत्पादन और फिर कम आय पर यह चक्र समाप्त होता है अर्थात यह चक्र निरन्तर क्रियाशील रहता है। राष्ट्र गरीबी मुक्त किस प्रकार हो, इस संबंध में दो महत्वपूर्ण आर्थिक पहलू पर विचार करना होगा।

1 सरकार की आय में वृद्धि ।
2 आय को निर्धन वर्ग पर व्यय करना ।

प्रथम बिंदु पर विचार करें तो पाते है कि, सरकार को आय बढ़ाने के लिए सर्वप्रथम इस प्रकार के दुष्चक्र को तोड़ना होगा। इसके लिए बहुत अधिक प्रयासों की आवश्यकता होती है। हाल ही में सरकार ने इसके लिए अनेक कारगर कदम उठाए है। जैसे केषलेस सिस्टम, वस्तु एवं सेवा कर आदि। केसलेस सिस्टम से कर चोरी बहुत हद तक रोकी जा सकती है, यदि प्रत्येक ट्रांसेक्षन बैंक के माध्यम से होगा, डिजिटल पेमेंट होंगे, हर लेने दने की आनलाईन एन्ट्री होगी, ऐसी स्थिति में ट्रांसेक्षन को छुपाया नहीं जा सकता, और टेक्स चोरी लगभग असंभव हो जायेगी, परिणामत: सरकार की आय में वृद्धि होगी।

दुसरा महत्वपूर्ण कदम है 'वस्तु एवं सेवाकर' (GST) यह एक अप्रत्यक्ष कर है और व्यापक बहुस्तरिय भी। यह कर उत्पादन के अलग–अलग चरणों में लगाया जाता है। इसलिए उत्पादन किसी प्रकार का कर अपवंचन, कर चोरी नहीं कर सकते। एक अनुमान के अनुसार जी.एस.टी से करदाताओं की संख्या में पांच से छ: गुना वृद्धि होगी जो सरकार की आय में निष्चित ही वृद्धि करेगी।

आय में वृद्धि के बाद दुसरा महत्वपूर्ण तथ्य है निर्धन वर्ग पर आय का खर्च करना।

निर्धन वर्ग तथा गरीबी की रेखा से नीचे जीवन व्यतित करने वाले वर्ग के लिए सरकार ने कुछ छोटी महत्वाकांक्षी योजनाएं बनाई है। जिससे प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रुप से इन वर्गो को लाभ पहुंचाया जा सके।

- **प्रधानमंत्री उज्जवल योजना –** इस योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली महिलाओं को मुफ्त गैस कनेक्शन दिए जा रहे है।
- **प्रधानमंत्री आवास योजना –** शहरी और ग्रामीण निर्धन वर्ग को सस्ती कीमत पर मकान उपलब्ध किए जाऐंगे।
- **पढ़ो परदेश योजना –** निर्धन तथा अल्पसंख्यकवर्ग को उच्च स्तर की शिक्षा के लिए सरकार ऋण देगी तथा उस पर अनुदान भी।
- **कौशल विकास योजना–** कौशल विकास के माध्यम से रोजगार उत्पन्न करना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है। सरकार ने इसके लिए ट्रेनिंग सेंटर का निर्माण किया है।
- **जन औषधी योजना–** उन लोगो को सस्ती दवाईयां उपलब्ध कराई जाएगी जो दवाईयों का खर्च नहीं उठा सकते सरकार द्वारा यजन औषधि केन्द्र खोले गए।
- **प्रधानमंत्री मुद्रा बैंक योजना –** विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे सूक्ष्म व्यवसाय प्रारम्भ करने के लिए अभी भी साहुकारों पर निर्भर रहना पड़ता है।

शहरी और ग्रामीण दोनो क्षेत्रों में सूक्ष्म व्यवसाय प्रारम्भ करने के लिए सरकार इस योजना के अंतर्गत ऋण उपलब्ध कराती है।

इस प्रकार सरकार ने आर्थिक रुप से कमजोर वर्ग के लिए अनेक योजनाऐं प्रारम्भ की है। प्रधानमंत्री सुकन्या समृद्धि योजना, राष्ट्रिय स्वास्थ्य बीमा, जीवन ज्योति बीमा, अटल पेंशन योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना आदि।

इस महात्वाकांक्षी योजनाओं का उद्देश्य लोगो को आत्मनिर्भर बनाना है, जो गरीबी उन्मूलन का मूलमंत्र है।

निर्धन वर्ग को मछली देना नहीं, मछली पकड़ना सिखाना है। गरीबी मुक्त भारत का उद्देश्य, प्रत्येक कमजोर वर्ग की विकास में भागीदारी सुनिष्चित करना है। इस तरह भारतीय स्टार इकोनोमी के लिए वह दिन दूर नहीं जब भारत पूर्णत: गरीबी मुक्त भारत होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 Indian Economy Uma Kapila
2 भारतीय अर्थव्यवस्था दत्त एवं सुन्दरम
3 Human Rights and Poverty in India Edited by S.N. Chaudhary.

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) मा.जी.बा.शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

भीम राव अंबेडकर, संविधान और नारी

वनिता रानी *

प्रस्तावना – मैं किसी समुदाय की प्रगति को महिलाओं द्वारा प्राप्त की गई प्रगति को मानता हूँ।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

नारी संसार की सबसे सुंदर रचना मानी जाती है। नारी के अनेक समानार्थक हैं, यथा महिला, स्त्री, लक्ष्मी, वनिता इत्यादि। प्राचीन हिंदू शास्त्र मनुस्मृति के 56वें श्लोक में नारी की स्थिति का सटीक वर्णन किया गया है –यत्र नारेस्तु पूज्यंते रमंते: तत्र देवता: अर्थात जहां नारी का सम्मान और आदर होता है, वहां देवी – देवता भी रहना पसंद करते हैं। जहां नारी का अनादर व उसके साथ दुर्व्यवहार होता वह स्थान शवगृह के समान होता है और जिस देश या मुल्क में नारी का सम्मान न हो, उसे बराबरी का अधिकार न दिया जाए, उसे मूल अधिकारों से वंचित रखा जाए, उसके लिए सामाजिक सुरक्षा का अभाव हो, जहां देश की उन्नति में उसकी भागीदारी न हो वह देश या मुल्क शीघ्र पतन की ओर अग्रसर हो जाता है क्योंकि नारी समाज का आधा हिस्सा होती है और यदि आधे हिस्से को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व शैक्षणिक अधिकारों से वंचित रखा जाएगा तो कोई भी देश कैसे अपनी उन्नति व् विकास को सुनिश्चित कर पाएगा। अत: किसी भी देश या मुल्क की उन्नति इस तथ्य पर आधारित है कि उस देश में नारी की स्थिति कितनी सुंदृढ़ है।

नारी की ऐतिहासिक स्थिति – प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में नारी के विषय में कई स्थानों पर उसकी वास्तविक स्थिति को दर्शाया है जैसे मनुस्मृति के अध्याय 5 के 155 में श्लोक में लिखा है 'स्त्री का न तो अलग यज्ञ होता है न व्रत होता है न उपवास'। ऋग्वेद में पुत्री के जन्म को दु:ख की खान और नारी को मनोरंजनकारी भोग्या की संज्ञा दी है। अथर्ववेद में नारी को शूद्र की संज्ञा दी गई है। न केवल हिंदू शास्त्रों में अपितु मुस्लिम धार्मिक ग्रंथ कुरान शरीफ आयत के (1–4 –11) में एक पुरुष के हिस्से के बराबर दो औरतों का हिस्सा माना गया है। परंतु इन धार्मिक मान्यताओं के रहते हुए वैदिक काल में नारी की स्थिति सम्माननीय होने के साथ–साथ सराहनीय भी थी। उस काल में नारी को सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक सभी अधिकार प्राप्त थे। उन नारियों में अपाला, मैत्रीय, कैकेई, गार्गी, घोषा इत्यादि नाम स्मरणीय हैं। कालांतर में नारी की स्थिति कमजोर होती गई और उन्हें सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, धार्मिक जीवन के हाशिए पर धकेल दिया गया। फलस्वरुप नारी प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ती चली गई। मुगल काल में नारी की स्थिति अधिक कमजोर हुई और उसके साथ कई घृणित प्रथाएँ व कुरीतियां जुड़ती गई। ब्रिटिश काल में भी नारी की स्थिति यथावत ही रही। उस काल में भारतीय नारी सती प्रथा, बाल विवाह, परदा प्रथा, जौहर, बेमेल विवाह, विधवाओं का नारकीय जीवन जैसी कुप्रथाओं का शिकार थी। लेकिन समय समय पर बहुत से सामाजिक सुधारकों ने नारी की स्थिति सुधारने के लिए प्रयास किए और काफी हद तक सफल भी रहे। यथा राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद, विवेकानंद, ज्योतिबा फुले, सावित्री फुले, डॉक्टर बी. आर. अंबेडकर, महात्मा गांधी इत्यादि। इन विचारकों ने नारी स्वतंत्रता, समानता व न्याय के लिए अपने– अपने स्तर पर न केवल प्रशंसनीय अपितु सराहनीय प्रयास भी किए।

भारतीय संविधान व नारी अधिकार – स्वतंत्रता पूर्व अनेक समाज सुधारको ने नारी को धार्मिक, सामाजिक व शैक्षणिक अधिकार दिलाने की न केवल पैरवी की अपितु इस दिशा में उत्कृष्ट कार्य भी किए परंतु हमारे देश में नारी की स्थिति को मद्देनजर रखकर नारी सुरक्षा का सबसे बड़ा आधार संविधान को बनाया गया। 1946 में कैबिनेट मिशन योजना के अंतर्गत भारत के लिए एक संविधान सभा का निर्माण किया गया जिसका प्रमुख कार्य भारत के लिए एक विस्तृत व व्यवहारिक संविधान बनाना था। इसी श्रृंखला में 1948 को डॉक्टर भीमराव अंबेडकर की अध्यक्षता में एक मसौदा समिति की नियुक्ति की जिसने नवीन भारतीय संविधान की रचना का खाका तैयार किया। जिसके अंतर्गत भारतीय समाज में व्याप्त सभी प्रकार के भेदभाव चाहे उन का आधार धर्म वंश, जाति व लिंग जो भी हो, सभी प्रकार की असमानताओं का उन्मूलन करके एक ऐसे समाज की आधारशिला रखी जिसमें भारत में रहने वाले प्रत्येक भारतीय को अपने व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक सभी अधिकारों की प्राप्ति संभव हो। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने भारतीय महिलाओं की शोचनीय स्थिति को मद्देनजर रखकर उन्हें सामाजिक,आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक व राजनीतिक अधिकार दिलाने का न केवल प्रयास किया अपितु इन अधिकारों को संविधानिक आधार देखकर एक उच्च स्तरीय सफलता भी अर्जित की। डॉ. अंबेडकर ने नारी अधिकारों को मौलिक अधिकारों के रूप में प्रदान करके एक ऐसा अध्याय रचा जिसकी कल्पना भी नारी समाज ने नहीं की होगी। उन्होंने नारी को वे सभी अधिकार प्रदान करवाए जिन्हें मनुस्मृति में नकारा गया।

अनुच्छेद 14 – भारतीय राज्य क्षेत्र में सब व्यक्ति कानून के सामने बराबर समझे जाएंगे और कानून सबकी समान रूप से रक्षा करेगा।

धारा 15 – धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इन में से किसी एक आधार पर किसी व्यक्ति को दुकानों, सार्वजनिक भोजनालय, होटलों तथा मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश करने के बारे किसी प्रकार की रुकावट नहीं होगी।[1]

धारा 16 – राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्त से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी। कोई नागरिक

* सहायक प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय, छछरौली, यमुनानगर (उ.प्र.) भारत

केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में अपात्र नहीं होगा या उससे विभेद नहीं किया जाएगा। [2]

धारा 39 (a) – सभी नर-नारियों को आजीविका के समान साधन प्राप्त हों।

धारा 39 (d) – दोनों स्त्रियों और पुरुषों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले।

धारा 42 –राज्य काम के लिए न्यायपूर्ण दशाओं का प्रबंध करेगा। राज्य अधिक से अधिक प्रसूति सहायता देगा।

धारा 39 (e) – मजदूर स्त्रियों व पुरुषों के स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालकों की कच्ची आयु का दुरूपयोग न हो, आर्थिक आवश्यकतों से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु व शक्ति के अनुकूल न हों।[3]

धारा 51(ए)(ई) – संविधान में प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वे महिलाओं की गरिमा का सम्मान करना व अपमानजनक प्रथाओं का त्याग करना।

अनुच्छेद 243(डी) (टी-3) (टी-4) – संविधान द्वारा अनुसूचित जाति व जनजाति की महिलाओं के लिए क्रमशरू पंचायतों, नगरपालिका और विधानसभाओं में उनकी जाति की जनसंख्या के अनुपात में 1/ 3 स्थान आरक्षित किए गए हैं।[4]

डॉ भीमराव आंबेडकर व हिंदू कोड बिल – 1941 में ब्रिटिश सरकार ने सर बी. एन. राव की अध्यक्षता में चार सदस्य एक हिंदू लॉ कमेटी की स्थापना की। 1945 में अपनी रिपोर्ट में राव ने कहा कि हिंदू कोड का समय आ चुका है। यदि सामाजिक विकास और आधुनिक करण को सुनिश्चित करना है तो इसका केवल एक मूल बदलाव है। वह है लैंगिक समानता। 1941 में संसद की चयन कमेटी के समक्ष दो ड्राफ्ट बिल प्रस्तुत किए गए और इस योजना के लिए काफी प्रचार किया गया। इस का परिणाम यह निकला कि 1944 में बी. एन. राव की अध्यक्षता में ही एक ड्राफ्ट कोड तैयार किया गया जिसमें हिंदू उत्ताराधिकार, हिंदू दत्तक ग्रहण और रखरखाव, विवाह व तलाक तथा अल्पसंख्यक व संरक्षण आदि विषय रखे गए और इसी ड्राफ्ट को हिंदू कोड बिल का नाम दिया गया। इसे 12 क्षेत्रीय भाषाओं में छापा गया और विस्तृत स्तर पर प्रचार किया गया परंतु यह बिल राजनीतिक बाधाओं के कारण पास न हो सका

सन 1948 में कानून मंत्रालय द्वारा इस ड्राफ्ट में कुछ परिवर्तन किए गए ताकि संविधान सभा में इस ड्राफ्ट पर बहस करवाई जा सके। इस ड्राफ्ट को कानून मंत्री डॉक्टर बी. आर. अंबेडकर की अध्यक्षता में चयन कमेटी को सौंपा गया। जिसने इस ड्राफ्ट में कई महत्वपूर्ण संशोधन किए। इस संस्करण में आठ खंड थे।[5]

प्रथम – इसमें हिंदू कौन समझे जाएंगे और जाति प्रथा से दूर रहेंगे। अर्थात हिंदू कोड बिल उस पर लागू होगा जो मुस्लिम, पारसी, ईसाई, यहूदी नहीं है और सभी हिंदू एक कानून के अधीन होंगे।

द्वितीय – यह खंड विवाह से संबंधित था।

तृतीय – यह खंड हिंदू दत्तक ग्रहण से सम्बन्धित था।

चतुर्थ – यह खंड आरक्षण नियमों से सम्बन्धित था।

पंचम – यह खंड संयुक्त परिवार की संपत्ति से संबंधित था, जिसमें विवादित प्रश्न पारंपरिक संपत्ति को महिलाओं में बंटवारे हेतु था।

षष्ठ – यह खण्ड महिलाओं की सम्पत्ति के बारे में था।

सप्तम व अष्टम – ये दोनों खण्ड उत्तराधिकार व रखरखाव अधिनियम से सम्बन्धित थे।

परंतु डॉ आंबेडकर द्वारा प्रस्तुत इस बिल पर कई प्रश्न चिन्ह लगे जैसे तलाक की अनुमति देना, संपत्ति में महिलाओं का हिस्सा और सबसे विवादित कि हिंदू की परिभाषा में विभिन्न धर्म, परंपराओं, रीति रिवाजों को मानने वालों को भी शामिल करना जैसे जैन, बौद्ध व सिख। हिंदू कोड बिल पर संविधान सभा में 50 घंटे की बहस के बाद इसे 1 वर्ष के लिए लंबित कर दिया गया। जवाहर लाल नेहरू ने प्रस्तुत बिल को कई खंडों में बांटने और पहले 55 नियमों (जो विवाह व तलाक संबंधित थे) पर विचार करने का सुझाव दिया और बाकि पर आम चुनाव के पश्चात चयनित संसद द्वारा निर्णय लिए जाने की सलाह दी गई परंतु आश्चर्यजनक रूप से 1 सप्ताह की बहस के पश्चात 55 में से केवल 3 नियमों को ही पास किया गया। डॉ आंबेडकर ने हिंदू कोड बिल दोबारा असफल होने पर अपने कानून मंत्री के पद से इस्तीफा दे दिया।[6]

1951-52 में भारत में आम चुनाव करवाए गए। नेहरू ने हिंदू कोड बिल को अपने प्रचार का सबसे बड़ा मुद्दा बनाया और सरकार बनने पर इसे पास करवाने का वायदा किया। कांग्रेस को अप्रत्याशित सफलता मिली। नेहरू ने बिल को पास करवाने का भरसक प्रयास किया। नेहरू ने हिंदू कोड बिल को चार अलग-अलग भागों में प्रस्तुत करवाया जिसे संसद में कम विरोध का सामना करना पड़ा और 1952 - 56 के बीच भारतीय संसद द्वारा इसे पास कर दिया गया।

- 18 मई 1955 रू हिंदू विवाह अधिनियम।
- 17 जून 1956 रू- उत्तराधिकार अधिनियम।
- 25 अगस्त 1956 रू-हिंदू अल्पसंख्यक और संरक्षक।
- 14 दिसंबर 1956- हिंदू दत्तक ग्रहण और रखरखाव अधिनियम।

हिंदू कोड बिल और महिलाओं की यथार्थ स्थिति – भारतीय संसद द्वारा 1956 में हिंदू कोड बिल की स्वीकृति के साथ ही महिलाओं को वह सभी अधिकार प्राप्त हुए जिससे समाज में महिलाओं की स्थिति में एक सकारात्मक परिवर्तन आया और स्त्री को पुरुष के समकक्ष लाने में इस बिल ने महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई। 2005 में हुए संपत्ति संशोधन द्वारा लडकी को जन्म से ही अपने पिता की संपत्ति में अधिकार प्राप्त हुआ है। इन सभी प्राकृतिक अधिकारों के अतिरिक्त डॉक्टर अंबेडकर ने महिलाओं को स्वतंत्रता के पश्चात ही पुरुष के समान वे सभी मौलिक अधिकार उपलब्ध करवाएं जो उसे कभी प्राप्त नहीं थे परंतु प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जिन अधिकारों को दिलवाने में डॉ अंबेडकर, बी.एन.राव, जवाहरलाल नेहरू ने इतना प्रयास किया कि क्या कि वर्तमान समय में महिलाएं इन अधिकारों का सही मायने में प्रयोग कर रही हैं।

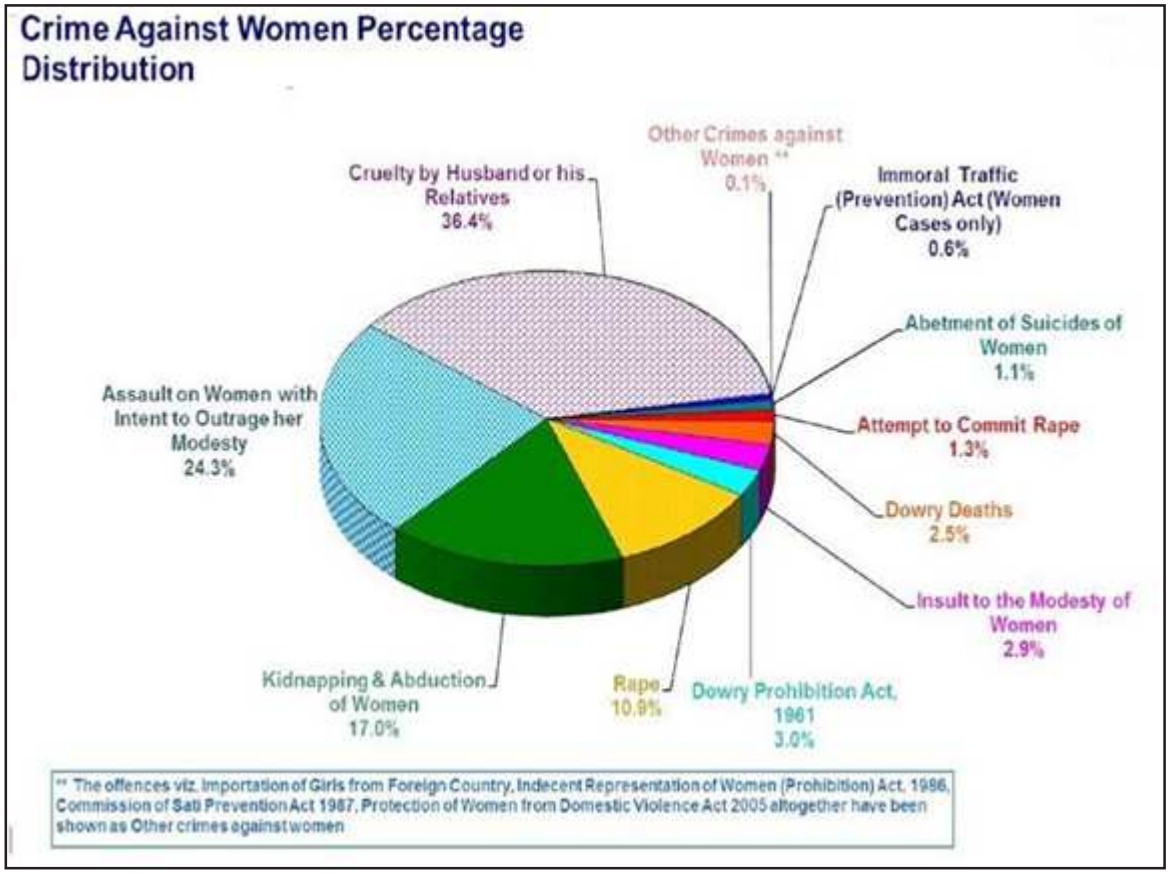
आज भी समाज में महिलाओं के प्रति दुर्व्यवहार जारी है और काफी हद तक इन सब के लिए वह स्वयं जिम्मेदार हैं क्योंकि अधिकारों के प्रयोग के अभाव में अधिकारों की प्राप्ति बेमानी लगती है। वर्तमान भारत में बहुत कम महिलाएं अपने पिता की संपत्ति में हिस्सा लेती हैं। वह अपना हिस्सा तो अपने भाई या उसके बच्चों को दे देती हैं क्योंकि समाज की बनावट ऐसी है कि आज भी महिलाओं को संपत्ति में हिस्सा लेना उचित नहीं माना जाता। समाज में आज भी 90 प्रतिशत महिलाओं की शादी घर वालों द्वारा तय की जाती है अर्थात् बिना उनकी सहमति से उनके जीवन साथी का चुनाव किया जाता है। ऐसे ही आज भी 80 प्रतिशत महिलाएँ अपनी इच्छा से तलाक नहीं ले सकती और संपूर्ण जीवन अपने पति को ही सौभाग्य मानकर अपना

स्वस्व समर्पित कर देती हैं और जीवन पर्यत घरेलू हिंसा, मारपीट, उत्पीडन, शोषण, अत्याचार, मानसिक कष्ट को सहन करती रहती हैं क्योंकि सामाजिक मानसिकता ही ऐसी है कि यदि एक बार जिस घर में दुल्हन बनकर चली गई बस उसी घर से अर्थी पर ही बाहर निकलना है,ऐसी प्रत्येक लडकी को बचपन से ही शिक्षा दी जाती है।**(चित्र देखे)**

संक्षेप में इतना ही कहा जा सकता है कि नारी को जितने अधिकार भारतीय समाज में मिले हैं, यदि महिलाएं 50 प्रतिशत भी उनका सही मायने में प्रयोग कर लें तो नारी की स्थिति में सुधार हो जाए परंतु एक अन्य सच्चाई जो भारतीय समाज को पिछड़ा हुआ बनाती है वह है इस समाज की मानसिक सोच और पुरुष प्रधान छवि का वर्र्चस्व। इसी कारण महिलाएं यदि अपने अधिकार को प्राप्त भी करना चाहें तो भी प्राप्त नहीं कर सकतीं। आज भी भारतीय नारी तुच्छ मानसिक सोच रुपी बेडियों में जकड़ी हैं। उसे इन बेडियों से स्वयं मुक्त होना होगा तभी हिंदू कोड बिल जैसे कानूनों की सार्थकता संभव है और इन बेडियों को तोडने के लिए भी उसे स्वयं प्रयास करना होगा अर्थात अपने आने वाली पीढियों की इस तुच्छ मानसिकता से मुक्त कर के परवरिश करनी होगी । तभी एक ऐसे भारतीय समाज का निर्माण होगा जिसकी कल्पना करते हुए डॉक्टर भीमराव अंबेडकर ने हिंदू कोड बिल जैसे कानून का प्रावधान रखवाया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल आर.सी. 'भारत सरकार तथा राजनीतिक अध्ययन', एस चन्द्र एंड कंपनी, दसवां संस्करण, 1982, पृष्ठ 74
2. आचार्य डॉ. दुर्गा दास बसु –'भारत का संविधान एक परिचय लेक्सस नेक्ससस बटरवर्थ बधवा, नागपुर, 2009, पृष्ठ–95
3. अग्रवाल आर.सी. 'भारत सरकार तथा राजनीतिक अध्ययन', एस चन्द्र एंड कंपनी, दसवां संस्करण, 1982, पृष्ठ 108
4. Mrs. Jyotsna Rathore – "Dr. B.R. Ambdekar role inwomen empowerment', the opinion voume 5- No. 10, July-Dec. 2016.
5. Hindu Code Bill –wikipedia.
6. उपरोक्त वही।



****

भारतीय समाज एवं नारी

डॉ. गरिमा पारीक *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति सदा से ही नारी शक्ति की पूजा का प्रतिपादन करती आयी है। हमारे ऋषियों की मान्यता थी कि जहाँ नारी को समुचित सम्मान मिलता है, वहाँ देवत्व विद्यमान होता है। आदिकाल से ही नारी अपनी मूलभूत शक्ति, जिसे हम संवेदना का नाम दे सकते है, के बलबूते इस गौरवास्पद सम्मान की अधिकारिणी रही है। वैदिक काल की ऋषिकाएं हों, चाहे क्रान्तिकारी उन्नीसवीं एवं बीसवीं सदी की महिलाएं, चाहे भारत एवं विश्वभर के अन्यान्य देशों में अवतरित हुई सेवा–धर्म की सिद्ध साधिकाएं हों अथवा समाजसेवी एवं शौर्य–पराक्रम की धनी असामान्य प्रतिभाएं, विभिन्न रूपों में नारी शक्ति ने सांस्कृति पहल पर जो छाप छोड़ी है, उसी से हमारी संस्कृति विनिर्मित हुई है।

आज चारों ओर नारी शक्ति को पददलित किया जा रहा है, उसकी अवमानना हो रही है, तथाकथित नारी मुक्ति के नाम पर उसका कामुक, भोग्यपरक स्वरूप उभारा जा रहा है, उसका आत्मबल उभरकर आगे नहीं आ पा रहा है। जिस समाज में दहेज की बलिवेदी पर बहुएं जलाई जाती हैं। जिस देश में सम्प्रदाय एवं वर्गभेद के नाम पर अत्यधिक शोषण एवं अत्याचार नारी शक्ति पर होता हो, जहाँ नर का पौरुष आततायी बलात्कारियों के रूप में वीभत्स ताण्डव नृत्य करता हुआ दिखाई पड़ रहा हो, समझ लेना चाहिए कि अब महाशक्ति महाकाली वीरांगना नारी के अवतरण का समय आ गया है।

विश्व की महान क्रांतिकारी महिलाओं ने ही वह पृष्ठभूमि विनिर्मित की, जो 21वीं सदी के विश्व राष्ट्र का निर्माण कर रही है। नारी को सामान्यत: अबला माना जाता रहा है किन्तु भावनाओं एवं अपनी ओजस्वी प्रेरणा, शौर्य भरे क्रिया–कलापों से वह पुरुष से भी अधिक बलवान व ओजस्वी सिद्ध होती है।

किन्तु नारी के वास्तविक स्वरूप को नजरअंदाज कर पुरुष वर्ग उसका विभिन्न रूपों में आज भी उत्पीड़न करता है। विडम्बना तो तब ओर भी परिलक्षित होती है, जब उसका सहयोग उसी की मां, बहन अथवा, भाभी करती है। महिला उत्पीड़न किसी न किसी स्वरूप में हमारे समाज में दृष्टिगोचर होता है।

हमारे संविधान में भी महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों को रोकने के विविध वैधानिक प्रावधान किए गए है। जिनकी सही जानकारी के आधार पर महिलाएं अमानुषिक अन्याय व अत्याचार से स्वयं का बचाव कर स्वयं व राष्ट्र के स्वाभिमान की रक्षा कर सकती है।

(1) महिला उत्पीड़न : विकराल अमानवीय कृत्य – महिला को जीवन के किसी भी क्षेत्र–मानसिक, शारीरिक, बौद्धिक तथा पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक रूप से प्रताड़ित करना, संताप देना, शारीरिक यातना देना, तिरस्कार पूर्ण व्यवहार करना, नीचा दिखाना, हीन भावना रखना, पैर की जूती समझना, उत्पीड़ित करना, परेशान करना, खेल बनाकर रखना, विभिन्न प्रकार से शोषण करना, अत्याचार करना, जुल्म करना, अपमानित करना, बलात्कार करना, अपहरण करना, जला देना, अंग–भंग करना, अश्लील आचरण करना, सती प्रथा, बाल विवाह, दहेज प्रथा, अकारण तलाक देना, भ्रूण हत्या, समाचार पत्र, पत्रिकाओं में ऐसी ही जानकारी प्रकाशित करना, टेलीविजन के चैनलों में इसी तरह की जानकारी दिखाना, नारी उत्पीड़न के अंतर्गत आता है।

पति का शराब पीकर पत्नी को मारना, पैसे की मांग करना, जुआ, सट्टा खेलना, गांजा, चरस, भांग, अफीम आदि मादक पदार्थों का सेवन करना, संतान के रूप में लड़कियां ही पैदा होना इसलिए लिंग परीक्षण कर भ्रूण हत्या करना तथा पत्नी को प्रताड़ित करना, संतान का सुंदर न होना, शिक्षित न होना, लड़की का सरकारी नौकरी में न होना, पैसा कमाकर न लाना, नारी का बोझ होना भी नारी को उत्पीड़ित करने के मुख्य कारण है।

इसके अतिरिक्त मोबाईल, वीडियो कैसेट, वी.सी.आर., कम्प्यूटर, इंटरनेट, रेडियो, सिनेमा के द्वारा नारी को उत्पीड़ित किया जाता है। इसके पीछे सबसे प्रमुख कारण आर्थिक स्थिति है। अर्थ ही इन सबका मूल कारण है।

इसके कारण समाज में ऐसी घटनाएं बढ़ती हैं, हत्याएं होती हैं, अपहरण होता है, लूटपाट होती है, अत्याचार बढ़ते हैं, पापाचार बढता है, नैतिकता का स्तर घटता है, अपराध बढ़ते है, समाज की आध्यात्मिकता कम होती चली जाती है।

कैसी विडम्बना है कि आज के समाज में भी स्त्री होना एक सजा है, एक दु:ख है? सृष्टि को चलाने वाली जन्मदात्री आज भी सिर्फ भोग्या ही बनी हुई है। उसका स्थान या तो देवालयों में निश्चित कर दिया गया है या उसे शोषित, पीड़ित, दोयम दर्जे की उपयोग की वस्तु ही माना गया है।

सदियों से औरत को मारने, उसे प्रताड़ित करने, उसके साथ बलात्कार करने या उसे पुरुष से नीचा दिखाने अथवा रखने के कई सारे बहाने, तरीके और परम्पराएं बना ली गई हैं, जो आज के पढे–लिखे सभ्य कहे जाने वाले आधुनिक समाज में भी न सिर्फ ज्यों की त्यों उपस्थित है, बल्कि और ज्यादा मजबूत तथा कट्टरता के साथ सामने आ रही हैं। बलात्कार अथवा हिंसा की बात हो या कम होती महिला संख्या की, महिला श्रम या नौकरी का मुद्दा हो या शिक्षा साक्षरता का, सबमें महिला भेदभाव और शोषण की शिकार है। और तो और, भोजन में भी महिला का हिस्सा बहुत कम है, उसमें भी उसके साथ भेदभाव किया जाता है।

अत: यह आवश्यक है कि महिलाएं इन अपराधों को गहराई से समझें,

* प्राचार्या (राजनीति विज्ञान) बाबा श्याम ऋषि संस्कृति पी.जी. महाविद्यालय, खाटूश्यामजी, सीकर (राज.) भारत

उनके आंकड़ों को जाने और फिर इसके खिलाफ लामबंद हो सकें।

1. कन्याओं की संख्या में आती न्यूनता
2. महिला श्रम को दोयम दर्जा
3. सक्रिय राजनीति से कोसों दूर
4. डायन परम्परा–महिला शोषण का प्रतीक
5. शिक्षा साक्षरता की न्यून स्थिति
6. महिला स्वास्थ्य में भेदभाव
7. पालन पोषण में भेदभाव
8. वेश्यावृत्ति–एक शर्मनाक कृत्य
9. रूढ़ सामाजिक कुमान्यताएं

कुछ परम्परा, संस्कृति, सोच अथवा कर्मकाण्डों ने भी महिलाओं को एक तरह से गुलाम बनाया है:–

पर्दा प्रथा:–

सौन्दर्य प्रतियोगिता:–

व्रत:–

श्रृंगार एवं वस्त्राभूषण:–

सौभाग्य चिन्ह:–

वंश चलाने के लिए लड़का:–

विवाह के बाद सरनेम परिवर्तन:–

विधवा महिलाओं की दुखद सामाजिक स्थिति:–

10. विज्ञापनों द्वारा मातृ शक्ति का उत्पीड़न
11. टीवी सीरियल्स द्वारा नारी का पीड़न
12. चलचित्रों द्वारा महिला उत्पीड़न
13. पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों द्वारा नारी उत्पीड़न
14. नारी की गरिमा की धज्जियां उड़ाते पोस्टर व होर्डिंग्स

(2) भारत में महिलाओं की स्थिति – प्राचीन काल में आर्यावृत्त में महिलाओं को पुरुषों के समान सम्मानजनक स्थिति प्राप्त थी परन्तु कालान्तर में विभिन्न आततियों के कारण नारी सम्मान कम होता चला गया। कतिपय समाजशास्त्रियों के अनुसार भारत में महिला आन्दोलन की शुरुआत 19वीं शताब्दी के मध्य से मानी जाती है, जब देश के कुछ महापुरुषों ने उन प्राचीन वैदिक परम्पराओं का सहारा लिया जिनमें महिलाओं को पुरूषों के बराबर का दर्जा दिया गया था। आर्य समाज ने इसी मार्ग को अपनाया। इन लोगों एवं संगठनों ने उस समय बाल–विवाह तथा सती प्रथा पर रोक लगवा कर स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह को आरम्भ करवाकर महिला आन्दोंलन के पक्ष में भूमिका तैयार की थी। विदेशी सत्ता के उस दौर में भी वे महिला के हक में कुछ कानून बनवा पाए थे।बाद में बीसवीं शताब्दी के दूसरे एवं तीसरे दशक में कई शिक्षित बुद्धिजीवी महिलाओं ने स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। राजा राममोहन राय, अगारकर, रानाडे, नटराजन, महात्मा फुले, हरविलास शारदा, पेरियार, विवेकानन्द, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, डॉ. अम्बेडकर जैसे कई महापुरूषों का योगदान महिलाओं को ऊपर उठाने के लिए आज भी याद किया जाता हैं।

(3) महिला व भारतीय संविधान – वर्तमान में महिला के पक्ष में अनेक कानून हैं, संविधान ने उन्हें कई बराबरी के अधिकार दिए हैं, परन्तु महिला की हालत आज भी शोषित, पीड़ित और दबी हुई ही है। कितना आश्चर्य है कि डेढ़ सौ साल पहले से सती प्रथा कानूनन जुर्म है परन्तु आज भी सती होती है। बाल–विवाह या दहेज लेना गैरकानूनी है परन्तु आज भी परम्परा के नाम पर दोनों प्रचलित हैं। स्त्री–पुरूष समान अधिकार का नारा जरूर है लेकिन बेटियॉ आज भी पैदा होते ही मार डाली जाती है। संविधान शिक्षा के मामले में कोई भेद नहीं करता। परन्तु साठ साल के पश्चात् भी महिलाएँ सबसे अधिक अशिक्षित हैं छेड़छाड़, बलात्कार, अपहरण, यौन शोषण, वेश्यावृत्ति जैसी महिला अत्याचार की घटनाएँ लगातार बढ़ रही हैं जबकि इनके खिलाफ कानून में अनेक सुविधाएँ है।

सुझाव :

1. समाज की सोच में परिवर्तन हेतु सरकार व स्वयंसेवी संगठनों को जिम्मेदारी पूर्वक कार्य करना होगा।
2. संवैधानिक एवं कानूनी अधिकारों की जानकारी महिलाओं तक अधिक से अधिक उपलब्ध करवाने की व्यवस्था करना।
3. युवाओं को महिलाओं के प्रति संवेदनशील बनाना।
4. मीडिया की भूमिका को ओर अधिक जिम्मेदार बनाना।
5. महिला एवं बालिका शिक्षा का व्यापक प्रचार/प्रसार।
6. महिलाओं को अधिक से अधिक आर्थिक स्वावलम्बी बनाना।
7. स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान सरकार द्वारा दिया जाना।
8. स्वैच्छिक संगठनों की महिला सुरक्षा हेतु रचनात्मक भूमिका।
9. महिलाओं की जीवन रक्षा एवं जीवन की सुरक्षा हेतु विशेष प्रावधान बनाना।
10. महिला स्वायत्ता व समानता को जमीनी स्तर पर लागू करना।
11. महिलाओं के लिए सभी क्षेत्रों में विकल्प तथा उनकी आवाज की प्रभावशीलता बढ़ायी जाए और सरकार की सभी संस्थाओं में उनका प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाएं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शेल्डे, हरिदास रामजी : नारी उत्पीड़न समस्या एवं समाधान, शीतल ऑफसेट, जयपुर 2008
2. जोशी, रामशरण : मीडिया और बाजारवाद, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2002
3. शर्मा, वीरेन्द्र प्रकाश : भारत में सामाजिक परिवर्तन, पंचशील प्रकाशन, जयपुर 1999
4. पाण्डे, मृणाल :परिध पर स्त्री, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली 2002
5. शर्मा, भगवती देवी : नारी श्रंगारिकता नहीं, पवित्रता है, युग निर्माण योजना, गायत्री तपो भूमि, मथुरा 1995
6. शर्मा, श्रीराम : महिला जागृति अभियान, युग निर्माण योजना, गायत्री तपो भूमि, मथुरा 1998
7. बोहरा, आशा :भारतीय नारी दशा–दिशा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, 1999
8. रानी, आशु : महिला विकास कार्यक्रम, विश्व भारती पब्लिकेशनस् नई दिल्ली 2008

महिलाओं को प्रभावित करने वाले अपराधों का एवं सजा के प्रावधानों का रेखाचित्र

अपराध	भारतीय दण्ड संहिता की धारा	अधिकतम सजा
विभिन्न गुटों के बीच धर्म, जन्म स्थान, आवास, भाषा आदि को लेकर झगड़ा पैदा करना, साम्प्रदायिक सद्भाव को खतरे में डालना।	153 ए	3 वर्ष
राष्ट्रीय एकता और अखण्डता विरोधी कार्य करना।	153 बी	5 वर्ष
सार्वजनिक, सरकारी कर्मचारी द्वारा अपने दायित्वों को निभाने के लिए रिश्वत लेना।	161	3 वर्ष
सरकारी कर्मचारी द्वारा बगैर किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति किए, सम्बन्धित व्यक्ति से किसी भी कार्य अथवा किए गए व्यवहार के बदले में बहुमूल्य वस्तु प्राप्त करना है।	165	3 वर्ष
कत्ल	302	आजीवन कारावास
दहेज–मृत्यु	304 बी	आजीवन कारावास
आत्महत्या के लिए दबाव डालना	306	10 वर्ष
कत्ल करने की कोशिश	307	आजीवन कारावास
मार–पीट गंभीर चोट पहुँचाना	319, 323	3 मास से 7 वर्ष
ऐसे कार्य जिनमें दूसरों की सुरक्षा और जीवन पर खतरा उत्पन्न हो।	334,336,338 336	3 माह से नरम 7 माह से कठोर
जानबूझ कर दूसरों को गंभीर चोट पहुंचाना	325, 322	7 वर्ष
नजरबन्द रखना (साधारण या 10 दिन से अधिक)	340 344	3 वर्ष 7 वर्ष
औरत की शालीनता भंग करने की मंशा से हिंसा या जबरदस्ती करना।	354	2 वर्ष
अपहरण, भगाना या औरत को शादी के लिए मजबूर करना।	366	10 वर्ष
नाबालिग लड़की को कब्जे में रखना।	366–ए	10 वर्ष
बलात्कार (सरकारी कर्मचारी द्वारा या सामूहिक बलात्कार अधिक गंभीर माना उम्र कैद जाता है)	376	2 वर्ष से 10 वर्ष
चोरी	378	3 वर्ष
विश्वास भंग करना या विच्छेद (यह धाराएं इन साहूकारों पर लागू हो सकती हैं जो गिरवी के गहने समय पर वापस न करें)	405, 406 415, 418 419, 420 421	1 से 7 वर्ष तक
घर में घुसपैठ करना, रात में सेध लगाना हिंसा की मंशा और तैयारी से घर में घुसना आदि।	458	7 वर्ष
पहली पत्नी के जीवित होते हुए दूसरी शादी करना।	494	7 वर्ष
व्यभिचार	497	5 वर्ष
पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा औरत पर क्रूरता।	498–ए 3	वर्ष
बेइज्जती करना, झूठे आरोप लगाना।	499	2 वर्ष
महिला की शालीनता को अपमानित करने की मंशा से अपशब्द कहना या अश्लील हरकतें करना।	509	1 वर्ष

पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का एकात्म मानववाद का सिद्धान्त

डॉ. वर्चसा सैनी *

प्रस्तावना – भारत वर्ष में जितने महापुरुषों ने जन्म लिया, उसमें एक पंडित दीनदयाल उपाध्याय की गणना भारतीय महापुरुषों में इसलिए नहीं होती है कि वे किसी खास विचारधारा के थे बल्कि उन्होंने किसी विचारधारा या दलगत राजनीति से परे रहकर राष्ट्र को सर्वोपरि माना। राजनीति में उच्च से उच्चतर पद पाने के अनेक अवसर उनके समक्ष थे लेकिन उन्होंने हमेशा अपने को एक राष्ट्र सेवक के रूप में ही स्थापित किया। उन्होंने भारत के लिए चिन्ता की और कहा कि भारत की सांस्कृतिक विविधता ही उसकी असली ताकत है और इसी के बूते पर वह एक दिन विश्व मंच पर अगुवा राष्ट्र बन सकेगा। दशको पहले उनके द्वारा स्थापित यह विचार आज मूर्त रूप ले रहा है।

महामानव पंडित दीनदयाल उपाध्याय भारत में राष्ट्रवाद, व्यक्तित्व, चिंतन त्याग और तप का एक महान और आदर्श चरित्र थे। वे मूलत: श्रेष्ठ लेखक, पत्रकार, विचारक, प्रभावी वक्ता और प्रखर राष्ट्रभक्त थे, सादा जीवन उच्च विचार के वे सच्चे प्रतीक व भारतीय राजनीतिक चिन्तन में एक नए विकल्प 'एकात्म मानववाद' के मंत्रद्दष्टा थे। उन्होंने शुचिता की राजनीति के कई प्रतिमान स्थापित किए। उनकी प्रतिभा देखकर ही श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने कहा था कि यदि मेरे पास एक और दीनदयाल उपाध्याय होता तो मैं भारतीय राजनीति का चरित्र ही बदल देता। उन्होंने भारत वर्ष को मानव समाज की पश्चिम की सभी परिकल्पनाओं को नकारते हुए 'एकात्म मानववाद' जैसा अद्भुत और पूर्ण दर्शन दिया और जिया। 2015–2016 'एकात्म मानववाद' का स्वर्ण जयंती वर्ष रहा है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय की 100वीं0 जयंती माह 25 सितम्बर 2015 से सितम्बर 2016 तक मनायी गई है। आजादी के बाद जब कांग्रेस व्यक्ति वाद और समाज वाद के साथ दिखायी दी तो पंडित दीनदयाल जी ने कहा कि क्या कारण है कि हम आज भी यूरोप के सिद्धान्तों का पालन करें। क्या हमारा स्वयं का कोई सिद्धान्त नहीं हो सकता ? तब पंडित दीनदयाल जी ने व्यक्तिवाद, पूंजीवाद एवं समाजवाद से ऊपर उठकर 'एकात्म मानववाद' का दर्शन भारतवासियों को कराया।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने भारत की सनातन विचारधारा को युगानुकूल रूप में प्रस्तुत करते हुए देश को एकात्म मानव दर्शन जैसी प्रगतिशील विचारधारा दी। भारतीय चिन्तन परम्परा में उनका स्थान काफी महत्वपूर्ण है। भारतीय चिन्तन परम्परा में उनकी महत्ताा इसलिए है कि उन्होंने पश्चिम के खंडित दर्शन के स्थान पर भारतीय जीवन पद्धति में समाहित 'एकात्म मानववाद' के दर्शन को आधुनिक सन्दर्भ में प्रस्तुत किया है। दीनदयाल जी की विकास अवधारणा पश्चिमी अवधारणा से बिल्कुल विपरीत है। इतना तो सब मानते हैं कि मानव जीवन के समस्त क्रियाकलापों का उद्देश्य सुख की प्राप्ति है और मानव के यह क्रियाकलाप ही उसके विकास का रास्ता है। पश्चिम के लोग और शायद हमारे देश के नीतिनिर्धारक भी यह मानते हैं कि जहाँ ज्यादा उपभोग होते हैं, वहाँ ज्यादा सुख होता है, वही विकास का प्रतीक होता है परन्तु पंडित दीनदयाल उपाध्याय उपभोग या सुख को विकास का पर्याय नहीं मानते थे। उनका मानना था कि मन की स्थिति ही सुख की अवधारक है। मन पर नियन्त्रण की वास्तविक विकास है। वह स्पष्ट तौर पर कहते थे कि उपभोग के विकास का रास्ता राक्षसत्व की ओर जाता है और मन को नियंत्रित करने का विकास का रास्ता देवत्व की ओर जाता है। दीनदयाल जी इस देवत्व के रास्ते का अनुसंधान कर रहे थे परन्तु यह ठीक है कि यह नया रास्ता नहीं था। महात्मा गाँधी जी भी एक सीमा तक उपभोग के विरूद्ध थे। मनुष्य की जितनी भौतिक आवश्यकताएँ है, उनकी पूर्ति का महत्व को भारतीय चिन्तन ने स्वीकार किया, परन्तु उसे सर्वस्व नहीं माना। मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा की आवश्यकता की पूर्ति के लिए और उसकी इच्छाओं और कामनाओं की संतुष्टि और उसके सर्वांगीण विकास के लिए भारतीय संस्कृति में पुरुषार्थ चतुष्टय की जो अवधारणा है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने उसे आज के युग में भारत के समग्र विकास का मूल आधार मानते थे। पुरुषार्थ की यह चार अवधारणाए है–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। पुरुषार्थ का अर्थ उन कर्मो से है, जिनसे पुरुषत्व सार्थक हो। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की कामना मनुष्यों में स्वाभाविक होती है और उनके पालन से उसको आनन्द प्राप्त होता है। मनुष्य की भौतिक आवश्यकता व अन्य आवश्यकताओं को पश्चिम की दृष्टि से सुख माना गया है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार अर्थ और काम पर धर्म का नियंत्रण रखना आवश्यक है और धर्म के नियंत्रण से ही मोक्ष पुरुषार्थ प्राप्त हो सकता है। यद्यपि भारतीय संस्कृति में मोक्ष को परम पुरुषार्थ माना गया है तो भी अकेले उसके लिए प्रयत्न करने से मनुष्य का कल्याण नहीं होता। वास्तव में अन्य पुरुषार्थ की अवहेलना करने वाला कभी मोक्ष का अधिकारी नहीं हो सकता। व्यापार करने वाले पश्चिम के लोगों ने कहा कि 'ऑनेस्टी इज दी बेस्ट पॉलिसी' अर्थात सत्यनिष्ठा ही श्रेष्ठ नीति है। भारतीय चिन्तन के अनुसार सत्यनिष्ठा हमारे लिए नीति नहीं है बल्कि सिद्धान्त है। यही धर्म है और अर्थ और काम का पुरुषार्थ धर्म के आधार पर चलता है। राज्य का आधार भी हमने धर्म को माना है।

पंडित दीनदयाल जी के अनुसार अर्थ का अभाव के समान अर्थ का प्रभाव भी धर्म का द्योतक होता है, जब व्यक्ति और समाज में अर्थ साधन न होकर साध्य बन जाए तथा जीवन के सभी विभूतियाँ अर्थ से प्राप्त हो तो अर्थ का प्रभाव उत्पन्न हो जाता है और अर्थ संचय के लिए व्यक्ति नानाविध पाप करता है। इसी प्रकार जिस व्यक्ति के पास अधिक धन हो तो उसके विलासी

*(राजनीति विज्ञान) जे.के.पी. (पी.जी.) कालेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

बन जाने की अधिक सम्भावना है। पश्चिम में व्यक्ति के कोई जीवन को टुकड़े-टुकडे में विचार किया, जबकि भारतीय चिन्तन में व्यक्ति के जीवन का पूर्णता के साथ संकलित विचार किया है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार हमारे चिन्तन में व्यक्ति के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा सभी का विकास करने उद्देश्य रखा है। उसकी सभी भूख मिटाने की व्यवस्था है किन्तु यह ध्यान रखा कि एक भूख को मिटाने के प्रयत्न में दूसरी भूख न पैदा कर दें और दूसरे के मिटाने का मार्ग बन्द न कर दें। इसलिए चारों पुरुषार्थी को संकलित विचार किया गयाहै। यह पूर्ण मानव तथा एकात्म मानव की कल्पना है जो हमारे आराध्य तथा आराधना साधना दोनों ही है। एकात्म मानववाद इस मायने में सबसे ज्यादा प्रासंगिक और उल्लेखनीय हुआ क्योंकि पहली बार किसी भारतीय व्यक्ति ने अपने राजनीतिक दल के लिए सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति की सामाजिक, राजनीतिक, दार्शनिक, आर्थिक जीवन शैली को एक विचार के रूप में भारतीय जनता पार्टी का दर्शन बना दिया। भारतीय सभ्यता और दर्शन राजनीतिक रूप से एक विचार बन गया। इस तरह पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद को बिखरी हुई बहुआयामी भारतीय चिंतन परम्परा को राजनीतिक दर्शन का आकार देने का श्रेय दिया जाता है। एकात्म मानववाद में पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने देश की राजनैतिक व्यवस्था व अर्थतन्त्र का गहन अध्ययन कर शुक्र, वृहस्पति और चाणक्य की तरह आधुनिक राजनीति को बदलने के लिए रास्ता सुझाया। इसके माध्यम से उन्होंने बताया कि भारतीय संस्कृति समाज व सृष्टि का ही नहीं अपितु मानव के मन, बुद्धि, आत्मा और शरीर का समुच्चय है। एकात्म मानववाद के प्रणेता पंडित दीनदयाल उपाध्याय का मानना था कि भारत वर्ष विश्व में प्रथम रहेगा तो अपनी सांस्कृतिक संस्कारो के कारण उनके द्वारा स्थापित एकात्म मानववाद की परिभाषा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ज्यादा सामयिक है। उन्होंने कहा था कि मनुष्य को चरम सुख और वैभव की प्राप्ति हो सकती है। जब किसी मनुष्य के शरीर के किसी अंग में कांटा चुभता है तो मन को कष्ट होता, बुद्धि हाथ को निर्देशित करती है कि तब हाथ चुभे हुए स्थान पर पल भर में पहुँच जाता है और कांटे को निकालने की चेष्टा करता है। यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। सामान्यत: मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा इन चारों की चिन्ता करता है। मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति को पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने 'एकात्म मानववाद' की संज्ञा दी। उन्होंने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के सिद्धान्त पर जोर दिया, उन्होंने कहा कि संस्कृति-प्रधान जीवन की यह विशेषता है कि इसमें जीवन के मौलिक तत्वों पर जोर दिया जाता है पर शेष बाह्य बातों के सम्बन्ध में प्रत्येक को स्वतंत्रता रहती है। इसके अनुसार व्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रत्येक क्षेत्र में विकास होता है। संस्कृति किसी काल विशेष अथवा व्यक्ति विशेष के बन्धन से जकड़ी हुई नहीं है अपितु यह तो स्वतंत्र एवं विकासशील जीवन की मौलिक प्रवृत्ति है। इस संस्कृति को ही हमारे देश में धर्म कहा गया। जब हम कहते हैं कि भारत धर्म प्रधान देश है तो इसका अर्थ मजहब, मत या रिलीजन नहीं अपितु यह संस्कृति ही है। उनका मानना था कि भारत की आत्मा को समझना है तो उसे राजनीति अथवा अर्थनीति के चश्में से न देखकर सांस्कृतिक दृष्टिकोण से ही देखना होगा। भारतीयता की अभिव्यक्ति राजनीति के द्वारा न होकर उसकी संस्कृति के द्वारा ही होगी। समाज में जो लोग धर्म को बेहद संकुचित दृष्टि से देखते और समझते हैं तथा उसी के अनुकूल व्यवहार करते हैं, उनके लिए पंडित दीनदयाल उपाध्याय की दृष्टि को समझना और भी जरूरी हो जाता है। वे कहते हैं कि यदि विश्व को हम कुछ सिखा सकते हैं तो उसे अपनी सांस्कृतिक सहिष्णुता एवं कर्तव्य-प्रधान जीवन की भावना की शिक्षा दे सकते हैं, राजनीति अथवा अर्थनीति की नहीं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने पश्चिम के खण्डित अवधारणा के विपरीत एकात्म मानव की अवधारणा पर जोर दिया।

एकात्म मानववाद को सर्पिलाकार मण्डलाकृति द्वारा समझा गया, जिसमें यह स्पष्ट होता है कि कैसे केन्द्र में व्यक्ति, व्यक्ति से जुड़ा हुआ एक घेरा-समाज, जाति, फिर राष्ट्र विश्व और फिर अनन्त ब्रह्मांड से लेकर व्यक्ति तक एक श्रंखला में जुड़ी हुई है और सभी का अस्तित्व एक-दूसरे पर निर्भर है, यहाँ जीने के लिए कोई संघर्ष नहीं है। इस तरह यह दक्षिणपंथी विचारधारा यूरोप की Survival of the fittest के विचार को नकारती है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने अपने जीवनकाल में एकात्म मानववाद का जो सिद्धान्त प्रतिपादित किया, वह आज दशकों बाद भी सामयिक बना हुआ है। आवश्यकता इस बात की है कि दीनदयाल जी के एकात्म मानववाद के सिद्धान्त को व्यवहारिक स्तर पर उतारने का प्रयास किया जाए। शायद वह दिन दूर नहीं जब भारत विश्व मंच पर पूरी दुनिया को राह दिखाने वाला होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम्पादक संजय द्विवेदी - भारतीयता का संचारक पंडित दीनदयाल उपाध्याय, प्रकाशक - विज्डम पब्लिकेशन।
2. तिलक रेलन - पंडित दीनदयाल उपाध्याय का साभार।
3. मनोज कुमार - एकात्म मानववाद के प्रणेता पंडित दीनदयाल उपाध्याय मीड़िया मोर्चा 18 सितम्बर 2013

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018, Vol. I, Issue XXI

पंडित दीनदयाल उपाध्याय के राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद संबंधी विचारों का अध्ययन

डॉ. पी. के. चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – 'एकात्म मानववाद' नामक नूतन एंव मौलिक दर्शन के प्रतिपादन पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक प्रखर दार्शनिक चिन्तक, कुशल संगठनकर्ता, दूरदर्शी राजनीतिज्ञ एंव महान मार्गदर्शक थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति को केन्द्र में रखकर समकालीन राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन के प्राय: सभी पक्षों पर उत्कृष्ट चिन्तन किया। उन्होंने प्राचीन और अर्वाचीन विचारों को समन्वित करते हुए अपने निष्कर्ष निकाले तथा मौलिक विचार प्रस्तुत किए। उनके राजनीति विचारों में भारतीय राजनीतिक दर्शन का आदर्श विद्यमान है। इसके आधार पर उन्होंने अपनी विशिष्ट शैली में भारतीय समस्याओं के समाधान प्रस्तुत किए हैं, जो कि आज के समय में उपयोगी विचारणीय एवं अनुक्रणीय हैं।

भारतीय चिन्तन प्रणाली – पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने भारत में राष्ट्र जीवन के विकास के लिए भारतीय चिन्तन प्रणाली और भारतीय राजनीति तथा दर्शन को अपनाए जाने पर जोर दिया है। उनकी मान्यता थी कि विदेशों से उधार ली गई विचार प्रणालियों में भारत की सभ्यता एवं संस्कृति प्रकट नहीं हो सकती है, इसलिए पाश्चात्य देशों के निष्कर्षो को भारत पर लादना या उनकी कसौटी पर भारत को कसना उचित और न्यायमुक्त नहीं हो सकता है। इनके आधार पर भारत की समस्याओं को समझना और उन्हें हल करना भी सम्भव नहीं हो सकता है।

राष्ट्र और विश्व – पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार राष्ट्र केवल नदियों, पहाडों, मैदानों,कंकडों के ढेर से नहीं बनता है। वह केवल भौतिक इकाई नहीं है। इसके लिए देश में रहने वाले लोगों के हदय मे उसके प्रति असीम श्रद्धा की अनुभूति होने की आवश्यकता होती है। इसी श्रद्धा की भावना के कारण देशवासी अपने देश को मातृभूमि मानते हैं। विस्तृत भू प्रदेश में अनेक प्रकार की विविधताएं हो सकती है। लोगों की भाषाएं भिन्न हो सकती है, वेशभूषा में अंतर हो सकता है। खान–पान में भिन्नता हो सकती है। लेकिन यदि अन्त:करण में मातृभूमि के प्रति आडिग श्रद्धा हो,तो सब प्रकार की विविधताओं में भी समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्र को बहुत अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं किन्तु विश्व को एक परिवार की तरह भी जानते हैं। उनके अनुसार राष्ट्र और विश्व के हितों में टकराव नहीं है बल्कि समन्वय है। दोनों एक दूसरे के पोषक हैं।

भारतीय राष्ट्रवाद – पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार भारत में राष्ट्रवाद मानव कल्याण और उदार जीवनदर्शन का एक रूप है। यहॉ संघर्ष को नहीं बल्कि पूरकता को तथा द्वैत को नहीं बल्कि अद्वैत को अधिक महत्व दिया गया है। भारत में विभिन्न सम्प्रदायों का आदर हुआ है, उन्हें कुचला नहीं गया है। भारतीय राष्ट्रवाद में प्राणिमात्र के प्रति कल्याण की भावना है। भारत का राष्ट्रवाद विनाशकारी नहीं है। बल्कि विश्व विरोधी संघर्ष में सहायक न होकर मानव कल्याण व विश्व एकात्मकता का समर्थक है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का मत है कि भारतीय राष्ट्रवाद सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। भारत की एकता का आधार यहॉ की संस्कृति है। हिन्दु धर्म को उन्होंने पंथ नहीं बल्कि एक ऐसी जीवन पद्धति माना जिसमें सबको अपने अंदर समा लेने की अत्यंत गौरवशाली भावना है। उनके अनुसार भारत विश्व के देशों पर अधिकार नहीं जमाना चाहता, बल्कि वह विश्व युद्ध के विरूद्ध है।

भारत साम्राज्यवाद का विरोधी है तथा सहअस्तित्व पर जोर देता है। राष्ट्र और संस्कृति परस्पर आश्रित है। संस्कृति,जन और भूमि के पारस्परिक संबंधों, क्रिया, प्रतिक्रियाओं का परिणाम होती है। भूमि, जन और संस्कृति के संघात से राष्ट्र का निर्माण होता है। भारत की भूमि में रहने वाला और उसके प्रति लगाव की भावना रखने वाला मानव समूह एक जन है। उनकी जीवन प्रणाली,कला,साहित्य,दर्शन सब भारतीय संस्कृति है। भिन्न–भिन्न जाति तथा पंथो का एक रस स्वरूप ही भारतीय राष्ट्र है। भारत की अंखडता की भांति उसकी संस्कृति भी सम्मिश्र न होकर एकात्म है। भारतीय राष्ट्रवाद का आधार यह संस्कृति ही है। जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टि होने से ही इसमें समन्वय हुआ है।

राष्ट्र और राज्य – पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने राष्ट्र और राज्य में अंतर करते हुए राष्ट्र को राज्य की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण और स्थाई माना है। उनके अनुसार राष्ट्र एक जीवमान इकाई है। जिसका शताब्दियों के लम्बे कांलखण्ड में विकास होता है। उनके अनुसार राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए राज्य होता है। राज्य एक व्यवस्था है जो राष्ट्र के लोगों के जीवन में आई विकृति को दूर करती है ,कमजोर लोगों के हितों की रक्षा करती है, जनता का कल्याण करती है तथा अन्य राज्यों से संबंध बनाने एंव रक्षा करने का कार्य करती है। यदि राज्य में राष्ट्रीय भावनाएं न हो तो वह राष्ट्र नहीं रह सकता परन्तु वह राज्य रह सकता है। राज्य के लिए प्रभुसत्ता आवश्यक है, परन्तु राष्ट्र कि लिए यह तत्व आवश्यक नही है। स्वतंत्रता खो देने पर राज्य न हो होने की स्थिति में राष्ट्र ही विदेश शक्ति के विरूद्ध प्राणपन से लडता है। राष्ट्र, राज्य की अपेक्षा स्थाई, दृढ, चैतन्य, भावनात्मक और आध्यात्मिक बंधनों से युक्त होता है। राज्य समाप्त हो सकता है, स्थगित हो सकता है , पराजित हो सकता है , किन्तु राष्ट्र नहीं। राज्य,राष्ट्र की सेवा के लिए होता है। जो राज्य राष्ट्र की उचित ढंग से सेवा न करता हो,उसे बदला जा सकता है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार सच्ची सामर्थ्य राष्ट्र में रहती है, अत: व्यष्टि और समष्टि जीवन के कल्याण के लिए प्रत्येक

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, हाटपीपल्या, जिला, देवास (म.प्र.) भारत

कार्य का केन्द्र राष्ट्र होना चाहिए।

निष्कर्ष – पंडित दीनदयाल उपाध्याय के लिए राष्ट्र सर्वोपरि था। उन्होंने समस्त राजनीतिक गतिविधियों के केन्द्र में भी राष्ट्रवाद को ही स्थान दिया। उन्होंने क्षुद्र आधारों पर बने संगठनों को अस्थाई एंव अव्यावहारिक माना। इसी आधार पर उन्होने यह निष्कर्ष निकाला कि समस्त चिन्तन का तथा सभी प्रकार के कार्यो का अंतिम ध्येय राष्ट्रहित होना चाहिए। यदि राष्ट्र का स्मरण कर कार्य होगा तो सबका मूल्य बढेगाा। राष्ट्र को छोडा तो सब शून्य जैसा ही है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने राष्ट्र और राष्ट्रवाद को केन्द्र में रखकर भारत की प्राय:सभी समस्याओं पर विचार किया है। व्यापक दृष्टि से देखने पर यह निष्कर्ष निकलता है , कि उन्होंने सभी प्रकार की संकुचित निष्ठाओं को त्याग कर सब को अपने में समाहित कर लेने वाले राष्ट्रवाद की वकालत की है। तथा इसी के आधार पर राष्ट्रीय एकात्मकता की स्थापना का समर्थन किया है। उनके ये विचार आज भी प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राष्ट्र जीवन की दिशा – पंडित दीनदयाल उपाध्याय।
2. विचार दर्शन – पंडित दीनदयाल उपाध्याय।
3. राष्ट्र जीवन की समस्याएं – पंडित दीनदयाल उपाध्याय।
4. पोलिटिकल डायरी – पंडित दीनदयाल उपाध्याय।
5. नवमानववाद – डॉ.डी.डी.बंदिष्टे।

****

भारीया जनजाति के राजनीतिक संगठन में आधुनिक ग्राम पंचायतों के प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (पातालकोट के विशेष संदर्भ में)

कंचन ठाकुर *

प्रस्तावना – भारत में जनजातिय समाज जिसकी वर्तमान में कुल जनसंख्या दस करोड़ से भी अधिक है। इस संबंध में अनेक भ्रांतियां रही है, भारत की संपूर्ण जनसंख्या का करीब 8 प्रतिशत भाग आदिम जातियों या जनजातियों द्वारा निर्मित है।

विभिन्न पाश्चात्य विद्धानों ने भारतीय जनजातियों के इतिहास पर काई सामग्री उपलब्ध नही कराई उन्हें इतिहास–विहीन समाज बताकर छोटा आंकने का प्रयास किया है। इसके अलावा विदेशी लेखकों ने ऐतिहासिक प्रमाणों के उपलब्ध न होने पर भी जनजातियों को गूढ तथा असभ्य कहने की भूल की और जड़ समाज के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है। अनेक दुर्गम क्षेत्रों में आज भी अनेक ऐसे मानव समूह पाए जाते है। जो पिछले सैकड़ों वर्षो से शेष संसार की सभ्यता से दूर रहकर अपनी सामाजिक एवं सास्कृतिक दृष्टि से पहचान बनाए हुए ये मानव समूह घने जंगलों, ऊंचे पर्वतों, मरूस्थलों एवं पठारी क्षेत्रों में निवास करते है। उन क्षेत्रों को सामान्यत: अनुत्पादक माना जाता है। इन्हें आदिम या आदिवासी इसलिये कहा जाता है कि ये भारत के प्राचीनतम निवासी माने जाते है और सम्भवत: भारत में द्रविड़ों के आगमन से पूर्व यहां ये ही लोग निवास करते थे। वेरियर एलिवन भी उन्हें आदिम जाति के नाम से संबोधित करते है।

हमारे भारत वर्ष का प्रजातिय इतिहास सदा से ही उल्लेखनीय रहा है। यहां प्राचीनकाल से ही विभिन्न प्रजातिय समूहों का आवागमन होता रहा है। तथा इस देश की एक विशेषता यह है कि यह कुछ विशिष्टता रखता है। शोधकर्ता द्वारा चयनित अध्ययन क्षेत्र पातालकोट भी भारत की हृदय स्थिति मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा जिले में स्थित है। छिन्दवाड़ा आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र है। और यह हमेशा से ही जिज्ञासा का केन्द्र बना हुआ है। मध्यप्रदेश की 46 जनजातियों में से विशेष पिछड़ी जनजातियों का दर्जा प्राप्त जनजातियां भारिया सहरिया बैगा, जिनमें से एक भारिया जनजाति की निवासी स्थली भी यहीं पर है।

2011 के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 20,90,306 है, जिसमें 10,63,362 पुरूष व 10,27,004 महिलाऐं है। मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या का 2.88 प्रतिशत भाग इस जिले में निवास करती है।

छिन्दवाड़ा जिले की आदिवासी तहसील तामिया में पातालकोट घाटी में स्थित भारिया जनजाति को 12 ग्रामों में निवास करते देखा जा सकता है। इस क्षेत्र में निवासरत भारिया अलग–थलग एक ऐसा जीवन जी रहे है, जिसमें उनकी अपनी मान्यताएं है, अपनी संस्कृति अर्थव्यवस्था एवं राजनीतिक संगठन आज वर्तमान में हमें थोड़े बहुत परिवर्तनों के साथ देखने को मिलती है। इनका रहन सहन खान–पान आर्थिक सामाजिक स्थिति निम्न है और स्वच्छ शिक्षा का प्रतिशत भी औसतन कम ही है। इस स्थान की दुर्गमता ने यहां की जनजातिय जीवन एवं संस्कृति को यथावत रखने में सहायता की है।

उक्त शोध पत्र भारिया जनजाति के राजनीतिक संगठन में आधुनिक ग्राम पंचायतों के प्रभाव का अध्ययन पर आधारित है।

भारिया जनजाति में भी अन्य जनजाति की भॉति सामाजिक नियंत्रण एवं व्यवस्था बनाए रखने हेतु राजनैतिक संगठन पाए जाते है। अध्ययन के दौरान ग्राम घटलिंगा में भारिया जनजाति के लोगों के समाज के राजनैतिक संगठन का स्वरूप कुछ इस तरह देखने को मिलता है। जिसमें 1. जाति पंचायत, 2. ग्राम पंचायत, 3. आधुनिक ग्राम पंचायत अपने अपने स्तर पर कार्य करती है। भारिया जनजाति की राजनीतिक संगठन का यथा स्थिति क्या है ? इसे ज्ञात करने हेतु शोध अध्ययन किया गया है।

आवश्यकता – इस शोध अध्ययन की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि भारिया जनजाति म.प्र. की विशेष पिछड़ी जनजातियों में से एक है। इनका आर्थिक एवं सामाजिक, शैक्षणिक स्तर आज भी अन्य जनजातियों की अपेक्षा निम्न पाया गया है। तामिया विकासखण्ड जैसी वृहत परियोजना को ध्यान में रखते हुए, तामिया एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना की स्थापना 1975–76 में की गई तथा 1990 में परियोजना का पुनर्निमाण किया गया। इस क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिए परिवार मूलक कार्यक्रम भारिया विकास अभिकरण एवं अन्य विभागों के माध्यम से संचालित हो रही है। इसके बावजूद भी परिवर्तन एवं विकास की दौड़ में पीछे है। इस जनजाति के पीछे कोई न कोई प्रश्न घूमता रहा है।

उपकल्पना – भारिया जनजाति में सामाजिक नियंत्रण के लिये वर्तमान में परंपरागत राजनैतिक में संगठन में पाया जाता है। भारिया जनजाति की महिलाओं में राजनैतिक क्रियाकलापों में रूचि कम दिखाई दे रही है। वर्तमान में परम्परागत राजनीतिक संस्थाओं के साथ–साथ आधुनिक ग्राम पंचायत का महत्व भी दिखाई दे रहा है।

उद्देश्य – भारिया जनजाति की राजनीतिक संगठनात्मक, वर्तमान स्थिति को ज्ञात करने के उद्देश्य निम्नानुसार है।

1. सर्वप्रथम भारिया जनजाति के परम्परागत राजनीतिक संगठन का अध्ययन करना एवं आधुनिक ग्राम पंचायतों के प्रभावों को ज्ञात करना मुख्य उद्देश्य।
2. भारिया जनजाति में जाति पंचायतों के कार्य एवं निर्माण संबंधी क्रिया–कलापों को ज्ञात करना।
3. मत निश्चित करने में भारिया महिलाओं की जागरूकता का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र एवं शोध प्रविधि – शोध पत्र का अध्ययन क्षेत्र पातालकोट

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय गृह विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

79 वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है। जिसमें 12 ग्राम है। जिसमें 503 परिवार है। वर्तमान में तीन ग्राम पंचायतों में हर्रा कछार, घटलिंगा, और काटेआम रातेड़ में ये जनजाति निवासरत है। यहां की कुल जनसंख्या 2011 के अनुसार 2561 है, जिसमें 1290 पुरूष और 1271 महिलाए है। जिसमें से देव निदर्षन विधि के माध्यम से 100 परिवारों का चयन कर तथ्य एकत्र किए गए शोध अध्ययन में प्राथमिक एवं द्धितीयक तथ्यों के संकलन के लिए अवलोकन सर्वेक्षण, साक्षात्कार, प्रश्नावली, अनुसूची, देव निदर्शन आदि वैज्ञानिक प्रविधियों का उपयोग कर तथ्य संकल किए गए है।

विश्लेषण – भारिया जनजाति के राजनीतिक संगठन में आधुनिक ग्राम पंचायत के प्रभाव के अध्ययन के उपरांत जो तथ्य सामने आए उनका विश्लेषण इस प्रकार है। भारिया जनजाति के लोगों में मतदान के प्रति जागरूकता में कमी पाई गई है। मात्र 56.67 प्रतिशत लोग ही मतदान करना चाहते है और 43.33 प्रतिशत लोग मतदान नही करना चाहते। साक्षात्कार के दौरान पूछने पर यह तथ्य प्राप्त हुए कि जिसे वोट चाहिए वो हमें पहले रोजगार, पैसा आदि उपलब्ध कराये जब हम अपना वोट देंगे।

भारिया जनजाति में जाति पंचायत के कार्य एवं निर्णय संबंधी तथ्यों का विश्लेषण करने पर यह ज्ञात हुआ कि 50 प्रतिशत लोगों के विचार से जाति पंचायतों का मुख्य कार्य लड़ाई झगड़ों का निपटारा करना है। तथा 30 प्रतिशत लोग शादी–विवाह का निर्णय जाति पंचायतों के द्धारा लेते है। 10 प्रतिशत लोगों का मानना है कि तलाक संबंधी निर्णय जाति पंचायतों के माध्यम से ही संपन्न होते है।

अत: स्पष्ट होता है कि भारिया समाज के सामाजिक निर्णय आज भी जाति पंचायतों द्धारा संपन्न किए जाते है।

भारिया समाज में महिलाओं के मतदान के प्रति जागरूकता संबंधी तथ्यों से यह ज्ञात होता है कि 85 प्रतिशत महिलाएं परिवार के मुखिया की अनुमति के अनुसार मत डालती है। 15 प्रतिशत महिलाएं स्वेच्छा से मतदान करती है।

इससे स्पष्ट होता है कि, महिलाओं में मतदान के प्रति जागरूकता में कमी पाई गई है, वो आज की अपनी राजनीतिक विचारों को व्यक्त करने में असमर्थ है। मात्र 15 प्रतिशत महिलायें ही अपना मत प्रस्तुत कर रही है।

निष्कर्ष – इस प्रकार प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि आज वर्तमान में भी हमारी भारिया जनजाति के लोग अपनी जाति पंचायत के संगठन को मजबूत बनाए हुए है अधिकांशत: सामाजिक आर्थिक निर्णयों के लिये ये अपने परम्परा के अनुसार अपने जाति समाज के वयोवृद्ध व्यक्तियों को भी प्राथमिकता देते है। एवं महिलाओं में भी जागरूकता की कमी पाई गई है। जिसका मूल कारण इनकों शिक्षा का प्रतिशत कम होता है। वर्तमान में भारिया जनजाति में परंपरागत राजनीतिक संस्थाओं के साथ–साथ आधुनिक ग्राम पंचायतों का महत्व अधिक है। जिसके अंतर्गत शासन की नीति के अनुसार वोट डालकर चुनाव किया जाता है तथा पंच सरपंच या उपसरपंचों का चयन होता है ये चुनाव राजनैतिक पार्टियों के अनुसार होता है।

इस प्रकार भारिया जनजाति में आधुनिक ग्राम पंचायते तो अपना कार्य कर रही है परंतु जाति पंचायतों के महत्व भी कम नही है। जो इनके जातिगत नियमों को सुरक्षित बनाए हुए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जनगणना रिपोर्ट – एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना, ताकिया म.प्र. शासन भोपाल।
2. बाफवेर्ड डॉ. सरला – आधुनिकीकरण और सामाजिक परिवर्तन (छिन्दवाड़ा जिले की भारिया जनजाति के संदर्भ में।)
3. तिवारी, डॉ. रविकुमार – मध्यप्रदेश की जनजातिय संस्कृति, 2010 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

****

भारतीय लोकतन्त्र और चुनाव

डॉ. गरिमा पारीक *

प्रस्तावना – भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतन्त्र है। 70 साल में जनतन्त्र ने भारत वर्ष में गहरी जड़े स्थापित कर ली है। हमारे देश में हर पांच वर्ष पश्चात् लोकसभा, विधानसभाओं, स्थानीय निकायों अथवा ग्राम पंचायतों के चुनाव होते ही रहते हैं। इन चुनावों में राजनीतिक दलों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। सत्ता परिवर्तन भी जनता की इच्छानुसार केन्द्र व राज्यों में बड़े शान्तिपूर्वक ढ़ंग से होता है। दुनियां हिदुस्तान के मतदाता के फैसले को देखकर दांतो तले अंगुली दबाती हैं, अर्थात् आश्चर्य चकित होती है। तथाकथित विकसित कहलाने वाले राष्ट्रों की जनता भी हमारे मतदाताओं जैसा फैसला नहीं कर सकती है। हमें गर्व होना चाहिए कि हम जनतन्त्र के गढ़ भारत के नागरिक हैं।

भारत में 29 राज्य हैं, केन्द्र शासित प्रदेश हैं। इतने विशाल राष्ट्र में चुनाव आयोग 5 साल पूर्ण होने अथवा अन्य वांछित कारण से कभी केन्द्र में कभी राज्यों में, कभी स्थानीय निकायों में हर तीसरे, छठे महिने बाद चुनाव करवाता रहता है। बुद्धिजीवियों के एक वर्ग के मध्य यह विचार प्रस्फुटित होता है कि अगर चुनाव आयोग सारे भारत वर्ष में एक साथ ही चुनाव करवाए तो सरकारे, प्रशासनिक मशीनरी अपने कार्यो को सुचारू रूप से कर सकेगी। जनता अनावश्यक परेशानी से बचेगी, राष्ट्र पर आर्थिक भार कम आयेगा। जनता चुनावों को एक राष्ट्रीय राजनैतिक उत्सव मानकर भाग लेगी, मतदाता भी बढ़-चढ़कर लोकतन्त्र के इस उत्सव में हिस्सा लेगें।

समस्या :-

1. अलग-अलग समय पर चुनाव आयोजित करवाने से केन्द्र में सत्ता पक्ष चुनाव प्रचार व विपक्षी दलों पर छींटाकसी में ही अपना पूरा समय खराब करता है। सरकार पूर्ण मनोयोग से अपना कार्य नहीं कर पाती हैं।
2. सरकार चुनावों में जनता को अपनी ओर आकर्षित करने हेतु अनपेक्षित लोक लुभावनी नीति संचालित करती हैं।
3. सरकारे अपनी महात्वाकांक्षी राष्ट्र विकास की नीतियों को लागू करने से भी डरती है, कि कहीं तात्कालिक लाभ प्राप्त न होते देख जनता हमें अमुक राज्य में चुनाव में हरा न दें।
4. विपक्षी दल भी चुनावों के चक्कर में विरोध हेतु सरकार का विरोध करते हैं।
5. विपक्ष सरकार पर निगरानी रखने की बजाय, चुनावी उधेड़-बुन में लगा रहता है। सरकार की सही व लोक कल्याणकारी नीतियों को भी जनता के सामने बड़े गलत व अहितकारी नीति के रूप में प्रदर्शित करता हैं।
6. बार-बार चुनावों के कारण राष्ट्र पर आर्थिक बोझ भी अधिक पड़ता हैं।
7. प्रशासनिक अफसरों की जिन कार्यो की जिम्मेदारी होती है, उसे तो वे निभा नहीं पाते है और उसकी बजाय उन्हें चुनाव आयोग के निर्देशानुसार दूसरे राज्यों में चुनावों की स्थिति देखने व चुनाव की सम्भावित व्यवस्था को देखने के लिए नियुक्त किया जाता हैं।
8. योग्य अफसर अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह कई-कई दिवसों तक नहीं कर पाते है।
9. मतदाता भी बार-बार के चुनावों से परेशान होते हैं।
10. एक बूथ पर कम से कम ग्यारह सरकारी आदमी लगाए जाते है। इससे अन्दाजा लगाया जा सकता है कि बार-बार होने वाले चुनावों में कितने कर्मचारी अपने निर्धारित कर्तव्य से विरक्त होकर चुनावों में संलग्न होते हैं।
11. चुनावों के कारण बार-बार शिक्षा संस्थाएं प्रभावित होती है, उनके शैक्षणिक कार्य में रूकावटें आती हैं।
12. सरकारी मशीनरी चुनाव सम्पन्न करवाने में ही पूर्ण रूप से संलग्न हो जाती हैं।
13. मिडिया भी मात्र चुनावी खबरों में ही जुट जाता हैं राष्ट्र, राज्य व दुनियां की खबरे ढोयम दर्जे पर पहुँच जाती हैं।

सरकारी आंकड़े बताते है कि 2014 का लोकसभा चुनाव सबसे खर्चीला चुनाव रहा हैं। इसी तरह समयानुसार होने वाले राज्यवार चुनाव भी बहुत ही मंहगें होते जा रहे हैं। इन चुनावों का व्यय आम जनता ही भोगती है। भारत के सुरक्षाकर्मी व सेना को भी अपना समय इन चुनावों में ही लगाना पड़ता है। चुनाव लोकतंत्र का महापर्व है। इसमें सारे देश को जमकर, मजबुती के साथ भाग लेना चाहिए, पर इन सब चुनावों को अर्थात केन्द्र, राज्य व स्थानीय सभी को एक साथ आयोजित करवाना चाहिए, ताकि जैसे होली-होली के दिन ही आती है, जब होली खेली जाती है रंग, गोबर, कीचड़ सभी एक दिन में ही डाले जाते है और कोई बुरा भी नहीं मानता बल्कि सब आनन्द लेते हैं, पर सारे साल होली नहीं खेली जाती हैं। उसी तरह चुनाव एक ही साथ एक से तीन महिने के भीतर हो जाए तो जनता भी आनन्द के साथ इस महापर्व में भागीदारी निभा सके। चुनाव पश्चात् सभी निर्वाचित सरकारे देशहित की योजनाओं पर कार्य कर सके। पांच साल तक निश्चित होकर केन्द्र, राज्य, महानगर, जिलों व गांवों का सुनियोजित विकास हो सकें। अन्यथा चुनाव की चिन्ता में केन्द्र व राज्य सरकारे जनता को चुनाव के समय टॉफी-लॉलीपॉप जैसी लोक लुभावनी अकर्मण्य नीतियों से खुश कर वोट बटोरने का प्रयास करती है। यह स्थिति लोकतंत्र के लिए दु:खद हैं।

अत: चुनाव आयोग, सरकार, विपक्षी दलों व नागरिकों को सारे देश में सभी चुनाव एक साथ करवाने पर अवश्य विचार करना चाहिए, ताकि हम

* प्राचार्या (राजनीति विज्ञान) बाबा श्याम ऋषि संस्कृति पी.जी. महाविद्यालय, खाटूश्यामजी, सीकर (राज.) भारत

राष्ट्रीय धन, समय, प्रतिभा व सद् विचारों को बचा सके।

सुझाव :

1. चुनाव आयोग सारे देश में लोकसभा, विधानसभाओं व स्थानीय निकायों के चुनाव एक साथ करवाए।
2. सरकार व सभी राजनीतिक पार्टीया चुनावों के सम्बन्ध में गम्भीरता से सर्वदलीय बैठके करे।
3. एक साथ चुनावों की उपयोगिता से सरकार सभी दलों व जनता को परिचित करवाये। बार-बार अन्यान्य समय पर चुनाव करवाने से होने वाले देश के नुकसान से राष्ट्र को सरकार जानकारी करवाए।
4. मिडिया भी इस कार्यक्रम में अपनी सकारात्मक भूमिका निभाएं।
5. चुनाव आयोग एक साथ राष्ट्रीय चुनाव कार्यक्रम हेतु लघु फिल्म, सोशल मिडिया, लेख, समाचार पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से जन-जागृति उत्पन्न करें।

   लोकतन्त्र के मंदिर भारत में एक साथ निर्वाचन आहूत करने से हमारा राष्ट्र व जनतन्त्र ओर अधिक सुदृढ़ होगा।

बी.बी.सी अविनाश दत्त के चुनावी आंकड़े

2014 में वोटरों की कुल संख्या 81.45 करोड़ से ज्यादा युरोपिय संघ की कुल आबादी 50.3 करोड़

2009 में वोटरों की कुल कुल संख्या 71.3 करोड़ पांच सालों में वोटरों की संख्या में इजाफा 10 करोड़ से ज्यादा

2009 में मतदान केन्द्रों की कुल संख्या 830,866

2014 में मतदान केन्द्रों की कुल संख्या 930,000

2009 के आम चुनावों में सुरक्षा बलों के सैनिकों की संख्या 12 लाख

(रूस की सेना में शामिल कुल सैनिकों की संख्या 8.45 लाख)

(रूस की सेना से ज्यादा सुरक्षाकर्मी चुनाव में तैनात)

2009 में चुनाव आयोग के इस्तेमाल में लाई गई ट्रेनों की संख्या 119

2009 में चुनाव आयोग के इस्तेमाल में लाए गए हैलिकॉप्टरों की संख्या 55

सर्वाधिक वोटरों वाला लोकसभा क्षेत्र-मलकाजगिरी, आंध्रप्रदेश 29.53 लाख वोटर

सबसे कम वोटरों वाला लोकसभा क्षेत्र-लक्षद्वीप 47,272 वोटर

भारतीय चुनाव आयोग से मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय पार्टीयों की संख्या 6

भारतीय चुनाव आयोग से मान्यता प्राप्त कुल प्रान्तीय पाटियों की संख्या 45

भारत के चुनाव आयोग के पास रजिस्टर्ड पार्टियों की कुल संख्या 702

किस चुनाव में जीती सबसे अधिक महिलाएं -

2009 चुनावों में ऐसे चुनाव क्षेत्रों की संख्या जहां जीत का अन्तर तीन फीसदी कम था 114

2009 चुनावों में सबसे कम वोटो से जीतने वाले प्रत्याशी नमो नारायण (कांग्रेस) टोंक सवाईमाधोपुर

2009 लोकसभा चुनावों में जीतने वाले प्रत्याशी जिन्हें 50 फीसदी से ज्यादा वोट मिले 120

2009 के चुनावों में सर्वाधिक महिला प्रत्शाी जीतकर आई थी, यह संख्या थी 59, सदन का कुल 11 फीसदी

1977 के चुनावों में सबसे कम प्रत्याशी जीत कर आई थी, यह संख्या थी 19, सदन का 3.5 फीसदी

2014 के लोकसभा चुनावों में सर्वाधिक महिलाएं लोकसभा में पहुँची 61

1952 में हर सीट पर चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की औसत संख्या 4.67

1997 में हर सीट पर चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की औसत संख्या 25.69

2009 में हर सीट पर चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार की औसत संख्या 14.86

1952 के पहले आम चुनावों में चुनाव करने का प्रति मतदाता खर्च 0.60 पैसे

2009 के आम चुनावों में चुनाव कराने का प्रतिमाह खर्च 12 रूपये

2004 के आम चुनावों में चुनाव कराने का प्रति मतदाता खर्च 17 रूपये

2014 का चुनाव सर्वाधिक खर्चीला रहा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कश्यप, सुभाष - भारतीय राजनीति के नये मोड़, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली 1995
2. कुमार, कृष्ण - राजनीति, समाज और शिक्षा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1989
3. गुप्ता, एस.एल.एवं - भारतीय सामाजिक समय
4. शर्मा, डी.डी., साहित्य भवन, आगरा 1989
5. बसु, डी.डी. - भारतीय संविधान, लक्ष्मीनारायण आगरा 1995
6. www.bbc.com/hindi/india/2014
7. https://hi.m.wikipedia.org/w
8. द हिन्दू
9. राष्ट्रदूत
10. नव भारत टाईम्स
11. राजस्थान पत्रिका
12. दैनिक भास्कर
13. महका भारत

****

वैदिक काल में नारी सशक्तिकरण

डॉ. भावना तिवारी *

प्रस्तावना – वैदिक साहित्य में नारी को बहुत आदरणीय स्थान दिया गया है। वह पुरूष की सहायक और सहयोगी है। ऋग्वेद में स्त्री को ही घर कहा गया है। 'जायेदस्तम्' अर्थात् जाया–पत्नी, इत् ही, अस्तम् घर है। इसी आधार पर संस्कृत का सुभाषित है–'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यतेय अर्थात् घर को घर नहीं कहते हैं, अपितु गृहिणी को ही घर कहा जाता है। विवाह के पश्चात् स्त्री को एक ओर पति, सास–ससुर और घर वालों की सेवा–सुश्रूषा का निर्देश दिया जाता है, तो दूसरी ओर उसे गृहस्वामिनी, गृहपत्नी आदि के रूप में प्रस्तुत करते हुए उसे सास–ससुर, देवर ननद आदि की साम्राज्ञी (स्वामिनी, मालकिन) कहा गया है। इससे ज्ञात होता है कि पत्नी को घर की व्यवस्था का पूर्ण अधिकार दिया जाता है और उसका कथन सबको मान्य होता है।

उद्देश्य – इस शोध पत्र का उद्देश्य वर्तमान समाज में नारी की स्थिती को दृढ़ता प्रदान करना है।

समय एवं क्षेत्र – इस शोध पत्र के अध्ययन का समय एवं क्षेत्र ऋग्वैदिक व उत्तर वैदिककाल है।

पूर्व साहित्य का अनुशीलन – नारी के सम्मान की यह प्रक्रिया न केवल वैदिक युग में ही थी, अपितु उपनिषद्काल और स्मृतिकाल में भी यह प्रक्रिया अविच्छिन्न रही। अतएव मनु का कथन है कि जहाँ नारियों का सम्मान होता है, वहाँ देवताओं का निवास होता है और जहाँ इनका निरादर होता है, वहाँ सारे कार्य निष्फल हो जाते हैं। अतएव स्त्रियों को अलंकार, वस्त्र, भोजन आदि से सदा संतुष्ट रखना चाहिए। जिस परिवार में पत्नी से पति और पति से पत्नी संतुष्ट होते हैं, वह परिवार सदा फूलता–फलता है। यदि स्त्री प्रसन्न नहीं रहती है, तो उस परिवार में सुसंतान नहीं हो सकेगी।

ब्राम्हण ग्रंथों में स्त्री के महत्व के विषय में अनेक महत्वपूर्ण संदर्भ प्राप्त होते हैं। जैमिनीय उपनिषद् ब्राम्हण में स्त्री को सावित्री अर्थात् गायत्री के तुल्य पवित्र और पूज्य बताया गया है। स्त्री को अर्द्धांगिनी अर्थात् पुरूष का आधा भाग कहा गया है। वह पुरूष की आत्मा का आधा अंश है।

तैत्तिरीय ब्राम्हण का कथन है कि यज्ञ आदि धार्मिक अनुष्ठान पत्नी के साथ किए जाते हैं। पत्नी के बिना किया गया यज्ञ अपूर्ण माना जाता है। स्त्री सहधर्मिणी है, अत: यज्ञ आदि में उसकी उपस्थिति अनिवार्य है।[9] शतपथ ब्राम्हण का महत्वपूर्ण कथन है कि जब तक मनुष्य का विवाह नहीं होता, तब तक वह अपूर्ण है। पत्नी को प्राप्त करने पर ही वह पूर्ण होता है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य पत्नी के बिना एकांगी है। जीवन की पूर्णता पत्नी की प्राप्ति पर ही होती है।

तैत्तिरीय ब्राम्हण का यह कथन है कि स्त्री लक्ष्मी का रूप है। जिस तरह लक्ष्मी की पूजा की जाती है, उसी प्रकार स्त्री का आदर करना चाहिए। स्त्री को गार्हपत्य अग्नि बताया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि स्त्री ही वंश–परंपरा चलाती है। संतति–परंपरा, गृहस्थ की ज्योति गृहस्थ का वैभव और आमोद–प्रमोद सब कुछ पत्नी पर ही निर्भर है।

शतपथ ब्राम्हण ने अतएव स्त्रियों के अपमान, निरादर और ताडन आदि को निंदनीय बताया है। पारस्कर आदि गृहसूत्रों में स्त्रियों की गौरवमयी गाथा का गुणगान किया गया है।

स्त्री–शिक्षा – वेदों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वैदिक काल में स्त्रियों की शिक्षा की सुचारू व्यवस्था थी। उनका उपनयन होता था ओर वे उच्चशिक्षा प्राप्त करती थीं। अतएव ऋग्वेद में स्त्री को 'ब्रम्हा' कहा गया है। इसका अभिप्राय यह है कि वह ज्ञान की श्रेष्ठता के कारण यज्ञ आदि में ब्रम्हा का स्थान ग्रहण करती है और विविध संस्कार करा सकती है। इसका भी एक उदाहरण ऋग्वेद में इन्द्राणी के रूप में मिलता है।

इन्द्राणी का कथन है कि– मैं समाज में मूर्धन्य (केतु, ध्वज) हूँ। मैं अग्रगण्य हूँ ओर उद्भट वक्ता हूँ।

मन्त्रद्रष्टा ऋषिकाएं – वेदों में आध्यात्मिक शिक्षा के अतिरिक्त कन्याओं को काव्य–कला, शास्त्रविद्या, ललित–कलाओं, संगीत, नृत्य, अभिनय आदि की शिक्षा देने की भी व्यवस्था की गई है। अतएव काव्यकला के आधार पर वे मंत्रद्रष्टा ऋषिकाएँ हुई हैं। शस्त्र–विद्या की शिक्षा के द्वारा योद्धा, सेनानी और शत्रुविजयिनी हुई हैं। नृत्य–गान आदि के द्वारा वे कुशन नृत्यकला–विशारद होती थीं।

ऋग्वेदन में 24 ओर अथर्ववेद में 5 मंत्रद्रष्टा ऋषिकाओं का उल्लेख है। इनके द्वारा इष्ट मंत्रो की संख्या 422 है। 10 से अधिक मंत्रों की द्रष्टा ऋषिकाएँ ये हैं 1 सूर्या सावित्री, 2 इंद्राणी, 3 मातृनामा,4 घोषा काक्षीवती, 5 सिकता निवावरी, 6 यमी वैवस्वती, 7 दक्षिणा प्राजापत्या

अन्य महत्वपूर्ण ऋष्किाएँ ये है: आदिति, वाक् आम्भृणी, अपाला आत्रेयी, उर्वशी, पौलोमी शची, श्रद्धा, कामायनी, रोमशा, ब्रम्हावादिनी 422 मंत्रो का द्रष्टा होना ऋषिकाओं के शास्त्रीय पांडित्य और काव्य–कला वैशारद्य का सूचक है।

वेदों में नृत्य, संगीत ओर वाद्यों का उल्लेख और कन्याओं द्वार अभिनव आदि का उल्लेख उनके ललित कलाओं में निपुणता के द्योतक हैं। ऐतरेय और गोपाथ ब्राम्हणों में कहा गया है कि ललित कलाओं से आत्मा का परिष्कार होता है अर्थात् चारित्रिक और नैतिक उत्थान होता है। अतएव कन्याओं को ललित कलाओं की शिक्षा दी जाती थी।

ऋग्वेद में उषा देवी को एक कुशल नर्तकी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ऋग्वेद में पारिवारिक नृत्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि उसमें बड़े–छोटे, भाई–बहिन सभी भाग लते थे।

* विभागाध्यक्ष (स्नातकोत्तर इतिहास) नवयुग कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

ऋग्वेद ओर यजुर्वेद में नारी के युद्धकला में पारंगत होने के वर्णन है। यजुर्वेद में उसे अजेय (अषाढा), विजेता (सहमाना), सहस्त्रों प्रकार के पराक्रम करने वाली (सहस्त्रवीर्या), कहा गया है। ऋग्वेद में उसे शत्रुरहित (असपत्ना,) शत्रुनाशक (सपत्नघ्नी), विजयिनी (जयंती), अभिभूवरी (शत्रुओं को हराने वाली) नाम से संबोधित किया गया है। ऋग्वेद के एक मंत्र में उसे निर्भीक, नि:संकोच आगे-आगे चलने वाली (अग्रणी) भी कहा गया है। इन्द्राणी को सेनानी (सेनापति) कहा गया है। उसके विषय में कहा गया है कि वह सदा अजेय रहीं है। वह शस्त्र धारण करके शत्रुसेना को काटती हुई आगे बढ़ती है। तैत्तिरीय संहिता में एक महत्वपूर्ण तथ्य का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि इन्द्राणी सेना की देवता है। वही सेना में प्राण फूँकती है, अर्थात् उसके नेतृत्व में सेना अजेय हो जाती है।

इन्द्राणी वै सेनायै देवता। सैवास्य सेनां सं श्यति। तैति.सं. 2.2.8.1. ऋग्वेद में उल्लेख है कि स्त्रीयों की भी सेना होती थी। असुरों की स्त्री-सेना ने इन्द्र से मोर्चा लिया था। एक मंत्र में वर्णन है कि शत्रुओं से युद्ध करते हुए रानी विश्पला का पैर कट गया था। अश्विनीकुमारों ने उसे नकली लोहे की टाँग लगा दी और वह फिर युद्ध में भाग ले सकी। इसी प्रकार मुद्गलानी (मुद्गल की पत्नी) के शौर्य की प्रशंसा की गई है कि उसने रथ पर बैठकर युद्ध किया और हजारों असुरों को जीतकर अपनी गायें छुड़ा ली।

उपनिषदों और स्मृतियों में भी नारी के गौरव का उल्लेख है। हारीत स्मृति का कथन है कि दो प्रकार की स्त्रियाँ होती हैं- 'सद्योद्वाहा' व 'ब्रम्हावादिनी'। ब्रम्हाचर्य आश्रम की समाप्ति पर कुछ स्त्रियाँ तुरंत विवाह कर लेती थी और गृहस्थधर्म का पालन करती थी। ऐसी स्त्रियों को 'सद्योद्वाहा' कहा गया है। कुछ स्त्रियाँ यज्ञ, वेदाध्ययन, स्वाध्याय, सत्संग और उच्च योगविद्या में अपना समय बिताती थी। इनको यब्रम्हवादिनी' कहा गया है। ये वेद-प्रचार, शास्त्रार्थ, उच्च साधना आदि करती थी। ये ब्रम्हवादिनी स्त्रियाँ ही हैं, जिन्होंने वेदमंत्रों का साक्षात्कार करके ऋषिका के रूप में आदरणीय स्थान प्राप्त किया था। इसमें विशेष उल्लेखनीय हैं सूर्या सावित्री, घोषा काक्षीवती, श्रद्धा, कामायनी, वाक् आम्भृणी, इन्द्राणी, अपाला, रोमशा आदि। वाक् आम्भृणी और श्रद्धा कामायनी द्वारा दृष्ट मंत्र उच्चकोटि की दार्शनिकता, आध्यात्किता और वैज्ञानिकता से परिपूर्ण हैं। विश्व के सभी विद्वानों ने इन मंत्रों की गरिमा स्वीकार की है।

उपनिषदों के समय में आदर्श विदुषी नारियाँ हुई हैं- 1मैत्रेयी याज्ञवल्क्य ऋषि की पत्नी। उसने संपत्ति में अपना अंश नहीं लिया और उसके आत्मा के अमरत्व-विषयक प्रश्न के उत्तर में महर्षि याज्ञवल्क्य ने आत्मा का स्वरूप, उसकी प्राप्ति के उपाय आदि का विस्तृत वर्णन बृहदारण्यक उपनिषद् में किया है। 2- गार्गी वाचक्नवी। गार्गी ने महर्षि याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ किया था और ऐसे टेढ़े प्रश्न पूछे थे, जिनसे महर्षि याज्ञल्क्य भी चकरा गए थे। यह संसार किसमें ओत-प्रोत है ? लंबे प्रश्न-उत्तर के बाद याज्ञल्क्य ने अंतिम उत्तर दिया था कि यह सारा संसार अक्षर ब्रह्मा में ओत-प्रोत है।

महर्षि पाणिनि ने भी अध्यापन कार्य करनेवाली शिक्षिका को 'उपाध्याया' और आचार्य का कार्य करने वाली स्त्री को 'आचार्या' नाम दिया है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा के क्षेत्र में भी नारियों ने गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया था।

वैदिक समाज में महिला के अस्तित्व एवं योगदान से गृहस्थाश्रम को आदर्श रूप प्राप्त होता था। वेदयुगीन गृह का अस्तित्व महिला के अस्तित्व में ही निहित माना जाता था। वेदयुगीन महिला समाज में पूज्य मानी जाती थी। वैदिक समाज भारतीय इतिहास का सर्वाधिक आदर्श समाज रहा है, जिसमें महिलाओं ने समस्त अधिकारों का पूर्णता के साथ उपभोग किया था। ऋग्वैदिक युग में योग्य कन्या सुख का कारण मानी जाती थी। फिर भी वेद पुराणों में महिलाएँ पुत्र-प्राप्ति की कामना करती हुई दृष्टिगत होती हैं।

वैदिक समाज में यद्यपि कन्या को भी पुत्रवत् स्नेह एवं आदर प्राप्त था, तथापि कन्या-जन्म के समय पुत्र-जन्म के समान संस्कारों का संपादन नहीं किया जाता था। शत्रुनाश एवं आर्यो की स्थिति को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से पुत्र-जन्म पर विशेष खुशी मनायी जाती थी।

वेद-युगीन महिला मातृ-रूप में देवी के समान पूज्य मानी जाती थी। पत्नी को 'जाया' का अभिधान प्रदान कर हमारे आर्य मनीषियों ने नि:संदेह महिला को गौरवपूर्ण स्थान दिया था। जिसके गर्भ में स्वामी स्वयं पुत्र-रूप में जन्म ग्रहण करे, वही 'जाया' है। वेद-युग में पर्दा-प्रथा का पूर्णत: अभाव था। कन्याएँ निर्मुक्त होकर युवकों के साथ अध्ययन करती थी एवं काम-धंधा भी करती थी। वे अध्यापनादि क्षेत्र भी अपनाती थी। महिलाएँ खुली आम-सभाओं में भाग लेती थीं। वेद-युगीन महिलाएँ जनतन्त्रीय सभाओं की शासन संबंधी बहसों में भी भाग लेती थी, किन्तु उत्तर वैदिक युग में महिला की बाह्य-क्षेत्रीय स्वतन्त्रता कुछ कम हो गई थी।

वेद-युगीन महिलाएँ, वैदिक वाड्.मय का विधिवत् अध्ययन करती थी एवं यज्ञों में भाग लेकर मन्त्रोच्चारण भी करती थी। वैदिक समाज में धर्म के नाम पर महिलाओं के प्रति दुराचार नहीं किया जाता था। विवाह संस्कार सम्पन्न होने के पश्चात् कन्याएँ अधिक सम्मान की पात्र हो जाती थी। प्रारम्भिक वेद-युग में पत्नी ही यज्ञ में सोमगीतों का गान करती थी। पति एवं पत्नी दोनों साथ-साथ पूजा करते थे। यज्ञ हेतु पत्नी पूरी तैयारी करती थी। तदुपरांत पति के दांयी ओर बैठ कर पति के सहयोग से विधिवत् यज्ञ सम्पन्न करती थी।

वैदिक युग में पत्नी व्यक्तिगत सम्पत्ति की भी स्वामिनी होती थी। पत्नी की यह सम्पत्ति उसके वस्त्र, आभूषण एवं धन-राशि के रूप में होती थी। पत्नी विवाह के अवसर पर दहेज एवं भेंट में यह सम्पत्ति प्राप्त करती थी। इस सम्पत्ति पर पत्नी का पूर्ण अधिकार था। पत्नी इस व्यक्तिगत सम्पत्ति को कभी भी बेच सकती थी या किसी को दे सकती थी। भाई के अभाव में पुत्री पिता की पूरी सम्पत्ति की अधिकारी होती थी। प्राचीन भारतीय इतिहास में वेद-युग महिला के उत्थान का पराकाष्ठा काल माना जाता है।

ऋग्वैदिक काल में स्त्रियों को समाज में बड़ा महत्वूपर्ण स्थान प्राप्त था। उन्हें पुरूषों के बराबर सामाजिक और धार्मिक अधिकार प्राप्त थे। उनके बिना यज्ञ नहीं हो सकता था। वे पुरूषों के समान उच्च शिक्षा प्राप्त करती थी। घोषा, लोपामुद्रा और अपाला आदि विद्धान स्त्रियों ने ऋग्वेद के मंत्रों की रचना की थी। गार्गी नामक प्रसिद्ध स्त्री ने प्रसिद्ध विद्धान् याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ किया था। समाज में उस समय सती प्रथा, काल विवाह और पर्दा प्रथा आदि का प्रचलन नहीं था। स्त्रियों को अपना पति चुनने की स्वतंत्रता थी। उस समय विवाह के लिए स्वयंवर प्रथा का प्रचलन था। समाज में उस समय कहीं-कहीं बहुपति प्रथा एवं बहुपत्नी प्रथा भी प्रचलित थी। परंतु उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता था। उस युग में नारी को घर की लक्ष्मी और अर्द्धांगिनी माना जाता था। उसके बिना यज्ञ पूरा नहीं हो सकता था। उस समय समाज में विधवा विवाह की प्रथा प्रचलित थी। विधवा स्त्री नियोग के माध्यम से संतान पैदा कर सकती थी। विशेष परिस्थितियों में पति के जीवित होते हुए भी पति की सहमति से स्त्री नियोग प्रथा से संतान पैदा कर सकती थी। ऐसी संतान को 'क्षेत्रज' कहा जाता था। इस प्रकार ऋग्वैदिक काल में नारी की स्थिति काफी महत्वपूर्ण थी। ऋग्वेद काल से लेकर महाभारत काल

तक नारी का यह सम्मान बना रहा। द्रौपदी के अपमान के कारण ही महाभारत का युद्ध हुआ था।

उत्तर वैदिककाल में महिलाओं की स्थिति – उत्तर वैदिककाल को सामान्यत: ईसा से 600 वर्ष पूर्व से लेकर ईसा के 300 वर्ष बाद तक माना जाता है। इस युग में पुत्री की अपेक्षा पुत्रागमन अधिक मांगलिक एवं आनन्ददायक माना जाता था, फिर भी पुत्री का स्थान सम्मानजनक था। आपस्तम्ब गृह सूत्र से ज्ञात होता है कि यात्रा से लौटने पर पिता पुत्र की भाँति पुत्री को भी मन्त्रोच्चारण सहित आशीर्वाद देता था। महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अधिकार था। महिलाओं के उपनयन संस्कार का चलन पूर्णत: समाप्त हुआ प्रतीत नहीं होता है, क्योंकि गृह सूत्रों में महिलाओं के समावर्तन संस्कार का उल्लेख यह सिध्द करता है कि महिलाएँ वेदाध्ययन करती थी। विवाह संस्कार के समय वर एवं वधू सम्मिलित रूप से अनुवादक–मंत्रों का उच्चारण करते थे। अत: महिलाओं की शिक्षा युवकों से कम नहीं थी। पाणिनी ने भी 'उपाध्याय' एवं 'आचार्या महिलाओं पर प्रकाश डाला है। सूत्रकाल में महिला का स्थान आदरणीय था। धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षिक क्षेत्र में वह पूर्ण स्वतंत्रता का उपभोग करती थी। आर्थिक क्षेत्र में सीमित अधिकार की प्राप्ति किए हुए थीं।

स्त्रियों के समाज में गिरावट के कारण –

1. पहला कारण नारी का अशिक्षित होना था। वैदिक युग में पश्चात स्त्रियों की शिक्षा की तरफ कोई ध्यान नही दिया गया। परिणामस्वरूप अशिक्षित स्त्रियों के लिए पुरूषों के उपर आश्रित रहने के अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं था।
2. दूसरा कारण पर्दा प्रथा का व्यापक प्रचलन था। इस प्रथा के कारण स्त्रियों की स्वतंत्रता पूरी तरह से समाप्त हो गई और वे पूरी तरह पुरूषों पर आश्रित हो गयी।
3. बाल–विवाह, अनमेल विवाह और मदिरापाल आदि कारण भी स्त्रियों की दशा में गिरावट के लिए उत्तरदायी थे। बाल–विवाह के कारण अल्पायु में कन्या पर गृहस्थी का भार पड़ जाता था और उसके विकास का मार्ग अवरूद्ध हो जाता था। इसके अतिरिक्त ग्रामीण और पिछड़ी जातियों के लोग देशी शराब (ठर्रा) पीकर अपनी अशिक्षित स्त्रियों को आए दिन पीटते रहते थे, आज भी ऐसा होता है। ये सभी कारण स्त्रियों की दशा में गिरावट के लिए उत्तरदायी थे।
4. भारतीय समाज में माता–पिता लड़कियों की अपेक्षा लड़कों का अधिक महत्व देते थे। लड़कियों की अपेक्षा लड़कों की शिक्षा पर ध्यान देते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि समाज में लड़कों का महत्व निरंतर बढ़ता गया और लड़कियों का महत्व घटता गया।
5. भारत की ग्रामीण एवं साधारण जनता स्त्रियों को केवल उपभोग की वस्तु और संतानोत्पत्ति का साधन मानती थी। उनके अनुसार स्त्रियों का मुख्य कार्य घर का कार्य करना और पुरूषो का मनोरंजन करना आदि था। इसलिए वे स्त्रियों के अधिकारों के विरोधी थे।
   किन्तु वर्तमान समय में स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त हैं। वे पुरूषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर आगे बढ़ती जा रही है और जीवन के किसी भी क्षेत्र में वे पुरूषों से पीछे नहीं हैं।

निष्कर्ष – वास्तविकता यह है कि 'वर्तमान समय में महिलाओं द्वारा हिन्दू जीवन के सिध्दान्तों का पुन:परीक्षण हिन्दू समाज के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं के प्रति उनकी जागरूकता धर्म की आड़ में उन्हें समस्त अधिकारों से वंचित कर देने वाले असन्तोषजनक आदर्शों के प्रति क्षोभ शिक्षा से उत्पन्त्र होने वाली महत्वाकाँक्षाएँ और राष्ट्रीय संघर्ष के समय विकसित होने वाले अनुभवों ने उन्हें हिन्दू जीवन के आदर्शों का पुनर्विवेचन करने की प्रेरणा दी है।' जब भारतीय समाज के सबसे अधिक सहनषील और शान्तिप्रिय महिला वर्ग ने ही अपनी प्रस्थिति में सुधार करने के लिए व्यापक अधिकारों की माँग करना आरंभ कर दिया, तो इस माँग को अब दबाया नहीं जा सकता। महिलाओं से उत्पन्त्र होने वाली चेतना को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि हिन्दू समाज का नये सिरे से मूल्याँकन किया जाए। श्री पणिक्कर ने महिलाओं की वर्तमान स्थिति के आधार पर यह भविष्यवाणी की है कि महिलाओं को सम्पत्ति और विवाह के क्षेत्र में मिलने वाले अधिकार हिन्दू समाज में एक क्रान्ति उत्पन्न कर देंगे और उनके लिए एक ऐसी कानूनी संहिता, नयी नैतिकता और सामाजिक संपर्क के सिध्दांतों की रचना करेंगे जिसके फलस्वरूप प्राचीन स्मृतिकारों की व्यवस्थाओं का स्थान नये विवेकपूर्ण शास्त्र ग्रहण कर लेंगे तथा धर्म की पोल में घुसी हुई प्रतिक्रियावादी रूढ़ियों और लोकाचारों को दूध में पड़ी हुई मक्खी के समान निकालकर फेंक दिया जाएगा। हिन्दू महिलाओं ने सामाजिक समानता का जो दावा आज किया है, उसको देखते हुए यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि हिन्दू समाज का पुनर्जीवन इन न्यायसंगत अधिकारों को मान लेने से ही संभव है।

अनेक युगों से महिला के सामने ऐसा मुक्त तथा व्यापक क्षितिज नहीं आया जैसा आज है या जैसा निकट भविष्य में होने की संभावना है। विगत युगों में उसे स्वतन्त्र रूप से किसी दिशा या मार्ग को चुनने का अधिकार नहीं था। धर्म के प्रतिनिधि समाज ने युग की परिस्थिति के अनुसार महिला के लिए जो दशा या कर्तव्य निश्चित कर दिया, उसी की सीमा–रेखा के भीतर आचरण अच्छा या बुरा हो सकता था। एक समय में एक ही लक्ष्य या धर्म निश्चित था, जिसकी ओर महिला को बिना तर्क दिए चलना था और उस लक्ष्य तक पहुँच जाना ही उसके जीवन की सार्थकता का प्रमाण माना जाता था। आधुनिक युग में महिला केवल राष्ट्र या समाज के उत्तरदायी नागरिक के रूप में भी उपस्थित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मजूमदार आर सी भारत का वृहद इतिहास,भाग 1मैकमिलन 1970
2. विद्यालंकार सत्यकेतु – प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन।
3. द्विवेदी कपिलदेव – वेदों में समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और शिक्षाशास्त्र
4. गोयल सुनील – भारतीय समाज में नारी।
5. मिश्र उर्मिला प्रकाश – प्राचीन भारत में नारी।
6. अम्बेडकर बी.आर. – द राइज़ एंड फाल हिन्दू वूमन, भीम पत्रिका प्रकाशन।
7. माथुर एंड माथुर – भारतीय इतिहास में महिलाएँ।
8. देसाई नीरा – आधुनिक भारत में नारी।
9. आहूजा राम – नारी के अधिकार।

****

रीवा जिलें की प्रमुख बावलियों का ऐतिहासिक महत्व

डॉ. मो. स्वालकीन खान *

प्रस्तावना – बावली एक महत्वपूर्ण जलस्त्रोत होता है, जो वर्गाकार, आयताकार एवं गोलाकार आकार में निर्मित किया जाता था। जल संकट को दूर करने के उद्देश्य से बावलियों का निर्माण कार्य किया गया था। बघेल राजाओं द्वारा रीवा एवं उसके आसपास के क्षेत्र में अत्यधिक मात्रा में इनका निर्माण कार्य किया गया, जो आज भी रीवा राज्य के पुरातत्व इतिहास की एक धरोहर है। इन्हें देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि रीवा के बघेल राजाओं द्वारा स्थापत्य झाँकी का एक महत्वपूर्ण अध्याय, बावली स्थापत्य का निर्माण कार्य था जिनका उल्लेख आज भी शोध ग्रंथ व पुस्तकों में नहीं मिलता, रीवा का भू-भाग स्थापत्य का खजाना है, मुझे अपने शोध-भ्रमण के समय अनेक बावलियाँ देखने को मिलीं जिनमें कुछ तो नष्ट हो चुकी हैं एवं कुछ जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है, और कुछ आज भी उपयोगी एवं देखने योग्य है, जिनका उल्लेख निम्नलिखित है-

अजबकुमँरि बावली – रीवा शहर के मुख्य भाग पर गुढ़ चौराहा शा.उ.मा.वि. क्रं. 02 के पीछे भाग पर अजबकुमँरि बावली निर्मित है। यह बावली महाराजा रघुराज सिंह के शासन काल में बनवाई गई थी, जो देखने में आज भी अत्यंत आकर्षक एवं सुंदर है इसका उपयोग आज भी हो रहा है, यद्यपि बावली का ऊपरी भाग क्षतिग्रस्त हो चुका है पुनर्निर्माण की प्रक्रिया भी जारी है, देखने मेंअद्भुत कलाकृतियों से युक्त ये बावली रीवा में स्थापत्य का एक महत्वपूर्ण भाग है।

इस बावली का निर्माण महारानी अजब कुमँरि द्वारा करवाया गया था, इस बावली में स्नान किया करती थी, इस बावली के मुख्य तीन भाग है, प्रवेश द्वार से सीढ़ियाँ के माध्यम से नीचे की ओर पानी तक पहुंचने में आसानी होती थी, मध्य भाग में मेहराबनुमा 5X20 वर्गफिट की छतरी है जहाँ खड़े होकर बावली के दोनों भागों को देखा जा सकता है। बावली का तीसरा भाग जो गोलाकार में बनी हुई है, इस बावली का मुख्य भाग कुंआ लगभग 50 फिट गहरा है एवं 20X20 फिट वर्गाकार है।

इस बावली के चारों तरफ बराण्डा बना हुआ है, जो 6 फिट चौड़ा है। मेहराबदार इस बावली मेंचारोंओर सात-सात दरवाजे हैं, सीढ़ियों के माध्यम से यहाँ तक पहुंचा जा सकता हैं, इस बावली की लंबाई 60 फिट है इसका पानी आज तक समाप्त नहीं हुआ, बावली के चारों तरफ जीर्ण-शीर्ण स्थिति को सुधारने का काम शासन स्तर पर चल रहा है। भविष्य में इस बावली से जनता के जल संकट को दूर करने में सहयोग मिलेगा। इस बावली में पत्थरों की बनी हुई चौड़ी-चौड़ी 22 सीढ़ियाँ हैं, जिनके सहारे बावली के नीचे की ओर पहुंच मार्ग है, पानी का स्तर जब नीचे पहुंचता है, तो सीढ़ियों से पानी तक पहुंचने के उद्देश्य से एवं बावली के चारों ओर सीढ़ियों का निर्माण किया गया था। आज भी इस बावली की बड़ी उपयोगिता है और इसे सुरक्षित रखने की आवश्यकता है। यह रीवा राज्य की स्थापत्य के इतिहास को बहुमूल्य धरोहर है।

पुष्करणी बावली – रीवा में लक्ष्मण बाग में एक बड़ी सुंदर बावली का निर्माण महाराजा रघुराज सिंह द्वारा करवाया गया था। लक्ष्मण बाग में महाराजा विश्वनाथ प्रताप सिंह, द्वारा 11 मंदिरों का निर्माण कराया गया यहाँ मुख्य मंदिर दक्षिण मुखी हनुमान जी का विशाल मंदिर है। उसी के बगल से बावली स्थित है, वर्तमान में बावली एवं मंदिर एक ट्रस्ट द्वारा संचालित है। यहाँ के पुजारी बालाजी रामावतार शर्मा हैं जिनसे साक्षात्कार के पश्चात मैंने जानकारी प्राप्त की। पत्थरों की बनी हुई ये बावली बड़ी सुन्दर है। इस बावली का आकार 100ग100 फिट है। इस बावली की गहराई लगभग 40 फिट वर्गाकार है, इस सीढ़ीनुमा बावली में चारों तरफ से खूबसूरत एवं व्यवस्थित सीढ़ियाँ है। बावली के मध्य भाग की जो मुख्य अंग है वह 40 बाय 40 वर्ग फिट का है ये बावली बहुत सुंदर एवं उपयोगी है। आज भी यह व्यवस्थित एवं साफ सुथरी है, इसकी देख-रेख एवं साफ-सफाई का काम ट्रस्ट के द्वारा समय-समय पर होता रहता है।

व्यंकट भवन के पास स्थित बावली – रीवा के मध्य भाग में व्यंकट भवन कोठी चौराहा, में कमिश्नर (आयुक्त) कार्यालय एवं जिला न्यायालय के बगल में स्थित है। इस बावली का निर्माण महाराजा व्यंकट रमन सिंह के काल में हुआ था। 1901 में इसका निर्माण शुरू हुआ एवं 1908 में पूरा हुआ। व्यंकट भवन के अंदर से सुरंग बनी हुई है, जो चौराहे में स्थित बावली तक जाती है। सीढ़ीनुमा सुरंग से बावली तक सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इसी मार्ग से राजघराने की स्त्रियाँ स्नान के लिए बावली तक आया-जाया करती थीं, वर्तमान समय में बावली को ऊपर से बंद कर दिया गया है एवं उसके ऊपर गोलाकार एक चबूतरे का निर्माण हो चुका है जो बावली के ऊपर छत की तरह है। सुरक्षा की दृष्टि से इसे बंद कराया गया है। व्यंकट भवन से सीढ़ीनुमा सुरंग लगभग 150 फिट की लंबाई एवं 10 फिट की चौड़ाई में है, सुरंग से 150 फिट दूर बावली थी, जिसे अब देखा जाना संभव नहीं है।

चौपड़ा बावली बिछिया रीवा – रीवा शहर के बिछिया मोहल्ले में शा. माध्यमिक शाला बिछिया के पीछे शाला से लगा हुआ क्षेत्र स्थित इस बावली का निर्माण महाराजा गुलाबसिंह द्वारा कराया गया था। इस मोहल्ले की प्रजा के लिए चौपड़ा बावली के चारों ओर सीड़ियाँ बनी हुई हैं, जो जलस्तर तक पहुंचने में सहायक हैं। चारों ओर 20-20 सीढ़ियाँ हैं। 100X100 फिट वर्गाकार में ये बावली स्थित है, यद्यपि इसका उपयोग वर्तमान में भी लोगों द्वारा किया जाता है, मवेशियों के पानी पीने के लिए भी उसकाउपयोग होता है, यह अधिक गहरी बावली नहीं है, 20 फिट गहरी इस बावली में हमेशा पानी भरा रहता है किन्तु, इसकी स्थिति दयनीय है, पानी में पूरी तरह

* (इतिहास) पं. शम्भूनाथ शुक्ला विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

काई जमी हुई है, इसके चारों तरफ मिट्टी एवं कचड़े का अंबार है। रख–रखाव की ओर लेशमात्र भी ध्यान नहीं दिया गया। आने वाले समय में यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया तो ये बावली पूरी तरह कचड़े व मिट्टी से भठ जाएगी। इस अनमोल एवं उपयोगी विरासत की सुरक्षा की विशेष आवश्यकता है, अन्यथा आने वाले समय में शायद इसका नामोनिशान नहीं रह जाएगा।

झिरिया बावली – रीवा सिविल लाईन कोतवाली मार्ग पर टी.आर.एस. कॉलेज के समीप एक प्रमुख बावली झिरिया नाला के पास बनी हुई है, इसी कारण इसका नाम झिरिया बावली पड़ा। यहाँ 02 बावली क्रमश:, पहली बावली से दूसरी बावली जुड़ी है। दोनों ही बावलियाँ वर्गाकार हैं। इन बावलियों तक सीढ़ी से नीचे उतरा जा सकता है। बावली के ऊपरी भाग में उत्तर दिशा में बावली में प्रवेश हेतु दो कमरे छतरीनुमा हैं, जहाँ यात्रियों के कपड़े बदलने या आराम करने के लिए व्यवस्था की गई है, 11 सीढ़ियाँ चारों तरफ बनी हुई हैं, पानी का स्तर जब नीचे की ओर जाता है तो सीढ़ियों से नीचे जाकर पानी प्राप्त किया जा सकता है। दूसरी बावली 10X10 वर्गाकार में है, जिसके ऊपर छत है इस चौकोर बावली में प्रवेश के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई है। यात्रियों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए इसे रीवा के बघेल राजाओं ने जल संकट को दूर करने के लिए जलापूर्ति हेतु सराहनीय कार्य किए, जो आज भी उनकीलोकप्रियता एवं जनकल्याण की भावना की गाथा को कायम रखे हुए है।

बावली में काले पत्थर एवं ऊपरी सतह पर ईंट की जुड़ाई की गई है। पत्थरों की जुड़ाई पुरानी पद्यति से चूना, उड़द की दाल, रेत, बेल के गूदे एवं गुड़ के घोल का मसाला तैयार करके बनाया गया था।

गोविंदगढ़ की नाव घाट बावली – गोविंदगढ़ रीवा राज्य का एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थल है। गोविंदगढ़ का किला स्थापत्य का एक अद्भुत उदाहरण है। गोविंदगढ़ में रीवा के राजाओं द्वारा निर्मित अनेक स्थापत्य धरोहर आज भी मौजूद हैं। गोविंदगढ़, शहडोल–रीवा मार्ग पर छुईया घाटी के नीचे रीवा की ओर शहडोल से 147 कि.मी. रोड पर एवं रीवा से 20 से कि.मी. पहले स्थित है, जहां गोविन्दगढ़ से सतना मार्ग पर 2 कि.मी. दूर बायें तरफ तालाब के किनारे गोविंदगढ़ का विशाल एव सुंदर आकर्षक किला बना हुआ है, जो रीवा राज्य के स्थापत्य का एक अद्भुत उदाहरण है। इस किला के पूर्वी भाग पर किले से लगी हुई एक खूबसूरत बावली है, जो अत्यधिक प्राचीन है।

इस बावली का निर्माण महाराजा गुलाब सिंह ने करवाया था उनका शासन काल 1918 से 1946 तक था। नाव घाट बावली का निर्माण महारानी साहिबा के स्नानगृह के रूप में हुआ था, यहाँ किसी पुरूष को जाने की स्वीकृति नहीं थी। बड़ी सुंदर एवं आकर्षक इस ऐतिहासिक बावली के ऊपरी भाग पर एक सुंदर 'कढ बंगला' बना हुआ है, जो बावली का ऊपरी भाग है।यह बंगला पूरी तरह लकड़ियों के स्तम्भ पर बना हुआ है एवं बावली के छत के ऊपर पूरी तरह से लकड़ियों का ही उपयोग किया गया है।

खूबसूरत नक्काशी से युक्त ये कढ बंगला देखने योग्य है। ये बावली वर्गाकार चौकोर है 30X30 वर्ग फिट की इस बावली की गहराई 50 फिट हैं किले के अंदर से सीढ़ियों द्वारा बावली के गर्भ तक पहुंचा जा सकता है, 2X15 फिट की 15 सीढ़ियों के बाद बावली का मुख्य भाग है जिसका दरवाजा दक्षिण की ओर है। ये दरिया महल का एक भाग है, उससे जुड़ी हुई यह बावली हैं, दरिया महल से जुड़ा हुआ बेनी महल है। जहाँ कुंवर पुष्पराज सिंह का जन्म हुआ था इस पूरे बावली की दीवारें भूरे पत्थरों की बनी हुई है, लगभग 2 फिट मोटी दीवार है। इस बावली का रख–रखाव अच्छा होने के कारण आज भी ये अपनी यथा स्थिति में है। यहां की कढ नक्काशी देखने योग्य है। सीढ़ियों के ऊपरी भाग पर मेहराबनुमा पत्थर की खूबसूरत दीवार है, जो तरह–तरह की कलाकृतियों से युक्त है। बावली के मुख्य द्वार से एवं बावली के ऊपरी छत कढ बंगले से गोविंदगढ़ के इस विशाल खूबसूरत तालाब का खूबसूरत दृश्य देखा जा सकता है।

बावली में लगभग 20 फिट पानी भरे होने के कारण उसके अंदर का पूरा भाग एवं कलाकृति देखने को नहीं मिल पाई किन्तु मेरे द्वारा कुंवर सौरभ सिंह से साक्षात्कार के जरिये अंदर के गर्भगृह की जानकारी प्राप्त हुई। बाकी बावली का बाहरी भाग छत सीढ़ियाँ कढ बंगला आदि का सर्वेक्षण मैंने स्वयं किया। मुझे एक अच्छा अनुभव प्राप्त हुआ, वास्तव में गोविंदगढ़ की यह बावली बघेल खण्ड के स्थापत्य के इतिहास की एक अनमोल धरोहर हैं।बावली के अन्दर लकड़ियों का पिलर है, जिस पर बावली की छत पड़ी हुई है।

लालगांव स्थित बावली – लालगांव रीवा से बैकुण्ठपुर होते हुए पूर्व दिशा में सिरमौर तहसील के अंतर्गत स्थित है। रीवा से इस गांव की दूरी लगभग 40 कि.मी. है। रीवा राज्य का लालगांव एक इलाका था, जिसकें अंतर्गत 84 गांव शामिल थे। यहाँ के इलाकेदार सुदर्शन प्रताप सिंह की गढ़ी के प्रांगण में लगभग 150 वर्ष पुरानी बावली स्थित है। इस बावली का आकार सीढ़ीनुमा प्रवेश मार्ग से अंदर की ओर 40 फिट के लगभग एवं मध्य भाग 10X8 वर्ग फिट मेहरावनुमा एवं मुख्य भाग 15X15 चारों ओर शीर्ष भाग लगभग 60 फिट गहरी बावली थी।

वर्तमान समय में ये बावली खण्डित एवं जीर्ण–शीर्ण स्थिति में है मध्य भाग ढह चुका है बावली का अधिकांश भाग टूट चुका है, यद्यपि बावली का कुछ भाग अभी भी ठीक है, यदि इसके मरम्मतीकरण एवं साफ–सफाई का ध्यान रखा जाए तो यह एक उपयोगी जलस्त्रोत हो सकती है।

बर्रेही स्थित बावली – बर्रेही रीवा जिले के अंतर्गत सिरमौर तहसील में लालगांव से पूर्व दिशा में 03 कि.मी. (गंगेव मार्ग) की दूरी पर स्थित एक गांव हैं। जहाँ मार्गके दक्षिण भाग में एक बगीचा है, इस बगीचे के पास एक पुरानी बावली लगभग 150 वर्ष पहले की देखने को मिली जो खेतों के बीच बनी हुई है, जनश्रुति के अनुसार इलाकेदार सुदर्शन सिंह के समय की ही निर्मित की गई होगी। इस बावली का आकार सीढ़ीनुमा भाग लगभग 40 फिट का है एवं मुख्य भाग गोलाकार शीर्ष भाग 60 फिट के आसपास एवं लगभग 40 फिट गहरी है। वर्तमान समय में इस बावली का उपयोग खेतों में सिंचाई के लिए किया जाता है। यद्यपि बावली खण्डित हो चुकी इसका अधिकांश भाग भठ चुका है, झाड़ियों एवं मिट्टी की मात्रा यहाँ अधिक देखने को मिली, बावली का अधिकांश हिस्सा मलवे से भट गया हैं, यदि इस पुरातात्विक धरोहर के संरक्षण की ओर ध्यान दिया जाए तो इसे और उपयोगी बनाया जा सकता है।

गढ़ स्थित बावली – गढ़ रीवा राज्य के अधीन 82 गांव का एक इलाका था। ये गांव मनगवां तहसील मुख्यालय से 20 कि.मी. दूर उत्तर दिशा में रीवा इलाहाबाद मार्ग रीवा से लगभग 50 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यहाँ गढ़ी के प्रांगढ़ में बाहरी भाग पर गढ़ी की ओर पहुंच मार्ग में पूर्व दिशा में निर्मित थी। यह बावली भी लगभग 17 वीं शताब्दी के उत्तराद्ध की निर्मित होगी ऐसी जन मान्यता है। वर्तमान समय में इसका अधिकांश भाग खंडित हो चुका है एवं बावली लगभग भठ चुकी है, इसके अवशेष से पता चलता है कि बावली लगभग 50 फिट के क्षेत्र में बनी हुई थी जिसका सिर्फ अवशेष बाकी बचा है।

देव तालाब स्थित बावली – यह स्थान रीवा जिले के मऊगंज तहसील के अंतर्गत आता है। रीवा से बनारस जाने वाली एन.एस. 7 मुख्य मार्ग पर लगभग 45 कि.मी. की दूरी पर देवतालाब स्थित है। मार्ग के उत्तर दिशा में लगभग 1 कि.मी. जाने पर एक भगवान शिव का मंदिर स्थित है, उसी के बगल से एक प्राचीन बावली भी स्थित है। जनश्रुति के अनुसार इसे विश्वकर्मा जी ने इस बावली एवं मंदिर को एक रात में निर्मित किया था, इसे देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि ये बावली लगभग 16 वीं शताब्दी के आसपास की बनी होगी, पत्थरों से युक्त इस बावली का आकार सीढ़ीनुमा वर्गाकार है। लगभग 200 फिट लंबी एवं 200 फिट चौड़े आकार की ये बावली तत्कालीन समय में इस गांव के आम जनता के निस्तार एवं पेयजल व्यवस्था को ध्यान में रखकर निर्मित की गई होगी। इसकी गहराई लगभग 30 फिट की है। इस बावली के रख–रखाओं एवं संरक्षण की ओर शासन ने ध्यान दिया और यह आज उपयोगी स्थिति में है। ये बावली खण्डित हो चुकी थी परंतु इसकी साफ–सफाई की ओर प्रशासन की ओर से एस.डी.ओ. एन. पाण्डेय जी ने ध्यान दिया एवं इसके पुनर्निर्माण की प्रक्रिया प्रारंभ की,।

बाद में 2006 में इसका नवीनीकरण किया गया इसका श्रेय प्रशासनिक अधिकारी श्री बरदमूर्ति मिश्रा जी एस.डी.ओ. को जाता है। वर्तमान समय में यह बावली, देवतालाब की जनता के लिए बड़ी उपयोगी साबित हुई।

चारों तरफ से पत्थरों से जुड़ाई कराकर इसे सदृढ़ता प्रदान की गई है एवं इसके पानी की साफ–सफाई की ओर ध्यान दिया गया, इसमें जमा हुआ मलवा बाहर किया गया इस प्रकार जनता एवं प्रशासन के प्रयास से इस पुरातात्विक धरोहर को सुरक्षा प्रदान की गई।

मऊगंज स्थित बावली – जिला जालौन की सेंगर वंश की शाखा स्थानान्तरित होकर मऊगंज तहसील में आबाद हुई थी। यहाँ एक सेना नायक के नेतृत्व में एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना हुई थी। जिसका राजा मऊ का राजा कहलाता था पास में ही एक गंज नामक गांव था कालान्तर में मऊ और गंज की आबादी बढ़ने के कारण दोनों गांव करीब होते गए तब इस क्षेत्र का नाम मऊगंज पड़ गया। वर्तमान समय में मऊगंज रीवा जिले की एक तहसील है। जो रीवा से लगभग 45 मील उत्तर पूर्व में रीवा मिर्जापुर रोड पर स्थित है। पुराने मऊगंज में सेंगर राजाओं की बनवाई हुई गढ़ी है, गढ़ी के बाहरी भाग में दांई ओर सीतापुर मार्ग पर एक बावली के अवशेष देखने को मिला यह बावली शायद गढ़ी के निर्माण कार्य के समय में ही स्थापित की गई होगी। वर्तमान समय में खण्डित होकर यह बावली भठ चुकी है 5, केवल अवशेष ही बाकी है।

नई गढ़ी स्थित बावली – नई गढ़ी रीवा जिले की तहसील मुख्यालय है। रीवा से मऊगंज मार्ग पर 35 कि.मी. की दूरी एवं देव तालाब से लगभग 20 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यहाँ एक प्राचीन बावली के अवशेष देखने को मिला। बावली खण्डित एवं जीर्ण–शीर्ण अवस्था में पहुंच चुकी है, इसकी सुरक्षा की ओर ध्यान न दिए जाने के कारण बावली पूरी तरह भठ चुकी है। अवशेष देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि बावली अत्यधिक प्राचीन एवं लगभग 50 फिट के क्षेत्र में निर्मित हुई थी।

बैकुण्ठपुर स्थित बावली – बैकुण्ठपुर रीवा जिले की तहसील मुख्यालय हैं, रीवा से बैकुण्ठपुर की दूरी लगभग 25 कि.मी. के आसपास होगी। बैकुण्ठपुर बस स्टैण्ड से पूर्व दिशा में 500 मी. दूर एक पुरानी गढ़ी है, गढ़ी के बाहरी भाग पर एक प्राचीन बावली के अवशेष देखने को मिले, इस बावली का निर्माण किसने किया था इस बात की जानकारी वहाँ की जनता ने भी नहीं दिया मान्यता यह है कि ये बावली लगभग 150 वर्ष के आसपास की है। इस बावली के भी मात्र अवशेष दिखे, पूरी तरह खण्डित एवं जर्जर अवस्था की ये बावली भठ चुकी है, इसकी सुरक्षा एवं रख–रखाओं की ओर ध्यान न दिए जाने के कारण एक पुरानी धरोहर धीरे–धीरे पतन के गर्त में समाहित होती नजर आई।

मांडव ग्राम के समीप स्थित बावली – ये स्थान रीवा जिले के सिरमौर तहसील में बैकुण्ठपुर मार्ग पर मांडव ग्राम से पश्चिमी दिशा में लगभग 3 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यहाँ के प्राचीन बावली जिसका निर्माण सार्वजनिक कार्यों के लिए किया गया था।इसका आकार लगभग 40 फिट का है एवं गोलाकार में बनी इस बावली का शीर्ष भाग 60 फिट एवं गहराई लगभग 30 फिट की है। इस बावली पर वर्तमान समय में एक पटेल परिवार का स्वामित्व है, यह खण्डित हो चुकी है, परंतु इसका उपयोग आज भी कृषि के सिंचाई के लिए किया जाता है।

त्योंथर स्थित बावली – रीवा जिलें की त्योंथर तहसील मुख्यालय में भी एक बावली का अवशेष मिला एस. एन. 27 मार्ग पर रीवा से लगभग 65 कि.मी. दूर सोहागी से 5 कि.मी. दूर इलाहाबाद रोड पर एक गढ़ी स्थित है, गढ़ी के बाहरी क्षेत्र में एक पुरानी बावली का अवशेष (रीवा के बघेल राजाओं द्वारा निर्मित) देखने को मिला ये पूरी तरह भठ चुकी है, खण्डित एवं जीर्ण–शीर्ण अवस्था में देखने को मिली है। साक्षात्कार के दौरान इस बात की जानकारी मिली कि इस बावली का निर्माण रीवा महाराजा गुलाब सिंह के समय में यहाँ के इलाकेदार द्वारा कराई गई थी।

रायपुर कलचुरियान स्थित बावली – राष्ट्रीय राज्य मार्ग क्रं. 7 में रीवा से इलाहाबाद मार्ग पर 16 कि.मी. की दूरी पर रायपुर कलचुरियान स्थित है,। यहाँ निर्मित गढ़ी के प्रांगण में एक बावली के अवशेष देखने में आए, इस संबंध में जानकारी मिलीकि यहाँ एक बड़ी बावली निर्मित थी, जो रीवा के बघेल राजाओं के काल में बनी थी,देख–रेख के अभाव में इसका अस्तित्व ही समाप्त हो गया बावली भठ चुकी है, मात्र पत्थरों की अवशेष ही दिखे।

गढ़ की बावली – रीवा से इलाहाबाद मार्ग पर रीवा से लगभग 60 कि.मी. की दूरी सिरमौर तहसील के अंतर्गत गढ़ थाना क्षेत्र में स्थित है। यहाँ मुख्य मार्ग में थाना के पास ही एक बावली स्थित है। लगभग 150 वर्ष पुरानी बावली का निर्माण महाराजा रीवा गुलाब सिंह के राजत्वकाल में हुआ था। इसकी लंबाई लगभग 60 फिट हैं। सीढ़ीनुमा इस बावली का निर्माण रेतीले पत्थरों को जोड़कर किया गया था।

वर्तमान समय में ये बावली खण्डित एवं जीर्ण–शीर्ण अवस्था में देखने को मिली, गोलाकार इस बावली का शीर्ष भाग लगभग 60 वर्गफिट का निर्मित है।

पहले इसका उपयोग जनता के पेयजल में होता था किन्तु थाना क्षेत्र में आ जाने के कारण इसे जनता के लिए प्रतिबंधित कर दिया गया। वर्तमान में यहाँ कूड़ा–कचरा का अंबार लगा हुआ है, एवं बावली का अधिकांश भाग भठ चुका है। बावली खण्डित एवं जीर्ण–शीर्ण हो चुकी हो चुकी है किन्तु बावली के अवशेष दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नजीरा बाद – मुस्लिम समाज, कृषि नगर सिंधी समाज, दिनांक 20.12.2010
2. साक्षात्कार – बड़कू मिस्त्री (45 वर्ष) मऊगंज, प्रो. आर.बी. सिंह (70 वर्ष)। दिनांक 20.12.2010
3. शोधकर्ता द्वारा सर्वेक्षण के आधार पर।

संस्कृति का स्वरूप

डॉ. सुनीता शुक्ला *

प्रस्तावना – किसी समाज, जाति अथवा राष्ट्र के समस्त व्यक्तियों के उदात्त संस्कारों के पुंज का नाम उस समाज, जाति और राष्ट्र की संस्कृति है। किसी भी राष्ट्र की शारीरिक, मानसिक व आत्मिक शक्तियों का विकास संस्कृति का मुख्य उद्देश्य है।[1] वस्तुत: संस्कृति मानव जीवन के उन समस्त तत्वों की समष्टि का नाम है, जिनका धर्म और दर्शन से उदय होकर कला–कौशल, समाज तथा व्यवहार में उनकी परिणति होती है।[2]

संस्कृति मानव जीवन की विशिष्ट पद्धति तथा विकास की दिशा में सतत् गतिशील एवं स्थायी जीवन अव्यवस्था है। इस मानव जीवन का सौन्दर्य एवं वैचारिक केन्द्र बिन्दु से संयुक्त दृष्टिकोण भी कहा जा सकता है।[3]

मेकाइवर तथा पेज के अनुसार'संस्कृति हमारे दैनिक व्यवहार में कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन और आनंद में पाए जाने वाले रहन–सहन और विचार के तरीकों मे हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।'[4] संस्कृति वह संसार है, जिसमें एक व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक निवास करता है, चलता फिरता है और अपने अस्तित्व को बनाए रखता है।

डॉ. भगवानदास के शब्दों मे 'मानसिक क्षेत्र में उन्नति की सूचक उसकी प्रत्येक सम्यक् कृति संस्कृति का अंग बनती है। इसमें प्रधान रूप से धर्म–दर्शन, सभी ज्ञान विज्ञान और कलाओं, सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाओं और प्रथाओं का समावेश होता है।[5] 'मैथ्यू अर्नोल्ड के मत में, किसी समाज और राष्ट्र की श्रेष्ठतम् उपलब्धियाँ ही संस्कृति है जिससे समाज, राष्ट्र परिचित होता है।'[6] अत: संस्कृति का सम्बन्ध मानवीय बुद्धि, स्वभाव और उसकी मनोवृत्तियों से होता है। इन तत्वों के सहयोग से व्यक्ति अपना विकास कर लेता है, निश्चय ही उस व्यक्ति के आदर्श, उसके विचार और उसका जीवन–मूल्य महान होता है। ये विशेषताएँ या तो स्वत: महान होती हैं अथवा महत्ता को जन्म देती हैं। अत: हम कह सकते हैं कि संस्कृति साध्य भी है और साधन भी।

संस्कृति का शाब्दिक अर्थ – संस्कृति शब्द अंग्रेजी के 'कल्चर' का हिन्दी रूपान्तर है। संस्कृति शब्द संस्कृत व्याकरण के अनुसार 'सम' । उत्तम। उपसर्ग 'कृ' धातु से 'क्तिन' प्रत्यय होने पर संस्कृति शब्द उत्पन्न होता है, जिसका सरल अर्थ है 'उत्तम कृति' अर्थात् देह, इन्द्रिय, प्राण, मन, बुद्धि आदि की उत्तम सम्यक चेष्टाएँ या हलचलें। डॉ. ईश्वरी प्रसाद के अनुसार' संस्कृति शब्द की उत्पत्ति संस्कार से है, जो मानव जीवन को सभ्य जीवन के संस्कार प्रदान करती है, जो उसके जीवन को उत्तम बनाती है, वहीं संस्कृति है।[7] इसमें परिमार्जन या परिष्करण के अतिरिक्त शिष्टता एवं सौजन्य का भी समावेश है।[8] पण्डित मोतीलाल के अनुसार 'संस्कृति शब्द है, सम्–स–कृति ये मुख्य पूर्व विभाग है। इन तीनों में भी मुख्य सम–कृति दो ही हैं।[9] अत: किसी देश या जाति की संस्कृति का अर्थ उस देश या जाति की वे पुरानी आदतें, प्रथाएँ, रहन–सहन, आदि हैं, जो देश या जाति के सदस्यों का चरित्र–निर्माण करती हैं, या उस निर्माण में प्रभावशाली होती हैं।

प्रसिद्ध मानवशास्त्री टायलर के शब्दों में 'संस्कृति वह जटिल सम्पूर्णता हैं जिसमें ज्ञान, विश्वास, कलाएँ नीति, विधि, रीतिरिवाज और समाज के सदस्य होकर मनुष्य की अर्जित अन्य योग्यताएँ और आदतें सम्मिलित है।'[10]

इस शब्द की व्युत्पत्ति, लैटिन भाषा की धातु कोलर से निष्पन्न कुल्टुरा शब्द से हुई है जो पूजा करना तथा कृषि कार्य का बोधक है।[11] मैलिनोवस्की के अनुसार 'संस्कृति व्युत्पन्न आवश्यकताओं की एक व्यवस्था तथा उद्देश्यात्मक क्रियाओं की एक संगठित व्यवस्था है।'

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों की संस्कृति विषयक अवधारणाएँ – जवाहरलाल नेहरू के अनुसार 'संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी या कही गई हैं उनसे अपने आपको परिचित करना संस्कृति है।' वे फिर आगे लिखते है कि संस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण हठीकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है। यह मन आचार अथवा रूचियों की परिष्कृति या शुद्धि है।[12] यह सभ्यता के भीतर से प्रकाशित हो उठता है।

किसी राष्ट्र की संस्कृति अपने धर्म, दर्शन, कला एवं मानसिक चिन्तन के स्वरूप को व्यक्त करती है। मानव जिस रूप में अपने धर्म का विकास करता है, दर्शनशास्त्र के रूप में चिन्तन करता है, साहित्य एवं कला का जिस प्रकार सृजन करता है, और अपने समष्टिगत जीवन को अधिक सुखमय बनाने के लिए शासन प्रबन्ध और आर्थिक स्थिति को विकसित करता है, उन सबका समावेश संस्कृति में होता है।[13] डॉ. प्रसन्न कुमार के अनुसार भूमि को परिष्कृत करना कृषि का उद्देश्य है। संस्कृति या कल्वर भी मनुष्य की सहज प्रवृत्तियों, नैसर्गिक शक्तियों तथा परिष्कार का द्योतक है। जीवन के चरमोत्कर्ष की उपलब्धि इस विकास की परिणति है।[14] टाइलर के अनुसार संस्कृति का शक्तिशाली स्त्रोत मानव है, जो अद्धितीय सामर्थ्य सम्पन्न है।[15] मानवता को पल्लवित करने की पद्धति ही संस्कृति है। आदर्श संस्कार संस्कृति के उन्नयक सौपान हैं।

संस्कृति उन सभी वस्तुओं का जटिल समग्र है, जो समाज के सदस्य के रूप मे हम सोचते हैं और रखते है।[16] हावेल के मत में 'संस्कृति सम्बन्धित सीखे हुए व्यवहार प्रतिमानों का सम्पूर्ण योग है, जो कि एक समाज के सदस्यों की विशेषताओं को बतलाता है और जो इसलिए प्राणीशास्त्रीय विरासत का परिणाम नहीं होता है।[17] सर मौनियर के अनुसार संस्कृति का अर्थ तैयार करना, रचना, संस्कार द्वारा पवित्र करना, संकल्प द्वारा कार्य की सम्पन्नता है।[18] संस्कृति उन भौतिक तथा बौद्धिक साधनों या उपकरणों का सम्पूर्ण योग है, जिनके द्वारा मानव अपनी प्राणिशास्त्रीय तथा सामाजिक

*प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा अपने पर्यावरण से अनुकूलन करता है।[19]

क्रोबर के मत में मनुष्य की सार्थकता संस्कृति के कारण ही है।[20] संस्कृति सामाजिक उपलब्धि ही नहीं है प्रत्युत नैतिक आध्यात्मिक तथा मानसिक उपलब्धि भी है।[21] क्रोबर के मत में, 'जैसे चट्टान असंख्य कीड़ों को हजारों वर्षो तक किए गए योगदान का परिणाम है, उसी प्रकार हमारी संस्कृति भी किसी एक व्यक्ति का पुरूषार्थ नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति के दीर्घकालीन योगदान से निर्मित हुई है।[22]

संस्कृति जीवनगत परिपूर्णता तथा उसका सौन्दर्य एवं प्रकाश है। यह धर्म की अनन्त शक्ति, विज्ञता तथा सौन्दर्य आदि आदर्शो तक व्यक्ति को पहुंचाने का एकमात्र साधन है। यह एक सामाजिक भाव है, तथा सांस्कृतिक मनुष्य समता के देवदूत हैं।[23] प्रो. नेस्ली ए.व्हाइट के मतानुसार'मानव के सामर्थ्य अथवा योग्यता के प्रयोग ने संस्कृति को जन्म देकर चिरस्थायी बनाया है तथा वह अपने उपादानों के संयुक्त रूप द्वारा अभिव्यक्त हुई है।[24]

जब संस्कृति व्यक्ति तक सीमित रखती है, तब वह उसके व्यक्तित्व को मूल्यवान बनाती है, और जब वह जातीय जीवन मे समाविष्ट हो जाती है तो वह राष्ट्रीय चेतना को विकसित करती है। इन्हीं विकसित तत्वों में साहित्य, कला, धर्म और दर्शन होते है।[25]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शिवदत्त ज्ञानी– भारतीय संस्कृति– पृ04
2. डॉ. राजकिशोर सिंह– प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति, संस्करण– 1971, द्वितीय खण्ड–संस्कृति, प्रथम अध्याय,पृ.192.
3. K.M. Munshl: Our Greatest Need, 1st Ed. pages 58. 60. Heading- The Meaning of culture.
4. `Society', 1955, P. 499.
5. डॉ. राजकिशोर सिंह–प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति संस्करण– 1971, द्वितीय खण्ड–संस्कृति, प्रथम अध्याय, पृ.–192.
6. डॉ. राजकिशोर सिंह–प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति संस्करण– 1971, द्वितीय खण्ड–संस्कृति, प्रथम अध्याय, पृ.–192.
7. डॉ. ईश्वरी प्रसाद – भारतीय संस्कृति, अध्याय–1, 'भारतीय एकता पृ. –1
8. डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य–भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता संस्करण सं. 2014, पृ. –1, शीर्षक–संस्कृति।
9. पण्डित मोतीलाल शर्मा–सत्ता निरपेक्ष संस्कृति शब्द एवं सत्ता सापेक्ष सभ्यता शब्द का, चिरन्तम–इतिवृत्त तथा भारतीय संस्कृति आयोजनों की रूपरेखा, संस्करण–सं. 2015, पृ. 7.
10. `E.B. Tylon-' Primitive Culture' P-1.
11. A.L. Krosher and Clyde Kluckhohn, culture, 1952, Page-9 Brief Survey.
12. रामधारी सिंह दिनकर–संस्कृति के चार अध्याय, तृतीय संस्करण– 1962, शीर्षक प्रस्तावना, पृ. 11.
13. डॉ. राजकिशोर सिंह–प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति, संस्करण– 1971 शीर्षक–निवेदन.
14. डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य–भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता, संस्करण– सं. 2014, पृ.–1.
15. Tylor-Primitive culture.
16. Robert Biersiedt- The Social order, P. 106.
17. E.A. Hoebel- Man in Primitive word, 1958, P-7
18. Sri Monier Willams, A Sanskrit English Dictionary, P. 1120-21
19. Ralph Piddington, An Introduction to Social Anthropology, 1952, P.P.3-4.
20. A.L. Kroeber- an thropology Today, Ed. 1959, P-520, Heading- Universal Categories of Culture.
21. Dr. D.N. Mazumdar and Dr. T.N. Madan- An Introduction to Social Anthropology, Ed.-1960, chapter-II, P.-8.
22. A.L. Krober- Anthropology, 1948, chapter-VII, pages 254 to 256, Heading-The Nature of culture.
23. Mathew Arnold, Culture and Anarchy, Ed. 1950, Page-441-448
24. Prof. Leslis A white-The Evolution of culture, Ed-1956, chapter 1, Pages-6, Heading-Man 1s Unique.
25. डॉ. राजकिशोर सिंह–भारतीय कला और संस्कृति, संस्करण 1971 पृ. 192.

****

गुप्तकालीन स्त्रियों के वस्त्राभूषणों का अध्ययन

डॉ. ममता खोईयां *

प्रस्तावना – गुप्तकालीन स्त्रियां वस्त्राभूषणों का विविध रूपों में प्रयोग करती थी, गुप्तकालीन स्त्रियों में सौन्दर्य बोध था। उसकी पुष्टि गुप्तकालीन मूर्तियो से भी होती है। भारतीय वेशभूषा के इतिहास मे गुप्तकाल का अत्याधिक महत्व है। गुप्तकाल में सामान्यत: स्त्रियां सिर्फ 2 वस्त्रों का प्रयोग करती थी, एक का प्रयोग शरीर के निम्न भाग को तथा दूसरे का शरीर के ऊपरी भाग को ढकने के लिए करती थी। ऊपर का वस्त्र रत्नांशुक का भी उल्लेख मिलता है, जो कदाचित शरीर ढंकने के लिए कोई ढीला वस्त्र था जिसका प्रयोग स्त्रियां जाड़ो में करती थी। शरीर के निचले हिस्से पर आधुनिक साड़ी के समान वस्त्र क्षौमान्तिरित मेखला धारण करती थी, जो कभी– कभी अवगुंठन का भी नाम करता था। शकुंन्तला जब राजा दुष्यंत से दरबार में मिलने गई तब अपने मुख को अवगुंठन से ढंकने का उल्लेख आया है।[1]

वस्त्रो के प्रकार – अमरकोश के अनुसार वस्त्र 4 प्रकार के होते थे।

वल्क – छालो अथवा रेशो से बने वस्त्र

फाल– फल के रेशो से बने वस्त्र जैसे कपास

कोशेय– रेशमी

राकंव/पश्मीने– पामीर प्रदेश का बना

साधारण श्रेणी के लोग सूती वस्त्र और उच्च श्रेणी के लोग रेशमी वस्त्रों का प्रयोग किया करते थे।2 रेशमी वस्त्रो के प्राय: दो प्रकारो का वर्णन मिलता है।[2]

कौशेय

चीनाशुंक

कौशेय संभवत कोश कार देश मे पैदा हुए रेशम से बना वस्त्र था तथा चीनाशुंक चीन देश में बना रेशमी वस्त्र था इसे चीन से आयात किया जाता था।

साधरणतया स्त्रियां उत्तरीय (औढ़नी) कंचुक (चोली) और चण्डातक (पेटीकोट) पहनती थी।[3] स्त्रियां आज की भांति साड़ीयॉ पहनती थी।[4] गुप्तकाल में नारियॉ अपने शरीर को सुंदर एवं आकर्षक बनाने के लिए प्रचुर मात्रा में आभूषणों का प्रयोग करती थी स्त्रिया आभूषण प्रिय होती थी स्त्रियों में आभूषण प्रियता के अतिरिक्त आभूषण पहनना समाजिक अनिर्वायता भी थी। इस सामाजिक अनिवार्यता का सुंदर उदाहरण हमे कुमारगुप्त तथा बंधुवर्मन के मंदसौर प्रस्तर अभिलेख से मिलता है।

कवि कालिदास ने ऋतु के अनुकूल स्त्रियों की वेशभूषा का विस्तृत वर्णन किया है। गुप्तकाल में वस्त्र कई प्रकार के प्रयोग में लाए जाते थे। ऋतु के आनुसार वस्त्र के भी विभिन्न प्रकार उपलब्ध होते थे।

1. **ग्रीष्मकालीन वेशभूषा –** ग्रीष्मकाल में मोटे– 2 वस्त्रों को त्याग कर मनुष्य पतले वस्त्र धारण करते थे।

2. **वर्षाकालीन वेशभूषा –** स्त्रियां इस ऋतु मे महीन एवं श्वेत वस्त्र धारण कर सुन्दर मुक्तामाला पहनकर केशों को केसर,केनकी,तथा कदम्ब इत्यादि के फूलो से सजाती थी। तथा स्वर्ण काले जड़ित कुण्डल एवं रशना इत्यादि आभूषणो से अलंकृत होकर काले अगरूयुक्त चन्दन का अवलेप कर श्यनागार में पति के सम्मुख जाती थी।

3. **शरदकालीन –** शरद ऋतु में स्त्रियां अपनी घनी,घुंघराली एवं काली लटो में मालती के फूल गुंथकर कानों मे नीलकमल पहनकर चन्दन से शरीर को सुंगधित कर तथा मोतियों के हार एवं रशना से प्रसाधित होकर पति को आकर्षित करती थी।

4. **हेमंत कालीन –** घोर शीत के आगमन के कारण स्त्रियां इस ऋतु में हार कंगन इत्यादि आभूषण पहनना छोड देती थी साथ ही चन्दन से शरीर को सुंगधित भी नहीं करती थी। नये रेशमी वस्त्र तथा महीन चोली भी वे अब नहीं पहनती थी। लेकिन मुख को पत्र रचना एवं केशो को काले अगर से शोभित करती थी।

5. **शिशिर कालीन –** वसंन्त ऋतु के आगमन होते ही स्त्रियाँ पुन: पुष्पमाला एवं चन्दन का प्रयोग प्रारंभ कर देती थी।

लाल दुकुल के रंग में रंगी चोली कान एवं केशो में कर्णिकार और अशोक के पुष्प कंगन रशना इत्यादि के अलंकरण स्त्रियों के शरीर पुन: सुन्दर हो जाते थे। वे मुख पर पत्र रचना, वृक्षस्थल पर प्रियंगु, कालीयक, कस्तूरी एवं केसर का अवलेप लगाती थी।

गुप्तकाल मे आभूषण मुख्यत: चार प्रकार के होते थे।

1. रत्न जड़ित आभूषण
2. स्वर्णाभूषण
3. मुक्ताभूषण
4. पुष्पाभूषण

जेवरों में टीका कर्णफूल, मालाएँ कटिबन्ध, चूडियां, अंगूठी, पायजेब आदि सभी का प्रयोग होता था परन्तु सम्भवतया नथ का प्रयोग नहीं होता था।[5]

कालिदास ने इनका विर्स्तत वर्णन किया है

1. **सिर के आभूषण –** वराहमिहिर ने 5 प्रकार के सोने के पट्टो में महिषिपट्ट का भी उल्लेख किया है।

2. **कानो के आभूषण –** कर्णपुर, कुण्डल, कनक, कमल अवसत इत्यादि का प्रयोग स्त्रियां कानो के आभूषण के रूप मे प्रयोग करती थी

3. **कण्ठाभूषण –** मुक्तावली, तारहार, हारशेखर, हारयष्टि, हार,

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्वामी विवेकानंद महाविद्यालय, सारंगपुर, जिला–राजगढ़ (म.प्र.) भारत

स्तनलम्बिहार, इन्द्रनील,निर्धोतहार मुक्तामयी, मुक्ताकलाप, निठक, रत्नानुद्रिप्रालम्ब, मुक्ताजाल इत्यादि हारों के विभिन्न प्रकारो का स्त्रियां प्रयोग करती थी। इसकी बनावट में थोडा-2 अन्तर होता था।

4. कराभूषण – अंगद,केयर,वलय, अंगूठी, तथा कटक में पांच प्रकार के कराभूषण स्त्रियां पहनती थी। स्त्रियों के इन आभूषणो मे घुंघरू आदि की कोई न कोई विशेषता रहती थी।

5. कटि के आभूषण– स्त्रियॉ कमर में मेखाला, रशना, कनक किंकिणि एवं कोची आभूषण भी पहनती थी।

6. पैरो के आभूषण – नूपुर, स्त्रियां पैरो में पहनती थी, नूपुर का अर्थ बिछुआ न होकर पायल था।

इस प्रकार से गुप्तकाल में वस्त्राभूषण की महता सामाजिक रूप से भी स्थापित थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गौतम, पीएल – प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, मेसग्रा हिल एज्यूकेशन दिल्ली 2013 पृष्ठ-47
2. रस्तोगी, डॉ. दया प्रकाश – प्राचीन भारत, साधना प्रकाशन, मेरठ 1982 पृष्ठ-238
3. महाजन, बी.डी. – प्राचीन भारत का इतिहास, एच.चन्द्र एण्ड कम्पनी, रामनगर, दिल्ली 2013 पृष्ठ-438
4. दूबे, सत्यनारायण- भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दोर 1994 पृष्ठ-149
5. शर्मा, एलपी – प्राचीन भारत, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा 2006 पृष्ठ-250

****

भारिया जनजाति की धार्मिक समस्यायें एवं निराकरण (पातालकोट घाटी के संदर्भ में)

डॉ. अमित कुमार सातनकर *

प्रस्तावना – जनजातीय समाज तथा संस्कृति अभी भी वैश्विक विकास से मीलों दूर है। उनकी समस्याओं को अनेक रूपों में जैसे आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, शैक्षणिक समस्याओं के रूप में निरूपित किया जा सकता है। ये सभी समस्याए समाज से जुड़ी हुई हैं। अत: इन्हें सम्मिलित रूप से सामाजिक समस्याओं के रूप में निरूपित किया जा सकता है।

संपूर्ण भारत की 461 जनजातियों में से 75 विशेष पिछड़ी जनजातियों में भारिया जनजाति भी शामिल है। सभ्यता के आदिम काल से ही यह जंगलों और पहाड़ी इलाकों में रह रही है। खुले मैदानों के निवासियों तथा सभ्यता के केन्द्रों से उनका सम्पर्क आकस्मिक से अधिक नहीं रहा। यदा-कदा किसी सैनिक अभियान के तौर पर यदि किसी सैन्य काफिले को रूकना पड़ा, तभी वे अस्थायी रूप से राजाओं और वृत्त लेखकों की जानकारी में आये अन्यथा वे मैदानी इलाकों से विलगित ही रहते, लेकिन जब उन्नीसवीं सदी के अन्तिम वर्षो से लेकर बीसवीं सदी के प्रारम्भ तक आधुनिक संचार साधानों का प्रादुर्भाव हुआ, देश की जनसंख्या में वृद्धि के फलस्वरूप भूमि के भूखे मैदानी कृषकों ने मध्य और दक्षिण भारत के विरल आबादी वाले जनजातीय क्षेत्रों पर धावा बोल दिया।

जनजातीय समस्यायें – जनजातियां जंगलों और पहाड़ों में बिना किसी मूलभूत संसाधनों के जीवन व्यतीत कर रही थी एवं अपनी जीवनशैली से उन्हें किसी प्रकार की शिकायत नहीं थी। उंचे-उंचे पहाड़ों, वृक्षों से वे अपने जीवन की आशाओं को परिपूर्ण कर कल-कल करते झरनों से प्रेरणा पाकर अपने जीवन को गतिशील बनाए रखते थे। वे अपने कष्टकारी दुसाधय जीवन को प्रकृति के सानिधय में रहकर व्यतीत करते थे। दरिद्रता, भूख, पर्यावरणीय बीमारियां उन्हें पीड़ित करती थी, परन्तु मजबूत सामाजिक सम्बन्धों तथा अपनी संगठनिक व्यवस्था द्वारा प्रत्येक समस्या को हल कर लिया जाता था। समाज विज्ञानियों का कहना है कि कोई समाज तभी तक अपने अस्तित्व को बनाए रख सकता है, जब तक उसके आन्तरिक व्यवस्था में हलचल न हो। इसलिए जब तक अंग्रेज नहीं आए, तब तक इनके जीवन में किसी प्रकार की कोई हलचल नहीं हुई।

जब अंग्रेजों ने उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में दखल देना प्रारम्भ किया तो वे आन्दोलित हो उठे और उन्होंने विद्रोह करना प्रारम्भ कर दिया तो तत्कालीन अंग्रेज सरकार द्वारा जनजातीय क्षेत्रों को जिलों में बांट दिया। भारतीय अधिानियम 1919 के तहत पिछड़े जनजातीय क्षेत्रों को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया –

1. पूर्णत: वर्जित क्षेत्र
2. संशोधित वर्जित क्षेत्र

पूर्णत: वर्जित क्षेत्र को केन्द्र प्रशासन के अन्तर्गत तथा आंशिक वर्जित क्षेत्र को राज्य सरकार का मंत्रिमण्डल नियुक्त करता था। मैदानी इलाकों के साहूकारों तथा व्यापारियों के भीषण आक्रमण ने जनजातीय समाज को तबाही के गर्त में धकेल दिया। इनके सम्पर्क में आने के कारण जनजातीय समाज अपनी आर्थिक निर्भरता और अपनी अधिकांश भूमि खो बैठा।जिस कारण आवाज को विभिन्न विद्रोहों के माध्यम से उठाता रहा, देश की स्वतंत्रता के बाद सरकार ने और कथित देशवासियों ने इसे समस्या की संज्ञा दी।

धार्मिक समस्या – भारिया जनजाति की एक प्रमुख समस्या अपनी पुरानी परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों माना जा सकता है कि वह संस्कृतिकरण की प्रक्रिया से गुजर रही है। जब एक संस्कृति किसी दूसरी संस्कृति के सम्पर्क में आती है, तो लोग परस्पर प्रभावित होते हैं। आमतौर पर छोटा समुदाय बड़े समुदाय से प्रभावित होता है अथवा देशज समुदाय वाले विदेशी समुदाय से प्रभावित होते हैं। इस प्रक्रिया को परासंस्कृतिकरण कहते हैं। पश्चिमी भारत (राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र), दक्षिण भारत, मधय भारत तथा पूर्वी भारत की लगभग 95 प्रतिशत से ज्यादा भाग हिन्दूकरण की ओर उन्मुख हो गया है। यह अनुमान लगाया जाता है कि जनजातीय आबादी का तकरीबन 5 प्रतिशत भाग ईसाई धर्मावलंबी है और ये पूर्वी भारत में संकेन्द्रित है।

हिन्दू धर्म के प्रभाव और हिन्दुओं के साथ सांस्कृतिक सम्पर्क के परिणाम स्वरूप जनजातियों ने हिन्दू रिवाजों, परम्पराओं, विश्वासों, देवी-देवताओं तथा नये उत्सवों तथा वर्जनाओं को अपनाया। अनेक बार उन्हें सामाजिक दृष्टि से अपात्रता के विधानों को झेलने के लिए विवश होना पड़ा तथा गोमांस के सेवन तथा मदिरापान को छोड़ना पड़ा। उन्हें हिन्दू सामाजिक पद सोपानों के निम्न स्तर पर रखा गया, लेकिन फिर भी वे हिन्दू धर्म से घनिष्ठता से जुड़ी हुई हैं, क्योंकि पुनर्जन्म , नियतिवाद आदि दार्शनिक विवेचनाओं में उन्हें अपनी वर्तमान गरीबी का कारण तथा आगामी जन्मों में इससे बचने का रास्ता उन्हें इसमें दिखाई देता है, लेकिन ब्राह्मणवादी मिशनरी प्रभावों के प्रशंसनीय परिणामों के अतिरिक्त उनमें छुआछूत उत्पन्न हो गई।

हिन्दू धर्म के नकारात्मक प्रभावों में जनजातीय समाज में जाति प्रथा, ब्राह्मणों की उच्चता, सती प्रथा, दहेज प्रथा आदि है। सारांश उत्तरी तथा मधय भारत में आदिवासी समाज का बड़ा भाग ब्राह्मणवादी हिन्दू धर्म में परिवर्तित हुआ। इस धर्म परिवर्तन ने आदिवासियों को वर्णाश्रम में सबसे निम्न स्तर ग्रहण करने के लिए विवश किया और उनके आदिवासी वर्ण-विहीन स्वरूप हैं, को हरण कर लिया।

ब्रिटिश आगमन के पश्चात् देश के विभिन्न हिस्सों में मिशनरी संगठनों और गिरजाघरों की स्थापना हुई। एक तरफ इन मिशनों ने ईसाई धार्म का प्रचार-प्रसार किया, वहीं उन्हें शिक्षा तथा स्वास्थ्य की मूलभूत सुविधायें

*ज. हा. शासकीय महाविद्यालय, बैतुल (म.प्र.) भारत

भी प्रदान की। ईसाई धर्म के आगमन ने जनजातीय लोगों में आत्मविश्वास के भाव का संचार किया।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जो हमारे प्रथम राष्ट्रपति थे, वे ईसाई मिशनरीज के द्वारा किये सुधारों के बारे में कहते हैं 'मसीही मिशनरियों ने बड़े त्याग से उनमें शिक्षा का प्रसार किया और उनके जीवन की परिस्थितियों में सुधार लाने का कार्य किया' तथा कुछ स्थितियों में जनजातीय लोगों ने ईसाई धर्म को विद्रोह के प्रतीक अथवा हिन्दू जमींदारों, महाजनों तथा व्यापारियों के विरूद्ध प्रतिक्रिया के रूप में अपनाया। ईसाई धार्म को अपनाने से जनजातीय परम्पराओं तथा एकता की भावना को धक्का पहुंचा और उनमें एक-दूसरों के प्रति हीन भावना शुरू हो गई, लेकिन जब जी.एस. धुर्ये कहते हैं कि आदिवासी 'पिछड़े हिन्दू' हैं और उन्हें व्यापक एवं पूर्ण सात्मीकरण द्वारा हिन्दू धर्म के दायरे में लाना आवश्यक है तो यह विचार 'हिन्दू राष्ट्रवाद' का समर्थन करना प्रतीत होता है।

समस्याओं के निराकरण के लिए किए प्रयास – राष्ट्रीय एकता के हित में यह आवश्यक है कि जनजातीय लोगों को अपने भाग्य तथा भविष्य के बारे में निर्णय करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाए। अपने लिए विकास की रणनीतियां उनकी सोच पर आधारित हो तथा उनमें उनकी भूप्रिमुख हो। जनजातीय समस्याओं के निराकरण की नीतियों को प्रमुखतया तीन बिन्दुओं में विभक्त किया जा सकता है –

1. पृथक्करण की नीति।
2. आत्मसात करने की नीति।
3. एकीकरण की नीति।

पृथक्करण की नीति ब्रिटिश साम्राज्य के प्रशासकों द्वारा अपनाई गई थी। इस मत के समर्थक वैरियर ऐल्विन तथा हट्टन प्रमुख थे। वे जनजातीय समाज को भारतीय समाज से भिन्न मानकर उन्हें बाह्य सम्पर्क से बचाना चाहते थे।

दूसरी तरफ डॉ. घुरिये, अक्षय देसाई व निर्मल कुमार बोस के अनुसार जनजातियों को हिन्दू समाज में आत्मसात कर लेना चाहिये तथा इसके अनुसार आदिवासियों को पिछड़े हिन्दुओं की संज्ञा दी गई। इस नीति की अधिकांशत: आलोचना की जाती है।

तृतीय मत के प्रवर्तक नेहरुजी के अनुसार हमें जनजातियों पर अपने विचार न थोपते हुए, उन्हें हमारी प्रतिलिपि बनाने का प्रयास नहीं करना चाहिये, बल्कि उनकी आकांक्षाओं और विचारों को मान्यता प्रदान करते हुए उन्हें इस योग्य बनाना चाहिए कि वे आधुनिक विज्ञान का लाभ उठा सके। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय नेताओं ने नेहरु की नीति पर कार्य करना प्रारम्भ किया, किन्तु उनकी कार्य अक्षमता मकाअकर्मण्यता तथा प्रशासनिक भ्रष्टाचार के परिणामस्वरूप जनजातियों का विकास सर्वांगीण नहीं हो पाया और वे आज भी गरीबी का जीवन काटने को अभिशप्त हैं।

सामाजिक रूप से जनजातियों का स्थान वर्ण व्यवस्था के निचले पायदान पर था, राजनैतिक रूप से कमजोर होते चले गए। उन्हें राजनैतिक तौर पर प्रबुद्ध करने के लिए तथा पृथक प्रतिनिधित्व के लिए डॉ. अम्बेडकर ने संघर्ष किया।

लगातार हिन्दुओं के साथ संस्कृति संपर्क ने समानतामूलक भारिया समाज में भी घृणित जाति व्यवस्था को जन्म दिया। इसी कारण भारिया जनजाति भारतीय समाज में अपनी स्थिति ब्राह्मण, क्षत्रीय तथा वैश्य वर्ण की जातियों से नीचे, किन्तु शूद्र वर्ण की जातियों से उच्च मानती है तथा जनजातीय समाज में वे अपने को गोण्ड जाति से निम्न तथा प्रधान व मवासी से ऊंचा मानते हैं। इसी के साथ हिन्दू देवताओं को भी अपना लिया। इसके कारण पौरोहित्य कर्मकाण्डों को पूरा करने तथा त्यौहारों, व्रतों का पालन करने के लिए छत की आवश्यकता होती है, जिसने उनकी गरीबी को बढ़ाया

स्वतंत्रता के पश्चात् शासन के द्वारा भारिया जनजाति के उत्थान के लिए कई योजनाए प्रारम्भ की गई थी, लेकिन इस वर्ग के लिये विकास के जो प्रयास किये जा रहे, उसका लाभ इस जाति का अभिजात्य वर्ग तो भरपूर उठा रहा है, परन्तु सामान्यजन तथा इन वर्गों में निम्न आर्थिक स्थिति रखने वाले लोग इन प्रयासों से अधिक लाभान्वित नहीं हो पा रहे हैं।

विकास के लिए किए जा रहे प्रयासों के साथ-साथ यह आवश्यक है कि इन जातियों में अपने शोषण एवं सामाजिक अन्याय का विरोधा करने का साहस उत्पन्न हो आवश्यकता है कि अब इन जनजातियों में स्वयं आत्मविश्वास उत्पन्न करें और अपने शोषण तथा सामाजिक अन्याय का विरोध करने का साहस उत्पन्न हो और उनमें अपने विकास की तीव्र इच्छा उत्पन्न हो। यह इच्छा उत्पन्न होने पर स्वयं वे सरकार की योजनाओं का लाभ लेने के लिए आगे आएगे।

विकास में दो कारकों - आन्तरिक कारक एवं बाह्य कारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। साथ ही इन दोनों कारकों में समन्वय आवश्यक है। पारस्परिक समन्वय के अभाव में एकाकी कारक द्वारा किया गया विकास स्थायी एवं वास्तविक नहीं होता।

बाहरी दशाओं - हवा, पानी, प्रकाश और उर्वरक की सहायता प्राप्त कर बीज तभी अंकुरित, पल्लवित और विकसित होता है, जबकि बीज में स्वयं प्रस्फुटन होने की आंतरिक शक्ति विद्यमान रहती है। इसलिए सामाजिक विकास के लिए एक ओर तो विकासात्मक बाहरी दशाए उपलब्धा होनी चाहिए, साथ ही जनजातीय सदस्यों में भी विकास हेतु अंत:प्रेरणा, आत्मविश्वास और निष्ठापूर्वक प्रयास करने की तत्परता का होना आवश्यक है।

आवश्यकता इस बात की है कि शासन या किसी अन्य एजेन्सी के द्वारा सहायता उन तक पहुंचाने के साथ-साथ उन्हें स्वयं आगे आकर इन योजनाओं से लाभ उठाने की पहल करना है। सदियों से जनजातीय समाज जिस परिवेश में रह रहा है, उस परिवेश में उनके आचार-विचार, रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा, आदतों, कार्य करने के तरीकों आदि का विशिष्ट स्वरूप विकसित हुआ है। अब चूँकि परिस्थितियांबदल गई हैं। इसलिये जनजातियों के सदस्यों को भी अपने जीवन के इन पक्षों में समयानुरूप परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीवास्तव, एस.के. - भारतीय सामाजिक समस्यायें, साहित्य भवन, आगरा 1998.
2. लवणिया, एम.एम. - भारत में सामाजिक समस्यायें, साहित्य भवन, आगरा 1986 .
4. हसनैन, नदीम - जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिशर्स, दिल्ली 2002,
5. खरे, कल्पेश - जनजातीय समाज, महावीर प्रकाशन, इन्दौर 2000,
6. सक्सेना, सुधीर - मध्यप्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी, मधयप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल 1999.
9. देवगण, के. - भारिया जाति का समाजशास्त्रीय अध्ययन, आदिम लोक कला परिषद प्रकाशन, भोपाल,
10. अमानउल्लाह, मोहम्मद - भारिया जनजाति का मानवशास्त्रीय

अध्ययन, आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल 2000,
11. श्रीवास्तव, ए.आर.एन. – जनजातीय भारत, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,
12. राज, सुन्दर – धर्मान्तरण – एक राष्ट्रीय बहस, होरीजन प्रकाशन, बंगलौर 1995,
13. विद्यार्थी, एल.पी. एव – द ट्रायबल कल्चर ऑफ इण्डिया कन्सेप्ट प्रकाशन, राय, बी.के. दिल्ली 1998,
14. गाँधी, एम.के. – हिन्दू धर्म – दि ग्लोरी एण्ड दि अब्युसेन्स ओरियण्ट प्रकाशन, दिल्ली 1986,
15. बारेह, हेमलेट – ट्रायबल अवेन्किंग, सी.आई.एस.आर., बैंगलोर 1998,
16. सागर, एस.एल. – द्रविड़ और द्रविड़ स्थान, सागर प्रकाशन, मैनपुरी 1995,

****

मण्डला जिले की बैगा जनजातीय के सामाजिक एवं शैक्षिक विकास में निरंतरता एवं परिवर्तन का अध्ययन

एकता मथनियाँ * डॉ. ए. एल. महोबिया **

शोध सारांश – शिक्षा व्यक्ति की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बैगा जनजातीय समुदाय को विकास की मुख्यधारा में सम्मिलित करने में शिक्षा एक शक्तिशाली हथियार हो सकता है। इस हेतु भारत में स्वतंत्रता के पश्चात से ही प्रयास किए जा रहे है। इसके बावजूद भी यदि अन्य समुदायों की तुलना में बैगा जनजातीय साक्षरता को देखते है, तो इस समुदाय में साक्षरता की बहुत ही धुंधली तस्वीर हमारे सामने आती है। शिक्षा के मौलिक अधिकार, सर्वशिक्षा अभियान और विभिन्न जनजातीय विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के बाद भी इन क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति में बहुत बदलाव दिखायी नहीं पड़ते है। अशिक्षा के कारण ही कई दशको से इस समुदाय का शोषण होता आया है। इस शोषण को समाप्त करने का सबसे सरल उपाय इस समुदाय के लोगों को शिक्षित कर उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करना है तथा विकास की प्रक्रिया में भागीदार बनाना है। यह शोध पत्र जनजातीय शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए शासन द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न विकास कार्यक्रमों की समालोचनात्मक विश्लेषण, म.प्र. के जनजातीय क्षेत्रों की शिक्षा की वास्तविक स्थिति की दशा एवं दिशा पर आधारित है एवं बैगा जनजाति के सामाजिक एवं शैक्षिक विकास में निरंतरता एवं परिवर्तन का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना – साक्षरता मानव विकास की एक ऐसी चाबी है, जो लोगों की आजीविका का साधनों तथा क्षमता कुशलता निर्माण के साथ उनकी सूचनाओं तथा संसाधनों की पहुँच बढाने में कुशल तरीके से परिवर्तन लाती है।

(मेडोक्स 2001) जो नयी प्रविधियों को सीखो व्यवसाय कुशलता को बढ़ाने के साथ–साथ उत्पादकता एवं आय को भी बढ़ाने में महत्वपूर्ण सुधार करती है, इसके साथ ही यह लोगों के सोचने–समझने की क्षमता में भी विस्तार करती है।

सुपारा (2010) कुशलता तथा क्षमता निर्माण के माध्यम द्वारा मानव अपना तथा अपने समाज का विकास करता है। इसी प्रकार विकासशील समाज के सतत विकास के लिए शिक्षा की अत्यधिक आवश्यकता होती है। शिक्षा विकास की वह प्रथम पाठशाला है। जिसके द्वारा वह विकासशील समाज का हिस्सा बनता है। साक्षरता जनजातियों के विकास में एक महत्वपूर्ण संकेतक भी है। शिक्षा एक ऐसा माध्यम भी है जो लोगों को साक्षर बनाने के साथ साथ उनको अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाता है।

वर्तमान परिदृश्य में विकास का एक महत्वपूर्ण प्रतिमान शिक्षित समाज का होना है। शिक्षित समाज ही सभ्य समाज की स्थापना कर सकता है जबकि बैगा जनजातीय समुदायों में शिक्षा की स्थिति अत्यंत दयनीय है जिसके कारण ये आज भी आधारभूत सुविधाओं से वंचित है।

2011 के अनुसार देश की कुल जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत जनजातीय समुदाय का है। म.प्र. देश का सर्वाधिक जनजातीय बहुल क्षेत्र है। राज्य में देश की कुल जनजातीय जनसंख्या का 14.7 प्रतिशत है तथा राज्य की कुल जनसंख्या का 21.1 प्रतिशत जनजातीय समुदाय का है। देश में करीब 425 अनुसूचित जनजातियाँ सूचीबद्ध है, जिसमें से 43 जनजातियाँ म.प्र. में निवास करती है। प्रदेश की इन 43 जनजातियो में से तीन–बैगा, भारिया एवं सहरिया को विशेष जनजाति घोषित किया गया है। जो आदिम जनजाति मानी जाती है। वर्ष 2011 के अनुसार म.प्र. में बैगाओं की जनसंख्या 4,14,526 है, भारिया 1,93,230 सहरिया 6,14,958 है। जनजातीय उपयोजना क्षेत्र के अंतर्गत एवं 33.6 प्रतिशत भू–भाग अनुसूचित क्षेत्र घोषित है।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध प्रपत्र हेतु प्राथमिक व द्वितीयक आंकड़ो का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक आकड़ो का संकलन हेतु साक्षात्कार अवलोकन प्रविधियों का प्रयोग किया गया है। द्वितीय आकड़े जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, बैगा विकास प्राधिकरण कार्यालय मण्डला, म.प्र. की अनुसूचित जनजाति जनसंख्या 2011 आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्था म.प्र. आदि का प्रयोग किया है।

अध्ययन क्षेत्र – मण्डला जिले का विस्तार $20^0 12'$ से $23^0 12'$ उत्तरी अंक्षाश तथा $80^0 18'$ से $81^0 51'$ पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। जिले का कुल क्षेत्रफल 8771 वर्ग कि.मी. है। संपूर्ण क्षेत्र की समुद्रतल से ऊँचाई 443 मी. से 887 मी. के मध्य है। मण्डला जिले की चार तहसील नैनपुर, मण्डला, बिछिया और निवास है, नौ विकासखण्ड है, जिसके अंतर्गत नैनपुर, मण्डला, मोहगांव, घुघरी, बिछिया, मवई, निवास, बीजाडांडी, नारायणगंज आता है।

मण्डला जिले में मुख्य रूप से गोंड, परधार, बैगा, और कोल जनजाति निवास करती है। वर्ष 2011 के अनुसार मण्डला जिले की कुल जनसंख्या 1,053,522 है,जिसमें 5,25,495 पुरूष एवं 5,28,027 महिलाएँ है। प्रति हजार पुरूषों पर महिला की संख्या 1008 है। मण्डला जिले की कुल जनजातीय जनसंख्या 6,10,528 है, वही मण्डला जिले में निवासरत बैगाओं की जनसंख्या 43,331 है, जिसमें पुरूषो की संख्या 21,347 है एवं महिला की जनसंख्या 21,984 है।

* शोधार्थी (भूगोल) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

मण्डला का तहसील नक्शा (देखे आगे पृष्ठ पर)

अध्ययन का उद्देश्य –

1. बैगा समाज में पूर्व से प्रचलित परम्परा रूढ़िवादिता एवं मान्यताओं में वर्तमान में दृष्टिगोचर होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करना।
2. बैगाओं की सामाजिक, आर्थिक विकास, में शिक्षा की भूमिका को परिलक्षित करना।
3. बैगा समाज में सामाजिक संस्कृति और शिक्षा को प्रभावित करने वाले कारणों का पता लगाना।
4. बैगा समाज में पूर्व में तथा वर्तमान में परिलक्षित परिवर्तनों में विभेद करते हुए अध्ययन पर सुझाव प्रस्तुत करना।
5. बैगाओं की मूलभूत आवश्यकताओं तथा समस्याओं से परिचित होना सामाजिक शैक्षणिक परिवर्तनों की गति अनुसार भविष्य में समाज की स्थिति का अध्ययन करना।

मंडला जिले की जनसंख्या वृद्धि का विकासखण्डवार विस्तृत विवरण निम्नानुसार है (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

बैगा जनजाति की शैक्षणिक स्थिति का स्तर (2001) (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

बैगा जनजातीय के सामाजिक, शैक्षणिक विकास में निरतंरता एवं परिवर्तन – मण्डला जिले की बैगा जनजाति में सामाजिक परिवर्तन हो रहा है। यद्यपि गति धीमी है। अब बैगा लोगा धोती, नवयुवक, फुलपेंट, शर्ट पहनने लगे है। इनकी महिलाए साड़ी पहनने लगी है। कुछ शिक्षित बैगा, क्षेत्र से बाहर जाकर नौकरी करने लगे है। उनमें सामाजिक परिवर्तन आ रहा है। जिसे बैगा क्षेत्रो में देखा जा सकता है, जिससे उनकी मान्यताएं विश्वासों में परिवर्तन आ रहा है।

शराब अंध विश्वास इनकी सामाजिक कुरीतियाँ है। चरित्र के मामले में बैगा लोग ऊँचे है। ये सत्यवादी, शांत, सहिष्णु एवं सीधे-सीधे स्वभाव के होते है। अंध विश्वासों में इनका विश्वास बहुत अधिक होता है। कुछ बीमारियों में जड़ी बुटियों द्वारा उपचार करते है। साक्षरता का प्रतिशत बहुत कम था पर वर्तमान में इनकी साक्षरता के प्रतिशत में वृद्धि हो रही है। अब हर बैगा ग्राम में वृद्धि हो रही है। अब हर बैगा ग्राम में शाला खुलने से शिक्षा का प्रसार हो रहा है। लेकिन अभी भी 14-18 वर्ष के बालको का प्रतिशत कम ही है।

मकान/आवास व्यवस्था में दूर दराज इलाको में परिवर्तन नहीं दिखाई दिया गया, लेकिन बैगा कस्बो अथवा सड़क किनारे बस गए है। उनके मकान में निरतंरता के साथ परिवर्तन परिलक्षित होता है। अर्द्ध कच्चे दीन कबेल के मकान बनाकर रहने लगे है।

वेषभूषा में बुजुर्ग लोगों के पहनावे में विशेष परिवर्तन नहीं आया है। लेकिन युवा पीढ़ी में वेषभूषा एवं पहनावे में परिवर्तन में जरूर आया है। युवा पीढ़ी बालक-बालिकाएँ आधुनिक परिवेश के अनुसार वस्त्र पहनने लगे है। खान-पान के मामले में जहाँ दूर-दराज जंगलो में निवासरत बैगा अभी भी अपने पारम्परिक खान-पान को अपनाए हुए है। वहीं युवा पीढ़ी के लोग अन्य समाज की तरह खान-पान करने लगे है। चोगी की जगह बीड़ी सिगरेट पीने लगे है। लेकिन मदिरापान की स्थिति यथावत है।

बैगा जनजाति की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से वनोपज एवं कृषि पर आधारित है। अर्थव्यवस्था में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है। हाँ लेकिन कृषि के तौर तरीकों में जरूर परिवर्तन आया है, साथ ही कुछ पढ़े लिखे बैगा शासकीय सेवाओं में कार्यरत भी है।

बैगा समाज में भी सामाजिक परिवर्तन हो रहा है, गरीबी एवं अशिक्षा के कारण शहरो एवं कस्बो की ओर पलायन होकर वही बस गई है, जिसके कारण उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति में भी परितर्वन हो रहा है।

निष्कर्ष – वर्तमान समय में बैगा जनजाति शिक्षा में प्रगति तो हुई है। साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। किंतु अभी इसमें और सुधार की आवश्यकता है। यदि पूर्वोत्तर राज्यो के उदाहरणो को छोड़ दे तो जनजातीय शिक्षा की एक निराशजनक तस्वीर ही उभरती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 शिक्षा गारण्टी अधिनियम अनुसूचित क्षेत्रों में आदिवासी विभाग द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं ने मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा में आदिवासी विभाग द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं ने म.प्र. के आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा को लेकर सकारात्मक योगदान दिया है, लेकिन फिर भी इस दिशा में और प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। जनजातीय शिक्षा में व्यापक रूप से सुधार के लिए हमारी शिक्षा प्रणाली को जनजातीय जीवन के अनुकूल बनाना पड़ेगा तथा जनजातीय सांस्कृतिक तत्वो को शिक्षा व्यवस्था में स्थान भी देना पड़ेगा तभी आदिवासी शिक्षा प्रसार को लेकर हमारे प्रयासों में सफलता मिलेगी तथा शिक्षा का मूल उद्देश्य मात्र साक्षर करना न होकर कौशल व्यवसायपरक एवं विकासपरक बनाना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राजू एस. सुपारा (2010) डेवलपमेंट थ्रू लिटरेसी - अ स्टडी फिशरिंग कम्यूनिटी इन आन्ध्रप्रदेश जर्नल ऑफ रूरल डेवलपमेंट एन. आई. आर. डी. अक्टूबर-दिसम्बर, वोल्यूम 29, नं 4
2. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका प्रकाषन वर्ष 2011, जिला योजना एवं सांख्यिकीय कार्यालय मण्डला (म.प्र.)
3. चौरसिया डॉ. विजय 'प्रकृति पुत्र बैगा' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल (2009)
4. मध्यप्रदेश की अनुसूचित जनजाति जनसंख्या 2011 आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्था म.प्र. शासन 35, श्यामला हिल्स भोपाल-462002


Tehsil Map of Mandla
MANDLA
TEHSIL MAP
Jabalpur
Niwas
Narayanganj
Dindori
Ghughari
Mandla
Seoni
Nainpur
Bichhiya
Chhattisgarh
Balaghat
Legend
State Boundary
District Boundary
Tehsil Boundary
Copyright © 2015 www.mapsofindia.com
(Last Updated on 8th Sep 2015)

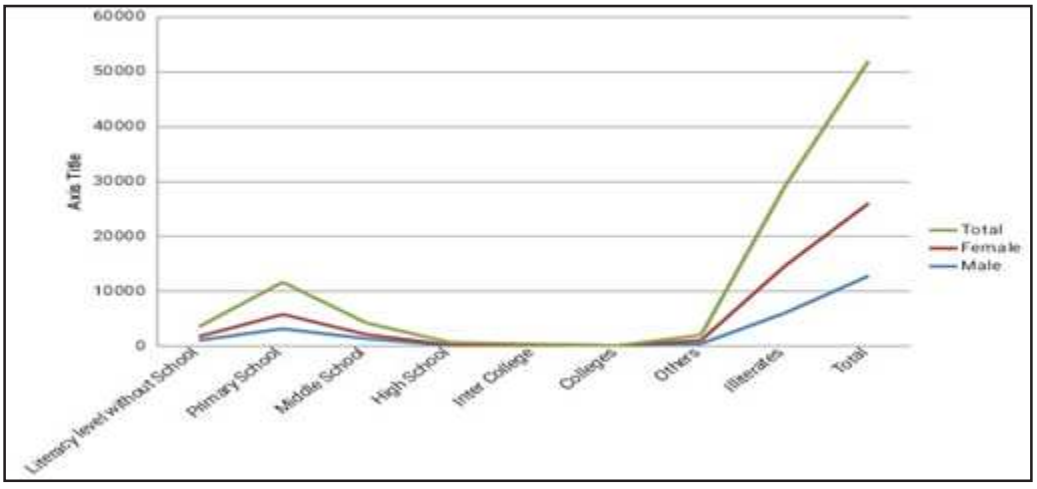
मंडला जिले की जनसंख्या वृद्धि का विकासखण्डवार विस्तृत विवरण निम्नानुसार है

जिला	विकासखण्ड	कुल जनसंख्या वर्ष 1992-93 तथा 2004-05 के सर्वेक्षण के समान ग्रामों के आधार पर		दशकीय जनसंख्या वृद्धि	जनसंख्याा वृद्धि दर प्रतिशत
		1992-93	2004-05		
मंडला	मंडला	3095	4353	1258	40.65
	मोहगांव	4060	4822	762	18.77
	नैनपुर	228	433	205	89.91
	बिछिया	4816	5473	657	13.64
	घुघरी	3706	4713	1007	27.17
	मवई	2558	2802	244	9.54
	निवास	324	1744	1420	438.27
	बीजाडांडी	850	2230	1380	162.35
	09	22750	29808	7058	31.02

स्रोत - विशेष पिछड़ी जनजाति सर्वेक्षण प्रतिवेदन:बैगा वर्ष 2004-05

बैगा जनजाति की शैक्षणिक स्थिति का स्तर (2001)

शैक्षणिक स्तर	पुरूष	प्रतिशत	स्त्री	प्रतिशत	योग	प्रतिशत
बिना किसी स्कूल स्तर के साक्षर	1073	8.41	674	5.10	1747	6.72
प्राथमिक शाला	3182	25.72	2581	19.53	5863	22.57
माध्यमिक शाला	1363	10.68	748	5.66	2111	8.13
हाईस्कूल	104	3.14	92	0.70	493	1.90
हायर सेकेण्डरी	124	0.97	78	0.14	142	0.55
महाविद्यालय	41	0.32	10	0.08	51	0.20
तकनीकि शिक्षा	1	0.01	0	0.00	1	0.01
अन्य	476	3.73	544	4.12	1020	3.93
निरक्षर	6001	47.02	8551	64.69	14552	56.01
योग	12762			13218		25980



****

भूमि उपयोग परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव (जबलपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

श्रुति तिवारी * डॉ. सुमनलता पुरोहित **

शोध सारांश – भूमि मानव का सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। जो कृषि सहित सभी विकास कार्यों के लिए मूलभूत आधार प्रदान करता है। भूमि पर प्रभाव विभिन्न प्रकार के क्रिया–कलाप करता है, जिसे भूमि उपयोग कहा जाता है। भूमि उपयोग विश्लेषण में कृषि भूमि का विशेष महत्व है। प्रारंभिक काल से ही मानव अपने विविध क्रियाओं के अनुरूप भूमि में परिवर्तन करता रहा है। जिसे भूमि उपयोग परिवर्तन कहा जाता है। भूमि उपयोग परिवर्तन न केवल कृषि के क्षेत्र में अपितु नगरीय विकास एवं प्रादेशिक नियोजन में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

प्रस्तावना – भूमि का आर्थिक दृष्टि से विशेष महत्व है। भूमि का उपयोग खाद्य, उत्पादन, आवास, परिवहन जैसे कार्यों के लिए आवश्यक है भूमि किसी राष्ट्र को आर्थिक विकास तथा सामाजिक जीवन आदि को प्रभावित करता है। कृषि की दृष्टि से भूमि का उत्पादन की जननी कहा जाता है भूमि की उत्पादन क्षमता का निर्धारण किसी क्षेत्र में कृषित तथा अकृषित सिंचित बहु फसलीय क्षेत्र तथा प्रति हैक्टेयर उपज आदि कारक माने जाते है।

'भूमि उपयोग परिवर्तन प्राकृतिक या वनस्पति आच्छादन के संदर्भ में नहीं बल्कि मानवीय क्रिया सुधारों के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।'

– वुड (1972)

'भूमि उपयोग परिवर्तन प्राकृतिक क्रियाओं के संयोग का प्रतिफल माना जाता है।'

– वैनजैटी (1974)

'आर्थिक दृष्टिकोण भूमि उपयोग का संबंध उसकी स्थिति, अवस्था, प्रतिस्पर्धा, परिवर्तन तथा सामंजस्य से है, जिसका प्रार्दुभाव भूमि संसाधन उपयोग से है।'

– वारलोन (1954)

अतएव वर्तमान समय में भूमि उपयोग वस्तुत: भूमि संसाधन उपयोग है। जो मानव के आविर्भाव की पूर्व अवस्था से क्रमश: विकसित होकर कृषि की ओर अग्रसर हो रहा है। क्षेत्रीय आधार पर भूमि उपयोग प्राकृतिक अवस्था से वर्तमान अवस्था तक विभिन्न परिस्थितियों में परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रपत्र में जबलपुर जिले में भूमि उपयोग परिर्वतन द्वारा कृषि भूमि में होने वाले बदलाव को सविस्तार प्रस्तुत किया गया है।

उद्देश्य –

1. भूमि उपयोग परिवर्तन का कृषि भूमि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
2. भूमि उपयोग परिवर्तन द्वारा कृषि भूमि में होने वाली कमी का आंकलन करना।
3. कृषि भूमि में परिवर्तन होने से फसलों के प्रति हैक्टेयर उत्पादन में होने वाली कमी का आंकलन करना।

अध्ययन क्षेत्र – भौगोलिक दृष्टिकोण से जबलपुर मध्यप्रदेश के मध्य में स्थित है। अपितु इसे सम्पूर्ण भारत के केन्द्र बिन्दु माना जाता है। भूगर्भ शास्त्रियों के अनुसार भारत का यह केन्द्र सिहोरा तहसील में स्थित है। जबलपुर जिला $22^0$49 उत्तरी अंक्षाश से 24 ^{0}8' उत्तरी अंक्षाश तथा $78^0$21' पूर्वी देशांतर से $80^0$89' पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। जिसकी आकृति लगभग चतुर्थ कोणीय है। कर्क रेखा जिले को लगभग दो समान भागों में विभाजित करती है। जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल 519.7 वर्ग किलो मीटर है। जिले की दक्षिण पश्चिम से उत्तर पूर्व की अधिकतम लंबाई 120 किलोमीटर तथा पश्चिम से पूर्व की अधिकतम चौड़ाई 72 किलोमीटर है।

(नक्शा देखे आगे पृष्ठ पर)

शोध प्रविधि तथा आंकड़ों का संग्रहण – प्रस्तुत शोध प्रपत्र हेतु प्राथमिक तथा द्वितीयक आंकड़ों का संग्रहण किया गया। प्राथमिक आंकड़ों के संकलन हेतु साक्षात्कार तथा अवलोकन प्रविधियों का उपयोग किया गया। द्वितीयक आंकड़ों–शासकीय कार्यालय के प्रतिवेदन जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, भू–अभिलेख कार्यालय के प्रतिवेदन आदि का प्रयोग किया गया।

कृषि योग्य भूमि – कृषि योग्य भूमि से तात्पर्य जो कृषि के लिए उपयोगी तो है, किंतु कुछ कारणवश वर्तमान समय में उस भूमि में कृषि नहीं की जा रही है। यह भूमि दो भागों में विभक्त है। (1) कृषि योग्य वह भूमि जिसमें बिना किसी सुधार किए भूमि पर फसलोत्पादन क्रिया प्रारंभ की जाती है। इस प्रकार भूमि सामान्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक घर के पिछड़े हिस्से में बेकार पड़ी होती है तथा आवश्यकता न होने पर किसान इस भूमि पर न तो फसलोत्पादन करता है और न ही कृषि क्रिया करता है। बल्कि इस भूमि का उपयोग पशुपालन के लिए किया जाता है। कृषि योग्य भूमि का दूसरा प्रकार वह भूमि है। जिसमें आंशिक सुधार करके जैसे सिंचाई की उपलब्धता तथा उन्नत खाद का प्रयोग कर फसलोत्पादन तथा कृषि क्रिया करता है।

सारणी क्रमांक–1.1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

(नक्शा देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 1.1 जबलपुर जिले में फसल योग्य कृषि भूमि उपयोग का विवरण दिया गया है। वर्ष 1971 में कृषि भूमि का क्षेत्रफल जबलपुर जिले में 208198 हेक्टेयर था जिसका अधिकतम उपयोग जबलपुर तहसील

*शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** महाकौशल कॉलेज, जबलपुर (म.प्र.) भारत

में 44.9 प्रतिशत किया गया। न्यूतनम उपयोग 14.6 प्रतिशत विजयराघवगढ़ तहसील में किया गया। वर्ष 1981 में समस्त जिले में कृषि भूमि उपयोग 203330 हेक्टेयर उपयोग किया गया सर्वाधिक उपयोग कटनी तहसील में 34.6 प्रतिशत किया गया। न्यूनतम भूमि उपयोग 7.2 प्रतिशत कुण्डम तहसील के अंतर्गत किया गया। प्रस्तुत तालिका का आधार पर 1991 में कृषि भूमि उपयोग 168702 हेक्टेयर किया गया। समस्त तहसीलों में से अधिकतम भूमि कटनी तहसील में 34.2 प्रतिशत किया गया। न्यूनतम उपयोग कुण्डम तहसील के अंतर्गत 6.7 प्रतिशत लाया गया।

वर्ष 2001 के अनुसार कृषि भूमि उपयोग 90812 हेक्टेयर किया गया सर्वाधिक भूमि का उपयोग पाटन तहसील में किया गया। न्यूनतम भूमि का उपयोग कुण्डम तहसील में 8.8 प्रतिशत किया गया। वर्ष 2011 में समस्त जिले में कृषि भूमि उपयोग 105109 हेक्टेयर किया गयां सर्वाधिक भूमि का उपयोग शाहपुरा तहसील 31.3 प्रतिशत किया गया तथा न्यूनतम भूमि का उपयोग पाटन तहसील में 7.0 किया गया।

समस्याएँ –

1. कृषि का कम लाभदायक होना।
2. कृषि भूमि का संकुचित होना।
3. कृषि भूमि की उत्पादन क्षमता कम हो रही है।
4. भूमि उपयोग परिवर्तन द्वारा भूमि का दुरूपयोग हो रहा है।

सुझाव –

1. कृषि को लाभदायक बनाने के लिए सरकार की ओर चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाना चाहिए तथा कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग कर कृषि के स्तर में सुधार किया जा सकता है।
2. कृषि भूमि के मूल्यांकन के पश्चात् बंजर या उबड़-खाबड़ भूमि में सिचाई आदि सुविधाएं उपलब्ध कराकर कृषि भूमि का विस्तार किया जा सकता है।
3. कृषि भूमि की उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिए मृदा की उत्पादकता शक्ति में वृद्धि करना उन्नत बीज तथा आधुनिक पद्धति के द्वारा कृषि करना।
4. भूमि नियोजन द्वारा भूमि के दुरूपयोग को रोका जा सकता है। भूमि उपयोग नियोजन द्वारा अप्रयुक्त भूमि को उपयोग में लाने की योजना बनाना तथा कृषकों में जागरूकता लायी जा सकती है, जिससे उनके आर्थिक स्तर को ऊंचा उठाया जा सकता है।

निष्कर्ष – इस शोध प्रपत्र से पता चलता है कि भूमि उपयोग परिवर्तन कृषि भूमि पर प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है। जिससे फसली की प्रति हेक्टेयर उपज दर भी प्रभावित होती है तथा फसलों से उत्पादन में वृद्धि या कमी होती है। वर्तमान समय भूमि उपयोग में तीव्रता से परिवर्तन देखा जा सकता है। कृषि भूमि का स्वरूप भी आवासीय या बंजर भूमि के रूप में परिवर्तित हो गया है। जिससे फसलों की उत्पादकता में भी कमी आयी है तथा फसलों का उत्पादन भी कम हो गया है अत: कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाकर बंजर भूमि में कृषि की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गर्ग, एस.पी (1968) लैण्ड सूटीलइजेशन इन सहारनपुर डिस्ट्रिक्ट, प्रकाशित शोध प्रबंध, आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
2. जिला सांख्यिकीय विभाग (2011), सांख्यिकीय पुस्तिका एवं भू अभिलेख प्रकाशित रिपोर्ट कलेक्टर कार्यालय (जबलपुर जिला)
3. मजूमदार, भारती (2008) लैण्डफार्म एण्ड लैण्ड यूज ऑफ जालधर बेसिक।
4. सिंह, जे.पी. (1976) पैटर्न ऑफ लैण्ड यूज अरवन एशिया, अ केश स्टडी ऑफ, इंडियन ज्याग्राफिकल स्टडीज बुलेटिन।
5. टाउन एण्ड कंट्री प्लानिंग सिटी एंड डेवलपमेंट इन इंडिया 1971-2011।
6. यादव, जे.पी. एस. (1965) कॉप लैण्ड सूज पैटर्न इन राजस्थान कॉनफ्रेस ऑफ भीलवाडा।

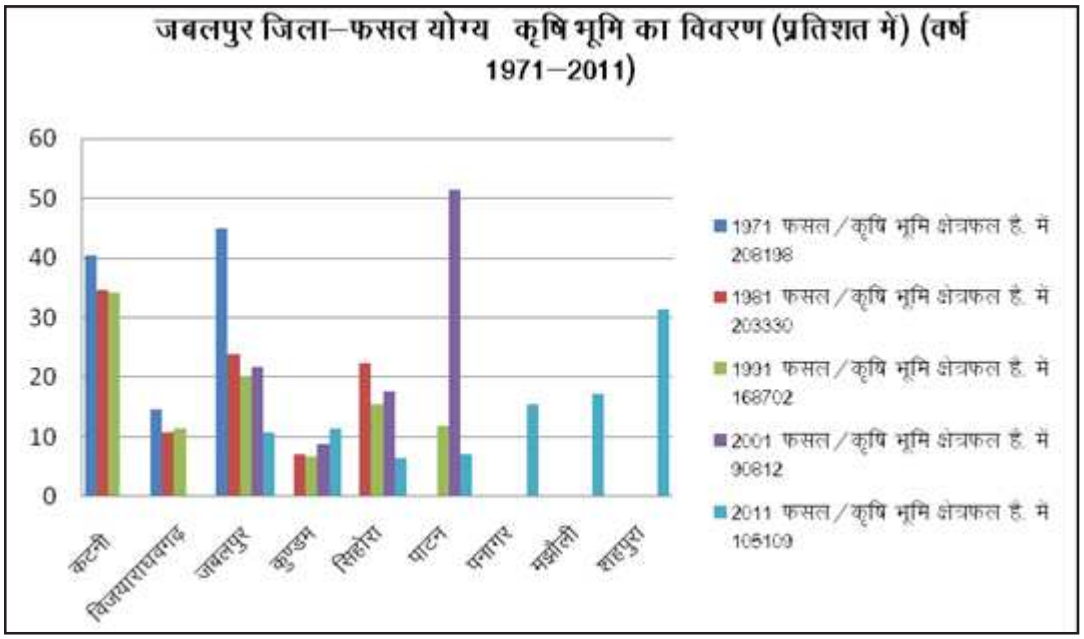


सारणी क्रमांक –1.1

जबलपुर जिला–फसल योग कृषि भूमि का विवरण (प्रतिशत में) (वर्ष 1971–2011)

तहसील	1971 फसल/कृषि भूमि क्षेत्रफल है. में 208198	1981 फसल/कृषि भूमि क्षेत्रफल है. में 203330	1991 फसल/कृषि भूमि क्षेत्रफल है. में 168702	2001 फसल/कृषि भूमि क्षेत्रफल है. में 90812	2011 फसल/कृषि भूमि क्षेत्रफल है. में 105109
कटनी	40.4	34.6	34.2	0.0	00
विजयाराघवगढ़	14.6	10.7	11.4	00	00
जबलपुर	44.9	23.9	20.3	21.8	10.8
कुण्डम	00	7.2	6.7	8.8	11.4
सिहोरा	00	22.3	15.4	17.7	6.4
पाटन	00	00	11.8	51.5	7.0
पनागर	00	00	00	00	15.5
मझौली	00	00	00	00	17.1
शहपुरा	00	00	00	00	31.3
कुल योग	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**

स्त्रोत– भू अभिलेख विभाग एवं जिला सांख्यिकीय विभाग, कलेक्टर कार्यालय (जबलपुर)



****

कटनी जिले में पर्यटन की संभावनाओं का एक अध्ययन

डॉ. सुकचैन सिंह धुर्वे *

शोध सारांश – मनुष्य की सबसे प्राचीन व मौलिक प्रवृत्ति पर्यटन है। पर्यटन आज मानव के समग्र विकास और सुख शान्ति के लिए जीवन का अहम् अंग हो चुका है। आज के आर्थिक मानव के शारीरिक–मानसिक स्वास्थ्य के लिए पर्यटन अच्छा विकल्प है। प्राचीन ऋषियों ने कहा है– 'बिना पर्यटन मानव अंधकार प्रेमी होकर रह जाएगा।' ज्ञानार्जन के लिए भी पर्यटन के सन्दर्भ में संत आगस्टिन ने कहा है– 'बिना विश्व दर्शन ज्ञान अधूरा है।' कटनी जिला प्राकृतिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक व धार्मिक स्थलों की दृष्टि से सम्पन्न जिला है। कटनी विभिन्न महत्वपूर्ण सड़क मार्गों के साथ भारत के बड़े रेल जंक्शन्स में से एक है। यहाँ से चारों दिशाओं में आवागमन की सुविधा है। जिले के प्राकृतिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक व धार्मिक स्थलों को संरक्षित, मरम्मत व उन्नत कर पर्यटन स्थलों के रूप में विकसित करना आवश्यक है, जिससे जिले की अधोसंरचनात्मक विकास के साथ लोगों के लिए रोजगार के अवसरों में वृद्धि, जिले की धरोहरों की सुरक्षा और जिले में गाँवों से पलायन कम हो सके।

शब्द कुंजी – सैरगाह, अवसंरचना, अनुश्रुति, भग्नावशेष, शिलोत्कीर्ण, गोलाश्म, शिलालेख, विवर, शिलाफलक, पाषाण कालीन, शैलचित्र, नवप्रस्फुटित।

प्रस्तावना – आदिकाल से ही मानव अपने अच्छे स्वास्थ्य की कामना करते आ रहा है। प्राचीन काल में शुद्ध पर्यावरण के साथ जीवन शैली सरल थी। मानवजन्य रोगों की न्यूनता थी। आज की जीवन शैली, बेरोजगारी, शोरगुल, भीड़ और भाग–दौड़ भरी जिन्दगी में मानव अवसाद, तनाव, चिड़चिड़ापन, निराशा, असंतोष, आत्मग्लानि, क्रोध, ईर्ष्या, प्रमाद, अनिद्रा, सनक आदि मनोरोगों से ग्रसित होते जा रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार– 'दुनिया के हर चौथे इन्सान को कभी न कभी मानसिक रोग होता है और इस रोग की सबसे बड़ी वजह है– निराशा।' मानसिक तनाव या रोगों से मधुमेह, उच्च व न्यून रक्तदाब, पेप्टिक अल्सर, सिरदर्द, हिस्टीरिया, अपच, मस्तिष्क रक्तस्राव, थकान, जोड़ों में दर्द, हृदयाघात, यौन समस्याएँ आदि रोगों की आशंका रहती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार– 'वर्ष 2020 तक भारत की 20 फीसदी जनसंख्या किसी न किसी तरह के मानसिक रोगों से पीड़ित होगी।' जबकि देश में 3,500 मनोरोग चिकित्सक हैं।

उपर्युक्त इन परिस्थितियों में मानसिक रोगों के निवारण व रोकथाम हेतु मनोरोग चिकित्सकों द्वारा परामर्श व उपचार के साथ पर्यटन दूसरा महत्वपूर्ण विकल्प हो सकता है। पर्यावरण पर्यटन को अब सब रोगों की औषधि के रूप में देखा जा रहा है। पर्यटन से आनंद–मनोरंजन की प्राप्ति, जिज्ञासा की पूर्ति व ज्ञान की समृद्धि होती है। प्राकृतिक पर्यटन स्थल शांति, स्थिरता, संयम और नैसर्गिकता के प्रतीक होते हैं। कहा भी गया है– 'प्रकृति सबसे बड़ा डॉक्टर है।' ऐतिहासिक पर्यटन स्थल हमारी प्राचीन गौरवमयी कला, संस्कृति व सभ्यताओं के पालने होते हैं, तो धार्मिक पर्यटन स्थल अलौकिक आत्मिक–मानसिक शांति तथा सद्भावना के पावन स्थल होते हैं। जिले में स्थित ऐसे ही महत्वपूर्ण धरोहरों को पर्यावरणीय एवं पुरातत्वीय मानकों के तहत सैरगाहों के रूप में विकसित करने की आवश्यकता है।

अध्ययन क्षेत्र– शोध पत्र हेतु मध्यप्रदेश राज्य के पूर्वी भाग में स्थित जिला कटनी का चयन किया गया है। कुल 4,950 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल में फैले इस जिले की भौगोलिक स्थिति 23 अंश 8 मिनट उत्तर से 24 अंश 25 मिनट उत्तरी अक्षांश तथा 79 अंश 57 मिनट पूर्व से 80 अंश 59 मिनट पूर्वी देशांतर के मध्य है। कर्क रेखा जिले के दक्षिणी भाग से होकर गुजरती है। इसके उत्तर में पन्ना व सतना, दक्षिण में जबलपुर, पूर्व में उमरिया तथा पश्चिम में दमोह जिले हैं। समुद्र तल से जिले की औसत ऊँचाई 1,294 मीटर है।

संकल्पनाए –

1. कटनी जिला प्राकृतिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक व धार्मिक स्थलों से समृद्ध है।
2. जिले के इन धरोहरों के उचित मरम्मत, सुरक्षा व संरक्षण की अनिवार्य आवश्यकता है।
3. इन धरोहरों को पर्यटन स्थलों के रूप में विकसित किया जा सकता है।
4. पर्यटन से यहाँ के स्थानीय लोगों को रोजगार के अवसर मिल सकते हैं।
5. जिले की बुनियादी अवसंरचना का विकास होगा।

अध्ययन विधि –

1. क्षेत्र सर्वेक्षण
2. अवलोकन
3. वार्तालाप
4. संदर्भ साहित्य अध्ययन
5. पत्रिकाओं व समाचार पत्रों का अध्ययन।

जिले के प्रमुख महत्वपूर्ण स्थल–

1. देश का भौगोलिक केन्द्र बिन्दु – कटनी जिला मुख्यालय से 40 कि.मी. दूर दक्षिण में ढीमरखेड़ा तहसील मुख्यालय व उमरिया पान के बीच जो कि 'विन्ध्याचल की मनोरम पहाड़ियों के बीच स्थित करौंदी गाँव में देश का भौगोलिक केन्द्र बिन्दु स्थित है।' सन् 1987 में यहाँ पर एक स्मारक का निर्माण कराया गया है। इस स्थल पर 80 अंश 30 मिनट पूर्वी देशान्तर तथा

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, बरही, जिला – कटनी (म.प्र.) भारत

23 अंश 30 मिनट उत्तरी अक्षांश रेखा (कर्क रेखा) एक दूसरे को प्रतिच्छेद करती हैं। यहाँ पर महर्षि महेश योगी विश्वविद्यालय का केन्द्र संचालित है।

2. विजयराघवगढ़ का किला – कटनी से 33 कि.मी. दूर पूर्व में जिले के पुरातात्वीय व ऐतिहासिक अवशेषों में से विजयराघवगढ़ में प्रयागदास का पुराना किला व सुन्दर मन्दिर जिसका निर्माण लगभग 2 लाख रुपयों की लागत से बनवाया गया था, विशेष रूप से उल्लेखनीय है। किले के दक्षिणी सीमा से झपावन नदी प्रवाहित होती है, जिसके दक्षिण में 1 कि.मी. दूर माँ शारदा का प्राचीन मन्दिर है। भारतीय प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में राजा प्रयागदास ठाकुर और राजकुमार सरजू प्रसाद का बलिदान अविस्मरणीय है।

3. बिलहरी – कटनी से द.प. में लगभग 14 कि.मी. दूर स्थित ग्राम बिलहरी ऐतिहासिक दर्शनीय स्थल है। अनुश्रुतियों के अनुसार कुछ शताब्दियों पूर्व यह ग्राम पुष्पावती नगरी या पुहस्वती कहलाता था। यहाँ पुराने भग्नावशेष, मूर्तियाँ तथा उत्कीर्ण पत्थर इस ग्राम के प्राचीन गौरव व विस्तार को प्रमाणित करते हैं। यहाँ स्थित 84 मन्दिर कलचुरी कालीन उत्कृष्ट मूर्ति शिल्पकला के प्रमाण हैं। भग्नावशेषों में ब्रम्हा, शिव और सात घोड़े सहित सूर्य की त्रिमूर्ति उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त बड़ा तालाब, लक्ष्मण सागर, छोटा तालाब, धावना ताल, विष्णु वाराह मन्दिर और काम कांदला का महल प्रसिद्ध हैं, प्राचीन काल के हैं।तपसी मठ, विष्णु वाराह व लड़ाकी की टीला संरक्षित स्मारक हैं। ये सभी 11 वीं सदी के धरोहर हैं। स्थानीय जन इसे राजा कर्ण की नगरी भी कहते हैं। यहाँ जैन धर्मावलम्बियों द्वारा विशाल मन्दिर व द्वार तथा उद्यान का निर्माण कराया गया है।

4. रूपनाथ– यह स्थल जिले के बहोरीबन्द विकासखण्ड मुख्यालय से 4.8 कि. मी. दक्षिण में कैमूर पहाड़ियों की गोद में स्थित है। ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में सम्राट अशोक के शिलोत्कीर्ण धर्मदिशों में से एक यहाँ प्राप्त हुआ है। जिस गोलाश्म पर यह लेख उत्कीर्ण है, वह गहरा लाल रंग का है, जलाशय के पश्चिमी सीमान्त पर स्थित है। यह शिलालेख 4.5 फीट लम्बा व 1 फुट चौड़ा है तथा उसमें 6 पंक्तियाँ हैं, जिनके विषय में विश्वास किया जाता हैकि ये ईसा पूर्व 232 में उत्कीर्ण की गयी थी। यहाँ शिव के विख्यात स्थानीय लिंग का नाम रूपनाथ है। चट्टान के विवर में लिंग स्थापित है।यहाँ भण्डार चुआ नाला कैमूर पर्वत श्रृंखलाओं के मुखभाग पर गिरता है। यह अनवरत तीन जल प्रपातों के रूप में हैं जिनमें से प्रत्येक के नीचे एक–एक कुण्ड बन गये हैं। यहाँ जल एक शिलाफलक से दूसरे शिलाफलक पर उछलता हुआ मोहक क्रमिक प्रपातों के रूप में गिरता है। ये कुण्ड राम, लक्ष्मण व सीता कुण्ड के नाम से प्रसिद्ध हैं। तिल संक्रांति में यहाँ मेला लगता है।

5. झिंझरी – कटनी जबलपुर सड़क मार्ग में कटनी कलेक्टर कार्यालय के समीप झिंझरी की पहाड़ियों में पाषाण कालीन शैलचित्रों के कुदरती खजाने हैं। यहाँ पहाड़ियों के 14 वर्ग कि.मी. क्षेत्र को शैलवन नाम से संरक्षित किया गया है। यहाँ छप्परनुमा शैलों में आदिमानवों द्वारा मानव, वन्य जीवों व अन्य के चित्र उकेरे गए हैं। शैलचित्रों के प्रतिरूप समीपस्थ वन विभाग के कार्यालय में देखे जा सकते हैं।

6. **कारीतलाई** – विजयराघवगढ़ तहसील मुख्यालय से लगभग 15 कि.मी. पूर्व में तथा कटनी से 48 कि.मी. दूर विजयराघवगढ़ बढेरा मार्ग पर ग्राम कारीतलाई स्थित है। यहाँ विष्णु के अवतार वाराह की एक सुन्दर नक्काशीदार लगभग 7 फीट ऊँची प्रतिमा लाल बलुआ पत्थर की है। इसके अलावा यहाँ कच्छप और मत्स्य की दो बड़ी प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। यहाँ से प्राप्त महत्वपूर्ण शिलालेख को नागपुर के संग्रहालय में रखा गया है। अन्य प्राप्त मूर्तियों व भग्नावशेषों को यहीं निर्मित संग्रहालय में रखा गया है। वाराह प्रतिमा वाले टीले में खण्डित मूर्तियाँ, स्तम्भ, छत्रक आदि एकत्र कर रखे गये हैं, जो प्राचीन भारतीय उत्कृष्ट शिल्पकला के प्रमाण हैं। इसके सम्मुख सीढ़ीदार एक आयताकार कुण्ड बना है। यह कारीतलाई या कर्णपुरा गाँव कलचुरी कालीन प्रतिमाओं का खजाना है।

7. तिगमा– यह ऐतिहासिक स्थल बहोरीबन्द के निकट कटनी – बहोरीबन्द वाया बिलहरी मार्ग पर स्थित है। यहाँ माँ शारदा और माँ कंकाली की सुन्दर प्राचीन प्रतिमाओं वाले दो मन्दिर हैं। इनके अलावा यहाँ मन्दिरों के छत्र, अधूरे निर्मित स्तम्भ, शिवलिंग एवं विभिन्न आकृतियों के भग्नावशेष एकत्र कर संरक्षित किया गया है। स्थानीय जनों के अनुसार मैहर की माँ शारदा का मूल स्थान यही तिगमा स्थित माँ शारदा मन्दिर है। यहाँ के इन मन्दिरों की दीवारों में भगवान विष्णु के विविध अवतारों को उत्कीर्ण किया गया है। नवरात्रि पर्व पर यहाँ मेला लगता है। **नवशा (देखे आगे पृष्ठ पर)**

8. केन का उद्गम– जिले के रीठी तहसील मुख्यालय से महज 2 कि.मी. दूर पहाड़ियों के समीप केन नदी का उद्गम है। यह स्थल चंदेल शासनकाल की ऐतिहासिक धरोहरों से भरा पड़ा है। उद्गम स्थल से कुछ दूरी पर ही कई पुरातात्विक स्तम्भ, मूर्तियों के अवशेष बिखरे पड़े हैं। क्षेत्रीय लोग केन नदी को एक देवी के रूप में पूजते हैं। केन जिसे कर्णवती भी कहा जाता है, यह यमुना की सहायक नदी है। केन नदी में बेहद कीमती शजर पत्थर पाया जाता है। शजर एक अनोखा पत्थर होता है। ऊपर से बदरंग दिखने वाले इस पत्थर को मशीन से तराशने पर उस पर झाड़ियों, पेड़–पौधों, पशु पक्षियों, नदी की जलधारा व मानव के विभिन्न चमकदार रंगीन चित्र उभरते हैं।

अध्ययन क्षेत्र की समस्याएँ –

1. जिले के इन धरोहरों की सुरक्षा, संरक्षण व मरम्मत की कमी है।
2. इन स्थलों तक पहुँच मार्गों की दशा ठीक नहीं है।
3. इन स्थलों के मूर्तियों की चोरी एवं धरोहरों को क्षति पहुँचाना एक समस्या है।
4. इन स्थलों पर पर्यटकों द्वारा पॉलिथिन, पाउच आदि से गंदगी फैलायी जाती है।
5. स्थानीय लोगों में इनके महत्व व संरक्षण सम्बन्धी जागरूकता की कमी है।

सुझाव – जिले के पर्यटन स्थलों के सन्दर्भ में निम्नलिखित सुझाव सार्थक हो सकते हैं–

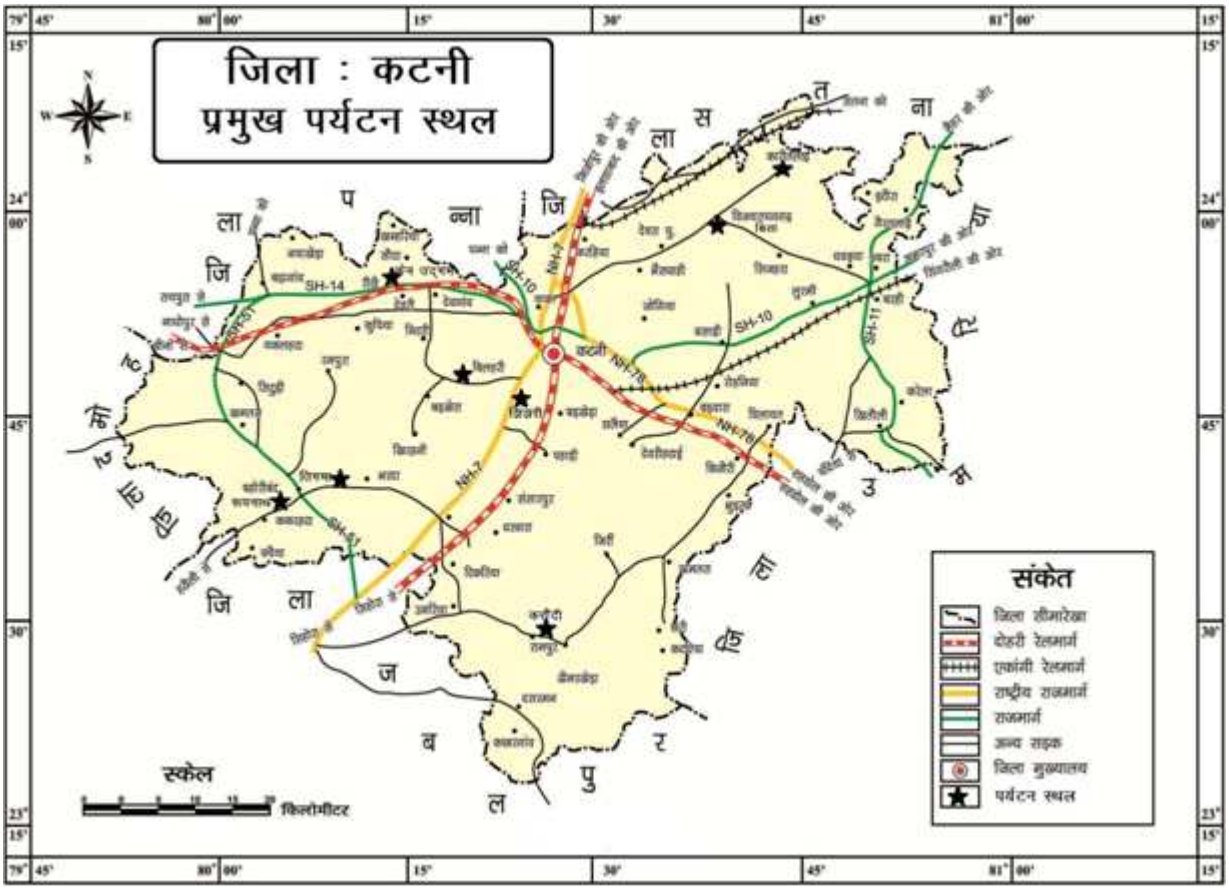
1. जिले के पर्यटन स्थलों को पर्यटन मानचित्र पर लाने के लिये इनके उन्नयन की जरूरत है।
2. पुरातात्विक, ऐतिहासिक स्थलों की मरम्मत व सुरक्षा की आवश्यकता है।
3. इन स्थलों तक पहुँच की सुगमता के लिए अच्छी सड़कों की आवश्यकता है।
4. पर्यटकों द्वारा इनकी क्षति व प्रदूषण के लिए उन्हें दण्डित करना चाहिए।
5. पर्यटकों व स्थानीय लोगों में इनकी सुरक्षा व महत्व सम्बन्धी जागरूकता लाने की जरूरत है।

निष्कर्ष – पर्यटन भूगोल, भूगोल की एक नवप्रस्फुटित शाखा है, जिसमें पर्यटन को मनोरंजन के साथ विशेष रूप से आर्थिक धरातल पर रोपित किया गया है। पर्यटन आर्थिक रूप से देश के विकास में सहयोगी हो सकता है। इसी तरह परोक्ष रूप से मानव स्वास्थ्य के विकास में भी सहयोगी हो

सकता है। भारत के संदर्भ में ग्रामीण पर्यटन अत्यन्त अनूठा व अभिनव प्रयोग है। इस अवधारणा का ध्येय देश के गाँवों में संस्कृति, कला, शिल्प, कौशल और प्रकृति के विपुल भण्डार को तलाशना और सहेजना है। ग्रामीण पर्यटन के साथ ग्रामीण अंचलों के आर्थिक विकास को गति मिलेगी। पर्यटन स्थल मानसिक, आत्मिक शान्ति के केन्द्र होते हैं। इन स्थलों पर जाकर मानव शोरगुल, भीड़ और भाग-दौड़ से दूर अवसाद, तनाव, चिड़चिड़ापन, निराशा, असंतोष, आत्मग्लानि, क्रोध, ईर्ष्या आदि मनोरोगों को छोड़ शान्त, प्रसन्न प्रकृति के सान्निध्य में शान्त और प्रसन्न होकर आनन्द की अनुभूति करता है। यह अनुभूति व शुद्ध जल वायु मनोरोगों के लिये औषधि है। कटनी जिला ऐसे पर्यटन केन्द्रों से सम्पन्न है। इन केन्द्रों की कुछ मूलभूत समस्याएँ हैं, जिनको दूर करने की आवश्यकता है। इन ग्रामीण पर्यटन केन्द्रों के उन्नयन से जिले की बुनियादी अवसंरचना के निर्माण के साथ रोजगार के नये अवसर सृजित होंगे। गाँवों से शहरों की ओर पलायन पर विराम लगाने में मदद मिलेगी। हमारे अमूल्य धरोहरों की सुरक्षा होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला गजेटियर जिला जबलपुर सन् 1969
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका जिला कटनी, सन 2011
3. सिंघई, जी.सी.- चिकित्सा भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर, 1999
4. सिंह, यू. बी.- स्वास्थ्य भूगोल, राजीव प्रकाशन मेरठ।
5. चौबे, कैलाश- स्वास्थ्य भूगोल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 2001
6. सिंह, जगतपाल- पर्यटन एवं परिवहन भूगोल, नॉलेज बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2015
7. वर्मा, डॉ. सवलिया बिहारी- ग्रामीण पर्यटन एवं भ्रमण, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2011
8. दैनिक समाचार पत्र 'पत्रिका' जबलपुर संस्करण दिनाँक 06.10.12, 29.11.12, 12.01.13, 21.03.13
9. इन्टरनेट।



****

सरदार सरोवर बांध – मध्यप्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र (मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में)

डॉ. एस. एस. बघेल *

प्रस्तावना – किसी भू भाग की साक्षेपित स्थिति का उस क्षेत्र के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ता है। नर्मदा नदी पर स्थित सरदार सरोवर बांध से मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र एवं राजस्थान राज्यों का संयुक्त प्रयास है। इस बांध का मुख्य उद्देश्य विभिन्न जल की आपूर्ति एवं विद्युत उत्पादन है। नर्मदा नदी का प्रवाह क्षेत्र 98800 वर्ग कि.मी. है। नर्मदा घाटी का विस्तार 21^0 उत्तरीय अक्षांश से 23^0 उत्तरीय अक्षांश एवं 71^0 पूर्वी देशान्तर से 31^0 के मध्य है। नर्मदा व उसकी सहायक नदियों पर लगभग 29 बड़े, 135 मध्य एवं 3000 छोटे बांध निर्मित है। इस नदी का 87.8 प्रतिशत भाग मध्यप्रदेश में, 11 प्रतिशत गुजरात एवं 0.25 प्रतिशत भाग महाराष्ट्र तथा राजस्थान राज्य में है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. नर्मदा नदी पर स्थित विभिन्न परियोजना / बांधों से अवगत होना।
2. सरदार सरोवर बांध भारत की सबसे बड़ी जल संसाधन परियोजना है।
3. महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश और राजस्थान जैसे बड़े राज्य इससे जुड़े हुए है।
4. पानी डिस्चार्ज करने की क्षमता के लिहाज से ये दूनिया का दूसरा सबसे बड़ा बांध है।
5. प्रोजेक्ट से जुड़ी 532 कि.मी. लम्बी नर्मदा मुख्य नहर दुनिया की सबसे लम्बी सिंचाई नहर है।
6. सरदार सरोवर नर्मदा निगम लिमिटेड के मुताबिक कंक्रीट से बना सरदार सरोवर डेम भारत का तीसरा सबसे ऊचां बांध होगा। तीन साल पहले तत्कालीन मुख्यमंत्री आनन्दी बेन पटेल ने इसकी ऊंचाई 131 से 138.68 मीटर बढ़ाने की घोषणा की थी।

अध्ययन की विधि – विभिन्न शोध पत्रों एवं लेखों के आधार पर नर्मदा नदी पर निर्मित सरदार सरोवर बांध एवं अन्य परियोजना की विस्तृत जानकारी प्राप्त करना।

परिकल्पना – नर्मदा नदी की कुल लम्बाई 1312 कि.मी. में आने वाली मुख्य परियोजना, इतिहास का अध्ययन व आंकलन करना शोध की परिकल्पना है।

सरदार सरोवर बांध – सरदार सरोवर बांध नेहरू का सपना मोदी के हाथों पूरा हुआ। सरदार सरोवर बांध भारत के इतिहास की शायद सबसे विवादास्पद परियोजना रही है।

इसका सपना भारत के पहले प्रधानमंत्री पड़ित जवाहरलाल नेहरू ने देखा था। लेकिन कई तकनीकी और कानूनी अड़चनों के चलते ये लटकती रही और आखिरकार 1979 की इसकी घोषणा हुई।

नर्मदा नदी पर बनने वाले इस सबसे बड़े बांध के खिलाफ विरोध की जबदस्त लहर भी उठी विरोध और लम्बी मुकदमेबाजी के कारण परियोजना को वक्त का पूरा करने में काफी समय लगा।

सरदार सरोवर बाँध तथा जल संसाधन की उपलब्धता –

1. सरदार सरोवर बांध भारत की बसे बड़ी जल संसाधन परियोजना है।
2. महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश और राजस्थान जैसे बड़े राज्य इससे जुड़े हुए है।
3. पानी डिस्चार्ज करने की क्षमता के लिहाज से ये दूनिया का दूसरा सबसे बड़ा बांध है।
4. प्रोजेक्ट से जुड़ी 532 कि.मी. लम्बी नर्मदा मुख्य नहर दु निया की सबसे लम्बी सिंचाई नहर है।
5. सरदार सरोवर नर्मदा निगम लिमिटेड के मुताबिक कंकीट से बना सरदार सरोवर डेम भारत का तीसरा सबसे ऊचां बांध होगा। तीन साल पहले तत्कालीन मुख्यमंत्री आनन्दी बेन पटेल ने इसकी ऊंचाई 131 से 138.68 मीटर बढ़ाने की घोषणा की थी।

नर्मदा नदी – इसे पहले रेवा नदी कहा जाता था। यह नदी विन्ध्याचल पर्वत श्रेणियों की मैदान पर्वतमाला के अमरकंटक से निकलकर पंखेनुमा मैकाल पठार पर बहने के बाद एक तंग, गहरी और सीधी घाटी में पश्चिम की और बहती है। मण्डला नगर को कुण्डली में घेरते हुए उत्तर दिशा की ओर मुड़ जाती है। यह नदी मण्डला, जबलपुर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, खण्डवा तथा खरगौन जिलों में बहती हुई गुजरात के भरूच जिले तक जाती है तथा बाद में खंभात की खाडी में गिरती है। नर्मदा नदी भारत की पांचवी बड़ी नदी है तथा पश्चिम भारत में स्थित सभी नदियों में अधिक बहने वाली है किन्तु यदि प्राचीनता की दृष्टि से देखा जाए तो यह भारत की सबसे पुरानी नदी है। आदिमानव के पदचिन्ह आज भी नर्मदा के तटों पर पाए जाते हैं। इस नदी के उद्गम से 8 कि.मी. पर कपिलधारा जल प्रपात तथा 100 कि0मी0 आगे दुग्ध धारा जल प्रपात जबलपुर के समीप भेड़ा घाट है। जबलपुर के समीप यह मैदानी भाग में प्रवेश करती है और दक्षिण की और मुड़ जाती है आगे 23 कि.मी. तक सगमरमर को काटकर बनायी गयी कन्दरा है। इसी कन्दरा में जबलपुर जिले का धुंआधार जल प्रपात (15मी.) बनाती है। यह दूर तक भण्डिर श्रेणी के समानान्तर बहती है। नरसिंहपुर के निकट एक जल प्रपात (3 मीटर) है। यह हंडिया से बड़वाह तक पथरीले महाखण्ड में प्रवाहित होती हुई दो प्रपात (मान्थार व दरपी) बनाती है। ये प्रपात 12 मी. ऊंचे है। महेश्वर के निकट एक छोटा प्रपात सहस्त्रधारा (8मी.) बनाती है। नर्मदा का उत्तरी भाग नाव चलाने और सिंचाई करने के लिए अनूकूल नहीं है। गंगा की भांति नर्मदा भी पवित्र मानी जाती है। होशंगाबाद आदि बहुत से स्थानों पर नर्मदा नदी के किनारे सुन्दर घाट और मनोहारी मंदिर बने हुए है। यह नदी 1312

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

कि.मी. लम्बी और मध्यप्रदेश में 1140 कि.मी. बहती है। इसका अपवाद क्षेत्र 98800 वर्ग कि.मी. है। नर्मदा के दाये तट की सहायक नदियों में हिरन, तिनदोनी, बरना, चन्द्रकेशर, ऊंची एवं हथनी है। बांये तट की प्रमुख नदियों में बरनार, बजर, शेर, तवा, कुन्दी, देव और मोई है। अब इस नदी पर विशाल सरदार सरोवर बहुमुखी का योजना का निर्माण किया गया है।

सरदार सरोवर बांध की उपयोगिता –

1. सरदार सरोवर बांध से गुजरात राजस्थान और महाराष्ट्र के सूखा प्रभावित इलाको के एक बड़े हिस्से की सिंचाई हो सकगी।
2. राजस्थान और गुजरात एक बड़ी आबादी को नर्मदा का पानी पीने के लिए मिलेगा।
3. सरदार सरोवर परियोजना से 1450 मेगावाट बिजली के उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है।
4. गुजरात के जिन इलाकों पर बाढ़ का खतरा रहता है ये बांध उन्हें बचाएगा।
5. शूलपानेश्वर, जंगली गधा, काला मृग जैसे वन जीव अभ्यारणों को भी इससे लाभ होगा।

मध्यप्रदेश में नर्मदा बेसिन में मौजूद प्रमुख परियोजनाऐं –

1. **मतियारी परियोजना –** इस परियोजना को 1992 में पूरा किया गया मण्डला जिले में सिमरिया गांव के निकट मतियारी नदी (बाए किनारे पर नर्मदा की एक सहायक नदी) पर बांध की परिकल्पना की गई परियोजना का सकल कमान क्षेत्र (GCA) 1479 हेक्टेयर है और कृष्ण कमान क्षेत्र (GCA) 13,662 हेक्टेयर है इस परियोजना की लागत 30 करोड़ रूपये थी।
2. **तवा परियोजना –** तवा परियोजना को 1992-93 में पूरा कर लिया गया। होशंगाबाद जिले में रानीपुरा गांव के निकट तवा नदी नर्मदा के बाऐ किनारे की एक प्रमुख सहायक नदी पर निर्मित बांध है। इस परियोजना का कृष्ण कमान क्षेत्र (GCA) 20468 लाख हेक्टेयर क्रमश: होशंगाबाद और हरदा जिले में है। इस परियोजना की लागत 113 करोड़ रूपये थी।
3. **बारना परियोजना –** बारना परियोजना को जून 1978 में पूरा किया गया। रायसेन जिले में बाड़ी के निकट बारना नदी (नर्मदा के बाए किनारे पर सहायक नदी) पर निर्मित किया गया है। परियोजना का सकल कमान क्षेत्र (GCA) 72,000 हेक्टयेर है और कृष्ण कमान क्षैत्र (CCA) 55,000 हेक्टेयर है, परियोजना की लागत रूपये 5.57 करोड़ रूपये थी।
4. **कोलार परियोजना –** रायसेन जिले में कोलार नदी दाहिने के किनारे पर नर्मदा की एक सहायक नदी पर निर्मित किया गया है। मध्यप्रदेश के सीहोर जिले में गांव लाऊखड़ी के पास 45 मीटर ऊंचाई पर एक बांध का निर्माण किया गया है। बांध की सकल भण्डारण क्षमता 270 एमसीएम है। परियोजना के सकल कमान क्षेत्र (GCA) 62,752 हेक्टेयर है और कृष्ण कमान क्षेत्र (CCA) 45,087 हेक्टेयर है इसके अलावा इस परियोजना द्वारा भोपाल शहर में पीने के पानी की आपूर्ति हो रही है।
5. **सुक्ता परियोजना –** सुक्ता परियोजना को मार्च 1984 में पूरा किया गया। यह सुक्ता नदी पर निर्मित खण्डवा जिले में गांव डोगर के निकट बांध (नर्मदा के बाए किनारे पर एक उप सहायक नदी) की परिकल्पना की गई। जलाशय का भण्डारण 78 एमसीएम है। जिसमें से 73.76 एमसीएम सिंचाई के लिए उपयोग किया जाता है और 4.24 एमसीएम घरेलू जल आपूर्ति के लिए प्रयोग किया जाता है। खण्डवा जिले में परियोजना की सकल कमान क्षेत्र (GCA) 19,533 हेक्टेयर है और कृष्ण कमान क्षेत्र (CCA) 16,599 हेक्टेयर है। परियोजना की कुल लागत 12.6 करोड़ रूपये थी।
6. **मान परियोजना –** मान परियोजना को धार जिले में जीराबाढ़ के पास 2007-08 में पूरा कर लिया गया। यह परियोजना नर्मदा की सहायक नदी मान पर स्थित है। यह 15000 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई के लिए प्रावधान की परिकल्पना की गई। इस परियोजना का लागत 175.75 करोड़ रूपये थी।
7. **जोबट परियोजना –** जोबट परियोजना वर्ष 2007-08 में झाबुआ जिले में हथनी नदी नर्मदा की सहायक पर (शहीद चन्द्रशेखर आजाद सागर) पर पूरा किया गया। इसमें अलीराजपुर, झाबुआ तथा धार जिले में सिंचाई 9848 हेक्टेयर भूमि पर होगी। परियोजना की 166.43 करोड़ रूपये थी।
8. **रानी अवंतीबाई सागर परियोजना –** रानी अवंतीबाई सागर बांध (बरगी) परियोजना जून 1988 में पूरा किया गया। यह परिकल्पना एक समय एम.टी.आर 69.8 उच्च क्रांकीट बांध जबलपुर जिले के गांव के निकट नर्मदा नदी तट पर की गई है। जबलपुर और नरसिंहपुर जिले में परियोजना के कृश्य कमान क्षेत्र (CCA) 2.198 लाख हेक्टेयर है। इस परियोजना की कुल लागत 1514.98 करोड़ रूपये है।
9. **इंदिरा सागर परियोजना –** यह बांध खण्डवा जिले के ग्राम पुनासा के निकट नर्मदा नदी पर बनाया गया है। इसकी भण्डारण क्षमता 9,760 एम.सी.ए. है और यह भाखड नागल बांध से 1.25 गुना बड़ा है। इंदिरा सागर परियोजना का प्रांरभ 1988 में नर्मदा घाटी विकास प्राधिकरण द्वारा किया गया। मध्यप्रदेश शासन एवं नेशनल हाइड्रो पावर कॉर्पोरेशन के संयुक्त उपक्रम अर्थात हाइड्रोइलेक्ट्रिक डेवलपमेंट कार्पोरेशन द्वारा अगस्त 2000 में इसमें अपना कार्य प्रांरभ किया। यह प्रोजेक्टर वर्ष 2004-2005 में समाप्त हो गया। नहर नेटवर्क के कार्य को पूर्ण होने पर 1,23,000 हेक्टयर भूमि पर सिंचाई होगी।
10. **ओंकारेश्वर परियोजना –** यह परियोजना ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग के निकट स्थित है। इस परियोजना के शीघ्र पूरा करने के लिए मध्यप्रदेश सरकार और नेशनल हाइड्रो पॉवर कॉरपोरेशन एनएचपीसी के एक संयुक्त निगम अर्थात नर्मदा हाइड्रों डेवलपमेंट कॉरपोरेशन एन.एच.डी.सी ने अगस्त 2000 से काम प्रांरभ कर किया। ओंकारेश्वर बांध और बिजली घर 520 मेंगावाट 18 65 मेगावाट ने अगस्त 2000 से कामकाज तक पूरा कर लिया है। यहां नहर द्वारा 3.5 मेगावाट बिजली के निर्माण की परिकल्पना की गई है। नहर नेटवर्क परियोजना के पूरा होने के बाद खरगोन, धार, खण्डवा जिले में 1.47 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई हो रही है। परियोजना की लागत 2921.54 करोड़ रूपये है।
11. **महेश्वर पनबिजली परियोजना –** यह 400 मेगावाट पन बिजली परियोजना जो नर्मदा नदी पर महेश्वर शहर के निकट (खरगोन जिला) स्थित है। मध्यप्रदेश की सीमा पर महेश्वर बांध स्थित है। मध्यप्रदेश सरकार ने परियोजना को ऊर्जा विभाग को सौंप दिया है। इसका कार्य महेश्वर हाइडल पावर निगम लिमिटेड द्वारा किया जा रहा है।
12. **पुनासा परियोजना –** यह चन्देल गांव के निकट (खरगोन जिला)

पुनासा लिफ्ट सिंचाई परियोजना की स्थापना इंदिरा सागर नहर के पानी को ऊपर उठाने के लिए की गई है। इसके अन्तर्गत 35000 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई का प्रावधान है और इसकी लागत 488 करोड़ रूपये है।

13. सरदार सरोवर परियोजना – यह परियोजना नर्मदा जिले के तालुका नाडोड गुजरात में स्थित है, यहां पर बनने वाले मुख्य डेम की ऊंचाई 121.92 मीटर इस प्रोजेक्ट से, करीब 1450 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी। इससे उत्पन्न बिजली मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और राज्यों को दी जायेगी इस प्रोजेक्ट की लागत 3.136 करोड़ रूपये है।

14. ऊपरी बेडा प्रोजेक्ट – खरगोन जिले के नेमित गांव के पास नर्मदा की सहायक नदी पर ऊपरी बेडा बांध के निर्माण कार्य पूरा हो गया है। मुख्य नहर का कार्य अभी प्रगति पर है। इस परियोजना में 30,427 कि.मी. की दूरी पर मुख्य नहर से 22 कि.मी. शाखा नहर के निर्माण की योजना है। इस नहर निर्माण प्रोजेक्ट के तैयार हो जाने पर बड़वानी जिले की 9.900 हेक्टयर भूमि सिंचित हो जायेगी। इसकी निर्माण लागत 224.41 करोड़ रूपये है।

15. लोअर गोई परियोजना – बड़वानी जिले के गांव पंचकुआ के पास नर्मदा नदी की सहायक नदी गोई पर गोई बांध के निर्माण की योजना है। यह बांध बड़वानी जिले के मुख्यालय से 21 कि.मी. दूर है और बांध का कार्य वर्तमान में चालू है जिसके अन्तर्गत लम्बी सिंचाई सुरंग तथा नेटवर्क परियोजना की योजना है इस प्रोजेक्ट का कार्य पूरा होने पर बड़वानी जिले की 13.760 हेक्टेयर भूमि सिंचित होगी। इस परियोजना की लागत 360.37 करोड़ रूपये है।

निष्कर्ष – इस परियोजना से गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र के सुखाग्रस्त क्षेत्रों में सिंचाई, पेयजल की व्यवस्था, एवं विद्युत व्यवस्था सुलभ हुई है। जिससे यहां निवासरत लोगों को रोजगार के नये अवसर प्राप्त हुए है यहां की जनता का पलायन रूका है। किन्तु इस परियोजना का दूसरा पहलू देखे तो वन सम्पदा एवं पारिस्थितिक तंत्र पर विपरित प्रभाव पड़ा है। कई आदिवासी खेतीहर मजदूरों परियोजना के कारण विस्थापित हो गये है। परियोजनाओं के पूर्ण हो जाने से आर्थिक समृद्धि एवं विकास के नये आयाम प्राप्त हुए है। जल जीवन का आधार है, यह संसाधन हेतु अन्य सभी संसाधनों से अधिक महत्वपूर्ण है। वस्तुत: कोई भी आर्थिक कार्य ऐसा नहीं है, जो जल के बिना संभव हो पेय, सिंचाई, परिवहन, विद्युत, विनिर्माण उद्योग, मत्स्य उद्योग आदि अनेक कार्य के लिए यह अत्यंत आवश्यक है। अनुमानत: अमेरिका में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 1700 गेलन (11000 लीटर) पानी की खपत है जबकि भारत में यह केवल 50 गैलन (310 लीटर) ही है। भारत सरकार ने 1985 में जल संसाधन मंत्रालय बनाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. संदेश पत्रिका।
2. नर्मदा घाटी विकास/नियंत्रण प्राधिकरण इन्दौर
3. भारत का भूगोल – डॉ. सुरेशचन्द्र बंसल
4. पर्यावरण भूगोल – डॉ. सविदरसिंह
5. स्थालकृतिक भूगोल – डॉ. सविदरसिह
6. भारत का भूगोल – डॉ. वी.एस. चौहान
7. सरदार सरोवर परियोजना पुनस्थल एवं पुर्नवास रिपोर्ट जून 1999
8. जल संसाधन मंत्रालय, नईदिल्ली, भारत सरकार।

****

An Honour Killing - A Curse To Indian Society

Prof. Akshata Amitkumar Gawades*

Introduction - The Preamble of our constitution of India status that "We the people of India having solemnly resolved to constitute India into sovereign socialist secular democratic republic". But when we look into the surrounding of Indian society, one question always takes its shape in the minds of some intellectual people,who really care to preserve the word 'secular' in their both mind and soul about the word "Honour Killing".

According to Kurshid women's action, "There is no honour in killig".The term "**Honour Killing**", denotes a deviance behaviour of a member of the family towards another member of family to protect the dignity of the family in society by the way of homicide.

Honour killing is not found only in poor or illiterate and in tribal areas but also it takes it's extension among all the sections of the society and in all areas.

According to **Human Rights Watch,** "Honour killings are acts of vengeance, usually death, committed by members against female family members, who are held to have brought dishonor upon the family."

Objectives -

1. To aware about the historical background of honour killing.
2. Throw light on the major cases of honour killing.

Research Methodology - This paper is based on descriptive researches collected from secondary sources.

Extension of honour killing - Family members reports the police honour killing as accidents or suicides and as such. United Nations report estimated about 5,000 women become victims every year. According to B.B.C. reports 20,000 women are killed. **(Diagram see in the last page)**

When we look into the cases of honour killings we will find that minor's are mostly used for this deviance act. Minor's are so used that they can get less punishment and can sent to the remand homes or reformatory homes instead of Jail according to the law of the land.

Honour killings takes place for refusal of an arranged marriage, seeking divorce, allegations and rumors about family members, victims of rape, homosexuality etc.

Historical Background - Honour killing is originated among the tribal people and herdsmen by using aggression and for creating fear in the minds of the people.

Cultural factor is influencing for honour killing. When values and norms of the society are centralized more incidents of honour killing takes place.

Nighat Taufeeq of the **women's resource centre Shirkatgah** says " It is an unholy alliance that works against women, the killers take pride in what they have done, the tribal leaders endorse the act and protect the killers and police connive the cover up".

Ancient Rome - In ancient Rome 'pater' means the father is head of the family and had all the right to kill an unmarried daughter or an adulterous wife.

Medieval Europe - The method of stoning is used in the medieval Europe against adulterous wife or her partner.

Resolution 1327(2003) of the council of Europe states that " The assembly notes that whist so called honour crimes emanate from cultural and religious roots and are perpetrated worldwide, the majority of reported crimes are among Muslim and Muslim communities".

Albanies - The Kanun is the set of traditional Albanian laws and customs. Honour is the four pillars on which kanun is based and anybody who dishonor's the kanun will be punished.

France - Leniancy in regard to honour crimes against women who had committed adultery. The Napolic Code of 1804, established under Nepolean Bonaparte is one of the legal leniency in regard to adultery related killings.

Germany - In 2005 Der spigel reported " In the past four months six muslim women were killed by the family members". In March 2009, a Kurdish immigrant from turkey, Gulsam was killed for a relationship not in keeping with her family's plan for an arranged marriage".

United Kingdom - In 2010, Britain saw a 47% rise of honour related crimes. Shafilia Iftikhar Ahmed, a 17 year old British Pakistani girl from Great Sankey, Warrington, Chestine who was murdered in 2003 by her parents.

Banar Mohmmed, a 20 year old Iraqui Kurd woman from Mitcham, South London, was killed in 2006 in a murder by her father, uncle and cousins. Her life story was sketched in the documentary called **Banar.**

In 2012 first white women was victimized in the name of honour killing named Laura Wilson. She was killed by her boyfriend as she reveals to disclose their relationship to his family.

Pakistan - Honour killing is named as Karo-Kari in Pakistan.

***Deptt. of Sociology, Night College of Arts and Commerce, Kolhapur (MH.) INDIA**

Many cases of honour killings are occurred and occurring in Pakistan. One pregnant women in 2014 was killed infront of court of law for marrying another man whom she loved. **(Diagram see in the last page)**

When we analyze above diagram, relating to the percentage of involvement of the persons, we will see that husband and father are taking active part in killing in the name of honour. Father is the person who teaches to hold the hand and to walk around the world and the husband is the person whom woman holds for rest of her life.

Honour Killings in India - In India major number of crimes related to honour killings takes place in Uttar Pradesh, Punjab, Rajasthan, Delhi, Chandigarh and Himachal Pradesh.

Statistical data shows that in 2008 the percentage of honour killing was 98%,2009 it is 56%, in 2010 it was 35%. Muslims commit 91% of honor killing worldwide. On international level 5000 reported cases are honour killings, of which one in five cases from India i.e.1000 cases are from India. (Diagram see in the last page)

Major Cases in India -

New Delhi - Five members of a family in India were sentenced to death for the torture and "brutal" murder of a young couple from Delhi.The parents, uncle, aunt and brother of Asha, a 19-year-old woman killed along with her boyfriend Yogesh in 2010,were all condemned to hang by additional sessions court judge Ramesh Kumar.

Yogesh, a taxi driver, wanted to marry Asha, the daughter of a vegetable vendor, but the girl's family was against the alliance because the boy belonged to a lower caste. The issue of caste system prevailed in Indian society, made many couples to end their life in the name of honour killing.

Autopsy reports revealed that the young couple had been tied with ropes, beaten with metal pipes and electrocuted, local media reports said. "Medical examination had revealed that the two had died due to the thermoelectric shock from repeated electrocution," said the Indian Express newspaper.

Public prosecutor P.K. Verma said: "All the five persons were handed the death penalty because it was proved beyond doubt that they tortured and killed the young boy and girl just because they were in love and wanted to marry.

Ravi Kant, a New Delhi lawyer who has been fighting to bring in a law which will provide specific, severe penalties to curb such killings, welcomed the punishment handed out Friday by the city court. "Such a punishment will certainly have a huge impact on the society. It will serve as a strong deterrent to one and all. The sentencing is also in line with the Supreme Court directive and it must be lauded," Kant told AFP.

There are no official figures on honour killings, though an independent study in 2010 suggested that as many as 900 were being committed every year in the northern states of Haryana, Punjab and Uttar Pradesh.

Many cases go unreported, with police and local politicians turning a blind eye to what some see as an acceptable form of traditional justice by families seeking to protect what they see as their honour. Prisoners can often languish for years on death row in India, with only one execution having taken place in the last 15 years — that of a former security guard hanged in 2004 for the rape and murder of a 14-year-old girl.

Fight against Honour Killing -

National Legal Research Desk – A Shakti Vahini Initiative -

Published In The Times Of India -

New Delhi - Punjab, Haryana, Uttar Pradesh have joined 18 other states to empower the Centre to bring a legislation against honour killings, in what could be a turnaround moment for the effort to curb the powers of caste and community bodies which seek to be the final arbiter of social mores and arrogate unto themselves the power of judiciary. In its affidavit to the Supreme Court the Union law ministry has said besides Uttar Pradesh, Punjab and Haryana, Andhra Pradesh, Assam, Chhattisgarh, Goa, Himachal Pradesh, Jharkhand, Kerala, Meghalaya, Mizoram, Nagaland, Orissa, Rajasthan, West Bengal and Union Territories like Chandigarh, Dadra and Nager Haveli, Daman and Diu, Lakshwadeep and Puducherry have supported the "Prohibition of interference with the freedom of matrilineal alliances bill."

The Hindu, January 24,2012 stated that the prohibition of unlawful assembly bill 2011, proposes no person or any group of persons shall gather with an "intention to deliberate on, or condemn any marriage has dishonoured the caste or community tradition or brought disrepute to all or any of the persons forming part of the assembly or the family or the people of the locality concerned".

Haryana, Punjab and Uttar Pradesh are the states where we find remarkable difference in sex ratio. For them to sign up to the campaign against honour killings is significant because of the political class's diffidence thus far about taking on powerful khaps. All the three states opposed an earlier move for a central legislation against against honour killings. In fact the group of ministers set up by UPA on honour killing could barely meet a couple of times in the absence of unanimity on the issue.

The proposed bill drafted by the law commission in 2012, was expected to check the high-handed and unwarranted interference by caste assemblies or panchayats with sagotra, inter-caste or inter-religious marriages. In view of the rising number of incidents where young couples were excommunicated, tortured and killed for marrying within the gotra under orders from the Khap panchayats, the law commission recommended a threshold bar on congregation of people for condemning a marriage on the basis that the marriage has dishonoured caste, community or brought disrepute to the family or community concerned.

The penal provision for such unlawful assembly was proposed at imprisonment of six months to a year and a

fine of Rs 10,000. The bill elaborated that criminal intimidation of the couple or their families would invite imprisonment ranging between one to seven years and a fine of Rs 30,000. The bill also proposes to make all offences cognizable, non-bailable and non-compoundable. In one case the girl, a Shia Muslim, had married Sadiq, a Sunni "against the wishes of her family", the court noted, leading to enmity between the two families. On July 7, 2008, Ali forcibly took Sadiq from his family's home in old Delhi to a mosque, where the other four accused were waiting.

An altercation took place and Sadiq's brothers Tariq and Tayyab, who had followed Ali, joined in. The accused shot them both. While Tariq died, Tayyab, though critically injured, survive. Recent cases of Arushi Talwar, which is highlighted through film and Shina bora's case show us great deal of society with life in the name of honour.

Recent Case of Honour Killing in Kolhapur - Dainik Pudhari, 16-12-2015

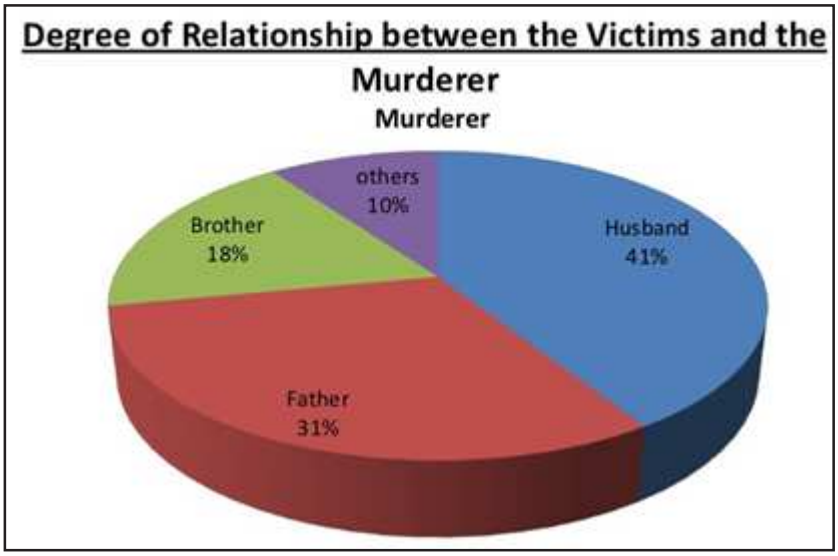
Kolhapur known as progressive district is also not away from the honour killing.On 16 December 2015 we again faced the killing in the name of honour by two brothers. Kulkarni couple is victim of this case living in Ganesh Colony, Bavda, Kolhapur, who married against the wishes of the family. It shows narrow mindedness of the people whose teasing attitude provoked two young brothers to come under the purview of section 300 of the Indian penal code.

Conclusion - To conclude with we can say that more number of honour killing is among Muslims and Islamic country. It is increasing day by day.We are living in globalized world, but our attitudes are very regid. unless and until the psychological attitude changes, we cannot expect the change in society for this humiliating act.

References :-

1. Ehics: Honour Crimes.
2. Web links and newspapers.





Honour Killings in India



****

महाविद्यालय में छात्र/छात्राओं में धार्मिक वृत्तियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन

आभा सिंघल *

प्रस्तावना – मानव उद्विकास की विभिन्न अवस्थाओं में एकता बनाए रखने में विभिन्न कारकों का योगदान रहा है। प्रजातीयता, धर्म, राष्ट्रीयता, भाषा और विचारधारा भिन्न–भिन्न अवस्थाओं में संयुक्तता का आधार रहे है। जैसे–जैसे समय में परिवर्तन होता गया, मानव समजों में भी प्रौद्योगिकीय, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तन हुए और सामाजिक एकजुटता बनाए रखने वाले आधारभूत कारको में भी परिवर्तन हुए। समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में धर्म को मुख्य रुप से दो रुपों में परिभाषित किया गया है–तात्विक दृष्टि से तथा प्रकार्यात्मक दृष्टि से। तात्विक परिभाषाएँ धर्म की समाज में भूमिका अर्थात् 'धर्म' क्या करता है, के रुप में करती है।

टायलर के अनुसार, धर्म देवी देवताओं तथा अन्य अधिक मानवीय प्राणियों जैसे पूर्वज अथवा आत्माओं के प्रति विश्वास तथा इनसे सम्बन्धित कर्मकान्ड है।

दुर्खीम ने टायलर की धर्म की व्याख्या को अस्वीकार करते हुए इसे प्रकार्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया। दुर्खीम ने अपने पुस्तक `Elementary Forms of Religious Life 1912' में धर्म के प्रति एक विशेष संदर्भ प्रस्तुत किया है। उसके अनुसार 'धर्म विश्वास तथा व्यवहार की एक ऐसी अवस्था है, जिसका सम्बन्ध पवित्र वस्तुओं से है। जेम्स फ्रेजर ने अपनी पुस्तक `The Golden Bough' में कहा है कि 'धर्म से में मनुष्य से श्रेष्ठ उन शक्तियों की सन्तुष्टि अथवा आराधना समझता हूँ, जिनके सम्बन्ध में यह विश्वास किया जाता है कि वे प्रकृति व मानव जीवन को मार्ग दिखलाती व नियन्त्रित करती है'टॉयलर ने अपनी पुस्तक `Primitive Culture' में कहा है कि धर्म आध्यात्मिक शक्ति में विश्वास है' मैलिनोवस्की ने अपनी पुस्तक "Magic, Science & Religion and other essays" में कहा है कि 'धर्म क्रिया की एक विधि है और साथ ही विश्वासों की एक व्यवस्था भी। धर्म एक समाजशास्त्रीय तथ्य होने के साथ ही व्यक्तिगत अनुभव भी हैं। मजूमदार व मदान में अपनी पुस्तक 'सामाजिक मानवशास्त्र परिचय' में कहा है कि धर्म किसी अलौकिक और अतीन्द्रिय शक्ति के भय का एक मानवीय प्रतियुत्तर है। यह व्यवहार की अभिव्यक्ति अथवा परिस्थितियॉ से किए गए अनुकूलन का वह रुप है, जो अलौकिक शक्ति की अवधारणा से प्रभावित होता हैं, अर्नोल्ड डब्लयू. ग्रीन ने अपनी "Sociology- An Analysis of life in modern Society" पुस्तक में कहा है कि 'धर्म ऐसे विश्वासों की प्रतीकात्मक क्रियाओं एवम वस्तुओं की प्रणाली है जो ज्ञान की अपेक्षा विश्वास द्वारा शासित होते है तथा जो मनुष्य को अनदेखी एवंम् नियन्त्रण क्षेत्र से परे अलौकिक शक्ति के साथ सम्बद्ध कर देती है', हेरी एम. जानसन ने अपनी पुस्तक "Sociology, A Systematic Introduction" में कहा है कि धर्म कम या अधिक रुप में उच्च अलौकिक व्यवस्था या प्राणियों, शक्तियों, स्थानों एवम् अन्य तत्वों के सम्बन्ध में विश्वासों एवं व्यवहारों की एक स्थिर प्रणाली है।

सिगमण्ड फ्रायड ने धर्म के विश्लेषणात्मक सिद्धान्त को प्रस्तुत किया है। धर्म के क्षेत्र में मैक्स वेबर ने भी एक नई परम्परा की शुरुआत की। वेबर दुनिया के पाँच धर्मो का तुलनात्मक अध्यनन करना चाहते थे। अपने जीवन काल में वे यह तुलना तो पूरी नहीं कर पाए लेकिन उन्होंने महत्वपूर्ण बात यही कही कि धर्म का 'नैतिक' पक्ष बहुत प्रभावशाली है। बीमारी, मृत्यु तथा दु:ख से भरे हुए दिन, ऐसे अवसर हैं, जिन्हें नैतिक दृष्टि से देखा जाना चाहिए। धर्म के सन्दर्भ में एक नई परम्परा धर्मनिरपेक्षिता की है। इस परम्परा को हाल के कुछ समाजशास्त्रियों ने विकसित किया है। इस विचारधारा का कहना है कि आज के बदलते हुए सन्दर्भ में जब आधुनिकता तथा वैश्वीकरण है, प्रत्येक राष्ट्र की संस्कृतियाँ अनेकत्व (Pluralism) की ओर बढ़ रही हैं। धर्म का पतन भी हो रहा है। ऐसी दशा में किसी राष्ट्र में कोई भी एक ही धर्म हो यानि एक ही संस्कृति हो, यह संभव नहीं है। अमेरिका तथा यूरोप में, यह सत्य है कि बहुसंख्यक लोग इकाई हैं, लेकिन यहाँ यहूदी, मुस्लिम तथा अन्य धर्मो को मानने वाले भी है। यह एक नया संदर्भ है तथा इसी में धर्म को धर्मीरिपेक्षिता की दृष्टि से भी राष्ट्रों को देखा जाने लगा है। हमारा देश धर्म की इसी परम्परा के अन्तर्गत आता है। सामान्य रुप से धर्म एक ऐसी व्यवस्था है, जो मानवीय जीवन के अज्ञात तथा अज्ञेय पक्षों जैसे जीवन, मृत्यु तथा उसके अस्तित्व के रहस्यों को जानने तथा उनके साथ व्यवहार करने का एक तरीका है। यह नहीं, धर्म नैतिक निर्णयों को लेने की प्रक्रिया में उत्पन्न कठिन असमंजस की स्थिति में उसकी सहायता भी करता है।

समाज शास्त्र तथा सामाजिक मानव शास्त्र के सर्वेक्षण की ट्रेण्ड रिपोर्टों में धर्म के समाजशास्त्र पर बराबर अनुसंधानों का मूल्यांकन किया जा रहा है। यह मूल्यांकन सुरजीत सिन्हा, एल.पी.विधार्थी तथा वैद्यनाथ सरस्वती ने किया है। एल.पी. विधार्थी ने भारत में धर्म के विश्लेषण में एक नयी परम्परा स्थापित की है। कहना चाहिए कि धर्म के अध्ययन के लिए उन्होंने एक मॉडल रखा है। वे कहते है कि हमारे यहाँ कुछ धार्मिक स्थल है या एक पवित्र भूगोल (Sacred Geography) है, जो उत्तर से दक्षिण तक के अंचलों को जोड़ती है। दूसरी यहॉ धर्म के साथ धर्म विधि (Ritual) भी महत्वपूर्ण है। भगवान का जागना, शयन करना आदि धर्म विधियॉ है और विधार्थी कहते है कि तीसरा हमारे यहॉ धर्मविधियों को करने के लिए विशिष्ट व्यक्ति होते है, जो पवित्र समझे जाते है। एल.पी. विधार्थी तथा उनकी परम्परा में कई विधार्थियों ने काम किया है। डी.के. सामन्त ने उज्जैन के पवित्र कॉम्पलेक्स का अध्ययन (1997) भी प्रस्तुत किया है।

धर्म के सन्दर्भ में एक अन्य अवधारणा धार्मिक रुढिवादिता भी है। यह

* सहायक प्राध्यापक, डी.ए.वी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

धार्मिक रुढिवाद आज हमारे देश में तथा पश्चिमी एशिया में एक बहुप्रचलित पद है। हमारे देश में रुढ़िवाद वास्तव में हिन्दुओं तथा मुस्लमानों का कट्टरवाद है। एक ओर हिन्दू कट्टरवादी है, जो प्राचीन भारत को पुन: लाना चाहते है तथा दूसरी ओर मुस्लिम रुढ़िवादी है, जो अपनी मौलिक अरब की संस्कृति को यहॉ स्थापित करना चाहते है तथा तीसरी ओर एक प्रक्रिया और देश में चल रही है। यह प्रक्रिया आधुनिकीकरण की है। योगेन्द्र सिंह के शब्दों में भारतीय परम्पराओं का शीघ्रता से आधुनिकीकरण हो रहा है। एक तरफ तीन प्रक्रियाऍ हैं- जो कट्टरवाद, मुस्लिम कट्टरवाद तथा आधुनिकीकरण और इन तीनों के बीच में भारतीय समाज तथा उसकी आर्थिक, सामजिक व राजनीतिक संस्कृति है। रुढ़िवाद की सैद्धान्तिक व्याख्या 'मोण्टगोमेरी वाट' ने अपनी पुस्तक इस्लामिक फन्डामेण्टेलिजम एण्ड मोडरनिटी, 1993 में कट्टरवाद की व्याख्या की है।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार धर्म पारम्परिक व आधुनिक समाजों में प्रकार्यात्मक भूमिका को निर्वाह करता आया है लेकिन जैसे-जैसे वैज्ञानिक ज्ञान तथा प्रौद्योगिकीय ज्ञान का विस्तार हुआ, धर्म तथा उससे जुड़े विश्वास के प्रकार्यो का क्षेत्र सीमित होना प्रारम्भ हुआ। मानव कहॉ से आया, वह कैसे उत्पन्न और उद्विकसित हुआ, इसका उत्तर विज्ञान के सिद्धान्तों द्वारा किया जाने लगा और प्रौद्योगिकीय ज्ञान ने क़र्म विभाजन तथा अन्तर्निर्भरता के नए आधारों द्वारा दिया जाने लगा और प्रौद्योगिकीय ज्ञान ने श्रम विभाजन तथा अन्तर्निर्भरता के नए आधारों को जन्म दिया और इस प्रकार धर्म केवल व्यक्गित विश्वास तक ही सीमित होने लग। इस प्रकार मानव तथा प्रकृति के सम्बन्धों के विषय में पारलौकिक के स्थान पर तार्किक तथा अनुभवाश्रित (Emmirical) ज्ञान का महत्व बढ़ने लगा। इसी प्रक्रिया को समाजशास्त्र में 'लौकिकीकरण' (Secularization) कहा जाता है। परन्तु अविकसित तथा अर्द्धविकसित देशों में धर्म से जुड़े विश्वास प्रभावकारी रहते है और लौकिक उपलब्धियों के लिए भी पारलौकिक शक्तियों की पूजा-अर्चना की जाती है। उन समाजों में सामूहिक पूजा-अर्चना का बहुत महत्व है और लौकिक घटनाओं के पारलौकिक स्पष्टीकरण दिए जाते है।

धर्म को परम्परागत कर्मकाण्डों के सन्दर्भ में समझा जाता रहा है और 'शिक्षा' को एक आधुनिकीकरण करने वाले बल के रुप में समझा जाता रहा है। आधुनिकीकरण में तार्किकता का तत्व छुपा है। अत: धर्म और शिक्षा की अन्त:क्रिया समाजशास्त्रीयों के लिए महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र प्रस्तुत करती है। भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों व कालेजों में पढ़ने वाले विधार्थी एक ऐसी परिस्थिति में होते है जहां एक ओर इनको परम्परागत दबावों से जूझना पड़ता है तथा दूसरी ओर आधुनिकताओं के बल के अनुरुप वे अपने व्यक्तित्व को ढालने का दबाव महसूस करते रहते है। यह महत्वपूर्ण प्रश्न है कि क्या भारत में भी ऐसी परिस्थिति मौजूद हैं और क्या ऐसी परिस्थितियों में युवको में धार्मिक परम्पराओं की वृत्तियों की मानसिकता (धार्मिकता) निरन्तर बनी हुई है।

अध्ययन का उद्देश्य - 'दयानन्द एंग्लों वैदिक (पोस्ट ग्रेजुएट) महाविद्यालय' मुजफ्फरनगर के विधार्थियों में धार्मिक, वृत्तियों का एक अनुभवाश्रित समाजशास्त्रीय अध्ययन है। जिसमें यह जानने का प्रयास किया गया है कि इस महाविद्यालय के विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के युवाओं में धार्मिकता, पायी जाने वाली विभिन्न वृत्तियों की प्रकृति और मात्रा क्या है।

निदर्शन - इस महाविद्यालय के 4500 विधार्थियों में से अध्ययन के लिए 134 विधार्थियों को निदर्शन में स्तरीकृत निदर्शन के आधार पर चुना गया। स्तरीकृत नमूने में एक अंश तक उद्देश्यपरकता का भी ध्यान रखा गया है। क्योंकि इस प्रकार के लघु अध्ययनों में निदर्शन को अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण बनाने में कठिनाइयॉ आती है। स्तरीकृत नमूने की विशेषताऍ निम्न तीन तालिकाओं के माध्यम से प्रकट की जा सकती है।-

(अ) निदर्शन में सकायवार विधार्थियों की विवरण तालिका-

क्र.सं.	संकाय	निदर्शन में विद्यार्थियों की संख्या
1	विज्ञान	53
2	कला	41
3	व्यवसायिक शिक्षा	25
4	कानून	15

N = 134

(ब) निदर्शन में विभिन्न संकायों में छात्र/छात्राओं की विवरण तालिका-

क्र.सं.	संकाय	निदर्शन में छात्रों की संख्या	निदर्शन में छात्राओं की संख्या	योग
1	विज्ञान	28	25	53
2	कला	12	29	41
3	व्यवसायिक शिक्षा	17	8	25
4	कानून	10	5	15
	योग			134

(स) निदर्शन में विभिन्न संकायों में नगरीय/ग्रामीण छात्र/छात्राओं की विवरण तालिका- (देखे आगे पृष्ठ पर)

सर्वेक्षण तथा सर्वेक्षण तकनीकी - महाविद्यालय में युवक/युवतियों में धार्मिकता, आधुनिकता तथा नैतिकता सम्बन्धी वृत्तियों का पता लगाने के लिए `M.S.R. Sarma' द्वारा तैयार किए गए एक मनोवृत्ति मापन पैमाने को संशोधित कर प्रयोग किया गया है।

हिन्दू तथा मुस्लिम छात्र-छात्राओं के धार्मिकता स्कोर (देखे आगे पृष्ठ पर)

134 विधार्थियों के साक्षात्कार से प्राप्त ऑकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सम्पूर्ण निदर्शन का धार्मिकता स्कोर उच्च है, जो यह प्रकट करता है कि महाविद्यालयों में शिक्षारत छात्र व छात्राऍ धार्मिक भावनाओं में मान्यता रखते है तथा धर्म के प्रतिबद्धता में उनका विश्वास है। आत्मा, जैसे विचारों से वे सहमत है और अधिकतर छात्र व छात्राएं ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को ईश्वरीय मानते है तथा अपने ही धर्म में विवाह करने में विश्वास रखते है। यही नहीं स्कूलों में धार्मिक शिक्षा दिए जाने के पक्षधर है तथा ईश्वर को सर्वशक्तिमान मानते हुए धार्मिक संगठनों की सदस्यता लेने के पक्षधर है।

छात्र-छात्राओं के धार्मिकता स्कोर(देखे आगे पृष्ठ पर)

लिंग भेद के आधार पर धार्मिकता सम्बन्धी विश्वासों का विश्लेषण इसीलिए आवश्यक हो जाता है क्योंकि यह आम विश्वास है कि धार्मिक विश्वासों व भावनाओं की रक्षा और सफलता के पीछे स्त्रियों की प्रभावकारी भूमिका है परन्तु इस सर्वेक्षण के आंकाड़े यह सिद्ध करते है कि धार्मिक भावनाओं और विश्वासों के मामले में छात्र और छात्राओं में कोई महत्वपूर्ण भेद नहीं है। छात्र तथा छात्राओं में काई महत्वपूर्ण भेद नही है। छात्रों का

प्रतिशत स्कोर 60 है, जबकि छात्राओं का प्रतिशत 58.7 है। आम विश्वास और एक सर्वेक्षण आधारित अनुभव सिद्ध ज्ञान में वे इस भेद का कारण यह भी है कि प्राय: हिन्दु धर्म में सभी धार्मिक कर्मकाण्ड़ों के लिए विस्तृत संयोजन की आवश्यकता पड़ती है, जिसको प्राय: स्त्रियां ही घर में करती रहती है। इसीलिए धार्मिकता से संदर्भित उनकी दैनिक चर्चा को देखकर ही यह आम धारणा बनी हुई है परन्तु दूसरी ओर यह भी कहा जा सकता है कि छात्र/छात्राओं के विद्यालयी जीवन के बाद यह भेद अधिक स्पष्ट हो जाता है ओर स्त्रियां अधिक धार्मिक भावनाओं की ओर अग्रसर हो जाती है। दूसरी ओर एक परिकल्पना यह भी है कि विद्यालयी जीवन के बाद छात्राओं को अपने लक्ष्य प्राप्ति में अनेक बाधाएं आती है और वे रिट्रीटिज़्म के कारण अपना रुख धार्मिक कर्मकाण्ड़ों की ओर अधिक मोड़ लेती है।

नगरत्व का प्रभाव धार्मिक विश्वासों पर पड़ता है अथवा नहीं। प्राय: यह समझा जाता है कि ग्रामीण युवक/युवतियां अधिक धार्मिक विश्वास और भावनाओं वाले होते है परन्तु नगरीय छात्र/छात्राओं में धार्मिक विश्वास व भावनाएं अधिक पाई जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि नगरीय परिवारों के परिवेश में धार्मिक विश्वासों व भावनाओं का संचरण अधिक है। इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि ग्रामीण क्षेत्रों से आए इस महाविद्यालय के छात्र/छात्राए अधिकतर मध्यम व निम्न जातियों की श्रेणी से आते है। जिनके पास अभी वह विस्तृत कर्मकाण्डीय पद्धति और धार्मिक समाजीकरण तंत्र नहीं है, जो नगरीय मध्यमवर्गीय तथा उच्च वर्गीय परिवारों में पाया जाता है। तीर्थ यात्रा, कथाए, व्रत, कर्मकाण्डों की विस्तृत व्यवस्था का अभी भी निम्न जातियों में अभाव है और परिवारों में दैनिक कार्यों में धार्मिकता का संचरण कम मात्रा में होता है। यह भी कहा जा सकता है कि इसका एक मुख्य कारण उनके कम संस्कृतिकृत होने के कारण है।

कला, विज्ञान, कानून व व्यवसायिक शिक्षा से सम्बन्धित छात्र-छात्राओं के धार्मिकता स्कोर (देखे आगे पृष्ठ पर)

आम धारणा के विपरीत विज्ञान के छात्र/छत्राओं में धार्मिक विश्वास है। इससे यह परिणाम निकलता है कि वैज्ञानिक प्रवृत्तियॉ एक अलग बात है और विज्ञान के विषयों का अध्ययन अलग। वर्तमान में धार्मिक विश्वासों के जन माध्यमों द्वारा कि सबलीकरण के कारण भी ऐसा प्रतीत होता है कि धार्मिकता की वृत्ति में वृद्धि हो रही है। इस सर्वेक्षण के ऑकड़ों से स्पष्ट होता है कि विज्ञान के छात्र-छात्राओं में धार्मिकता की वृत्ति सर्वाधिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Durkheim, Emile 1912 - "Ememtry Froms of Religious life"
2. Tylor, E.B. - "Primitive Culture" p. 24
3. Malinowski, B - "Magic, Seience and Religions and other Essays"
4. Frazer, J. - "The Golden Vough, p. 459
5. Green, Arnold W. - "Sociology- An Analysis of life in Modern Society" p. 449
6. Weker, max 1922 - "Sociology of Religion"

(स) निदर्शन में विभिन्न संकायों में नगरीय/ग्रामीण छात्र/छात्राओं की विवरण तालिका-

क्र.सं.	संकाय	निदर्शन में नगरीय छात्र तथा छात्राओं की संख्या	निदर्शन में ग्रामीण छात्र तथा छात्राओं की संख्या	योग
1	विज्ञान	42	11	53
2	कला	29	12	41
3	व्यवसायिक शिक्षा	17	8	25
4	कानून	12	3	15
	योग			134

हिन्दू तथा मुस्लिम छात्र-छात्राओं के धार्मिकता स्कोर

धर्म	सहमत/बिल्कुल सहमत स्कोर	प्रतिशत	असहमत/बिल्कुल असहमत स्कोर	प्रतिशत	अनिर्णीत स्कोर	प्रतिशत
हिन्दु	825	60.66%	393	28.89%	142	10.44%
मुस्लिम	133	53.62%	55	22.17%	60	24.19%

छात्र–छात्राओं के धार्मिकता स्कोर

धर्म	सहमत/बिल्कुल सहमत स्कोर	प्रतिशत	असहमत/बिल्कुल असहमत स्कोर	प्रतिशत	अनिर्णीत स्कोर	प्रतिशत
छात्र	492	60%	221	26.95%	107	13%
छात्राएँ	449	58.77%	233	29.19%	96	12%

कला, विज्ञान, कानून व व्यवसायिक शिक्षा से सम्बन्धित छात्र–छात्राओं के धार्मिकता स्कोर

अध्ययन विषय	सहमत/बिल्कुल सहमत स्कोर	प्रतिशत	असहमत/बिल्कुल असहमत स्कोर	प्रतिशत	अनिर्णीत स्कोर	प्रतिशत
कला	286	59.58%	143	29.79%	51	10.6%
विज्ञान	400	62.99%	162	25.51%	73	11.49%
कानून	109	53.96%	63	31.18%	30	14.85%
व्यवसायिक शिक्षा	161	53.48%	91	30.23%	49	16.27%

****

कामकाजी महिलाओं के प्रति परिवार के वयोवृद्ध की अपेक्षाओं के विभिन्न आयाम

राकेश शिंदे *

प्रस्तावना – कामकाजी महिलाओं के प्रति समाज एवं परिवार में प्राय: व्याप्त है कि वे स्वतंत्र पक्षी की तरह अपने आरिकि पंख पसार के समाज एवं परिवार में विचरण करती है, स्वतंत्रता की स्वामिनी, संपत्ति अर्जिता की भूमिका पर न कोई प्रश्न चिन्ह लगता है, और न ही उन्हें किसी प्रकार के संकट का सामना करना पड़ता है। पढ़ी लिखी कामकाजी महिलाओं के लिये यही धारण व्याप्त है।

नारी शिक्षा के बढ़ते प्रचार प्रसार एवं महिला शिक्षा की बढ़ती दर ने उन्हें धूंधट से बहार निकालकर बाह्य–दुनिया की कामकाजी महिला बना दिया है, गृहस्थी के साथ–साथ अपने कामाकाजी क्षेत्र में उनकी भूमिका को दोहरा किया है। उनकी बढ़ती कामकाजी प्रवृत्तियाँ उनके जीवन के विविध पक्ष की विविध भूमिकाओं के निर्वाह में भूमिकाओं की प्राथमिक एवं द्वितियक भूमिका के चुनाव में दुविधा उत्पन्न किया है, या यू कहें की भूमिका संघर्ष उत्पन्न किया है।

भूमिका–संघर्ष की तीव्रता प्राय: परिवार की संरचना से संबंधित है। भारतीय सामाजिक संरचना की अद्धितीय संयुक्त परिवार प्रथा प्रणाली औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के कारण उनका प्रतिशत घटा है, और एकल परिवार का प्रतिशत बढ़ा है। किंतु उसकी आत्मा आज भी जीवित है, एकल परिवार में पति–पत्नि एवं संतान अपना नीजि स्वतंत्र जीवन व्यतीत करते है, जबकि पितृसत्तात्मक परिवार में वयोवृद्ध सदस्य परिवार का मुखिया एवं अपने सदस्यों पर निरंकुश शासक की तरह शासन करता है, वह आदेश देता है एवं उसे आदेश का पालन परिवार के प्रत्येक सदस्य स्त्री हो या पुरूष करते है। अपने सदस्यों से वह अपेक्षा रखता है और अपेक्षाओं की पूर्ति की इच्छा रखते है। परिवार के वयोवृद्ध सदस्य अपने परिवार की महिलाओं से पारिवारिक संस्कृति, धर्म, आतिथ्य एवं परम्परागत जीवन शैली, महिलाओं के वैवाहिक प्रतिमान जैसी अनेक ऐसी अपेक्षांए होती है जिनका अनुपालन आवश्यक अनिवार्य होता है। महिलाओं के प्रति उनका दृष्टिकोण गृहस्थ हो या कामकाजी समान ही रहता है।

इस विषय पर आधारित वास्तविक अपेक्षाओं में कामकाजी महिलाओं में भूमिका–संघर्ष की स्थिती क्या है, इस बात की जाँच पड़ताल हेतु प्रस्तुत शोध पत्र में निम्न उपकल्पना का निर्माण किया है।

उपकल्पना – कामकाजी महिलाओं में परिवार के वयोवृद्ध की अपेक्षाओं से भूमिका – संघर्ष उत्पन्न होता है।

- परिवारिक संस्कृति एवं धार्मिक कर्मकाण्ड के निर्वाह में भूमिका संघर्ष होता है।
- पांरपरिक वैवाहिक प्रतिमान को धारण न करने पर भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है।
- वयोवृद्ध के मान – सम्मान की अनजाने में अवहेलना भूमिका संघर्ष पैदा करता है।
- पाश्चात्य पहनावा एवं केश – कर्तन करवाने में भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है।
- आतिथ्य एवं शिष्टाचार निर्वाहन में कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है।

पद्धति – तथ्यों की जॉच पडताल हेतु निदर्शन पदद्धति का चुनाव किया गया है। निदर्शन पद्धति से 50 कामकाजी महिलाओं का चुनाव किया है, जो संयुक्त परिवार की सदस्य है।

तथ्य संकलन का क्षेत्र – इन्दौर नगर के सांख्यिकी विभाग से आंकडो को एकत्रित कर उन्हें लाटरी पद्धति द्वारा निदर्शन में सम्मिलित किया है।

निदर्शन के लिए 50 कामकाजी महिलाओं का चुनाव किया है।

विभिन्न आयाम –

1. परिवारिक संस्कृति एवं धार्मिक कर्मकाण्ड के निर्वाह में भूमिका संघर्ष होता है – परिणाम स्वरूप वयोवृद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त करते है –

प्रत्येक परिवार की अपनी नीजि संस्कृति होती है, एवं धार्मिक कर्मकाण्ड होते है। जिसका निर्वाह करना प्रत्येक सदस्य के लिए आवश्यक होता है। गृहस्थ महिलाएँ ऐसे अवसरों को आंनद – उत्साह से सम्पन्न करती है, उनके लिए पूर्व आयोजन एवं व्यवस्था की जाती है। वे प्रत्येक कार्यक्रम में अपनी सम्पूर्ण भागीदारी देती है। किंतु जब कामकाजी महिलाओं का प्रश्न उठता है, वहॉ ऐसे अवसरों पर वें गृहस्थ महिलाओं की तुलना में अपेक्षाकृत उनकी सक्रियता पर प्रश्नचिन्ह लगाते है, उनकी सक्रियता कम रहती है। उनका अधिकतम समय अपने कार्यस्थल पर व्यतीत हो जाता है, अत: वे वयोवृद्ध की अपेक्षानुसार पारिवारिक संस्कृति एवं धार्मिक कर्मकाण्ड को सम्पन्न करने में भागिदारी नहीं कर पाती है। अत: परिवार के वयोवृद्ध उनके प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते है।

साक्षात्कार के दौरान इस विषय की जॉच पडताल पर निदर्शन में आनेवाली 70 प्रतिशत कामकाजी महिलाओं ने इस तथ्य को स्वीकार किया हैं, कि वे अपनी संपूर्ण भागीदारी की भूमिका का निर्वाह नहीं कर पाती है।

अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि संयुक्त परिवार की कामकाजी महिलाएं परिवार के वयोवृद्ध की कसौटी पर खरी नहीं उतरती है, अत: परिवार के वयोवृद्ध उनके प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते है जिसके परिणाम स्वरूप कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष होता है।

2. पांरपरिक वैवाहिक प्रतिमान को धारण न करने पर भूमिका संघर्ष – परिणाम स्वरूप वयोवृद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त करते है–

भारतीय सामाजिक संरचना जीवन के विविध पक्ष पर एक विशेष

*(समाजशास्त्र) माँ शारदा निवास, इन्द्रा कॉलोनी, जेतपुरा, जिला – धार (म.प्र.) भारत

दृष्टिकोण रखती है। जो मानवीय सामान्य जीवन के महत्वपूर्ण अंग होते है।

भारतीय समाज में विवाहित एवं अविवाहित महिलाओं को आज अवलोकन से ही चिन्हित करना आसान है। विवाहित महिलाएं माथे पर बिंदिया मांग में सिन्दुर, गले में मंगलसुत्र, पैरो में बिछिया धारण किये रहती है, जो इस बात का प्रमाण है कि महिला विशेष विवाहित है।

वर्तमान में तो कुमारियों इस फैशन के रूप में धारण करती है। किंतु विवाहिता के लिए ये वैवाहिक प्रतिमान अनिवार्य है। विशेष कर संयुक्त परिवार के वयोवृद्ध सदस्य इसे अनिवार्य के साथ शुभ – अशुभ की धारणा से जोडते है, महिलाएँ भी इन वैवाहिक प्रतीक चिन्हों को सहर्ष धारण करती है।

किन्तु जैसा कि हम जानते है आधुनिक युग में फैशन के बदलते प्रतिमान में कामकाजी महिलाएँ परम्परागत प्रतिमानों में बिना किसी संकोच के आसानी से बदलाव कर लेती है। वे तार्किक युग में जीती है अत: प्रत्येक परम्परा का तार्किक विशलेषण उन्हें परम्परागत प्रतिमानों में प्रगाढ आस्था में लिप्त नहीं होने देता, यही कारण है कि वैवाहिक प्रतिमान को धारण करना अनिवार्य नहीं समझती है। फैशन के तौर वे फैशन के अनुसार उनमें बदलाव करती है।

निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते है कि इन्हीं कारण से वे वयोवृद्ध की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतरती है। जिस वजह से उन्हे भूमिका संघर्ष करना पड़ता है। क्योंकि वे धारण करने न करने की दुविधा से युक्त होती है, जो भूमिका संघर्ष का कारण होता है।

3. वयोवृद्ध के मान सम्मान की अनजाने में अवहेलना भूमिका संघर्ष उत्पन्न करता है – परिणाम स्वरूप वयोवृद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त करते है –

भारतीय संयुक्त परिवार में परिवार का वयोवृद्ध सदस्य अपने पितसत्तात्मक परिवार का निरंकुश शासक होता है। वह अपने परिवार पर शासन करता है, वह आदेश देता है, एवं उसके आदेश का पालन परिवार के सभी सदस्य करते है। वह परिवार का पुज्नीय, सम्मानीय एवं सत्ताधारी होता है। वह परिवार में सभी सदस्य से यह अपेक्षा करता है कि उम्र दराज व्यक्तियों का मान – सम्मान व उनकी अवाश्यकता कर पूर्ति होती रहे। कोई भी कार्य ऐसा न हो जो उनके मर्म स्थल पर चोट करें।

भारतीय परिवार में भी वयोवृद्ध सम्मानीय एवं पूज्यनीय है, रहे है, और सदैव रहेंगे। वरिष्ठ नागरिक को परिवार ही नहीं हमारे देश मे भी सीनियर सिटीजन के हैसियत से विशेष सुविधाएँ प्रदान की है रेलवे, टेक्स एवं अन्य सार्वजनिक सुविधा देने में अग्रणिता प्रदान की है।

निश्चित ही वयोवृद्ध पारम्परिक सांस्कृतिक सम्पदा के हस्तांतरण का कार्य पीढी दर पीढी करते है। प्राय: भारतीय पारिवारिक संरचना में संपूर्ण सम्मान वयोवृद्ध के लिए सुरक्षित है। परिवार के सभी सदस्य उनकी अपेक्षाओं की पूर्ति में लगे रहते है, इसमें कोई दो मत नहीं ।

परिवार के पुरूष काम – धाम के लिए घर से बाहर रहते है एवं गृहस्थ महिलाएँ उनकी सेवा में लगी रहती है। किन्तु प्रश्न उन कामकाजी महिलाओं के संबंध में उठता है, जिन्हें बाहरी दुनिया के कामकाज से इतना अतिरिक्त समय नहीं मिलता। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि वे वयोवृद्ध के मान – सम्मान का ख्याल नहीं रखती है।

वास्तविकता की जॉच पर कामकाजी महिलाओं ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि गृहस्थी एवं आर्थिक क्षैत्र में समाङ्गातर दिशाओं में कार्य की व्यस्तता में वयोवृद्ध का मान सम्मान उस अनुपात में नहीं कर पाती है, जो अपेक्षित है। अत: जाने अनजाने उनके मान सम्मान में कमी हो जाती है। यही कारण है कि वयोवृद्ध के मान सम्मान उनकी भूमिका को भूमिका संघर्ष की स्थिति में बदल देता है। निदर्शन में आई 36 प्रतिशत कामकाजी महिला सूचनादाता ने उपरोक्त तथ्य को स्वीकार किया है।

अत: निष्कर्ष रूप में कहां जा सकता है कि कामकाजी महिलाएँ अपेक्षाओं की पूर्ति काम की व्यस्तता के कारण पूरी नहीं कर पाती है।

4. पाश्चात्य पहनावा एवं केश – कर्तन करवाने में भूमिका संघर्ष – परिणाम स्वरूप वयोवृद्ध प्रतिक्रिया –

उच्च शिक्षा के परिणाम स्वरूप महिलाओं की सामाजिक आर्थिक गतिशीलता ने उन्हें उस मुकाम पर पहुचा दिया है। जहॉ वे अपने जीवन – शैली के मानक खुद निर्धारित कर रही है। आधुनिकरण एवं पाश्चात्य सभ्यता तथा शिक्षित नारियों का अपने जीवन – शैली के प्रति बदलतें दृष्टिकोण एवं कामकाजी क्षेत्र का पर्यावरणीय प्रभाव ऐसे कारण है जो कि परम्परागत रहन – सहन की जीवन – शैली में बदलाव के साथ – साथ भारतीय नारियों की परम्परागत पहनावा में आमूल–चूल परिवर्तन कर रहें है।

आधुनिक रहन – सहन के पहनावे प्रचार – प्रसार एवं आवागमन के साधन, मिडिया एवं दुरदर्शन के प्रभाव स्वरूप एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक यात्रा करते – करते फैल रहे है। उस पर शिक्षित कामकाजी महिलाओं की आर्थिक आत्म निर्भरता स्वयं की जीवन शैली के प्रति नीजि दृष्टिकोण को विकसित करने में सहायक होती है। कामकाजी महिलाएँ चूँकि काम काजी है अत: वे अतीत के स्थान पर वर्तमान जीवन शैली में जीती है। आधुनिक पहनावा पल – पल बदलते फैशन प्रतिमान नयी हेयर स्टाइल उनकी पसंद बन गई है। आलोचना के स्थान पर वे एक – दूसरे प्रंशसा के तोहफे देती है, रहन सहन की शैली में परिवर्तन को वे शीघ्र अपनाती है एवं अपनी पहचान बनाने में सक्षम होती है, इसके विपरित गृहस्थ महिलाएँ अपनी गृहस्थी के दायरे में अपनी परम्परागत पहनावे के साथ आधुनिक पहनावे को घटा बडा सकती है।

इसका तात्पर्य यह नहीं की गृहस्थ महिलाएँ आज भी ग्रामीण लिबास को धारण करती है। वे फैशन में पीछे नहीं है किंतु संतुलन को कायम करने की कला उनके पास है। आधुनिक परिधान एवं केश – कर्तन के समय में वे परिवार के वयोवृद्ध के अपने प्रति दृष्टिकोण को नजर अंदाज नहीं करती है।

अत: इस हेतु उन्हें किसी प्रकार का भूमिका संघर्ष की दुविधा से गुजरना नहीं पड़ता है, सहज ही स्वीकार लेती है, कि हमारे परिवार में यह सब चलता नही है।

किंतु आधुनिकता को अंगीकार करने वाली काम – काजी महिलाएं जब फैशन के आधुनिक परिधान एवं केश कर्तन की नई स्टाइल अपनाती है, तब यह विचार की उन्हें किसी प्रकार कोई अफसोस या मानसिक कष्ट नही होता है, नीराधार बेबुनियाद तथ्य है।

वास्तविकता कि जॉच पडताल के लिए निदर्शेन में आई महिलाओं से अनुसंधान के दौरान पूछा कि क्या आधूनिक परिधान एवं केश कर्तन को व्यवहारिक रूप में अपनाने से क्या भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है

प्रस्तुत प्रश्न के उत्तर में निदर्शन में आई महिला सूचनादाता की 48 प्रतिशत महिलाओं ने इस तथ्य को स्वीकार किया है, कि उन्हें भूमिका संघर्ष होता है। अपने वयोवृद्ध की अपेक्षाओं की अवहेलना करते समय।

निष्कर्ष रूप में कहां जा सकता है, कि कामकाजी महिलाएँ अपना रहन सहन पहनावा बदलती है, जिसमें करे या न करे की दुविधा भूमिका संघर्ष उत्पन्न करती है, किन्तु इस हेतु वे करती वही है जो उनको करना होता है। महिलाओं के केश कर्तन के संबंध में परम्परागत ढकियानुसी विचार का

अस्तित्व कामकाजी महिलाओं के लिए नहीं है। वे अतार्किक क्रियाओं में विश्वास नहीं करती है।

5. अतिथ्य एवं शिष्टाचार के निर्वहन में कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष – परिणाम स्वरूप वयोवृद्ध की प्रतिक्रिया –

अतिथि दैवो भव: का प्रत्यय भारतीय विचारधार की आत्मा है। परिवार में आने वाला प्रत्येक अतिथि पूज्यनीय माननीय एवं सम्मानीय होता है। उन्हे हर्षित करने के प्रयास में परिवार के सभी सदस्य तन – मन – धन से करते है।

अतिथि के प्रति शिष्टाचार के भाव – अतिथि को भाव–विभोर करने के साथ ही परिवार की सांस्कृतिक छवि को प्रतिबिम्ब करता है। समाज में परिवार को शिष्ट भाव से पहचान मिलती है।

परिवार के वयोवृद्ध यह अपेक्षा करते है कि कुछ ऐसा न घट जाए जिससे परिवार की छवि मैली हो। अत: वे परिवार की महिला सदस्यों से यह अपेक्षा करते है, कि वे अतिथि के प्रति अतिथ्य एवं शिष्टाचार बनाए रखे।

इस संदर्भ में प्राय: गृहस्थ महिलाएँ अतिथ्य एवं शिष्टाचार के निर्वाह के लक्ष्य को पुरा करने में अपनी कमर कस लेती है। किंतु लक्ष्य निर्धारण कामकाजी महिलाओं से नहीं की जा सकती, क्यूंकि उनकी दोहरी भूमिका कोई न कोई विंध्न उत्पन्न करती है, समय का अभाव स्वयं के कार्य को पूर्ण करने में परेशानी पैदा करती है।

इस लक्ष्य की वास्तविक जानकारी हासिल करते हुए निदर्शन में आई 51 प्रतिशत महिला सूचनादाता ने यह स्वीकार किया की समयाभाव में व अतिथ्य सत्कार में उस मुकाम पर नहीं पहुँची है जहॉ परिवार की अन्य गृहस्थ महिलाएँ है। थकान एवं समयाभाव के कारण अतिथ्य करना अतिथि को समय देना संभव नहीं। यही कारण है कि वे वयोवृद्ध की अपेक्षाओं का पूर्ण रूपेन अनुपालन नहीं कर सकती। ऐसी स्थिति कि अतिथ्य एवं शिष्टचार का निर्वाह चाहकर भी नहीं कर पाती, अत: भूमिका संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है।

उपरोक्त प्राप्त तथ्यों के आधार पर तथ्यों का विश्लेषण इस तथ्य की पुष्टि करता है, कि परिवार के वयोवृद्ध को कामकाजी महिलाओं से अपेक्षाओं के विभिन्न आयाम अपेक्षित होते है, जिसकी पूर्ति के आभाव में भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

साइबर अपराध (एक सामाजिक चुनौती)

डॉ. रश्मि दुबे *

प्रस्तावना – आज अगर मानव सभ्यता विकास की ऊँचाइयों पर है। तो अपराध और अपराधियो ने भी प्रौद्योगिकी व तकनीक को अपना लिया है। चूंकि आज कम्प्यूटर का प्रयोग जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में होने लगा है और हम साइबर युग में जी रहे है। इसलिए हमारे समाज मे साइबर अपराध का ग्राफ लगातार ऊपर की ओर उठता जा रहा है। साइबर अपराध के अंतर्गत वे सभी अपराध आते है। जो किसी न किसी रूप मे कम्प्यूटर व नेट से संबंधित होते है।

सामान्यतया साइबर का संबंध कम्प्यूटर से जोड़ा जाता है। लेकिन अपराध के संदर्भ में साइबर का संबंध सूचना प्रोद्योगिकी से है इस प्रकार सूचना प्रोद्योगिकी से संबंधित सभी प्रकार के अपराध साइबर अपराध की श्रेणी में आते है। आज कम्प्यूटर और सूचना प्रोद्योगिकी ने हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे अपनी जगह बना ली है। कम्प्यूटर मोबाइल फोन, इंटरनेट, कम्प्यूटरीकृत बैकिग, क्रेडिट व डेबिट कार्ड आदि का प्रयोग आज काफी बढ़ गया है। इन सूचना प्रौद्योगिकी संबंधित चीजों को प्रचलन बढ़ा है तो इनसे संबंधित अपराध भी अब प्रकाश मे आने लगे है। सूचना प्रोद्योगिकी के अधिकाधिक प्रयोग के कारण यादि आज साइबर अपराध के मामले बढे है तो सूचना प्रौद्योगिकी ने ही हमे वे उपकरण व तकनीक भी उपलब्ध करायी है। जिनकी सहायता से साइबर अपराधो की रोकथाम की जा सकती है। हालांकि आजकल अपराधी लगभग सभी तरह के अपराधों मे तकनीक एवं प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करते है लेकिन साइबर अपराध तो विशुद्ध रूप से तकनीक एवं प्रौद्योगिकी आधारित ही होते है पिछले कुछ वर्षो के दौरान देश भर मे साइबर अपराध भी काफी तेजी से बढ़े है। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम एवं भारतीय दण्ड संहिता की विभिन्न धाराओ के अंतर्गत सन 2005 मे कुल 481 साइबर के मामले दर्ज किये गये थे जबकि सन् 2006 के दौरान देशभर के थानों मे साइबर अपराध के कुल 453 मामले पंजीकृत किए गए। साइबर अपराधों को अंजाम देने वाले कुल अपराधियो में से 70 फीसदी से भी अधिक अपराधी 18-30 वर्ष के आयु वर्ग के थे। इस तथ्य से पता चलता है कि तकनीक आधारित साइबर अपराधों को अधिकतर युवा अपराधियो द्वारा ही अंजाम दिया जाता है। 2006 के मुकाबले 2016-17 मे साइबर क्रइम लगभग 26 प्रतिशत बढ़ा है।

दुनिया मे इंटरनेट के उपयोग में लगातार इजाफा हो रहा है। जिसके चलते साइबर अपराध में भी वृद्धि हो रही है। भारत में भी इंटरनेट क्राइम का ग्राफ तेजी से बढ रहा है। देश का कोई भी राज्य इससे अछूता नहीं है। पहले जहाँ साइबर अपराध के मुख्य केन्द्र दिल्ली मुम्बई कोलकाता पूणे जैसी मैट्रो सिटी थी वही आज देश का कोई शहर अब ऐसा बचा जो इसकी गिरफ्त मे न हो। अमेरिकी कंपनी सिमैन्टेक की एक रिर्पोट के अनुसार साइबर अपराध के मामले भारत जहाँ विश्व में पाँचवे पायदान पर है। वहीं इस देश में साइबर क्राइम तेजी से पॉव पसार रहा है। भारत में तीन चौथाई इंटरनेट उपभोक्ता किसी न किसी तरह साइबर से प्रभावित होते है और इस लिहाज से भारत सबसे बुरी तरह प्रभावित देश माना जा सकता है। सुरक्षा समाधान उपलब्ध कराने वाली फर्म सिमैन्टक ने अपने एक अध्ययन में निष्कर्ष निकालते हुए बताया है कि वैश्विक स्तर पर लगभग 65 फिसदी इंटरनेट उपयोक्ता साइबर क्रइम के शिकार होते है। जबकि भारत मे यह संख्या 76 प्रतिशत है। इनमें कम्प्यूटर वायरस आनलाइन क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी और अइडेन्टी चोरी जैसे अपराध शमिल है। देश में साइबर संबंधी अपराधों की घटनाओं मे करीब 50 फीसदी की बढोत्तरी हर साल हो रही है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (CNCRBJ) द्वारा जारी रिपोर्ट में इस संबंध मे जानकारी दी गई है। इसके अनुसार सबसे अधिक साइबर अपराध 'पोर्नोग्राफी' से संबंधित है। इनमे सबसे खास बात यह है कि इन वारदातो को अंजाम देने वाले अपराधियो की उम्र 16 से 30 वर्ष के बीच देश के कई शहरो में अनेक बार ऐसी वारदातों को अन्जाम देने वाले अपराधी पकड़े जा चुके है।

वस्तुत: हिन्दुस्तान के सूचना भंडार पर बाहरी देशों की लगातार नजर बनी रहती है। जबकि देश के सभी राज्यों का एक पक्ष यह भी है कि साइबर अपराध की तेजी से बढ़ती घटनाओं के मुकाबले पुलिस और इफोर्समेंट एजेसियाँ कम्प्यूटर तकनीक के मायाजाल से पूरी तरह वाकिफ नही है हैकिंग डाटा चोरी डिजिटल हस्ताक्षर सर्विलेल और गोपनीय दस्तावेजो को खुफिया हमले से बचाने के लिए राज्यों में अपनाई जा रही कम्प्यूटर इमर्जेन्सी रिस्पांस टीम (सर्ट-इन) तकनीक भी पूरी तरह से सफल साबित नहीं हो पा रही है। ऐसा माना जा रहा है। कि आई टी दक्षता के मदेनजर आने वाले समय से सभी प्रदेशो मे साइबर अपराध अतंकवाद को पीछे छोड़ देगा वस्तुत: यह साइबर आतंकवादी ऐसे लोग है जो किसी सामाजिक, धार्मिक, सैद्धांतिक राजनीतिक या अन्य उदेश्यों को पूरा करने के लिए कम्प्यूटर या कम्प्यूटर तंत्र को बाधित कर लोगों को डरा धमकाकर अपने हितो की पूर्ति करते है।

भारत के आपराधिक परिदृश्य के लिए साइबर अपराध भले ही एक नई चीज हो परंतु विकसित देश पिछले काफी समय से साइबर अपराधो का दंश झेलने को अभिशप्त है । भारत में सूचना प्रोद्योगिकी का उपयोग बढ़ा है, तो साइबर अपराधो के मामले भी अब प्रकाश मे आने लगे है। भारत मे साइबर अपराध से संबंधित मामले सूचना प्रौद्यौगिकी अधिनियम 2000 के अंतर्गत दर्ज किये जाते है। इसके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता की विभिन्न धाराओ के अंतर्गत भी साइबर अपराध के मामले दर्ज किए जाते है। साइबर अपराध वर्ग के अंतर्गत अग्रलिखित प्रकार के अपराध आते है।

1. इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों पर अश्लील प्रसारण/प्रकाशन।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर, उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

2. कम्प्यूटर तंत्र की हैकिंग।
3. कम्प्यूटर स्त्रोत से छेड़छाड।
4. किसी कम्प्यूटर तंत्र के डाटाबेस तक अनाधिकृत रूप सें पहुचना।
5. अश्लील (डचड) का प्रसारण।
6. बेबसाइट के जरिए बैकिंग धोखाधड़ी।
7. किसी अन्य ई-मेल खाते का अनाधिकृत रूप से प्रयोग
8. इंटरनेट के जरिए किसी को धमकी देना।
9. इंटरनेट के जरिए किसी की मानहानी करना।
10. सामाजिक बेवसाइटो पर किसी अन्य विवरण से छेड़छाड़।
11. ई-मेल हैकिंग।
12. बेबसाइट हैंकिग
13. इलेक्ट्रोनिक निजता भंग करना।
14. गलत इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षरो का प्रकाशन
15. संरक्षित कम्प्यूटर तंत्र तक पहुचने का प्रयास।

इसमें हैकिग को एक सबसे खतरनाक साइबर अपराध माना जाता है क्योंकि इसके जरिए किसी भी बेबसाइट से महत्वपूर्ण सूचनाएँ व डाटा चुरा कर उनका इस्तेमाल विभिन्न प्रकार की आतंकवादी गतिविधियों और अपराधिक कृत्यों के लिए किया जा सकता है। हैकिंग का अर्थ है, अनाधिकृत रूप से किसी भी बेबसाइट या ई-मेल खाते तक पहुँचकर उससे डाटा आदि चुरा लेना। हाल ही में राष्ट्रीय रक्षा अकादमी और रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन क अनेको उच्चाधिकारियों के ई-मेल पते विभिन्न देशो को पोस्ट कर दिए गए थे। दरअसल इन अधिकारियों के ई-मेल खातो को हैक करके ही इस प्रकार का कृत्य किया गया था। वास्तव मे हैकिंग आज के साइबर युग की सबसे बड़ी समस्या है। हैकिंग के कारण पूरे सूचना तंत्र को ध्वस्त किया जा सकता है। किसी कम्प्यूटर तंत्र में उपस्थित डाटा को नष्ट किया जा सकता है।

भारत की एक प्रमुख सूचना प्रौद्योगिकी प्रमाणन कम्पनी अजीन ने हैकिंग की रोकथाम करने के लिए एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी 'इंटरटेक' से समझौता किया है। समझौता के मुताबिक 'अप्पीन' और 'इंटरटेक' परस्पर मिलकर एक सॉफ्टवेयर को 'APPSEC' नामक इस सॉफ्टवेयर को संयुक्त राज्य अमेरिका इग्लैंड सहित लगभग सभी यूरोपियन देशों में मान्यता प्राप्त है।

सामाजिक साइट्स अर्थात सोराल सोशल साइट्स आज के युवाओं का सबसे प्रिय शगल है। इन्हें डेटिंग -साइट्स और मित्रता साइट्स भी कहते है। आरकुट, फेसबुक, फ्रॉयर, हाय 5, बेबो, भाई स्पेन भारत स्टूडेट आदि के अलावा और भी सैकड़ों सामाजिक साइट्स आज इंटरनेट पर मौजूद है। इन साइटो पर मात्र एक विकल्प क्लिक करते ही आप जानकारियों और विचारों का आदान प्रदान कर सकते हैं।

सामाजिक साइट्स की दुनिया बेहद सावधान रहने की आवश्यकता है। थोड़ी सी तकनीक का इस्तेमाल करते हुए आप अपने पासवर्ड को हैक होने से बचा सकते है। यदि आपका पासवर्ड (Amits111) है तो पासवर्ड टाइप करते समय पहले (Amit@) टाइप करे और फिर (@) को दो तीन बार मिटा दे। ऐसा दो तीन बार करे किसी केरेक्टर को दो तीन बार मिटाने के बाद पूरा पासवर्ड टाइप करे। अब यदि कोई आपका पासवर्ड हैक करेगा। तो उसे (Amit@@@111) या (Amit@@@111) दिखायी देगा इसके अलावा अपनी जन्मतिथि वाहन संख्या आदि के आधार पर कभी भी पास वार्ड न बनाएँ। इसके अतिरिक्त आनलाइन खरीददारी करना सुविधा जनक तो है लेकिन इससे कुछ खतरे भी जुडे है किसी उत्पाद को खरीदते समय उपभोक्ता से कुछ जानकारियाँ मांगी जाती है। जैस- नाम, पता, ई-मेल का पता, क्रेडिट कार्ड की वैधता तिति और उसकी संख्या आदि। उपभोक्ता द्वारा दी गई इन जानकारियो का दुरूपयोग भी हो सकता है। इसलिए कुछ सावधानियाँ बरतने की जरूरत है।

सबसे पहले इस बात की पुष्टि कर ले कि जिस साइट पर आप अपनी क्रेडिट कार्ड या डेबिट कार्ड की संख्या दे रहे है। वह पूरी तरह से सुरक्षित हो। इसके लिए अपनी स्क्रीन के निचले हिस्से से 'पेडलॉक' अर्थात ताले के आकार का चिहन बना होगा, जिसे देखकर आप साइट की सुरक्षा की जाँच कर सकते है। उपभोक्ताओ को किसी भी धोखाधड़ी से बचाने के लिए कुछ बैकिंग संस्थानो ने काफी तकनीकी इंतजाम किये है। सिटी बैक, (HDFC) और (ICICI) भुगतान गेटवे का प्रयोग करके आप भविष्य मे होने वाली धोखाधड़ी से बच सकते है। किसी भी तकनीकी का उपयोग करने से पहले हम यदि उसके दुरूपयोग से बचने की जानकारी हासिल कर लें तो भविष्य को सुरक्षित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नरेन्द्र कुमार शर्मा - साइबर अपराध चुनौतियां एवं प्रबंधन ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2013
2. हरप्रीत कौर - महिलाओं के विरूद हिंसा एवं मद्यपान, अमेजिंग पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2014
3. आनन्द प्रकाश सिंह - सामाजिक समस्यायें और अपराध, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2007
4. महेन्द्र मिश्रा - किशोर मलोविज्ञान, यूनिवर्सिटी बुक हाउस जयपुर, 2008
5. ध्रुब दीक्षित - विदयार्थी और मादक पदार्थ, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2011

****

छत्तीसगढ़ की जनजातीय परम्पराएं एवं धार्मिक विश्वास

डॉ. एस. एन. लदेर *

शोध सारांश – शोध सारांश – बस्तर के आदिवासीयों का जीवन सादगीपूर्ण होता है। अभावग्रस्त जीवनयापन करते हुए ये आदिम जातियॉ सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति पारम्परिक, धार्मिक रीति रिवाजों के बीच करती है। मनोरंजन के लिए पारम्परिक नृत्य, संगीत एवं महुए की शराब का सेवन कर अपनी थकान दूर करते है। घोटुल विवाह पूर्व प्रणय मिलन संस्था इनके सांस्कृति जीवन का प्रमुख हिस्सा है। आदिवासी समूह मुरियों में युवाओं में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक, प्रशासनिक, गतिविधियॉ घोटुल परम्परा में अन्तर्निहित है। यह अपने आप में एक प्रकार की पारम्परिक सामाजिक प्रशिक्षण संस्था है। जिसके माध्यम से मूरिया जनजाति अपने जीवन के विभिन्न आयामों में कसकर विवाह प्रणय संबंध एवं अनुशासन को स्थापित करते चले आ रहे है। घोटुल में अविवाहित युवक–युवतियों को वर्ष में एक बार प्रवेश दिया जाता है। इस परम्परा में किशोर को चेलिक और किशोरी को मोतियारी कहा जाता है।

शब्द कुंजी – छत्तीसगढ़ जनजातीय परम्पराएं धार्मिक विश्वास।

प्रस्तावना – वर्तमान छत्तीसगढ़ राज्य आदिवासी बहुल एवं प्राकृति सम्पदाओं से समृद्ध है, छत्तीसगढ़ में बस्तर क्षेत्र आदिवासी संस्कृति के अध्ययन का केन्द्र बिन्दु रहा है। यहाँ की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या आदिम जन जातियॉ की है। भारतीय संस्कृति की अमूल्य जाती को संजोये हुए यह पुरातन भू क्षेत्र राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर उपेक्षित है। तथापि भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय को अन्तर्राष्ट्री स्तर के पर्यटन स्थल के रूप में विकसित करने हेतु परियोजनाएं संचालित है।

छत्तीसगढ़ के आदिवासी संस्कृति एवं प्राकृति परिवेश विशिष्ट आयाम को इस शोध पत्र के माध्यम से रेखांकित करने का प्रयास है।

छत्तीसगढ़ का बस्तर जिला 1948 में कांकेर और बस्तर दो बड़ी रियासतों को मिलाकर बनाया गया था। सन् 1998 में दंतेवाड और कांकेर को बस्तर से अलग कर दो नए जिलों का गठन किया गया है। बस्तर दंतेवाड़ा और कांकेर ये तीनों जिले सम्मिलित रूप से बस्तर संभाग के अंतर्गत आते है और संयुक्त रूप से बस्तर सांस्कृति क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते है।

बस्तर क्षेत्र की प्राचीनता पर अगर दृष्टिपात करे तो यह रामायण और महाभारत काल की घटनाओं से सीधा सरोकार रखती है। प्राचीन समय में यह क्षेत्र दण्डक वन, दण्डकारण्य, कान्तर, महाकान्तरु आटविक गणराजय आदि नामों से जाना जाता रहा है। एक बात की सूचना हमें रामायण, महाभारत और मौर्य कालीन आभिलेखों से प्राप्त होती उल्लेखिनीय है कि बस्तर स्टेट का मध्य भाग 11वीं शताब्दी में आस्तिव में आया उस समय नागवंशी राजाओं ने बारासुर को अपनी राजधानी बनाया। बारासुर उस समय चक्रकोट के नाम से जाना जाता था। ऐसी धारणा है कि अत्यंत विस्तृत क्षेत्र में फैले होने के कारण इस क्षेत्र का नाम बस्तर पडा।

दूसरी धारणा है कि नाग शासकों से युद्ध के समय काकतीय (चालुक्य) इस क्षेत्र के बांस के झुरमुरों के नीचे अपनी छावनी लगाते थे, बांसतरी छावनी लगाने के कारण इस क्षेत्र का नाम बस्तर पडा है।

बस्तर क्षेत्र की प्रमुख जनजातियॉ है – गौड, अबूझमारिया, भतर, हल्बा, धुर्वी, मुरिया और सींग मारिया। विश्व की सबसे बड़ी जनजाति गौंड बस्तर में अपने अनोखे विवाह पद्धति घोटुल के लिए विशेष रूप से विख्यात है।

वास्तव में बस्तर क्षेत्र के आदिवासी अपने अद्धितीय एवं विविध संस्कृति के लिए जाने जाते है। बस्तर के प्रत्येक आदिवासी समूह की अपनी अलग सांस्कृतिक पहचान है। बस्तरवासी अपनी इसी संस्कृति विशिष्टता के कारण पूरे विश्व में जाने जाते है। ये जन जातियॉ अपने अनोखे जीवन शैली का अनोखे ढंग से आनंद उठाते है, एवं प्रत्येक जनजातिय समूह की अपनी पृथक बोली व भाषा है, साथ ही साथ उनकी मान्यताएं रहन सहन, रीति रिवाज, खान–पान, परम्पराएं यहां तक कि पूजा पद्धतियॉ एवं देवी देवताएं भी भिन्न विभिन्न है। बस्तर के आदिवासियों का एक बड़ा हिस्सा आज भी घोर अंधकार मय जंगलों में निवास करता है। ये बाहरी लोगों से इसलिए संपर्क नहीं रखना चाहते क्योंकि इन्हें भय है कि इनकी विशिष्ट आदिवासी संस्कृति नष्ट न हो जाएं।

इस क्षेत्र की ये आदिम जनजातियॉ रंग विरंगे परिधानों संयुक्त सांस्कृतिक त्यौहारों और अपनी अनोखी शिल्पकला के लिए विश्व विख्यात है। बस्तर में मनाया जाने वाला बस्तर दशहरा भी अपनी अनोखी शैली के कारण पूरी दुनिया में प्रसिद्ध है। बस्तर के जनजातियों ने काष्ट एव धांतु शिल्प पर बहुत सुंदर एवं अदभूत रचनाएं की है। पारम्परिक शिल्प के रूप में आदिम देवी देवताओं, पशुओं बैलगाडी और अन्य वन्य पशुओं की अदभूत रचनाएं की है। इन सबके आलावा उच्छंल तरंग मय नदियॉ मनमोहक वन, जीवंत लुभाने, झरने और आश्चर्य चकित कर देने वाली आदिम गुफाएं इस क्षेत्र के प्राकृति पर्यावरण का निर्माण करती है।

उत्तरी बस्तर की मरिया जनजाति घोटुल संस्था से विशेष रूप से संबधित है, जो कि विवाह पूर्व नवयुवक युवतियों की प्रणय शाला के रूप से जानी जाती है। सिंग मूरिया जनजाति इन्द्रवती नदी के दक्षिण में बसे है। राजा मूरिया जगदलपुरी मूरिया के नाम से भी जाने जाते है, यह एक श्रेष्ट जनजाति मानी जाती है।

* प्राचार्य, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर, जिला–बिलासपुर (छ.ग.) भारत

हल्बा जनजाति हिन्दुओं से निकटता रखती है। इन्हीं का पूरे बस्तर में विशेष प्रभुत्व है। हल्बी इनकी लोक भाषा है, हल्बी का प्रभाव अन्य लोक भाषाओं पर भी दिखाई पडता है। इस क्षेत्र में स्थित अबूझमाण जंगली एवं उबड खाबड जंगली इनका अधिक पिछड़ा हुआ है। यह नारायणपुर तहसील में स्थित है, यह इलाका यहॉ के निवासियों के विचित्र खान-पान के लिए जाना जाता है लाल, चीटी जो आम, जामुन इत्यादि वृक्षों पर छाता बनाकर रहती है। इनका विशिष्ट खाद्य है।

अबूझमाडी महिलाएं इस प्रकार का परिधान धारण करती है कि उनका अधोभारी अनावृत्त रहता है। पुरूष कमर के नीचे लंगी धारण करते है केवल तीज त्यौहारों के दौरान विशिष्ट पहनावे को धारण करते है। आदिवासी लडकों के पहनावे में थोडी तडक-भड़क एवं विशेष प्रकार की साज-सज्जा सम्मिलित रहती है।

ये जातियॉ लाल या सफेद रंग की पगड़ी पहनती है जिसमें मोर पंख लगे रहते है। पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाली मूरिया जनजाति फसलो की कटाई के बाद अवशेष आग लगा देते है ताकि जमीन और अधिक उर्वर हो जाए। अबूझमाड के बहुत से ऐसे अंधकार युक्त इलाके है। जहॉ अभी तक इन्सानों की पहुंच बाकी है। इस क्षेत्र की तीसरी बड़ी जनजाति धुर्वी दन्तेवाड़ा क्षेत्र के कोटा और भोपाल पट्टनम में रहने वाली आदिम जनजातियों में करपल - पण्डुम त्यौहार का प्रचलन है ये आदिवासी जातियों हर तीन साल बाद भीमा देवी के विवाह का आयोजन करती है इनकी भाषा दोरली है।

बस्तर के आदिवासियों का जीवन सादगीपूर्ण होता है। अभावग्रस्त जीवनयापन करते हुए ये आदिम जातियॉ सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति पारम्परिक, धार्मिक रीति रिवाजों के बीच करती है। मनोरंजन के लिए पारम्परिक नृत्य, संगीत एवं महुए की शराब का सेवन कर अपनी थकान दूर करते है। घोटुल विवाह पूर्व प्रणय मिलन संस्था इनके सांस्कृति जीवन का प्रमुख हिस्सा है।

निष्कर्ष -आदिवासी समूह मुरियों में युवाओं में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक, प्रशासनिक, गतिविधियॉ घोटुल परम्परा में अन्तर्निहित है। यह अपने आप में एक प्रकार की पारम्परिक सामाजिक प्रशिक्षण संस्था है। जिसके माध्यम से मूरिया जनजाति अपने जीवन के विभिन्न आयामों में कसकर विवाह प्रणय संबंध एवं अनुशासन को स्थापित करते चले आ रहे है।

घोटुल में अविवाहित युवक-युवतियों को वर्ष में एक बार प्रवेश दिया जाता है। इस परम्परा में किशोर को चेलिक और किशोरी को मोतियारी कहा जाता है।

घोटुल मोटियारियों की नेत्री को बेलोसा कहॉ जाता है। घोटुल के पारम्परिक देवता को लिंगो कहा जाता है। घोटुल का एक मुख्य उद्देश्य बच्चों को माता पिता के यौन संबधों से दूर रखना होता है, ऐसी मान्यता है कि बच्चों की उपस्थिति में पति-पत्नी के बीच यौन संबंध पाए है। इसी कारण किशोर बच्चों को रात्रि शयन के लिए घोटुल में भेज दिया जाता है। घोटुल में बिना सहमति के यौन संबंध को पाप माना जाता है। ऐसे किशोर किशोरियों को घोटुल से निष्कासित कर दिया जाता है।

एक बार जिन किशोर किशोरियों को घोटुल से निष्काशित किया जाता है उन्हें आजीवन अविवाहित रहना पड़ता है क्योंकि घोटुल से बाहर होना एक सामाजिक पाप माना जाता है। घोटुल का समानान्तर उद्देश्य सामाजिक संबंधों की स्थापना के साथ-साथ सामाजिक शिक्षा की भावना को विकासित करना भी होता है।

इस प्रकार देखा जाएं तो आदिवासियों को घोटुल सदृश संस्थाएं विभिन्न परम्पराएं एवं धार्मिक रीतिरिवाज अत्यंत विलक्षण है और निरंतर पीढ़ी दर पीढ़ी के लिए जीवन धारा में प्रवाह माना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शुक्ल हीरालाल छत्तीसगढ़ का इतिहास अनामिका प्रकाशन भोपाल 2000 पृ. क्र.2628.
2. व्ही - 28-29
3. वमन पुराण - 63-32.
4. वायु पुराण - 69-240-85
5. शुक्ल हीरालाल पूर्वोक्त पृ. 31.
6. जैमिनीय ब्राहमण - 1. 162.
7. हल्बीराम कथा भोपाल - 1998, 1-668.
8. मडिया राम कथा भोपाल - 1998, 1-454.
9. मुरिया रामकथा भोपाल - 1998, 1-644.
10. महाभारत - (1-8)
11. वामन पुराण - (63-32)
12. शुक्ल हीरालाल पूर्वोक्त - 44.
13. वदी पृ. क्र. 44, 45.
14. वदी
15. अंगुत्तर विकाय - 1-213.
16. विनय पिटक - 2-146.

****

Dalit Voices In Indian English Fiction

Dr. Rajkumari Sudhir *

Introduction - As we have already discussed earlier, literature is a mirror that reflects the society and the times that it represents. It is but natural for the writers to depict the contemporary scenario in their works. Every writer tries to capture the glaring and outstanding episodes of his time in his works. The stratification of Indian society on the basis of caste is also one of the major reasons for the polarization of Indian society. The unjust and malicious treatment meted out to the untouchables in India has been a matter of great concern. Since times immemorial, they have been suffering severe humiliation at the hands of the upper sections of the society. Even after attaining political autonomy, there has been no improvement in their status. Caste still continues to play a highly important role in shaping the lives of the masses. Today there are about 250 million untouchables. Although the Government has banned the caste discrimination since 1950, but prejudice continues. Postcolonial Indian society has managed to achieve only political liberation, and not the complete social freedom; though the later certainly needs to be invoked in an active way. Because caste has got the inherent capacity of positioning oneself, it can be, at once, both beneficial as well as dangerous to the people who practice it. The emergence of so many regional political parties in India has only magnified this problem. They have made the 'untouchables' and other castes occupying the lower hierarchy in the society a political tool through which they construct their own identities. Caste, then, can be highly paradoxical, especially when we view it in the context of the Indian society. The caste system in India is an important part of ancient Hindu tradition and dates back to 1200 BC. In ancient India there developed a social system in which people were divided into separate close communities. These communities are known in English as caste. It is generally believed that the origin of the caste system can be found in Hinduism, but it has plagued the entire Indian social system.

The caste system in the religious form is basically a simple division of society in which there are four castes arranged in a hierarchy and below them the outcast. But socially the caste system was more complicated, with much more castes and sub-castes and other divisions.

The term caste was first used by Portuguese travelers who came to India in the 16th century. Caste comes from the Spanish and Portuguese word "*casta*" which means "race", "breed", or "lineage". Many Indians use the term "*jati*". There are 3,000 castes and 25,000 sub castes in India, each related to a specific occupation. Caste not only dictates one's occupation, but dietary habits and interaction with members of other castes as well. Members of a high caste enjoy more wealth and opportunities while members of a low caste perform menial jobs. Outside of the caste system are the Untouchables.

Untouchable jobs, such as toilet cleaning and garbage removal, require them to be in contact with bodily fluids. They are therefore considered polluted and not to be touched. The importance of purity in the body and food is found in early Sanskrit literature. Untouchables have separate entrances to homes and must drink from separate wells. They are considered to be in a permanent state of impurity. Untouchables were named "*Harijans*" by Gandhi. He tried to raise their status with symbolic gestures such as befriending and eating with Untouchables. Upward mobility is very rare in the caste system. Most people remain in one caste for their entire life and marry within their caste. The Indian caste system is a system of social stratification and social restriction in India in which communities are defined by thousands of endogamous hereditary groups called *Jâtis*.

The *Jâtis* were hypothetically and formally grouped by the Brahminical texts under the four well known categories or the *varnas*: viz Brahmins, *Vaishyas*, *Kshatriyas* and *Shudras*. Certain people like foreigners, nomads, forest tribes and the *chandalas* were excluded altogether and treated as untouchables. Although identified with Hinduism, in the past the caste-like systems were also observed among followers of other religions in the Indian subcontinent, including some groups of Muslims and Christians, most likely due to inherited cultural traits. Theoretically, all foreigners are considered to be casteless and hence outcast; meaning that Hindu, especially the orthodox upper caste families, would not touch or invite them to their homes. This division of soceity to groups of touchales and untouchables has cast a vast blur on the reputation of India in the international levels and it is presented as inhuman hence requiring restructuring and

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P.G. College Bhopal (M.P.) INDIA

upliftment of this underprevilaged groups. Many writers in India have taken up the task of representing their case.

Mulk Raj Anand is one of the Indo-Anglian novelists who remained firmly rooted in the field of fiction with a stern consistency of purpose. According to K.R. Srinivasa Iyengar, Anand wrote: "of the people, for the people, and as a man of the people." (Indian Writing in English 333) His novels like *Untouchables* [1935], *Coolie* [1936], *Two Leaves and a Bud* [1937] etc., hint at his early fire and drive behind writing about pariahs and the underdogs of the society rather than the elect and the sophisticated. By doing so, he had ventured into a territory that had been ignored till then by any Indian writers. The social disparity of India was aptly described by Mulk Raj Anand in his *Coolie.* Mulk Raj Anand stood up to address a complex problem in the form of untouchability rampant in the Hindu society. In his realistic portrayal of the novel *Untouchable* [1935], Anand is concerned with the sufferings of the masses of sweepers and his wish to bring about social happiness in their lives and to register his protest against the evil in the social system.

Though Anand raises his concern for a particular community in the novel, it is an indicator that he is against all kinds of discrimination that prevails in all parts of the world. He uses fiction as a tool to express his awareness of social exclusion and exploitation of the lower scum of the society and through this medium he reflected his wish to advise the affluent to mend their inhuman ways and to change their social behaviour. The untouchables are compelled to dwell in the outskirts of the rest of dwellings. Anand was deeply moved by this social discrimination and ill treatment with sweepers and it made him write for the love for life and the welfare of all and sundry.

The fact is that sweepers are forced to dwell away from the village at the time of Anand as well as after the independence too. Their social discrimination is a matter of great concern. They are forbidden to take water from the well themselves as their mere touch could pollute it. This imposed the rule by the caste-Hindu make sweepers stand away from the well and the so-called upper caste men pour water into their pots when they have leisure and wish to do so. Sohini, Bakha's beautiful sister undergoes the same process:

She went to the steps of the caste-well where she counted on the chance of some gentleman taking pity on her and giving her the water she needed (Anand 24).

The irony is that when she goes to clean the courtyard of Kalinath, the lanky priest, he tries to get erotic pleasures from this untouchable girl even in the temple premises. She revolts against him; it's her moral virtue. At this, he scolds and accuses her of polluting his holy place. What a drama played by this so-called holy man! Is this not a part of social exploitation? Is this not a religious hypocrisy? To satisfy his physical hunger, this priest takes advantage of the lower social position of this girl and she is helpless. Her brother Bakha is also helpless to express his open resentment of the wound and insult inflicted to his sister, to his own self and to his caste too.

Untouchable is Mulk Raj Anand's first novel and it brought to him immense popularity and prestige. This novel shows the realistic picture of society. In this novel Anand has portrayed a picture of an untouchable who is a sweeper boy. This character is the representative of all down trodden society in pre-independence of India. The protagonist of this novel is the figure of suffering because of his caste. With Bakha, the central character, there are other characters who also suffer because of their lower caste. They live in mud-walled cottages huddled colony in which people are scavengers, the leather-workers, the washer men, the barbers, the water-carriers, the grass-cutters and other outcastes. The lower castes people are suffering because they are by birth outcaste. But Mulk Raj Anand had depicted the hypocrisy of the upper caste people that men like Pt. Kali Nath enjoy the touch of the Harijan girls. Mulk Raj Anand exposes all this hypocrisy and double standards or double-dealings. In this novel Bakha is a universal figure to show the oppression, injustice, humiliation reserved for the whole community of the outcastes in India. Bakha symbolizes the exploitation and oppression, which has been the fate of untouchables like him. His anguish and humiliation are not of his alone, but the suffering of whole outcastes and underdogs.

Untouchable shows the evil of untouchability in Hindu Society. The novel tries to emphasize an individual's attempt to emancipate himself from the age-old evil of untouchability**.** Anand is concerned with evils of untouchability and the need for radical empathy. He describes the pathetic conditions of the untouchables through the character Bakha, their immitigable hardships and physical and mental agonies almost with the meticulous skill of historical storyteller. *Untouchable* is a faithful portrayal of the pathetic plight of untouchables who are subjected to immitigable social indignities, only because of their lowly birth. Anand depicted the miserable condition of the small family of Lakha, the jamadar of the sweepers. Anand not only throws light on their abject poverty and suffering but also focuses on their low-caste status in general.

His day starts with endearing entreaties and downright abuses by his father and his encounter with the high-caste people, who cannot put up with his very sight. His sturdy body, which could bear any physical labour, is drained of all the vestigial energy. He has to remain content with the pancakes thrown at him, by the high caste Hindus, and is more than shocked when he is slapped by a caste-Hindu, for having 'polluted' him. Though he has the muscular strength to hit back, he keeps his cool, thus taking all the indignities into his stride. As Anand describes-

His first impulse was to run, just to shoot across the throng, away, away, for away from the torment. But then he realized that he was surrounded by a barrier, not a physical barrier, because one push from his hefty shoulders would have been enough to unbalance the skeleton-like bodies

of the onlookers, but a moral one (54).

The action of the "touched man", polluted by the untouchable Bakha, is a deliberate one, which only reveals the pathetic predicament of the untouchables. As Bakha says:

All of them abused, abused, abused why are we always abused? The sanitary inspector that day abused my father. They always abuse us. Because we are sweepers. Because we touch dung. They hate dung. I hate it too … I am a sweeper, sweeper-untouchable, I am an untouchable (58)! The conditions which the untouchables are enforced in to are really shocking but one can share their aches and agonies. He desperately comes and tells his father:

They think we are mere dirt, because we clean their dirt (89).

Anand's hero is not of the race, not of the time and the place, but exemplifies all humanity caught in contingencies of an antiquated social order that impedes his evaluation in to a self-consistent social life. Anand in *Untouchable* deals with the outcastes engaged in an intense struggle with oppressive forces. Bakha has to struggle and suffer every minute because he is an untouchable and he has no right to live like other upper caste people. Mulk Raj Anand depicted the practice of untouchability which is essentially a matter of pretentious religiosity and exploitation. By a very well worked out technique of dramatic irony, by juxtaposing the plight of Sohini with that of Bakha, the novelist has reinforced the representative character of the figure of the untouchable. Mulk Raj Anand in *Untouchable* exposed the social realism in contemporary Hindu society.

Arundhati Roy has dealt with the problem of untouchability plaguing the Indian society in her booker winning novel, *The God of Small Things*. She is appalled at the barbarous treatment meted out to the lower section of the society, even in this postcolonial age. In this regard, she says that: "Fifty years after independence, India is still struggling with the legacy of colonialism, still flinching from the cultural insult. We are still caught up in the business of "disproving" the white world's definition of us. The entire incidents in *The God of Small Things* take place in the southern Indian state of Kerala, and revolve around a forbidden relationship between a Syrian Christian divorcee, and mother of two children, Ammu, and a low caste carpenter, Velutha. 'The temporal setting shifts back and forth from 1969, when Rahel and Estha, a set of fraternal twins are 7 years old, to 1993, when the twins are reunited at age 31'.

It is a story about the rights of the women and the untouchables versus age-old restrictions imposed by the traditionalist Indian society. The characters in this novel are caught up in a complex web of actions that take place in their lives, and affect each other in one way or the other. Most of the human drama takes place in the novel in the context of the division of India through caste and class. Throughout the novel, we witness numerous encounters between these two, and ultimately, it is the one occupying the upper position in the domestic and the social hierarchy, which emerges as a winner. Ammu, the female protagonist of the novel is married to an alcoholic husband, who treats her in a beastly manner, and even asks her to satisfy the carnal pleasure of his boss, so that he can keep his job secure. This unjust action of her husband (whose name is not told in the novel) forces Ammu to leave him. After getting divorce from her husband, Ammu, along with her dizygotic twins Estha and Rahel, returns to her parental house in Ayemenem, now part of Kottayam in Kerala state of India. Distinguished Dalit writers are Dr. Narendra Jadhav- *Outcaste, 2003; Untouchables, 2005*; Joseph Macwan – *Angaliyat: Stepchild* [Trans.] and Bama Faustina- *Sangati: Events* [Trans.].

Thus we see that untouchability is still being practiced in Indian society. There has to be some proper implementation of laws to curb this social discrimination. Arundhati Roy needs to be congratulated for exposing this foul play of postcolonial India to the entire world. Of course, there has been numerous works on this theme before this novel but the fact that this novel went on to win the Booker Prize has definitely brought Roy and her novel much more appraisal than the other writers. The writers of Indian English fiction have taken up the responsibility of spreading awareness among the masses to irradicate such social evils. Today we have different Government departments that bring about policies to mitigate the suffering of the underprivileged and weaker sections of the society. There are also many non-government organizations working for the uplift of these marginalized ones. Literature and men of letters understand their responsibility towards the society and as enlightened and committed individuals take up cudgel to mitigate the lines of demarcation from the society that build walls instead of bridges to uplift the values of human dignity. Indian writers in English have done commendable service to the society by highlighting the social evils and enlightening the masses about the evils that bring about fission in society.

References :-

1. Anand, Mulk Raj. *Untouchable*. New Delhi: Arnold Associates, 1981. Print.
2. Anand, Mulk Raj. Interview by K. Satchidanandan. "A Creator with Social Concern." *Frontline.*Volume 21-Issue 21, Oct.09-22, 2004.Web.08 Sep. 2012.
3. Chandra, Giti. "For American Eyes Only" *Biblio*: *A Review of Books*. 6.9-10 (Sept- Oct.2001): 6-7. *Books.google.co.in.* Web. 15 Oct. 2011.
4. Dowden, Edward. *Studies in Literature,* 1789-1877. London: K. Paul Trench and Co. University of California CDL. *archive.org*. Web. 03 Dec. 2011.
5. Faustina, Bama. *Sangati –Events.* India: Oxford University Press, 2004. Print.
6. Jadhav, Narendra. *Untouchables*: *My Family's Triumphant Journey Out of the Caste system in Modern India.* Newyork: Simon and Schuster, 2005. Print.
7. *Outcaste-A Memoir Life and Triumphs of an Untouch*

able Family in India. New Delhi: Penguin,2003. Print.

8. Limbale, Sharankumar. *Towards an Aesthetics of Dalit Literature*. Trans. Alok Mukherjee. Bombay: Orient Longman, 2004. Print.
9. Macwan, Joseph. *Angaliyat-Stepchild.* India: Oxford University Press, 2004. Print.
10. Narayan, Badri and A.R. Mishra. *Multiple Marginalities: An Anthology of Identified Dalit Writings*. n.p. Manohar Publisher, 2004. Google Books. Web. 20 oct.2012.
11. Sahani, C.L. and J.N. Mundra. *Advanced Literary Essays.* Bareilly: Prakash Book Depot, 1963. Original from – The University of Virginia. Digitized – 17 Dec 2010. *Books. google.co.in.* Web. 05 Aug. 2011.

****

K.A. Porter's Is Observation That 'We Are Born To Know Death' In Pale Horse, Pale Rider

Dr. Anita Tripathi*

Introduction - The story, ***Pale Horse, Pale Rider,*** gives us full statement of a negative view of the world. According to D.H. Untrue, this is a story "about Miranda's continuing journey toward self-identity, another step in her acquisition of essential truth.. this story is bound up in the theme of spiritual malaise that is tied directly to wartime".[1] Pale House, Pale Rider is a fictionalized autobiographical account like Old Mortality. Although in Old Mortality Miranda rejects her family and her husband, and decides:"I hate loving and being loved, I hate It" (CS, 221)[2]; in Pale Horse, Pale Rider, she is still susceptible to love. Miranda is twenty-four, and is working as a reporter on a Western newspaper. She falls in love with Adam Barclay, a Second Lieutenant in an Engineering Corps about to be sent over shortly. She gets influenza and nearly succumbs, but finally recovers to find that Adam had died of the same disease. The story describes a different area of feminine experience : conflict is love, the death of her lover and her final loneliness.

Porter projects Miranda's loneliness and her narrow escape from death; she refers to the World War I and the influenza epidemic, It was the last Miranda story Porter wrote.[3] Porter had herself experienced the phenomenon. She told Glenway Wescott and Barbara Thompson about this. Porter's comments on her own sickness apply with equal validity to Miranda, the heroine of the story:

I was really "alienated" in the pure sense. It was, I think, the fact that I had really participated in death, that I knew what death was, and had almost experienced it. I had what the Christians call the "beatific vision", and the Greeks called the "happy" day", the happy vision just before death.[4]

The war was on with disaster and death; influenza was sweeping the country seeming 'to be a plague' with so many funerals. Professional patriots were attempting to force Miranda to spend money for Liberty Bonds; at the theater she was forced to hear an emotional, dishonest speech by another bond salesman. The war focuses on day-to-day world of Miranda the image of death which haunts her dream, since war has unreined the 'pale horse' of destruction. The war creates fear and suspicion, and posits threat which "transforms daily reality into a disturbing set of distorting mirrors".[5] Miranda broods :

There must be a great many of them here who think as I do, and we dare not say a word to each other of our desperation, we are speechless animals letting ourselves be destroyed, and why? Does anybody her believe the things we say to each other? (CS, 291).

The People are without values, like her press-room colleagues. The women, too, are shallow and callous human beings like Miranda's landlady, who threatens to put her out on the street on discovering that she has influenza. Human communication is either poor or distorted: Bill was shouting at somebody who kept saying, 'Well, but listen, well, but listen', but nobody was going to listen (CS, 297).

The title of the story indicates the primacy of the death theme. Miranda mourns the death of her family members in her dream, but in reality she sings the old Negro Spiritual which she had heard being sung in the cotton fields. The myth of the song reveals that "all were taken away by the death except the singer"; Miranda and Adam sing together; "Pale Horse, Pale Rider, don's take my love away". This song gives another element of meaning to the story_ Miranda's premonition of danger that one of them would be taken away by the Pale Rider, because the second line of the song is : "Death always leaves one singer to mourn" (CS, 303). Death is presented in a number of images in the story, such as "that lank greenish stranger" who has been hanging about the place and has been "welcomed" by Miranda's grandfather, her great-aunt, her "decrepit hound" and her "silver kitten", all presumably dead (CS, 270). She examines the stranger, sitting upon his own gray horse "with tarnished garments that flapped upon his bones". His "pale face" smiles "in an evil trance" (CS, 270). Although the stranger looks familiar to her, she cannot place him; she nevertheless suspects that "he is no stranger" to her, a comment that reminds us of Porter's observation that "we are born knowing death". It is important to note that the image of grayness in the figure of the horse Graylie also symbolizes the bridge between life and death.[6] Miranda's experiences at the newspaper office, at the hospital and with Adam are permeated with subtle reminders of the nearness of death to the living. Everything is remembered and acted out against the backdrop of the war, and the funeral procession is a part of this backdrop. The funeral procession so emphasized is a variation of the journey motif. It is the final journey to the grave, but figuratively it is the

***Associate Professor (English) Govt. Girls College, Satna (M.P.) INDIA**

mortal life in its continual progression towards death. When she is in the hospital and is fluctuating between life and death in one of her nightmares, she thinks -

The road to death is a long march beset with all evils, and the heart fails little by little at each new terror, the bones rebel at each step, the mind sets up its own bitter resistance and to shat end ? The barriers sink one by on, and no covering of the eyes shuts out the landscape of disaster (CS, 309).

The state of death is regarded by Miranda from changing perspective. Pale Hours, Pale Rider is a story of death not only of love, but also of its possibility. Miranda falls in love with a man who "never had pain in his life", and "looks clear and fresh like a fine healthy apple" (CS, 280). This again is a 'disturbing opposition' of her life that such a healthy man can be seen in this world, for there is no such possibility of health and happiness in contemporary times. Her lover, Adam, in fact, is one of the illusions of her happiness. The moment of her happiness is brief because death has taken Adam away from her.

It is really a story about how a person faces death (knowledge) anytime, anywhere. The second legend fortifies and enriches the first; it is Miranda's childhood fable of the Pale Horseman, not wholly a fearful rider, who calls to escort her into the land of death, but to whom she says, "I m not going with you this time". Death (evil) is a temper, and one is more cleverly armed to resist him when one has knowledge (truth). Adam, who is presented as more innocent than Miranda ("...there was no resentment of revolt in him. Pure, she thought, all the way through, flawless, complete, as the sacrificial lamb must be"), appears unaware of danger, though he is facing the most direct threat of death in war. Miranda's delirium in her illness is really a descent into a world of her own evil, a world that is represented during full consciousness by all the hypocrisies and cruelties of war and wartime. When she recovers, it is to discover that Adam, the personification of health and life, had ridden away with the pale rider. But Miranda's descent is also a descent into knowledge. Death and evil were facts to be faced and recognized for what they were, not hidden behind war slogans or smooth phrases of the patriotic orators. Adam was gone, and he could not be summoned back, either by magic or by an act of will. Miranda feels doomed, disillusioned and shocked, and yearns for death. Her death wish is veiled in the imagery of whiteness. "I wish I were in the cold mountains in the snow, that's what I should like best" (CS, 298). She is enveloped with total despair and exclaims, "the world is no place to live in, how could anyone feel at home there !" (CS 313). War, death and danger continue to haunt the land. She feels cheated, betrayed and adopts the nihilistic attitude.

Wandering in her dream toward oblivion, Miranda's thought processes undergo gradual change. Porter minutely records those changing moments. Miranda says, "death is death, for the dead it has no attributes" (CS, 310). It is a revelation of a sensitive intellectual who is alienated in pure sense -

There it is, there it is at last, it is very simple; and soft carefully shaped words like oblivion and eternity are curtains hung before nothing at all. I shall not know when it happens, I shall not feel or remember, why can't I consents now, I am lost, there is no hope for me (CS, 310).

Porter registers the mental flow of Miranda's split-mind by exploring her subconscious, her ago;

Look, she told herself, there it is, that death and there is nothing to fear. But she could not consents, still shrinking stiffly against the granite wall that was her childhood dream of safety, breathing slowly for fear of squandering breath, saying desperately, Look, don't be afraid, it is nothing, it is only eternity (CS, 310).

Porter presents the final conflict between Miranda's rational will to die and her irrational instinct to live :

Granite walls, whirlpools, stars are things. None of them is death, nor the image of it... Silenced she sank easily through deeps under deeps of darness.... entirely withdrawn from all human concerns, yet alive with peculiar lucidity and coherence; all notions of the mind, the reasonable inquiries of doubt, all ties of blood and the desires of the heart, dissolved and fell away from her, and there remained of her only a minute fiercely burning particle of being that knew itself alone, that relied upon nothing beyond itself for its strength, not susceptible to any appeal or inducement, being itself composed entirely of one single motive, the stubborn will to live. The fiery motionless particle set itself unaided to resist destruction, to survive and to be in its own madness of being, motiveless and plan less beyond that one essential end. Trust me, the hard unwinking point of light said. Trust me. I stay (CS, 311).

And Miranda follows the 'point of light' to a deep clear landscape of sea and sand, of soft meadow and sky, freshly washed and glistening with transparencies of blue, and comes away from death and slowly back to life. Coming to life again, Miranda hears "bells, horns and whistles mingling", and discovers that this "far clamor" is the Armistice, the end of War but not of life.

The story concludes with Miranda's preparation to return to the humdrum world. We notice a gradual change in her personality, and after knowing her subjective life we are able to associate our sensibilities easily with Miranda in understanding her life and her vision. Miranda, despite her stubborn will, is victimized as she finds in life and love the taste of ashes. Gradually she regains her confidence, and with affirmative insight she says with optimism, "no more war, no more plague.... now there would be time for everything" (CS,317). Miranda's vision corresponds to Porter's vision: "when we want something better, we may have it: at perhaps no greater price than we have already paid for the worse" (DB, 202).

References :-

1 D.H. Unrue - Understanding Katherine Anne Porter, Columbia, University of South Carolina Press, 188, 105.

2 Collected stories of Katherine Anne Porter.
3 John Dorsey - "Katherine Anne Porter on ..", Baltimore Sun Magazine, ctober, 1969, 16. Porter told Dorsey that the events in Pale Horse, Pale Rider e r e exactly as thy happened to her, except for the fact that they "didn's happen uite so fast".
4 Barbara Thompson - "Katherine Anne Porter : An Interview", Paris Review 29, Winter-Spring, 1963, 87-114.
5 Sarah Youngblood - "Structure and Imagery in Katherine Anne Porter's Pale Horse, Pale Rider", Modern Fiction Studies V, Winter, 1959-60, 344-352.
6 Charles A. Allen analyzes the use of gray as an image in several of Porter's Stories. "Katherine Anne Porter - Psychology as Art", Southwest Review 41, 1959. 226.

****

Cultural Reorientation Of The Nursery Rhymes - The Practical Approach

Dr. Mehzbeen Sadriwala* Ravi Teja Mandapaka**

Introduction - "The sum of human wisdom is not contained in any one language."

"Culture translation can also be defined as a practice whose aim is to present another culture via translation. This kind of translation solves some issues linked to cultures, such as dialects, food or architecture." Cultural translation involves cultural differences and can also be defined as a practice whose aim is to present another culture via translation. This method of translation solves some issues linked to culture, such as dialects, living habits, etc. The main concern has traditionally been with words and phrases that are so heavily and exclusively grounded in one culture that they are almost impossible to translate into the terms-verbal or otherwise-of another. All these "untranslatable" cultural bound words and phrases will always fascinate the translator. In the current paper, we have given our best to put up cultural significance and its value through translation.

Twinkle – Twinkle

Twinkle, twinkle, little star,
How I wonder what you are
Up above the world so high,
Like a diamond in the sky.

Translation / अनुवाद

चम, चम, माँ का नूर है चमके,
मैं यह सोचू प्यारा दमके,
दुनिया कि सबसे प्यारी सौगात,
जैसे अनमोल हीरे के समान।

When the blazing sun is gone,
When he nothing shines upon,
Then you show your little light,
Twinkle, Twinkle all the night.

Translation / अनुवाद

जब हो अंधकार का साया,
जब और ना मिले कोई सहारा,
माँ तब तू अपनी रोशनी बिखरना,
चम, चक करती, चमकती जाना।

Original Poem and its Significance - It is lamentably little-known that one of the world's most famous nursery rhymes is a Romantic poem; not only that, it is a particular kind of Romantic-ecological poem that I have chosen to call ambient. Furthermore, it is a high example of a feminine Romantic lineage; though this is a poem by a woman, I hesitate to say that it is "female," especially in so far as one might note similar poetic phenomena in Keats and Shelley, and for that matter Coleridge and Wordsworth. It demonstrates that a soft, "feminine" form of ecological awareness is legible even in the poet often established as the lynchpin of masculine Romanticism. "The Star" is both indoors and outdoors, taking apart the difference between feminized interior domestic spaces and masculinized exterior workspace, the therapeutic implication is that what is outside is also inside-the star peeps through the curtain, instance of the outside-that subjectivity itself is a lonely traveler wandering under the stars.

Meaning and illustration of translated text - Of various forms of worship prevalent in India from time immemorial, worship of the Divine Mother has occupied a place of singular significance. This idea of worshipping the Divine as the Eternal Mother has not been developed in any other religion of the world. In India, where according to Manu "the daughter is the highest object of tenderness, " and the mother is revered a thousand times more than the father," the adoration of the female principle in the creation has been in evidence from the very beginning of civilization. Not only has God been looked upon as the feminine par excellence, the Divine Mother, but women have also been viewed upon as manifestations of the Divine Mother and have been worshipped at every stage of life.

One, two, three, four, five

One, two, three, four, five,
Once I caught a fish alive,
Six, Seven, eight, nine, ten,
Than I let it go again
Why did you let it go?
Which finger did it bite?
This little finger on the right.

Translation / अनुवाद

एक, दो, तीन, चार, पाँच
मेरा भारत देश महान,
छह, सात, आठ, नौ, दस,

*Asst. Professor (English) J.R.N.R. Vidyapeeth (Deemed-to-be) University, Udaipur (Raj.) INDIA
**Medical Writer, Medvarsity Online Limited, Hyderabad (Telangana) INDIA

सबसे ऊँचा हिमालय पर्वत,
किसने देश को आजादी दिलाई,
चन्द्रशेखर, भगतसिंह, सुखदेव की शहिदाई,
देश में चमके किस महात्मा की परछाई,
हमारे प्योर गाँधी जी की करा वाह – वाई।

Original Poem and its Significance - "One, Two, Three, Four, Five," is a popular English language nursery rhyme and counting-out rhyme. It has a round decent folk song. It is the poem with an intention to teach children the importance of numeric powers. The simple meaning behind the sentiment expressed in "once I caught a fish alive," "then I let it go again" is to create sympathy and to make children realize the value of forgetting and to reward at the same time.

Meaning and illustration of translated text - India, the most celebrated democracy in the world, got Independence in 1947. It was a momentous year in the history of India when it gained freedom from the British Empire that ruled it over 100 years. The freedom struggle in the country went on for decades, and the freedom fighters like Bhagat Singh, Chandrashekar Ajad and many played a significant role in attaining independence.

These revolutionaries were, indeed, a tad influential in the nation and inspired many. After the incident, Bhagat Singh, Sukhdev, and Rajguru were hanged to death and are considered as martyrs today. So it is essential for every Indian Child to learn their importance who sacrificed their lives.

Ring a Ring O Roses

Ring a Ring O roses,
A Pocket full of poises,
A-tishoo ! A-tishoo !
We all fall down
The cows are in the meadow
Eating butter cups.
A-tishoo ! A-tishoo !
We all jump up.

Translation / अनुवाद

मींठी–मींठी प्यारी गुड़िया,
घर की यह खुशियों की पुड़िया,
छी–छी ! छी–छी !
क्यों कि इनकी भ्रूण हत्या।
बदलेगी इक दिन यह दुनिया,
ना होगी फिर कोई भ्रूण हत्या,
वाह – वाह ! वाह – वाह !
महक उठेगी नन्हीं मुनिया ।।

Original Poem and its Significance - This famous nursery rhyme carries a great significance. The myth begins that this seemingly innocent poem stems from the dark ages of the plague in Great Britain. Every song or literary work is prodded and probed for its possible origin and history. "Ring-a-Ring-a" is said to stand for the ring-shaped rashes around the mouth that victims of the plague had. "Pocket full of posies" quite literally meant the flower carried around everywhere to ward off the smell. Lastly, "we all fall " means they died.

Meaning And Illustration Of Translated Text - Female foeticide in India is the abortion of a female fetus outside of legal channels. It occurs in India for assumed cultural reasons that span centuries. The Indian census data reports a positive correlation between abnormal sex ratio and better socio-economic status and literacy. This may be connected to the dowry systems in India where dowry deaths occur when a girl is seen as a financial burden. These data contradict and a hypothesis that may suggest that sex selection is an archaic practice which takes among uneducated, poor sections or mainly in the Indian Society. But with time and growing literacy among people has lessened down this culture to a far extent. Now the female child is given all the liberties and rights at par with a male. This is an excellent sign of progressive Nation.

Ding Dong Bell

Ding, dong, bell,
Pussy's in the well,
Who put her in ?
Little Johnny flynn.
Who pulled her out,
Little Tonny stout
What a naughty boy was that
To try to drown poor pussy cat,
Who never did him any harm?
But killed all the mice in the farmer's barn.

Translation / अनुवाद

हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई,
ना डालो इनमें कोई फूट औ भाई
क्यों लड़ते आपस में यह,
लगाओ ना इनके प्यार में सेंध,
कौन इनको एक बनायेगा,
मानवता ही बचायेगा,
कितनी गन्दी बात है यह,
एक–दूजे की निंदा जो करे,
क्या बिगडा किसी ने किसी का
अब एक ही नारा भाईचारा हमारा ।।

Original Poem and its Significance - Another favorite nursery rhyme plays a vital role. The fear that children might be affected by the violence of the verse and specifically that children might be tempted to put cats in wells led to several attempts to reform the rhyme. It is an attempt to teach children that they should not do such things to animals in real life. They should treat animals with the love-the same way they treat their friends. It is accessible rhyme with an educational theme against animal cruelty. The expression Ding Dong Bell was used by Shakespeare in several of his plays.

Meaning and Illustration of the translated text - Indians thought philosophy and culture have been promoting the feeling of universal brotherhood for centuries. The message

of Rig Veda is clear- "Let noble thoughts come to us from all directions." Vedas and Vedanta further clarify the philosophy that truth is one, though the wise ones call it by various names. This theory has been nurtured by tolerance, compassion, and dignity of human life without discrimination of big or small.

Unity in diversity is a well-known concept which best fit in India. Though with time and centuries we have seen a brutal fight between religion and religious people it is in the soil of India which unites all them one again. Unity in diversity focuses on the existence of agreement even after lots of differences of cultural, social, physical, linguistic, religious and political, etc. People living in India are the children of one mother whom we call Mother India.

Piggy on the Railway line

Piggy on the Railway line
Picking up the stones
Down come the engine
And Broke Piggy's bones
Ah ! Said the Piggy, "That's not fair".
Oh ! Said the engine driver, "I don't care".

Translation / अनुवाद

दम तोड़ते आज के रित,
प्यार से उठता भरोसा
पैसो की है मोह माया
उसने कुचल दिया भरोसा
आह ! प्यार यह बोला 'हुआ गलत मेरा साथ'
ओह ! बोला पैसा 'अब मेरी है सरकार'

Original Poem and its Significance - Such an innocent rhyme but look at the selfish behavior lurking in it. An engine driver hurts a piggy and then says, "I don't care." Piggy on the railway, it was a bit surprising to realize that mood of the kids blamed the piggy for being in the way. Yes, the piggy was wrong to be picking up stones on the railway tracks, but does that mean the engine driver has to be mean and not say sorry.

Meaning and Illustration of the translated text - Light on the television or radio, or even read a newspaper you will get a bombard with messages about something that you may already know. We are an economic slump. The relationship between love and money is challenging during the best of times. With rising unemployment, unmanageable debt, and no new credit to speak of it, it is understandable to question whether or not love can survive through these troubled economic times. In India, modern relationships are very different from those in older generations. These days' relationships have an all new meaning. They are short-lived, meaningless. We have stopped valuing them, no sorry, no regret exists. All have one focus money, power, and fame.

References :-

1. Maitland, Sarah. *What is Cultural Translation?* New Delhi: Bloomsbury Publication.09 February 2017. Print.
2. Worship of God as Mother in the Indian Tradition. April 1998.http://www.esamskriti.com
3. Rain Rain go Away. 14 September 2005. http://en.m.wikipedia.org.
4. Ring a Ring O' Roses. June 2007. http://en.m.wikipedia.org.

****

Fresh Perspectives On Post Modern Society - A Thematic Study Of The Plays Of Mahesh Dattani

Dr. Poonam Matkar * Dr. Vikas Jaoolkar **

Abstract - We are all seeking constant assurances in today's world and we realize how difficult it has become to be comfortable in your own skin. We are all running a rat race, trying to be equal to each other, want to become someone we are not and cannot be. If only God had known that the unique characteristics he endowed us with, were the foundations of an impending doom, he would have made us all alike. Dattani, through his plays acknowledge the fact that every individual is important and hence deserves to be accepted and respected. He understands the importance of individual existence and the feeling of camaraderie in society. His plays target, through various sensitive issues that the supreme emotion should always be of love. Through this research paper I will try to discuss how Dattani's plays provide us a fresh perspective towards a growing post modernist society. Instead of choosing any particular play/s for writing this paper, I will try to include various aspects of his plays that are pertinent to this topic like *Seven Steps Around the Fire*, *On a Muggy Night in Mumbai, Ek Alag Mausam, Thirty Days in September, Tara,* etc.
Key Words - Identity crisis, gender issues, child abuse, love, relationships.

Introduction - Mahesh Dattani is a well known Indian playwright of the contemporary times. He is one of the first writers who discussed grim issues like identity crisis of LGBTs in his plays. He brought in spotlight that preference of a male child is not restricted to rural population and how, even after entering the post modern age classical dancing is still considered a womanly thing. There is a wide range of themes we find in Dattani's plays but his popularity does not rest solely upon the subject but his lucid writing style and simple language helps in weaving smooth plots that are also easy to understand. His plays have an air of humour around them which doesn't leave us stressed at the end of the play.

Dattani is the first Indian playwright writing in English to be awarded the prestigious Sahitya Akademi award. He touches those strings of the society that people try to escape from. There have been a pageant of writers who had put efforts in drawing the real picture of the society, but either very few had picked on these subjects or even if they did, they could not do justice with them. Dattani, did not only choose socially sensitive issues but was also able to draw sympathy from the audiences. LGBTs are mentioned in a number of ancient Indian scriptures including Mahabharata and almost every Indian is familiar with their important role. But as the times changed, the Indian society has become more rigid. Indian culture and society had always been known for its grandeur, open mindedness, accepting and focusing on co-existence. We had accepted Draupadi with her five husbands or Dashratha with three wives. We vowed to Ram's "ek nari vratdhari" status but also worshipped Krishna or Hanuman. The Indian culture had always been about diversity and most of all embracing that diversity. We never frowned upon the idea of a woman warrior or a celibate kshatriya, but the scenario changed drastically over the time.

The emergence of a chauvinistic patriarchal society which was a result of various influences gave rise to suppression of people on a number of accounts. People were suppressed because of their caste, gender, sexuality and even the financial status. The disparities are still there with various new grounds. Dattani explores these differences and the reason behind them and questions that why it has become so difficult to accept people as they are in today's world. He raises an important question that why we are so reluctant in accepting people who cannot fit into our set compartments. He shows us how we have failed as human beings and how we lack basic humanity.

Dattani's play *Seven Steps Around the Fire* was first published on 15 July, 2013. The play had a female protagonist and if that was not enough to create a stir, the play revolves around the murder investigation of a transgender, who was killed for having a relationship with a politician's son. The couple wanted to get married but as soon as the news reaches the politician, an innocent life is sacrificed. Twenty first century was expected to bring a lot of positive, progressive changes in the world, but the grim realities are hard to accept. The play was immensely successful as it raised multiple questions like how can a female protagonist overshadow her Police husband in the investigations of a case, if eunuchs are part of the society,

*Guest Faculty, Sri Sathya Sai College for Women, Bhopal (M.P.) INDIA
**HOD, Govt. Hamidia Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA

why are they deprived of justice and why sexual orientation is such a big taboo. The supreme end of all our efforts is happiness, and we fail to understand that everybody has their own definition of happiness. The Hindu mythology consists of various episodes where we find numerous mentions of eunuchs, transgender, as well as same sex stories. It seems that ancient people were more accepting than we are today.

The theme of gender issues is widely covered by Dattani in his numerous plays including *Seven Steps Around the Fire.* Uma, who is married to Chief Superintendent of Police, Suresh Rao, is a well educated woman and stands for her views. The couple is a representation of the elite class of society and one cannot imagine the gender disparity in this strata. An underlying plot to the murder investigation of this play is the struggle the couple is facing to have a child. The response Uma gets after she asks her husband to go for a medical check-up is typical of the patriarchal set up we are living in. He readily refuses the suggestions because he is a man.

Dattani's play *Tara* revolves around the age old story of preference of a male child. The fact that Tara is more intelligent and capable than Chandan is overlooked by both their parents and their affection towards Chandan is seen clearly throughout the play. Generally this theorem is related to people who belong to lower classes of society or those belonging to rural areas, but Dattani, through Tara, unveils that miserable thinking is irrespective of strata and standards. The margin between man and woman and various phenomenon associated with them are depicted in his more than one play. *Where There is a Will* and *Dance like a Man* are two of them. The air of superiority surrounding most of misogynistic men these days is part of society and their upbringing also. It is demeaning to a man when he is compared to a woman, as if his authority is threatened. Even Dattani's *Seven Steps Around the Fire* raises an obvious question that why is it so difficult for the society to accept that a woman can be more intelligent and smart than a man.

Dattani has tried to pick every possible flaw that is rotting our society today and his plays. One of his most famous plays, *Thirty Days in September* revolves around the serious issue of child abuse. Mala, who is continuously molested by her own maternal uncle for years, becomes so much disturbed psychologically that she is unable to comprehend that any relationship can be anything more than sexual. It is when Deepak comes into the frame and delves deep into the matter, we come to know that her mother has gone through the same trauma by the same person. It is beyond one's imagination to come at peace with a turbulent past and Mala's mother has it even worse because she witnesses the same tortures happening to her daughter. She tries to find shelter in Krishna and blames Mala that it is all her fault and she should also pray to Krishna for redemption. The play ends on much needed note when Deepak confronts the uncle and helps Mala. Mala gradually recovers from the trauma of her past and becomes a better person with the help of the psychiatrist. If we look at the play from a broader perspective, we cannot count the number of innocent lives that are sacrificed to this evil. There are people who go through this menace for years and cannot disclose it to anyone, there are also those who open the information to others but no action is taken. Pedophilia is a serious crime and there are laws related to it, but unfortunately the cases do not even reach respective authorities. The play shows both the good and the bad man, as if explaining that our society still has goodness imbued in it.

Apart from the range of plays Dattani has written, he is also known for writing various screenplays, some of which are adaptations of his plays and others are original ones. The screenplay for *Ek Alag Mausam* is a critically acclaimed one and tries to break prejudiced notions associated with HIV. The plot decodes the problems in the lives of HIV patients and how they deal with them. The fear of death is constant, but waiting for it is truly a sin and the play justifies this notion. The play was greatly admired for its underlying theme where the characters not only fight against the disease but their emotions as well. Apart from showcasing the gravity of the condition of HIV patients in the society, the play intertwines a beautiful love story of Aparna and George. Both of them fall victim to the paws of the dreadful disease, but have different approaches towards life. Their relationship evolves with the play and the audience sees hope and happiness in the end. The play is much more than a social treatment of the disease. It brings in spotlight the emotions of a wife who was cheated by her husband, a mother who is concerned for her daughter's future and a love story that found its roots in broken hearts. Dattani is known to stir numerous emotions in his readers by bringing out the truth in the society. It is through his plays that we gain new perceptions towards the uncommon way of life.

References :-

1. Agarwal, Beena. Mahesh Dattani's Plays: A New Horizon in Indian Theater. Jaipur: Book Enclave, 2008. Print.
2. Bari, Rachel, and M. Ibrahim Khalilullah. "Reading Dattani: A Viewpoint." The Literary Criterion 42.3-4 (2007): 56-64. Print.
3. Batra, Jagdish. "The Shavian Protagonist of Mahesh Dattani's Dance Like a Man." Critical Endeavour. 16 (2010): 216-225. Print.
4. Burton, Richard F. The Kamasutra of Vatsyayana: The Classic Hindu Treatise on Love and Sexual Conduct. Dutton: U of Virginia P, 1964. Print.
5. Dattani, Mahesh. Collected Plays. New Delhi: Penguin Books, 2000. Print.
6. Dattani, Mahesh. "Night Queen." Yaarana: Gay Writing from India. Ed. Hoshang Merchant. New Delhi: Penguin Books, 1999. 57-71. Print.

आधुनिक काल की कविताओं में राष्ट्रबोध

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – राष्ट्रबोध शब्द आधुनिक है, जिसमें जाति सम्प्रदाय धर्म सीमित भूभाग की संकीर्णता के स्थान पर एक समग्र देश और उसके भीतर निवास करने वाली समस्त जातियों : सम्प्रदायों भिन्न – भिन्न भूखंडों और रीति रिवाजों के लोगो का संश्लिष्ट सामूहिक रूप तथा उनका जीवनानुभव उभरता है। द्विवेदी युग से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक हिंदी कविता में जो राष्ट्र बोध के स्वरमिलते है, वे कहीं खंडित रूप में तो कहीं संश्लिष्ट रूपमेंदिखलाईपड़तेहै। वर्तमान युग में हमारी राष्ट्रीय समस्याएं निरतंर जटिल और गहरी होती जा रही है। राष्ट्रबोध की कविता धारा में राष्ट्रीय अंर्तराष्ट्रीय समकालीन संदर्भो से जोड़कर विशिष्ट सांस्कृतिक बोध को जागृत करने की रचनांए लिखी जानी चाहिए।

शब्द कुंजी– राष्ट्रबोध, आधुनिक, हिंदीकविता, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय ,समकालीन, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, यथार्थवादी , लोकोन्मुख, सार्वभौम , संवेदनाओं, प्रयोगवादी ।

प्रस्तावना – उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व तक अपनी सांस्कृतिक एकता के बावजूद भारत व्यावहारिक रूप से भिन्न – भिन्न राज्यों में बॅटा हुआ था। वास्तव में पूरे भारत वर्ष की एकता के अर्थ में राष्ट्रीयता और राष्ट्रबोध की भावना का विकास आधुनिक काल में हुआ। अँग्रेजो ने समूचे देश में एक शासन स्थापित किया, जिससे देश के सभी लोग एक शासक की प्रजा हुए. और उस समय पूरे देश को समान यातना का अनुभव हुआ। अपने – अपने में बंटे हुए लोगों को यह प्रतीत हुआ कि वे सब मिलकर एक है। वे चाहे किसी जाति या धर्म के हो, अँग्रेजों के गुलाम है, इसीलिए अँग्रेजी शासन के विरूद्ध मुक्ति का आंदोलन किसी एक धर्म या प्रदेश में सीमित न रह कर पूरे देश में व्याप्त हुआ, इस प्रकार जनां दोलन के इस काल में राष्ट्रीय एकता का जो स्वरूप उभरा वही हमारे वर्तमान राष्ट्रबोध की आधार भूमि है।[1] भारत एक विशाल देश है, जहाँ अनेक संस्कृतियों भाषाओं तथा रीति रिवाजों के लोग रहते है। ऊपर – ऊपर से वे एक दूसरे से अलग – अलग दिखलाई पड़ते है पर उनका मूल श्रोत एक ही है, जो आंतरिक रूप से सब को बांधता है, वह है प्राचीन संस्कृति तथा प्राचीन आध्यात्मिक सत्य, यही सत्य भारत की राष्ट्रीयता है। कहा जाना चाहिए कि भारत में उभरने वाली राष्ट्रीयता और राष्ट्रबोध की भावना में तीन मुख्य बातें लक्षित होती है–

1. भारतीय पराधीनता की यातना का अहसास और उससे मुक्ति पाने का प्रयास।
2. पश्चिमी सभ्यता और अलगाव की भावना से आक्रांत होती हुई भारतीय चेतना के उद्धार के लिए तथा उसमें एकता और स्वामिभान का बल फूंकने के लिए अपनी प्राचीन संस्कृति से समुज्ज्वल रूप का प्रस्तुतीकरण।
3. उपयोगी आधुनिक मूल्यों के आलोक में राजनीतिक, सामाजिकऔर धार्मिक व्यवस्था का पूनर्विचारत था पुर्नगठन।[2]

स्वतंत्रता प्राप्ति तक प्रथम दो तत्व बहुत प्रबल रहे पर स्वाधीनता प्राप्ति के बाद तीसरे तत्व की प्रधानता और सार्थकता शेष रह गई।इसका परिणाम यह हुआ कि देश की राजनीति क व्यवस्था की प्रतिष्ठा पर और विकास का प्रयास तेज हुआ तथा नवीन राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के कारण उत्पन्न समस्याओं से जूझने और उनका समाधान खोजने की चेष्टा प्रारंभ हो गई स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वर्तमान समस्याओं और प्रश्नों के संदर्भ में जब हम अपनेअतीत गौरव को देखते हैं तब उससे अभिभूत होने के स्थान पर उसका पुनर्मूल्यांकन करते है। हिंदी कविता का राष्ट्रबोध आधुनिक काल में विशेष रूप से भारतेंदु युग की कविताओं में प्राप्त होता है। तब से लेकर आज तक उसके स्वरूप का विकास होता रहाहै।आरंभ में छोटे–मोटे दु:ख दर्दो सहज भावनात्मक प्रतिक्रियाओं तथा अतीत स्मरण के रूप में लाक्षित होने वाला राष्ट्र बोध धीरे– धीरे जटिल और संश्लिष्ट होता गया था अनेक मानवीय और सार्व भौम प्रश्नों तथा संवेदनाओ से सम्पन्न होता चला गया। नयी–नयी राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों ने उसे जटिल रूप प्रदान किया। द्विवेदी काल तक हिंदी कविता मेव्यक्त भारतीय राष्ट्रीयता बहुत कुछ हिंदूराष्ट्रवाद के रूप में दिखाई पड़ती है। इसका कारण हिंदू राष्ट्र बोध का प्रचार नहीं था वाल्कि वह परंपरागत हष्टि थी जो उदार भारतीय राष्ट्रवाद से मेल नहीं खाती थी।द्विवेदी युग से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक हिंदी कविता में जो राष्ट्र बोध के स्वर मिलते है, वे कहीं खंडित रूप में तो कहीं संश्लिष्ट रूप में दिखलाई पड़ते है। इन कविताओं में राष्ट्र बोध का सबसे स्थूल रूप वह है जिसमे विदेशी शासन के अत्याचारों उनसे प्रसूतजन यातनाओं और जनता के मन में उठती हुई क्रोध तथा असंतोष की ललकारों का चित्रण है।रामधारी सिंह दिनकर, बालकृष्ण शर्मा नवीन, सोहनलाल द्विवेदी, माखनलाल चतुर्वेदी आदि की कृतियों में प्रमुख रूप से राष्ट्रबोध का यही स्वर सुनाई पड़ता है। इनमें वस्तु स्थिति की सही व्याख्या के स्थान पर भावुक प्रतिक्रिया है। छाया वाद काल के राष्ट्र बोध में आत्म पीड़न तथा अंहिसाजन्य नरम प्रतिरोध दिखाई पड़ता है। किंतु इसके बाद वाम पंथीदलोंकेउदय समाजवादी सिद्धांतों के प्रचारत था विदेशी शासन के झूठे वायदों और अधिकाधिक कठोर विजय एवं जटिल होती परिस्थितियों के कारण कविता का स्वर अधिक उग्र , यथार्थ वादी और लोकोन्मुख होता गया। दूसरी बात यह हुई कि प्रगतिवाद के प्रभाव से देश के भीतर बनते हुए शोषकों तथा शोषितों के

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

होती गई।सन् 1938 से लेकर अनेक वर्गों की पहचान स्वतंत्रता प्राप्ति तक की हिंदी कविता का राष्ट्र बोध–वैचारिक उग्रता और समाजोन्मुखता के निकट पहुंच गया था। इन कविताओं में समाज की पीड़ा और अभाव के साथ ही साथ जिन्दगी का संघर्ष , अडिग विश्वाश और भविष्य की सुंदर आकांक्षा है। कविता को सोददेश्य मानने की दृष्टि से लिखे गए इस साहित्य के लेखकों में केदारनाथ अग्रवाल , रामविलास शर्मा, नागार्जुन शिवमंगल सिंहसुमन , त्रिलोचन आदि के नाम उल्लेखनीय है।सनृ 1943 से 1947 के बीच (स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक) हिंदी कविता में प्रयोगवादी कवियों का वर्चस्व रहा जिन्होंने नये सत्य के शोध और प्रेषण के माध्यम से राष्ट्र के लिए नए जीवन सत्य के खोजकी घोषणा की , वह सत्य मध्यवर्गीय समाज के व्यक्ति का था किंतु ये कवि और उनकी कविता मध्य वर्गीय जन–जीवन के सामूहिक जागरण और राष्ट्र के व्यापक जन–जीवन के बोध से असम्पृक्त रहने के कारण अपनी सीमाओं को तोड़ने में सक्रिय नहीं हों सके।भारत की स्वतंत्रता के समय यानी 1947 में हिंदी में नयी कविता लिखी जा रही थी जो परम्पराग तक से आगे नये भाव बोधों की अभिव्यक्ति के साथ ही नए मूल्यों और नये शिल्प – विधान का अन्वेषण कर रही थी। जिस समय स्वतंत्रता प्राप्ति के परिप्रेश्य में सुख केअसीम सपने संजोए कुछ कवि स्वागत गीत गा रहे थे, स्वतंत्रता राष्ट्र की नयी परिकल्पना को रूप और दिशा दे रहे थे, उससमय नयी कविता के प्रतिनिधिकविवृहत्तरजीवन की आस्था को बल देने वाली लघु मानवतावादी राष्ट्रीय जीवन मूल्यों की सकारात्मक कविता लिख रहे थे। कविता में राष्ट्रबोध देश के स्थुल सुख–दुख , उत्साह–उमंग और आक्रो श के चित्रण में ही नहीं होता बल्किराष्ट्र की आत्मा या चेतना की पहचान से होता है। यह चेतना स्थिर न होकर गतिशील रहती है–अर्थातनए –नए परिस्थितियों मे नए –नए कोण उभारती है। और पुराने कोण छोड़ती रहती हैं। हिंन्दी की नयी कविता का संबंध इसी चेतना सेथा, वह सतह ही उत्साह में दिशाहीन लेखन में न पड़कर प्रत्यक्ष याअप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय जीवन के वृहत्तर मुल्यों से जुडी हुई है–इसमें अज्ञेय, मुक्तिबोध , भारतभूषणअग्रवाल, भवानी मिश्र, नरेश मेंहता, धर्मवीर भारतीआदि की कविताएँ सूक्ष्म राष्ट्रबोध की सशक्तभावनाओं को अभिव्यक्ति देती है। दोनों प्रकार के राष्ट्र बोध के कुछ उदाहरण हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हरिवंशराय बच्चन नेलिखा–

'हो गया है , आज मेरे राष्ट्र का सौभाग्य स्वर्ण विहान
कर रहा हैं आज मै आजाद हिदुस्तान का आव्हान य'
बच्चन को 'आजाद'' राष्ट्र की जिम्मेदारियों का भी बोध है–
'आज से आजाद रहने का तुझे है मिल गया अधिकार किन्तु उसके
साथ जिम्मेदारियोंका शीश पर है, भार।

किन्तु गिरिजा कुमार माथुर की कविता का राष्ट्र बोध कुछ अधिक सूक्ष्म है–

'आज जीत की रात
पहरूए सावधानरहना
खुले देश के द्वार
अचल दीपक समान रहना।'

उनकी दृष्टि से देश का यथार्थवादी रूप ओझल नहीं हुआ, इसीलिए वे कहते है– [3]

'शोषण से मृत है समाज,
कमजोर हमारा घरहै,
किन्तु आ रही नई जिन्दगी
यह विश्वास अमर है।'

देश एक, लक्ष्य एक, कर्म एक है, का नारा हिन्दी कवियों की राष्ट्रीय चेतना को ध्वनित करता है। देश केबिखरे जीवन स्वप्नो को राष्ट्र बोध के सशक्त जीवनानुभवों में पिरोने का काम देशवासियों का है।अज्ञेय नेलिखाहै–

'सुनो हे, नागरिक
अभिनवसभ्य भारत के नए जन राज्य के
सुनों यह मंजूबा तुम्हारी है।
पला है आलोक चिरदिन यह तुम्हारे स्नेह से,
तुम्हारे ही रक्त से।
तुम्ही दाता हो, तुम्ही होता, तुम्ही यजमान हो
यह तुम्हारा पर्व है।

हिन्दी कविता में यह प्रयास बराबर हुआ है कि भाषा, धर्म, भूगोल, की विभिन्नता में राष्ट्रीय एकता के बोध को बनाए रखें भवानीप्रसाद मिश्र ने लिखा है–

'एक से बादल जमे है,
गगन भर फैले रमे हैं,
ढेर हूँ उनका, न फँाके,
जो कि किरणें मुझे–झाके,
लग रहे हैं, वे मुझे यों
माँ कि आगँन लोव दे ज्यौं।'

नागार्जुन ने जनता को ही राष्ट्रबोध का प्रतीक माना है। जनता ही राष्ट्र है, राष्ट्र ही जनता है। सब कुछ उसी का है, सब कुछ वही है–

खेत हमारे भूमि हमारी,
सारा देश हमारा है,
इसीलिए हमको उसका,
चप्पा चप्पा प्यारा है।

समय के साथ राष्ट्रीय जीवन से जुड़ी हुई कल्पनाएँ और सपने बिखरने लगे। भारतीय समाज का परिवेश बड़ा जटिल और विषम है। उसकी सामाजिक स्थिति तथा उसका यथार्थ देश का यथार्थ बनकर कुण्ठा, लाचारी और निराशा का रूप ग्रहण करता गया। राष्ट्रीय जीवन के हर क्षण को विश्वास के साथ भोगना उसकी पीड़ा और निराशा को भी जीवन सत्य मानकर उससे संघर्ष करना हमारी कविता का लक्ष्य होना चाहिए था पर ऐसा नही हुआ। अकविता अतिकविता, अस्वीकृत कविता, विद्रोही पीढ़ी कबीर पीढ़ी क्रुद्ध पीढ़ी आदि के नाम से सन् साठ के बाद जो कावितएं हिंदी में आई वह देश के 'राष्ट्रबोध की मूर्तिभंजक रचानांए थी। संकट के समय चाहे वह चीन और पाकिस्तान का आक्रमण हो चाहे मार काट हिंसा या आंतकवाद की चुनौती हो, चाहे बाढ़ या अकाल का तांडव हो देश का मानस राष्ट्र की चेतना एक अजीब तरह की राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रबोध की भावना से आंदोलित हो उठती है। हिंदी कविता में भी उसके स्वर सुनने को मिल जाते है।

सांसों में तूफान जगाओं, आखों में अंगार जलाओं
मस्तक सदा रहा है ऊँचा, धरती पर ईमान का
भारत माता देख रही है, फहरे झंडा आन का।

वर्तमान हिंदी कविता में भी यथार्थवादी दृष्टि काल्पनिक या आदर्शवादी या भावुकता मिश्रित मानववाद से संतुष्ट न होकर जीवन का मूल्य, उसका सौदर्य और प्रकाश राष्ट्र के यथार्थ में खोजती है। वर्तमान की गहन निराशा और बिखराव के बीच भी हिंदी कविता अनागत ज्योति के लिए प्रतीक्षमान है, इसीलिए राष्ट्रीय जन – जीवन को एकांत का दामन छुडाकर सामान्य जीवन के बीच आने की प्रेरणा देती है–

उठो इस एकांत से, दामन छुड़ाओ–
चलो उतरकर नीचे की सड़क पर
यहां जीवन सिमट कर बह रहा है
साहस की दिशा में (भवानी मिश्र)

निष्कर्ष यह है कि वर्तमान युग में हमारी राष्ट्रीय समस्याएं निरतंर जटिल और गहरी होती जा रही है। भूगोलिक और सांस्कृतिक इकाइयॉ टूटन के कगार पर है अब अतीत की गरिमा से अभिभूत होने के स्थान पर कविता में यथार्थ के परीक्षण का समय है। राष्ट्रबोध की कविता धारा में राष्ट्रीय अंर्तराष्ट्रीय समकालीन संदर्भो से जोड़कर विशिष्ट सांस्कृतिक बोध को जागृत करने की रचनांए लिखी जानी चाहिए। राष्ट्रीय घटनाओं पर आधारित फुटकर रचनाएं वर्तमान राष्ट्रीय जीवन की जटिल गहराइयों में नहीं उतर सकती। जो कविताएं अनुभूति की आंच से ऊष्म नहीं होगी जिनमें गहरे जीवनानुभवों और सौंदर्य दृष्टि के स्थान पर उत्तेजना होगी या नकली बौद्धिकता होगी या मात्र राजनीतिक प्रतिबद्धता होगी वह कविता राष्ट्र बोध को सही अर्थों और संदर्भो में व्यक्त नहीं कर सकती।[4]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वीणा, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग इन्दौर जनवरी 2008, पृष्ठ 10, 11
2. आजकल, साहित्य की मासिक पत्रिका, नई दिल्ली मार्च 2008, पृष्ठ 17
3. जनसत्ता समाचार पत्र।
4. स्वंय का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

घनानंद- काव्य की सहज प्रेम-व्यंजना, स्वच्छंदता तथा उदात्तता - एक विवेचन

डॉ. आईशा खान *

प्रस्तावना – रीतिकाल में **'घनानंद'** कवि का नाम रीतिमुक्त तथा स्वच्छन्द प्रवृत्ति के कारण उल्लेखनीय है। घनानंद का काव्य किसी रीति के परिपालनार्थ नहीं रचा गया वरन् उन्होंने तो सायास कुछ लिखा भी नहीं –

'लोग हैं लागे कवित्त बनावत।
मोहि तो मेरे कवित्त बनावत।।

वास्तव में घनानंद के कवित्तों ने ही घनानंद को बनाया है – रीति से मुक्त, स्वच्छंद और उदात्त प्रेम का निरूपक कवि। उनका काव्य उनकी निजी और सच्ची अनुभूति-जन्य एक उदात्त प्रेम-काव्य है, जो भक्ति की सीमा तक पहुंच गया है। भाव-जगत की स्वच्छंता से युक्त घनानंद का काव्य का मूल उनकी सच्ची प्रेमानुभूति रही है। उनके काव्य में रीतिकालीन लक्षण-बद्धता तथा अलंकार-चमत्कार और चुलबुलापन नहीं है। प्रेमी-हृदय की सहज-अनुभूतियों के प्रकाशन में कृत्रिमता और चमत्कारों की छटा बिखेरने का अवकाश भी कहाँ? यद्यपि अनायास जो अलंकार आ गए हैं वे बहुत सहज हैं।

घनानंद के जीवन में **'सुजान'** का **'प्रेम'** ही उनके काव्यत्व का **यप्राण'** बना। प्रेम के मूल में **'काम'** होता है। भारतीय जीवन-पद्धति में वैदिक साहित्य ने चार लक्ष्य बताए हैं – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। श्रृंगार रस का मूल यही **'काम'भावना'** होती है। **'वात्स्यायन'** ने भी अपने **'कामशास्त्र'** में कहा है कि – **'काम ही मानव-भावनाओं का मूल है।''**

आधुनिक मनोवैज्ञानिक फ्रायड, युंग आदि विद्धान् भी **'काम'** को सारे जीवन-व्यापार की प्रेरणा मानते हैं।

घनानंद के काव्य में सुजान के प्रति प्रेम का अप्रतिम वर्णन हुआ है। संयोग श्रृंगार के समय में घनानंद ने सुजान के रूप- सौन्दर्य का बड़ा ही उदात्ता चित्रण किया है :-

'झलकै अति सुंदर आनन गौर,
छके दृग राजति काननि छ्वै।
हॉसि बोलन में छबि फूलन की वरषा,
उर ऊपर जाति है है ह्वै।।''

× × × × × ×

'खंजन ऐसे कहाँ मन रंजन,
मीननि लेखौ कहाँ रस-ढार सो।'

उल्लेखनीय है कि सौन्दर्य-वर्णन में कहीं रीतिकालीन स्थूलता नहीं, बड़ा ही सूक्ष्म एवं उदात्त चित्रण है।

सुजान के रूप-सौन्दर्य और सान्निध्य के लिए घनानंद दीवाने थे, परन्तु प्रेयसी के प्रति आदर-भाव और मानसिक प्रेम की उत्कंठा देखने योग्य है-

'रावरे रूप की रीति अनूप, नयो नयो लागत ज्यौं ज्यौं निहारिये।
त्यौं इन आँखिन की बानि अनोखी, अघानि कहूँ न आनि तिहारिये।।'

'सुजान को वे सुंदरता का सदन तक कहते है –

'छबि को सदन गोरी बदन, रूचिर भाल,
रस निचुरत मीठी मृदु मुस्क्यानि मैं।'

घनानंद की प्रेमासक्ति में स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति दिखाई देती है साथ ही स्थूलता नहीं, विशुद्ध सूक्ष्म भावनात्मक सौन्दर्य-चित्रण दिखता है, जो घनानंद के स्वच्छंदतावाद को **'छायावाद'** की जड़ के रूप में देखा जा सकता है अर्थात् यह हिन्दी कविता की भावधारा में प्रथम रोमेंटिक प्रयास था, जिसमें कविगण अपनी निजी अनुभूतियों का गायन करने लगे। हमें घनानंद के काव्य को रीतिमुक्त काव्यधारा में भी एक ऐसे साहसिक प्रयास के रूप में देखना होगा, जो प्रेम की चित्तावृत्ति को गहन रागात्मकता के साथ वैयक्तिक मनोभूमि पर प्रस्तुत करते हैं।

घनानंद के लिए प्रेम एक आत्यंतिक निजी और मानसिक अनुभूति है, एक साधना है। प्रेम में प्रिया-दर्शन की आकुलता, संयोग की उत्कण्ठा, न मिल पाने पर छटपटाहट सभी है, परन्तु स्थूलता के लिए उसमें कोई स्थान नहीं है। न श्रृंगार और संयोग वर्णन में ऊहात्मकता न विरह में शोर मचाना – जो भी भोगा उसे गंभीरता से लिखा। कहीं भी ऐहिकता और अतिशयोक्ति नहीं –

'रोम रोम रसना ह्वै, लहै जो गिरा के गुन।
तऊ जान प्यारी, निबरै न मैन आरतै।'

और न ही प्रेम में प्रेयसी को न पाकर जीवन से कोई पलायनवादिता –

'हीन भये जल-मीन अधीन, कहाँ कछु मो अकुलानि समाने।
नीर सनेही को लाय कलंक, निरास ह्वै, कायर त्यागत प्रानै।।'

हॉ, परन्तु प्रेम के मार्ग को सीधा बताने वाले घनानंद **'सुजान'** से इस बात पर चिढ़ते हैं कि वह प्रेम निभाना नहीं सीख पाई और उलाहना भी देते हैं-

'अति सूधौ सनेह को मारग है, जहां नेकु सयानप बाँक नहीं।
घनआनंद प्यारे सुजान सुनौ, यहां एक तै दूसरों आँक नहीं
तुम कौन धौ पाटी पढ़े हौ लला, मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।।'

उपर्युक्त पंक्तियों में घनानंद लौकिकता से अलौकिता की तरफ बढ़ते दिखाई दे रहे हैं – **'लला'** संबोधन श्रीकृष्ण के लिए प्रयुक्त हुआ है। **'प्रेम की पीर'** से ही घनानंद के काव्य का जन्म हुआ और पीर जब सीमा-पार हो चली तो अलौकिकता के दर्शन होने लगे। घनानंद के पूर्व भी प्राचीनकाल और भक्तिकाल के अनेक कवियों ने राधा-कृष्ण की प्रेम-लीलाओं का वर्णन कर श्रृंगार को भक्ति का जामा पहनाया, परन्तु घनानंद ने वैसा नहीं किया।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) साहित्य महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

उनका प्रेम ही उच्चता पर पहुँचकर पवित्र, अलौकिक–सा हो गया। प्रेम की अन्तर्दशा का चित्रण ही घनानंद का ध्येय रहा, जो अद्वितीय बन पड़ा है। केशव, बिहारी, विद्यापति आदि भी भांति उन्होंने नारी के नख–शिख वर्णन को प्रस्तुत नहीं किया, अपितु उसकी चितवन, मुस्कान, लज्जा जैसे सूक्ष्म सौन्दर्य का चित्रण अनुभूतिपूर्ण शब्दों में किया है। साथ ही विरह–वर्णन में भी गंभीरता तथा उदात्तता का परिचय दिया है :–

'वहै मुस्क्यानि, वहै मृदु बतरानि वहै लड़कीली बानि उर में अरति है।'

प्रेम की गूढ़ अन्तर्दशा का उद्घाटन जैसा घनानंद ने किया वैसा हिन्दी का कोई अन्य श्रृंगारी कवि न कर सका। इस दशा का पहला स्वरूप है – हृदय या प्रेम का आधिपत्य और बुद्धि का अधीन पद जैसा कि घनानंद कहते हैं –

'रीझ सुजान सची पटरानी, बची बुधि बापुरी ह्वै करि दासी।'

प्रेमियों की मनोवृत्ति इस प्रकार की होती है कि वे प्रेम की कोई साधारण चेष्टा भी देखकर उसका अपनी ओर झुकाव मान लिया करते हैं और फूले फिरते है। इस का कैसा सुंदर आभास कवि ने नायिका के इस वचन द्वारा दिया है, जो मन को संबोधित करके लिखा गया है –

'रूचि के वे राजा जान प्यारे हैं आनंदघन, होत कहा हरे, रंक।
मानि लीनो मेल सो।'

कवियों की इसी अंतर्दृष्टि की ओर लक्ष्य करके एक प्रसिद्ध मनस्तत्तववेत्ता ने कहा है कि– भावों या मनोविकारों के स्वरूप–परिचय के लिए कवियों की वाणी का अनुशीलन जितना उपयोगी है, उतना मनोविकारों के निरूपण का नहीं।

प्रेम की अनिवर्चनीयता का आभास घनानंद ने विरोधाभासों के द्वारा दिया है, परन्तु उनका प्रेम अन्तर्वृत्ति निरूपक ही है, बाह्यार्थ निरूपक नहीं। प्रेम और विरह–जनित व्याकुलता और बेचैनी का घनानंद ने अनेक स्थलों पर वर्णन किया है, परन्तु उन्हात्मकतापूर्ण नहीं –

'अकुलानि के पानि पर्यौ दिन राति,
सु ज्यौ छिनकौ न कहूँ बहरै।
– – – – – – – – – – –
भए कागद – नाव उपाय सबै,
घनाआनंद नेह–नदी–गहरै।'

फिर प्रेम–पथ पर सर्वस्व समर्पण–भाव भी दिखाई देता है :–

'अब तो सीस चढ़ाए लई,
जु कछू मन भाई सु कीजिये जू।।'

और फिर **'सुजान'** को आशीष भी देते है, यह एक ऐसी मानसिक अवस्था हैं जहाँ प्रेमी अपने प्रिय को लाख उलाहने देने के बाद भी उसका भला ही चाहता है :–

'नित नीके रहौ तुम्हे चाड़ कहाँ,
पै असीस हमारियौ लीजिए जू।।'

प्रेमी घनानंद का मन प्रेयसी के –दर्शन की लालसा में लम्बी प्रतीक्षा करते–करते प्रेयसी को भगवान श्रीकृष्ण के रूप में और स्वयं को विरहिणी नायिका (राधा) के रूप में देखने लग जाता है।

प्रेम का उदात्तीकरण हो जाता है –

भोर तैं सांझ लौं कानन और निहारति, बावरी नेकु न हारति।
– –
मोहन–सोहन जोहन की लगियै रहै आंखिन के उर आरति।।'

लौकिक प्रेम, अलौकिकता की राह चल पड़ता है। फिर कभी विरोधाभासी रूप में शिकायत के स्वर सुनाई पड़ जाते हैं –

'क्यौं हँसि हेरि हर्‌यौ हियरा, अरू क्यौं हित कै चित चाह बढ़ाई
काहे को बोलि सुधासने बैननि, चैननि मैन निसैन–चढ़ाई।'
– –
मीत सुजान अनीत की पाटी इतें पै न जानिये कौनें पढ़ाई।।

प्रेयसी की निर्दयता से आहत भी बहुत होते हैं, एकदम लौकिक प्रेमी की तरह –

'ऐसो हियो–हित पत्र पवित्र जु आन–कथा न कहूँ अवरेख्यौ।
सो घनआनंद जान अजान लौं टूक कियौ पर बाँचि न देख्यौ।।'

सुजान को पीड़ा की स्थिति में **'विश्वास घातिनी'** तक कह देते हैं, जब बादलों से सुजान तक अपने आँसुओं को बरसाने का निवेदन करते हैं–

'कबहुँ पा बिसासी सुजान के आँगन मो अंसुवानहु लै बरसौ।।'

और कभी पवन से निवेदन करते हैं कि विरह में जलती इन आँखों में सुजान की चरण धूलि लाकर डाल दे ताकि कुछ शांति मिले .....

ऐ रे बीर पौन .....
धूरि तिन पायन की, हा हा नेकु आनि दै।

परन्तु अंतत: जब सुजान नहीं मिलती तो निराशा में शिंथिल होकर कहते हैं–

'घनआनंद जीवनमूल सुजान की कौंधन हूँ न कहूँ दरसै।
बदरा बरसै रितु में घिरि कैं, नित ही अँखियां उधरी बरसै।।'

और विरह की दशा में इतने निराश हो जाते हैं कि।

'हेत खेत धूरि चूर–चूर है मिलैगो, तब चलेगी कहानी घनआनंद
तिहारे की।'

लेकिन वही दूसरी तरफ प्रेम के लिए उनकी धारणा एकदम दृढ़ है –

'चंदहि चकोर करे, सोऊ ससि देह धरै,
मनसाहु रहै एक, देखिबै को रहे द्वै।
ज्ञानहूँ तें आगे जकी पदवीं परम ऊँची ।'

प्रकृति का उद्दीपनकारी रूप भी घनानंद–काव्य में बड़ी सहजता धारण किए चित्रित हुआ है–

'सुधा तें स्रवत विष, फूल में जमत सूल
तम उगिलत चन्द, भई नई रीति है।'

इस प्रकार वियोगजन्य अंतर्दशाओं का बड़ा मार्मिक चित्रण घनानंद ने किया है। मनोविश्लेषकों का मानना है कि **'प्रेम की पीर'** जब चरम पर पहुँच जाती है तो प्रेम का उदात्तीकरण हो जाता है। प्रेमी भग्वद–भाव में लीन होने का प्रयास करता है, घनानंद ने भी यही किया। **'सुजान'** उनके लिए ईश्वर का पर्याय हो गई –

'तुम ही गति हौ तुम ही मति हौ,
तुम ही पति हौ अतिदीनन की।।'
– – – – – – – – – – – –
'पाऊँ कहाँ हरि हाय तुम्हें धरती में
धँसौ कि अकासहिं चीरौ।।'

इस प्रकार श्रीकृष्णकी भक्ति में अनेक कवित्ता, सवैये लिखे परन्तु घनानंद भक्त कवि कवि नहीं कहे जा सकते क्योंकि उनके प्रेम के मूल में लौकिक प्रेम ही था। हाँ उसमें अंतर्वृतिनिरूपण रहा और विरह की आग में तपकर वह और अधिक उदात्त हो गया यही घनानंद–काव्य की विशेषता है, जो उन्हें समकालीन अन्य कवियों से अलग करती है। घनानंद का काव्य निज प्रेम की सच्ची अनूभूतियों से उत्पन्न सहज उद्गार है, स्वच्छंदता से कवि

ने उन्हें अभिव्यंजित किया है और अत्यन्त उदात्त रूप में प्रकट हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आ.रामचंद्र शुक्ल पृ. 249-253
2. साहित्यिक निबंध - डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त - पृ.क्र.317-320
3. घनानंद का साहित्यिक अवदान - डॉ. हनुमंत रणखाव पृ. 39-45
4. प्राचीन काव्य - संपा. डॉ. विभा शुक्ला, डॉ. वीरेंद्र मोहन, डॉ. आभा वाजपेयी हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल पृ.क्र. 45-48
5. प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य - संपादक डॉ. सुषमा दुबे, डॉ. गीता नायक, डॉ. संध्या गुप्ता, डॉ. बी.एल. आच्छा, डॉ. चंदा तलेरा जैन पृ.क्र. 28-30
6. पद्यप्रभा - पृ.क्र. 69-70

****

राष्ट्रकवि पं. सोहन लाल द्विवेदी के काव्य में राष्ट्रवाद के विविध रूप

डॉ. इला द्विवेदी *

प्रस्तावना – राष्ट्रीयता किसी एक भाव से बँधी हुई भावना का नाम नहीं है अपितु इसके विविध आयाम हैं। इसके अनेक रूप हैं। राष्ट्र हित में केवल प्राणों की आहूति दे देना ही राष्ट्रीय भावना नहीं है, वरन् इसका संपोषण करने वाला वह प्रत्येक कार्य जो राष्ट्र हित और राष्ट्र मंगल की कामना से प्रेरित हो, वह राष्ट्रवाद के अन्तर्गत आता है। दैनिक जीवन के छोटे-छोटे कामों से लेकर किसी भी क्षेत्र में किए जाने वाले बड़े-बड़े कामों में भी यदि सम्पूर्ण ईमानदारी एवं सत्यनिष्ठा का परिचय दिया जाए तो ऐसा कार्य राष्ट्रवाद के दायरे में ही आएगा क्योंकि इससे प्रत्यक्ष रूप से भले ही न हो पर अपरोक्ष रूप से राष्ट्र का कल्याण होगा ही अत: यह सोच, यह विचारधारा ही विशुद्ध राष्ट्रवाद है।

राष्ट्रकवि पं. सोहनलाल द्विवेदी का काव्य, राष्ट्रीय भावना से उमड़ता हुआ एक ऐसा सागर है, जो राष्ट्रीय भावना की विविध मुक्तक-मणियों को हमारे सामने उड़ेलकर रख देता है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों ही जीवन-फलों को राष्ट्रीय भावना से जोड़कर और राष्ट्रीयता की तरफ मोड़कर समझना और समझाना ही उनके काव्य का उद्घोष, उपदेश और उद्देश्य है, उदाहरणार्थ जब वे धर्म की बात करते हैं तो उसमें नैतिकता, न्याय परायणता, दायित्व बोध, उत्सर्ग प्रवणता, समष्टि के कल्याणार्थ व्यष्टि का त्याग जैसी चिन्तनशीलता के दर्शन होते हैं।

सर्वप्रथम प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीयता के भाव-बोध की ज्योति जलाने वाली उनकी कविताओं का उल्लेख करना यहां आवश्यक प्रतीत होता है। जब देश पराधीन था तब देशहित में संघर्ष करने वालों को हथकड़ियां पहनाकर कारागार में डाल दिया जाता था। इसीलिए कवि ने अपनी राष्ट्रीय भावनाओं को उजागर करने के लिए हथकड़ियों को माध्यम बनाया है। वे लिखते हैं-

'आओ, आओ हथकड़ियाँ, मेरी मणियों की लड़ियाँ।
कर में बँधी विजय कंकड़ सी, उर में आत्मशक्ति लाओ।
जन्मभूमि के लिए शलभ सा, मर जाना, हाँ सिखलाओ।
स्वतन्त्रता की फुलझड़ियाँ, मेरी मणियों की लड़ियाँ।' (1)

यही नहीं कवि ने ऐतिहासिक कथानकों एवं चरित्रों पर कविताएं रचकर भी देशवासियों में राष्ट्रीयता जगाने का अथक प्रयास किया है। उनकी ऐसी ही एक कविता है 'सरदार चूड़ावत' जिसमें सदैव अपने बहादुरी के करतब दिखाने वाला सरदार चूड़ावत् अपनी नवपरीणिता पत्नी के मोह में पड़कर युद्ध से विरत होने लगता है। पत्नी उसे जबरदस्ती युद्ध के लिए भेजती है, तो उसे जाना ही पड़ता है, पर वहाँ उसका मन नहीं लगता है। पत्नी की याद उसे बार-बार सताती है अतएव वह अपने साथी को पत्नी से कोई स्मृति चिह्न लाने को भेजता है। पत्नी क्षत्राणी है। वीरांगना है। वह सोचती है कि पति का मोह उसे कर्तव्य विमुख बना रहा है। राज्य प्रेम से विरत् कर रहा है। वह तुरन्त ही अपना शीश काटकर चिह्न स्वरूप उसके पास भिजवा देती है। युद्ध भूमि में जब सरदार को पत्नी का कटा सिर प्राप्त होता है, तो पत्नी का यह बलिदान उसमें ऐसी प्रेरणा फूँक देता है कि वह फिर धुँआधार युद्ध करता है और अनेकों को मौत के घाट उतारकर स्वयं शहीद हो जाता है। इस कथा के माध्यम से कवि ने देश की नारियों में तो देश के प्रति कर्तव्य भावना जगाने का प्रयास किया ही है, पुरुषों को भी व्यर्थ का मोह त्यागकर अपना निर्दिष्ट पथ पहचानने की प्रेरणा दी है। सरदार चूड़ावत की नवपरिणीता पत्नी के उदात्त, राष्ट्रीयता से लबालब भरे हुए विचार कवि द्विवेदी जी के शब्दों में प्रस्तुत हैं –

'रानी ने सोचा सरदार वीर
के उर है न धीर उनके मन कुसुम बीच,
छिपा है सन्देह कीट काट रहा क्रम क्रम से
उनकी देशभक्ति को उनकी राज्य भक्ति को
उनकी आत्म शक्ति को
बोली बहुरानी, थी आखिर क्षत्राणी,
देती हूँ उत्तर, उपहार कुछ और भी
जाके सरदार से कहो कि बनो सिरमौर
सतीव्रत पालती हूँ इधर मैं, यहाँ यह अभी
तुम भी वीरवती बनो
अडिग महारथी बनो।' (2)

उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से भी राष्ट्रीय भावना को न केवल अभिव्यक्त किया है, वरन् जन-जन में उसका संचार करने का स्तुत्य प्रयास किया है। नैतिकता का परिचय देना भी राष्ट्रीय भावना को पुष्ट करने का एक तरीका है। नैतिकता राष्ट्र को उन्नत करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। इस दृष्टि से कवि द्विवेदी जी का काव्य पूर्णतया समृद्ध कहा जा सकता है। 'वासवदता' की उर्वशी कविता में अर्जुन का आचरण नैतिकता का उद्घोष करता है। स्वर्ग में अपने ऊपर मोहित हो जाने वाली देवांगना उर्वशी के प्रणय-निवेदन को वे ठुकरा देते हैं क्योंकि उर्वशी के साथ उनका प्रणय व्यापार किसी प्रकार भी उचित नहीं हो सकता था। उस वर्णन का एक अंश दर्शनीय है –

'बोले
भयभीत विनीत परमार्त पार्थ!
सम्भव नहीं है यह कार्य आर्ये!
सवर्था अनार्य!
दुष्कार्य मेरे लिए।' (3)

* एसोसियेट प्रोफेसर (हिन्दी) शासकीय पी.जी. कॉलेज, दतिया (म.प्र.) भारत

आज समाज अर्थ के पीछे भाग रहा है। इसके लिए वह किसी भी प्रकार का अनुचित कृत्य करने में नहीं हिचकता। जीवन में अर्थ की अपनी महत्ता है पर 'अति सर्वत्र वर्जयेत्।' अर्थ प्राप्ति के लिए जितने भी अनुचित प्रयोग किये जा सकते हैं। आज वे अपनी चरम सीमा पर हैं। इस भ्रष्ट अर्थमय वैचारिक नीति ने हमारे राष्ट्र को पतन के गर्त में धकेल दिया है। यदि अर्थ के प्रति सन्तुलित सोच रखी जाए तो हमारा राष्ट्र सम्पन्न होगा ही।

इस सन्दर्भ में पं. सोहन लाल द्विवेदी जी ने गांधी जी के 'सेवाग्राम के आदर्श' का गुणगान अपनी रचनाओं में किया है। सन्तुलित तरीकों से ग्रामवासियों की आर्थिक स्थिति सुधारने का यह गांधी जी द्वारा दिया गया अचूक समाधान है। जिसका पालन प्रत्येक देशवासी को करना चाहिए। गांधी जी का यह विचार रहा है कि अपने मुख्य धन्धे के अतिरिक्त भी व्यक्ति को कुछ न कुछ करते रहना चाहिए। वस्त्र, भोजन आदि आवश्यक आवश्यकताओं के लिए उसे आत्मनिर्भर होना चाहिए। थोड़ा सा भी समय व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। मेहनत से जी नहीं चुराना चाहिए। परसेवा से भी नहीं झिझकना चाहिए। इन्हीं सिद्धान्तों को लेकर बापू ने 'सेवाग्राम' की स्थापना की थी। शहरों की तरफ भागती जनता का ध्यान ग्राम्य संस्कृति की तरफ आकृष्ट करने तथा 'ग्रामोनति में ही देशोन्नति है' यह बताने के लिए ही उन्होंने इस पुण्य कार्य को प्रारम्भ किया था। यह आदर्श ग्राम वरधा जिले का मामूली सा पुरवा (सेगाँव) था, जिसे बापू के पावन स्पर्श ने सेवाग्राम का रूप देकर जन-जन का प्रिय बना दिया। कवि द्विवेदी बापू के इस प्रयोग से बहुत प्रभावित थे क्योंकि यह सोच भी राष्ट्र को अत्यन्त सुदृढ़ करने वाली है। यह भी एक प्रकार की राष्ट्र प्रेम की भावना है जिसका गुणगान द्विवेदी जी ने बहुतायत से अपनी कविताओं में करके इस तरह की राष्ट्रीयता का संचार समाज में फैलाने का प्रयास किया है। 'सेवाग्राम' के मिट्टी से बने घरों, अतिथि सत्कार में अग्रणी निवासियों, स्वंय उगाई साग-भाजी, अन्न, स्वच्छ जलवायु, स्नेहिल वातावरण का अति सजीव अंकन उन्होंने किया है। उदाहरणार्थ कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

'मिट्टी के कच्चे घर
प्रार्थना से झुके नीचे
करते हैं स्वागत आगत का
नवीन अभ्यागत का।
देते हैं दूध धृत-भात,
हाथ में उगाये हुए ताजे-ताजे साग-पात,
मोटी रोटी, स्वच्छ वायु
जिससे बढ़े आयु,
होता निर्माण नहीं तन का ही कोष,
मन का भी कोष,
देता अन्न यहाँ जाने कैसा सन्तोष!
सेवाग्राम
यह है हिमगिरि अभिराम
जहाँ से प्रवाहित प्रवहमान
सेवा की सुरसरि छविमान
बहती ही रहती सहस्त्रधार
सींचती सी, ताप-शाप खींचती सी,
अमृत उलीचती सी
हरित- भरित करती नित्य
राष्ट्र के तन-मन-प्राण!' (4)

इसी प्रकार वर्तमान समय में नैतिकता का परित्याग कर व्यभिचार में बढ़ती आसक्ति समाज की एक बहुत गम्भीर समस्या है। इससे न केवल भारतीय संस्कृति का क्षरण होता है अपितु वैश्विक स्तर पर भी हमारे राष्ट्र के सम्मान में कमी आती है। भारत जैसे संस्कृति सम्पन्न आध्यात्मिक विचारधारा वाले देश में ऐसी स्थितियाँ यह साबित करती हैं कि हमें अपनी और अपने राष्ट्र के सम्मान की कोई चिन्ता नहीं। वर्तमान में स्त्रियों के साथ होने वाली दुराचार और बलात्कार की घटनाए इसका प्रमाण हैं।

द्विवेदी जी ने अपने काव्य ग्रन्थों में इतिहास और पुराणों से चुन-चुनकर पात्रों को लेकर, उनकी चारित्रिक दृढ़ता का बखान कर समाज को सही दिशा देने का स्तुत्य प्रयास किया है। यदि किसी भी राष्ट्र में रहने वाले जन चरित्रवान होंगे तो राष्ट्र के सम्मान को ऊँचा उठने से कोई नहीं रोक सकता। कवि द्विवेदी जी ने गौतम बुद्ध की प्रशंसा में कई कवितायें लिखी हैं, कारण, उन्होंने विषय- वासनाओं की कैद से निकलकर, कामसुख के प्रलोभन से मुक्त होकर मानव सेवा का वह दिव्य व्रत अपनाया जिसने उन्हें विश्व वंदनीय बना दिया। 'वासवदत्ता' कविता में वासवदत्ता के काम-निमंत्रण को बड़े संयम से बुद्ध ने अस्वीकृत किया किन्तु जब वह वृद्ध हुई, उसके सारे अंगों के सड़ जाने पर सबने उसे त्याग दिया तब वे दौड़े-दौड़े उसके पास पहुँचे, नि:संकोच उसके घाव धोये और उसकी सेवा की। इस कविता की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत है जिनके पीछे यह संदेश छिपा है कि काम सुखों की अपेक्षा निष्काम सेवा-भावना अवश्य ही मोक्ष-मार्ग पर ले जाती है। इस कविता का एक अंश उदाहरणार्थ प्रस्तुत है -

'आज वासवदत्ता पड़ी है अनाथ
साथ नहीं कोई
उसका शरीर दुर्गन्धित है
अंग-अंग सड़ रहा है आज
पीप पड़ गई है
व्याधि उपजी है ऐसी कि, आते नहीं वैद्य भी
आंखें धंसी, उर्ध्वश्वास
मूर्च्छित सी पड़ी है वह
गौतम ने अपने पुण्यपाणि से
फफोलों पर, छालों पर, घाव पर, पीप पर
शीतल जल छिड़का
निज हाथ से धोया उसे
जी सी उठी मृत -हृत वासवदत्त तुरन्त
देखने लगी संतृष्ण गौतम की मूर्ति को
सेवा की स्फूर्ति को।'(5)

राष्ट्रवाद का एक रूप यह भी है कि अपने हित के बारे में न सोचकर परहित के लिए जीवन उत्सर्ग कर देना। दूसरों के सुख के लिए व्यक्तिगत सुखों को तिलांजलि दे देना। द्विवेदी जी ने अपनी काव्य रचनाओं में इस तथ्य का निरूपण बार-बार किया है। गांधी जी की जीवन संगिनी बा अपने व्यक्तिगत सुखों का सदैव त्याग करती रहीं क्योंकि बापू का संकल्प था अपने जीवन को परमार्थ के लिए लगा देना। इस अनुष्ठान में बा ने कदम से कदम मिलाकर बापू का साथ दिया। कवि द्विवेदी जी ने बा की इस पतिनिष्ठा को एक घटना के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। एक बार बापू की चप्पलें खो गईं। उन्होंने सोचा कि उन्हीं की लापरवाही से चप्पलें खोई हैं अत: इसका दण्ड उन्हें स्वयं को ही मिलना चाहिए। फिर क्या था? उन्होंने नई चप्पल नहीं खरीदीं। दूर-दूर तक जंगलों, कांटों-कंकड़ों से भरे रास्तों की यात्रा पैदल ही

करते रहे, जिससे पैरों में बड़े-बड़े घाव हो गये। यह देखकर पतिपरायणा बा ने उनके पैरों की मालिश की किन्तु सुबह जब बापू को पता चला तो उन्होंने बा को अपने संकल्प की दुहाई देकर ऐसा करने से मना किया। गांधी जी के ऐसे संकल्प, जो दूसरों को प्रेरणा देने वाले थे-बा उसमें सदैव प्राणपण से सहयोग करती रहीं। अत: व्यक्तिगत तौर पर मन से दुखी होते हुये भी उन्होंने बापू की बात स्वीकार कर ली। कुछ पंक्तियां दृष्टव्य हैं -

'नित्य रात कस्तूरबा घृत ला
गरम कर तलुवों में लगातीं
चोट सेंक चरणतल नरम थीं बनातीं
मालिश हो गई बन्द
बा थीं मौन निरानन्द।' (6)

इसी तरह की एक घटना 'अन्तिम जन' पत्रिका में भी वर्णित है जहाँ अपने मन को दबाकर भी पति की विचारधारा का पोषण करने के लिए तत्पर रहने वाली बा के स्वभाव के बारे में तथा बापू की दूसरों की हितचिन्ता करने वाले स्वभाव के बारे में बताया गया है।

बापू का जन्मदिन पास आ रहा था। बा ने सोचा इस विशेष दिन को विशेष प्रकार से मनाकर बापू के प्रति अपने प्रेम को अभिव्यक्त करना चाहिए। बापू की पत्नी होने के साथ-साथ वह एक स्त्री भी थीं और पति के प्रति प्रेम भाव को व्यक्त करना उनकी एक स्वभाविक इच्छा। इसके लिए उन्होंने बहुत सोच-विचार के पश्चात् प्रार्थना सभा के समय आश्रम में घी का एक मात्र दीपक जलाने का निश्चय किया। उन्होंने दीपक जला कर रख दिया यह सोचकर कि जब बापू यह पूछेंगे कि यह किसने जलाया है और उत्तर मिलेगा कि बा ने तो वे ये समझ जाएगे कि यह दीपक मैंने उनके जन्मदिन के उपलक्ष्य में जलाया है और इस तरह मेरा दीपक जलाना सार्थक हो जाएगा, लेकिन बापू ने उस जलते हुए दीपक की ओर देखकर जो कहा वह अंश बहुत महत्वपूर्ण है और उनकी पर दुख का तरता और परमार्थ भाव की चरम सीमा को प्रकट करता है। देश के करोड़ों देशवासियों के लिए वह एक प्रेरक वक्तव्य है। दृष्टव्य है वह अंश -'गाँधी जी बोलने लगे - 'आज के दिन सबसे खराब बात अगर कोई हुई है तो वह यह है कि 'बा' ने आश्रम में दिया जलाया। अपने आस-पास के गाँवों में जाने पर मैं देखता हूँ कि गाँव वालों को रोटी पर लगाने को तेल नहीं मिलता और आज मेरे आश्रम में घी जलाया जा रहा हैं फिर बा की तरफ मुड़े और 'बा' को सम्बोधित करते हुये बोले - 'इतने साल साथ रहते हुए तुमने यही सीखा। गाँव वालों को जो चीज नहीं मिल सकी, उसका उपयोग हमें नहीं करना चाहिए। मेरा जन्मदिन है तो क्या हुआ? जयंती के दिन तो सत्कार्य होना चाहिए, पाप नहीं।'(7)

निष्कर्षत: इस प्रकार कवि द्विवेदी जी ने अपनी कविताओं के माध्यम से राष्ट्रीय भावना के विभिन्न रूपों को उभारा है। नैतिकता, सत्य, कर्मठता, पुरूषार्थ और परमार्थ इन मूल्यों से राष्ट्रवाद को अभिव्यंजित किया है। यदि प्रत्येक व्यक्ति इन मूल्यों से अपने व्यक्तित्व को सँवार ले तो सन्देह नहीं कि उसका राष्ट्र सर्वोत्तम होगा और राष्ट्र के प्रति यही उसकी सच्ची राष्ट्रीय भावना होगी। इतना ही नहीं ऐसा राष्ट्रवाद व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र ही नहीं सम्पूर्ण विश्व के उत्थान में सहायक होगा और इस रूप में मानवता का सर्वोत्तम रूप भी हमें देखने को मिलेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पं. सोहनलाल द्विवेदी, भैरवी, पृ0सं0 15
2. पं. सोहनलाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 24
3. पं. सोहनलाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 17
4. पं. सोहनलाल द्विवेदी, प्रभाती, पृ0सं0 19-20-22
5. पं. सोहनलाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 5-6
6. पं. सोहनलाल द्विवेदी, मुक्तिगंधा, पृ0सं0 81-82
7. सत्यनारायण भटनागर, लेख-अद्भुत प्रेम प्रसंग, पत्रिका-अन्तिम जन, सम्पादक-मणिमाला, अक्टूबर 2013, पृ0सं0 58-59

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018, Vol. I, Issue XXI

हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं की भाषा शैली

डॉ. अंजली सिंह *

प्रस्तावना – भाषा भावों और विचारों के आदान–प्रदान का सामाजिक माध्यम है और समाज गतिशील ईकाई है, समाज में वर्ग है, सम्पति है, शोषण है और संघर्ष है इन गतिविधियों का हिसाब–किताब भाषा सुरक्षित रखती है भाषा की अपनी ध्वनि–प्रकृति होती है, अपनी भाव–प्रकृति होती है और अपना शब्द भण्डार होता है। सब तरह से समर्थ भाषा बेहतर लेखन में बेहद सहायक होती है, वास्तविकता को जब–जब वाणी दी जाती है, तब–तब भाषा को सब तरह के बनाव–सिंगार त्यागकर बोली हो जाना पड़ता है। कहने को व्यंग बना देना बोली के ही वश की बात है।

परसाई के व्यंग्य–लेखन में भाषा का जो स्वरुप व्यवहत हुआ है, वह ध्वनि, रुप और शब्द के धरातल पर बोली की ताकत और ताजगी वाला रुप है। परसाई देख–परख कर लिखते है, सोच समझ कर लिखते है। उन्होंने जो कुछ लिखा है, उनसे लिख नहीं गया। वे शब्द चयन में से उठाते है, बेचैनी पैदा कर देने वाला भाव पैदा कर देते है और इस तरह शब्द में भाव उपजता हैं, वह एक बिरली ध्वनि को बोध कराता है, इसी से उनके व्यंग्य को निरक्षर भी बैठकर दुहरा लेता है। बिना लिहाज किए प्रहार करने की जब–जब जरुरत होती है, तब–तब ध्वनि भाव और शब्द सीधे बोली से ही उठाने पड़ते है। बोली सीधे–सीधे जन से जुड़ी है। बोली सामान्य से आमू–सामू बतिया लेती है। परसाई के व्यंग्य लेखन में अहम–भूमिका रखती है।

परसाई का व्यंग्य–लेखन दायरा विशेष का मुहँताज नहीं है, समाज की एक–एक पर्त उन्होंने उधेड़ कर देखी है और विसंगति उन्हें जहॉ भी दिखी, वहॉ उन्होंने चोट की है, चोट करने के लिए जब–जब उन्होनें आक्रमक–रुख अपनाया है, तब–तब भाषा समर्थ हथियार के रुप में उनके हाथ में रही है, और उनका व्यंग्य–लेखन दिनों दिन धारदार हुआ है। स्वार्थ को सर्वोपरि करके जब–जब पगडंडियॉ बनाई गई नौकरशाही के मजबूत शिकंजे में जब–जब गणतंत्र ठिठुरता हुआ दिखा, पेशन की प्रतीक्षा में जब–जब भोलाराम का जीव विकल हुआ, कालेज जैसे शिक्षा केन्द्र जब–जब दुकानदारों के दर्जे पर उतरे थे। प्रॉपर चैनल की दृष्टि ने जब–जब प्रतिभा को दबोचा, संस्कांरो और शास्त्रों की चालों में से जब–जब मतलब सर्वोपरि हुआ, यथार्थ को जब–जब परेशान किया गया तब–तब परसाई के व्यंग्य लेखन में अकेले शीर्षक ही चोट करने में समर्थ हो गए, विश्लेषण तो दूर की बात वह जो आदमी है, न न्याय का दरवाजा, परत्मामा का लोटा, गुड़ की चाम , कर कमल हो गए, राम की लुगाई और गरीब की लुगाई कंधे श्रवण कुमार के वैष्णव की फिसलन–ऐसे ही समर्थ शीर्षक हैं, जो व्यक्तिवाचक की सीमा पार कर जातिवाचक हो गए है। जहॉ भाव, विश्लेषण की बाट नहीं रहती अर्थ एक झक्काटे की भॉति खुलता है और कहानी के समूचे बिन्दु वर्तुलाकार घूमने लगतें है। उनकी कहन जहॉ पैनी हुई है, भाषा और–और धारदार हुई है, वहॉ–वहॉ उनके दिए शीर्षक पढ़ने वाले को अपने लगते है, इसी से व्यंग्य लेखन की भाषा वह रिश्ता सुगमता से कायम कर लेती है, जिसके लिए 'वेद' के जमाने से पृथु की रचना तक बिना रुके प्रयास किए गए है।

साहित्य पीढ़ियों तक प्रतिष्ठा के करीब रहा है और सुविधा बॉटने वालों के आस–पास जो शब्द होते थे, वे ही लेखन के काम आते रहे। भाषा पर विचार करने का सीधा–सीधा मतलब होता है शब्द विचार करना। शब्द अर्थ ढोतें हैं और 'अर्थ' ही तो अभीष्ट होता है, शब्द बोली के घर जितना सुखी रहता है, उतना भाषा के घर नही। अपनी बात बेखटकें और सही ठौर ठिकाने पर पहुॅचाने के लिए जीवंत लेखन बोली के घर से ही शब्द उठाता है। मुक्तलाल, सुरमादेवी, जालिम सिह, फूलमती और करेला देवी नाम होने के बावजूद अपने आस–पास समूचा वातावरण लपेटे है। अस्तभान, विद्यादमन भयभीत सिंह की तत्समता भी व्यंग्य को रोक नहीं पाती, प्रंपचगिरि के साथ–साथ जब जोगी और निबलसिंह के साथ जब सौ वर्ष को संयुक्त कर दिया जाता है, तब व्यंग्य भी विशेषणधर्मी हो जाता है, रानी नागफनी की कहानी में व्यंग्य व्यक्ति वाचक संज्ञा पदों और विशेषणों क्रिया विशेषण के माध्यम से अर्थित हुआ है।

मुहावरे अभिव्यक्ति क्षमता बढाते हैं, इसी से लेखन में उनकी अपनी महत्ता है। बरकाकर निकालकर, पूरा न पड़ना, धोबी पछाड़ देना, चेहरा उतरना, हीं–हीं करना, पोल खोलना, शोहरत हासिल होना, रंगे हाथों पकड़े जाना, बाजा न आना, पसीना आना, हावी होना, रोम न दुखाना, नाम को रोना, मुॅहजोरी करना, लंगोटी तक उतार कर देना ऐसे मुहावरे हैं जो अभिव्यक्ति को खानी देने है। परसाई के व्यंग्यलेखन में से स्थान–स्थान पर व्यवहत हुए है।

डेरा उखाड़ना में जिस प्रयाण को अभिव्यक्ति दी गई है, वह हताशा और निराशा का उजागर करता है। गच्छा खा जाना और छड़क जाना में ध्वन्यात्मकता ऊपर आ गई है। टिटहरी होना, आजादी की घास, गुलामी का घी, राष्ट्रीय शोक सरकारी शादी जैसे प्रयोग भी प्रभाव पूर्ण हैं, क्रांतिदेवी का शील, पेशेवर उखाड़, घोर करतलध्वनि, दुश्मन फटकार और पवित्र ग्लानि की व्यंजना भाषा व्यवहार की व्यंजना है।

आखिर सत्य क्या है, बढ़िया कपड़े पहने झूठ अन्याय को क्या शर्म, सारा मामला सोर्स का है। सपना सुभीते की चीज है। रोशनी देने वाले दिशा नहीं बदलते, हर एम.एल.ए. शक्कर का बोरा है, राज बहुत बदमाश होती है, रिटायर्ड फादर से निभाना तलवार की धार पर चलना है और कुरुपा पत्नी सौन्दर्य बोध बढ़ाती है जैसे मुहावरे परसाई के व्यंग्य को पैना बनाते है। फादर की मृत्यु में पोलाहट हो गया, ट्रान्सफर ऑफ डिश, ब्यूटीफूल मुर्गा, झूठ को मेकप, अपनी रिक्स पर, सोर्सो की लिस्ट और दृष्टि दिला दीजिए न,

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय माधव सदाशिवराव गोलवलकर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

में जिस तरह विदेशी शब्द भी घुले–मिले है, उसी तरह वत्स ब्राहम्ण कृपाल, मृत्यु, वरण, बटुक, सप्तर्षि और अंशुमाली जैसे तत्सम शब्द भी व्यंग्य के अच्छे हथियार हो गए।

परसाई ने उन शब्दों को भी हथियार बनाया है, जिनके आस–पास सांस्कृतिक वातावरण लिपटा है। स्थानों पर शब्द के साथ जो पुराना अर्थ है, वह पाठक के जेहन में खुलता है और नये अर्थ की बराबरी में आकर बोध को खरोंचता है। साहित्य में जब–जब व्यक्ति, समाज में तिरोहित हुआ, तब–तब संज्ञा पदों को सर्वनाम भी एक के न होकर सबके है।

व्यंग्य लेखन के लिए परसाई ने ध्वनि तत्व, भाव तत्व और शब्द भन्डार के स्तर पर भाषा का जो स्वरुप स्थिर किया है, वह बोली के आंगन का है। इसी से उनका लेखन गॉव का मामूली पढ़ा किसान और मंजूर अपना मानता है और नगर का हर वह वर्ग जो सर्वहारा है, अपना माने बैठा है।

हरिशंकर परसाई की भाषा में व्यंग्य की प्रधानता है, उनकी भाषा समानवीय और संरचनास के कारण विशेष समता रखती है उनके एक–एक शब्द में व्यंग्य के तीखेपन को देखा जा सकता है। लोक प्रचलित हिन्दी के साथ–साथ उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का उन्होंने खुलकर प्रयोग किया है।

हरिशंकर परसाई ने बहुत सी लघुकथाएँ और कहानियॉ भी लिखी हैं जिनकी भाषा विधित स्तरों और अनेक पर्तो के भीतर चलने वाली किसी करंट की अन्तर्धारा की तरह है। इनकी भाषा अत्यंत सहज, सरल और धारदार तो है ही साथ ही साथ उसमें विभिन्न अद्भुत क्षमता है। परसाई जी की रचनाओं में प्रसंगानुकूल भाषा के इतने विविध रुप मिलते है कि अन्यत्र इस तरह का वैविध्य मिलना संभव नही है।

परसाई जी के कथासाहित्य का कितना युगान्तरकारी महत्व है, इस बात का पता इस तथ्य से चलता है कि नई कहानीधारा के दोनों चोटी के कहानीकारों भीष्मसाहनी और अमरकांत की सफलता का रहस्य भी बहुत कुछ व्यंग्य ही है। व्यंग्य की ओर उनकी उन्मुखता ही उन्हें उनके आरम्भिक आदर्शवाद और समानियत से क्रमश: मुक्त करती जाती है। यदि हम अन्य आधुनिक कहानीकारों में ज्ञानरंजन और काशीनाथ सिंह की बात करें तो इनके गद्य में भी व्यंग्य की एक प्रकार से महीन बुनावट दिखाई देती है।

यद्यपि अन्य समकालीन कहानीकारों की अपेक्षा परसाई जी की सफलता इस विधा के रुप में इसलिए अधिक रही है क्योंकि व्यंग्य उनके गद्य में सहायक या गौणतत्व के रुप में नहीं बल्कि उनके यथार्थवादी दृष्टि कोण और कलात्मक पद्धति के घुले मिले रुप में सामने आता है।

जिस प्रकार जनता से लिया गया पैसा जनता पर ही खर्च किया जाता है उसी प्रकार जनता के पैसों से बनी गोली जनता पर ही चलाई जाती है। एक मंत्री का भाषण और उस पर तालियों की गूंज की ओर संकेत कर परसाई जी ने कहा है कि यह है आज की नीति। मुख्य रुप से परसाई जी ने ऐसे ही व्यंयात्मक तेवर अपनी लघु कथाओं मं अख्तियात किए है। महत्वपूर्ण बात यह है कि आपकी रचनाओं में एक अफसर से लेकर चपरासी, अध्यापक, मंत्री, ईश्वर को रिश्वत देने वाले व्यक्ति, नवयुवक, युवतियॉ पत्रकार आदि इन सबके चेहरे पर से नकाब उतारकर समाज के सामने लाकर खड़ा कर दिया है।

आज भी हमारे देश में सामंतवादी प्रणाली की जड़े अपना प्रभाव जमाये हुये है। साला ही साथ पूंजीवादी प्रणाली की बनती हुई नवीन व्यवस्था के बीच इस अत्यंत संकालिकालीन समय में आदमी आंतरिक रुप से विभक्त हो गया है। एक ओर यदि शोषित पीड़ित अधिकार विहीन वंचित आदमी का त्रासद यथार्थ है , तो दूसरी ओर विशाल मध्यवर्ग की वैचारिक और व्यवहारिक पड़ता अधिकार सम्पन्न सम शक्तिशाली वर्गो का नग्न दमन हो रहा है। इस भयानक यथार्थ के बीच व्यापक सामाजिक और व्यक्तिक पाखण्ड और मूल्यहीनता के विरुद्ध संघर्ष करती हुई परसाई जी की व्यंग्य रचनाएँ है। परसाई जी ने काफी संख्या में कहानियॉ भी लिखी है। परसाई जी की कहानियों का महत्व इसी बात से समझा जा सकता है कि हिन्दी कथा साहित्य में घनघोर रुमानियत के दौर में वे अकेले ही एक मात्र ऐसे कहानीकार नजर आते हैं , जिन पर रुमानियत का हल्का सा भी असर नजर नही आता है। इसके अलावा वे रुमानियत पर तीखों प्रकार भी अख्तियार करते है।

परसाई ने भारतीय व्यापारियों के चरित्र में पैदा होने वाली स्तरहीनता को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। लोहिया ने संस्कृति के नाम पर भारत में जिस वातावरण को देखा और भोगा था। उसे उन्होंने एक शब्द में नाम दिया कीचड़। यह कीचड़ हजारों वर्षो की सड़ी हुई परम्परा है, जिसके नीति व्यापार और प्रचार मिलकर उस कीचड़ को सजा कर रखने की साजिश कर रहे है, जिसे संस्कृति के नाम से पुकारा जाता है। परसाई ने विदेशी नकल की फिल्मों में पनपने वाली संस्कृति की तीखी आलोचना की है वे नकली मनोवृत्तियों का उपहास करते हुए लिखते है। साधो वह फिल्म से अब सुधार रही है। मगर इस अफसरो का क्या होगा? ये तो टेम्स नदी को गंगा मानते है केलिफोर्निया को बद्रीनाथ मानते है। वे दुनिया में सबसे ऊॅची चोटी गौरीशंकर को नहीं मानते न्यूयार्क की एम्पायर बिल्डिग को मानते है। जवाहरलाल इन्हें बरबस भारतीय संस्कृति बनाकर रखते थे। वे मानते है कि इन नकली प्रेरणा स्त्रोतों से भारतीय संस्कृति को कुछ भी हासिल नहीं होगा केवल झूठी एवं नकली प्रतिष्ठा की महत्वाकांक्षा हमारे मानस पर धुंध की तरह छा गई है जो हर भारतीय को उसकी लोक संस्कृति से कट कर अलग होकर जीने के लिये विवश कर रही है।

परसाई रुढ अर्थ में धार्मिक नही है फिर भी यदि उन्हें धार्मिक कहा जाए तब हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उनकी धर्म भावना मानवीयता के व्यापक धरातल पर खड़ी है। वे मनुष्य को धर्म से भी बडा मानते है। आज धर्म का जो अर्थ समाज ग्रहण करता जा रहा है, परसाई उनके विरुद्ध है। वे नही चाहते कि धर्म का सत्य स्वरुप अडम्बरों से ढक दिया जाए। एक स्थान पर परसाई ने धर्म के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है।

परसाई का समूचा साहित्य एक निश्चित उद्देश्य से प्रेरित है। परसाई ने समग्र रुप में ही युग के सन्दर्भो को सच्चाई के साथ पहचाना है और अपने प्रखर विवेक एंव दूर दृष्टि से जीवन की उन असंगतियों की ओर संकेत किया है, जो कि मानवता में बाधक है। परसाई वर्तमान की सड़ी गली और बिज – बिजबिजाता सामाजिक व्यवस्था का घोर विरोध करते है। समाज में फैली हुई उस सड़ांध की मूल वजह मात्र धन का असमान विवरण है और इसी मूल वजह ने मनुष्य को धनी और गरीब जैसे दो वर्गो में विभाजित कर दिया। पूॅजीवादी वर्ग का समर्थक सत्तारुढ़ दल है, जो कभी प्रत्यक्ष और कभी अप्रत्यक्ष रुप से जनता का शोषण कर स्वयं की ओर स्वार्थ सिद्धि करना जिनका मूल मंत्र है। तो ऐसे ही समय की स्थिति और विद्रूपता की ओर संकेत करते हुए परसाई एक जगह लिखते है–

बिना व्यवस्था में परिवर्तन किए भ्रष्टाचार के मौके बिना खत्म किए और कर्मचारियों को बिना आर्थिक सुरक्षा दिए भाषणों, सर्कुलरों, सदाचार समितियों निगरानी आयोगो के द्वारा कर्मचारी सदाचारी न होगा। इसमें कोई उपदेश नहीं है। सिर्फ विशेष प्रभासों को सामने लाया गया है। परसाई के कुछ व्यंग्य व्यक्तिगत होते हुए भी उनमें यथा स्थान सामाजिक व्यंग्य देखने को मिलता है। 'परसाई सफेद बाल' और 'कबिरा आपठगाइ' तथा –

मखमल की म्यान' आदि ऐसे ही व्यंग्य है। कबिरा आप ठगाइए में संत की मुद्रा में दूसरों को ठगने वाले समाज के एक खास प्रकार के व्यक्तियों के बारे में परसाई ने लिखा है, एक आदमी ने अपना प्रचार कर रखा था कि मैं तो बालक की तरह भोला हूँ और मुझे कोई भी ठग लेता है। उसके प्रशंसक कहते थे अरे भाई, उसे तो कोई भी ठग लेता है, कोई उससे उसकी लंगोटी भी मांगे तो वह उतारकर दे देगा। मैं एक दिल उस सन्त के पास गया। मैंने देखा कि उनके पास ही दूसरों की उतरवायी हुई 15-20 लेगोटियॉ रखी है। बात यह थी कि उसके सामने लोग जब जाते तो यह मानकर कि वह तो बहूत भोला है, अपनी लंगोटी की तरफ से असावधान हो और वे धीरे से गफलत में उसकी लंगोटी की तरफ से असावधान हो जाते है और पे धीरे से गफलत में उसकी लंगोटी उतार देते। मैं फौरन अपनी लंगोटी बचाकर भागा'।

हिन्दी के बहुत से प्रसिद्ध साहित्य के विपरीत परसाई केवल गद्य लेखक है। अर्थात वे जो कुछ कहना चाहते है, वह गद्ये के माध्यम से ही कहते है। कविता लिखने वाला तो गद्य में पहुंच जाता है, पर बहुधा ऐसा कम ही होता है कि गद्य लेखक को अपनी बात कहते के लिए गद्य छोड़कर काव्य का आश्रय लेना पडे। वास्तव में गद्य आधुनिक युग का माध्यम है, इस माध्यम की जो अनेक विधाएं हैं। उसमें उपन्यास को प्राय: बासवीं शताब्दी की विधा कहा जाता है पर परसाई जी ने अपने लेखन के आरम्भिक दौर में उपन्यास लिखे पर उस विधा को उन्होंने लगभग अपर्याप्त पाया और लगभग क्या पूरी तरह छोड़ दिया। सन् 1955 के बाद उन्होंने कोई उपन्यास नहीं लिखा परसाई जी ने विशिष्ट कहानिया इस अर्थ में नयी थी कि उन्होने स्वतंत्रता के बाद उत्पन्न होने वाले मोहभंग को सबसे पहले पहचाना था पोषित और विघटित मूल्यों को आजादी के बाद की पीठी के कहानीकारों में सबसे पहले रेखांकित किया था। पर परसाई जी ने अपने किसी आब्जेक्शन को प्रमाणिकता ओर उद्धटित करने के लिए कहानी लिखते है लेकिन धीरे-धीरे परसाई जी कहानी कला भी अपने लिए अधूरी और अपर्याप्त जान पड़ने लगी क्योंकि परसाई प्रेमचन्द्र की तरह से अपनी कहानियों में कैरेक्टर्स खड़े नही करते उनका आब्जेक्शन उनकी कहानियों के विस्तार में खो जाता है और कथ्य की धार भी थोड़ी मंद सी पड़ जाती है।

परसाई जी भारतीय जनता की पीड़ा और त्रास और शोषण और उसके विरुद्ध रचे जा रहे षडयंत्र के खिलाफ खड़े है और इसके लिए उन्हें निबंध की विधा ज्यादा उपयोगी और कारगर लगी परसाई जी उपन्यास को छोड़कर कहानी की ओर आए और कहानी छोड़कर उन्होंने निबंध को अंगीकार किया और अंतत: निबंध को भी छोड़कर स्तंभ लेखन शुरु किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, बरसाने लाल चतुर्वेदी पृ0 201
2. आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, बरसाने लाल चतुर्वेदी पृ0 01
3. साप्ताहिक हिन्दुस्तान (लेख) हरिशंकर परसाई, 2 अप्रैल 1967
4. हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं का अनुशीलन पृ0 87
5. हरिशंकर परसाई के व्यंग्य की वैचारिक पृष्ठभूमि प्रो. राधेमोहन पृ0 66
6. हरिशंकर परसाई के व्यंग्य की वैचारिक पृष्ठभूमि पृ067
7. ऑखन देखी, आत्मकथा, हरिशंकर परसाई पृ0 323
8. ऑखन देखी, संपादक-कमला प्रसाद पृ0 111
9. सुनो भाई साधो, हरिशंकर परसाई पृ0 5-6
10. पगडण्डियों का जमाना हरिशंकर परसाई पृ0 89
11. हरिशंकर परसाई की दुनिया, डॉ मनोहर देवलिया पृ0 83
12. आंखन देखी डॉ0 नंदकिशोर नवल का लेख पृ0 118
13. परसाई रचनावली, खण्ड - 3 पृ0 205

****

चन्द्रकान्त देवताले की कविता - आदिवासी चिन्तन

उमेश कुमार चरपे * डॉ. के. आर. मगरदे **

प्रस्तावना - आदिवासी शब्द सुनते ही जेहन में जंगल, पहाड़, झोपियाँ, और अधनंगे बदन की छवि प्रस्तुत होती है, जो सदियों से अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे है। जो पूंजीपति वर्ग से सभ्रान्त वर्ग से कटे हुए लोग है। जिनका रहन-सहन बहुत ही निम्न कोटी का है। जो विकास की मुख्यधारा जुड़ने के लिए व्याकूल है।

विगत कुछ वर्षो से हिन्दी साहित्य में लगातार आदिवासी विमर्श पर चर्चाएँ तीव्र हुई है। कुछ चिन्तकों, कवियों, लेखकों ने आदिवासी समाज और परिस्थितियों को साहित्य में चित्रित किया है। जैसे -निर्मला पुतुल, वाहरू सोनवणे, हरिराम मीणा, अनुज लुगुन, केशव मेश्राम, महादेव टोप्पो, डॉ. मंजू ज्योत्स्ना, सरिता बड़ाइक, डा. रामदयाल मुंडा, दिनानाथ मनोहर, **चन्द्रकान्त देवताले**, रवि कुमार गोंड आदि का नाम विशेष रूप से लिया जाता है।

साठोत्तरी कविता के सशक्त हस्ताक्षर चन्द्रकान्त देवताले जिनका जन्म 1936 में हुआ। जो लगातार साठ पैसठ के दशक से अगस्त 2017 तक लेखन कार्य में सक्रिय रहे। दर्जन भर काव्य संग्रह के साथ अपनी अलग पहचान रखने वाले कवि है। हड्डियों में छिपा ज्वर, दीवारों पर खून से, लकडबग्घा हंस रहा है, भूखंड तप रहा है, रोशनी के मैदान की तरफ, आग हर चीज में बताई गई थी, पत्थर की बैंच, उसके सपने, इतनी पत्थर रोशनी, उजाड़ में संग्रहालय, पत्थर फेंक रहा हूँ, खुद पर निगरानी का वक्त, जहाँ थोड़ा सा सूर्योदय होगा जैसे कविता संग्रहों के साथ उन्होंने मराठी के वरिष्ठ कवि दिलीप चित्रे की कविताओं का 'पिसाटी का बुर्ज' नाम से अनुवाद किया। तथा मुक्तिबोध पर एक समीक्षात्मक किताब 'मुक्तिबोध -कविता और जीवन विवेक' लिखी है।

'देवताले एक सामाजिक राजनैतिक स्थितियों से बिध्द और आहत मानस के चिन्तनशील कवि हैं, परंतु आश्चर्य की बात यह कि आदिम जीवन के ऐंद्रिक बोधों के प्रति उनका जन्मजात आकर्षण अंत तक कायम रहा है। वैसे उनकी प्राय: अनेक कविताओं में- बिंबों, प्रतीकों एवं भाषिक हरकतों में यह आदिम आकर्षण स्थान-स्थान पर प्रकट होता है। देवताले मूलत: अपनी मिट्टी, जमीन और मूलधातु के कवि है।'[1] चन्द्रकान्त देवताले आदिवासी बाहुल्य बैतूल जिला ग्राम-जौलखेडा के निवासी है उन्होंने यहा के गोंड़, कोरकू आदि जनजातियों को देखा उनकी परिस्थियों को बखूबी अपनी कविताओं चित्रित किया है। बालम ककड़ी बेचने वाली लड़कियाँ कविता में - 'एक मानवीय करूणा से ओत-प्रोत कविता है जो कुछ हर दिन के हल्के-फुल्के शोषण के प्रसंग दुकडों से बुनी गयी है। लोकजीवन की खट्टी और तीखी गंध लिये हुए यह कविता आदिवासी जीवन के शोषण का बहुस्तरीय चित्रण करती हुई उसकी जिजीविषा और जीवनाह्लाद को उभारती है।'[2] **बालम ककड़ी बेचने वाली लड़कियाँ** कविता से -

'कोई लय नहीं थिरकती उनके होंठों पर
नहीं चमकती आँखों में
ज़रा-सी भी कोई चीज़
गठरी -सी बनी बैठी हैं सटकर
लड़कियाँ सात सयानी और कच्ची उमर की
फैलाकर चिथड़े पर
अपने-अपने आगे
सैलाना वाली मशहूर
बालम ककड़ियों की ढीग'[3]

बस्तर के जंगल में रह रहे आदिवासी जीवन का चित्रण किया है जो अशिक्षित है, सेठ साहूकारों की चिकनी चुपडी बातों का शिकार हो जाते है और अपनी जमीन जायदाद गिरवी रख देते है। आज नहीं बरसों से अपने जीवन को गिरवी रखा है। जिन आदिवासीयों से जंगलों की रक्षा की वहीं आज रक्षा के लिए भटक रहे है।

'कहां है हमारा गाढ़ा खून
हमारा पैतृक मस्तक
स्वाभिमान से दमकता हुआ
पसीने को पीता
आदमी का लोहा यहां
पेड़ रेहन पड़े साहूकारों के बहीखातों मे
बहीखातों में बंद चलती- फिरती हड्डियां
जकड़े हुए तिजोरी में
गोश्त और भूख की आंतों के गुच्छे'[4]

आदिवासी बरसों से जंगलों में निवास करते आए, उन्होंने संसाधनों का उपयोग जरूर किया लेकिन कभी नुकसान नहीं पहुँचाया। जिस तरह से विकास के नाम पर अंधाधुँध जंगलों की कटाई की गई और आदिवासियों को विस्थापित किया गया। उन्हें मजबूर होकर शहरों की ओर रूख करना पड़ा। लेकिन वहां भी उन लोगों की अच्छी हालत नहीं है। लड़कियों को शहरों में बर्तन माँझना पड़ता है। लोग उन्हें घ्रणित नजरों से देखते है साथ ही कभी कभी यौन शोषण का शिकार होना पड़ता है। मेहनत मजदूरी करके पेट पालना पड़ रहा है। सरकार अनाज के नाम पर वावाही लुटती है और अधिकारी लोग अपनी जेबें गरम करते है। चन्द्रकान्त देवताले अपनी कविता- 'इस चमकदार जनतन्त में सिर्फ जनता ही का नामोनिशान नहीं' नामक कविता

* शोधार्थी (हिन्दी) जयवंती हॉक्सर शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
** निर्देशक, जयवंती हॉक्सर शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल(म.प्र.) भारत

गेंहूँ का जिक्र करते हुए कहते है –

'यह गेहूँ है
ग़रीबों के तो क्या जानवरों के भी
खाने लायक नहीं
इसमें मुनाफ़े की इल्लियाँ
और भ्रष्टाचार की हीक है'[5]

आदिवासी के जीवन को देखा जाय तो कुपोषण, अशिक्षा, अलगाव, शोषण, भुखमरी, बेरोजगारी, अंधविश्वास जैसी न जाने कितनी समस्याए है। वहीं पूंजीपति वर्ग की हैवानियत का भी शिकार होना पड़ता है। चन्द्रकान्त देवताले अपनी एक कविता– हाई पॉवर नंगे बस्तर को कपड़े पहनाएगा कविता के माध्यम से आगाह कर रहे है। कि बरसों से जैसी करनी की है एक दिन उसका फल भी भरना पडेगा। आज वक्त बदल रहा है। जिन–जिन लोगों से शताब्दियों से शोषण किया है जंगलों को लूटा है, सेठ साहूकारों के चाबूक खाए हैं, स्त्रियों के साथ बलात्कार किया है सब का हिसाब देना पडेगा–

'करोडों का हिसाब चुकता करना है उन्हें
शताब्दियों का, पेडों का, असंख्य
पीठ पर पड़े चाबुक के निशानों का
गोष्त का हिसाब, खून का
सांवली वनकन्याओं की चीख और सिसकियों का
नंग–धड़ंग बच्चों के फूले हुए पेट
और बूढ़ी नंगी देहों की
आत्मा की झुर्रियों का हिसाब।'[6]

वक्त के साथ साथ सब कुछ बदल रहा है। जंगल मैदानों की सूरत लेने लगे है। आदिवासी जंगलों से निकलकर शहरों की ओर रूख कर रहे है। मेहनत मजदूरी करके अपना पेट पाल रहे है। चन्द्रकान्त देवताले बस्तर का चित्र प्रस्तुत करते हुए कविता में उस दर्द को बयान किया है –

'सुनो शहरों के लोगो
सुनो कपड़ों के लोगो
मशीनों, शब्दों, विचारों के लोगो सुनो
अपने इसी बस्तर का
हल्दी मँडा पंजा अब
पपड़ी–सा टूटकर बिखर रहा है
देखो
बस्तर की पीठ पर
कितने ही चाबुक के निशान है'[7]

आदिवासी कविताओं के द्वारा समाज में महिलाओं के साथ हुए अत्याचारों को उन चीखों को उजागर किया हैं, जो उन जंगलों और पहाडों में दफन हो चुकी है। भारतीय समाज में जिस स्त्री की पूजा की जाती रही है वहीं हजारों वर्षो से शोषण और बलात्कार की शिकार होती रही। और पुरूष प्रधान समाज पुरूष होने का दम्भ भरता रहा। इतने अत्याचारों के बावजूद भी इतिहास में कुछ ऐसी महिलाएँ हुई है, जो स्त्री वर्ग के लिए प्रेरणा की स्त्रोत रही है जैसे रानी दुर्गावती, अवंती बाई, क्रांतिकारी वीर बाला और सावंती बाई आदि जिन्होंने अपने सम्मान के लिए जीवन भर संघर्ष किया। 'व्यापक सहानुभूति और जीवन–विषयक सूक्ष्म निरीक्षण से उत्पन्न कवि देवताले की कतिपय कविताएँ उसके जीवन–मूल्यों का सशक्त संकेत ही नहीं करतीं, पाठक को गहरे स्तर पर उद्वेलित भी करती हैं, अपराध–बोध जगाती हैं, आत्मान्वेषण के लिए बाध्य करती हैं और देश में विषमता की विष–वेला के बढ़ते रूपों से साक्षात्कृत कराती हैं।'[8]

चन्द्रकान्त देवताले की कविताएँ क्रांतिदर्शी है। वे कविता के माध्यम से अपनी संवेदना व्यक्त करते है तथा उन परिस्थितियों की ओर ध्यान आकर्षित करते है, जो आदिवासियों के साथ बीत रही है। वास्तव में आदिवासी चिंतन एवं संघर्ष की लड़ाई सभी को मिलकर लड़ना होगा। तब ही सही न्याय हो पाएगा। आदिवासियों को अपने अधिकार मिल पाएंगे। रोटी, कपड़ा और मकान के साथ–साथ विकास की इस दौड़ में शामिल करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर– चन्द्रकान्त देवताले की कविता, कविता स्वभाव, वाणी प्रकाशन पृ0 39)
2. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर–चन्द्रकान्त देवताले की कविता, कविता स्वभाव, वाणी प्रकाशन पृ0 69)
3. चन्द्रकान्त देवताले –कवि ने कहा चुनी हुई कविताएँ, किताब घर प्रकाशन, पृ0 60–61)
4. चन्द्रकान्त देवताले – कवि ने कहा चुनी हुई कविताएँ, किताब घर प्रकाशन, पृ0 77)
5. चन्द्रकान्त देवताले – पत्थर फेंक रहा हूँ, वाणी प्रकाशन पृ.162)
6. चन्द्रकान्त देवताले – कवि ने कहा चुनी हुई कविताएँ, किताब घर प्रकाशन, पृ0 83)
7. चन्द्रकान्त देवताले–आग हर चीज में बतायी गयी थी, राजकमल प्रकाशन, पृ0 109–110)
8. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर–चन्द्रकान्त देवताले की कविता, कविता स्वभाव, वाणी प्रकाशन पृ0 39)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018, Vol. I, Issue XXI

शरद जोशी का व्यंग्य लेखन

डॉ. रश्मि सिलारपुरिया *

शोध सारांश – जोशी जी की जो वर्गदृष्टि है, वह बड़ी पैनी है जो हर शोषण की व्यवस्था और उसको जो भी निष्कर्ष निकलते हैं। उसका चित्रण बहुत ही आलोचनात्मक तरीके से किया है व साथ में वर्तमान देश के सामंतवादी व पूंजीवादी व सामाजिक व्यवस्था की शल्य क्रिया की है जोशी जी ने अपना व्यंग्य लेखन यथार्थवाद पर अधिक किया है इसी कारण जोशी जी यथार्थवादी व्यंग्यकार कहे जाते हैं, इनके व्यंग्य में रचनाओं में वास्तवक के तर्क का आधार है। जोशी जी ने इतिहास और राजनीति की दृष्टि से यथार्थ बोध को न केवल प्रसांगिक और अनिवार्य बनाया है बल्कि समूचे जीवन की खुली हुई सच्चाई का दस्तावेज बना दिया है। जोशी जी एक देशभक्त व्यंग्यकार थे उनका व्यंग्य मनुष्य स्वभाव और सामाजिक जीवन दोनों पर नियंत्रण ही नहीं बल्कि दोनों में सकारात्मक सक्रियता पैदा करने का व्यंग्य है। उनका व्यंग्य यथार्थ की धरातल से पैदा किया हुआ व्यंग्य कहा जाता है।

प्रस्तावना –

1. वर्ग विसंगति पर व्यंग्य – शरद जोशी जी ने अपने लेखन में हर वर्ग विसंगति पर व्यंग्य किया है, जो देश व समाज को बदलने की एक छोटी-सी आशा है। उसे पहचाना किया है। जोशी जी हर वर्ग समाज के सामने लाए। जोशी जी ने हर वर्ग को अपने गले से लगाया है–चाहे वह ब्राह्माण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र हो। जोशी जी ने हर वर्गों के लोग अमीर बनकर गरीब पर अत्याचार करते हैं, उन्हें अपना नौकर समझते हैं। इन सबका विरोध अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से किया है व जनता तथा समाज को इसका परिचय दिया है। वह समाज जो सिर्फ देखना और सुनना जानता है, कुछ करना नहीं। जोशी जी रह वर्ग को एक ही दृष्टि से देखते हैं तथा उसका सम्मान करते हैं।

जोशी जी ने जाति वर्ग पर व्यंग्य किए हैं जहां पर ब्राह्माण वर्ग का महत्व सबसे ज्यादा है, बाकी वर्ग उससे छोटे हैं और वह अपने को बड़ा कहकर दूसरों को दबाता है, उन पर अत्याचार करता है। जोशी जी स्वयं एक ब्राह्माण होने के बावजूद उन्होंने इसका कोई भी फायदा नहीं उठाया। उन्होंने सिर्फ जनता, समाज व देश के बारे में सोचा तथा उसे अच्छा बनाने की पुरजोर कोशिश की है। जोशी जी का व्यंग्य लेखन समाज व देश के लिए बहुत ही प्रभावशाली समझा जाता है।

'उन्होंने अपने व्यंग्य के माध्यम से समाज को एक नई दिशा प्रदान की है और जनता की मुश्किलें कम करने की कोशिश की है, जो इस समाज ने दी हैं। व्यक्ति की व्यथा, पीड़ा, दु:ख, कष्ट, अपमान, असमानता, शोषण, अन्याय आदि अनेक संवेगों से संवेदनों से स्यक्त किया है। उन्होंने इन व्यथा-रूपकों को उनकी भौतिकताओं से उठाकर मार्मिकताओं और मानसिकताओं में प्रतिष्ठित किया है। चाहे वह 'जीव पर सवार झल्लियां' जों या 'अंधों का हाथी।'[1]

शरद जोशी जी ने समाज की इस झूठी वर्ग-विसंगति को हर रूप में ललकारा है, वे उससे मुंह छिपा के नहीं भागे। जोशी जी का व्यंग्य अमीर-गरीब, ऊंच-नीच, जात-पात, पूंजीपति-मजदूर, राजा-प्रजा, शोषण और शोषित सभी को एकरूपता में बांधता है किसी के साथ अन्याय नहीं करता। उनका व्यंग्य न्यायिक व्यंग्य है। जो व्यक्ति सुख-संपन्न होते हैं, वही गरीब व ईमानदार व्यक्तियों पर जुर्म करते हैं। 'हे वित्तमन्त्री मेरी ईमानदारी और मेहनती वर्ग पर अधिक कर लगा, जिनसे वसूली में कठिनाई नहीं होगी। जो सहन कर रहा है, उसे अधिक कष्ट दें। अय्याश, होशियार और हरामखाऊ वर्ग पर कम कर लगा, क्योंकि वसूली की संभावनाएं क्षीण हैं। बदमाशों, सामाजिक अपराधियों और मुफ्तखोरों पर बिल्कुल कर न लगा, क्योंकि वे देंगे ही नहीं। श्रेष्ठ वित्त मंत्रियों के बजट पीड़ितों को पीड़ित करने के लिए होते हैं।'[2]

सूत्रधार कहता है-'अरे राष्ट्र के अंधों! उठो। तुम जो भी हो मंत्री, सचिव, संचालक बाबू या चपरासी जो भी हो नेता, पुलिस, पत्रकार, प्रोफेसर या पान वाले, जो भी हो-ब्रह्माण, क्षत्रिय, शूद्र, बनिया, या आदिवासी: जो भी हो- पात्र दर्शक, आलोचक, टिकिट बेचने वाले या पर्दा खींचने वाले उठो और बहुत से चल रहे इस नाटक को खत्म करो। इसके पहले कि यह हाथी तुम्हें कुचलने लगे, तुम इसे अपने वश में करो।'[3]

2. प्रगतिशील व्यंग्य – वर्तमान युग प्रगति की ओर बढ़ रहा है। वह हर क्षेत्र में प्रगति करना चाहता है-चाहे व साहित्य या समाज हो या फिर हमारा देश हो। सभी आगे बढ़ने की सोच रहे हैं। व्यंग्यकारों ने भी अपने क्षेत्र में बहुत ही प्रगति कर ली है। 'वे प्रगतिशील व्यंग्यकार कहे जाते हैं। शरद जोशी जी भी प्रगतिषील व्यंग्यकार में आते हैं। जोशी जी ने प्रगतिषील व्यंग्य लेखन का कार्य बहुत ही सच्चाई के साथ किया है।'[4]

प्रगतिशील व्यंग्य की विशेषता यह है कि निम्न वर्ग, मध्य वर्ग के जीवन एवं समाज का वास्तविक रूप से चित्रण और समान वाले व्यवहार पर नये समाज की रचना के लिए क्रान्ति को ललकारना या फिर उन्हें पूर्ण रूप से चुनौती देना।

आधुनिक युग के काव्य में भी दीन-हीन, गरीब व दलित वर्गों का चित्रण हुआ है। लेकिन इनका इतना सूक्ष्म अध्ययन एवं काव्य में उनका विषद चित्रण अन्य युगों में नहीं हुआ जितना कि व्यंग्य में।

प्रगतिशील व्यंग्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक सभी विषयों पर बड़ी से बड़ी व्यंग्यात्मक एवं मन को चुभने वाली रचनाएं सरल, सुबोध एवं साफ भाषा में इस युग के व्यंग्यकारों ने की हैं। 'समाज में हो रहे अत्याचार, वर्ग विषमता की भावना व भेदभाव, अन्याय के विरूद्ध जन जागृति लाने का श्रेय सिर्फ प्रगतिशील व्यंग्य को जाता है। प्रगतिशील व्यंग्य ने इसे कुछ हद तक समाप्त करने की भी बहुत कोशिश की है।'[5]

* क्राइस मेमोरियल कोऐड हायर सेकेण्डरी स्कूल, बैरागढ़ , भोपाल (म.प्र.) भारत

मानसिक एवं वैज्ञानिक उन्नति के साथ-साथ व्यंग्य और हास्य की प्रवृति से भरे हुए इस काव्य का महत्व अपने इस क्षेत्र में कम नहीं हुआ है। मार्क्सवादी सिद्धांतों की काव्य से युक्त उक्तियां कवियों की बोलने वाली तरफदारी का प्रदर्शन करती है और इस तरह एक व्यंग्यकार लोकद्रष्टा न होकर वर्ग द्रष्टा हो जाता है।

आज का युवा वर्ग भी समाज में प्रगति लाना चाहता है। वह देश, समाज और हर वर्ग क्षेत्र में विकास करने की सोच रहा है। ऐसे में शरद जोशी के व्यंग्य ने एक नई चेतना प्रदान की जो समाज को एक प्रगतिशील देश बनाने की चाह रखता है। वैसे तो पहले भी प्रगतिशील काव्य, कविताएं लिखी गई लेकिन व्यंग्य का विकास जोशी जी के द्वारा ही हुआ है।

'शरद जोशी जी ने इस वर्तमान समाज को सुधारने का प्रयास अपनी लेखन क्षमता के साथ ही किया। उन्होंने दु:खी समाज को अपने ममता भरे लेखन से उसे नये आभूषण में लपेटा है। वे इस सामंतवादी, पूंजीवादी सामाजिक व्यवस्था की तिमारवादी में लगे हुए हैं।'[6] जोशी जी के व्यंग्यों में मर्मस्पर्षी मानवता की आस्था और विश्वास की स्वीकृति नजर आती है। उनका व्यंग्य यथार्थ रूपी प्रगतिशील व्यंग्य कहा जाता है।

3. व्यंग्य में यथार्थ धरातल – शरद जोशी ने अपना व्यंग्य लेखन यर्थाथवाद पर अधिक रूप में किया है। इसी कारण से जोशी जी यथार्थवादी व्यंग्कार कहे जाते हैं। शायद जोशी जी ने भावी जीवन को सामने रखकर उनकी जो भी विडम्बनाएं व योजनाएं हैं, उन्हें अपने व्यंग्य के द्वारा स्पष्ट किया है। शरद जोशी जी संघर्ष से उत्कर्ष की उपलब्धि का नाम है। उनका व्यंग्य वास्तविकता के शौर्य का प्रतीक है।

'शरद जोशी जी का व्यंग्य आंखों देखी दर्शाता है। वह व्यक्ति की व्यथा को-पीड़ा, कष्ट, दु:ख, अपमान, असमानता, शोषण, अन्याय आदि अनेक संवेगों और संवदेनों से व्यक्त किया जाता है। वे उस व्यथा-रूपकों को उनकी भौतिकताओं से उठाकर मार्मिकताओं और मानसिकताओं में प्रतिष्ठित करते हैं। उन्होंने भारतीय समाज के मानस को पहचाना, देश व समाज की स्थिति को जाना, इस राष्ट्र की सच्चाई को जानने के लिए उन्होंने परम्परा को भी तोड़ा।'[7]

जोशी जी की व्यंग्य रचनाओं में वास्तव के तर्क का आधार रहता है। उनके लेखन में यथार्थवादी मान्यताएं स्पष्ट रूप से झलकती हैं। उनके व्यंग्य लेखन में तो कोई भी अड़चन तो पैदा ही नहीं हो सकती, क्योंकि उनका परिप्रेक्ष्य साफ होता है। उनका अभिप्राय तो स्पष्ट होता है। वे अपने व्यंग्यों में आसपास की जो भी स्थितियां हैं, उन्हें एकत्र व निर्देशित करते हुए अपने मूल विचार को चर्मोत्कर्ष तक पहुंचा देते हैं।

जोशी जी ने इतिहास और राजनीति की दृष्टि से यथार्थबोध को न केवल प्रासंगिक और अनिवार्य बनाया है बल्कि समूचे जीवन की खुली हुई सच्चाई का दस्तावेज बना दिया है। जोशी जी एक देशभक्त व्यंग्यकार थे। उनका व्यंग्य मनुष्य स्वभाव और सामाजिक जीवन दोनों पर नियंत्रण ही नहीं, बल्कि दोनों में सकारात्मक सक्रियता पैदा करने का व्यंग्य है। उनका व्यंग्य यथार्थ की धरातल से पैदा किया हुआ व्यंग्य कहा जाता है।

'जोशी जी ने लोकतंत्र में निहित छद्म व्यंग्यों को उजागर और उद्घाटित किया और इस तरह विराट भारतीय लोकतंत्र का यथार्थ भी, सत्य भी, अंग भी, और व्यंग्य भी भ्रष्टाचार के रूप में प्रकट हुआ है। 'हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे इसी की परिणति की है, और शरद जोशी ने लोकतंत्र में लूटतंत्र, लाचारतंत्र और लावारिस तंत्र का मुहावरा भ्रष्टाचार के जरिए रचा है।'[8] जोशी जी कहते हैं कि 'एक भ्रष्ट दूसरे भ्रष्ट को कहकर सच्चाई का सबूत देता है एक निर्मम और क्रूर व्यवस्था वाली और व्यवस्था की खोल में लिपटा दैत्य अपने अट्टाहास से दूसरे की मुस्कान को रौंद रहा है।'[9]

4. व्यंग्य की विश्वदृष्टि – विश्वदृष्टि का निर्माण जीवन के आंतरिक विस्तार से नहीं हो सकता। इसकी रचना के लिए मनुष्य को ऐतिहासिक प्रगतिमान सार तथ्यों को पकड़ना पड़ता है। इस तरह विश्वदृष्टि एक तरह से यथार्थवाद की धन-संशिलष्ट मानसिकता होती है कला व कविता में इस का परावर्तन होता है, रूपांतरण होता है। विश्वदृष्टि की रचना जीवन के सही अर्थों को पहचान कराने और उसे उसका महत्व दिलाने के लिए होती है। व्यंग्य का जन्म विश्व में सच्चाई व वास्तविकता के प्रतिष्ठा के लिए हुआ है। जोशी जी के पास व्यंग्य की वह दृष्टि थी, जिसमें जीवन की हर संभव बात शामिल हो। जोशी जी का व्यंग्य इस दृष्टि से मनुष्य स्वभाव और सामाजिक जीवन दोनों पर भी नियंत्रण भी नहीं बल्कि दोनों में सकारात्मक सक्रियता पैदा करना ही व्यंग्य है। जोशी जी को व्यंग्य पढ़कर जार्ज आरवेल की इंग्लैंड के संबंध में की गई टिप्पणी भारत के प्रति भी प्रसंगिक प्रतीत होती है।'सूरज के तले इंग्लैंड सर्वाधिक वर्गग्रस्त देश है। यह नकचड़े और सुविधाभोगी बूढ़ों का ऐसा देश है जो बूढ़ों और सनकी शासकों से ग्रसित है।'[10]

5. आधुनिक रचना का इतिहास दर्शन और व्यंग्य – शरद जोशी ने आधुनिक रचना पर लिखना प्रारंभ किया तो कई समस्याओं पर विचार किया उन सभी स्थिति के अवगत होना पड़ा जो एक लेखक को होता है। आज के इस युग में विदेशी सोच का मिलावटीपन दिखता है, जो लेखक पर उनके ऊपर छीटांक सी करता है। जोशी जी आधुनिक रचना में समाजवादी मूल्यों के लिए लेखन का कार्य किया उनका पूरा व्यंग्य लेखन इतिहास दर्षन और भारतीय संस्कृति संस्कार का प्रतीक है। जोशी जी ने सामाजिक राजनैतिक प्रजातंत्र की संस्कृति पर चोटें की हैं व उन पर व्यंग्य लेखन का कार्य भी किया है। जोशी जी का इतिहास दर्शन पर व्यंग्य बहुत ही कामयाब है उन्होंने ऐतिहासिक पोराणिक, सभी व्यंग्य कथाएं लिखी है। जोशी ऐतिहासिक व्यंग्यकार कहे जाते हैं।

6. व्यंग्य कला – कार्टूनिस्ट जैसी पकड़ और नाटकीयता – शरद जोशी जी का नाटक, कहानी, निबंध, उपन्यास, संस्करण, रिपोर्ताज व जीवनी इन सभी तथ्य की विधाओं को देखे तो व्यंग्य कथ्य का पूरा विधान बन जाए। वो गद्य व्यंग्य के महान् व्यंग्यकार है। जोशी जी की भाषा शैली साहस और स्वर का प्रतीक है। अगर वह केवल यह कथाकार या निबंधकार होते तो उनके शब्दों की गूंज जनव्यापी नहीं होती। उन्होंने गद्य कथा के ही रूप का अनुसरण किया किंतु उनका कथन गद्य सामान्य कथा गद्य न होकर व्यंग्य गद्य बना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी कविता : प्रगतिशील आलोचना जून 1965।
2. थम संस्करण) पृ.सं. 132
3. आधुनिक हिंदी काव्य में समाज डॉ. गायत्री वैश्य, रंजन प्रकाशन, आगरा (संस्करण 1967) पृ.सं. 9
4. भारतीय साहित्य के निर्माता - शरद जोशी, लेखक-रमेश दुबे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली (प्रथम संस्करण 2004) पृ.सं. 89
5. - तदैव - पृ.स.101-102
6. तदैव - पृ.स. 77
7. - तदैव - पृ.स.57
8. - तदैव - पृ.स. 20-21
9. - तदैव - पृ.स.3 7-61
10. - तदैव - पृ.स. 61

अज्ञेय का सृजनात्मक साहित्य और स्वाधीन चेतना की अभिव्यक्ति

डॉ. अनुकूल सोलंकी *

प्रस्तावना – भारतीय साहित्य में हिन्दी कवि अपने सृजनात्मक दर्शन के माध्यम से काव्य को समृद्ध करते रहे। हिन्दी काव्य अपनी स्वाधीन चेतना से विभिन्न प्रयोगधर्मी अभिव्यक्ति पाता रहा। हिन्दी कवि सदैव से प्रभाव ग्रहण करते रहे। भारतीय प्राचीन साहित्य अपनी मौलिकता से विश्व भर में प्रशंसनीय रहा। भारतीय कवियों ने प्रभाव लिया तो प्रभावित भी किया। संस्कृत एवं प्राचीन भारतीय साहित्य में अनेकानेक महा कवि इसके प्रेरक रहे। सृजनात्मक भारतीय साहित्य में हिन्दी काव्य सदैव नये–नये प्रयोग के माध्यम से कवि की अभिव्यक्ति सृष्टि पाती रही। आधुनिक हिन्दी काव्य में सृजनशील, मूर्धन्य साहित्यकार साच्चिदानंद, हीरानंद, वात्स्यायन 'अज्ञेय' सृजनात्मक प्रयोगशीलता के माध्यम से काव्य में नए अर्थ भरते रहे। अज्ञेय की स्वाधीन चेतना कविता को सहृदय पाठक के लिए नई सहानुभूति बांटती रही। अज्ञेय हिन्दी कविता में नये–नये शब्दों के माध्यम से कवि हृदय को संतुष्ट करते रहे। यायावरी प्रवृत्ति ने स्वाधीन चेतना को संप्रेषित कर साहित्यिक जगत में अनेक प्रयोग किए। भावाभिव्यक्ति सहज सरल एवं अर्थगाम्भीर्य, काव्य चेतना का, स्वाधीन चेतना को विस्तारित करती रही। काव्य जगत में कवि हृदय अनेकानेक खोज, चिंतन, दर्शन संप्रेषित करता है। स्वाधीन चेतना कवि मन की गहराईयों को पाठक के सम्मुख रखती रही। अज्ञेय के सृजनात्मक मूल्य उनकी रचनात्मक काव्य अभिव्यक्ति के विविध आयाम पाठक के समक्ष उपस्थित करते है। कवि की स्वाधीन चेतना उपयुक्त शब्द के अर्थ भर कविता में विस्तार पाती है। धारणा एवं विषय संकलन कवि हृदय को यथा संभव समुचे काव्य जगत में ले जाकर संप्रेषण क्षमता को प्रौढ़ करती है। 'कवि के व्यक्तित्व को यथा संभव अलग रखते हुए उस के समूचे कृतित्व को देखा जा सके। निसंदेह विकास होता है, प्रौढ़ता और परिपक्वता आती है, और अगर यह प्रक्रिया होती है तो अवश्य ही रचना क्रम में कुछ ऐसा भी होगा अध–पका या कच्चा रहा हो, और कुछ ऐसा भी होगा जो पक कर उतरने लगा हो।'[1]

कवि की स्वाधीन चेतना भारतीय परिस्थितियों को 'विकल्प' कविता के माध्यम से स्वाधीनता के लिए प्रेरित करती है–

'वेदी तेरी पर माँ, हम क्या शीश नवाये?
तेरे चरणों पर माँ , हम क्या फूल चढायें?'

\+ + + +

'शत्रु रक्त की प्यासी है यह ढाल हमारी दीपक–
आरति को ठहरें या रण–प्रांगण में जायें?'[2]

कवि अपनी संवेदना, स्वाधीनता के पथ पर जुटी भारतीय आवाम के प्रति भोग, श्रंगार एवं सुख के प्रति आसक्ति को ललकार कर, क्रांति पथ पर जाने के लिए हुंकार भरने की लालसा रखना चाह रहा है–

'तोडो मृदुल वल्लकी के ये सिसक–सिसक रोते से तार,
दूर करो संगीत–कुंज से कृत्रिम फूलों का श्रृंगार।'

\+ + + +

'तोडो वाद्य, छोड दो गायन, तज दो सकरूण हाहाकार,
आगे है अब युद्धक्षेत्र–फिर, उससे आगे–कारागार।'[3]

भारतीयों की पिछडी मानसिकता के परिप्रेक्ष्य में, कवि हृदय स्वाधीनता के लिए 'घृणा का गान' नामक कविता में ललकार कर आक्रोश व्यक्त कर रहा है–

'सुनों, तुम्हे ललकार रहा हूं, सुनो घृणा का गान।
तुम, जो भाई को अछूत कह वस्त्र बचा कर भागे'

\+ + + +

'तुम, श्मशान के देव! सुनों रण–भेरी की तान–
आज तुम्हे ललकार रहा हूं, सुनों घृणा का गान।' [4]

कवि अज्ञेय स्वाधीन चेतना से भारतीय स्वाधीनता की पुकार को संवेदनशील चिंतन से पुकार रहा है–

'मूढ, मुझ से बूँदे मत माँग!
मैं वारिधि हूँ, अतल रहस्यों का दानी अभिमानी'

\+ + + +

'मेरा वरद हस्त देता है– आग, आग, बस आग!
मुझ से स्निग्ध ताप मत माँग!' [5]

अज्ञेय स्पष्ट रूप से कहते है– 'अत: सामाजिकता को स्वाधीनता का विपर्यय न मानकर उसका विस्तार ही मानना होगा। मानव की सामाजिकता ही वह पीठिका होगी जिसपर उसकी स्वाधीनता की इमारत खडी होती है। मानव–स्वाधीन है, तो अपने आप मात्र में स्वाधीन नहीं है। वह अपने से इतर में, दूसरे में, स्वाधीन है। जितना जिस मात्रा में, वह समाज को स्वाधीन बनाने में योग देता है, उतना, उस मात्रा में ही, वह स्वाधीन है।[6]

अज्ञेय विद्रोह के माध्यम से स्वाधीन चेतना का विश्वास, पथदर्शक बनकर बता रहे है–

'तुम्हारा यह उद्धत विद्रोही
घिरा हुआ है जग से पर है सदा अलग, निर्मोही !

\+ + + +

तुम्हारा यह उद्धत विद्रोही ! [7]

भारतीय काव्य में स्वाधीन चेतना को सभी कवियों ने अपने काव्य में प्रमुखता से पोषित किया। अज्ञेय भी स्वाधीन चेतना को गहन एवं गम्भीर दृष्टि से स्वीकार करते थे। मानव के प्रति तथा अपने राष्ट्र के प्रति उनके दृष्टिकोण में उदारता का भाव वाणी के माध्यम से स्पष्ट करते हुए लिखते

* अतिथि विद्वान, शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

हैं– 'जिस तरह मनुष्य उपेक्षा कर के मनुष्य ईश्वर तक नहीं पहुंच सकता, उसी तरह लेखक अपने समाज के पाठक की उपेक्षा कर के अंतर्राष्ट्रीय पाठक तक नहीं पहुंच सकता और मेरे लिए मेरे अपने समाज का पाठक आगे है और अंतर्राष्ट्रीय पाठक आस–पास।'

निष्कर्ष – शीर्षक रूप में कहा जा सकता अज्ञेय स्वाधीनता या स्वातंत्र्य को अपने जीवन का मूल उद्देश्य मानते है, अज्ञेय साम्राज्यवाद के विरूद्ध राष्ट्र में विद्रोह की भावना फैलाना चाह रहे थे।

साम्राज्यवाद और सामंतवाद के प्रति 'अज्ञेय के जीवन के वैविध्यपूर्ण रंगो को देखते हुए। यह सरलतापूर्वक कहा जा सकता है कि इतनी गहरी और सुदृढ नींव पर खडा होने वाला व्यक्तित्व कालांतर मे चलकर कैसा रूप धारण करेगा। [9]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अज्ञेय–सदानीरा भाग एक भूमिका– पेज न.–06
2. अज्ञेय–सदानीरा भाग एक भूमिका– पेज न.–125
3. अज्ञेय–सदानीरा भाग एक भूमिका– पेज न.–133
4. अज्ञेय–सदानीरा भाग एक भूमिका– पेज न.–150
5. अज्ञेय–सदानीरा भाग एक भूमिका– पेज न.–155
6. अज्ञेय–शाश्वती–पृ. 38
7. अज्ञेय–सदानीरा भाग एक भूमिका– पेज न.–157
8. अज्ञेय–आलवाल–पृ. 56
9. रामकमल राय– अज्ञेय: सृजनकी समग्रता – पेज न. 19

****

अनामिका की कहानियों में मूल्यबोध

डॉ. वन्दना अग्निहोत्री * आशा शरण **

शोध सारांश – हिन्दी साहित्य की गणमान्य लेखिकाओं के बीच अनामिका की अपनी खास पहचान है। उनकी कहानियों में परिवर्तित मूल्य स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आए हैं। वर्तमान जीवन में घटते हुए जीवन मूल्यों को देखा जा सकता है। जिसमें व्यक्ति एक सीमा में न रहकर पुराने संस्कारों और नवीन मूल्यबोध के साथ विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय है। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी परिवर्तित मूल्यबोध को व्यक्त किया गया है।

प्रस्तावना – सभ्यता के विकास के साथ ही मूल्यों में भी परिवर्तन हुए हैं। मनुष्य के जीवन में मूल्यों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। लेकिन मूल्य संक्रमण के कारण धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र के मूल्यबोध में परिवर्तन हो रहे हैं।इसके साथ ही मूल्यबोध में परिवर्तन के कारण व्यक्ति के आचार–व्यवहार में भी परिवर्तन आए हैं। सबसे ज्यादा तीव्रगामी परिवर्तन सामाजिक क्षेत्र में हुआ। जिन मूल्यों को समाज के लिए वर्जित माना गया था, वही मूल्य व्यक्ति अपनाने लगा है। उसे परंपरागत मूल्य निरर्थक लगने लगे हैं। जिसके चलते स्वयं के नए मूल्य गढने लगा है। जिसके कारण कहानियों के पात्र परिवर्तित मूल्यबोध के कारण संघर्ष करते हुए नजर आते हैं। अनामिका ने कहानियों में जीवन के इसी यथार्थ रूप को उभारा है।

उपयोगिता– इस शोध पत्र के माध्यम से परिवर्तित मूल्यबोध के कारण प्रभावित समाज के वास्तविक स्थिति को समझने में मदद मिलेगी।

'गृहस्थी' कहानी में केंद्रीय परिवार के विघटन को दिखाया गया है। इस कहानी की नायिका गृहिणी है, जिसकी पति के साथ अनबन होती रहती है। जिससे उसका परिवार विघटित होने लगता है। वह नाराज होकर मायके चली जाती है। उनके परिवार के विघटन का एक कारण उनकी अहम् की भावना भी रहती है। जिसका भुगतान पुत्री रूनू को करना पडता है,'जिस दिन दोनों में अनबन रहती है, उसकी खिन्नता की कोई सीमा नहीं रहती। ऐसी रोती कि उसका पहले से परेशान मन और परेशान कर डालती है।'[1]

समाज मे समय–समय परिवर्तन होते रहे हैं। सभी व्यक्तियों का समाज में अलग–अलग दायित्व है। जिससे समाज में संतुलन बना रहता है। यदि सभी अपने दायित्वों की पूर्ति करते रहें तो सब ठीक–ठाक चलता है। लेकिन यदि किसी ने दायित्व के प्रति उदासीनता दिखाई तो विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।'इमारत की पायदारी' कहानी का नायक देशभक्त है। सभी की मदद करता हुआ अपने वचनों को पूरा करता है। परन्तु वह अपने परिवार के प्रति दायित्वों का निर्वाह तब नहीं करता, जब उसके परिवार को उसकी मदद की ज्यादा जरूरत थी। क्योंकि उसके बूढे माता–पिता परिवार को बडी मुश्किल से चला रहे थे और वे अपनी अवस्था को देखते हुए भी अपनी समस्याओं को दरकिनार करके बच्चों की परिवरिष कर रहे थे। इसके लिए नायक को क्रिस्टो साहब की उपेक्षापूर्ण बातें भी सुननी पडती है,'ठीक से पढाई की होती तो अब तक उनके बूढे कंधों का सहारा होते।'[2]

व्यक्ति अपनी इच्छाओं की पूर्ति अलग–अलग ढंग से करना चाहता है। यदि इच्छाएँ व्यक्ति की कहीं पूरी नहीं हो पाती है, तो वह कुंठाओं से ग्रस्त रहता है। 'गृहस्थी' कहानी में लेखिका ने स्त्री जाति की कुंठा का चित्रण किया है। कहानी की नायिका औरों की इच्छा ढोते–ढोते स्वयं की इच्छाओं को दबा जाती है। जिससे उसकी इच्छाएँ मर जाती हैं। वह अपनी इच्छाओं की अभिव्यक्ति भी पारिवारिक बंधनों से बंधी होने के कारण नहीं कर पाती है। जिससे उसके मन में कुंठा जन्म लेने लगती है और सोचने लगती है,' कभी–कभी ऐसा लगता है कि उसकी अपनी भी कोई इच्छा है । जिसकी पूर्ति न सही, अभिव्यक्ति तो अनिवार्य है ही, पर इतनी अमूर्त वह होती है कि स्वयं भी उसका पता वह नहीं कर पाती।'[3] इस कहानी की नायिका के साथ–साथ नायक भी हीन ग्रंथि से ग्रस्त कुंठित पुरूष है। दुर्घटना के बाद वह अपने आपको कमजोर समझने लगता है और स्वयं को पत्नी और उसके मायके वालों पर आश्रित पाता है। इससे वह परेशान रहने लगता है। यहाँ तक कि वह अपनी पत्नी पर संदेह करने लगता है। पत्नी के द्वारा उपेक्षित होने पर वह सोचता है,' दुनियावी समस्याओं में अब वह ज्यादा उलझी रहती है और वह अपने भावों में अधिक गहरी डूबी रहती है।'[4]

अकेला जीवन जीना तो संत्रास है ही, उसके साथ अकेलेपन का भय और संत्रास देने वाला है। 'हुनर–दर–हुनर' कहानी के मि. हॉलिंग्सवर्थ पुत्र और पुत्री के छोड जाने के बाद अन्तर्मुखी हो जाते हैं। जिससे उनका जीवन नीरस हो जाता है। मिं. हॉलिंग्सवर्थ आयशा अम्मी के सहारे अकेलेपन के संत्रास से छुटकारा पाना चाहते हैं। लेकिन मि. हॉलिंग्सवर्थ आयषा अम्मी के उपेक्षित व्यवहार के कारण दु:खी हो जाते हैं। क्योंकि उन्हें उम्मीद रहती है कि आयशा अम्मी उनकी पियानों की धुन सुनकर जरूर आएगी। किन्तु उनकी आस टूटती हुई नजर आती है। इसके बाद तो मि. हॉलिंग्सवर्थ और भी संत्रस्त हो जाते हैं। 'मि. हॉलिंग्सवर्थ इस बीच सौ बार आयशा अम्मी के बरामदे की ओर उडती निगाह डाल चुके थे। दस मिनट बीते, पंद्रह मिनट, बीस मिनट ....., मन कहीं बहुत अधिक उद्विग्न था।'[5]

समाज में एकता और सौहार्द्र का भवन संबंधों की आत्मीयता पर ही खडा है। आत्मीयता एक सहज भाव होता है। उसे बाहर से आरोपित नहीं किया जा सकता है। यह सहज भाव ही उसे परिवार के साथ एकसूत्रता में बाँधता है और आदर का पात्र बनाता है। व्यक्ति को समृद्धकर उसके भविष्य

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

का मार्ग प्रशस्त करती है। लेकिन इस आत्मीयता में यदि एक बार दरार आ जाए तो उसे किसी भी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता है। 'हुनर-दर-हुनर' कहानी में आयशा अम्मी और उसके भाइयों में जायदाद को लेकर झगडा चलता है। उसके वालिद सारी जायदाद अपनी बेटी को यह सोचकर दे गए कि मेरी बेटी की ससुराल कैसी भी हो, उसे अपने अरमानों का गला तो नहीं घोटना पडेगा। लेकिन आर्थिक स्वार्थ भाई-बहन के संबंधों में विघटन का कारण बनता है। 'दोनों भाई क्रोध से उफनते हुए हमेशा के लिए संबंध तोड गए।'[6]

समाज की नवचेतना और नवजागरण के साथ विचार और भावना से संबंद्ध वस्तु जगत में परिवर्तन आए। परंपराओं में दबी हुई स्त्रियों को अपने अधिकारों का अहसास हुआ। जिसके फलस्वरूप उनकी स्थिति में परिवर्तन आए। परम्परागत मूल्यों के विघटन के फलस्वरूप संकीर्ण मानसिकता से मुक्ति मिली। नवीन मूल्यों को अपनाकर आज की नारी पुरूषों के समकक्ष अपना स्थान बना रही है। भारतीय संस्कृति में विवाहित नारी का परपुरूष के साथ मित्रता वर्जित है। परन्तु 'हुनर-दर-हुनर' कहानी की आयशा अम्मी परम्परागत मूल्यों को नकारते हुए मि. हॉलिंग्सवर्थ से मित्रता करती है और दुनिया के सामने मैत्रीय भाव को नये आयाम तक पहुँचाती है। अपने इसी तेवर के कारण वो लोगों के बीच चर्चा का विषय भी बनती है। लेकिन इसकी परवाह वह नहीं करती है। 'सारे मोहल्ले में जोरों की चर्चा है कि डॉ. हमीदी की माँ से डेविड साहब के पिता की मैत्री बहुत प्रगाढ हो चली है।'[7]

समाज के अपने आदर्श होते हैं। इन आदर्शों का निर्माण मनुष्य मूल्यों को अपनाकर करता है। इसी के द्वारा मानव और समाज का विकास होता है। 'हुनर-दर-हुनर' कहानी में इस्लाम और ईसाई संस्कृतियों का बहुत सुंदर सामंजस्य देखने को मिलता है। आयशा अम्मी जहाँ इस्लाम धर्म का पालन करती है, वहीं मिं हॉलिंग्सवर्थ ईसाई धर्म का पालन करते हैं। दोनों ही अपनी-अपनी संस्कृति को अपनाते हुए एक-दूसरे का मजहब का सम्मान बडी ईमानदारी के साथ करते हैं। जब आयशा अम्मी, मि. हॉलिंग्सवर्थ के साथ 'कम्बलशाह की दरगाह' की ओर जाती है तो उसे चर्च की ओर भी जाते हुए लोग देखते हैं तो चुटकियाँ लेने से बाज नहीं आते हैं। लेखिका के शब्दों में,' दोनों के द्वारा पुण्य भूमियों में जाने क्या-क्या मन्नतें माँगी जाती होगी। लोग चुटकियाँ लेते हैं और योजनाएँ बनाते हैं कि इन्हें अगल-बगल ही दफनाएंगे।'[8]

'द वीड्स रेजिस्ट' कहानी में मानवीयता का प्रतिनिधित्व नर्कवाले और स्वर्गवाले करते हैं। यहाँ मानवीयता की भावना ऊँच-नीच और छूत-अछूत से बहुत ऊँची उठी हुई है। जो समाज के लिए अमृत का कार्य करती है। नर्कवासियों को स्वर्गवासियों के कारण इतने दु:ख सहने पडते हैं कि दोनों के बीच खाई क्रमश: चौडी होती गयी। जिसके लिए दोनों को ही बडी-बडी कीमतें भी चुकानी पडी। यहाँ तक कि मुट्ठी भर स्वर्गवासियों को नरकवासियों की क्रांति का सामना भी करना पडा। क्रांति के फलस्वरूप दोनों के बीच ऊँच-नीच का भेद मिट जाता है। जो जिस योग्य होता है, उसे उसका अधिकार मिलने लगता है। 'वसुधैव-कुटुम्बकम्' का पालन होने लगा। क्योंकि उनके बीच असमानता की दीवार ढह चुकी थी।'आज स्वर्ग और नर्क के बीच की दीवार ढह चुकी थी। स्वर्गवाले और नर्कवाले मिल-जुलकर काम करते हैं। मिलों में, खलिहानों में खून-पसीने की कमाई खाते हैं। जिसकी जितनी योग्यता, उतने ही उसके अधिकार और साथ-साथ कर्त्तव्य भी।'[9]

आज की नारी पति एवं परिवार के नाम पर अपनी भावनाओं को दरकिनार नहीं करना चाहती है।'इमारत की पायदारी' कहानी में सौदामिनी अपने चाचा के साथ क्रांति में भाग तो नहीं ले पाती, लेकिन हर वक्त उनका अनुसरण करती नजर आती है और इसके लिए हमेशा प्रवृत्त रहती है। साथ ही मृणाल में देशभक्ति की भावना का अभाव होने पर वह अपनी बातें कुछ इस प्रकार व्यक्त करती है,' कितने स्वार्थी हो जी तुम, पढा नहीं सिविक्स की किताबों में कि हर नागरिक से देश की अपेक्षा होती है कि वह व्यक्तिगत हितों की सामाजिक हितों पर बलि चढा दे।'[10]

प्राचीनकाल से ही पारिवारिक उत्तरदायित्व और समाज के विरोध के कारण नारी का उत्पीडन होता रहा है और वर्तमान समाज में भी किसी न किसी कारण से उसका उत्पीडन जारी है। उसे अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए स्थापित मूल्यों से संघर्ष करना पड रहा है। जिससे उसके जीवन में विसंगतियों का निर्माण होने लगा। 'हुनर-दर-हुनर' कहानी में आयशा अम्मी ससुराल में अपमानित होती रहती है। क्योंकि वह संभ्रांत परिवार की है। ससुराल वालों को जब यह पता चलता है कि उसके मायके में भी उसकी उपेक्षा होती है तो उसे ताना दिया जाता है,'ज्यादा गरब-गुमान किया तो दाने-दाने को मोहताज कर देंगे, कभी जो चुटिया पकडकर बाहर कर दिया तो किसके दरवाजे जाओगी।'[11]

निष्कर्ष - निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि अनामिका ने अपनी कहानियों के माध्यम से यथार्थ की अभिव्यक्ति की है। उन्होंने परम्परागत जीवन मूल्यों के साथ-साथ आधुनिक शैली का तारतम्य भी बिठाए रखा। उन्होंने अपने लेखन के द्वारा समाज में प्रचलित परंपरा एवं रूढिगत प्रथा पर कुठाराघात किया। वे नारी को पुरूष के समान अधिकार दिलाकर उसे एक नया अर्थ प्रदान करती हैं। इसमें पुरानी धारा को तोडने की चेष्टा की गई है। नारी ने आर्थिक आत्मनिर्भरता के कारण पुरूष के झूठे दम्भ और प्रभुत्व को चुनौती देना शुरू कर दिया है। इस प्रकार बदलते हुए मूल्यों को अपनी कहानियों के माध्यम से कुशलता के साथ व्यक्त करने में अनामिका सफल रहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गृहस्थी -अनामिका, पृ.27
2. इमारत की पायदारी-अनामिका, पृ.5
3. गृहस्थी-अनामिका, पृ.27
4. वही, पृ.29
5. हुनर-दर-हुनर-अनामिका, पृ.11
6. वही, पृ.7
7. वही
8. वही
9. द वीड्स रेजिस्ट-अनामिका, पृ.54
10. इमारत की पायदारी- अनामिका, पृ.3
11. हुनर-दर-हुनर-अनामिका, पृ.7

****

डॉ. रामनारायण शर्मा - खड़ी बोली और बुन्देली के सशक्त कवि

लोकेश कुमार *

प्रस्तावना - साहित्य सृजन व्यक्ति के परिवेश प्रकृति एवं परिस्थिति से घटित घटनाओं से उद्भूत भावनाओं संवेदनाओं के प्रकटीकरण से होता हैं। जैसे आदि कवि के मुख से निस्सृत शब्द क्रौंन्च-वध से उपजी पीड़ा के कारण मर्मान्तक छंद बने। किन्तु व्यक्ति के कार्य-कलापों के समय उत्पन्न आनंद अवसाद, करूणा क्षोभ, शौर्य, प्रणय उसके अपने गीत बन जाते है, डॉ. शर्मा एक उच्चधिकारी के पद से सेवा निवृत्ति होते हुए, भी एक संवेदनशील व्यक्ति हैं, जिससे उनका अधिकांश साहित्य उनकी उदारता और संवेदनशीलता का सुपरिणाम हैं।

डॉ. शर्मा ने प्रारम्भिक साहित्य को अपनी एक डायरी 'साहित्य साधना' में एक संग्रह कर सुरक्षित किया था। सेवानिवृत्ति के बाद वे संग्रहित साहित्य को सजाकर प्रकाशन की ओर ध्यान देने लगे थे। डॉ. शर्मा का साहित्य विविध विधाओं में प्राप्त होता हैं। सेवानिवृत्त के पश्चात् उनके कार्य-कलाप में भारी परिवर्तन हुआ। वे अपने चिकित्सकीय कार्य को छोड़कर साहित्य साधना में लीन हो गए। उनका सारा परिवार साहित्यिक एवं काव्यमय रहा हैं।

काव्य प्रतिभा शर्मा जी में जन्म-जात थी। आप छात्र जीवन में काव्य पंक्तियॉ जोड़ने लगे थे, उनकी टूटी-फूटी काव्य पंक्तियों को उनके ज्येष्ठ भ्राता पं. कन्हैयालाल जी संशोधित करके उन्हें प्रोत्साहित करते रहते थे। वे सन् 1949-50 में जब कक्षा सात में पढ़ रहे थे उस समय उन्होंने गांधी जंयती के अवसर पर गांधी जी पर एक कविता बनाकर स्कूल में सुनाई थी और संस्था की ओर से उन्हें प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ था। उनका उत्साह बढ़ता ही गया और वे एक नवोदित बाल कवि के रूप में चर्चित हो गए। उनकी कविता में निखार आता गया। अध्ययन करने के बाद वे एक शासकीय चिकित्सालय में चिकित्सक के पद पर नियुक्त हो गए। उस समय भी उनकी लेखनी संचालित रही। शर्मा जी की परिपक्व बुद्धि से प्रथम कविता वह बनी जिसे उन्होंने सन् 1972 में जिला चिकित्सालय झांसी के ड्यूटी रूम में बैठकर लिखी थी। रात्रि में आपात वार्ड में भर्ती बेहोश महिला को जब होश आया तो डॉ.शर्मा को वार्ड से बुलाया गया। वहॉ डॉ.शर्मा ने उसके अनजान-अनबोले भाव उसके ऑसुओं में पढ़े। उसके देहावासन पर उनकी लेखनी से यह काव्य पंक्तियॉ निकल पड़ी-

'सुनो नर्स,
आपत्ति न हो तो
खिड़की के पर्दे समेट दो,
उषा की लाली के रंग में,
मेरा पीला रंग मिलने दो,
फिर जाने कब सुबह मिलेगी,
आत्म निवेदन कर लेने दो।'[1]

इनके बाद नववर्ष, होली, बंसत, प्रणय, गीत आदि काव्य रचनाऍ विभिन्न अवसरो पर लिखी गई और पढ़ी गई। कुष्ट दिवस पर सन् 1987 में रची कविता के भावों में वेदना की अभिव्यक्ति दृष्टव्य है-

'आज उनको फिर नमन हैं,
जिन्दगी जिनकी हवन हैं।
काल के कर पात्र में कवि,
बन सुलभ जीवन रहा हैं।
अग्नि के नव कुण्ड में अर्पित,
हुआ तन-मन विकल हैं
वेद-मंत्रों की ऋचाऍ,
मूक भाषा बन गई है।
अश्रु की जल धार ही,
इनके लिए सब आचमन हैं।
जिंदगी जिनकी हवन हैं।'[2]

नव-वर्ष के हर्षित वातावरण में मन कुछ गुनगुनाते लगता हैं इस आनंदपूर्ण आयोजन के अवसर पर डॉ. शर्मा के मनोरम भाव देखने योग्य है-

'जीवन के शाश्वत रंग,
बिखर रहे धरती पर।
मानव मन मुखरित हो,
गुन-गुन-गुन गा रहा।
प्राकृत के शूल सभी,
फूल बने आगत के।
स्वागत समीर शांत,
शांति गीत गा रहा ।'

डॉ. शर्मा का हिन्दी और बुदेली पर पूर्ण अधिकार है। वे गद्य और पद्य लेखन में पूर्ण दक्ष हैं। उन्होंने बुदेली में कवि गोष्ठी कविता आल्हा शैली में लिखी है-

'पाती पौची गढ़ झॉसी से, भइया सुनो हमारी बात,
सात सिम्बर रविवार खो कवियन की फिर जुरै जमात।
औसर है जो महाघड़ी को आवत मास एक ही बार,
इतनी सुनकै कवियन के मन, गूँजी कविता की हुँकार।
छदं-बंद गढ़-गये, हो गये जाने को तैयार,
छिड़ियन-छिडियन चले कवि जन पौचे मध्य बड़े बाजार।
हुलक-हुलक कै चढ़ै अटारी जितै परें कविता की मार।
बड़े - बड़े तो हौंदा पा गये, छुटकन बैठे पाव पसार।।[3]

* 273/1, शशांक नगर, बडोरा जिला, बैतूल (म.प्र.) भारत

कविवर रामचरण हरायण यमित्र' जी की संस्मृति सभा के अवसर पर डॉ. शर्मा ने भाव-प्रसून कितने सुवासित हैं इन पांक्तियों में उनकी एक झलक देखिए-

'भये ते ऐसे मित्र हमारे, बुंदेली के प्यारे।
कद काठी रंग रूप सबई से, बुंदेली से सोहे।
सेत बसन धोती कुरता में, सबके मन को मोहे।
हरॉ हरॉ डग भरत चलत ज्यों, रचे कद कविता के।'[4]

पिछले कुछ वर्षो में सुनामी की विनाश लीला से सारा देश ग्रस्त हो गया था। इसी त्रासदी पर डॉ. शर्मा ने एक कवि गोष्ठी का आयोजन किया। इस अवसर पर नगर के कवियों ने क्षोभ व्यक्त करते हुए अपनी-अपनी रचनाऍ व्यक्त की। इस अवसर पर व्यक्त की गई डॉ.शर्मा की काव्य पांक्तियॉ देखने योग्य हैं-

'सागर ही लॉघ जाये, सीमा तट बँधों की।
लहरें जब कारण बने, मनुज के विकास की।
कौन कहे सागर सग, धीर और गम्भीर की।
लहर बने जीवन के, क्रूर-कराल काल की।'[5]

डॉ.शर्मा ने अभिनव ईसुरी की उपाधि से विभूषित चौकड़िया फाग सम्राट कविवर ओमप्रकाश सक्सेना 'प्रकाश' के देहावसान के अवसर पर श्रृध्दांजली समारोह में बुंदेली की कुछ पंक्तियॉ पढ़ी थीं, उनका एक अंश यहा प्रस्तुत है-

'ओम-ओम से उपजे आखर, कविता के सब छंद बनें ते।
बुंदेली बगिया के तुमने, सुरभित-सौरभ गान रचेते।
ईसुर की बगिया के साचऊ, तोरन बंदन वार हते तुम।
बुंदेली बानी के सच्चे, असली पहरेदार हते तुम।'

इनके अतिरिक्त अनेक स्फुट रचनाऍ डॉ.शर्मा लगातार लिखते रहे और आज भी लिख रहे हैं। जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं, और आकाशवाणी केन्द्र से प्रसारित होती रही हैं। उन्होंने बुंदेली भाषा में 'महाकवि ईसुरी' महाकाव्य की रचना की जो बुंदेली साहित्य का अनुपम उपहार हैं। यह ग्रंथ सन् 2005 में प्रकाशित हुआ। महाकाव्य का यह छंद देखने योग्य है, जिनमें कवि की काव्य कला दिखाई दे रही हैं-

'फागन-फागन ग्यान बता गये, फड़ के रंग रूप दिखला गये,
सिंगार रूप लावनियॉ गा गये, गैलारे खौ गैल बता गये।
ईसुर उपजै जी माटी से, माटी कौ जस कर गये,
फागुन की फुन-गुनियॅन भीतर, फागन-फागन भर गये।।'

इस महाकाव्य पर अनेक विद्वान डॉ.गंगाप्रसाद गुप्त 'बरसैयॉ', डॉ.परशुराम शुक्ल 'विरही', डॉ.रमेशचंद्र खरे आदि मनीषियों ने समीक्षाऍ लिखी हैं। स्व.डॉ. बलभद्र तिवारी हिन्दी विभागाध्यक्ष सागर विश्वविद्यालय ने इसे एक महाकाव्य मानकर लिखा हैं - 'ईसुरी के जीवन पर बहुत लिखा गया हैं, किन्तु उन्हें चरित नायक बनाकर समस्त जीवन का सांस्कृतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक चिन्तन डॉ. रामनारायण शर्मा ने ही किया हैं।' बुंदेली का वैभव और कवि चरित नायक संबंधी धारणाऍ अत्यंत ही मौलिक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अन्तर्ध्वनि - डॉ.रामनारायण शर्मा पृष्ठ - 16
2. अन्तर्ध्वनि- डॉ.रामनारायण शर्मा पृष्ठ - 20
3. अक्षत चंदन(अभिनंदन ग्रंथ) - डॉ.रामनारायण शर्मा पृष्ठ - 146
4. अक्षत चंदन(अभिनंदन ग्रंथ) - डॉ.रामनारायण शर्मा पृष्ठ - 150
5. अक्षत चंदन(अभिनंदन ग्रंथ) - डॉ.रामनारायण शर्मा पृष्ठ - 152

****

डॉ. प्रेमभारती का शैक्षणिक अवदान

डॉ. सुरेश खाड़े *

प्रस्तावना – पश्चात्य सभ्यता की आँधी ने नई पीढ़ी को देश की माटी तथा पूर्वजों से विलग करने का जो प्रयास किया हैं, उससे भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों के समक्ष एक धुटन, निराशा तथा कुण्ठा का वातावरण व्याप्त हो गया है। अंग्रेजी वातावरण में अध्ययन करने वाले बालक से हम भारतीयता की अपेक्षा भी कैसे कर सकते हैं। अत: अब आवश्यकता इस बात की है कि जिस प्रकार वैदिक व बौद्धकाल में शिक्षा पर कोई राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं था, उसी प्रकार आज शिक्षा पर राजनीतिक हस्तक्षेप हटना चाहिए।

वैदिक, बौद्ध तथा मुस्लिम काल में शिक्षा की व्यवस्था के स्वरूप को यदि देखा जाऐ तो उस समय प्रचीन शिक्षा के जो आदर्श एवं विशेषताएँ थीं, जैसे शिक्षा का उद्देश्य, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें, शिक्षण, विधि, गुरू–शिष्य संबंध, नारी शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, परीक्षा प्रणाली आदि उनके स्वरूपों में कुछ न कुछ ऐसे तत्व अवश्य थे, जिनसे छात्रों के हृदय में श्रद्धा भक्ति, सेवा, आदर, आत्मानुशासन, सादा जीवन उच्च विचार, ब्रम्हाचर्य, नैतिकबल आदि का स्फूरण होता था। शिक्षा संस्थाओं का प्रजातांत्रिका संगठन,छात्रों तथा आचार्यों का सरल जीवन,शांति एवं अहिंसामय वातावरण जन–मानस की मान्यताओं के अनुरूप था।

अत: अब भी समय है कि भारतीय संस्कृति की मान्यताओं, परम्पराओं तथा मान बिन्दुओं के सम्यक अध्ययन से निकला हुआ इस प्राथमिक शिक्षा का आधार बने। इतिहास की विसंगतियों को दूर किया जाए। जीवन मूल्यपरक पाठ्यपुस्तकों का प्रकाशन किया जाए, संपूर्ण देश के लिए एक समान पाठ्यक्रम लागू किया जाए तथा प्राचीन ज्ञान–विज्ञान की जानकारी का समावेश पाठ्क्रम में समाहित किया जाए, ताकि इन शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से छात्रों के मध्य पनपने वाले अपराध–बोध की संस्कृति को बदला जा सके। हम एक अच्छे इंजीनियर तथा डॉक्टर भले ही वर्तमान शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से दे सकते है, किन्तु एक आदर्श देश भक्त नागरिक बनाना इसमें संभव नहीं है। यह समय इस दिशा में क्रांति लाने का है।

मॉ वीना की वंदना, वंदेमातरम्, गंगा, गीता, गायत्री, वैदिक गणित के दुर्लभ सूत्र, ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन यदि भीतर में नहीं होगा 'ग' से गणेश पढ़ाना यदि सांप्रदायिकता लाता है, तो फिर गधा पढाकर हम उनसे कौन–सी प्रतिभा का विकास करना चाहते हैं? यदि हमें संस्कृति ज्ञान एवं चरित्र मंडित दया एवं परोपकार से युक्त नागरिकों का निर्माण करना है तो वह केवल भारतीय चिंतन विधा में ही संभव है।

महात्मा गांधी ने ठीक ही कहा हैं कि 'लगभग प्रारंभ से ही पाठ्यपुस्तकों में वे विषय नहीं आते जिनसे छात्र–छात्राओं का घर में काम पड़ता हैं अपितु वे विषय आते है, जो उनके लिए अजूबा होते हैं। घर के जीवन में बालक उचित अनुचित का भेद पुस्तकों से नहीं सीखता। उसे अपने परिवेश के प्रति गर्व का भाव रखना नहीं सिखाया जाता। जैसे–जैसे वह बढ़ता हैं, वैसे–वैसे उसे उसके घर से दूर किया जाता है। परिणामत: शिक्षा समाप्त होने तक वह अपने वातावरण के प्रति अजनबी होकर रह जाता हैं। उसे गृह जीवन के संबंध में कविता अनुभूत नहीं होती। ग्रामीण दृश्यों का तो उसे ज्ञान भी नहीं। उसकी अपनी सत्यता उसके समक्ष जंगली, अंधविश्वासी तथा व्यावहारिकता शून्य बनाकर प्रस्तुत की जाती है। उसकी शिक्षा की रचना ही उसे उसकी परम्परागत संस्कृति से पृथक करने के लिए हुई है।'

1921 ई. महात्मा गांधी ने उपर्युक्त विचारों से हम सभी को अवगत कराया था।

डॉ. प्रेमभारती ने बतलाया कि उच्च शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् उनके सामने उस समय शासकीय सेवा के अनेक विकल्प खुले थे किन्तु उन्होंने इन्हीं सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर शिक्षक बनने को ही प्राथमिकता दी। उनके मामा ए.जी. कार्यालय में बड़े पद पर पदस्थ थें। उन्होने उनको वहॉ कार्य करने का आग्रह किया किन्तु वे टाल गए। उनकी नियुक्ति सेंट्रल एक्साइज के इंस्पेक्टर पद हुई। वे वहॉ भी नहीं गए। भोपाल राज्य में ही उन्होंने आकर शिक्षक पद हेतु साक्षात्कार दिया और उनकी नियुक्त शिक्षक पद पर हो गई। फिर वे अपने सेवाकाल के लंबे सफर में शिक्षा विभाग के अनेक पदों पर रहे और सेवा निवृत हुए।

सेवाकाल में वे जिस पद पर भी रहे, उन्हें एक शिक्षक के नाते राज्य स्तर पर पहचान मिली। प्राचार्य पद पर पदोन्नति के पश्चात वे नवाचार से जुडे।

पाठ्क्रम में कृतियॉ – मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित कक्षा 6 एवं माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा प्रकाशित कक्षा 10 (सामान्य हिन्दी) में पाठ।

माध्यमिक शिक्षा मण्डल, मध्यप्रदेश भोपाल के डी.एड. पाठ्क्रम में हिन्दी शिक्षण के अंतर्गत 'हिन्दी वर्ण और वर्तनी' पुस्तक संदर्भ ग्रंथ के रूप में शामिल।

मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालय में स्तनातक स्तर के सेमेस्टर तृतीय पुनरीक्षित एकीकृत आधार पाठ्यक्रम में (हिन्दी भाषा की अनिवार्य पुस्तक) में निबंध शामिल।

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय के एम.ए. (पूर्वार्ध्द) के चतुर्थ प्रश्न–पत्र विशेष कवि सूरदास तथा एम.ए. (उत्तरार्ध्द) प्रश्न –पत्र हिन्दी उपन्यास नाटक तथा कहानियॉ का विषय–वस्तु का संपादन।

कक्षा 6, 7, 8, 9 तथा 10 की मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित हिन्दी पाठ्य पुस्तकों का संपादन।

* मु. पो. विकास नगर, पाढर (म.प्र.) भारत

डॉ. भारती के साहित्य पर –

1. डॉ. प्रेम भारती कृति कुरूक्षेत्र की राधा साहित्यिक अनुशीलन (2010–11) (विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन)।
2. डॉ. प्रेम भारती कृत लघु पत्रिकाओं के बदलते प्रतिमान एक अनुशीलन (विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन 2011–12)

ऐसी पहचान बनाई कि आज भी शिक्षा जगत में उनका नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। सेवानिवृत्ति के समय वे राज्य शैक्षिक शोध अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT) भोपाल में पाठ्यक्रम प्रभारी के पद से सेवानिवृत्ति हुए।

नई पीढ़ी का चरित्र निर्माण जितनी सुविधा से शिक्षक कर सकता हैं, उतनी आसानी से न तो अभिभावक कर सकता है और न अन्य सामाजिक अथवा राष्ट्रीय नेतागण। आज तक जितनी भी बलिदान परंपरा देखने में आ रही, उसमें शिक्षक की महत्ती भूमिका है। राष्ट्रीय आंदोलन के मूल में भी शिक्षक ही रहे है। अत: शिक्षकीय कार्य निवृत्ति के बाद भी डॉ. भारती शिक्षा के क्षेत्र से जुडे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. प्रेमभारती से लिए गए साक्षात्कार के आधार पर।
2. श्रद्धा यादव– कुरूक्षेत्र की राधा: एक अनुशीलन।
3. सीता पाल– डॉ. प्रेमभारती कृत 'लघु पत्रिका के बदलते प्रतिमान' एक अनुशीलन।

****

मीता - मेरा (लघु उपन्यास) - डैफोंडिल जल रहे है - मृदुला गर्ग

डॉ. संध्या खरे *

प्रस्तावना - मीता और महेन्द्र प्रेमविवाह करते हैं। इस विवाह से मीता सुखी व संतुष्ट है परन्तु महेन्द्र के मन मे अमेरिका जाकर ढेर-सा रूपया कमाने की, उच्चस्तरीय जीवन बिताने की लालसा निरंतर बनी रहती है, जो कालांतर में उनके जीवन में द्वंद्व का कारण बनती है। महेन्द्र सरवरिया एण्ड को0 में असिस्टेंट इन्जीनियर है। छः सौ रूपये माहवार पर दो साल से। मारबाड़ी कन्सर्न, हमेशा खिट-खिट बनी रहती।[1]

मीता टाइपिस्ट है वह भी चाहती है कि 'अपने को दिखाकर, जो फार्म-वार्म भरने हो, भरकर दिन मुकर्रर करके, वह अपने दफ्तर पहुंच सकती है। सेतु ट्रेवल्स, कम्पनी में टाइपिस्ट है वह। तीन सौ रूपये माहवार पर। ढाई साल से। काम बुरा नहीं है, पर बॉस सख्त है। देर से पहुंचे तो फौरन फाइन लगाकर, तनख्वाह से पैसे काट लेता है।[2]

मीता का पति महेन्द्र उसका आधुनिक पद्धति से शोषण करता है। मीता से विवाह करते समय वह हानि-लाभ का गणित बड़ी अच्छी तरह से लगा लेता है कि वह उसकी योजना में खुशी से हाथ बंटाएगी। साथ ही अमरीका ले जाएगा और जो दो साल उसे वहा एम0 एस0 करने में लगेंगे, उतने में वही कोई छोटी-मोटी नौकरी कर लेगी। वहां नौकरियों की क्या कमी है। छोटा भाई सुरेन्द्र है ही, कोई न कोई जुगाड़ कर देगा। फिर एक बार एम0 एस0 करके उसकी खुद की नौकरी लगनी चाहिए, बस मौज ही मौज होगी।'[3]

लेकिन महेन्द्र का हानि-लाभ का यह गणित पूरी तरह से फेल हो जाता है, क्योकि मीता मॉ बनने वाली है। इसलिए महेन्द्र को मीता के ऊपर अन्तहीन क्रोध है, 'उसे गुस्सा आता है, सारा कसूर मीना का है। सिर्फ मीता का-उसकी नजरों में। पर उस कसूर की सजा क्या होगी, इसका फैसला, मीता का कैसे हो सकता है। वह महेन्द्र का है, सिर्फ महेन्द्र का।'[4]

मीता महेन्द्र की महत्वाकांक्षा के कारण मां बनने के स्वाभाविक अधिकार से वंचित की जाती है। महेन्द्र के तर्क व धिक्कार उसे मानसिक द्वंद्व, ग्लानि एवं पीड़ा से भर देते है। और, 'फिर बस तर्क थे और तर्क थे और तर्क थे। ..... हर तर्क अंगुली उठाकर उसे अभियोगी ठहराता और संतरी-सा उसकी पहरेदारी पर तैनाव हो जाता। ..... सब कसूर उसका है, सिर्फ उसका। बरना ऐसी स्थिति क्यों पैदा होती कि उसका और महेन्द्र का प्यार तर्कों तले दब जाता। अपनी बनाई स्थिति से वहीं, उन दोनों को उबार सकती है। महेन्द्र के तर्कों के जवाब देते-देते, वह अपने मन में उठते तर्कों से परास्त हो जाती।'[5]

महेन्द्र का तर्क है कि 'जिंदगी क्या इस तरह जी जाती है कि जब जो होता जाए, होने दो? वे क्या शतरंज के मोहरें हैं? नहीं वह किस्मत के हाथों मार नहीं खाएगा। सोच विचार कर जो योजना बनायी है, उसी पर अमल करेगा। बस कुछ दिन की बात और है। इस बिन बुलायी मुसीबत और साली छः सौ रूपल्ली की नौकरी से एक साथ छुटकारा मिल जाएगा।'[6]

महेन्द्र के अपने निर्णय के समर्थन में अनेक तर्क हैं कि 'इन छः सौ रूपयों में हम उसे क्या देंगे, अभाव के सिवा? पर अगर यही बच्चा अब न होकर पांच साल बाद हुआ तो सब कुछ होगा हमारे पास बड़ा घर, गाड़ी, फ्रिज। रंग-बिरंगे कपड़ों से उसे सजा सकेंगे।.... बड़े होने पर उम्दा स्कूल में उसे पढ़ा सकेंगे।'[7]

अंततः परास्थ होकर के मीता महेन्द्र के तर्कों से सहमत हो जाती है क्योंकि वह समझ जाती है कि उसे बच्चे को समाप्त ही करना होगा, 'वह बच्चा, जिसकी मां वह तब तक नहीं बन सकती, जब तक महेन्द्र उसका बाप बनने तैयार नहीं हो।'[8]

डॉ0 के पास जाने पर परिस्थितियां पूरी तरह बदल जाती हैं। मीता महेन्द्र के तर्कों तथा मां का नसीहतों के आगे सिर झुकाना नहीं चाहती है। वह अपने बच्चे को जन्म देना चाहती है इसलिए डॉक्टर की समर्थन युक्त आवाज मीता को इंसान की आवाज-सी लगी संवेदना, मानवता, ममत्व से भरी, 'डॉक्टर ने अपनी नजरें मीता की तरफ घुमा लीं। एक बार फिर उनमें वह चुनौती का भाव उभर आया। और उसके पीछे कहीं अथाह संवेदना का गहराता सागर। उसे लगा, यह डॉक्टर उसकी चिर आत्मीय है।'[9]

डॉ0 महेन्द्र को पूरी तरह नजर अंदाज करके सिर्फ मीता से बात करती है। डॉ0 का स्पष्ट कहना है कि 'यह इनका निजी मामला है। उसने अपना स्वर जरा भी ऊंचा नहीं किया न वह कांपा, न थर्राया। पर उसके पीछे छिपी ललकर ने मीता को पूरी तरह झकझोर डाला। किसी अज्ञात आकर्षण में बंधी, दोनों स्त्रियां एक-दूसरे को देखती रहीं।'[10]

मीता डॉक्टर से हौसला पाकर महेन्द्र का सक्रिय प्रतिकार करती है। वह महेन्द्र का परामर्श मानने के स्थान पर स्वयं निर्णय लेती है और तय कर लेती है कि वह बच्चे को जन्म देगी। यह तय करने के बाद मीता ने महेन्द्र के हाथों से फार्म लेकर, 'अकम्पित दृढ हाथों के बीच, उसने उसे पकड़ा और खच से बीच से चीर डाला। दोनों टुकड़ों को साथ रखा और फिर खच् से चीर दिया। टुकड़ों को फिर रखा, फिर चीरा, फिर रखा, फिर चीरा, और तब तक रखती-चीरती चली गई, जब तक उनकी चिन्दी न हो गई।'[11]

मीता का विरोध स्वयं उसके अपने मानसिक संतोष तथा अजन्में बच्चे दोनों के लिय सार्थक होता है। यह निर्णय लेते समय मीता का, 'चेहरा बिल्कुल शांत है, उसकी आवाज की तरह। पर उस शांति में निष्क्रियता नहीं, निर्णय झलक रहा है।' उसने सुना, वह कह रही है, 'फिर मुझे किसी बेहतर नौकरी की तलाश भी करनी है' वह समझ गया, वह उसके तर्कों के घेरे से बाहर निकल गई है। यही नहीं जो तर्क अब खुद मीता के हाथ आ गया है, इतना अकाट्य और ओजस्वी है कि उसने चारों तरफ घेरा खींचकर, महेन्द्र को

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

बाहर कर दिया है। उसके देखते-देखते, आंखों में अपना अभीष्ट बसाए, मीता मुड़ी और सधे कदमों से पर्दे के पीछे चली गई।'[12]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 42 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
2. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 43 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
3. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 49 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
4. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 43 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
5. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 76 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
6. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 42 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
7. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 54 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
8. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 66 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
9. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 85 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
10. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 85 हिन्द पाकेर बुकप्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
11. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 86 हिन्द पाकेर बुक प्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032
12. मृदुला गर्ग, (डैफोंडिल जल रहे है) लघु उपन्यास - मेरा, पेज न0- 86 हिन्द पाकेर बुक प्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1979, उपन्यास जी0टी0रोड, शाहदरा, दिल्ली 110032

****

श्री शांति प्रिय द्विवेदी हिन्दी के निबंध- एक विमर्श

डॉ. अंजली सिंह *

प्रस्तावना – श्री शांति प्रिय द्विवेदी हिन्दी के एक ऐसे मर्मी आलोचक है, जिनका पथ उनकी आस्था ने प्रशस्त किया है। उनका जीवन एक ऐसे संकल्पित साहित्यकार का जीवन है जो अनेक प्रकार के अभावों के बीच अपनी प्रतिभा और निष्ठा से प्रतिष्ठित हुआ है। उनका उदय छायावाद के समर्थक आलोचक के रुप में हुआ था। निबंध, आलोचना, आत्मकथा, संस्मरण, उपन्यास आदि अनेक गद्यविधाओं को द्विवेदी जी ने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। उनकी ख्याति एक समीक्षक के रुप में हुई। किन्तु गद्य की अन्य विधाओं में भी उन्होंने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। 1928 में अपनी पहली गद्यकृति 'जीवन-यात्रा' के भावपूर्ण व आदर्श प्रेरित निबंधों के साथ साहित्य जगत में उनका प्रवेश हुआ। हमारे साहित्य निर्माता (1934) और 1936 में आलोचना की तीसरी पुस्तक 'कवि और काव्य का प्रकाशन हुआ। कविता और सभ्यता, रस, शब्द और छंद, चित्र, संगीत और अलंकार, वस्तुजगत और भावजगत, कविता और कला, मनुष्य और मनुष्येत्तर प्रकृति, कविता और विज्ञान जैसे गंभीर विषयों के अतिरिक्त हिन्दी काव्य की चर्चा भी मिलती है। साहित्यिकी 1938 और संचारिणी 1939 में उनकी साहित्यिक मान्यताएँ स्पष्ट हुई है। इसके संबंध में वे लिखते हैं 'कवि और काव्य के बाद प्रकाशित होने वाली साहित्यिकी जहाँ मेरे अब तक के प्रयत्नों और विश्वासों की मेरी स्वीकृति है, वहाँ मेरे भावी मनन चिंतन की सांकेतिक भी। साहित्यिकी में द्विवेदी जी ने सांमजस्य का दृष्टिकोण अपनाया है। आलोचनात्मक दृष्टि के विकास क्रम में 'साहित्यिकी' के बाद प्रकाशित होने वाली संचारिणी 1939 में कोई विशेष अंतर लक्षित नहीं होता। इसमें आधुनिक काव्य की प्रवृतियों पर विस्तार से विचार किया है। 1941 में प्रकाशित 'युग और साहित्य' को हम हिन्दी साहित्य का इतिहास कह सकते है। इसमे 'इतिहास के आलोक में' सामाजिक और राजनीतिक चेतना के अलावा निराला, पंत और महादेवी की चर्चा की गई है। 1944 में प्रकाशित सामायकी में द्विवेदी जी ने गांधी वाद में अपनी संपूर्ण आस्था व्यक्त की है। 'सामयिकी' में वस्तुत: गॉधी वादी जीवन दृष्टि के आलोक में सामयिक साहित्य का मूल्यांकन किया गया है। इसमें उनके प्रौढ चिंतन का तथा जीवन दृष्टि में परिवर्तन ने छायावाद की भाव-चेतना में गॉधी वादी आस्था की नीवं रखी। सामयिकी के पश्चात् धरातल 1948, ज्योति बिहग 1951, प्रतिष्ठान 1953, साकल्य 1955, पद्यनामिका 1956, आधान 1957, वृंत और विकास 1959, समवेत 1960 आदि सभी आलोचना और निबंध कृतियों में उनकी गॉधीवाद के प्रति निष्ठा बनी रही।

निबंध और आलोचना के अतिरिक्त शांतिप्रिय द्विवेदी जी ने संस्मरणात्मक आत्मकथा और उपन्यास भी लिखा है। उनके तीन साहित्यिक व्यक्तित्व उभरते है। निबंधकार, आलोचक और कथाकार इन तीनों ही रुपों में उनकी उपलब्धियॉ महान है।

शांतिप्रिय द्विवेदी जी निंबध को रचना का शिल्प मानते हैं। वे लिखते हैं 'निबंध एक ऐसा बंधान या आंतरिक छंद है जिससे रचना संतुलित हो जाती है। निबंध का रुप काव्य में कहानी में, लेख में, संस्मरण में जीवनी में, आलोचना में, पत्र और रिपोर्ताज में, भ्रमण वृतांत में, रचना के किसी भी विषय में व्यक्त हो सकता है।

इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि द्विवेदी जी की प्राय: सभी गद्य-कृतियां उपन्यासों और संस्मरण को छोड़ कर निबंध रुप में ही लिखी गई है। उनकी आलोचना निबंधों के माध्यम से ही साकार हुई है। उनके निबंध उनके व्यक्तित्व के प्रतिरुप है। उनके व्यक्तित्व का आंतरिक संघटन भावुकता, विश्वास, मनन और चिंतन से हुआ है। उनके साहित्यिक निबंध जो प्रारंभ में लिखे गए उनमें भावुकता और विश्वास का तत्व विशेष रुप में दिखाई देता है। वे कवि और उसके काव्य की चर्चा करते हुए या काव्य प्रवृतियों की व्याख्या करते हुए सीधे कवि के मर्म का उद्घाटन करने लगते हैं या कवि की रचना प्रवृत्ति की तलस्पर्शी व्याख्या करते है। सामयिकी की रचना में यह प्रवृति विशेष परिलक्षित होती है। अपनी इसी विशेषता के कारण उन्होंने ऐसी व्याख्याएँ की हैं, जो उनकी मर्मग्राहिता का परिचय देते है। काव्य के संबंध में उनके विचार ध्यान देने योग्य हैं 'कविता मनुष्यों की ही नहीं अपितु चराचर व्याप्त प्रकृति की साँस है।' कविता और विज्ञान की तुलना करते हुए उन्होंने लिखा है विज्ञान मस्तिक का चरम उत्कर्ष है, काव्य हृदय का परम उत्थान। विज्ञान का उत्कर्ष मनुष्य को और समीप कर देता है। काव्य का उत्कर्ष जीवन को नव-नव संजीवन देता है। बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति कर के भी विज्ञान हृदय को शांति नहीं दे पाता किन्तु कवि वंशी के रिक्त रन्ध्रों जैसे अभावमय जीवन को भी हृदय के माधुर्य से परिपूर्ण कर देता है लेकिन बाद की कृतियों में अध्ययन के विस्तार, प्रौढ चिंतन ने वस्तुनिष्ठता की ओर उन्हें अग्रसर किया। परवर्ती रचनाओं में वे सीधे विषय को लेकर बिना किसी भूमिका के क्रमबद्ध विचार प्रस्तुत करने में समर्थ हुए। प्रांरभिक रचनाओं के भाव संयोजन का स्थान वैचारिकता ने ले लिया।

विषय की दृष्टि से उनके सभी निबंध साहित्यिक निबंध की श्रेणी में आते हैं। उनकी समस्त निबंध-कृतियों पर दृष्टिपात करें तो हमें कुछ ही विषयों के संबंध में अनेक संदर्भो में उनके विचारों की जानकारी मिलती है। उन्होने जिन विषयों को अपने विचार विमर्श के केन्द्र में रखा वे हैं – 1. काव्य और कला के शाश्वत उपादानों का विश्लेषण 2. काव्य प्रवृतियों का विवेचन 3. युग-विशेष का ऐतिहासिक पर्यवेक्षण 4. विभिन्न गद्य-विधाओं की समीक्षा 5. संस्कृति और उसके उपादानों की व्याख्या 6. विविध कवियों और लेखकों का व्यवहारिक मूल्यांकन 7. भाषा की समस्या। ये सभी विषय

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय माधव सदाशिवराव गोलवलकर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

ऐसे हैं, जो एक समीक्षक की मानसिक यात्रा में आते है। द्विवेदी जी की पहचान हिन्दी संसार में एक समीक्षक के रुप में है। उनकी इस यात्रा में मानव की भावना ही उनकी सहयात्री रही है। उनकी मान्यता है कि 'कोई भी वाद यदि सचमुच की अभ्यान्तरिक दृष्टि से लोक कल्याण की आकांक्षा रख कर चलना चाहता है, तो वह विवाद नहीं करता सहयोग करता है और भिन्न्ताओं में भी एक सामंजस्य स्थापित करने को स्नेहातुर रहता है'। सामंजस्य का यह मूल मंत्र उन्हें गॉधीवादी दर्शन से प्राप्त हुआ था। आधान में उन्होंने लिखा है छायावाद को तो मैंने अपनी अनुभूति से ग्रहण कर लिया था, किन्तु अनुरुप व्यवहारिक आधार न मिलने के कारण मुझ में एक असंतोष व्याप गया। वही असंतोष 'युग और साहित्य' समाजवादी स्वर में व्यक्त हुआ। कुछ प्रकृतिस्थ होने पर अब मुझे एकांत मनन-चितंन का अवसर मिला तब समुचित व्यवहारिक आधार गॉधीवाद में मिल गया। इस प्रकार द्विवेदी जी के के चितंन में आंतरिक सामंजस्य भले ही हो किन्तु समस्या का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण नही है। बाह्य की विराट सत्ता की अनदेखी कर केवल भाव परिधि के चितंन ने द्विवेदी जी को गॉधीवादी से आगे बढ़ने नहीं दिया। उनके प्रत्येक असंतोष ने गॉधीवाद में अपना समाधान तलाशने की कोशिश की। यही समाधान उनकी शक्ति भी बना किन्तु इसी ने उनकी सीमा भी निर्धारित कर दी। चिंतन के धरातल पर वे इससे आगे नहीं बढ सके। यह होने पर भी शातिप्रिय द्विवेदी जी ने अपने निबंधों में जो विचारों को हार्दिकता की आभा से मंडित कर दिया है, वह हिन्दी निबंध साहित्य की स्पृहणीय वस्तु है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कवि और काव्य-पृ. 13 श्री शांतिप्रिय द्विवेदी हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी, प्र.सं,1957 ई
2. वही, पृष्ठ- 15,16
3. संचारिणी-भूमिका - पृ. 2
4. आधान, प्राक्कथन
5. आधुनिक हिन्दी साहित्य-नंददुलारे बाजपेयी, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इला. पंचम संस्करण संवत 2031

****

झारखंड का हिन्दी कथा साहित्य और श्रवन कुमार गोस्वामी के उपन्यास

डॉ. अजय कुमार दास *

प्रस्तावना – झारखंड के हिन्दी साहित्य में श्रवन कुमार गोस्वामी के उपन्यास मील के पत्थर हैं, इन्होंने अध्यापकीय जीवन जीते हुए साहित्य के लगभग सभी विधाओं में लेखनी की है। उपन्यास कहानी नाटक। झारखंड का साहित्य, जिसका इतिहास स्वर्णिम है, यहाँ के साहित्यकारों ने सच्चाई की बुझती हुई राख को अपनी कलम की नोंक से कुरेद–कुरेद कर ऐसी चिन्गारियाँ निकाली है, जिसमें ज्वालामुखी की गर्मी और प्रकाश देखा जा सके, जिसके तहत जुल्म अन्याय और अत्याचार व फिरका–परस्ती आदि सभी दम तोड़ दें और इस क्रम में श्रवन कुमर गोस्वामी के उपन्यास मील के पत्थर हैं।

श्रवण कुमार गोस्वामी ने अनेक उपन्यासों की रचना की है और ये सामाजिक–राजनीतिक दृष्टि सम्पन्न लेखक हैं, इसलिए इनके उपन्यासों में सामाजिक जीवन में व्याप्त आडंबर अनाचार अमानवीयता और साथ–साथ मानवीय रागबोध के आलव राजनीति एवं नौकरशाही में व्याप्त भ्रष्टाचार, तिकड़म, छल–छदम के मिले–जुले विवरण मिलते हैं। कविता का जन्म एक अनिवार्य आशावादिता को लेकर हुआ था। किन्तु उपन्यास का जन्म आधुनिक काल के यथार्थवादी परिवेश में हुआ है। उपन्यास पूंजीवादी सभ्यता की देन है। पुंजीवादी सभ्यता के विविध जीवन–सत्यों को कथा के माध्यम से व्यक्त करने के लिए ही इसकी उत्पत्ति हुई है। यह मात्र कहानी नहीं है। कहानी यानी कथा तो इसका माध्यम मात्र है। मूल वस्तु है, वर्तमान जीवन की जटिल यथार्थवादिता।[1]

गोस्वामी जी ने अपने उपन्यासों में स्थिति को पूरी निर्ममता के साथ प्रस्तुत किया उन्होंने कुरीतियों भ्रष्टाचार और जनता के शोषन के विविध रूपों को अपनी रचनाओं में पूरे विस्तारपूर्वक, उनके हर पक्ष को ध्यान में रखतु हुए रचा। इनके उपन्यासों की एक विशिष्टता यह भी है कि राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में लेखन करने के साथ–साथ इन्होंने झारखंड राज्य की कुछ खास समस्याओं को भी उठाया है। हस्तक्षेप उपन्यास जिस पृष्ठभूमि पर लिखा गया है, वह आदिवासी बहुल इलाका है। नेताजी और रहमत किया जैसे बुद्धिजीवियों का कार्यक्षेत्र यही इलाका है, जिसके दोहन के नये–नये हथकंडे वे अपनाते रहते हैं। रहमत मिया एक दिन नेता जी से बोलते हैं नेताजी, आजकल सियासी हलके में संसकिरती का बड़ा जोर चल रहा है। इसीलिए तो मेरा भी ख्याल है कि हमलोग भी जल्द से जल्द संस्कृति के लिए कुछ करें।[2]

अस्मिता के नाम पर अविकसित या अर्द्धविकसित समुदायों के शोषण के लिए संस्कृति के प्रश्न को आधार बनाकर काम करने वाले हृद्य बुद्धिजीवियों के चरित्र का परिचय ये दोनो पात्र प्रस्तुत कर देते हैं। इसके लिए वे आदिवासी पात्र को ही मोहरा बनाते हैं। यह निश्छल व्यक्ति इनके जाल में फँस जाता है।

नेताजी करमा भगत के बाँसुरी वादन की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए उसे पाँच हज़ार के पुरस्कार से भी नवाज देते हैं, ताकि संस्था के प्रति करमा भगत की निष्ठा और समर्पन पूरी तरह बना रहे और वो इसका लाभ उठाकर अपना उल्लू सीधा करते रहे। डा. गोस्वामी अपने उपन्यास में यही दिखाना चाहते है कि जब आदिवासी समाज का एक ऐसा व्यक्ति जो प्राध्यापक जैसे प्रतिष्ठित पद पर भी आसीन है और प्रसिद्ध बाँसुरी वादी यानी संस्कृति कर्मी भी है, समाज के चाटुकार लोग उसे भी उल्लू बना ले जाते है, तब आदिवासियों में जो अशिक्षित और पिछड़े है, वैसे लोगों का क्या हाल होगा।

गोस्वामी जी का प्रथम उपन्यास है, 'जंगलतंत्रम्' में इन्होंने प्रतीकों का प्रयोग किया है पर ये शिल्प के स्तर पर थोड़ी रोचकता भले ही उत्पन्न करते हैं, पर कथावस्तु का स्वरूप सामान्य ही है और कथा का विकास भी सामान्य गति से ही होता है। इसकी कथावस्तु को 'पंचतंत्र' की कहानियों के तौर पर गठित किया गया है। 'जंगलतंत्रम्' में चूहा दलितों का प्रतीक पात्र बनकर ही उपस्थित हुआ है, जिसे सिंह, मोर और नाग जैसे समाज के समर्थ लोगो के शोषन–तंत्र का तरह–तरह से शिकार होना पड़ता है। समर्थ लोगो को अपने श्रम के बल पर वह हर सुख–सुविधाएँ उपलब्ध करवाता है, मगर बदले में उसे सिंह, मोर और नाग की अपेक्षा और शोषन का ही शिकार होना पड़ता है। जबकि सिंह जो शासनतंत्र का प्रतिनिधि पात्र है, उसे इस बात का ज्ञान है कि उनकी सत्ता चूहा की बदौलत ही कायम रह सकती है। यहाँ सिंह की यह टिप्पणी ध्यान देने योग्य है कि किस प्रकार दलित के नाम पर सत्ता की राजनीति होती है– यह सही है कि हम लोगों के बीच चूहा सबसे छोटा, कमजोर पिछड़ा, अशिक्षित दलित और दुखी है इसलिए इसकी उन्नति एवं समृद्धि पर हम सबसे ज्यादा ध्यान देंगें। चूहे की शिकायतों को जड़ से मिटा देना ही हमारा संकल्प होगा।[3]

'उनके दर्पण झूठ न बोले' उपन्यास की केन्द्रीय पात्रा जनता एक प्रतीक है जो किसी जाति विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करती, बल्कि शोषण तंत्र की चक्की में पिसने वाली उन तमाम जातियों के लोगों का प्रतिनिधित्व करती है, जो व्यवस्था के निचले पायदान के लोगों से लेकर सत्ता के शीर्ष लोगों के द्वारा छले जाते है और अपनी साँसों को बचाये रखने के लिए जीवन पर्यन्त संधर्ष करते हुए दम तोड़ देते है। जनता का एकमात्र सहयोगी जमाना कहता है– देश के कर्णधार ही भ्रष्टाचार के पोषक और उसके विस्तारक हैं। वे तुम्हारी गरीबी बेच रहें हैं।[4]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी उपन्यास – एक अंतयात्रा– डा. रामदरश मिश्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 2001 पृ. 12
2. हस्तक्षेप – श्रवण कुमार गोस्वामी, पृ. 32
3. जंगलतंत्रम्, श्रवण कुमार गोस्वामी, पृ. 21
4. दर्पन झूठ ना बोले, श्रवन कुमार गोस्वामी पृ. 98

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) के. के. एम. कॉलेज, पाकुड़, भारत

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में संस्कृत की आवश्यकता

डॉ. भावना श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – संस्कृत भाषा भारत की ही नहीं अपितु संसार की प्राचीनतम्, गौरवशाली समृद्धशाली समुन्नतम देवभाषा है। सभ्यता के स्वर्णिम उषाकाल में गरिमामयी गौरवान्वित संस्कृत भाषा का उदय हुआ, और सर्वप्रथम स्वर्गभूमि भारत वर्ष को ही इस उदय का दर्शन हुआ। जब संसार के अन्य देशों में व्यक्ति पशुओं के स्तर पर रहते हुए बन्दरों और वन मानुषों की भाँति सांकेतिक भाषाओं का प्रयोग कर रहे थे। उस समय भारत में आर्य लोग सुसभ्य एवं सुसंस्कृत भाषा के माध्यम से ब्रह्म-ज्ञान का पावन दर्शन कर रहे थे।

अत: आज अब भी हम कह सकते हैं कि हमारी भारतीय संस्कृति एवं जीवन दर्शन का मूल स्त्रोत संस्कृत भाषा ही रही है। हमारी संस्कृति व सभ्यता वे दो उपनिषदों, स्मृतियों, पुराणों एवं ऋषि-मुनियों की गाथाओं से निकली है। हमारे जीवन के सोलह संस्कार संस्कृत भाषा में ही कराये जाते हैं। वर्तमान क्रान्तिकारी गतिशील जीवन विभीषिका के परिप्रेक्ष्य के दृष्टिकोण में भारत ही नहीं समस्त संसार की सम्पूर्ण त्रैकालिक सभ्यता से परिचय प्राप्त करने के लिए हमें संस्कृत भाषा को ही शरण में जाना पड़ेगा। हमारे नैतिक मूल्यों, शिष्टाचारों, सदाचारों, आदर्शों, गुणों के आशीर्वाद, जैसे – आयुष्मानभव:, कल्याणभव:, दीर्घायुभव:, चिरंजीवभव:, पुत्रवतीभव:, सौभाग्यवतीभव: आदि सभी देववाणी के द्वारा ही सार्थक एवं सफल होते हैं। अतिथि सत्कार, सामान्य वार्तालाप आदि सभी में हमारी सांस्कृतिक परम्परा शास्त्रीय आदेशों से नियंत्रित है।

आधुनिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य के आधार पर हम कह सकते हैं कि आजकल अधिकतम किशोर प्राय: शिष्टाचार के नियमों की अवहेलना करते हुए दिखायी पड़ते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि वे संस्कृत भाषा से परिचित नहीं हैं। भाषा और संस्कृति का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध होता है, जैसे कि अंग्रेजी के जन्म स्थान इग्लैण्ड की जलवायी बड़ी सर्द है, अत: वहाँ पर अतिथि का स्वागत गरम द्रव्य-पदार्थों से किया जाता है, और उनके यहाँ शीत शब्द अनादर का द्योतक है, जबकि हमारे यहाँ की संस्कृति में शीतल जल से अतिथि का स्वागत किया जाता है। ऐसी भिन्नता होने के बावजूद भी अंग्रेजी में हमारा चिन्तन भारतीय संस्कृति के विपरीत प्रतीत होता है।

आज भारतीय समाज की जो जीवन-पद्धति है, उसके जो आदर्श और मूल्य हैं, वे सभी भारतीय नहीं हैं। इसीलिए तो कभी-कभी भारतीय संस्कृति के पुनरुद्धार की बात कहीं जाती है। भारतीय संस्कृति की आत्मा को जो विद्वान् अंग्रेजी के माध्यम से पहचान कर चलते हैं, वे प्राय: भूल कर बैठते हैं, कि संस्कृत साहित्य के अक्षय भण्डार का रसास्वादन करने के लिए और भारतीय संस्कृति से परिचय प्राप्त करने के लिए संस्कृत भाषा का अध्ययन नितान्त आवश्यक है। भारत वर्ष की अधिकतर भाषाओं की जननी संस्कृत है। हिन्दी, मराठी, पंजाबी, गुजराती, बंगला, असमी, उड़िया आदि भाषाएँ तो संस्कृत से निकली ही हैं, आर्य और द्रविण परिवार की सभी भाषाएँ भी संस्कृत से ही प्रभावित हैं। इस संदर्भ में 'संस्कृत आयोग' उचित ही लिखता है:- 'आधुनिक आर्य भाषाएँ संस्कृत से ही उत्पन्न हुई हैं, और जहाँ तक द्रविण भाषाओं का सम्बन्ध है, वे भी अपने साहित्यिक प्रयोग के आदि-काल से ही संस्कृत के द्वारा चालित-पोषित हैं।'

भाषा की दृष्टि से भारतवर्ष की सभी भाषाओं में संस्कृत के अधिकांश शब्द तत्सम् या तद्भव रूप में विद्यमान हैं। हिन्दी भाषा तो संस्कृत भाषा की ही शब्दावली मूलरूप से ग्रहण करती है। संस्कृत भाषा में तो इतनी सामर्थ्य है, कि वह आधुनिकतम ज्ञान-विज्ञान के योग्य शब्द प्रदान कर दे। इसलिए भारतीय भाषाओं ही नहीं, संसार की अन्य भाषाओं पर भी संस्कृत का प्रभाव परिलक्षित होता है। भारत के अलावा अन्य बाहर के अनेक नगरों व देशों के नाम भी संस्कृत भाषा से प्रवाहित हैं। एशिया के देशों दक्षिण-पूर्व में संस्कृत भाषा का आज भी प्रभाव बना हुआ है। इण्डोनेशिया में सामान्य जन मुसलमान होते हुए भी रामायण और महाभारत की कथाओं एवं उनके पात्रों से प्रेरणा लेते हैं। जावा के मुसलमान भी मूर्तियों पर फूल चढ़ाकर मन्दिरों में आरती उतारते हैं। बाली द्वीप का नाम भी सम्भवत: रामायण के बालि के आधार पर बना है। काबुल विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में संस्कृत को महत्वपूर्ण विषय मानते हैं। इतना ही नहीं, जर्मनी का राष्ट्रपति गेटे, संस्कृत साहित्य के माधुर्यताम्, ललिताम्, लावण्योपेताम्, ललना ललाम्, रस परिप्लावन काव्ये अभिज्ञान शाकुन्तलम् का गहनतम् रसपान करके मनमुग्ध होकर नाच उठा और भारत दर्शन के लिए लालायित हो उठा था।

हम यह भी कहना नहीं भूलेंगे, कि आज से कुछ वर्ष पूर्व ही इटली, डेनमार्क, स्वीडन, जर्मनी फ्रांस, इग्लैण्ड आदि यूरोपीय देशों में उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में ही संस्कृत की धाक जम गयी थी। और यूरोपीय विद्वान संस्कृत की खोज को कोलम्बस द्वारा की गई नई दुनिया की खोज के समान ही महत्वपूर्ण मानने लगे थे। भारत विदेशी विद्वानों का तीर्थस्थान बन गया था। इसी तरह आजकल भी रूस, अमेरिका, इण्डोनेशिया, जर्मनी आदि देशों में संस्कृत साहित्य का पठन-पाठन रुचिपूर्वक किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में 'अध्ययन अनुसंधान' शोध पत्रिका में प्रकाशित विवरण ध्यान देने योग्य है। जबकि आज अपने देश में संस्कृत साहित्य के गहन अध्ययन की अत्यन्त आवश्यकता महसूस की जाती हुई भी इसकी घोर उपेक्षा की जा रही है। जो बड़ी ही दुर्भाग्यपूर्ण, शर्मनाक एवं नैतिक पतन की घातक स्थिति बन गयी है। आज भी हमें उस संस्कृत प्रेमी और भारत भूमि के प्रति अपार स्नेह रखने वाले जर्मनी विद्वान मैक्स मूलर पर गर्व करना चाहिए, जिसके उद्गार कितने गरिमामय और भारतीयों के लिए स्मरणीय हैं-

* विभागाध्यक्ष (संस्कृत) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

Sanskrit is the greatest language in the world, the most wonderful and the most perfect.

संस्कृत मनीषी मैक्समूलर की ज्ञान गरिमा, भारतीय संस्कृति और संस्कृत साहित्य के प्रति असीम, उन्कट, अगाध, अपार प्रेम के स्वरूप एवं सौहार्द को देखकर स्वामी विवेकानन्द अपनी विदेश-यात्रा के मध्य मैक्स मूलर के घर गए थे, और अपनी इस यात्रा को उन्होंने तीर्थ यात्रा कहा था। और आगे यह भी कहा था- 'कि धन्य हैं वे! उनके मन में भारत के लिए कितना अगाध प्रेम है।'

उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य के सन्दर्भ में प्रस्तुत उद्धरण हमारी स्थिति की सही जानकारी दे रहे हैं, कि विदेशियों में आज भी देववाणी संस्कृत पढ़ने की असीम उत्कण्ठा जाग्रत दिखायी पड़ती है। अनेक विदेशी छात्र आज भारतीय विश्वविद्यालयों में संस्कृत का अध्ययन रूचिपूर्वक कर रहे हैं। किन्तु भारतीय छात्रों में संस्कृत के अध्ययन के प्रति उत्साह एवं जिज्ञासा में कमी आती जा रही है। इस विषय के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए 30 अगस्त, 1980 के (दैनिक) 'सांध्य समाचार' के विचार दृष्टव्य हैं -

'विभिन्न रायों से संस्कृत का सफाया हो रहा है। महाराष्ट्र में भी यही स्थिति है, कि संस्कृत के शिक्षकों के समक्ष दो ही विकल्प रह गये हैं- पुरोहित बन जाए या भीख माँगे।'

वस्तुत: आज हाईस्कूलों में संस्कृत वैकल्पिक विषय है, बहुत कम छात्र संस्कृत ले रहे हैं। परिणामस्वरूप विश्वविद्यालयों में संस्कृत विभाग बन्द होने की नौबत आ रही है। संस्कृत के कुछ प्रोफेसर भी अपना भविष्य बचाने के लिए अन्य विषयों का अध्ययन कर रहे हैं। अत: आज कितनी विचित्र स्थिति आ गई है, कि जिस जीवनदायिनी सृष्टि:पोषिणी, समाजोत्कर्षिणी देवभाषा की वृहत् आवश्यकता है। जिसके सम्बल पर राष्ट्र का गौरव, ज्ञान गरिमा तथा नैतिकोत्थान का अस्तित्व टिका है। उस संस्कृत साहित्य की आज देश में उपेक्षा होना, देश का हनन होना सम्भव है। क्योंकि आज विदेशों के अनेक शोधकर्ता छात्र संस्कृताध्ययन के लिए भारत आ रहे है। वे देवताओं की इस भाषा का अध्ययन करने में अपने को धन्य, महान, गौरवशाली एवं बड़े निष्ठावान समझ रहे हैं। उनकी संस्कृत निष्ठा की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ रही है। इस विषम परिस्थिति में ऐसा प्रतीत होता है, कि शायद उन्हीं के सहारे विश्वविद्यालयों के संस्कृत-विभाग बचे रहे जायें।

आज भारतीय संस्कृत विद्धान तो अब यह महसूस करने लगे हैं, कि अगर देश में संस्कृत की उपेक्षा इसी तरह जारी रही, तो वह समय दूर नहीं जब संस्कृत अध्ययन के लिए भारतीयों को जर्मनी जाना पड़ेगा। जर्मनी एक ऐसा देश है, जहाँ सभी विश्वविद्यालयों में संस्कृत तथा प्राच्य विद्या की नियमित शिक्षा की व्यवस्था है। इसके साथ ही भारत में आज विदेशियों द्धारा संस्कृत का अध्ययन बड़ी निष्ठा एवं श्रद्धा से किया जा रहा है। जबकि भारतीयों में संस्कृत की ओर उदासीनता के लक्षण प्रकट होने लगे हैं। किन्तु हम संस्कृत से बच नहीं सकते। संस्कृत हमारे जीवन में व्याप्त है। हम चाहें या न चाहें, संस्कृत हमारे जीवन में घर कर गयी है। जब यह वस्तुस्थिति है, तो संस्कृत के प्रति उदासीनता, जीवन के प्रति उदासीनता की द्योतक ही कही जायेगी।

राजनीतिक दृष्टि से भी संस्कृत भाषा की अवहेलना नहीं की जा सकती है। आज राष्ट्र के सामने राष्ट्रीय एकता के लिए ही खतरा पैदा हो गया है। देश में विघटनकारी तत्वों की वृद्धि हो रही है। कुछ विद्धान यह कहते हुए सुने जाते हैं कि भारत को एक राष्ट्र में आबद्ध करने का श्रेय अंग्रेजों को है। वास्तव में यह विद्धानों की अपनी कोरी कल्पना है, यथार्थ तो यह है, कि अंग्रेजी राष्ट्र को टुकड़े-टुकड़े करने में लगी हुई है। आज भी अंग्रेजी की मोहिनी माया में फँसे हुए हमारे कुछ बन्ध राष्ट्रीय सम्मान के मूल्य पर भी अंग्रेजी को भारत की राजभाषा बनाए रखने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे संविधान को समुद्र तक में फेंक देने की बात करते हैं। और राष्ट्र भाषा-भाषी प्रदेशों से अपने का पृथक समझते हैं। यदि वे व्यक्ति अपनी मातृभाषा के लिए कुछ प्रयत्न करते हैं। तब तो श्रेयस्कर ही होता, किन्तु आश्चर्य की बात है, कि ये लोग अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा को ही राजभाषा बनाए रखने की वकालत करने में लॉ का अनुभव नहीं करते। इससे यह प्रकट होता है, कि उन्होंने भारतीय जन वर्ग से अपने को पृथक कर लिया है। ध्यान से देखने पर पता चलता है, कि इन व्यक्तियों ने अपनी एक जाति बना ली है। और शरीर तथा रंग से भारतीय होते हुए भी ये मन तथा विचारों से विदेशी हैं। इस स्थल पर मैकाले के उस प्रसिद्ध कथन को उद्धृत करना उपयुक्त समझ पड़ता है, अंग्रेजी शिक्षा को भारत पर थोपने की वकालत करते हुए उसने कहा था-

'हम लोगों को इस समय एक ऐसे वर्ग के निर्माण का भरसक प्रयत्न करना चाहिए, जो हमारे और हमारे लाखों शासित जनों के बीच में दुभाषिए का काम करे, और जो वर्ण रक्त और रंग में तो भारतीय हो, किन्तु रुचि, सम्मति, नैतिकता और ज्ञान में अंग्रेज हो।'

आधुनिक समय में जब हम राष्ट्र की ओर दृष्टिपात करते हैं तो देखते हैं कि भारतवर्ष में बाह्य भेदों के होते हुए भी संस्कृत के कारण राष्ट्रीय एकता व संस्कृति एक है। सस्कृति की यह एकता संस्कृत भाषा के द्धारा विदित होती है। भारतवर्ष का जो भौगोलिक चित्र संस्कृत में वर्णित है, वह राष्ट्रीय एकता का द्योतक है। प्राय: आजकल अधिकांश जन राष्ट्रीय एकता की बहुधा चर्चा किया करते हैं। क्योंकि देश को विघटनकारी तत्वों से बचाने के लिए राष्ट्रीय एकता अत्यावश्यक है, और राष्ट्रीय एकता को बनाये रखने, तथा संस्कृति को बचाने रखने के लिए संस्कृत भाषा को बचाये रखना सर्वोपरि, सर्वप्रथम, अत्यावश्यक उपाय है। इसीलिए भारत सरकार ने डॉ. सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया था। जिसने इस सम्बन्ध में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, 'कि यदि हमें राष्ट्र को बचाना है, तो संस्कृत भाषा के पठन-पान के प्रति लोगों में रूचि जाग्रत करनी ही होगी। भाषाओं की दृष्टि से भारत में अकेला है। किन्तु संस्कृत का आदर भारत के प्रत्येक कोने में दृष्टिगोचर होता है। संस्कृत तो सभी की सम्मानीय भाषा है। सम्पूर्ण भारत में इसके प्रति आदर का भाव है। हिन्दुओं के सभी कार्य संस्कृत भाषा द्धारा ही सम्पन्न होते हैं। भारत का मामूली पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी भारत के सभी धार्मिक नगरों का प्रतिदिन स्नान के समय नाम लेता है, और सभी पवित्र नदियों का स्मरण करता है। निम्नलिखित श्लोकों का उच्चारण करना भारतीयों की धार्मिकता का स्थायित्व है -

'अयोध्या-मथुरा-माया-काशी-कांची-अवन्तिका।
पुरी द्धारावती चैव सप्तैता मोक्ष दायिका:।।
गंगे! च यमुने ! चैव गोदावरी! सरस्वति:।
नर्मदे! सिन्धु! कावेरि! जलऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।'

आज भी हम विचार कर सकते हैं, कि संस्कृत साहित्य के सम्पर्क में रहकर भारतीय जन-राष्ट्रीय एकता के सूत्र में स्वत: सम्बद्ध रहते हैं। और रह सकते हैं। इसी भाषा और साहित्य के अनादर से आज हमारी राष्ट्रीय-एकता और मूल संस्कृति की विभीषिका खंडित हुई है। जिसकी आज बड़े विशद एवं वृहद् रूप में आवश्यकता है। वस्तुत: संस्कृत सभी के लिए प्रेरणा का अक्षय स्त्रोत है। संस्कृत भारत भूमि की वह अजस्त्र ज्ञान-धर्म है, जो क्षीण भले ही हो पर अभी निश्चल और निष्प्राण नहीं। एक ओर यदि इसके कण-कण में भारतीय संस्कृत भरी है, तो दूसरी ओर इसकी समृद्धि को विश्व की कोई भी

नवीनतम भाषा नहीं पा सकती। कतिपय विगत दशकों में राजनीतिक उलटफेरों और झंझावतों ने बरबस इसकी प्रमुखता अपहरण कर ली। किन्तु आज पुन: जनमानस के सतत् संगठित प्रयासों की, प्रेरणाओं, मनोभावों एवं अभिवृत्तियों की ज्वालज्यमान महती आवश्यकता है, जिससे हमारी पवित्र धरोहर संस्कृत की अक्षुण्ण, अपार, अनुपम, निखिल सौन्दर्य प्रस्विनी, गौरवगरिमा पुन: प्रतिष्ठित की जा सके।

तदुपरान्त् आज यह कह देना भलीभाँति अनुपयुक्त न होगा कि संस्कृत भाषा के महत्व की रक्षा केवल यह कह देने से नहीं होगी कि हम अतीत काल में बड़े वैभवशाली थी। अतीत को समझकर हमें वर्तमान की ओर ध्यान देना है, अतीत में जहाँ हम संसार के अन्य प्रगतिशील राष्ट्रों से किसी भी अर्थ में पीछे नहीं थे, वहाँ आज हम जीवन के सभी क्षेत्रों में अन्य राष्ट्रों से पीछे रह गये हैं। जिस तरह हम अपनी भोजन–सामग्री के लिए विदेशों पर निर्भर रहते आये हैं। उसी तरह आज विचारों के लिए भी अमरीका, इंग्लैण्ड, और रूस का मुँह हमें ताकना पड़ता है। कितनी दयनीय एवं सोचनीय गम्भीर स्थिति हो गयी है हमारी। आज आवश्यकता इस बात की है, कि हम पुरातन और नवीन में समन्वय स्थापित करें। नवीन का हमें पूर्ण रूपेण नशा नहीं होना चाहिए और नही, हम केवल पुरातन के चक्रव्यूह में घूमते रहे। भारत को आज प्रत्येक क्षेत्र में ऐसे ही कर्मठ, कर्तव्यनिष्ठ, परायण एवं राष्ट्रानुरागी, साहित्यानुरागी, विद्वानों, शिक्षाविदों, एवं नेताओं की महती आवश्यकता है। जो इस समन्वय के महत्व को पहचान कर जनता का तदनुरुप मार्गदर्शन, पथ प्रदर्शन एवं सही निर्देशन कर सकें।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है, कि भारतीय संस्कृति वस्तुत: संस्कृत साहित्य में सुरक्षित है। संस्कृत भाषा द्वारा हम अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

अष्टावक्रगीता का उपमा-लावण्य

डॉ. विनोद कुमार शर्मा *

शोध सारांश – विज्ञशिरोमणि अष्टावक्र के द्धारा प्रणीत अष्टावक्रगीता विश्व का ऐसा अनुपम ग्रन्थ है जिसमें आत्मज्ञानप्राप्ति का आनन्दप्रद, शान्तिमय तथा अद्भुत पथ प्रदर्शित किया गया है। काव्यसौन्दर्य की दृष्टि से भी यह महत्त्वपूर्ण कृति है। अष्टावक्रगीता में शब्दालंकारों तथा अर्थालंकारों का सौन्दर्य सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। इस कृति में लगभग सोलह प्रकार के अर्थालंकारों का प्रयोग हुआ है। इनमें से उपमा ग्रन्थकर्ता का प्रिय अलंकार है। उपमा के सुरम्य प्रयोग सहृदय के चित्ता को बरबस आकृष्ट करने में सर्वथा सफल रहे हैं। अद्वैत वेदान्त के गूढातिगूढ विषयों को करामलकवत् स्पष्ट करने में इन उपमाओं की महती भूमिका है।

शब्द कुंजी – अष्टा - अष्टावक्रगीता ।

प्रस्तावना – गीताएँ संस्कृतवाङ्मयपुरुष का हृदय हैं तथा वेदान्तशास्त्र की अक्षय निधि हैं इनमें उपनिषदों की रहस्यभूत ब्रह्मविद्या का परिचय सरल भाषा तथा सुगम शैली में संवाद रूप में दिया गया है।

परमतत्तव का ज्ञान शास्त्र और ब्रह्म के ज्ञाता सद्गुरु के उपदेश के बिना सम्भव नहीं है। इसीलिए परमोपकारक महर्षियों ने विविध वेदान्तग्रन्थों का प्रणयन् करके परम तत्त्व को प्रकट किया है। उन महर्षियों में अग्रगण्य अष्टावक्र ने राजा जनक को ब्रह्मविद्या का जो उपदेश दिया था वह 'अष्टावक्रगीता' के नाम से प्रसिद्ध है।

अष्टावक्रगीता काव्यलावण्य की दृष्टि से भी महनीय कृति है। इस कृति में शब्दालंकारों और अर्थालङ्कारों की छटा देखते ही बनती है। उपमा तो ग्रन्थकार का प्रिय अलंकार है। यद्यपि आदिकवि वाल्मीकि, महर्षि वेदव्यास, कविकुलगुरु कालिदास और महाकवि माघ की उपमाएँ सुप्रसिद्ध हैं, तथापि सुरम्य उपमाओं के सज्जाकारों में एक और नाम जोड़ा जाय तो वह है विप्रशिरोमणि अष्टावक्र का। अष्टावक्रगीता में आत्मा, परमात्मा,जगत्, अविद्या प्रभृति तत्त्वों की वेदान्तशास्त्रसम्मत सुगम व्याख्या करने तथा गूढातिगूढ विषय को भी सुस्पष्ट करने में उपमाओं की महती भूमिका है।

शोध का उद्देश्य – अष्टवक्रगीता में सुप्रयुक्त अलंकारों का समीक्षात्मक अध्ययन कर उपमा अलंकार के चमत्कार अर्थात् लावण्य को उद्धाटित एवं प्रकाशित करना ही प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है। इस अध्ययन के अन्तर्गत अष्टावक्रगीता में प्रयुक्त विविध उपमाओं की सोदाहरण विवेचना की गयी है। अथ च समीक्ष्य कृति में उपमा-लावण्य को उद्धाटित करते हुए अष्टावक्रगीता के अलंकारशास्त्रीय वैशिष्ट्य को रेखांकित किया गया है।

शोधपरिकल्पना – उपमा महर्षि अष्टावक्र का प्रिय अलंकार है। वेदान्तशास्त्र के गूढातिगूढ तथ्यों को स्पष्ट करने में उपमा अलंकार की विशेष भूमिका है। अष्टावक्रगीता में अन्य अलंकारों की अपेक्षा उपमा अलंकार का चमत्कार अधिक परिलक्षित होता है।

शोधप्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोधालेख में, उपमा अलंकार की परिभाषा एवं महत्ता को स्पष्ट करने हेतु विविध साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थों का अनुशीलन किया गया है। समीक्ष्य कृति 'अष्टावक्रगीता' का समग्र अध्ययन किया गया है। तदनन्तर इस कृति में प्रयुक्त विविध उपमाओं का समीक्षण, समालोचन तथा वर्गीकरण किया गया है। शोध का क्षेत्र संस्कृत के विविध अलंकारशास्त्रीय ग्रन्थ तथा महर्षि अष्टावक्र के द्धारा प्रणीत अष्टावक्रगीता है।

शोधव्याख्या – अष्टावक्रगीता में महात्मा अष्टावक्र के उपमाप्रयोग पर विचार करने से पूर्व उपमा अलंकार की महत्ता और परिभाषा की मीमांसा करना उचित होगा।

उपमा अलंकार की महत्ता – अलंकारों में मूर्धन्य तथा काव्यसौन्दर्य के लिए सारभूत उपमा को समालोचकों ने अलंकारों की जननी तथा कविकुल की माता माना है[1]। कवि अपने गूढातिगूढ मनोभावों को उपमा के द्धारा सरलता से अभिव्यक्त कर देता है। उपमा एक ओर काव्यश्री की वृद्धि करती है तो दूसरी ओर सुगमता से अर्थावबोध कराने में सहायक होती है। यही कारण है कि आलंकारिकों ने उपमा को अलंकार साम्राज्य के सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया है।

उपमा न केवल अपूर्व काव्यसौन्दर्य की वृद्धि करने में सहायक होती है वरन् विविध अलंकारों की सृष्टि करने का भी हेतु है। जिस प्रकार नटी विभिन्न भूमिकाओं में रंगमंच पर आकर विविध अभिनयों से सहृदयों को आनन्दित करती है उसी प्रकार उपमा काव्य के रंगमंच पर रूपकादि अलंकारों का रूप धारण कर काव्यकोविदों का मनोरञ्जन करती है-

उपमैका शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिकाभेदान्।
रञ्जयति काव्यरङ्गे नृत्यन्ती तद्विदां चेत:[2]।।

आचार्य रुय्यक के अनुसार उपमा अलंकारतरु का बीज है। इसमें वह शक्ति है, जो विभिन्न अलंकारों को जन्म दे सकती है। वस्तुत: अलंकार का तात्पर्य है वैचित्र्य और उपमा समस्त वैचित्र्य की मातृभूमि है- **उपमैवानेकप्रकार - वैचित्र्येणानेकालङ्कारबीजभूतेति प्रथमं निर्दिष्टा[3]** अप्पयदीक्षित ने उपमा की तुलना ब्रह्म से की है। जिस प्रकार ब्रह्म के ज्ञान से यह चित्र-विचित्र संसार ज्ञात हो जाता है उसी प्रकार उपमा के ज्ञान से समस्त अलंकार ज्ञात हो जाते हैं।

उपमा अलंकार की परिभाषा – आचार्य भामह के अनुसार देश, काल,

* प्राध्यापक एवम् अध्यक्ष (संस्कृत) पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

क्रिया आदि के द्वारा उपमेय से नितान्त भिन्न उपमान के साथ उपमेय का गुणलेश से जो साम्य है वह उपमा अलंकार कहलाता है–

विरुद्धेनोपमानेन देशकालक्रियादिभि:।
उपमेयस्य यत्साम्यं गुणलेशेन सोपमा[4]।।

वस्तुत: दो वस्तुओं के साम्य को उपमा कहते हैं। किन्तु दो वस्तुओं में सर्वात्मना साम्य सम्भव ही नहीं है। इसीलिए कहा गया है कि इन दोनों वस्तुओं में देश, काल, क्रिया आदि की भिन्नता रहती है और साम्य गुणलेश का ही होता है। उपमा एकांश में होती है, सर्वांश में नहीं।

रीतिवादी आचार्य दण्डी के अनुसार स्पष्ट रूप से कथित सुन्दर साम्य उपमा कहलाता है– **प्रस्फुटं सुन्दरं साम्यमुपमेत्यभिधीयते[5]।** आचार्य मम्मट का मत है कि उपमान तथा उपमेय का भेद होने पर उनके साधर्म्य का वर्णन उपमा अलंकार है– **साधर्म्यमुपमा भेदे[6]।** कविराज विश्वनाथ के अनुसार एक वाक्य में दो पदार्थों के वैधर्म्यरहित वाच्य सादृश्य को उपमा कहते हैं– **साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयो:[7]** – उपमा के चार अंग होते हैं– उपमेय, उपमान, साधारण धर्म तथा उपमावाचक शब्द। दो सदृश पदार्थों में अधिक गुण वाला पदार्थ उपमान और न्यून गुण वाला पदार्थ उपमेय कहलाता है। उपमान तथा उपमेय के समान धर्म का वर्णन ही उपमा अलंकार कहलाता है। उपमा में साम्य सुन्दर होना चाहिए। सुन्दर का अभिप्राय है– वैचित्र्यजनक होना। साथ ही यह साम्य स्पष्ट रूप से कथित होना चाहिए।

उपमा के भेद – उपमा अलंकार के मुख्यत: दो भेद होते हैं– 1. पूर्णोपमा तथा 2. लुप्तोपमा। उपमा के चारों अंगों के विद्यमान होने पर पूर्णोपमा होती है। चारों अंगों में से एक या दो या तीन का लोप होने पर लुप्तोपमा होती है[8]। पूर्णोपमा श्रौती और आर्थी दो प्रकार की होती है, फिर उन दोनों में से प्रत्येक वाक्यगत, समासगत एवं तद्धितगत (कुल छ: प्रकार की) होती है[9]। लुप्तोपमा इक्कीस प्रकार की होती है। रुद्रट ने काव्यालंकार में उपमा के इन भेदों के अतिरिक्त मालोपमा एवं रशनोपमा नामक भेद भी प्रतिपादित किये हैं।

अष्टावक्रगीता में उपमा अलंकार – उपमा विप्रशिरोमणि अष्टावक्र का प्रिय अलंकार है। अष्टावक्रगीता में विविध उपमाओं का चमत्कारी लावण्य सर्वत्र परिलक्षित होता है। निदर्शनार्थ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं।

पूर्णोपमा – **मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यज।**
क्षमार्जवदयातोषं सत्यं पीयूषवद् भज[10]।।

अर्थात् हे तात। यदि तुम मुक्ति चाहते हो तो विषयों को विष की भाँति त्याग दो और क्षमा, सरलता, दया, सन्तोष तथा सत्य का अमृत के समान सेवन करो। इस पद्य में महर्षि अष्टावक्र ने सांसारिक विषयों को विष के समान छोड़ने तथा क्षमादि गुणों का अमृत की भाँति सेवन करने का उपदेश दिया है। अत: यहाँ उपमेय, उपमान, वाचक शब्द एवं साधारण धर्म सभी अंगों के विद्यमान होने से पूर्णोपमा अलंकार की छटा है।

महर्षि अष्टावक्र ने जनक को उपदेश देते हुए कहा है कि जैसे तरंग, फेन और बुलबुले जल से भिन्न नहीं हैं वैसे ही विश्व आत्मा से भिन्न नहीं है–

यथा न तोयतो भिन्नास्तरङ्गा: फेनबुद्बुदा:।
आत्मनो न तथा भिन्नं विश्वमात्मविनिर्गतम्[11]।।

यहाँ आत्मा की उपमा जल से तथा विविध रूपों में प्रत्यक्ष विश्व की उपमा तरंग, फेन और बुलबुलों से दी गयी है। उपमा के सभी अंगों के विद्यमान होने से यहाँ भी पूर्णोपमा अलंकार है।

एक स्थान पर महर्षि ने कहा है कि जिस प्रकार दर्पण अपने में प्रतिबिम्बित रूप के भीतर और बाहर स्थित है, उसी प्रकार परमात्मा इस शरीर के भीतर और बाहर स्थित है–

यथैवादर्शमध्यस्थे रूपेऽन्त: परितस्तु स:।
तथैवास्मिन्छरीरेऽन्त: परित: परमेश्वर:[12]।

यहाँ भी पूर्ववत् पूर्णोपमा अलंकार का चमत्कार विद्यमान है।

जनक को आत्मज्ञान प्रदान करते हुए विप्रशिरोमणि अष्टावक्र ने कहा है– मैं आकाश की भाँति अनन्त हूँ। यह संसार घट की भाँति प्रकृतिजन्य है'– **आकाशवदनन्तोऽहं घटवत्प्राकृतं जगत्[13]।** यहाँ उपमेय (आत्मा), उपमान (आकाश), साधारण धर्म (अनन्त) तथा वाचकशब्द (वत्) चारों उपमावयवों का ग्रहण होने से पूर्णोपमा अलंकार का लावण्य वर्तमान है।

अष्टावक्रगीता के कतिपय अन्य काव्यांश निदर्शनार्थ प्रस्तुत हैं जिनमें पूर्णोपमा अलंकार का चमत्कार दृष्टिगत होता है–

एकं सर्वगतं व्योम बहिरन्तर्यथा घटे।
नित्यं निरन्तरं ब्रह्म सर्वभूतगणे तथा[14]।।
तन्तुमात्रो भवेदेव पटो यद्वद्विचारत:।
आत्म तन्मात्रमेवेदं तद्वद्विश्वं विचारितम्[15]।।
यथैवेक्षुरसे क्लृप्ता तेन व्याप्तैव शर्करा।
तथा विश्वं मयि क्लृप्तं मया व्याप्तं निरन्तरम्[16]।।
विश्वं स्फुरति यत्रेदं तरङ्गा इव सागरे[17]।।
स्वप्नेन्द्रजालवत्पश्य दिनानि त्रीणि पञ्च वा।
मित्रक्षेत्रधनागारदारदायादिसम्पद:[18]।।
न जातु विषय: केऽपि स्वारामं हर्षयन्त्यमी।
सल्लकीपल्लवप्रीतमिवेभं निम्बपल्लवा:[19]।।

लुप्तोपमा – अष्टावक्रगीता में पूर्णोपमा की अपेक्षा लुप्तोप्मा अलंकार का कम प्रयोग हुआ है। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं। एक स्थान पर जनक कहते हैं कि जो स्वभाव से ही शून्यचित्त है किन्तु प्रमाद से विषयों की भावना करता है और सोता हुआ भी जागते हुए के समान है वह संसार से मुक्त है–

प्रकृत्या शून्यचित्तो य: प्रमादाद्भावभावन:।
निद्रितो बोधित इव क्षीणसंसरणो हि स:[20]।।

यहाँ निद्रित का साधर्म्य जाग्रत व्यक्ति से स्थापित किया गया है। साधारण धर्म का ग्रहण न होने से यह पद्य लुप्तोपमा अलंकार का उदाहरण है।

महोदधिरिवाहं स प्रपञ्चो वीचिसन्निभ:।
इति ज्ञानं तथैतस्य न त्यागो न ग्रहो लय:[21]।।

अर्थात् 'मैं समुद्र के समान हूँ, यह संसार तरंगों के समान है'। यहाँ आत्मा का साधर्म्य समुद्र से तथा संसार का साधर्म्य तरंगों से स्थापित किया गया है। साधारण धर्म का कथन न होने से यहाँ भी लुप्तोपमा अलंकार का चमत्कार सन्निहित है।

अष्टावक्रगीता के षष्ठ प्रकरण में जनक का कथन है– **अहं स शुक्तिसंकाशो रूप्यवद्विश्वकल्पना[22]।** अर्थात् मैं सीपी के समान हूँ और विश्वकल्पना चाँदी के समान है'। यहाँ भी साधारण धर्म का लोप होने से लुप्तोपमा अलंकार की छटा निर्मित हुई है। इसी प्रकार अन्यत्र कहा गया है कि संसार इन्द्रजाल की भाँति है– **अहो चिन्मात्रमेवाहमिन्द्रजालोपमं जगत्[23]।** यहाँ जगत् का साधर्म्य इन्द्रजाल से स्थापित किया गया है। साधारण धर्म का ग्रहण न होने से यह काव्यांश भी लुप्तोपमा अलंकार का मनोरम निदर्शन है।

मालोपमा – जहाँ एक ही उपमेय का अनेक उपमानों से साधर्म्य स्थापित किया जाता है। वहाँ मालोपमा अलंकार होता है। अष्टावक्रगीता के अनेक पद्यों में मालोपमा अलंकार की सज्जा दृष्टिगोचर होती है, यथा –

अहो विकल्पितं विश्वमज्ञानान्मयि भासते।
रूप्यं शुक्तौ फणी रज्जौ वारि सूर्यकरे यथा[24]।।

आत्मज्ञान हो जाने पर जनक कहते हैं आश्चर्य है कि कल्पित संसार अज्ञानवश मुझमें ऐसा भासता है जैसे सीपी में चाँदी, रस्सी में साँप और सूर्य की किरणों में जल। यहाँ 'भासते' ही अनेक उपमानों का साधारण धर्म है तथा आत्मा में जगत् की प्रतीतिरूप उपमेय का सीपी में चाँदी आदि अनेक उपमानों से संबंध है। अत: यह पद्य मालोपमा अलंकार का सुन्दर उदाहरण है।

मत्तो विनिर्गतं विश्वं मय्येव लयमेष्यति।
मृदि कुम्भे जले वीचि: कनके कटकं यथा[25]।।

अर्थात् 'मुझसे उत्पन्न हुआ यह संसार मुझमें ही लय को प्राप्त होगा, जैसे मिट्टी में घड़ा, जल में लहर और सोने में आभूषण लीन होते हैं'। इस पद्य में भी पूर्व पद्य की भाँति मालोपमा अलंकार का लावण्य विद्यमान है।

अष्टावक्रगीता में अधिसंख्यक उपमान प्रकृति से चुने गये हैं। महर्षि अष्टावक्र ने प्रकृति के अवयव जल, तरंग, फेन, बुलबुले, सूर्य, आकाश, सागर, वृक्ष-लता, सीपी, रजत, सर्प आदि को उपमान बनाया है। कहीं-कहीं विष, अमृत, दर्पण, रूप, घट, पट-तन्तु, शर्करा, इन्द्रजाल, स्वप्न, कंगन आदि पदार्थों का उपमान के रूप में विधान किया गया है।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि महर्षि अष्टावक्र ने अष्टावक्रगीता में यमक, अनुप्रास आदि शब्दालकारों के साथ ही लगभग सोलह प्रकार के अर्थालंकारों का प्रयोग किया है, वे हैं- उपमा, रूपक, उत्पेक्षा, दीपक, दृष्टान्त, व्यतिरेक, अर्थान्तरन्यास, परिकर, विरोध, विभावना, विशेषोक्ति, विषम, काव्यलिङ्ग, अर्थापत्ति एवं यथासंख्य। इनमें से उपमा ग्रन्थकर्त्ता का अतिप्रिय अलंकार है। अष्टावक्रगीता में उपमा के सुरम्य प्रयोग पाठक के चित्त को बरबस आकृष्ट करने में सफल रहे हैं। अद्वैत वेदान्त दर्शन के गूढ से गूढ विषयों को स्पष्ट कर सम्प्रेषणीय बनाने में इन उपमाओं की महती भूमिका है।

सुझाव – उपमा अलंकार के साथ-साथ अष्टावक्रगीता में अन्य विविध अर्थालंकारों तथा शब्दालंकारों के प्रयोग पर भी शोधकार्य होना चाहिए। अथ च, यह पता लगाया जाना चाहिए कि अष्टावक्रगीता के प्रतिपाद्य को सम्प्रेषणीय बनाने तथा काव्य-लावण्य की वृद्धि में उन अलंकारों की क्या भूमिका है।

संदर्भ –

1. अलंकारशिरोरत्नं सर्वस्वं काव्यसम्पदाम्।
   उपमा कविवंशस्य मातैवेति मतिर्मम।।
   अलंकारशेखर, केशवमिश्र, एकादश मरीचि में उद्धृत
2. चित्रमीमांसा (अप्पयदीक्षित), पृ.5
3. अलंकारसर्वस्व, (रुय्यक)
4. काव्यालंकार, (भामह), 2/30
5. काव्यदीपिका, अष्टमशिखा, पृ.7
6. काव्यप्रकाश (मम्मट), 10/87
7. साहित्यदर्पण (विश्वनाथ), 10/14
8. पूर्णा लुप्ता च। उपमानोपमेयसाधारणधर्मोपमाप्रतिपादकानामुपादाने पूर्णा।
   एकस्य द्वयास्त्रयाणां वा लोपे लुप्ता। काव्यप्रकाश (मम्मट), 10/87 पर वृत्ति
9. साऽग्रिमा श्रौत्यार्थी च भवेद्धाक्ये समासे तद्धिते तथा। तदेव
10. अष्टा, 1/2
11. तदेव, 2/4
12 तदेव, 1/19
13. तदेव, 6/1
14. तदेव, 1/20
15. तदेव, 2/5
16. तदेव, 2/6
17. तदेव, 3/3
18. तदेव, 10/2
19. तदेव, 17/3
20. तदेव, 14/4
21. तदेव, 6/2
22. तदेव, 6/3
23 तदेव, 7/5
24. तदेव, 2/9
25. तदेव, 2/10

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अलंकारशेखर (केशव मिश्र), सम्पादक-अनन्तराम शास्त्री चौखम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस, 1927
2. अलंकारसर्वस्व (रुय्यक), चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1971
3. अष्टावक्रगीता (अष्टावक्र), खेमराज श्रीकृष्णदास, बम्बई, जुलाई, 2010
4. Ashtavakragita (Ashtavakra), Radhakamal Mukerjee, Motilal Banarasidass Delhi 2009
5. काव्यदीपिका (अष्टमशिखा), व्याख्याकार-पण्डित राम गोविन्द शुक्ल, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, सम्वत् 2014
6. काव्यप्रकाश (मम्मट), व्याख्याकार-आचार्य विश्वेश्वर, ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी, पञ्चम संस्करण, संवत् 2031
7. काव्यादर्श (दण्डी), व्याख्याकार-डॉ. जमुना पाठक, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2004
8. काव्यालंकार (भामह), भाष्यकार-रामानन्द शर्मा, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, आफिस, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2002
9. चन्द्रालोक (जयदेव), व्याख्याकार-श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2003
10. चित्रमीमांसा (अप्पय दीक्षित), व्याख्याकार-जगदीशचन्द्र मिश्र, चौखम्बा सीरीज साहित्य, वाराणसी
11. साहित्यदर्पण (विश्वनाथ), व्याख्याकार-शालग्राम शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, नवम संस्करण, 1986

****

जैन एवं वैदिक पुराणों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सावित्री मिश्रा *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से जैन एवं वैदिक पुराणों की महत्ता का परिचय कराया गया है। पुराणों की विषयवस्तु के अंतर्गत इनका उद्देशय महत्ता आदि का वर्णन किया गया है जैन एवं सनातन धर्म अनुयागियों के लिये यह शोध पत्र अत्यंत सार्थक होगा तथा उक्त समाज के व्यवहारिक जीवन के लिए उपयोगी होगा ऐसी में कामना करता हूं।

भारतीय संस्कृति के स्वरूप की जानकारी के लिए पुराण के अध्यन की महत्ती आवश्यकता है। पुराण भारतीय संस्कृति का मेरू दण्ड है। वह आधार पीठ है जिसपर आधुनिक भारतीय समाज अपने नियमन को प्रतिष्ठित करता है।

जैन पुराण साहित्य जैन संस्कृति का दर्पण है, आचार्य जिनसेन ने **पुरातनं पुराणं स्यात्** कहकर प्राचीन आख्यानो को पुराण माना है।[1]

इति इह आसीत् यहाँ ऐसा हुआ पुराण में ऐसी कथाओं का निरूपण होने से उसे इतिहास **इतिवृत** और **ऐतिहा** भी कहा है।[2]

महापुराण में क्षेत्र, काल, तीर्थ, सत्पुरूष और उनकी चेष्टाऐं ऐसे पंचलक्षण–युक्त साहित्य को पुराण बताया गया है। इस परिभाषा में उर्ध्व, मध्य, और पाताल–रूप तीन लोकों का क्षेत्र, भूत, भविष्यत् तीनों समस्याओं को काल, मोक्ष प्राप्ति के उपायभूत सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, और सम्यक् चरित्र को तीर्थ तथा तीर्थ सेवियों को सत्पुरूष और उनका न्यायोपेत आचरण उनकी चेष्टाऐं मानी गई है।[3]

पुराणों को सत्कथा की संज्ञा भी दी गई है तथा ऐसी कथा के साथ अंग बताए गए हैं। वे है द्रव्य, क्षेत्र, तीर्थ, काल, भाव, महाफल, और प्राकृत। इनमें द्रव्य छः है – जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। त्रिलोक क्षेत्र है। तीर्थकर का चरित तीर्थ, भूत–भविष्यत् और वर्तमान के तीन काल, क्षायोपशमिक और क्षायिक ये दो भाव, तत्वज्ञान का होना फल और कथावस्तु प्राकृत अंग कहा है।[4]

प्रस्तावना – जेन पुराणो का मुख्य विषय उनके 24 तीर्थकरों के जीवन के चरित्र को चित्रत करना रहा है। उन तीर्थंकर के नाम से ही जैन पुराणों के नाम है कुछ अपभ्रंश भाषा में भी लिये गये है। उनका भी मुख्यत: विषय तीर्थकरों के चरित्र बताना रहा है।

जैन पुराणों के नाम इस प्रकार है।

1. आदिपुराण	2. अजीतनाथ पुराण
3. संभवनाथ पुराण	4. अभिनंदन नाथ पुराण
5. सुमतिनाथ पुराण	6. पद्मप्रभु पुराण
7. पुष्पदन्त पुराण	8. चन्द्रप्रभ पुराण
9. सुपाश्वर्वनाथ पुराण	10. शीतलनाथ पुराण
11. श्रेयांसनाथ पुराण	12. वासूपूज्य पुराण
13. विमलनाथ पुराण	14. अनन्तनाथ पुराण
15. धर्मनाथ पुराण	16. शांतीनाथ पुराण
17. कुन्थुनाथ पुराण	18. अरहनाथ पुराण
19. मल्लिनाथ पुराण	20. मुनिसुव्रतनाथ पुराण
21. नमिनाथ पुराण	22. नोमिनाथ पुराण
23. पाश्वर्नाथ पुराण	24. महावीर पुराणा

जैन पुराणों के अध्ययन से पता चलता है कि उनमें तीर्थंकरों की नगरी, जन्मतिथि, नक्षत्र, वंश, तीर्थंकरों के अन्तराल, आयु, कुमारकाल, शरीर की ऊँचाई, वर्ण, राज्यकाल आदि तथा जैन धर्म के विभिन्न रूपों का भी आंकलन किया गया है।

संस्कृत वैदिक साहित्य में 18 पुराण बडे पवित्र व्यापक और गौरवशाली माने जाते है। विश्व साहित्य के अक्षय भण्डार पुराण एक अद्भुत एवं सर्वश्रेष्ठ रत्न है।

वैदिक साहित्य में पुराणों का मुख्य विषय उनके भगवान के चरित्रों का वर्णन, व्रत, त्यौहार आदि का वर्णन करना है। पुराणों में स्वर्ग, नर्क का वर्ण, अनुष्ठान, पाप, पुण्य, प्रायश्चित धर्मशास्त्र के नियम लोकोचार आदि की जानकारी मिलती है।

इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थ समुपवृंहयेत्। – के अनुसार वेदार्थ ज्ञान में पुराण का वैशिष्ट्य सर्वोपरि है। पुराण ज्ञान (आत्मज्ञान) विज्ञान (प्रकृति विज्ञान) का शास्त्र है।

वैदिक 18 पुराणों के नाम इस प्रकार है।

1. ब्रहमपुराण	2. पद्म पुराण
3. विष्णुपुराण	4. वायु पुराण
5. श्रीमद्भागवत्	6. नारदय पुराण
7. मार्कण्डेय पुरण	8. अग्नि पुराण
9. भविष्य पुराण	10. ब्रह्मवैवर्त पुरण
11. लिंगपुराण	12. वाराह पुराण
13. स्कन्दपुराण	14. वामन पुराण
15. कूर्मपुराण	16. मत्स्य पुराण
17. गरूड पुराण	18. ब्रह्माण्ड पुराण

इस प्रकार हम देखते है कि वैदिक पुराणों के माध्यम से मनुष्य सदैव सत प्रेरणा लेता रहा है। पुराणों का मुख्य उद्देश्य श्रोतागण के चित्त को पापात्मक प्रवत्ति से हटाकर पुण्यात्मक प्रवृत्ति की ओर अग्रसर करना है।

* भूतपूर्व अतिथि विद्वान (संस्कृत) शासकीय गांधी महाविद्यालय, बालाजी, मिहोना, जिला – भिण्ड (म.प्र.) भारत

पुराणों का मुख्य लक्ष्य जन–साधारण के चित्त का आवर्जन कर धर्म की ओर प्रवृत्त करना रहा है।

जैन एवं वैदिक पुराणों में समानता –जैन एवं वैदिक पुराणों के अध्ययन से निम्न समानताऐं दृष्टिगोचर होती है।

1. जैन एवं वैदिक दोनों धर्मो के पुराणों में यथायोग्य ग्रन्थ की निर्विध्न समाप्ति के लिए पुराण के प्रारम्भ में मंगलाचरण का पाठ होता है।
2. जैन एवं वैदिक पुराण अपने समय के ज्ञान कोश हुआ करते है दोनों में ही धार्मिक एवं सामाजिक तथ्यों पर विशेष बल दिया जाता है।
3. जैन एवं वैदिक धर्म दोनों ही पुराणों में चतुर्थ पुरूषार्थ (धर्म,अर्थ, काम,मोक्ष) का वर्णन होता है।
4. जैन एवं वैदिक दोनों ही धर्मो के वैदिक पुराणों में यथायोग्य रस, छन्द, अलंकार आदि का सामान्य होता है।
5. जैन व वैदिक दोनों ही धर्मो के पुराणों में धार्मिक उपदेश प्राय: विद्यमान होते हैं जैसे–संसार की नश्वरता, दु:ख की बहुलता बतलाकर, शरीर की क्षण भंगुरता, संसार के मिथ्यात्व का उपदेश देते हुए उन्होंने संसार के प्रति विरक्ति पैदा करने का प्रयत्न किया है।

जैन एवं वैदिक पुराणों में वैषम्य: –

1. जैन धर्म की मान्यतानुसार, जो आत्मा परमात्मा बन चुकी होती है। वह कभी कोई अवतार या पुनर्जन्म नहीं लेती है। जबकि हिन्दु धर्म व वैदिक पुराणों में संसार में व्याप्त अन्याय या अनीति को नष्ट करने के लिये ईश्वर समय–समय पर इस पृथ्वी पर अवतार लेता है।
2. जैन पुराणों में जिनको तीर्थंकर कहा जाता है, वे ईश्वर का अवतार न होकर, तीर्थकर है, परन्तु तदनुसार हिन्दु पुराणों में जिनको महापुरूष कहा जाता है, वे वास्तव में महापुरूष न होकर ईश्वर का ही अंश मात्र होते है।
3. जैन पुराणों में उपपुराणों का विभाग नहीं मिलता है, जबकि वैदिक पुराणों में उपपुराणों का विभाग होता है।
4. जैन पुराणों में प्राचीन राजवंशो और महापुरूषो का इतिहास सुरक्षित रहता है। इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है, जबकि वैदिक पुराणों में प्राचीन राजवंशो और महापुरूषों का इतिहास सुरक्षित है।
5. जैन पुराण सर्गो में विभाजित होते जबकि वैदिक पुराण अध्यायों में विभाजित होते है।

जैनपुराण साहित्य का संक्षिप्त परिचय – जैन पुराणों में जैनधर्म के तीर्थंकरों का वर्णन मिलता है। तीर्थकरों आदि के जीवनों के कुछ मुख्य तथ्यों का संग्रह स्थनांगसूत्र में मिलता है, जिसके आधार से आचार्य हेमचन्द्र आदि ने त्रिषण्टि महापुराण आदि की रचनाएँ की है। दिगम्बर परम्परा में तीर्थकर आदि के चरित्र के तथ्यों का प्राचीन संकलन हमें प्राकृत भाषा के तिलोयपण्णति ग्रन्थ में मिलता है। जैन पुराणों में तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों का विषेश वर्णन किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आचार्य जिनसेन, महापुराण–भाग प्रथम भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, मार्च 1951 ईसवी, 1/21
2. इतिहास इतीष्टं तद् इतिहासीदिति श्रुते:। – महापुराण – 1/25
3. स च धर्म: पुराणार्थ: पुराणं पञ्चधा विदु:। – महापुराण – 2/38–40
4. पुराणं संग्रहीष्यामि त्रिषाष्टि पुरूषाश्रितम्। – महापुराण – 1/122–125

****

महाकवि भवभूति के नाटकों में नारी का स्थान

डॉ. मुकाम सिंह भँवर *

शोध सारांश – भवभूति के समय में स्त्रियों का स्थान सम्मानजनक था। कन्या के उन्मुक्त शिक्षण का यद्यपि कोई दूसरा संकेत तो नहीं मिलता पर इतना स्पष्ट हैं कि घर में संगीत , ललितकला , चित्रकला में भी दक्ष होती थी। पत्नी का घर में पूरा सम्मान था , सामाजिक एवं धार्मिक कार्यो में विशेष सहयोग था, कौटुम्बिक जीवन समानता और स्नेह पर आधारित थी।

प्रस्तावना – महाकवि भवभूति ने अपने नाटकों में नारी को महनीय पद प्रदान किया हैं। नारी के कन्या, पत्नी, और माता इन तीनों रूपों का इन्होंने विषद् चित्रण किया हैं। नाना प्रकार की सामाजिक परिस्थितियों और विभिन्न मनोंदशाओं में भवभूति के नारी पात्र विभिन्न प्रकार के व्यवहार करते हैं, परन्तु उदत्त चरित्र पर कहीं असर नहीं पड़ता। कन्या को वे पदार्थ की वस्तु मानते हैं, जिसे किसी न किसी को देना हैं –

कन्यायाश्च् परार्थतैव मता– महावीरचरितम 1/30

कन्या की याचना कोई भी कर सकता हैं फिर समर्थो की बात ही क्या–

साधारण्यानिरातड.कन्यामन्योऽपि याचते।
किं पुनर्जगतां जेता प्रपौत्र: परमेष्ठिन: ।। महावीरचरितम 1/36

कन्या के दान से बडों के साथ सम्बंध और मित्रता हो जाती है। यह स्नेह सूत्र का संस्थापक हैं। कन्या दान में पिता ही अधिकारी होता हैं। भवभूति के दृष्टिकोण में कन्या अत्यन्त सुशील है, वह समस्त दु:खो को झेलने के लिए प्रस्तुत हैं , पर माता–पिता का दु:ख वह सहन नहीं कर सकती, वे अत्यन्त करूणामयी,कोमल, असहनशील और कुसुम के सदृष्य सुकुमार होती हैं।

स्त्री को पत्नी रूप का भी भवभूति ने बड़ा ही मनोरम तथा उज्जवल रूप प्रदर्शित किया हैं वह गृह की लक्ष्मी हैं , पति के लिए आनंददायिनी हैं उसकी बाहें कंठ में हार की भांति हैं –

इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनयोस्सावस्या: स्पर्शो वपुशि
बहुलश्चन्दनरस:।
अयं बाहु:कण्ठे शिशिरमसृणों मौक्तिकसर: किमस्या न प्रेयो यदि
परमहयस्तु विरह: ।।

मिथिलाधीश राजर्षि जनक भी तो कौशल्या को दषरथ के गृह की लक्ष्मी बताते है –

आसीदियं दशरथस्य गृहे यथाश्री: ।। उत्तररामचरितम् 4/6

स्त्री के बिना सारा संसार ही जीर्णशय बन जाता है। वह नीरस और निस्सार हो जाता हैं, पत्नी ही पति का जीवन हृदय और आंखों की ज्योति हैं। पति–पत्नी परस्पर मित्र, बंधु और सम्पति हैं। जटिल और उचित–अनुचित कार्यों में वह पति को सत्परामर्श भी देती हैं। रामायण में मंदोदरी रावण को पुन:पुन: हितावह कार्य का उपदेश देती हैं क्योंकि वह पति को धर्म के विपरीत कार्य कभी नहीं देखना चाहती थी अर्थात् स्त्री–पुरूष का अर्धांग है। पुरूष जब तक स्त्री को नहीं पा जाता तब तक असम्पूर्ण रहता है। नारी की सबसे दु:खमयी अवस्था पति का वियोग हैं। इसमें उसके सारे जीवन के सुख स्वप्न ध्वस्त हो जाते हैं, असीम दु:ख होता हैं। भवभूति के नाटकों में प्रधान पात्र श्रीरामचन्द्र जी धार्मिक कृत्य की पूर्ति के लिए इसी आदर्श के अनुसार स्वर्णमयी सीता का प्रतिष्ठान करते हैं।स्त्री सहधर्मचारिणी हैं। वह पति में प्राणशक्ति का संचार करती है। उसके मधुर वचन जीवकुसुम के समान विकासकारी हैं , इन्द्रियों को मुग्ध करने वाले हैं और कान में अमृत तथा मन के रसायन है–

मलानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि ,
सन्तर्पणनि सकलेन्द्रिय मोहनानि।
एतानि ते सुवचनानि सरोरूद्धक्षि ?
कर्णामृतानि मनसष्च रसायनानि ।।

उत्तररामचरितम् 1/36

रामायण में नारी पात्र सीता का सारा जीवन वियोग का ही हैं। वस्तुत:उत्तररामचरितम पीड़ा की कहानी हैं। करूणा से सरोबोर नाटक में विरहिणी सीता का रूप देखिये –

किसलयमिव मुग्धं बन्धनाद्विप्रलूनं
हृदयकमलषोषी दारूणों दीर्घशोकनं।
ग्लपयति परिपाण्डुक्षाममस्या: षरीरं
शरदिज इव धर्म: केतकीगर्भपत्रम ।।

उत्तररामचरितम् 3/5

दीर्घकालीन विरह के अनन्तर पति का दर्शन होने पर कई प्रकार के भाव उमड़ जाते है। भवभूति की नारी शिक्षता, सर्वशास्त्रों में विचक्षण , कलाभिज्ञा और सुसंस्कृता हैं। कामन्दकी सर्वशास्त्रों में निष्णात हैं, वह बाहर अध्ययन करने जाती थी। मालती चित्रकला में प्रवीण हैं। और मनोविनोद के लिए एवं विरह वेदना की परिशान्ति के लिए माधव का चित्र निर्मित करती है। सन्तान के सुख के लिए भवभूति के पात्र चिन्तित हैं। सन्तान ही तो स्त्री पुरूष के हृदय –ग्रन्थी को और दृढ़ता से जोड़ताहैं। भवभूति की नारी स्वाभिमानिनी हैं।

भवभूति की नारी सन्तान के प्रति करूणामयी हैं। भगवती पृथ्वी सीता के सुख और कल्याण के लिए सदा चिन्तित है।

महाकवि भवभूति स्त्री जाति के प्रति कितना सम्मान था , इनका

* विभागाध्यक्ष (संस्कृत) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

अनुमान उनके सिध्दांतवाक्य से लगाया जा सकता हैं। भवभूति की नारी स्वत: ही पवित्र नहीं ,अपितु दूसरों को भी पूत करती हैं। लोग उसी से सनाथ है। यह विधि की विडंबना है कि उसे लोक–निंदा का भाजन बनना पड़ता हैं। जगत का नियम भी विचित्र ही हैं यथा –

स्त्रीणां तथा वाचा साधुत्वे दुर्जनों जन: ।
उत्तररामचरितम 1/5

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महावीरचरितम – महाकवि भवभूति ।
2. उत्तररामचरितम – महाकवि भवभूति ।
3. महाकवि भवभूति – डॉ. गंगासागर राय – चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
4. अर्थगौरवम् – आचार्य रहसबिहारी द्विवेदी – म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल ।

****

परमाचार्य जिनसेन का व्यक्तित्व तथा कृतित्व

डॉ. सावित्री मिश्रा *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से परमाचार्य जिनसेन का व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय कराया गया है। आदिपुराण जैन धर्म का अत्यंत श्रेष्ठ पुराण माना जाता है। इसके रचियता आचार्य जिनसेन भी अत्यंत गौरवशाली व्यक्ति रहे होंगे। आचार्य जिनसेन का जन्म 675 शक सम्वत् के लगभग माना जाता है। जिनसेन स्वामी वीरसेन स्वामी के शिष्य थे। उनके विषय में गुणभद्राचार्य ने उत्तरपुराण की प्रशस्ति में उचित ही लिखा है कि जिस प्रकार हिमालय से गंगा का प्रवाह सर्वत्र के मुख के सर्वशास्त्र रूप दिव्य ध्वनि का और उदगमं के तट से देदीप्यमान सूर्य का उदय होता है। इस प्रकार यह शोध पत्र जैन धर्माम्वलम्बियों के लिए अत्यंत उपादेय होगा।

भारतीय संस्कृत वाड्मय को अपने असाधारण व्यक्तित्व तथा अप्रतिम प्रतिभा द्वारा समृद्धि एवं प्रौढ़ता प्रदान करने वाले, दिगम्बर जैन धर्म के अध्यात्म दर्शन तथा अंतर्वाहन आचार का अपनी टीकाकृतियों तथा मौलिक रचनाओं द्वारा रहस्योद्घाटन करने वाले, अलौकिक आध्यात्मिक जीवन जीने वाले, परमानन्द रस के पिपासुओं को अध्यात्मामृत का पान कराने वाले आचार्य जिनसेन के जीवन का परिचय कराने हेतु अद्यावधि अनेक विद्वानों ने असमर्थता ही व्यक्त की है। इस असमर्थता का एक मात्र कारण उनकी अलौकिक निस्पृहता तथा मोक्षमार्ग रूढ़ अलौकिक जीवन है।

'वीरसेन स्वामी का शिष्य जिनसेन हुआ जो उज्जवल बुद्धि वाला था। उसके कान अविद्ध थे तो भी ज्ञानरूपी शलाका से बेधे गए थे।[1] निकट भव्य होने के कारण मुक्तिरूपी लक्ष्मी ने प्रसन्न होकर मानों स्वयं ही वरण करने की इच्छा से जिनके श्रुतमाला की योजना की थी।[2] इन्होंने बाल्यकाल से ही अखण्डित ब्रम्हचर्यवत का पालन किया था, फिर भी आश्चर्य है कि उन्होंने स्वयंवर की विधि से सरस्वती का उद्वहन किया।[3] जो न बहुत सुंदर थे और न ही अत्यंत चतुर ही फिर भी सरस्वती ने अनन्यशरणा होकर उनकी सेवा की थी।[4]

प्रस्तावना – आचार्य जिनसेन का पद एवं व्यक्तित्व – आचार्य जिनसेन प्रतिष्ठित एवं प्रख्यात रहे है। आचार्य पद उनके गौरवपूर्ण पद एवं व्यक्तित्व का द्योतक है। जैनदर्शन में पांच पद सर्वश्रेष्ठ है। अर्हत्, सिद्ध आचार्य, उपाध्याय, साधू इन पाँचों पदों को पंचपरमेष्ठी पद से जाना जाता है। इनमें आचार्य पद साधु और उपाध्याय पदों से भी अधिक गौरवशाली, महत्वपूर्ण तथा उच्चतम अध्यात्मिक विकास का प्रतीक है। जिनसेन का व्यक्तित्व इतना महान था कि आचार्य के अतिरिक्त अनेक पदवियों से इन्हें सुशोभित किया गया है।

आचार्य की कसौटी पर जिनसेन का व्यक्तित्व शुद्धस्वर्ण की भांति खरा और प्रभावशाली है। आचार्य परम्परा में वे ध्रुवतारे की भाँति मोक्षमार्ग की दिशा को दर्शाने में समर्थ हुए है। उनकी कृतियाँ मोक्षमार्ग की प्रकाश स्तम्भ है।

आचार्य जिनसेन सिद्धान्तज्ञ के रूप में – आचार्य जिनसेन उच्चकोटि के सिद्धान्तज्ञ थे। जिस प्रकार तीर्थंकर महावीर के बाद अनेक सिद्धान्त पारगामी आचार्य हुए उनमें आचार्य कुन्दकुन्द का नाम सर्वाधिक विश्रुत एवं प्रमाणिक माना जा रहा है, उसी प्रकार जैन सिद्धांत सूत्रों के आधारस्पर्शविता अनेक टीकाकार आचार्य हुए, परन्तु आचार्य जिनसेन सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं प्रमाणिक टीकाकार के रूप में माने जाते है।

कृतियाँ – आचार्य जिनसेन जितने सफल एवं कुशल टीकाकार थे, उतने ही सिद्धहस्त तथा गंभीर मौलिक ग्रन्थ प्रणेता भी थे। उनकी सभी कृतियों में अमृत छलकता है। वे अध्यात्म, रसिक, प्रौढ़, प्रांजल, व गम्भीर, टीकाकार, दार्शनिक विद्वान् तथा आत्मानुभवी विचारक थे। उनकी चार कृतियाँ प्रमुख है –

1. पार्श्वाभ्युदय,
2. जयधवला,
3. वर्धमान पुराण,
4. आदिपुराण

इस प्रकार हम देखते है कि आचार्य जिनसेन बड़े तपस्वी, प्रशांत मूर्ति और पण्डितजनों में अग्रणी थे। उनके द्वारा रचित ग्रन्थ जैनागम के सर्वश्रेष्ठ रत्न हैं। इन्होंने बहुत कम उम्र में ही कुछ कृतियाँ लिखकर विश्वविख्यात प्राप्त कर ली थी। आप एक सिद्धान्तज्ञ थे। आपकी कृतियों में ओज, माधुर्य, प्रसाद, शैली, रस और अलंकार आदि का यथायोग्य वर्णन किया गया है आप कभी भी अपने कर्तव्य करने के कर्म से विमुख नहीं हुए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तस्य शिष्योऽभवच्छ्रीमान् जिनसेनः समिद्धधीः। – आदिपुराण प्रस्तावना।
2. यस्मिन्नासन्नभव्यत्वान्मुक्तिलक्ष्मीः समुत्सुका। – आदिपुराण प्रस्तावना।
3. येनानुचरितं बाल्याद् ब्रम्हव्रतमखण्डितम्। – आदिपुराण प्रस्तावना।
4. यो नाति सुन्दराकारो न चातिचतुरो मुनि :। – आदिपुराण प्रस्तावना।

* भूतपूर्व अतिथि विद्वान (संस्कृत) शासकीय गांधी महाविद्यालय, बालाजी, मिहोना, जिला – भिण्ड (म.प्र.) भारत

A Comparative Study Of Students Perception Towards Counseling Needs Of Class XII Students Studying In Integrated & Non-Integrated Courses

Nikhil Chaudhary *

Abstract - The present investigation was directed towards the identification of student's perception towards counseling needs of class XII students studying in integrated and non-integrated courses of Udaipur city of Rajasthan state. Perceptions of 40 students in integrated courses and another 40 students engaged in non-integrated courses from selected schools were used to check or find the counseling needs. For the aforesaid purpose, counseling needs inventory constructed and standardized by Dr. A.K. Chaudhary (2015) was used. Results of the analysis indicate that the students engaged in integrated courses have strong counseling needs in the areas like need for understanding, love and belongingness, approval, freedom, security, need to tackle emotional problems and behavioral problems. On the other hand, students in non-integrated courses have strong counseling needs in the areas such as need for achievement and vocation. On the overall basis, the students in integrated courses have comparatively strong counseling needs than students in non-integrated courses. Results also shows that there is a significant difference between the counseling needs of the students engaged in integrated courses and non-integrated courses.
Key Words - Student's perception, integrated course, non-integrated courses, counseling needs.

Introduction - The contribution of psychology in building global community needs no introduction since our globe consists of millions of heads, each having its own individuality and uniqueness and most importantly, each and every individual can be studied with the help of psychology. As far as an individual or a single personality is concerned, the most effective way to guide or counsel him/her is 'Counseling'. 'Counseling' is itself a vast term covering all the general as well as specific aspects regarding the personality of an individual. Counseling psychology has its roots in the very past and together with that it is going to spread its branches in the upcoming future. In fact, the biggest counseling ever made was by lord Krishna to Arjun in the battle field of 'Mahabharata'.

As the complexities of the technological era is increasing, it is giving rise to even more complex psychological disorders or deviations, which ultimately spreading the working area of counseling psychology.

The aim of counseling is to help the students to remain engaged and develop multiple sets of skills, experiences and sources to accelerate or hasten the learning process. On the other hand, non-integrated courses includes those learning whose parts are not gathered into whole i.e in these kinds of courses students pursue their studies separately both at schools and at other educational institutions.

The counseling professionals could help those who are in genuine need and has a self will to overcome their life's issues. But for this, it is again very important to check whether the need for counseling is genuine or not. So in such cases the students are to be properly inspected to know their need of counseling needs. Therefore, a comparative study is conducted out of student's perception towards counseling needs studying in class XII, engaged in integrated & non-integrated course.

Review of Literature - The investigation done by Abdul Azeez V P, Dr. V Sumangala (2015) was directed towards the identification of counselling needs of the higher secondary school students of Kerala as perceived by higher secondary school teachers by normative survey method. Perceptions of 200 teachers from selected schools were used to assess the counseling needs. Results of the analysis indicate that higher secondary school students have strong counselling needs, as perceived by their teachers. Results also show that there is no significant difference between male and female teacher perception on the counselling needs of higher secondary school students.

Andreas Brouzos and Stephanos Vassilopoulos (2015) in their study examined the counselling needs of a sample of secondary school students in Greece. The sample consisted of 931 students (433 girls and 498 boys) aged between 12 and 16 years old. A 70-item questionnaire was developed and administered to assess participants' perceived needs in various areas. The exploratory factor analysis yielded five factors: learning skills, vocational guidance/development, interpersonal relationships, personal development, and social values.

The review of literature suggests that no such study have been observed where the comparison was made between class XII students from integrated and non-

* Research Scholar, Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA

integrated system. Therefore the present research paper is written with the objectives written below.

Objectives - The objectives of the present research paper are as follows:

- To study the student's perception towards counseling needs of class XII students studying through integrated courses.
- To study the student's perception towards counseling needs of class XII students studying through non-integrated courses.
- Comparison of student's perception towards counseling needs of class XII students studying through integrated and non-integrated courses.

Hypothesis - The hypothesis for the present research paper is as follows:

There is no significant difference between student's perception towards counseling needs of class XII students studying in integrated and non-integrated courses.

Test Material - The standardized test named **"Counseling Needs Inventory"** constructed and standardized by A. K. Chaudhary (2015) was used. This inventory measures counselling needs in nine areas (total 60 statements) namely, need for achievement (7 statements), need for understanding (8 statements), need for vocational counselling (5 statements), need for love & belongingness (9 questions), need for approval (3 statements), need for freedom (4 statements), need for security (6 statements), need to tackle emotional problems (9 statements) need to tackle behavioural problems (9 statements). The score 3 is given for agree, 2 for neither agree nor disagree and 1 for disagree.

The manual of the test suggests that if the score higher than 12 for need for achievement 14 for need for understanding, 10 for need for vocational counselling, 16 for need for love & belongingness, 6 for need for approval, 8 for need for freedom, 12 for need for security, 16 for need to tackle emotional problems and 16 for need to tackle behavioural problems needs counselling in the respective dimension.

Methodology -

Locale&Sample - The locale of the present research is Udaipur district of Rajasthan State and 80 students selected purposefully from the one school of Udaipur where both integrated and non-integrated system exists.

Method of data collection - The students were contacted in the school premises in the group. After rapport establishment they were assured that their responses were kept confidential and will be used for research purpose only.

After giving the instructions the scoring was done asscore 3 is given for agree, 2 for neither agree nor disagree and 1 for disagree. The area wise total score was determined and preceded for statistical analysis.

Results

Table (See in the next page)

Interpretation - The table indicates that 't' score for need for achievement, understanding, vocation, love and belongingness, approval, freedom, security, need to tackle emotional and behavioral problems is found significant at 0.01 level.

The mean scores depicts that students in non-integrated courses strongly needs counseling for achievement because they have less predetermined and less concrete routes to achieve a definite goal as compared to the students in integrated courses.

The mean scores also depicts that the students of integrated courses have stronger counseling needs as compared to the students of non-integrated courses since they have a rigid routine and path to follow to reach their goal and this unable them to have a proper understanding of the world which is outside their purview.

The mean scores depicts that students in non-integrated courses strongly needs counseling for vocation because they have lesser knowledge and greater confusion regarding the selection of the appropriate vocation as compared to the students in integrated courses.

The mean scores also depicts that the students of integrated courses have stronger counseling needs since they have strict schedules and also need to deal with uncertain rate of success, so balance it they comparatively need more love and belongingness as compared to students in non-integrated courses.

The mean scores depicts that students in integrated courses strongly needs counseling for approvalbecause they have deal with dual pressures of studies, so they need a higher level of support and consent as compared to the students in non-integrated courses.

The mean scores also depicts that the students of integrated courses have stronger counseling needs since their schedules, burdens and rigid study patterns adversely affect their carefree lifestyle, and therefore they need more freedom as compared to students in non-integrated courses.

The mean scores depicts that students in integrated courses strongly needs counseling for security because they have fewer chances of selection in their respective examinations, which in turn leads security issues in their career as well as in life and hence they are in utter need of security as compared to the students in non-integrated courses.

The mean scores also depicts that the students of integrated courses have stronger counseling needs as compared to students in non-integrated courses since their hectic lifestyle, dual pressure to perform and uncertainty of results make them emotionally thwarted, so they need more help to tackle and mange their emotional problems.

The mean scores depicts that students in integrated courses strongly needs counseling to tackle behavioural problems because together with their emotional and mental levels, their behavioral aspect also get adversely affected, therefore they require proper behavioral assistance to tackle behavioral problems as compared to the students in non-

integrated courses.

Conclusion - Results of the analysis indicated that there are counselling needs among class XII students imparting their education through integrated and non-integrated courses.

Results depict that the hypothesis "***There is no significant difference between student's perception towards counseling needs of class XII students studying in integrated and non-integrated courses" is rejected.*** It can thus be concluded that the students engaged in integrated courses have strong counseling needs in the areas like need for understanding, love and belongingness, approval, freedom, security, need to tackle emotional problems and behavioral problems. On the other hand, students in non-integrated courses have strong counseling needs in the areas such as need for achievement and vocation. On the overall basis, the students in integrated courses have comparatively strong counseling needs than students in non-integrated courses.

Recommendations - The current system of school counseling programmes is to be revamped and a more systematic counselling support system is provided in schoolsin order to stop the rate of suicidal attempts among them. For this, policies and strategies are to be reframed at higher secondary level. Future researches must be oriented towards this so that we can help and secure the upcoming young generation to be mentally and emotionally healthy.

References :-

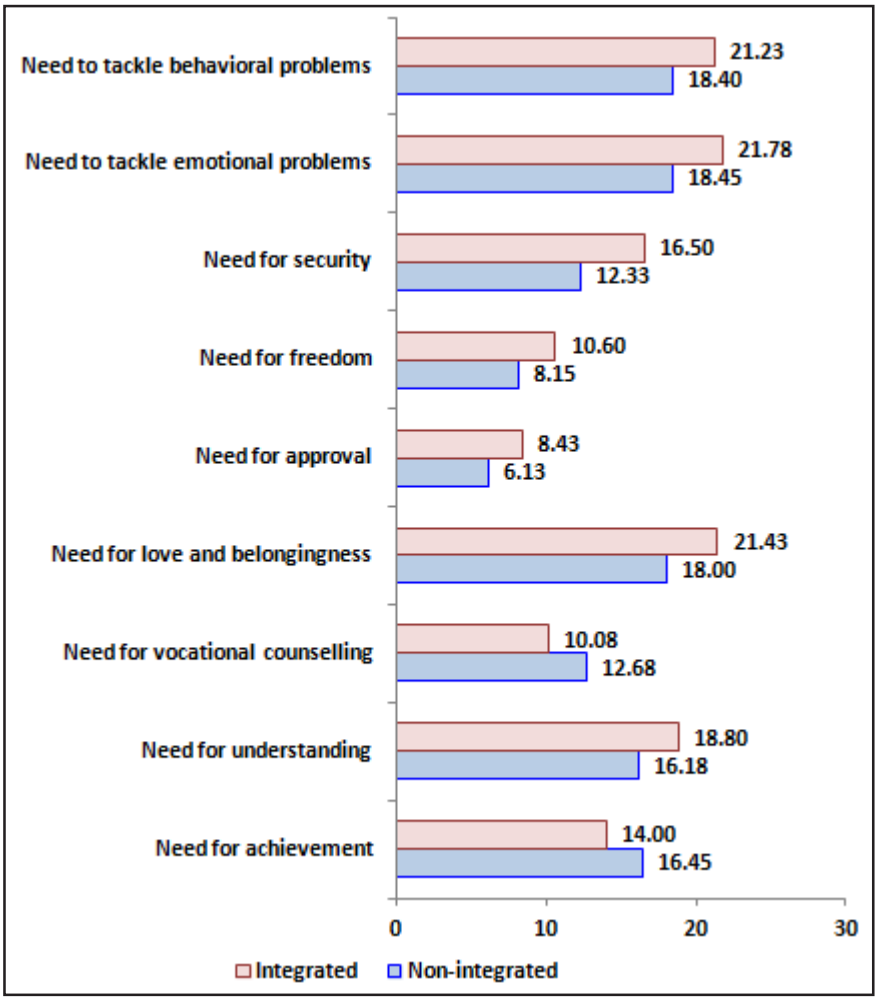
1. Azeez, Abdul & SumangalaV.(2015)."Counselling Needs of Higher Secondary School Students of Kerala: An Exploration into the Teacher Perception". Journal of Research & Method in Education, Volume 5 (3), PP 25-28. Retrievedwww.iosrjournals.org on 15-01-2017.
2. Brouzos, A & Vassilopoulos, S. (2015). "Secondary School Students' Perceptions of Their Counselling Needs in an Era of Global Financial Crisis: An Exploratory Study in Greece". International Journal for the advancement of counselling. June 2015, Volume 37 (2)pp 168–178. Retrievedhttp://link.springer.com/journal/10447 on 16-01-2016.

Results

Table

Showing comparison of Counselling Needs of Students of integrated and non-integrated courses

	Group	N	Mean	Std. Deviation	Mean Difference	't' score	P value
Need for achievement	Non-integrated Integrated	40 40	16.45 14.00	1.468 1.449	2.450	7.513	.000
Need for understanding	Non-integrated Integrated	40 40	16.18 18.80	1.880 1.636	2.625	6.662	.000
Need for vocational counselling	Non-integrated Integrated	40 40	12.68 10.08	1.309 1.873	2.600	7.198	.000
Need for love &belongingness	Non-integrated Integrated	40 40	18.00 21.43	2.501 2.252	3.425	6.436	.000
Need for approval	Non-integrated Integrated	40 40	6.13 8.43	1.017 0.594	2.300	12.345	.000
Need for freedom	Non-integrated Integrated	40 40	8.15 10.60	1.494 1.429	2.450	7.495	.000
Need for security	Non-integrated Integrated	40 40	12.33 16.50	1.730 1.867	4.175	10.372	.000
Need to tackle emotional problems	Non-integrated Integrated	40 40	18.45 21.78	2.660 1.717	3.325	6.643	.000
Need to tackle behavioral problems	Non-integrated Integrated	40 40	18.40 21.23	2.753 2.057	2.825	5.199	.000


Need to tackle behavioral problems
21.23
18.40
Need to tackle emotional problems
21.78
18.45
Need for security
16.50
12.33
Need for freedom
10.60
8.15
Need for approval
8.43
6.13
Need for love and belongingness
21.43
18.00
Need for vocational counselling
10.08
12.68
Need for understanding
18.80
16.18
Need for achievement
14.00
16.45
0
10
20
30
Integrated
Non-integrated

****

पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन

डॉ. कौशिक वी. पाण्ड्या * डॉ. अनिल कुमार श्रीवास्तव ** समन्दर सिंह ***

शोध सारांश – भारत एक लोकतंत्रीय गणराज्य है। जिसमें भारत सरकार की जो व्यवस्था है, उसमें सरकार, जनता की, जनता द्वारा चुनी हुई और जनता के हित के लिए हैं। लोग इसके मालिक हैं और लोगों को अपने प्रत्येक कार्य के लिए सरकारी विभागों एवं एजेंसियों पर निर्भर रहना पड़ता है, जन्म प्रमाण पत्र से मृत्यु प्रमाण पत्र तक तथा साथ ही भारत का प्रत्येक नागरिक स्वयं एक करदाता है।

आम आदमी को अपने प्रत्येक दिन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए बिक्री कर तथा उत्पाद कर देना पड़ता है। अत: सरकार चलती है, लोगों द्वारा किए कर से। ऐसे में व्यक्ति विशेष सरकारी विभागों व एजेंसियों द्वारा की जा रही जानकारी को जानना चाहता हैं, जिनका सम्पूर्ण प्रभाव आम आदमी के जीवन पर पड़ता हैं।

इन सबका जवाब संविधान में सूचना के अधिकार के अंतर्गत दिया जाता है। वास्तव में सूचना का अर्थ है, लोक प्राधिकारी के पास उपलब्ध किसी भी रूप में रखी गई ऐसी सामग्री जो तैयार की गई, उपयोग में लाई गई और सुरक्षित रखी गई है।

उपरोक्त सूचना के अधिकार को ध्यान में रखते हुए **'पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन'** किया गया। इसमें 50 पुरूष ग्रामीण व 50 शहरी तक सीमित रखा। अत: ग्रामीण शहरी पुरूष शिक्षक धारकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता समान है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में 100 शिक्षकों तक सीमित रखा है तथा अध्ययन के लिए स्वनिर्मित परीक्षण सूचना के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता मापनी को उपकरण के रूप में काम में लिया है।

प्रस्तावना – भारत एक लोकतंत्रीय गणराज्य है। जिसमें भारत सरकार के जो व्यवस्था है, उसमें सरकार जनता की, जनता द्वारा चुनी गई और जनता के हित के लिए है। लोग इसके मालिक है और लोगों को अपने प्रत्येक कार्य के लिए सरकारी विभागों एवं एजेंसियों पर निर्भर रहना पड़ता हैं, जन्म प्रमाण पत्र से मृत्यु प्रमाण पत्र तक तथा साथ ही भारत का प्रत्येक नागरिक स्वयं एक करदाता है।

आम आदमी को अपने प्रत्येक दिन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए बिक्री कर तथा उत्पाद कर देना पड़ता है। अत: सरकार चलती है, लोगों द्वारा दिए कर से। ऐसे में व्यक्ति विशेष सरकारी विभागों व एजेंसियों द्वारा की जा रही जानकारी को जानना पड़ता है, जिनका सम्पूर्ण प्रभाव आम आदमी के जीवन पर पड़ता है।

इन सबका जवाब संविधान में सूचना के अधिकार के अन्तर्गत दिया जाता है। वास्तव में सूचना का अर्थ है, लोक प्राधिकारी के पास उपलब्ध किसी भी रूप में रखी गई ऐसी सामग्री जो तैयार की गई, उपयोग में लाई और सुरक्षित रखी गई है।

देश का प्रत्येक नागरिक आयकर, बिक्री व उत्पाद कर के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करता है। तब वह भी आशा रखता है या अपेक्षा रखता है कि उसके द्वारा दिए जाने वाला धन किस प्रकार खर्च होता है। दूसरी ओर उस व्यक्ति को सरकारी कामकाजों की जानकारी लेना भी आवश्यक है, जिससे कि पादर्शिता स्पष्ट हो। यह सूचना का अधिकार आधुनिक एवं प्रगतिशील समाज के लिए बहुत आवश्यक है। सही समय पर सूचना से भ्रष्टाचार, कुप्रबन्धन एवं सरकारी तंत्र के दुरूपयोग पर अंकुश लगाया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार – सूचना का अधिकार हमारे मौलिक अधिकरो का एक हिस्सा है। सूचना के अधिकार के लिए अंग्रेजी के लिए अंग्रेजी शब्द है: राइट टू इन्फार्मेशन संक्षिप्त शब्द R.T.I. (आर. टी. आई.)

धारा – 2 (च) सूचना का अधिकार किसी लोक प्राधिकारी द्वारा या उसके नियत्रंण धीन ऐसी सूचनाएं हासिल करने के अधिकार के रूप परिभाषित किया गया हैं –

- निर्माण कार्यों, दस्तावेजों, अभिलेखों का निरीक्षण
- नोट्स उद्दरण, दस्तावेजों / अभिलेखों की प्रमाणित नकल लेना।
- सामग्री के प्रमाणित नमूने लेना।
- फ्लापी, टेप और वीडियो कैसेट या किसी अन्य इलेक्ट्रॉनिक तरीके में या प्रिंट आउट के जरिए सूचनाएँ कम्प्यूटर या अन्य किसी युक्ति में संग्रह की जाती हैं।

अत: इसमें उन सभी रूपों का समावेश हैं, जिनमें सरकारी संगठनों द्वारा सूचनाएँ रखी जाती है और सूचनाओं का लगभग प्रत्येक रूप इस परिभाषा में सम्मिलित है तथा साथ ही निजी निकाय से सम्बन्धित दस्तावेज भी शामिल है।

सूचना के अधिकार को अधिक प्रभावी सुनिश्चित करने हेतु सुनिश्चित करने हेतु राष्ट्रीय सलाहकार परिषइ ने सूचना की स्वतंत्रता अधिनियम 2002 में सम्मिलित करने हेतु कुछ परिवर्तन सुझाए तथा राष्ट्रीय सलाहकार परिषद

* फेकल्टी (शिक्षा) पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** डीन (शिक्षा) महाराजा सूरजमल ब्रिज यूनिवर्सिटी, भरतपुर (राज.) भारत
*** शोधार्थी, पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

द्वारा प्रस्तावित सुझावों को जॉचने के बाद सूचना की स्वतंत्रता अधिनियम 2002 को निरस्त करने तथा दूसरा विधान अधिनियमित करने का निश्चय किया। तथा भारत संविधान अनुच्छेद 19 के अन्तर्गत सूचना के अधिकार करने को संसद में पारित करने पर बल दिया तथा सूचना का अधिकार बिल 2005,11 मई 2005 को लोकसभा तथा 12 मई 2005 को राज्यसभा द्वारा पारित किया गया। 15 जून 2005 को इसे राष्ट्रपति की सहमति प्राप्त हुई।

यह जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर पूरे भारत में लागू है। पंचायत से लेकर संसद तक लगभग सभी संस्थाएँ इसके दायरे में आती है।

सूचना के अधिकार में सूचना लोक प्राधिकारी से 30 दिनों के भीतर प्राप्त हो जाती है तथा थर्ड पार्टी या प्राईवेट कम्पनी के मामले में 45 दिन और जीवन सुरक्षा से सम्बन्धित मामलों में 48 घण्टों में सूचना मिल जाती है।

ऐसा ना होने पर सम्बन्धित विभाग के अधिकारी पर केस के लिए 250/- रूपये प्रतिदिन के हिसाब से 2500/- रूपये तक जुर्माना हो सकता है।

इस सूचना के लिए फीस 10 रूपये है। जो फीस कैश बैंक ड्राफ्ट या पोस्टल ऑर्डर के रूप में जमा करा सकते हैं।

समस्या कथन – किसी भी अनुसंधान कार्य को करने के लिए समस्या कथन अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। समस्या कथन का अर्थ शोध प्रबंध के शीर्षक का उल्लेख मात्र नहीं है। समस्या का अभिकथन एक सुस्पष्ट लक्ष्य पर दृष्टि केन्द्रित करने का प्रयास करता है।

कार्थर वी. गुड और डी. ई. स्केट् के अनुसार – 'नियमानुसार किसी शोध प्रबंध का शीर्षक उस अनुसंधान कार्य के विषय या उस अनुसंधान में प्रस्तुत किए गए विशिष्ट क्षेत्र को केवल नाम प्रदान करता है।'

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अनुसंधानकर्त्ता ने वर्तमान समस्या का कथन इस **'पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन'** प्रकार किया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – शोध का उद्देश्य शोध कार्य का प्रकाश स्तम्भ है जो उसे राह से विचलित होने से बचाकर सही मार्ग दिखाता है। जीवन के सभी कार्य सौद्देश्य होते हैं, उद्देश्य के बिना जीवन दिशाहीन हो जाता है। जीवन का प्रत्येक क्षण किसी न किसी उद्देश्य से संलग्न है, ताकि शोधकार्य को दिशा मिल सकें, जो कि निम्नलिखित है –

1. सूचना के अधिकार अधिनियम की जानकारी प्राप्त करना।
2. ग्रामीण व शहरी शिक्षकों को सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएँ – शोध कार्य के व्यापक क्षेत्र को न्यून करने के लिए परिकल्पना का निर्माण आवश्यक है ताकि अध्ययन का स्वरूप स्पष्ट, सूक्ष्म और गहन हो सके। यदि परिकल्पनाओं का निर्माण नहीं किया जाता है, तो अनेक अनावश्यक व व्यर्थ आँकड़े एकत्रित होने भी सम्भावना रहती हैं।

लुण्डबर्ग के अनुसार – 'एक प्राकल्पना एक सामाजिक या कार्यवाहक सामान्यीकरण होना है जिसकी सत्यता का परीक्षण करना अभी शेष रहता है।'

इस तरह परिकल्पना एक ऐसी पूर्व विचार अमूर्तिकरण निष्कर्ष या सामान्यीकरण होता है, जो कि अध्ययनकर्त्ता अपने अनुसंधान की समस्या के बारे में बना लेता है व फिर उसी की जाँच करने के लिए आवश्यक तथ्यों को एकत्रित करता है। यदि अनुसंधान में खोज व प्राप्त किए गए तथ्यों से सार्थकता सिद्ध हो जाती है, तो यह विचार जिसे परिकल्पना कहा जाता है, एक सिद्धान्त का रूप धारण कर लेता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन की निम्न परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई है।

ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

शोध अध्ययन हेतु न्यादर्श – आधुनिक समय में समस्या का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया कि प्रत्येक व्यक्ति से व्यक्तिगत सम्पर्क करना असम्भव है। किसी भी मनोवैज्ञानिक तथ्य या मानवीय व्यवहार के सत्यापन के लिए पूर्णतया समग्र अध्ययन सम्भव नहीं होता हैं, अत: अधिकांशत: समस्याओं में न्यादर्श द्वारा कार्य किया गया हैं।

बोगार्ड्स के अनुसार – 'एक प्रतिदर्श अपने समस्त समूह का लघु चित्र होता है।'

किसी शोधकार्य की आधारशिला न्यादर्श है। शोध कार्य के परिणाम एक अच्छे न्यादर्श पर निर्भर करते हैं। न्यादर्श यदि विश्वसनीय एवं परिशुद्ध होगा तो अनुसंधान के परिणाम भी शुद्ध होंगे। अत: न्यादर्श का तनाव बड़ी कुशलता एवं सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। प्रस्तुत शोध में ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता के अध्ययन का स्तरीकृत व्यवस्थित न्यादर्श विधि से चयन किया गया। प्रस्तुत तालिका में चयन किया गया न्यादर्श दर्शाया गया है–

सारणी

'ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का अध्ययन'

प्रस्तुत तालिका में चयन किया गया न्यादर्श निम्न है –

क्र.सं.	श्रेणी	उप श्रेणी	कुल शिक्षक
1.	शिक्षक	ग्रामीण	50
2.		शहरी	50
	कुल		100

शोध अध्ययन हेतु अपनायी गई विधि – किसी अनुसंधान की सफलता उसकी योजना एवं क्रिया विधि पर आधारित है। शिक्षा, मनोविज्ञान तथा अनुसंधान की अनेक विधियाँ प्रयुक्त की जाती है। प्रत्येक अनुसंधानकर्त्ता अधिक विश्वसनीय एवं ठोस परिणामों की प्राप्ति हेतु कतिपय विधियों का चयन करता है। अनुसंधान कार्य की सफलता में अपनाई गई अध्ययन विधि का अत्यधिक एवं आधारभूत महत्व है। शिक्षा के क्षेत्र के विस्तृत रूप में उत्पन्न होती हूई अनेक समस्याओं का अध्ययन करने हेतु अनुसंधान की अनेक विधियां प्रयोग में लायी जाती है। अनुसंधानकर्त्ता ने प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है।

प्रस्तुत अध्ययन में **सर्वेक्षण विधि** के अन्तर्गत **मानकीय सर्वेक्षण विधि** को अपनाया गया है। जो कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु वांछनीय आँकड़ों के संकलन हेतु उपयुक्त है।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण – अध्ययन के लिए दत्त संकलन हेतु प्रयुक्त होने वाले साधनों को उपकरण कहते हैं। अनुसंधान की सफलता उपयुक्त उचित उपकरण के चयन पर निर्भर करती है। एक अनुसंधान में केवल एक ही उपकरण का प्रयोग न होकर कई उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। यह जरूरी नहीं है कि जो उपकरण एक क्षेत्र में प्रभावी होता है, वह अन्य क्षेत्रों में भी प्रभावी सिद्ध है।

डॉन डब्ल्यू बेस्ट के अनुसार – 'एक बढ़ई के सन्दूक में औजारों की भाँति प्रत्येक अनुसंधान उपकरण विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किसी विशिष्ट

परिस्थितियों में प्रयुक्त होता है।'

उपकरण चयन के आधार – अनुसंधानकर्त्ता को उपकरणों का चुनाव करते समय निम्न बातों का ध्यान में रखना चाहिए –

1. उपकरण ऐसा होना चाहिऐ जिसके प्रयोग से चयन की गयी समस्या का समुचित समाधान हो सकें।
2. उनकरण दी गई समस्या के प्रति विभिन्न अवसरों पर दी गई मानकीकृत स्थितियों के अन्तर्गत समन परिणाम प्रदान करने वाला हो।
3. उपकरण समय व धन की दृष्टि से मितव्ययी हो।
4. उपकरण समस्या के प्रति वैध उत्तर उपलब्ध कराने वाली हो।
5. जहाँ तक सम्भव हो उपकरण प्रमाणीकृत हो उससे एक अच्छे उपकरण के सभी गुणों का समावेश होता है।

अनुसंधानकर्त्ता ने स्वंय के द्वारा निर्मित स्वनिर्मित परीक्षण **'सूचना के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता मापनी'** को उपकरण के रूप में काम में लिया है।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी – किसी भी शोध में सर्वप्रथम उस शोध से सम्बन्धित आंकड़ों का संकलन किया जाता है किन्तु दत्त संकलन से शोध कार्य पूर्ण नहीं होता अपितु दत्त संकलन को वैज्ञानिक रूप देने के लिए सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है।

परीक्षणों को प्रशासित करने के पश्चात् प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय रूप में प्रस्तुत करने हेतु सर्वप्रथम गणना के लिए मध्यमान, प्रमाप–विचलन व टी–परीक्षण ज्ञात किया।

शोध अध्ययन की परिकल्पना जाँच सहित निम्नलिखित हैं –

परिकल्पना – ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

प्राप्त आंकड़ों के आधार से ज्ञात होता है कि ग्रामीण पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता का मध्यमान 62.46 है जबकि शहरी शिक्षकों का मध्यमान 65.14 है।

दोनों मध्यमानों में अन्तर की सार्थकता ज्ञात करने के लिए टी–परीक्षण ज्ञात किया गया है। जिसमें टी का मूल्य .11 आया है जो कि .05 विश्वास स्तर (टी–मूल्य– 1.96) पर सार्थक नहीं है अर्थात् ग्रामीण व शहरी शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता में अन्तर नहीं पाया गया है। अत: कहा जा सकता है कि ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता समान है।

निष्कर्ष –

1. ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अत: ग्रामीण व शहरी पुरूष शिक्षकों का सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता समान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, जे. सी. – 'एज्युकेशन रिसर्च'।
2. एलिस, आर. एस. (1951)–'एज्युकेशन साइकोलॉजी'।
3. बेस्ट, जॉन, डब्ल्यू (1957) – 'मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं विनोद मूल्यांकन', पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. अग्रवाल रामनारायण एवं अस्थाना विपिन–'आधुनिक मनोविज्ञान शिक्षण एवं मापन', आगरा।
5. बुच. एम. बी. (1975)–'दी सर्वे ऑफ रिसर्च ऑफ एज्युकेशन'।
6. बुच. एम. बी. (1984)–'ए सर्वे ऑफ रिसर्च इन एज्युकेशन', तृतीय संस्करण।
7. डॉ. कपिल एच. के.– 'अनुसंधान परिचय'।
8. गेरेट, हेनरी ई.–'शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग', नई दिल्ली, कल्याण पब्लिशंस।
9. गेस्ट, एन. डी.–'शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग'।
10. मंगल, एस. के. (1985) –'शिक्षा मनोविज्ञान', दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।
11. शर्मा, आर. ए. (1990) – 'शिक्षा अनुसंधान', मेरठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस।
12. सचदेवा, अनिल (2011) – 'सूचना के अधिकार', 2005
13. सिंधवीं रनिश (2012) – 'सूचना के अधिकार अधिनियम', 2005
14. राय, के. बी. (2009) – 'सूचना के अधिकार'।
15. जैन, राजीव कुमार (2009)– 'भारतीय लालफीताशाही पर सूचना अधिकार अधिनियम का असर', नई दिल्ली: भारतीय लोकप्रशासन संस्थान।
16. कटारिया, एस. के. (2009) – 'भारतीय प्रशासन के पुन: निर्माण में सूचना के अधिकार अधिनियम की भूमिका', नई दिल्ली: भारतीय लोकप्रशासन पत्र।
17. Singh, Shiv Sahay & Government must spend more money for awareness about RTIAct. www. indianexpress. com
18. Singh, Shalini (2012) & Genesis of Right to Information Act in, Research Journal of Social Science.
19. www.righttoinformation.org
20. rti.gov.in
21. www.rtiindia.org

****

मानवाधिकार शिक्षा

आरती खंडेलवाल * डॉ. अश्विनी कुमार गौड़ **

प्रस्तावना – HUMAN RIGHTS ARE SOMETIMES CALLED FUNDAMENTAL RLGHTS OR BASIC OR NATURAL RIGHTS.AS FUNDAMENTAL OR BASIC RIGHTS THEY ARE THOSE WHICH MUST NOT BE TAKEN AWAY BY ANY LEGISLATURE OR ANY ACT OF GOVERNMENT AND WHICH ARE OFTEN SET OUT IN CONSTITUTION.AS NATURAL RIGHTS THEY ARE SEEN AS BELONGING TO MEN WOMEN BY THEIR VERY NATURE.

-J.E.S. FAWCETT

मानवाधिकार और शिक्षा एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुडे मानव अधिकारों को समाज में स्थापित करने के लिए यह जरूरी है कि मानवीय गरिमा एंव प्रतिष्ठा के बारे में जन–जागरूकता लाई जाए। जागरूकता और चेतना के लिए शिक्षा ही सर्वाधिक उपयुक्त साधन है। इस दृष्टि से शिक्षा के अधिकार के अन्तर्गत ही मानवाधिकारों की शिक्षा भी शामिल है। यहाँ शिक्षा का उद्देश्य और उसका दायरा भी अत्यंत विस्तृत है। इसमें व्यक्तित्व का समग्र विकास सबसे महत्वपूर्ण है। जिसकी परिधि में बौद्धिक, मानसिक, नैतिक और शारीरिक विकास समाहित है। ऐसी शिक्षा ही समाज में शोषण और उत्पीडन पर रोक लगाने में कारगर सिद्ध हो सकती है। इसी से सम्वेदना सहिष्णुता और शान्ति का मार्ग प्रशस्त होगा। शिक्षा में सैद्धान्तिक पहलुओं के साथ–साथ व्यवहारिक पहलू पर विशेष रूप से ध्यान देना होगा। तभी हम जीवन की उन कठोर सच्चाईयों से परिचित हो सकेंगे जिसकी जड़ गरीबी,शोषण और भेदभाव की मानसिकता में हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि हम नौजवान पीढ़ी को अच्छे संस्कारों और गुणों से पोषित करें।

मानवाधिकार शिक्षा का अर्थ – संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकारों सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय विधेयक के अनुच्छेद 1 में कहा गया है कि 'सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र हैं तथा अधिकार व मर्यादा में समान हैं,उनमें विवेक तथा बुद्धि है तथा उन्हें एक–दूसरे के साथ भ्रातृत्व युक्त व्यवहार रखना चाहिए।'' मानवाधिकारों की शिक्षा का तात्पर्य मनुष्यों के प्रति सम्मान के भाव और इनके संरक्षण के लिए एक ऐसी कार्य संस्कृति का निर्माण करे जो प्रत्येक मनुष्य को मूलभूत अधिकारों व स्वतंत्रताओं के प्रति संवेदनशील तथा जागरूक बनाती हो। मानवाधिकार शिक्षा ही वह साधन है जो व्यक्ति के आर्थिक ,सामाजिक ,राजनीतिक व सांस्कृतिक उत्थान के लिए भेदभाव रहित समान अवसर उपलब्ध कराती है । साथ ही साथ न्याय और आत्मनिर्णय के अधिकार के संरक्षण में भी सहयोग प्रदान करती है। मानवाधिकार शिक्षा ही मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता, समझ, ज्ञान और कौशल विकसित कर एक सभ्य समाज का निर्माण कर सकती है ,जिसमें मानव की अन्तर्निहीत गरिमा का आदर होगा और मनुष्यों को सभी प्रकार के विभेद और तिरस्कार से निषिद्ध रखा जा सकेगा। भारत में जहाँ अशिक्षा, अज्ञानता और रूढ़ियों का मकड़जाल चारों तरफ फैला है ,वहाँ मानवाधिकारों की शिक्षा का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। मानवाधिकार शिक्षा ही सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण में बदलाव लाकर वह आधार प्रदान कर सकती है, जो समाज में वैमनस्यता रूढ़िवादिता तथा हिंसा को कम कर सहिष्णुता, समानता और शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व के माध्यम से मानवाधिकार हनन के मामलों में कमी आने में सहयोगी हो सकती है। इसके लिए हमें मानवाधिकार शिक्षा को प्रचारित, प्रसारित करना होगा।

मानवाधिकार शिक्षा की आवश्यकता – मानवाधिकार शिक्षा की सफलता के लिए सबसे आवश्यकता बातें शिक्षा और उच्चकोटि की सामाजिक चेतना हैं। यदि लोगों को राज्य के कार्यो में रूचि नहीं है और वे समाज की समस्याओं को नहीं समझते है तो मानवाधिकार केवल नाम के लिए होता है। समाज में जितने भी दोष बताए है,उन सबका प्रमुख कारण शिक्षा का अभाव हैं। शिक्षा ही समाज के व्यक्ति को जागरूक बनाती है और राज्य के कार्यो मे उनकी रूचि उत्पन्न करती हैं। अत: लोकतंत्र मे शिक्षा की महत्ती आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा ही व्यक्ति में ज्ञान ,रूचियों ,आदर्शों और शक्तियों का विकास करती है।

इनके विकास से ही व्यक्ति मानवाधिकार में अपना स्थान प्राप्त करता हैं। मानवाधिकार के लिए शिक्षा की आवश्यकता बताते हुए एक शिक्षाविद् ने लिखा है, **'मानवाधिकार शिक्षा की माँग शिक्षित व्यक्ति हैं ।'** डीवी ने भी मानवाधिकार की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है **'समाज एंव राज्य में इस प्रकार की शिक्षा होनी चाहिए ,जिससे व्यक्तियों को सामाजिक सम्बन्ध और नियंत्रण में व्यक्तिगत रूचि हो और उनमें ऐसी मानसिक आदतों का निर्माण हो जिनसे अव्यवस्था उत्पन्न हुए बिना सामाजिक अधिकारों को प्राप्त करे ।'**

मानवाधिकार शिक्षा के उद्देश्य – मानवाधिकार शिक्षा का प्रमुखत: उद्देश्य व्यक्ति को उसके अधिकारों से परिचित कराना होता है । इसी के साथ मानवाधिकार शिक्षा का लक्ष्य विश्व के सभी मनुष्यों को मानवता की साझी भाषा सिखाना हैं । जिसके माध्यम से विश्व शांति की स्थापना के साथ–साथ मानवाधिकारों के सम्मान व संरक्षण को प्रतिदिन के कार्य व्यवहार की संस्कृति का हिस्सा बनाना है । इसके लिए मानवाधिकार शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्यों को सुझाया जा सकता है–

* शोधार्थी (शिक्षा) पेसेफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** प्रिंसिपल, कृष्णा महिला टीचर्स ट्रैनिंग कॉलेज, सीसारमा, उदयपुर (राज.) भारत

1. मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य छात्रों के अन्त:करण में शांति का विकास करना है, जिसमें उनमें दया और सहिष्णुता की भावना जाग्रत हो। वे दूसरों के साथ अहिंसात्मक सद्वृत्तियों युक्त व्यवहार कर सकें।
2. मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य नागरिको की सांस्कृतिक विरासत का सम्मान करना ,पर्यावरण की रक्षा करना और उत्पादन उपभोग के ऐसे मार्ग सिखाता है जो देश के स्थायी विकास में सहायक हो।
3. मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य नागरिको में अपने मार्ग के चयन का ज्ञान विवेकयुक्त तरीके से करने की योग्यता का विकास करना है।
4. मानवाधिकार स्वतंत्रता को समझने की योग्यता और चुनौतियों का सामना करने के कौशलो का विकास करना मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य है।
5. व्यक्तियों के पूर्ण विकास के राष्ट्र निर्माण में सहायता प्रदान करने हेतु लोगों के व्यवहार को परिवर्तित करना।
6. लोगों को मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्द्धन की शिक्षा देना।
7. संसार के विभिन्न जातीय , राष्ट्रीय ,भाषायी ,धार्मिक और सांस्कृतिक समूहो के बीच एकात्मकता की भावना का विकास करना।
8. संयुक्त राष्ट्र संघ के शांति व मानवीय विकास सम्बन्धी प्रयासो की जानकारी देकर , इन प्रयासो को बढ़ावा देना।
9. लोगों को पूर्वाग्रहों को छोडने और दूसरों के प्रति दुर्भावनाओं को त्यागने के लिए तैयार करना।
10. एक स्वतंत्र समाज में मनुष्य को उसकी कारगर भूमिका के लिए तैयार करना।

मानवाधिकार शिक्षा के उपागम एंव विधियाँ

1 राष्ट्रीय उपागम– इसके अन्तर्गत संविधान या कानून द्वारा व्यक्ति को प्रदान किए गए अधिकारों को प्रस्तुत किया जाता है। बहुत से राष्ट्र इस उपागम का प्रयोग नागरिक शिक्षा के कार्यक्रम के अन्तर्गत करते है।

2 तुलनात्मक उपागम– इसमें दूसरे देशों या विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्तियों को प्रदान किए अधिकारों को आधार बनाया जाता हैं। इसमें विभिन्न देशों की समानताओं एंव विषमताओं को स्पष्ट किया जाता है।

3 अन्तर्राष्ट्रीय उपागम–इसमें संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1948 में जारी किए गए मानवाधिकार घोषणा –पत्र के अध्ययन पर बल दिया जाता है।

मानवाधिकार शिक्षा के शिक्षण के लिए शिक्षा– संस्थाओं में व्याख्यान विधि के अतिरिक्त सामूहिक तकनीकों पर बल दिया जाता है। इनमें से प्रमुख इस प्रकार है –

1. सामूहिक विचार–विमर्श
2. सेमिनार
3. केस स्टडी पद्धति
4. अभिनय
5. वाद–विवाद प्रतियोगिता
6. प्रदत्त कार्य
7. प्रतिवेदन तैयार करना
8. सिम्पोजिया आदि।

मानवाधिकार शिक्षा के लिए जनसंचार के साधनों रेडियों, टी.वी. समाचार पत्र, बुलेटिन,मैंग्जीन,सामुदायिक केन्द्र आदि का भी प्रयोग किया जाता है। मानवाधिकारों की विषय–वस्तु का क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद किया जा रहा है, जिससे विश्व के अधिकाधिक नागरिकों को इनके प्रति जागरूक किया जा सकें।

विभिन्न स्तरों के अनुकूल मानवाधिकार शिक्षा – मानवाधिकार शिक्षा की आवश्यकता समाज में किसी एक विशेष आयु–वर्ग या एक विशेष वर्ग हेतु नहीं है,अपितु सभी स्तरों पर मानवाधिकार शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक को मानवाधिकार के प्रति जागरूक बनाया जा सके। औपचारिक व अनौपचारिक रूप में निम्न स्तरों पर दी जा सकती है–

प्राथमिक स्तर पर – इस स्तर पर विद्यार्थियों को उनके बाल ज्ञान के आधार पर इस विषय का ज्ञान बाल कहानियों और कविताओं के द्वारा कराया जाना चाहिए, जिससे यह विषय उनके लिए रोचक बन जाएगा।

माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर – इस स्तर पर विद्यार्थियों को अपने देश के संदर्भ में मानवाधिकारों और उसके संगठन के बारे में शिक्षा दी जानी चाहिए।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर – इस स्तर पर विद्यार्थियों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार,उसका संगठन तथा वर्तमान क्रियाकलापों का अध्ययन कराया जाना चाहिए।

स्नातक स्तर पर – इस स्तर पर आवश्यक है कि इसे आधार पाठ्यक्रम में शामिल किया जाए तथा मानवाधिकार संबन्धी प्रश्नों को प्रश्न पत्र में करना अनिवार्य कर दिया जाए।

स्नातकोत्तर स्तर पर – इस स्तर पर अन्य विषयों से मानवाधिकारों को अलग विषय के रूप में विस्तृत पढ़ाया जाए तथा अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में मानवाधिकार का अध्ययन कराया जाए।

शिक्षकों में मानवाधिकार के प्रति जागरूकता का विकास करने के उपाय

1. मानवाधिकार सम्बन्धित सेमिनार व गोष्ठियों का आयोजन किया जाना चाहिए।
2. प्रत्येक विद्यालय में मानवाधिकारों से संबन्धित पत्र–पत्रिकाओं को मंगवाया जाना चाहिए।
3. विद्यालयों और महाविद्यालयों में अध्यापकों के लिए मानवाधिकारों से संबन्धित प्रशिक्षण का आयोजन किया जाना चाहिए।

सामाजिक स्तर पर मानवाधिकार के प्रति जागरूकता करने के उपाय–

1. बाल श्रमिकों,मजदूरों तथा महिलाओं के प्रति उत्पीडन को रोकने व उनमें जागरूकता विकसित करने के लिए विशेष अभियान चलाया जाना चाहिए।
2. मानवाधिकारों संबंधी विशेष सभाओं का आयोजन पोस्टरों व बैनरों के साथ किया जाना चाहिए।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में मानवाधिकारों से संबन्धित फिल्मों,नाटकों,नुक्कड नाटकों आदि का प्रदर्शन किया जाना चाहिए।
4. जिन विभागों में सबसे अधिक मानवाधिकारों का उल्लंघन किया जाता है, उस विभाग के अधिकारियों तथा कर्मचारियों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

निष्कर्ष – मानवाधिकारों की शिक्षा मानवीय मूल्यों, मानवीय गरिमा, निष्पक्ष, शोषण विहीन मानवीय विकास का साधन है, इस दृष्टि से यह मानवाधिकार राष्ट्र की संचेतना एवं सुरक्षा का प्रभावी एवं महत्त्वपूर्ण साधन भी है। मानवाधिकार शिक्षा प्रदान करने वाली शिक्षण संस्थाओं को अधिक से अधिक प्रोत्साहन के लिए अलग से सम्मेलन, संगोष्ठियों तथा कार्यशाला आदि का आयोजन किया जाना चाहिए। जहाँ मानवाधिकार शिक्षा प्रदान करने वाले अध्यापकों की रूचि को परिवर्तित किए जाने पर विशेष बल दिया जा सके। मानवाधिकार शिक्षा को बढ़ावा देने में जहाँ सरकार धन

उपलब्ध करा कर गैर–सरकारी संगठनों को सहयोग प्रदान कर सकती है वहीं गैर–सरकारी संगठनों द्धारा बनाए गए कार्यक्रमों व नीतियों को क्रियान्वित करने में सरकार को सहयोग प्रदान कर सकते हैं।हमारे देश की सरकार 'मानवाधिकार' को लेकर सजग है,किन्तु इस सजगता में और अधिक धार लाने की जरूरत है।

अंत में यही कहना चाहूँगी–

'सुख सुविधा से सब जुडे,न हो किसी की हार,
सबके जीवन को मिले,मानव का अधिकार।।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पुस्तक – शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में उदीयमान भारतीय समाज, लेखक – डॉ. राकेश बुडानियाँ,वेद प्रकाश प्रकाशक – कल्पना पब्लिकेशन, जयपुर
2. पुस्तक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, लेखक – पी.डी.पाठक प्रकाशक – विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
3. पुस्तक – शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार, लेखक : डॉ.डी.पी.सिंह प्रकाशक।
4. मानवाधिकार शिक्षा – माध्यम– इंटरनेट।

****

माध्यमिक स्तर के शहरी व ग्रामीण विद्यार्थियों में खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. राजेन्द्र कुमार *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य माध्यमिक स्तर के शहरी व ग्रामीण विद्यार्थियों में खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन करना है। इस अध्ययन हेतु वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि को अपनाते हुए न्यादर्श के रूप में 200 विद्यार्थियों का आकस्मिक चयन विधि से चयन किया गया है। प्रदत्तों के संकलन हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है।

प्रस्तावना –प्रत्येक प्राणी एक असहाय शिशु के रूप में इस संसार में प्रवेश करता है। उसका समस्त आचरण उसकी जन्मजात प्रवृत्तियों द्वारा संचालित होता है। यदि इन प्रवृत्तियों को स्वभाविक रूप में ही विकसित होने दिया जाए, तो मनुष्य व पशु में कोई अन्तर नहीं रहता। मानव जाति आज जिस सभ्यता एवं संस्कृति के शिखर पर पहुंच गई है, वह उसकी मूल प्रवृत्तियों के परिवर्तन का ही परिणाम है, परन्तु मूल प्रवृत्तियों को शोधित तथा परिवर्तित शिक्षा द्वारा ही किया जाता है। शिक्षा माता के समान पालन–पोषण करती है, पिता के समान उचित मार्गदर्शन द्वारा अपने कार्यों में लगाती है तथा पत्नी की भांति सांसारिक चिन्ताओं को दूर करके प्रसन्नता प्रदान करती है। शिक्षा के द्वारा ही हमारी कीर्ति का प्रकाश चारों ओर फैलता है तथा शिक्षा ही हमारी समस्याओं को सुलझाती है एवं हमारे जीवन को सुसंस्कृत बनाती है।

शोध की आवश्यकता व महत्व – व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए व्यवस्थित शिक्षा का प्रबन्ध परम आवश्यक है। कोई भी व्यक्ति यदि अपने सामाजिक जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहता हो तो उसके लिए शिक्षित होना एक अनिवार्यता हो जाती है। बालक जन्म से ही कुछ मूल प्रवृत्तियाँ लेकर उत्पन्न होता है। इन मूल प्रवृत्तियों के समुचित व व्यवस्थित विकास के लिए ही शिक्षा की आवश्यकता होती है। शिक्षा बालक की मूल प्रवृत्तियों का समुचित शोधन तथा मार्गान्तीकरण करके उसे अन्य प्राणियों से उच्चतर बनाती है।

समस्या कथन – 'माध्यमिक स्तर के शहरी व ग्रामीण विद्यार्थियों में खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन।'

शोध के उद्देश्य –

1. ग्रामीण व शहरी छात्रों की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन।
2. ग्रामीण व शहरी छात्राओं की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएँ –

1. ग्रामीण व शहरी छात्रों की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. ग्रामीण व शहरी छात्राओं की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में अनुसंधानकर्त्ता ने श्रीगंगानगर जिले के 4 विद्यालयों के 200 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया है।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण –

1. **शारीरिक शिक्षा –** शारीरिक शिक्षा वह शिक्षा है जो स्वस्थ शारीरिक विकास हेतु विभिन्न आंगिक क्रियाओं एवं कार्यक्रमों द्वारा दी जाती है।
2. **ग्रामीण विद्यालय –** वे विद्यालय, जो ग्रामीण क्षेत्रों में हैं, उन्हें ग्रामीण विद्यालय कहा जाता है।
3. **शहरी विद्यालय –** वे विद्यालय, जो शहरी क्षेत्रों में हैं, उन्हें शहरी विद्यालय कहा जाता है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्ता द्वारा स्वनिर्मित प्रश्नावली का उपयोग किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध कार्य में मूल आंकड़ों का विश्लेषण करने हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात निकाला गया है।

परिकल्पनाओं की विवेचना – प्रस्तुत शोध में उद्देश्यों के आधार पर परिकल्पनाओं का विश्लेषण निम्नलिखित रूप में किया जा रहा है –

परिकल्पना सं. 1 – ग्रामीण व शहरी छात्रों की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी संख्या 4.1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी से स्पष्ट है कि ग्रामीण व शहरी छात्रों की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का मध्यमान क्रमश: 37.08 एवं 34.16 है तथा मानक विचलन क्रमश 5.39 एवं 5.17 है, जो कि स्वातन्त्रय संख्या 48 के निर्धारित 0.5 विश्वास स्तर पर निर्धारित मूल्य तथा 0.1 विश्वास स्तर पर निर्धारित मूल्य से कम है। अत: उपरोक्त परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और कहा जाता है कि ग्रामीण व शहरी छात्रों के खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में अन्तर नहीं है।

परिकल्पनाओं की विवेचना – प्रस्तुत शोध में उद्देश्यों के आधार पर परिकल्पनाओं का विश्लेषण निम्नलिखित रूप में किया जा रहा है –

परिकल्पना सं. 2 – ग्रामीण व शहरी छात्राओं की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी संख्या 4.2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी से स्पष्ट है कि ग्रामीण व शहरी छात्राओं की खेलों के प्रति रूचि

* डीन (शिक्षा) श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

में कमी के कारणों का मध्यमान क्रमश: 39.84 एवं 43.96 है तथा मानक विचलन क्रमश 8.2 एवं 6.71 है, जो कि स्वातन्त्रय संख्या 48 के निर्धारित 0.5 विश्वास स्तर पर निर्धारित मूल्य तथा 0.1 विश्वास स्तर पर निर्धारित मूल्य से कम है। अत: उपरोक्त परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और कहा जाता है कि ग्रामीण व शहरी छात्राओं की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में अन्तर नहीं है।

परिकल्पना 1 – ग्रामीण व शहरी छात्रों की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में सार्थक अन्तर नहीं है।

निष्कर्ष – परिकल्पना एक के अनुसार, जो कि आंकड़ों के मध्यमान, मानक, विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात के प्राप्तांकों के आधार पर स्वीकृत हुई है, के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण व शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में खेलकूद के प्रति कमी पायी गयी।

परिकल्पना 2 – ग्रामीण व शहरी छात्राओं की खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों में सार्थक अन्तर नहीं है।

निष्कर्ष – परिकल्पना दो के अनुसार, जो कि आंकड़ों के मध्यमान, मानक, विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात के प्राप्तांकों के आधार पर स्वीकृत हुई है, के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण व शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं में खेलकूद के प्रति कमी पायी गयी।

शोध की उपयोगिता – प्रस्तुत शोध निष्कर्षों में पाया गया कि विद्यार्थियों में खेलकूद रूचियों द्वारा उनके अन्दर विद्यमान छिपी हुई गतिविधियों को उजागर करने में सहायक होती है। अत: प्रस्तुत शोध अध्ययन विद्यार्थियों की खेलकूद रूचियों में सकारात्मक प्रभाव डालकर उन्हें सामाजिक तथा नागरिक कर्त्तव्यों की ओर उन्मुख करने में सहायक साबित होगा। विद्यार्थियों खेलकूद की उपादेयता समझ सकेगें।

भावी शोध हेतु सुझाव – किसी भी विषय पर किया गया शोधकार्य सम्पूर्ण या अन्तिम नहीं हो सकता है। एक ही विषय के विभिन्न पक्षों पर भविष्य में भी शोधकार्य होते रहते है। खेलकूद रूचियाँ भी एक व्यापकता से परिपूर्ण है अत: इसके अनेक पक्ष है। प्रस्तुत शोध में केवल 'माध्यमिक स्तर के शहरी व ग्रामीण विद्यार्थियों में खेलों के प्रति रूचि में कमी के कारणों का तुलनात्मक अध्ययन' का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। भविष्य में खेलकूद रूचियों के सन्दर्भ में निम्नलिखित शोधकार्य किए जा सकते है।

1. प्रस्तुत शोधकार्य में न्यादर्श 200 विद्यार्थियों तक ही सीमित रखा गया है किन्तु भावी शोध में अधिक से अधिक विद्यार्थियों पर शोध किया जा सकता है।
2. इस शोधकार्य को खेलकूद रूचियों तक ही सीमित रखा गया है लेकिन भावी शोध में अधिक पाठ्य सहगामी क्रियाओं का समावेश किया जा सकता है।
3. भावी शोध कार्य को सम्पन्न करने के लिए अधिक से अधिक महाविद्यालयों को न्यादर्श में सम्मिलित किया जा सकता है।
4. प्राथमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर, कॉलेज स्तर एवं एस.टी.सी. स्तर पर खेलकूद रूचियों का अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. शर्मा आर. ए. – 'शिक्षा अनुसंधान', आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
2. के. एन. नागर – 'सांख्यिकी के मूल तत्व', मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
3. डॉ. जायसवाल सीताराम – 'शिक्षा दर्शन' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. डॉ. चौबे सरयू प्रसाद – 'शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार' राजस्थान प्रकाशन, जयपुर।

सारणी संख्या 4.1

क्रं.सं.	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य	सार्थकता स्तर
1	ग्रामीण छात्र	25	37.08	5.39	1.95	0.01
2	शहरी छात्र	25	34.16	5.17		0.05

$df = N_1 + N_2 - 2 = 25 + 25 - 2 = 48$

सारणी संख्या 4.2

क्रं.सं.	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य	सार्थकता स्तर
1	ग्रामीण छात्राएँ	25	39.84	8.20	1.95	0.01
2	शहरी छात्राएँ	25	43.96	6.71		0.05

df = N1 + N2 - 2 = 25 + 25 - 2 = 48

****

शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर एक अध्ययन

डॉ. निशा श्रीवास्तव * हितेश्वरी रावते ** पिंकी देवांगन ***

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर एक अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर अध्ययन करना है। प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श हेतु अशासकीय एवं शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के 200 शिक्षकों (अशासकीय के 100 शिक्षकों 50 महिला एवं 50 पुरूष तथा शासकीय के 100 शिक्षकों 50 महिला एवं 50 पुरूष) का चयन किया गया है। तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता के अध्ययन हेतु एस. राजशेखर एवं के. साथिया राज द्वारा निर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है। प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण 'टी' मूल्य द्वारा किया गया है।

प्रस्तावना – गोयल (2006) ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षकों का तकनीकी शिक्षण शास्त्र का अध्ययन किया। शोध अध्ययन के अनुसार शिक्षा संस्था में तकनीकी शिक्षण शास्त्र एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है तथा शिक्षक प्रशिक्षण में तकनीकी शिक्षण शास्त्र कौशल की पर्याप्त रूप से आवश्यक है। **के. सत्यराज एवं एस. साथियाराज (2012)** ने विकास और तकनीकी शैक्षणिक योग्यता के पैमाने की मापन का अध्ययन किया। शोध अध्ययन के अनुसार तकनीकी शैक्षणिक योग्यता के अध्ययन में समय की आवश्यकता है। **राजशेखर एस. एवं सिंगरवेल के.(2013)** ने कुडडालोर जिला के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों में तकनीकी शिक्षण शास्त्र की दक्षता का अध्ययन किया। शोध अध्ययन के अनुसार शिक्षकों की तकनीकी शैक्षणिक योग्यता में सुधार करने के लिए उपाय खोजने की आवश्यकता हैं। **के. सत्यराज और एस. राजशेखर (2013)**ने उच्चतर माध्यमिक स्कूल के शिक्षकों में तकनीकी शैक्षणिक योग्यता और शिक्षण प्रतिमान के उपयोग के बीच संबंध का अध्ययन किया। शोध अध्ययन के अनुसार शिक्षण प्रतिमान के उपयोग एवं तकनीकी शैक्षणिक योग्यता के मध्य नकारात्मक संबंध है, तथा शिक्षको की तकनीकी शैक्षणिक योग्यता में सुधार आवश्यक है। **सिंग (2015)** ने प्रभावी शिक्षण के लिए शैक्षणिक गुणवत्ता का अध्ययन किया। शोध अध्ययन के अनुसार शिक्षकों को प्रभावशाली शिक्षण के लिए तकनीकी शिक्षण शास्त्र का प्रयोग आवश्यक बताया।

उद्देश्य –

- शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर तुलनात्मक अध्ययन करना।
- महिला शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर तुलनात्मक अध्ययन करना।
- पुरूष शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर तुलनात्मक अध्ययन करना।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श हेतु अशासकीय एवं शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के 200 शिक्षकों (अशासकीय के 100 शिक्षकों 50 महिला एवं 50 पुरूष तथा शासकीय के 100 शिक्षकों 50 महिला एवं 50 पुरूष) का चयन किया गया है।

उपकरण – प्रस्तुत शोध में तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता के अध्ययन हेतु एस. राजशेखर एवं के. साथिया राज द्वारा निर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है।

परिकल्पना एवं विश्लेषण–

H_{01} – शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

सारणी क्रमांक 1(देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक – 1 का अवलोकन करने पर df =198 पर t का मान 2.81 प्राप्त हुआ। 0.05 स्तर पर t का मान सार्थक अंतर है। अत: स्पष्ट है कि शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर पाया गया। अत: परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

H_{02} – महिला शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सारणी क्रमांक 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक – 2 का अवलोकन करने पर df =98 पर t का मान 0.12 प्राप्त हुआ। 0.05 स्तर परीं का मान सार्थक अंतर नहीं है। अत: स्पष्ट है कि महिला शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर नही पाया गया। अत: परिकल्पना स्वीकृत होती है।

H_{03} – पुरूष शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सारणी क्रमांक 3(देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक – 3 का अवलोकन करने पर df=98 पर t का मान 2.15 प्राप्त हुआ। 0.05 स्तर परीं का मान सार्थक अंतर है। अत: स्पष्ट है

* विभागाध्यक्ष (शिक्षा) घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (शिक्षा) घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत
*** शोधार्थी, घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत

कि पुरूष शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर पाया गया। अत: परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

निष्कर्ष – अशासकीय एवं शासकीय शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर अंतर पाया गया क्योंकि अशासकीय में शिक्षकों को तकनीकी शिक्षण शास्त्र की जानकारी समय-समय पर कार्यशाला आयोजित कर व विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा शिक्षा दी जाती है तथा उन्हें शिक्षा में होने वाले परिवर्तनों के बारे में भी ज्ञान प्रदान किया जाता है, अशासकीय विद्यालय के अभिभावक ज्यादातर शिक्षित होते है वे भी अपने बच्चों को उचित मार्गदर्शन देते है। इसके विपरित शासकीय क्षेत्रों के विद्यालय में तकनीकी शिक्षण शास्त्र के प्रयोग का आभाव है तथा बच्चों को पर्याप्त ज्ञान नही मिल पाता है । अत: शिक्षकों के तकनीकी शिक्षणशास्त्र दक्षता पर सार्थक अंतर पाया गया।

सुझाव–तकनीकी का हमारे जीवन में बहुत महत्व है, विभिन्न प्रकार के सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए नयी नयी तकनीकियों का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक युग में प्रगति के मार्ग को प्रशस्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है। तकनीकी के नये नये शोध तकनीकी जीवन को नित्य नयी दिशा प्रदान करती है। सूचनाओं को तकनीकी के माध्यम से एकत्र करना हमारे शिक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक हो गया है। आज भी देश के बहुत ऐसे क्षेत्र है, जहाँ तकनीकी के प्रयोग से व्यक्ति अछूता ही नहीं अंजान भी है। देश की अधिकांश जनसंख्या तकनीकीयों का प्रयोग करना भी नहीं जानती है। जिस कारण वह महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त करने में असमर्थ हो जाती हैं। जिस कारण देश के विकास में बाधा उत्पन्न होती है। विद्यालयों को शिक्षणशास्त्र दक्षता से संबंधित अंतरशालाये प्रतियोगिता का आयोजन किया जाना चाहिए। उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के पाठ्यक्रम में शिक्षणशास्त्र दक्षता को समावेश किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Asthana, B. (2005), Measurement And Evaluation In Psychology And Educational, Vinod Pustak Mandir,Agra,630-642.
2. Barodiya, A., & Agrawal, N. Methodology Educational Research And Educational Statics. Agra: Radha Prakasan Mandir,18-44
3. Dubey, R.(2002-4), Bases Of Educational And Vocational Guidance,Vasundhara Prakashan: Gorakhpur, 227-245.
4. Goel Chhaya & Goel D.R. (2006),Techno Pedagogy In Teacher Education. Anweshika Indian Journal Of Teacher Education Vol.3, No.1,Pp70-78.
5. Gloria R. & Edwarrd William Benjamin A.(2011), Techno Pedagogical Skill In Teacher Education. International Journal Of Scientific Research Vol.2 , Issue 12, Pp 91-91.
6. Lovat Terence & Hawkes Neil (2013), Value Education: A Pedagogical Imperative For Student Wellbeing. International Educational Research Vol 2 , No 2, Pp1-6.
7. Rajsekar & Sathiyaraj K.(2012),Development And Standardization Of A Techno Pedagogy Competency Scale (Tpcs).International Journal Of Teacher Educational Research(Ijter) Vol 1, No 3, Pp8-21.

सारणी क्रमांक 1

क्र.	चर	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	'टी मूल्य
1	अशासकीय शिक्षकों	100	102.93	34.23	2.81**
2	शासकीय शिक्षकों	100	91.74	20.51	

स्वतंत्रता कोटि df = 198 P <0.05 सार्थक अंतर है

**0.01 स्तर पर सार्थकता, *0.05 स्तर पर सार्थकता, •• Not Significant

सारणी क्रमांक 2

क्र.	चर	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	'टी मूल्य
1	अशासकीय शिक्षक	50	96.12	27.31	0.12••
2	शासकीय शिक्षक	50	95.4	28.28	

स्वतंत्रता कोटि df = 98 P >0.05 सार्थक नही है

**0.01 स्तर पर सार्थकता, *0.05 स्तर पर सार्थकता, •• Not Significant

सारणी क्रमांक 3

क्र.	चर	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	'टी मूल्य
1	अशासकीय शिक्षक	50	109.76	38.78	2.15*
2	शासकीय शिक्षक	50	95.16	27.99	

स्वतंत्रता कोटि df = 98 P <0.05 सार्थक अंतर है

**0.01 स्तर पर सार्थकता, *0.05 स्तर पर सार्थकता, •• Not Significant

****

Aspects And Indicators Of Women Empowerment In Indian Context

Dr. Bharti Joshi *

Introduction - There is a vital importance of the terms such as role, empowerment and function for an understanding of society. These terms tell us how individual and groups organize themselves as well as relate to each other. Role tells us about what is expected from individuals in a particular situation. While empowerment deals with her or his expectations arising out of the situation. Similarly, a role deals with duties and obligations wile empowerment deals with rights. For instance, it is commonly assumed that the most is a woman, a wife a cook, a teacher of her children and daughter-in-law and so on. "Woman reposes more closely on the central surface of life, while man hunts it in the boundaries of existence, always concerned to overcome, and in the last analysis, to kill. A woman has a secret alliance with eternal life and man with the principle of death. Woman wants to embrace the contradiction of life and to reconcile them in the act of degree so. Man on the other hand releases the tension between opposites by annihilating one of the sides, the one he finds unpleasant. He seeks the solution not in love and reconciliation, but in over coming and annihilation. He has a militant and not an erotic manner. The male principle borne of isolation, makes solitude thermal, seeks being in itself and disturbs life as a wholes his being is battle and self service, his will to- life is concerned with ascertaining his own person or overthrowing that of the stranger until the motive of salvation kindles with in him. Woman with her sustaining constitutions is at one and is harmony with the basis of the world. But man wants to change the world to bring it forward to overcome it".

Modern India witnessed some developments in the status of women. There were many women reformers in India who worked for the betterment and upliftment of their other female counterparts. The begum of Bhopal discarded the 'Pardha' and fought in the revolt of 1957. Many reformers like Ishwar Chandra Vidyasagar, Jyotiba Phule with his wife Savitribai Phule undertook various measures to eradicate social stigmas from the society. Sir Sayyid Ahmad Khan established the Aligarh Muslim University for the spread of education among the Muslims. He also abolished the purdha system among Muslim women. Many Acts were passed for the upliftment of women among those Widow Remarriage Act of 1856 was important. In the modern times, women in India are given freedom and rights such as freedom of expression and equality, as well as right to get education. But still problems like dowry, female infanticide, sex selective abortions, health, domestic violence, are prevalent in the society. Unfortunately, women are illiterate as they have very poor knowledge about exercising their rights properly. India has a low female sex ratio. Female infanticide (killing of girl infants) is still prevalent in some rural areas of the country. Dowry is the root of many problems in India. Women in post Independent India faced a major upheaval as regards their position, perception and role in society. In the period immediately following Independency, a number of constitutional provisions were made for women's social, economic and political benefits. However, the most revolutionary change in the position and role of women in the post Independent period was brought about by the equality of women.Indian women in poetics are seen participating in great numbers today. Despite the initial hurdles of women's participation in the political arena and their participation today remains stronger than ever.

Different authors have also described the concept of women's empowerment differently. A key factor in all definitions, however, is that gender empowerment relates to the ability of women to manage their lives. While empowerment has been described as both a state and a process in the literature, **World Bank Institute (2007),** according to **Duflo (2005)** and **Kabeer (2005)** in stressing that empowerment is a process, which leads towards a state in which women are empowered. That is, empowerment involves an improvement in women's ability to manage their own lives. This is obtained through increased access to key re-sources and activities, as stressed by **Duflo (2005)** "…gender empowerment defined as improving the ability of women to access the constituents of development – in particular health, education, earnings opportunities, rights, and political participation." This understanding of women's empowerment gives a direct link between empowerment and equality of opportunities. The process of empowering women will improve their ability to manage their lives, i.e. it improves their access to education, access to formal sector employment, access to entrepreneurship, access to finance, control over fertility etc. This improved ability to manage their own lives entails an expansion of women's opportunities in the direction of

*H.O.D., Lifelong Learning, Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA

equal opportunities in comparison with men. Different aspects of empowerment can be briefly summarized to understand the concepts discussed above:

- Gender equality refers to a state in which men and women have equal opportunity-ties, which does not imply equality of outcomes in all spheres of life.
- Women's participation refers to women's share and role in various activities in society.
- Empowerment is the process of increasing women's ability to manage their own lives through increased access to key resources and activities.

Aspects of Empowerment - As stated above, the process of empowerment is about improving women's ability to manage their own live through increased access to key resources and activities. This may involve a wide range of aspects, which can be grouped in different ways, UNFPA**, Mayoux (2000)** and **World Bank Institute (2007)** A general feature of the empowerment aspects discussed in the literature is that they involve -

Educational Empowerment - Important aspects in the women's empowerment are access to education and their educational attainment. UNFPA refers to this category as educational empowerment. In the following, educational empowerment will not be considered as a separate empowerment dimension, because it is believed that the essence of educational empowerment is encompassed by a combination of economic, social and legal and political empowerment. A household is understood here as a group of people who share a home and a pool of resources. Often some household members will have a common ancestor. **Mayoux (2000)** and World Bank Institute (2007) both work with this category.

- Access to and control of various material and non-material resources.
- Participation in and power over various market and non-market processes and activities at different levels in society.

Economic Empowerment - Another aspect of women empowerment that is also part of all the classifications reviewed relates to women's economic opportunities. Key aspects of this type of empowerment are women's access to formal sector employment, self-employment, borrowing, saving and access to and control of economic resources. Economic empowerment would be an increase in women's control of household resources or an increase in women's access to borrowing in the financial markets.

Legal Empowerment - Another aspects, which is often (but not always) present in the classifications of empowerment reviewed, relates to women's roles as social actors in the community and in the household. Key aspects in this group are legal rights, status and norms. Two examples of legal empowerment are: (i) the removal of legislation which constrains women from divorce, and (ii) assistance directed at in- forming women of their legal rights. Norms are in this report10 defined as rules of conduct or expectations for the behavior of members of society. This implies a potentially close relationship between norms and laws as laws can be influenced by norms and vice versa. Likewise, failure to comply with norms is also associated with sanctions.

Social Empowerment - an example of social empowerment is the change of social norms that prevent women from working in the formal labour market. This is obviously a more operational definition, disregarding the potentially very complex relationship between formal vs. informal, tacit vs. explicit and beliefs vs. behavior.

Indicators of Empowerment -

- Understanding that empowerment is a complex issue with varying interpretations in different societal, national and cultural contexts, the participants also came out with a tentative listing of indicators.

At the level of the individual woman and her household-

- Participation in crucial decision-making processes
- Extent of sharing of domestic work by men
- Extent to which a woman takes control of her reproductive functions and decides on family size
- Extent to which a woman is able to decide where the income she has earned will be channeled to
- Feeling and expression of pride and value in her work;
- Self-confidence and self-esteem and ability to prevent violence at the community and/or organizational
- Existence of women's organizations, allocation of funds to women and women's projects;
- Increased number of women leaders at village, district, provincial and national levels;
- Involvement of women in the design, development and application of technology
- Participation in community programmes, productive enterprises, politics and arts;
- Involvement of women in non-traditional tasks
- Increased training programmes for women; and exercising her legal rights when necessary.

At the National level -

- Awareness of her social and political rights
- Integration of women in the general national development plan
- Existence of women's networks and publications;
- Extent to which women are officially visible and recognized; and
- The degree to which the media take heed of women's issues.

Women's empowerment in India is a process. It is the process by which women become social agents, defining and accomplishing their goals. It requires strong determination and a willingness to take proactive steps to achieve those goals. And it also requires institutional support from both women's organizations and the micro financial institutions that are in the best position to grant women the benefit of access to a physical resource and enable them to use it in a way that benefits their well-being, the well-being of their families, and the well-being of their community. Many national and international development organizations should take initiatives

to this concept of accessibility.

References :-

1. **Bryld, E. (2001) -** Democratization, Volume 8, Issue 3 Autumn 2001 , pages 149 – 172
2. **DFID (2007) -** Gender Equality Action Plan 2007-2009 making faster Progress to Gender Equality. A DFID Practice Paper, UK.
3. **Kabeer, N. (2005) -** Gender equality and women's empowerment - a critical analysis of the third Millennium Development Goal. Gender and Development 13(1), pp. 13-24
4. **Marcelle, G. (2002)** - Information and Communication Technologies (ICT) and their Impact on and use as an Instrument for the Advancement and Empowerment of Women.
5. **Mayoux, Linda(2000) -** Women Empowerment VS Sustainability -Towards a New Paradigm in Microfinance Programs. In Lemire, Beverly, Pearson, Ruth & Campbell, Gail, Women and Credit, Researching the Past, Refiguring the Future, New York-245-269.
6. **National Commission for Women, New Delhi. (1998) -** Report on scheduled caste women in agriculture. New Delhi - NCW. 110 p.
7. **Nayak, Purusottam and Mahanta, Bidisha(2008)-** Women Empowerment in India (December, 24, 2008). Available at SSRN: http:/ssrn.com
8. **Women in India(2010) -** Informative & Research article on Women in India, free e- magazine, www.indianwomen.com
9. **World Bank. (2001) -** Engendering Development: Through Gender Equality in Rights, Resources and Voice—Summary. Washington: World Bank. Retrieved 16 February 2004 from www.worldbank.org/gender/prr/engendersummary.pdf
10. **World Bank Institute (2007)** - Empowerment in Practice: Analysis and Implementation – A World Bank Learning Module.

****

Analysis Of Emotional Intelligence Of Married And Unmarried Women

Dr. Rashmi Sharma *

Abstract - Every individual is unique that's why they react differently even in same situations. emotional intelligence is an entity that makes difference in individuals reaction in different situations. Present study is an attempt to analyse emotional intelligence among married and unmarried women. There are so many factors that may cause variation in emotional intelligence among women. In present study only marital status have been considered to analyse emotional intelligence among women.

Introduction - Emotional intelligence is the ability to identify and manage your own emotions and the emotions of others. It is generally said to include 3 skills -

1. Emotional awareness, including the ability to identify your own emotions and those of others;
2. The ability to harness emotions and apply them to tasks like thinking and problems solving;
3. The ability to manage emotions, including the ability to regulate your own emotions, and the ability to cheer up or calm down another person.

Emotional intelligence (EI) or **emotional** quotient (EQ) is the capacity of individuals to recognize their own, and other people's **emotions**, to discriminate between different feelings and label them appropriately, and to use **emotional** information to guide thinking and behavior. It can be better understood through this diagram.



Studies have shown that people with high EI have greater mental health, job performance, and leadership skills although no causal relationships have been shown and such findings are likely to be attributable to general intelligence and specific personality traits rather than emotional intelligence as a construct. For example, Goleman indicated that EI accounted for 67% of the abilities deemed necessary for superior performance in leaders, and mattered twice as much as technical expertise or IQ. Other research finds that the effect of EI on leadership and managerial performance is non-significant when ability and personality are controlled for,[6] and that general intelligence correlates very closely with leadership.[7] Markers of EI and methods of developing it have become more widely coveted in the past decade. In addition, studies have begun to provide evidence to help characterize the neural mechanisms of emotional intelligence.

Objective - To find out the difference in emotional intelligence of married and unmarried women's.

Hypothesis - There is no significant difference between married and unmarried women in respect of their emotional intelligence.

Population - Population of the study comprise of married and unmarried women of Ujjain city.

Sample - Sample of the study comprise of 116 women selected randomly from different areas of Ujjain city.

Methodology - Survey method was used to collect data.

Tools of the study - Emotional Intelligence Test prepared by Dr. S. Mathur.

Statistics used - 't"- test.

Result and Discussion - Hypothesis of the study have been tested and results are presented in table 1. Table shows that the't'-value for data obtained is less than the table value at 0.05 level for the given degree of freedom. This indicates that difference is not significant at 0.05 levels. Hence our hypothesis that there is no significant difference between married and unmarried women in respect of emotional intelligence have been accepted.

Table - Significance of difference between married and unmarried women in respect of emotional intelligence

Category	N	AM	SD	t	df	Sig.
Married	67	80.41	5.89	1.26	114	<0.05
Unmarried	49	81.69	5.09			

It implies that though there is difference in mean value for emotional intelligence of married and unmarried women

*Principal, Rashtra bharti Shiksha Mahavidyalaya, Ujjain (M.P.) INDIA

but this difference is not so remarkable that we may infer that married and unmarried women differ in respect of their emotional intelligence. Thus we may say that difference in emotional intelligence of married and unmarried women is not remarkable. It implies that both the married and unmarried women possess almost same level of emotional intelligence. It indicates that marital status have no influence over emotional intelligence of women.

For further investigation frequencies for three categories (poor, average and high) of emotional intelligence have been calculated and result is shown in following table.

Table -2 -Showing frequencies of responses under the categories of emotional intelligence.

EI	M(f%)	UM(f%)
Very low	0	0
Low	6	2
Moderate (40-56)	88%	94%
High(56-72)	6%	4%
Very High(104-120)	0%	0%

Fig (See)

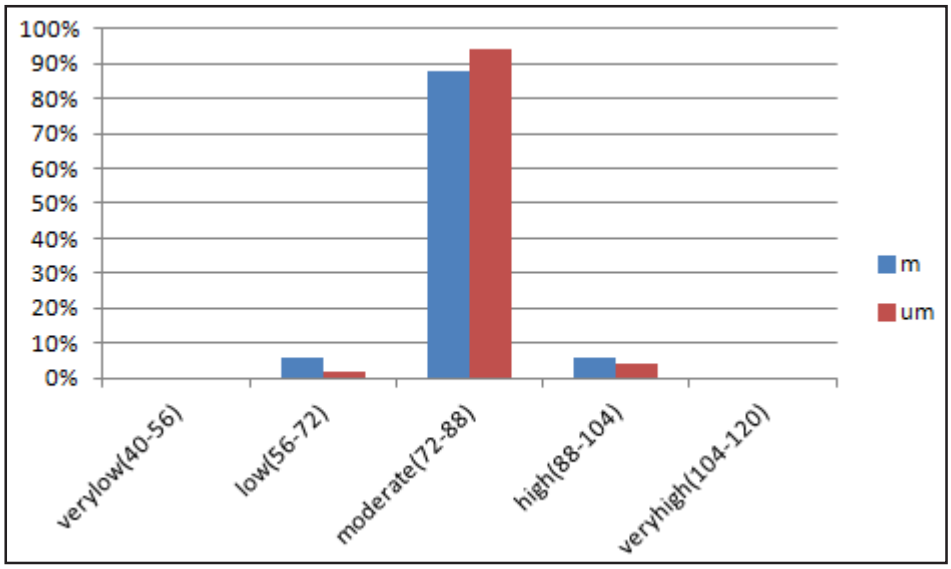
Fig. 2 - Distribution of emotional intelligence in married and unmarried women - It is clear from both the table-2 and figure-2 that most of the women whether married or unmarried posses moderate level of emotional intelligence. Very few women possess low emotional intelligence and same is true for high level of emotional intelligence.

Suggestions for further research -

1. Research may be under taken with other demographic variables for women.
2. Research may be under taken to study emotional intelligence of male and female candidates.
3. Research may be under taken to study emotional intelligence of working and nonworking women.

References:-

1. Mathur S., Emotional Intelligence Test, national psychological lab, Agra.
2. www.free-management-ebook.com
3. http://cyberschoolgroup.com



****

Constitutional Position Of Governor In India

Dr. Kusum Sharma*

Introduction - In Federal frame work of our Constitution the pattern of Government adopted at union as well as in States is a parliamentary system. Hence the executive heads at union and State levels are constitutional heads. The constitutional heads at the State levels are known as Governors. In India there shall be a Governor for each State. But two or more States may have a common Governor (Article 153). He is formally appointed by the president of India by warrant under his hand and seal (Article 155). A person to be appointed as Governor must be (a) a citizen of Indianand (b) must have completed the age of 35 years (Article 157). A Governor holds office during the pleasure of the President, he may be removed from his office at any time at the will of the President. Thus the Governor has no security of tenure and no fixed term of his office under the Constitution of India.

Position of Governor - The office of the Governor under the Constitution of India is a useful institution. A Governor is a functional link between the union and the State Governments and the people of States. Infact, it was a considered decision of the founding fathers of the Constitution to provide for a useful institution of Governors taking into account the character of the Constitution to maintain unity of the country by providing the unitary character of the Constitution while conceding freedom to the States in governance in the permissible limits.

In accordance with parliamentary frameworks, like the Union Government, the State Governments also have two forms of executives – the constitutional head and the real executive. However, unlike President at the union level, the constitutional head at the State level, that is Governor, in addition to largely ceremonial functions, has also been empowered to represent the center and to safeguard the Constitution at the State level. For these purposes, he has been entrusted with a formidable armory of powers[1]

This ambiguity about dual role of the Governor and his powers and functions has provoked sharp debates and controversies with regard to actual position of Governor under the Indian federation.

As stated earlier, according to our Constitution, each State in India has a Governor and the executive power of the State is vested in him[2.] He is appointed by the President of India for a term of five years and holds office during the pleasure of the President[3]. That means a Governor can be removed by the President at any time even before the expiry of his term. There is no bar to the appointment of a Governor more than once either in the same State or in different States. Any citizen of India over 35 years of age can be appointed as Governor but he cannot hold any other office of profit during the tenure. Procedure for appointment and dismissal suggests that in practice the Union Council of Ministers is empowered to appoint and dismiss the Governors.

The original plan of the draft constitution was to have elected Governors, but in the Constituent Assembly it was replaced by the method of appointment by the President on the arguments, that if the Governors were to be elected by direct vote, then he might consider himself superior to the chief Minister and this might lead to frequent frictions between the Governor and the Chief Minister. Also an elected Governor may encourage separatist tendencies[4]

The founding fathers were greatly concerned about the background, qualities and the caliber of the person for the gubernatorial office. In view of this two conventions were attempted to be followed. One, the person selected for the Governorship of a State must not normally be a person belonging to the same State, and second, he Governor of a State should be appointed with prior consultation with the Chief Minister of the State. However, the second convention has been overlooked in many cases, particularly after the year 1967. The trend now is to appoint a Governor at the convenience of the union Government.

From the recent experiences it appears that the union Government has followed no particular principle and there is no fixed criterion for the appointment of the Governors. In most of the cases the only criterion before the Central Government has been that the person must be pliable and ready to dance to the tune of the centre as well as ready to serve the interest of the party in power at the centre. The study team of Administrative Reforms Commission remarked that the office had come to be treated as "sinecure for mediocrities" or as a consolation prize for "burnt out politicians."

The Sarkaria Commission in its report has suggested that a person to be appointed as Governor should satisfy the following criteria: he should be eminent in some walk

***Asst. Professor (Law) Biyani Law Collage, R-4, Sector No.-3, Vidhyadhar Nagar, Jaipur (Raj.) INDIA**

of life; he should be person from the outside the State; and he should not be intimately connected with the local politics of the State; and at the same time he should be a person who has not taken too much part in politics generally; and particularly in the recent past. But, surprisingly, even after the submission of the report of Sarkaria Commission the Governors continue to be appointed from amongst the active politicians of the ruling party and without prior consultation with the Chief Minister of the State. In fact the power to dismiss the Governors, which was considered to be something for rare occasions, has also now been used for political interests. In March 1992, Nagaland Governor, Dr. M.M. Thomas was dismissed for having dissolved the State Assembly on the advice of non-Congress(I) Ministry without consulting the center or in real sense for not helping the Congress(I) to form an alternative Government.4

Here it may be pointed out that the Sarkaria Commission had recommended that the Governor's tenure of office be fixed for five years and that he should not be disturbed except very rarely, and that too for extremely compelling reasons. Government is, however, going against these recommendations. This strengthens the suspicion of the critics and commentators that the Center uses the office of Governor for party-politics. Obviously, therefore, it remains a major area of tension in Center-State relations[5].

The Governor is usually a distinguished elder Statesman, who can discharge his rather perfunctory duties with a dignity and who is in a position to exercise what Gandhi called an "all pervading moral influence". Some Governors, such as, C.M. Trivedi in Andhra Pradesh and Sri Prakasa in Tamilnadu have shown that how useful an executive, above party politics can be in times of political instability and crises. Some commentators of Indian politics have recommended the abolition of the office of the Governor on the ground that such an official serves no useful purpose and is merely a drain on the treasury. But the predominant opinion reinforced by the experience in the States since independence is that there is need for such a dignitary in each of the Indian States[6].

The role of the Governor has emerged as one of the key issues in Union-State relations. The repercussions and reverberations of decisions taken by the Governors are often heard in parliament. A Governor's decision may at times lead to a sort of confrontation between the centre and the States which affect the federal balance to some extent. The Central Government usually takes the formal position that the Governors is free to take a decision in the discharge of his function, that it does not dictate to him one way or the other and though he may seek advice from the centre, the final decision rests with him.

So long as one party (i.e. the Congress) with very stable Majorities was in office in all the States as well as the centre, the office of the Governor was not regarded as very significant. Liaison between the States and the centre was conducted to a large extent at a party level. In fact, doubts were raised whether the Governor's office served any useful purpose, so that the while Prime Minister, Pt. Nehru had to explain the role of the Governors to dispel the sense of their futility. He said that they play a useful role which might become very important on occasions. A Governor was a factor in bringing various groups and parties together. He could do a great deal to lessen tensions. He could not obviously overrule the Government but his advice was always available. If in some vital matters, the Governor thought that there was a breach of the Constitution, he could refer it to the president. Normally speaking decision was of the Government but the Government should keep an intimate touch with the Governor and consult him formally or informally the importance of the Governor's office was party constitutional but largely conventional. Much depended on the personality of the Governor.

But, with the emergence of the multi party system in the wake of the fourth general elections, the office of the Governor has become more directly involved in the constitutional process and has assumed significance both as a link between the centre and the States as were as for maintaining an effective constitutional machinery within the States. In this process, the Governors office has also become controversial, as whatever decision a Governor takes, whether as the representative of the centre, or as the constitutional head of the States, he becomes as a centre of controversy for one or the other political party feels dissatisfied and thus criticizes him and attributes to him partisan motives. This also brings the Central Government into controversy, for the Governor being an appointee of the centre, and holding his office during its pleasure, is regarded as the Centre's creature and the disgruntled political group criticizes the Central Government as well for exercise of his arbitrary discretion by the Governor.

The role played by some Governors, particularly, in recommending President's rule and in reserving State bills for the consideration of the President, has also evoked strong resentment[7]. Frequent removals and transfers of Governors before the end of their tenure; have lowered the prestige of this office.

Criticism has also been leveled that the Union Government utilizes the Governors for its own political ends. Many Governors looking forward to further office under the union or active role in politics after their tenure came to regard themselves as agents to the union. While in the year 1989, the dismissal of all State Governors appointed by the earlier Government had set up wrong precedent, similar action by the new Government in the year 1991 is seen as act of further devaluing the position and the status of the office of the Governor. The resignation of Himachal Pradesh Governor Gulsher Ahmed in the wake of Election Commission's order on the allegation that the Governor has been canvassing support for his son in the assembly election for Satna constituency, is an example of how political appointees to the august office have, devalued dignity and honor[8].

Conclusion - Infact constitutional position of the Governor depends on how and to whom a Governor is responsible when he does not perform his functions properly or when his Government fails to discharge the obligations set by the Constitution.

It must be remembered that by article 156, Governor holds office during the pleasure of the President though subject to this in India-Trends and Issues, Gitanjali Publishing House, New Delhi, 1985, pp. 62-94. 105
He holds the office for a term of five years. By the article 155 of the Constitution he is appointed by the President, of course, on the advice of his Council of Ministers. Thus at all times by executive process the Union Government can remove him. But, the question is how responsibility is to be fixed on him multifarious activities and functions which he has been assigned by the Constitution.

As had been mentioned earlier, for the activities performed by the Governor, on the advice of his Council of Ministers in the sphere of his executive power, there is no personal responsibility on him. It will be obviously unfair for the Union Government to censor the Governor for the policies of the State Government in which he participates at the best by giving his assent to the legislations under article 200.

When the Governor is exercising his discretionary powers in the matter of making a representative Government possible in the State, he is on his own. He has to be impartial between the Union versus the State Government as well as between the political parties within the State. He has to take particular care when there are different political parties forming the Government at the Union and in the State, It is in such circumstances that his oath under article 159, that he is to 'preserve' protect and defend the Constitution and Law gives him a constitutional status of independence. Accordingly, if his activities in the sphere of his discretionary authority are not approved by Lok Sabha, such disapproval will not be a censor of the Government which had appointed him. At the same time, the President, if he refuses to dismiss such a Governor at the instance of his Council of Ministers, is impeached it will be an unjust ground. When the State Ministry objects to the Governor's role, it has no constitutional right of getting rid of the Governor, but, the Union Government can accede to such a request, as it did in the case of Governor Dharma Vira of West Bengal in 1968.

It may also be mentioned here, that when the Governor is acting as an agent of President in any part of his functions, his responsibility will be personal in case Union Government disowns his actions, otherwise, the Union Government will be responsible to the extent of a vote of censor in Lok Sabha.

References :-

1. JR Siwach, Office of the Governor, Sterling Publishers, New Delhi , 1977, pp.1-12; PL Mathur, Role of Governor in non-Congress States, Rawat Publications, Jaipur, 1988, pp. 49- 57; KV Rao, "The Governor at work," in the journal of the Society for the Study of State Governments, Vol. I, July-September 1968, No. 3 p.90;RCS Sarkar, Union-State Relations in India, National Publishing House, New Delhi, 1986, p.62; also see Report of the Center – State Relations Inquiry Committee (Government of Tamil Nadu), 1971, pp. 126-27; Report of the Study Team of the Administrative Reforms Commission on Center-State Relations,Vol. I, Chapter 18, para 9, pp. 280-81.
2. Article 153 of the Constitution of India.
3. Articles 155 and 156 of the Constitution of India
4. Costituent Assembly Debets, Vd.VIII, P.424, 428, 450, 462, 468, 556.
5. Report of the Sarkaria Commission on Centre-State Relations, 1988, Vol. I, pp. 135-137; Sibranjan Chatterjee, Governor's Role in the Indian Constitution, Mittal Publications, New Delhi, 1992, pp. 32-53; RP Nainta, Governor under the Indian Constitution, Deep and Deep Publications, New Delhi, 1992, pp. 58-59.
6. J.P. Suda, Indian Constitutional Development and National Movement, MeenakshiPublications, Meerut, 1951, pp. 624-628.
7. Amal Ray, Tension Areas in India's Federal System, Calcutta, World Press, 1970, p.87; Sri Prakasa, State Governor in India, Meerut, Meenakshi Prakashan, 1960, p.37, see also Rajya Sabha Debates, Vol. 8, 1954, p.204; Purshotam Sing, Governor's Office in Independent India, Bihar, Navayug Sahitya Mandir, 1968; Dr. Iqbal Narain, an eminent Professor has mentioned two kinds of discretion, one is constitutional and other is situational discretion. The former is recognized in the Constitution and the later for Governor discretion which may have it basis purely in the exigencies of the Political situations. For detailed discussion see P.L. Mathur, Supra Note 15,58' Satish Chandra, Indian Federal Polity and Gubernatorial-Behaviour in states in U.N. Gupta, Indian Federalism and Union of Nations(Ed.), 1988, at 222; B.R. Sharma, constitutional Position of Governor: The Haryana Controversy, 61, Journal of constitutional and Parliamentary Studies, 252, 1982. Also see J.R. Siwach, Appointment and Dismissal of the Chief Ministers, 2, Journal of constitutional and Parliamentary Studies, 75, 1968.
8. J.R. Siwach, op.cit, pp. 266-280; R. P. Nainta, op.cit, pp. 65-79; N.S. Gehlot, State Governors

****

The Fifty Second Amendment Of Indian Constitution 'Anti-Defection Law'

Mamta Goswami*

Introduction - Background of fifty second Amendment - Rajiv Gandhi the then Prime Minister of India, proposed a bill to remove the evils of defection. The parliament passed the bill as a result of which anti-defection act come into force on 1st April, 1985 through 52nd constitutional amendment. The main intend of the law was to combat "the evil of political defections".

Fifty- Second Amendment - The 52nd Amendment to the constitution laid down rules and procedure for restricting members of parliament and state legislature from defecting from one party to the another at their sweet will. For this purpose a new schedule, known as the Xth schedule was incorporated in the constitution. Through this, the process by which legislatures may be disqualified on grounds of defection was laid down in details.

What is Anti-defection law - Before defining Anti-Defection law, we should understand the meaning of defection. When an elected representative joins another party without resigning his present party for benefits, it is called defection. Thus a defector is one who elected from one party and enjoys power in another party.

The word defection is also called as **"Floor- Crossing"** in U.K. and **"Carpet Crossing"** in Nigeria. In India, the term used for this is **"Defection".** Defection is commonly known as **"Horse Trading".** Defectors are also called- **"Fence sitters"** or **"Turn coats".**

Anti - Defection provisions under Xth Schedule -

Ground of disqualification -

(a) If a member of a house belonging to a political party - Voluntarily gives up the membership of his political party or
- Votes, or does not vote in the legislature, contrary to the directions of his political party.

(b) If an independent candidate joins a political party after the election.

(c) If a nominated member joins a political party six months after he becomes a member of the legislature.

Power to Disqualification -

(a) The chairman or the speaker of the house takes the decision to disqualify a number.

(b) If a complaint is received with respect to the defection of the chairman or speaker, a number of the house elected by that change shall take the decision.

Exeption - 'Merger' - A person shall not be disqualified if his original party merges with another and -

- He and other members of the old political party become members of the political party, or
- He and other members do not except the merger and opt to function as a separate group.

This exception shall operate only if not less than two-third of the members of party in the house have agreed to the merger.

Purpose of Introducing Xth Schedule -

- The Anti-defection law was enacted to ensure that a party member do not violate the mandate of the party and in case he do so he will be disqualified from participating in the election.
- The Anti-Defection law allows parliament to announce those members defected who oppose or do not vote in line with party's decision.
- The aim of Anti-defection law is to prevent members of parliament to change parties for any personal motive.

Advantages and disadvantages of Anti-Defection Law-

Advantages -

- Provides stability to the government by preventing shifts of party allegiance.
- Ensures that candidates elected with party support and on the basis of party manifestoes remain loyal to the party policies. Also promotes party disciplines.

Disadvantages -

- By preventing parliamentarians from changing parties, it reduces the accountability of the government to the parliament and the people.
- Interferes with members freedom of speech and expression by curbing dissent against party policies.
- The Anti-defection law breaks the link between the elected representative and his electors.

Important Judgments and Rulings on the Xth Schedule by the Supreme Court -

Kihoto Hollohon Vs. Zachilhu and others AIR (1993) S.C. 412 - The main issue in this case is whether the right to freedom of speech and expression is curtailed by the Xth schedule. The provisions do not subvert the democratic rights of elected members in parliament and state legislature. It does not violate their consience. The provision do not violate any right or freedom under Article 105 and

***Research Scholar (Law) Mewar University, Chittorgarh, Rajasthan (Raj.) INDIA**

194 of the constitution.

Ravi S. Naik Vs. Union of India AIR 1994 S.C. - The main issue in this case is whether only resignation constitutes voluntarily giving up membership of a political party. The words "Voluntarily giving up membership" have a wider meaning. An inference can also be drawn from the conduct of the member, that he has voluntarily given up the membership of his party.

Vishwanath Vs. Speaker, Tamilnadu legislative Assembly (1996) 2 S.C.C. - In this case it was held that once a member is expelled, he is treated as an 'unattached' member in the house. However, he continues to be a member of the old party as per the Xth Schedule. So if he joins a new party after being expelled, he can be said to have voluntarily given up membership of his old party.

Dr. Kashinath G. Jhalmi Vs. Speaker, Goa Legislative Assembly (1993) 2 S.C.C. - In this case it was held that the speaker of a house does not have the power to review his own decision to disquality a candidate. Such power is not provided for under Xth Schedule, and is not implicit in the provisions either.

Ravi S. Naik Vs. Union of India AIR 1994 S.C. - The court cited the case of Kihoto Hollohon where it had been said that the speaker while passing an order under the Xth Schedule functions as a Tribunal. The order passed by him would therefore be subject to judicial review.

Rajendra Singh Rana and Others Vs. Swami Prasad Maurya and others (2007) 4 S.C.C. - The court cited that if the speaker fails to act on a complaint, or accepts claims of splits or mergers without making a finding, he fails to act as per the Xth Schedule. The court said that ignoring a petition for disqualification is not merely an irregularity, but a violation of constitutional duties.

Some Recent orders on Disqualification by the speaker for defection -

Shri Rajeev Ranjan Singh "Lalan" Vs. Dr. P.P. Koya, J.D. (U) 2009 - The speaker held that the fact Dr. Koya abstained from voting by remaining absent, and the evidence of the 'illness' is not sufficient to conclude that he was so ill that he could not be present in the house.

Shri Prabhunath Singh V/s. Shri Ramswaroop Prasad, J.D. (U) 2008 - The speaker held that in view of the fact that there is evidence to show that the whip had been delivered to Shri Prasad's house, and had been duly received , it cannot be said that Shri Prasad had no knowledge of the whip.

Recommendations of Various committees on Anti-Defection Law -

Dinesh Goswami Committee, 1990 - The issue of disqualification should be decided by the president / Governor on the advice of the election commission.

Law Commission (170th Report) 1999 -

(a) Pre-poll electoral fronts should be treated as political parties under Anti-Defection Law.
(b) Political parties should limit issuance of whip to instances only when the government is in danger.

Election Commission - Decision under the Xth Schedule should be made by the President / Governor on the binding advice of the election commission.

Constitution Review Commission (2002) -

(a) Defectors should be barred from holding public office or any remunerative political post for the duration of the remaining term.
(b) The vote cast by a defector to topple a government should be treated as invalid.

What reforms are needed in Anti-Defection Law -

- The decision making power of speaker/chairman needs review.
- The phrase "Voluntarily giving up membership" is too vague and needs comprehensive revision.
- Political parties should limit issuance of whips to instances only when the government is in danger.

References :-

1. Book - J.N. Panday : The constitutional Law of India.
2. Book- V.N. Shukhla : The constitution of India.
3. Book- D.D. Basu : The constitutional Law of India.
4. Sir Thomas Erskine May : Parliamentary Practice 18th Edn.
5. Official Report : Constitutional Assembly Debates.
6. The Indian Journal of Political Science.
7. The Indian Journal of Parliamentary Information.
8. All India Reporters.
9. Bare Act : Indian Constitution.
10. Bulletin II of the Lokshabha on different dates.
11. R. Khothan daraman, Ideas for an alternative Anti-Defection Law 2006.
12 blog.formias.com > Anti-Defection - Law.

****

स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत ठोस अपशिष्ठ पदार्थो का प्रबंधन

मनीष उपाध्याय *

प्रस्तावना – स्वच्छ भारत अभियान का प्रारंभ भारत को स्वच्छता के प्रतीक के रूप में उभारकर ऊपर लाना।स्वच्छ भारत का सपना सबसे पहले राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के द्वारा देखा गया था, जिसके परिप्रेक्ष्य में गॉधी जी ने कहा है कि

''स्वच्छता, स्वंतत्रता से ज्यादा जरूरी है।''

यह बात उन्होने इसलिए कही थी क्योंकि वो अपने समय की भारत की गरीबी और गंदगी से परिचित थे। इसके लिए उन्होने भरसक प्रयास किए थे परन्तु वह सफलता हासिल नहीं कर पाए उन्होंने कहा कि निर्मलता और स्वच्छता दोनों ही स्वस्थ और शांतिपूर्ण जीवन का अभिन्न भाग है। लेकिन दुर्भाग्य इस बात का है। कि आजादी के 70 सास बाद भी हम इन दोनों लक्ष्यों से काफी पीछे है।

अगर हम ऑकडों की बात करे तो केवल कुछ प्रतिशत लोगों के घरों में ही शौचालय हो इस कारण भारत सरकार पूरी गंभीरता से बापू जी की इस सोच को हकीकत का रूप देने के लिए सम्पूर्ण देश को इस मिशन से जोड़ने का प्रयास कर रही है। जिससे देश भर में यह सफल हो सके।

स्वच्छ भारत अभियान क्या है।

स्वच्छ भारत अभियान एक राष्ट्रीय स्वच्छता मुहिम है। जो भारत सरकार द्वारा स्थापित किया गया है। इसके अंर्तगत 4041 सांविधिक नगरों के सडक, पैदल मार्ग और अन्य स्थल आते है।

यह एक सर्वव्यापी आंदोलन है। जिसे 2019 तक पूर्णत: सफल बनाना है और भारत को गंदगी से मुक्त कर एक स्वच्छ भारत का निर्माण करना है। इस मिशन को 2 अक्टुबर 2014 को बापू जी की 145 वीं पुण्यतिथि के उपलक्ष में पहली बार मनाया गया और इसी दिन स्वरच्छ भारत अभियान की शुरूआत हुई।

भारत के शहरी विकास तथा पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय के तहत इस अभियान को ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में लागू किया गया है।

इस मिशन का पहला स्वच्छता अभियान 25 सितम्बर 2014 को भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के द्वारा किया गया था। जिसका उद्धेश्य सफाई व्यवस्था की समस्या का समाधान निकालना तथा साथ ही साथ सभी को स्वच्छता की सुविधा के निर्माण द्वारा पूरे भारत में बेहतर अपशिष्ट प्रबंधन करना है।

भौतिक ,मानसिक, सामाजिक और बौध्दिक कल्याण के लिए भारत के लोगों में इसका एहसास होना बेहद आवश्यक है। ये सही मायनों में भारत की सामाजिक स्थिती को बढ़ावा देने के लिए है। जो हर तरफ स्वच्छता लाने से शुरू किया जा सकता है।

हम नीचे कुछ बिंदुओं से स्वच्छ भारत अभियान की आवश्यकता को दिखा रहे है।

1. भारत के हर घर में शौचालय हो और भारत खुले में शौच मुक्त हो, स्वच्छ और हरियाली युक्त बने।
2. अस्वास्थ्यकर शौचालय को पानी से बहाने वाले शौचालय से बदलने की आवश्यकता है।
3. नगर निगम/नगर पालिका के कचरे का पुनर्चक्रण , सुरक्षित समापन और वैज्ञानिक तरीके से मल प्रबंधन को लागू करना।
4. खुद के स्वास्थय के प्रति भारत के लोगों की सोच और स्वभाव में परिवर्तन लाना और स्वास्थकर साफ-सफाई की प्रक्रियाओं का पालन करना।
5. ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में वैश्विक जागरूकता का निर्माण करने के लिए और सामान्य लोगों को स्वास्थ्य से जोडने के लिए।
6. सम्पूर्ण भारत में साफ-सफाई की सुविधा को विकसित करने के लिए निजी क्षेत्रों की हिस्सेदारी बढाना ।
7. ग्रामीण क्षेत्रों के लोगो के रहन-सहन और जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना।
8. स्वास्थ्य शिक्षा कायक्रमों के माध्यम से समुदायों और पंचायती राज संस्थानों को निरंतर साफ-सफाई के प्रति जागरूक करना।

शहरी क्षेत्रों में स्वच्छ भारत अभियान – शहरी क्षेत्रों में स्वच्छ भारत मिशन का लक्ष्य हर नगर में ठोस कचरा प्रबंधन सहित लगभग 1.04 करोड.घरों को 2.6 लाभ सार्वजनिक शौचालय, 2.5 लाख सामुदायिक शौचालय उपलब्ध कराना है। सामुदायिक शौचालय की उपलब्धता को प्रधिकृत स्थानों पर जैसे:- बस अडडों, रेल्वे स्टेशन, बाजार आदि।

शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता कार्यक्रम को आगामी पाँच वर्षो के अदंर 2019 तक पूरा करने की योजना है। जिसमें ठोस कचरा प्रबंधन की लागत लगभग 7,366 करोड़ रूपये है।1828 करोड़ जन सामान्य को जागरुक करने के लिए , 655 करोड़ रूपये सामुदायिक शौचालयों के लिए, 4165 करोड़ निजी घरेलू शौचालयों के लिए रखा गया है। जिससे शहरों को साफ-सुथरा और हरा-भरा बनाया जाए।

ग्रमीण स्वच्छ भारत मिशन – ग्रामीण स्वच्छ भारत मिशन एक ऐसा अभियान है। जिसमें ग्रामीण भारत में स्वच्छता कार्यक्रम को अमल में लाना है।

ग्रामीण क्षेत्रों को स्वच्छ बनाने के लिए 1999 में भारत सरकार द्वारा निर्मल भारत अभियान (जिसको पूर्ण स्वच्छता अभियान भी कहा जाता है।) की स्थापना की गई थी लेकिन अब इसका पुनर्गठन स्वच्छ भारत अभियान (ग्रामीण) के रूप में किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों की खुले में शौच की आदत को रोकना है।

* क्लस्टर समन्वयक, आर.के.एम.एस.,मथुरा (उ.प्र.) भारत

इसके लिए सरकार ने 11 करोड़ 11 लाख शौचालयों के निर्माण के लिए एक लाख चौतिस हजार (134000) करोड़ रूपये खर्च करने की योजना बनाई हैं। इस मिशन के अंदर सरकार नें मुख्य तौर पर कचरे से जैविक खाद और इस्तेमाल करने लायक ऊर्जा में परिवर्तित करने की योजना बनाई है। जिसमें ग्राम पंचयत, जिला पंचायत एवं पंचायत समिति की अच्छी भागीदारी है।

लक्ष्य : -

1. ग्रामीण क्षेत्रों में रह -रहे लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना।
2. ग्रामीण क्षेत्रों मेंठोस और द्रव कचरा प्रबंधन पर खासतौर से ध्यान देना तथा उन्नत पर्यावरणीय सफाई व्यवस्था का विकास करना जो वहाँ के समूदायों द्वारा प्रबंधित हों।
3. ग्रामीण क्षेत्रो में निरंतर साफ-सफाई और पारिस्थितिक सुरक्षा को प्रोत्साहित करना।

स्वच्छ भारत-स्वच्छ विद्यालय अभियान - यह अभियान केंद्रिय मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा चलाया गया और इसका उद्देश्य भी स्कूलों में स्वच्छता लाना है। क्योंकि विद्यालय ही एक ऐसी जगह होती है। जहॉ पर एक बच्चा अपने सारे नैतिक क्रिया-कलाप मूल्यों को ग्रहण करता है। इसलिए शिक्षा ही बालक को इसी जगह से स्वच्छता को अपनाने के लिए प्रेरित करती है।

इस कार्यक्रम के तहत 25 सितम्बर 2014 से 31 अक्टुबर 2014 तक केंद्रीय विद्यालय और नवोदय विद्यालय संगठन जहॉ कई सारे स्वच्छता क्रिया-कलाप आयोजित किए गए।जैसे :- विद्यार्थियों द्वारा स्वच्छता के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा, स्वच्छता क्रिया -कलाप (कक्षा में, पुस्तकालय, प्रयोगशालाऐं, मैदानों, बाग-बगीचों, किचन शैड, केंटीन आदि) स्कूली क्षेत्रों में सफाई, स्वाास्थ और स्वच्छता पर नाटक मंचन आदि इसके अलावा सप्ताह में दो बार साफ-सफाई अभिमान चलाए जाए जिसमें शिक्षक, विद्यार्थी और माता-पिता सभी हिस्सा लें।

ठोस अपशिष्ठ - ठोस अपशिष्ट तत्व उन पदार्थो को कहते है। जो उपयोग के बाद निरर्थक एवं बेकार हो जाते है। जैसे- लोहे के छोटे-छोटे डिब्बे या कनस्तर, बोतल प्लास्टिक की, टूटे काँच के सामान,बेकार ट्यूब वह टायर, जंग लगी गाडियॉ, राख घरेलू टूटा- फूटा फर्नीचर इत्यदि।

इन सभी पदार्थों या वस्तुओं का पहले तों हम उपयोग करते है तथा बाद में हम इन्हीं पदार्थों को हम कचरा का उच्छिष्ट या ठोस अपशिष्ट पदार्थों के नाम से जानते है।

ठोस अपशिष्ट पदार्थ चूँकि ठोस होते है। आकार भी निश्चित, बढ़ा होता है। इसलिए इनके निस्तारण तथा डम्पिंग में पर्याप्त जगह की आवश्यकता होती है।

विश्व में बढ़ती जनसंख्या तथा औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में तेजी से वृद्धि के साथ-साथ ठोस अपशिष्ठ पदार्थों की मात्रा भी काफी बढ़ रही है। जिसके परिणाम स्वरूप प्रदूषण की समस्या विकराल रूप लेते हुये असाध्य होती जा रही हैं ठोस अपशिष्ट पदार्थों की मात्रा में सतत् वृद्धी के फलस्वरूप उत्पन्न उनके समुचित निस्तारण की समस्या न केवल औद्योगिक स्तर पर वरन् विश्व के सभी राष्ट्रों के लिए सिरदर्द और चिंता का विषय बन गई है।भारत के संदर्भ में दिल्ली सबसे ज्यादा ठोस अपशिष्ट पदार्थ उत्पन्न करता है।

अपशिष्ट पदार्थो के स्त्रोत

इसके प्रमुख दो स्त्रोत है।

1. उत्पादना केन्द्र
2. उपभोग केन्द्र

लघु या मध्यम स्तरीय उत्पाद केन्द्र वृहद स्तरीय उत्पादन केन्द्र उपभोक्ता केन्द्रों को भी निम्न उपभागों में विभाजित किया जाता है। जैसे- घर का कचरा, समुदायिक केंद्र का कचरा, बाजारों का कचरा तथा नगरपालिकाओं का कचरा केन्द्र है।

प्रयोग करो और फेंको संस्कृति - इस नीति ने ठोस अपशिष्ठ की समस्या को और भी विकराल रूप दिया है चूँकि यह नीति अभी तक विकसित देशों में थी लेकिन आज के इस आधुनिक भौतिकवादी युग में भारत अपने विकास के पथ पर आगे बढ़ रहा है। और विकसित देशों की नीति को अपना रहा है। जिससे भारत में भी ठोस अपशिष्ट की समस्या चरम सीमा पर है। भारत जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में चीन के बाद दूसरा है। जिसके परिणाम स्वरूप ज्यादा वस्तुऐं का प्रयोग होता है और अत्यअधिक ठोस अपशिष्ट पदार्थ पैदा होते है और आज कल भारत में नगरीकरण में वृद्धि हो रही है। और भारतीय नगरों में प्लास्टिक एवं पॉलीथिन अब तो अभिशाप बन गए है। ठोस अपशिष्ट पदार्थो के प्रकार इसके कई प्रकार आज के दौर में प्रचलन में है।

1. **खनन अपशिष्ट :-** भारत में खनिजों का भण्डार है। खनन करते समय, उन खनिज पदार्थो को मालगाड़ियों एवं ट्रकों में भरते समय या उतारते समय उनसे टूट-फूट से अनेक वस्तुऐं अपशिष्ट हो जाती है।जैसे:- पृथ्वी के अंदर से कोयला, हीरा, लोहा आदि को निकालने के लिए ऊपरी सतह को सुरंग लगाकर तोड़ा जाता है।
2. **औद्योगिक अपशिष्ट :-** उद्योगों में कई प्रकार के माल का उत्पादन होता है। उस माल के उत्पादन में लगे कच्चे माल की टूट-फूट या बचा माल या खराब माल ही अपशिष्ट कहलाता है। जैसे- शक्कर कारखानों में चीनी के साथ खोई का उत्पादन होता है। जिससे आस-पास इस अपशिष्ट पदार्थ का ढेर लग जाता है। जिससे बुरी दुर्गन्ध निकलती है तथा वातावरण प्रदूषित होता है।सीमेंटकारखानों के आस-पास बेकार गिट्टीयाँ धूल निकलती है। जो वातावरण को प्रदुषित करती है।
3. **कृषि-जनित अपशिष्ट :-** भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ पर कई प्रकार की फसलें होती है।इसके अंतर्गत फसलों की जड़े, तनों, भूसा, गोबर, चारे के अपशिष्ट इत्यादि
4. **नगर पालिकाओं के अपशिष्ट** :- इसके अंतर्गत अखबार के टुकडे, प्लास्टिक एवं कॉच की टूटी बोतले, बेकार, सब्जियां, कूरा-करकट, घरेलू अपशिष्ट, टूटी-फूटी वस्तुऐं, कनस्तर, चादर इत्यादि।
5. **पैकिंग अपशिष्ट :-** वस्तुऐं एवं माल के एक स्थान से दूसरे स्थान तक सुरक्षित पहुँचाने के लिए उनको पैकिंग की जाती है। जो पॉलीथिन, कागज, अखबार, जूट, सन का टाट, लोहे का फ्रेम इत्यादि।
6. **मानव अपशिष्ट :-** मानव समाज का अंग है। और वह समाज में रहकर कई प्रकार के अपशिष्ट पदार्थो को जन्म देता है। जैसे- ग्रामीण क्षेत्रों में लोग शौच के लिए खुले में जाते है और अपने द्वारा त्याजित मल-मूत्र से पर्यावरण को प्रदूषित करते है। लोगों के मरने के बाद उसकी हड्डियों, राख को नदी-तालाबों में डालकर उनको प्रदूषित किया जाता है।
7. **जंतू अपशिष्ट :-** पशुओं और जंतुओं के द्वारा गोबर, मल-मूत्र का त्याग किया जाता है। जो अपशिष्ट पदार्थ होते है। तथा उनके मरने के बाद उन्हें खुले में फेंक दिया जाता है। जिससे अपशिष्ट पदार्थों की संख्या में वृद्धी होती है।
8. **रेडियो एक्टिव अपशिष्ट :-** भारत टेक्नोलोजी के क्षेत्र में आगे बढ रहा है। आए दिन आविष्कार कर रहा है। जिसके पारिणाम स्वरूप उनसे

रेडियो एक्टिव पदार्थ निकलते हैं। जो ठोस अपशिष्ट के रूप में हमारे पर्यावरण को हानि पहुँचाते है।

ठोस अपशिष्ट पदार्थों का प्रबंधन ठोस अपशिष्ट पदार्थों के समन्वित प्रबंधन के अंतर्गत निम्न चरणों को शामिल किया गया है।

1. अपशिष्टों या कचरों का संग्रहण तथा वर्गीकरण करना।
2. ठोस अपशिष्टों का निस्तारण
3. ज्वलनशील अपशिष्टों का दहन

अपशिष्ट पदार्थो के प्रबंधन के अतंर्गत अपशिष्ट तथा कचरों का संग्रह उनके वर्गीकरण, समुचित डम्पिंग स्थलों पर उनको भली-भाँति निस्तारण एवं उनके दहन को अपनाया जाता है।

पश्चिमी तथा विकसित देशों में अपशिष्टों एवं कचरों का सामान्यतया निस्तारण झीलों, भूमिगत गड्ढों तथा सागरों में किया जाता है। सागर के तटीय भागों में कचरे तथा अपशिष्टों के निस्तारण के कारण कई प्रकार की पारिस्थितिकीय समस्याऐं उत्पन्न हो गई है। जिससे मछलियों कोरल सहित कई प्रकार के जलीय जीवों की लगाातार मृत्यू हो रही है।

भारतीय नगरों में तो कचरे एवं अपशिष्टों को संग्रह करने की थोड़ी बहुत व्यवस्था है।

परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में इसके लिए कोई व्यवस्था नहीं है। जिसके परिणाम स्वरूप गांव व आस-पास के क्षेत्रों में कूरा-करकट एवं अपशिष्टों का भण्डार लगा रहता है और उसके सडनें पर दुर्गन्ध से वायू, जल का प्रदूषण होता है।

1. ठोस अपशिष्टों के प्रबंधन में उनको समुचित रूप में इकट्ठा करना पहला ठोस कदम है। भारतीय नगरों के निवासी अपने घरों के कूडे-कचरे को सड़क के किनारे ,भवनों के कोनों, सीधे सड़क पर फेंक देते है। यहॉ तक कि बहुमंजिल ईमारतों में रहने वाले लोग ऊपर से ही कचरे को नीचे सीधा फेंक देते है। इस तरह फेंका गया ठोस अपशिष्ट मिसाइल के रूप में नीचे गिरता है। जिससे उसकी धूल एवं राख हवा में मिलकर वायू को प्रदुषित करती है। नगर पालिकाओं के कचरे को घूमंतु जानवर, सुअर, चूहा एवं कबाड़ बीनने वाले गरीब लोगों के द्धारा दूर-दूर तक बिखेरदिया जाता है। इस प्रकार फैले कचरे और अपशिष्ट का स्थानीय प्रशासन, नगर पालिका द्धारा नियमित रूप से इकट्ठा किया जाना चाहिए और इस इकट्ठे कचरे की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

2. ठोस अपशिष्टों का दूसरा चरण उनके समुचित तथा वैज्ञानिक विधि से निस्तारण से संबधित है। कम्पोस्ट लाभ दायक जैविक पदार्थों तथा सड़ीगली सब्जियों, पौधो की पत्तियों, मवेशियों एवं मनुष्य द्धारा अपशिष्ट गोबर मूल-मूत्र, विष्टा आदि को कम्पोस्ट के गड्ढों में जमा करके प्राकृतिक खाद बनाई जानी चाहिए। भारत के 100000जनसंख्या वाले एक नगर द्धारा 20000 टन कचरे तथा 6000 टन बिष्टा का उत्पादन होता है जिससे 18000 टन कम्पोस्ट खाद का निर्माण किया जा सकता है।

अज्वलनशील ठोस अपशिष्टों को गड्ढों, भराव क्षेत्र या खुली बंजर भूमि में दबाना चाहिए।

3. अपशिष्टों का दहन तीसरा चरण है जिसमें ज्वलनशील ; अपशिष्टों को भस्मकारी यंत्रों की सहायता से जलाया जा सकता है। इस कार्य के लिए दो विशेष प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।

1. मल्टिपुल हर्थ फरनिस
2. फलूडाइज्ड बेड फरनिस इसमें ताप अपटन विधि द्धारा ठोस अपशिष्टों का शोधन किया जाता है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत भंजक आवसन की प्रक्रिया के माध्यम से ठोस अपशिष्टों को गैसों (कार्बन डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनोआंक्साइड) तथा तरल पदार्थों (टार, हल्के तेलआदि) में विघटित कर अलग कर लिया जाता है।

इस प्रकार ज्वलनशील ठोस अपशिष्टों को जलाने से एक तरफ तो उनके निस्तारण की समस्या का निदान हो जाता है। वही दूसरी तरफ इस प्रक्रिया से विभिन्न उपयोगों के लिए ऊर्जा की प्राप्ती हो जाती है।

निष्कर्ष – स्वच्छ भारत मिशन एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम है। जिसका वास्तविक उद्देश्य भारत को गंदगी से मुक्त कर सम्पूर्ण स्वच्छ और हरा-भरा बनाना है।

अत: हमें आज मिलकर ये शपथ लेनी होगी कि इस स्वच्छ भारत मिशन के अंतर्गत काम करते हुए अपने द्धारा उपयोग किए गए ठोस पदार्थो का आवश्यकतानुसार उपयोग, उपयोग के बाद उचित निस्तारण, निवारण, तथा वैज्ञनिक विधि से प्रबंधन करेगे तब ही हम अपने भारत वर्ष को एक स्वच्छ भारत के रूप में देख पाएगे और अपने आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वच्छ भारत , स्वच्छ पर्यावरण को बचा पाएगे।

स्वच्छ भारत मिशन एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य भारत की गंदगी और अस्वच्छता को समाप्त कर एक स्वच्छ और हरा भरा भारत वर्ष बनाना है।

अगर हमें भारत को स्वच्छ बनाना है तो इन ठोस अपशिष्टों को वैज्ञनिक विधि से प्रबंधन करना हैं।

ठोस अपशिष्टों का वर्गीकरण/संग्रहण , निस्तारण और दहन करके ठोस का उचित प्रबंधन किया जा सकता है। और इस प्रकार हम स्वच्छ भारत के सपने को साकार कर सकते है।वैसे तो अस्वच्छता के कई कारण है। लेकिन जिनमें से ठोस अपशिष्ट एक मात्र कारण बने है। जो भारत की जनसंख्या वृद्धी के कारण बढ़ते जा रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. https://hi.wikipedia.org/wiki/ स्वच्छ _भारत _अभियान
2. wwww.mdws.gov.in/sites/.../Swachhta_Samachar_Hindi_2Aug2016
3. पर्यावरण डाइजेस्ट – सन् 1987 सेनिरंतर प्रकाशित, पर्यावरण पर पहली राष्ट्रीय हिन्दी मासिक ।
4. पर्यानाद्ध – प्राकृतिक पर्यावरण को समर्पित हिन्दी चिट्ठा ।
5. क्लाइमेटवाच (हिन्दी) ।
6. पर्यावरण चेतना (का.हि. विश्वविद्यालय) ।

****

संवेगात्मक संतुलन में प्राणयाम व ध्यान की भूमिका

डॉ. रंजू गुप्ता *

प्रस्तावना – मानव शरीर के तीन आयाम माने गए है प्रथम स्थूल शरीर से हमारी प्रतिदिन की गतिविधियां होती है, दूसरा एक प्रकार से मानव को विचार जगत कहा जा सकता है, तीसरा आयाम मनुष्य के भाव जगत में आता है, तीनों के बीच संतुलन से संम्पूर्ण व्यक्तित्व संतुलित बनता है, आज के मानव की सबसे बड़ी समस्या है, उसके भावनाओं, विचारों व क्रिया कलापो में एकरूपता का न होना परिणामत: मनुष्य हताशा–निराशा का शिकार हो जाता है। इस वातावरण से निकलने के लिए अब योग आचार्य के साथ–2 आधुनिक चिकित्सक भी मान रहे है कि औषधियॉ तभी काम करती है, जब व्यक्ति की आंतरिक संरचना को प्रभावित करके उसे सही रास्ते पर लाया जा सकें। वस्तुत: इसलिए प्राणयाम व ध्यान को सबसे कारगर प्रयोग पद्धति की मान्यता मिल रही है।

अमेरिका में योग की लोकप्रियता तेजी से बढ़ रही है। हॉलीवुड के सितारे, नेशनल फुटबाल लीग के खिलाड़ियों से लेकर सामान्य लोग तक शारीरिक फिटनेस और तनाव मुक्ति के लिए योग का सहारा लेने लगे है। मानसिक स्थिरता हासिल करने के लिए योग व प्राणायाम महत्वपूर्ण साधन है। कई वैज्ञानिक अध्ययन से पता पला है कि योग से शरीर स्वस्थ्य रहता है मानसिक तनाव दूर रहता है।

योग की लोकप्रियता इस बात से साबित होती है कि संयुक्त राष्ट्र के 175 देशों ने 21 जून को विश्व योग दिवस मनाने पर सहमति दी है, विश्व योग दिवस मनाऐं जाने का महत्व यह है कि एक दिन योग के महत्व पर चर्चा होगी और इसका अभ्यास करने के लिए प्रेरित किया जाएगा।

Researon of yoga - दो करोड़ से अधिक अमेरीकी योग करते है, एक अमेरिका स्टडी का कहना है कि योग से जीवन के कई पहलू बेहतर होते है शरीर स्वस्थ्य रहता है, गहरी नींद आती है और कई बीमारियों के प्रति प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।

फील्ड में तैनात सैनिक पर की गई रिसर्च के अनुसार योग से मानसिक थकान दूर होती है। तनाव, निराशा व अवसार कम होते है। स्मरण शक्ति में सुधार होता है।

वियतनाव युद्ध में भाग लेने वाले अमेरिकी सैनिकों को योग के द्वारा डरावनी यादों से निकलने में सहायता मिली। पुलिस जवानों पर एक स्टडी में पाया गया कि केवल 6 सप्ताह तक योग की कक्षा में जाने से उनका तनाव व गुस्सा कम हो गया। ध्यान व मानसिक एकाग्रता का अभ्यास से स्कूली बच्चों की पास होने की दर 15 प्रतिशत तक बढ़ गई। योग याददाश्त व आई.क्यू. स्कोर में सुधार करता है।

एक अध्ययन के अनुसार रिचमंड कैलिफोनिया में एक प्राइमरी स्कूल के कुछ शिक्षकों ने मानसिक एकाग्रता के कार्यक्रम में भाग लिया ऐसे शिक्षकों का फोकस उन शिक्षकों से अच्छा रहा जिन्होंने कार्यक्रम में भाग नहीं लिया उनमें आत्म नियंत्रण और बच्चों से व्यवहार की स्थिति भी अच्छी पाई गई।

योग व ध्यान के लाभ – योग हमारे सिस्टम को नियंत्रित करके हमें शारीरिक व मानसिक परेशानियों से बचाता है। बोस्टन यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ मेडिसिन के एक शोधकर्ता समूह का कहना है कि हमारे ब्रेन के बेस से निकलने वाली सबसे बड़ी कौर्नियल नर्व वगस का काम श्वसन, पाचन और नर्वस प्रणाली को नियंत्रित करना है। यह एयर टैफिक कंटोलर की तरह काम करती है। योग, वेग नर्व की टोनिंग करके हमारे तन व मन को नई ऊर्जा, उमंग व उत्साह प्रदान करता है।

योग का अर्थ है कि अपनी चेतना का बोध। योग न केवल शरीर को ही स्वस्थ्य नहीं रखता बल्कि वह मानसिक बीमारियों से छुटकारा दिलाता है आज इस असीम महत्वाकांक्षा की दौड़ में जहॉ सब कुछ अतिशीघ्र और अतिरेक में पा लेने की जल्दी हो निरंतर सक्रिय व गतिशील होने के कारण व्यक्ति के जीवन से आराम व फुरसत के क्षण समाप्त हो गए है। इस कारण व्यक्ति तनाव, कुठाएं संवेगात्मक असंतुलन का शिकार हो जाता हैं ऐसी स्थिति में योग उपयोगी होता है।

कैलिफोर्निया स्टेट यूनिवर्सिटी के एक अध्ययन के अनुसार योग स्ट्रेस हार्मोन का स्तर घटाता है और हड्डियों में कैल्शियम की मात्रा बनाए रखता है।

योग एकाग्रता बढ़ाता है, याददाश्त व आई.क्यू. स्कोर सुधारता है, योग कार्टिसौल घटता है। इससे हम डिप्रेशन, ओर ऑस्टियोपोसिस व हाईबीपी से बच जाते है।

शोध प्रवधि – प्रस्तुत अध्ययन में अगर शहर की मध्यम वर्ग की स्नातक पास 35–45 वर्ष की 80 महिलाओं का चयन उदेश्यानुसार प्रतिदर्श द्वारा किया गया। ग्रुप में वे 40 महिलाऐं सम्मिलित हैं, जो ध्यान व प्रणायाम सहज योग के माध्यम से करती है। ग्रुप बी में 40 वे महिलाऐं है जो ध्यान व प्रणायाम नही करती है।

उपकरण – महिलाओं के सांवेगिक परिपक्वता का अध्ययन करने के लिए डॉ. यशवीर सिंग व डॉ. महेश भार्गव के संवेगात्मक परिवक्वता परीक्षण का उपयोग किया गया। इस परीक्षण द्वारा दोनों ग्रुप की महिलाओं की संवेगात्मक परिपक्वता को ज्ञात किया गया।

इस परीक्षण की प्रश्नावली में 48 प्रश्न है, जो सांवेगिक विकास के विभिनन पहलुओं से संबंधित है। प्रत्येक प्रश्न के 5 विकल्प है अत्यधिक, बहुधा, अनिश्चित प्राय: कभी नही। इसमें अत्यधिक से 5 बहुधा को 4 अनिश्चित को 3 प्राय: को 2 व कभी नही को 01 अंक दिये गये है। इसमें से किसी एक विकलप को चुना है।

परिणाम व विश्लेषण – परीक्षण से प्राप्त होने वाले आंकड़ो का सांख्यिकीय

* सहायक प्राध्यापक शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर, मालवा (म.प्र.) भारत

विश्लेषण टी-टेस्ट द्वारा किया गया। प्रयोज्य के सांवेगिक परिवक्ता का परीक्षण करके सांख्यिकीय विश्लेषण करने के उपरांत परिणामों को सारणी-ए में दर्शाया गया।

	Mean	S.D	t-Value
ग्रुप 'ए' में महिलाऐं जो ध्यान करती है।	12.1	9.44	2.85
ग्रुप 'बी' में महिलाऐं जो ध्यान नही करती है।	21.8	11.44	

उपरोक्त सारिणी से स्पष्ट है कि जो महिलाऐं ध्यान व प्राणायाम करती है, उनमें संवेगात्मक परिवक्ता अधिक देखने में आई।

प्रणायाम व ध्यान से हमें मानसिक शांति प्राप्त होती है जिसमें हमारा संवेगात्मक संतुलन बना रहता है। प्रणायाम के माध्याम से हमारी सभी नाड़ियों में प्राण का संचार सुचारू रूप से होता है तथा इसका प्रभाव हमारे विचारों व भावनाओं पर भी पड़ता है, जिससे व्यक्ति की सांवेगिक परिवक्ता बढ़ती है। तथा चिंता व निराशा कम होती है।

निष्कर्ष – हर इंसान अच्छी सेहत चाहता है, सेहत के लिए कोई जिम जाता है तो कोई अपना खान-पान बदलता है पर क्या आपको पता है कि अच्छी सेहत के लिए इमोशनली फिट रहना भी बहुत जरूरी है। आप भावनात्मक रूप से जितने ज्यादा मजबूत होंगे, आपको बिमारियॉ उतनी ही कम होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आह: जिंदगी नवम्बर 2015 दैनिक भास्कर 18-21
2. कपिल एच.के. सांख्मिरी के मूलताक पृ.क्र. 172-174
3. दैनिक भास्कर 03.02.2013 पृ.क्र.04
4. पत्रिका हेल्थ 19.07.2015 पृ.क्र.01
5. डॉ. यशविर सिंह, डॉ. महेश भटनागर नेशनल साइकलोलाइजिकल कॉपरेशन, आगरा।

****

ख्याल शैली - एक यात्रा

डॉ. दीप्ति गेड़ाम परमार *

प्रस्तावना – भारत वर्ष की दो कलाओं का विशेष प्रभाव दिखाई देता है –

1. संगीत कला
2. शिल्प कला

अर्थात् यह दो कलाए भारत वर्ष की इतनी समृद्ध और उच्चकोटि की हैं, जिन्हें विदेशी शासक न तो ले जा पाए, न ही उनमें कोई विशेष परिवर्तन कर पाए। भारत के अनेक प्राचीन मंदिरों आदि में बहुत-सी खंडित प्रतिमाए मिलती हैं, साथ ही ऐसी मूर्तियाँ भी हैं, जो खंडित नहीं हो पाई थी। उनकी बनावट को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि ये मूर्तियाँ बोलने ही वाली हैं या कुछ कहने के हाव-भाव दिख रहे हैं। इन खंडित प्रतिमाओं को देखकर यह भी महसूस होता है कि आक्रमणकारी इन्हें ले जा नहीं सकते थे, परंतु खीझकर गुस्से में खंडित तो कर ही सकते थे, जो उन्होंने किया। इसके विपरीत भारतीय संगीत-कला भी अपने आप में बहुत ही समृद्ध एवं उच्चकोटि की है।

प्राचीन समय में संगीत, अन्य दूसरी विद्यायें भी गुरू-मुख से ही सीखा जाता था, अन्य कोई साधन नहीं था। शिक्षा ग्रहण करना बहुत ही श्रमसाध्य होता था एवं धैर्य के बिना संभव नहीं था। अत: ये दोनों ही कलाए वर्तमान में भी अपना अस्तित्व स्थाई करने में सफल रहीं।

विदेशी आक्रमण से पूर्व एवं उस दौरान आक्रमणकारियों ने भारतीय संस्कृति पर पूर्ण आघात किए, फिर भी भारतीय संस्कृति विशेष रूप से संगीत, अपना अस्तित्व बनाए रखने में सफल रहा। इसका कारण यह भी था कि आक्रमणकारी पूर्णरूपेण स्थाई नहीं हो पाए थे।

मध्यकाल में मुग़ल शासन से स्थायित्व आना आरंभ हुआ, जो जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर के समय से मिलता है। यहाँ विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह कि भारतीय संगीत में उससे पूर्व कई परिवर्तन करने के प्रयास किये गये, परंतु ये सभी प्रयास सफल नहीं हुए। इन असफल प्रयासों का तात्पर्य उस सूफी-परंपरा से है जो अलाउद्दीन खिलजी (सन् 1296 - 1316 ई.) के समय से चली आ रही थी। अमीर खुसरो और उसके अनेक अनुयायियों ने अपनी परंपरा का प्रचार करने के बहुत प्रयास किए। अमीर खुसरो ने भारतीय संगीत में बहुत से परिवर्तन कि नए रागों का निर्माण किया, तालों का निर्माण किया, परंतु वे स्वयं भारतीय संगीत से अत्यधिक प्रभावित थे। तत्कालीन गुणी गोपाल नायक का उन्होंने गायन सुना और उस गायन का अनुकरण भी किया।

चूँकि खिलजी सम्राटों के युग के पूर्व से भारत मुस्लिम सेनाओं से आक्रान्त हो गया था, निज़ामुद्दीन चिश्ती के सात सौ समर्थक भारत में फैल गए थे। अमीर खुसरो और उसके अनेक अनुयायियों ने अपनी सूफी परंपरा का प्रचार करने के बहुत प्रयास किये। एक ओर जहाँ भारतीय जनसाधारण को मंदिरों आदि जैसे स्थानों में प्रवेश से वंचित रखा जाता था, दूसरी ओर सूफियों के दरबार में समाज के हर स्तर के व्यक्तियों को स्थान मिलने लगा, जिससे भारतीय जनता का सूफी-परंपरा या सूफी संगीत की ओर अधिक झुकाव होने लगा। इसके अतिरिक्त तत्कालीन भारतीय संगीत जनसाधारण की दृष्टि से अधिक क्लिष्ट था एवं सूफी संगीत सरल भाषा में होने के कारण जनता को अधिक मनोरंजक लगने लगा। इस प्रकार इस संगीत का प्रचार होने लगा।

ग्वालियर के तोमर वंश के समय तक चिश्ती सूफ़ियों की परंपरा भारत में ख़ूब प्रचार में आ गई थी। इसका मुख्य कारण था उनके गीतों की लोकभाषा। अमीर खुसरो एवं अन्य अनुयायियों द्वारा प्रचारित ग़ज़ल, क़व्वाली, ख़्याल, मुकरी आदि से भारतीय संगीत पर प्रतिकूल प्रभाव होने लग।। इस विदेशी संगीत से भारतीय संगीत पर विपरीत प्रभाव को रोकने के लिए सबसे पहले ग्वालियर के राजा डूंगरेन्द्र सिंह तोमर ने उत्तर दिया और इसी उद्देश्य से 'विष्णुपद' नामक गीत की रचना की थी चूँकि परंपरागत भारतीय संगीत के बोल संस्कृत भाषा में होते थे, जो उस समय के जनसाधारण की समझ से परे हो गए थे। उस समय का संगीत केवल राजसभाओं, प्रशस्तिकारों तथा विद्धानों तक ही सीमित रह गया था। अत: संस्कृत के गीतों पर आधारित राग गायन जनसाधारण के लिए मनोरंजन का आधार होना संभव नहीं था। भारतीय संगीत को जनसाधारण के लिए अधिक सरल बनाने के लिए ही डूंगरेंद्र सिंह ने विष्णुपदों की रचना की, जिनमें लोकभाषा का प्रयोग किया और उन्हें भारतीय राग-रागिनियों में स्वरबद्ध किया। अत: सूफी संगीत का प्रभाव कम करने और भारतीय संगीत को अधिक सरल और मनोरंजक बनाने के लिए राजा डूंगरेन्द्र सिंह ने विष्णुपद की रचना की। इस क्रिया से भारतीय संगीत को एक नई दिशा मिली। अर्थात् यह क्रिया सूफ़ी संगीत के जवाब में उभरी।

इसी क्रम में राजा मानसिंह तोमर ने विष्णुपद के आधार पर अपने दरबार के विद्धान कलावंतों से भक्तिपरक पदों की रचना कराई, जो ब्रजभाषा में रची गई और यही क्रिया **'ध्रुवपद शैली'** के नाम से प्रचार में आ गई। राजा मानसिंह तोमर ने ध्रुवपद का आविष्कार करने के लिये सबसे पहले ग्वालियरी भाषा में कविताए लिखी, इन कविताओं में तीन प्रकार की विषय-सामग्री मिलती है –

1. भगवान कृष्ण से संबंधित पदों को मानसिंह तोमर ने **'विष्णु पद'** नाम दिया।
2. धार्मिक विभूतियों की प्रशंसा में जो पद लिखे गए, उन्हें **'स्तुति'** कहा है।
3. प्रेम की अवस्थाओं के चित्रण या वर्णन से युक्त रचनाओं को **'ध्रुवपद'** कहा गया है।

इसके बाद इन कविताओं को भारतीय रागों में स्वरबद्ध किया। इन पद रचनाओं को चार चरण में विभाजित किया। तत्पश्चात् अपने दरबार के कलावंतों के साथ विशेष चर्चा कर इन पदों को स्वतंत्र रूप से गाने योग्य बनाया। इस प्रकार राजा मानसिंह ने ध्रुवपद का आविष्कार किया। राजा मानसिंह ने ध्रुवपद की शिक्षा के लिये ग्वालियर में संगीत अध्ययन संस्था (विद्यापीठ) की स्थापना की, जिसमें उनके दरबार में आश्रित संगीत नायकों

* बी. एम 76, नेहरू नगर, भोपाल(म.प्र.) भारत

को शिक्षा देने के लिए प्रेरित किया गया। ग्वालियर का यह संगीत विद्यापीठ पूर्ण भारत में प्रसिद्ध हुआ, इसके शिष्य मियाँ तानसेन भी थे। राजा मानसिंह समय-समय पर संगीतज्ञों से संगीत की जटिल समस्याओं के बारे में चर्चा करते थे एवं कई संगीत परिचर्चा भी बुलाते थे।

राजा मानसिंह ने अनेको कलावंतों को अपने दरबार में आश्रय प्रदान किया था - नायक बैजू, नायक बख्शू, नायक कर्ण, नायक मेहमूद लोहंग, नायक पाण्डवी आदि। राजा मानसिंह द्वारा अविष्कृत ध्रुवपद शैली संपूर्ण भारत में फैल गई। भारतीय संगीत (ध्रुवपद) इतना प्रभावी था कि मुग़ल शासक हुमायुँ भी इससे अछूता नहीं रहा। इस संदर्भ में हुमायूँ के कार्यकाल की एक घटना का उल्लेख है। हुमायूँ गुजरात पर विजय प्राप्त करना चाहता था। इसलिए उसने युद्ध के दौरान क़त्ले-आम का आदेश दिया। इस बीच बैजू बावरा नामक गायक एक मुग़ल सैनिक द्वारा गिरफ्तार किया गया जो उसका क़त्ल करने पर अमादा था, परंतु बैजू के विशेष आग्रह पर उस सैनिक ने मारा नहीं, हुमायूँ के सामने प्रस्तुत किया। चूँकि नायक बैजू गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह के आश्रित कलावंत थे, इसलिये हुमायुँ के आक्रमण करने पर वे हुमायुँ के सैनिक द्वारा पकड़े गए। उस सैनिक ने नायक बैजू को बादशाह के समक्ष प्रस्तुत किया, बादशाह अत्यंत क्रोध में था। इस बीच ख़ुशहाल बेग कूर्ची, जो सुल्तान बहादुर के पास जाया करता था, बैजू को पहचानता था। उसने बादशाह से कहा कि यह कलावंत (बैजू) गवैयों का बादशाह है। बादशाह के हुक्म पर बैजू ने अपना गायन आरंभ किया। धीरे-धीरे सुल्तान बहादुर का क्रोध शांत होने लगा। बैजू के गायन से अत्यंत प्रसन्न होकर बादशाह ने बैजू को राजकीय वस्त्र देकर कहा - 'जो मांगेगा, वह पाएगा।' बैजू ने अपने गिरफ्तार किए बंधुओं को छुड़ाने की विनती की। बैजू के गायन से हुमायूँ इतना प्रभावित हुआ कि उसका हृदय-परिवर्तन हो गया और उसने क़त्ले-आम बंद कराने का आदेश दिया। साथ ही यह आज्ञा दी कि नायक बैजू जिन लोगों को कहें, उन्हें तत्काल रिहा कर दिया जाए। बादशाह नायक बैजू को समय-समय पर पुरस्कार एवं उपहार भेंट करता रहता था। बैजू ये सभी भेंट उस सैनिक को दे देता था जिसने उसको जीवन दान दिया था।

अकबर के समय में भारतीय संगीत (ध्रुवपद-गायन) ही पूर्ण रूप से प्रभावी रहा। भारतीय राजे-महाराजे भले ही मुग़ल शासन के आधीन थे, परंतु उनके राज्यों में एक-से-एक अच्छे ध्रुवपद-गायक विद्यमान थे, जिनमें रीवा के राजा रामचंद्र के दरबारी गायक तानसेन बहुत प्रसिद्ध थे। शहंशाह अकबर ने अपने विशेष सिपहसालार जलाल ख़ाँ कूर्ची के द्वारा तानसेन को अपने दरबार में सम्मान सहित बुला लिया। शहंशाह अकबर ने इनके गायन से प्रभावित होकर इन्हें **'कंठाभरण वाणी विलास'** की उपाधि से विभूषित किया। इसके साथ ही तानसेन को अपनी सभा के नवरत्नों में सम्मान दिया। अर्थात् अकबर के दरबार में विभिन्न विषयों के दक्ष विद्धानों में से उच्चकोटि के नौ विद्धानों को चुनकर, उन्हें दरबार के नवरत्न की संज्ञा दी गई। इन्हीं में तानसेन एक नवरत्न थे।

इस प्रकार विदेशी आक्रमणों एवं विदेशी संगीत (सूफ़ी संगीत) के लगातार अनेक प्रहार भारतीय संगीत पर पड़ने के बावजूद भारतीय संगीत - ध्रुवपद इतना प्रभावी सिद्ध हुआ, कि उसका एक-छत्र प्रभाव 500 वर्षों तक रहा जो आज भी दिखाई दे रहा है। भारतीय संस्कृति विशेष रूप से संगीत, अपना अस्तित्व बनाए रखने में सफल रहा।

मुग़ल शासकों में बादशाह मुहम्मदशाह रंगीले (सन् 1719-1748 ई) के काल में नियामत ख़ाँ - फ़िरोज़ ख़ाँ नामक कलावंत थे, जो बाद में सदारंग-अदारंग नाम से प्रसिद्ध हुए थे। चूँकि लखनऊ में क़व्वाल बच्चों का गायन बहुत प्रसिद्ध था, इसलिये ख़्याल की रचना उन्हें सरल लगी और उन्होंने सीखा भी। ये दोनों गायक आपसी मनमुटाव एवं तानसेन की परंपरा के ध्रुवपद गायकों के प्रभाव के कारण रूष्ट होकर लखनऊ चले गए। यहाँ उन्होंने अनेक ख़्यालों की रचना की जिनमें अपना उपनाम सदारंग-अदारंग दिया। परंतु इन रचनाओं को स्वयं कभी नहीं गाया, ना ही अपने वंशजों को सिखाया। सदारंग-अदारंग यह गीत-प्रकार (ख़्याल) केवल अपने शिष्यों को ही सिखाते थे। जब मुहम्मदशाह रंगीले ने यह ख़्याल-गायन सुना, तो उन्होंने सदारंग-अदारंग को अपने दरबार में पुन: वापस बुला लिया। यह गीत-प्रकार मुहम्मदशाह रंगीले को अधिक मनोरंजक और पसंद भी आया। सदारंग-अदारंग ने अनेकों ख़्यालों की रचना की, जिसमें सदारंगीले मोहम्मदशाह नाम आया। इस प्रकार मुहम्मदशाह की रूचि को देखते हुए, सदारंग-अदारंग ने असंख्य ख़्याल बनाए जो आज भी प्रचलित हैं। परंतु ख़्याल-गायन को ध्रुवपद की तुलना में निक्रिष्ट ही माना गया। गुणीजन इस ख़्याल-गायन को मुंडी ध्रुवपद या लंगड़ा ध्रुवपद कहते थे, क्योंकि इसमें ध्रुवपद के समान चार चरण (स्थाई, अंतरा, संचारी, आभोग) नहीं गाए जाते थे। इसमें केवल दो ही चरण - स्थाई, अंतरा गाए जाते थे। ख़्याल-गायन के प्रति अधिक रूझान के कारण कलावंत/ध्रुवपद-गायक अपने शिष्यों को ख़्याल सिखाने लगे। यहाँ विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि ये कलावंत अपने वंश को ध्रुवपद की ही शिक्षा देते थे और स्वयं ध्रुवपद ही गाते थे, परंतु शिष्य-वर्ग को ख़्याल की शिक्षा देते थे। इस प्रकार राजा के प्रोत्साहन एवं गुणीजनों की शिक्षण-पद्धति से ख़्याल-गायन का प्रचार अधिक होने लगा। शोधार्थी यहाँ विशेष रूप से कहना चाहती है कि मुग़ल काल से सिंधिया काल(सन् 1761 ई.) के पहले तक ख़्याल-गायन प्रचार में तो आया, परंतु उसे स्थायित्व या संगीत जगत की मान्यता प्राप्त नहीं हुई।

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सिंधिया शासन का उदय हुआ, जिसमें महादजी सिंधिया ने ग्वालियर राज्य की स्थापना की। चूँकि ग्वालियर राज्य पहले से ही संगीत का गढ़ था, अत: सिंधिया दरबार में भी अनेक ध्रुवपद-गायकों को आश्रय मिला। सिंधिया काल में ही लखनऊ के प्रसिद्ध क़व्वाल षक्कर ख़ाँ, मक्खन ख़ाँ के वंशज नत्थन पीरबख़्श दरबार में आए, जिन्हें राजदरबार में यथोचित सम्मान मिला। ये गायक क़व्वाल-बच्चों के नाम से जाने जाते थे, जिनकी गायन-शैली क़व्वाल-शैली थी। यह शैली पूर्णरूपेण तान-अंग प्रधान थी। यह गायकी सिंधिया शासनाध्यक्षों को बहुत पसंद आई। सबसे अधिक प्रभावित किया उस्ताद बड़े मुहम्मद ख़ाँ की गायकी ने, जो क़व्वाल-बच्चों के ही वंशज थे। उनकी गायकी में तान-अंग इतना प्रबल और सुंदर था कि उन्हें 'तान-सम्राट' कहा जाता था। सिंधिया नरेशों को यह गायकी ध्रुवपद की तुलना में अधिक पसंद आने लगी। परंतु उनके दरबार में ध्रुवपद-गायकों को भी आश्रय प्राप्त था। इसके अंतर्गत **सिंधिया काल में ध्रुवपद-गायक पं. चिंतामणि मिश्र की समृद्ध शिष्य-परंपरा विद्यमान थी। इस परंपरा के विद्धान ध्रुवपद-गायकों में थे - पं. नारायण शास्त्री, पं. वामन बुवा, श्री पुत्त पांडे, पं लाला बुवा, पं. विष्णु बुवा, पं. सखाराम, श्री गणेशी लाल चौबे, पं. गणपत राव गवई, पं. बलवंतराव साँवले, श्री सतभैया वैद्य, पं. तात्याबुआ भजनी, पं. राजाभैया पूछवाले आदि।** इन ध्रुवपद-गायकों ने ध्रुवपद के प्रभाव को बनाए रखने के लिए ध्रुवपद-शैली की सभी तकनीकी विशेषतायें आलाप, गमक, उपज आदि ख़्याल में मिला दी, ख़्याल में दो ही चरण थे स्थाई और अंतरा, परंतु उसे पूर्ण गाने का नियम रखा गया और क़व्वाल-अंग की खटका, मुर्की, जमजमा, तानबाज़ी भी अपनाई। इस क्रिया से जब ख़्याल गाया जाने लगा तो ध्रुवपद का ही आभास होता था क्योंकि इसमें ध्रुवपद के आलाप की गंभीरता, गमक, उपज आदि स्पष्ट सुनाई देती थी। इस प्रकार ध्रुवपद-गायकी की सभी विशेषताओं

को ख़्याल में समाहित किया गया और यह नई शैली **ग्वालियर-घराना अर्थात् ग्वालियर ख़्याल-शैली के रूप में स्थापित हुई।**

इस संदर्भ में लेखिका ने निम्नलिखित बिंदु निर्धारित किए हैं जो ध्रुवपद-गायकी के लिए कठिन एवं ख़्याल-गायकी के लिए सरल हैं, इसलिये ख़्याल-गायकी स्थापित हो सकी -

1. ध्रुवपद-गायकी अलग ही थी, जो क़व्वाल बच्चों के घराने में नहीं थी।
2. चूँकि ध्रुवपद-शैली का साहित्य समृद्ध था, जिसमें देवी देवताओं का वर्णन ब्रज भाषा और खड़ी बोली में प्राप्त होता है। ध्रुवपद के चार चरण होते हैं - स्थाई, अंतरा, संचारी, आभोग, जो ख़्याल-गायन की तुलना में कठिन है, यही क़व्वाल बच्चों के लिए कठिन था। इसके विपरीत क़व्वाल बच्चों का साहित्य श्रृंगारिक और विदेशी भाषा पर आधारित होता था।
3. ध्रुवपद की तुलना में ख़्याल-गायन पूर्ण रूपेण श्रृंगार-प्रधान, संक्षिप्त (स्थाई-अंतरा) भाषा की दृष्टि से कमज़ोर था, परंतु संगीत जगत के लिए नया रूप भी था।
4. तत्कालीन संगीत जगत को ध्रुवपद की रचना और साहित्य याद करने एवं समझने में कठिनाई होती थी। इसलिये नई शैली का प्रभाव पड़ने लगा।
5. इसके अतिरिक्त शासकों का पूरा झुकाव ख़्याल-शैली पर था। यह कारण भी अप्रत्यक्ष रूप से संगीत जगत को बहुत प्रभावित करता था।

उपरोक्त बिंदुओं को अधिक स्पष्ट करने के लिए लेखिका यहाँ ध्रुवपद-शैली के तत्व प्रस्तुत कर रही है -

1. ध्रुवपद के चार चरण होते हैं - स्थाई, अंतरा, संचारी एवं आभोग। ध्रुवपद-गायन का सबसे महत्वपूर्ण नियम है - बंदिश आरंभ करते ही यह चारों चरण पूर्ण गाए जाए।
2. ध्रुवपद के चारों चरण गाने के पश्चात् उसमें आलाप, बोल-आलाप, गमक, उपज आदि से राग/ध्रुवपद की बढ़त होती है। ध्रुवपद-गायन की तकनीकी विशेषताओं में खटका, मुर्की, ज़मज़मा, तान-अंग पूर्णत: निषेध है।
3. ध्रुवपद का साहित्य कठिन होता है। इसकी भाषा-शैली बहुत ही क्लिष्ट होती थी, जो जनसाधारण के लिए कठिन होती थी। अधिकतर ध्रुवपद भक्ति-प्रधान होते हैं, अर्थात् ईश्वर की आराधना अथवा महाराज की प्रशंसा से युक्त होते हैं।

इसके विपरीत क़व्वाल बच्चों के ख़्याल ध्रुवपद से सरल थे। क़व्वालों के ख़्यालों में तान-अंग की प्रधानता थी। उनके ख़्यालों के ताल भी भिन्न होते थे, जो ध्रुवपद की तुलना में अधिक सरल थे। ख़्याल-गायन के संदर्भ में श्री अमीक हनफ़ी अपनी पुस्तक 'उस्ताद रजब अली ख़ाँ' में लिखते हैं - **'टप्पा गायक मियाँ शोरी की परंपरा के दो गायक लखनऊ में थे। शक्कर क़व्वाल और मक्खन क़व्वाल। दोनों ज़बरदस्त ख़्यालिये थे। शक्कर क़व्वाल ने ख़्याल को अधिक प्रभुत्वसंपन्न और स्वतंत्र बनाने की दृष्टि से ऐसी तालों में ख़्यालों की रचना की जिसमें ध्रुवपद नहीं गाए जा सकते।'** इस तथ्य से यह प्रमाणित होता है कि ख़्याल-गायन प्रचार में तो था, जिसका उल्लेख शोधार्थी ने पूर्व में किया है, परंतु ध्रुवपद के समकक्ष उसको स्वीकार नहीं किया गया था। अत: ध्रुवपद के समकक्ष लाने के लिये अर्थात ख़्याल-गायन को अधिक प्रभावी बनाने के लिए क़व्वाल बच्चे अनेक प्रयास करते रहे। धीरे-धीरे इसका प्रभाव यह होने लगा कि ख़्याल मनोरंजक लगने लगा क्योंकि इसका भाषा-साहित्य सरल एवं श्रृंगार-प्रधान था। इसके गायन के कोई विशेष नियम नहीं थे। बंदिश छोटी होती थी। ख़्याल-गायन में आलाप की गंभीरता शून्य थी, इसमें तान-अंग विशेष रूप से विद्यमान था। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया है कि महाराज दौलतराव सिंधिया उस्माद बड़े मुहम्मद ख़ाँ के तान-अंग से बहुत प्रभावित थे। उस्ताद बड़े मुहम्मद ख़ाँ का तान-अंग इतना प्रभावी था, कि वे तान सम्राट के नाम से प्रसिद्ध हो गए। इसका परिणाम यह हुआ कि महाराज ख़्याल-गायन को अधिक प्रोत्साहन देने लगे। महाराज ध्रुवपद की तुलना में ख़्याल-गायन सुनना अधिक पसंद करने लगे। इस कारण सिंधिया महाराजाओं के आश्रित ध्रुवपद-गायक कुंठित एवं स्वयं को उपेक्षित महसूस करने लगे। कुछ कलावंत दुखी होकर अन्य राज्यों में चले गए।

जो कलावंत महाराज के राज्याश्रय में ही रहे, उन्होंने महत्पूर्ण कार्य किए यह महत्वपूर्ण कार्य था - ध्रुवपद गायन-शैली की सभी तकनीकी विशेषतायें ख़्याल में मिला दी गईं। इस क्रिया से जो गायन-शैली बनी, उसके बिंदु शोधार्थी यहाँ प्रस्तुत कर रही है -

1. ख़्याल की बंदिश छोटी होती थी - स्थाई, अंतरा। बंदिश पूर्ण याद होना एवं गायन आरंभ करते ही बंदिश पूर्ण गाना - ध्रुवपद-शैली का यह नियम इस नई शैली में अनिवार्य किया गया। चूँकि बंदिश छोटी होती थी (स्थाई अंतरा), अत: गायक को याद करने में कठिनाई महसूस नहीं हुई।
2. ध्रुवपद की आलापचारी, बोल-आलाप की गंभीरता ख़्याल-गायन में अपनाई गई, जो क़व्वालों के ख़्यालों में नहीं थी। क़व्वालों के ख़्याल-गायन में पूर्व में केवल तान-अंग ही विद्यमान था। परंतु ध्रुवपद-गायकों ने उसमें आलाप अंग को जोड़ा, जिससे इस नई शैली में ध्रुवपद का पूर्ण आभास होने लगा।
3. कव्वालों के ख़्यालों में खटका, मुर्की, ज़मज़मा, तान आदि लिए जाते थे, जो ध्रुवपद-गायन में पूर्णत: निषेध थे। ये सभी तत्व नई शैली (ख़्याल-शैली) में रखे गए। ध्रुवपद का जो आलाप अंग इस ख़्याल-शैली में अपनाया गया, उसमें क़व्वाली अंग (खटका, मुर्की, ज़मज़मा, तान आदि) का प्रयोग किया जाने लगा।
4. ध्रुवपद के क्लिष्ट भाषा-साहित्य के स्थान पर ख़्यालों का भाषा-साहित्य सरल एवं श्रृंगार-प्रधान था, जो समझने एवं याद करने में सरल था। साथ ही अधिक मनोरंजक भी लगने लगा।
5. नई शैली (ख़्याल-शैली) को अधिक प्रोत्साहन मिलने के कारण ध्रुवपद-गायक अपने शिष्य-वर्ग को ध्रुवपद के स्थान पर नई ख़्याल-शैली सिखाने लगे। यहाँ विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि ध्रुवपद-गायक भी नई शैली ख़्याल को उच्च स्तर का नहीं मानते थे, इसलिये उन्होंने अपने वंशजों को ध्रुवपद-गायन की ही शिक्षा दी। परंतु शिष्यों को ख़्याल-गायन सिखाया।

इसका परिणाम यह हुआ कि उनके वंशज तो गिने-चुने ही रहे गए एवं शिष्यों की संख्या बहुत हो गई। ध्रुवपद-कलावंतों की इस शिक्षण-पद्धति से नई शैली का ख़ूब प्रचार हुआ। चूँकि इसमें ध्रुवपद के सभी अंगों का समावेश था, जिससे इस नई शैली को ख़्याल-गायन शैली के रूप में स्वीकार किया गया।

अत: परोक्ष रूप से यह प्रमाणित होता है कि तत्कालीन गुणीजन ध्रुवपद के समान ही गायन-शैली सुन रहे हैं। इसको सुनने में ध्रुवपद-शैली का ही आभास होने लगा। अत: नई शैली को अपना लिया गया, जो ख़्याल-शैली के नाम से स्थापित हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

सूफी मत में गुरू महिमा

डॉ. अनूप शर्मा *

प्रस्तावना – सूफी मत में साधक यात्री होता है और यह गुरू के मार्गदर्शन में होती है। गुरू के अभाव में सालिक (यात्री) ब्रह्मप्राप्ति की परिकल्पना नहीं कर सकता। गुरू स्वयं शिष्य को खोज निकालता है न कि शिष्य गुरू को। सिद्धिहीन गुरू और भ्रमित अज्ञानी शिष्य मरीचिका के समान ब्रह्मप्राप्ति की कामना करते हैं। पूर्ण ब्रह्म की खोज या प्राप्ति वही कर सकता है, जो स्वयं ब्रह्मज्ञानी हो। सूफी मार्ग में अग्रसर हाने वाले साधक स्वयं को गुरू के समक्ष पूर्णत: समर्पित कर देते हैं। मुर्शीद में ऐसी शक्ति होती है कि वह मुरीद को साधना का मार्ग बता देता है एवं उस पर ले भी चलता है। सांसारिक प्रलोभनों से बचाने में गुरू उसकी सहायता करते हैं, गुरू की निगरानी में ही वह अपने लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग तय करता है। गुरू के अभाव में यदि कोई शिष्य इस मार्ग पर अग्रसर होता है, तो उसे ढोंगी कहा जाता है निकलसन ने कहा है कि – 'गुरू का आश्रय लिए बिना जो इस आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर होना चाहता है, वह मानो शैतान को अपना मार्गदर्शक बनाए हुए है। उसकी तुलना उस पेड़ से की गई है, जो बागवान के ध्यान नहीं देने के कारण कोई फल नहीं देता। यदि देता भी है, तो कड़वा फल देता है।' सूफी परम्परा में गुरू तत्व सर्वोपरि है। गुरू ही ईश्वर का दर्शन कराने के सर्वसमर्थ है।

सूफी परम्परा में परमात्मा के साथ संतों का एकत्व कैसे संभव है? इस विषय में कहा जाता है कि साधक को गुरू का चिन्तन करना चाहिए। रामपूजन तिवारी के अनुसार – 'मुरीद को गुरू का ध्यान बराबर करना चाहिए। सभी बुरे विचारों से गुरू उसकी रक्षा करता है। गुरू की आलौकिक शक्ति मानों साधक की सभी चेष्टाओं में बनी रहती है जहाँ भी वह जाता है। वह उसकी रक्षा करती है, ध्यान करते–करते यह चीज़ इतनी दूर तक पहुँच जाती है कि साधक मनुष्यों में तथा सभी वस्तुओं में गुरू को ही देखता है।' इस स्थिति में शिष्य सभी वस्तुओं में गुरू को ही देखता है।' इस स्थिति को ही गुरू में लय कर देना कहते हैं। साधक अपने गुरू की आध्यात्मिक स्थिति के सहारे पीर को प्रत्यक्ष करता है। अब साधक पीर का अंग बन जाता है और उसकी सम्पूर्ण दिव्य शक्ति का अधिकारी हो जाता है। तीसरी अवस्था में शिष्य गुरू के सहारे पैगम्बर के निकट पहुँच जाता है। उसे परमात्मा में लय होना कहते हैं। शिष्य में आध्यात्मिक शक्ति के प्रवेश की विधि को 'तवज्जह' कहा जाता है। सूफी परम्परा में जब गुरू शिष्य के साथ 'तवज्जह' की प्रक्रिया करते हैं तब साधक शांत मन से पवित्र आसन पर बैठता है। वह गुरू का ध्यान कर अपना दाहिना कंधा समझता है। 'शिष्य कंधे से अपने हृदय तक की एक रेखा की कल्पना करता है। इस बात का अनुभव करता है कि गुरू की शक्ति उसके हृदय में प्रवेश कर रही है बार–बार इस प्रकार का ध्यान करने से पीर का हृदय और गुरू के हृदय के साथ आत्मसात हो जाता है और उसके अस्तित्व का लोप हो जाता है।' इस तरह से गुरू के साथ शिष्य की यात्रा प्रारंभ होती है। ठीक उसी प्रकार से जिस प्रकार भ्रमरी किसी भी कीड़े को अपनी मांद में बंदकर रात–दिन चारों और गुंजार करे तो उसे वह भ्रमरी की आकृति बना देती है।

सूफी कवियों ने भी अपने काव्य में गुरू की महिमा को सर्वोपरि बताया है। जायसी ने अपने महाकाव्य पद्मावत में गुरू के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है –

'तन चित उर मन राजा कीन्हा। हिय सिंहल, बुद्धिपद्मिनी चीन्हा।
गुरू सुआ जेहि पंथ दिखावा। बिन गुरू जगत को निरगुन पावा।'

जायसी ने अपने काव्य 'अखरावट' में गुरू के महत्व का प्रतिपादन किया है –

'दा दया जा कह गुरू करई। सो सिख पंथ समुझि पग धरहि।'
सात खण्ड और चार निसेनी। अगम चढ़ाव पंथ तिखेनी।।
तौ वह चढ़ै जो गुरू चढ़ावै पाँव न डगै अधिक बल पावै।
जो गुरू सकति भगति भा चेला। होई खिलार खेल बहु खेला।।'

अलीमुराद ने कुमरावत में कहा है बिना गुरू के सिद्धि प्राप्त नहीं की जा सकती –

'बिना गुरू कछु काम न होई। बेस अकारथ पूरी खोई।
पहले प्रीत गुरू से कीजे। प्रेम बाट में तब पग दीजे।।'

इस प्रकार कासिम शाह, जायसी, मंझन, मुतुबन, उसमान आदि कवियों ने भी गुरू की महत्ता का प्रतिपादन अपने काव्य ग्रंथों में किया है। गुरू के साथ ही शिष्य की यात्रा आरम्भ होकर चार मुकामात को पार करती है, वही साधक की चार अवस्थाएँ हैं – 1. शरीयत 2. तरीकत 3. हकीकत 4. मारीफत।

शरीयत – शरीयत का आशय है, धर्मग्रंथों में वर्णित विधि निषेधों का पालन अथवा कर्मकाण्ड। यह सूफीमत में दीक्षित होने की पूर्व स्थिति है। इससे परमात्मा का दीदार नहीं हो सकता। किन्तु परमात्मा से मिलने की उत्कट इच्छा जाग्रत करने के लिए यह भावभूमि तैयार करती हैं जप तप संयम सदाचार इन नियमों का पालन करने से उसे यह इच्छा जाग्रत होती है।

तरीकत – सूफीमत में दीक्षित हो जाने के बाद सालिक प्रियतम से मिलने के लिये अशुद्ध चित्तवृत्तियों का निषेध करता है। आचार्य शुक्ल ने इसे उपासना कांड कहा है उपासना कांड के अंतर्गत नाम स्मरण तथा अजपाजप महत्वपूर्ण है। सूफी मत में दीक्षित होने के बाद सालिक प्रेमस्वरूप ब्रह्म का साक्षात्कार करने के लिए आतुर हो जाता है, भगवान के नाम का बार–बार उच्चारण कर अभीष्ट प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता है। जिक्र करने के दो तरीके हैं – जिक्रअली 2 जिक्र खफी । जिक्र–अली में साधक मन को ईश्वर में केन्द्रित कर जोर–जोरसे 'अल्लाह लाइल्लाह इल्लिलाह' के नाम का उच्चारण करता है और

*शोधार्थी, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

जिक्रखफी में एकान्त भाव से परमात्मा का मानस में चिन्तन करता है। इससे उसकी अशुद्ध चित्तवृत्तियों का शमन होने लगता है।

हकीकत – चित्तवृत्तियों के निरोध से शुद्ध हृदय शिष्य को ज्ञान की प्राप्ति हाती है। परम ज्ञान होने से चित्त स्थिर हो जाता है और सिर्र की अवस्था को प्राप्त होता है तथा परमात्मा के दर्शन का अधिकारी हो जाता है। इसे ज्ञान प्राप्ति की अवस्था कहते हैं।

मारीफत – परमात्मा का दर्शन कर साधक आत्मविभोर हो जाता है। सुधबुध खो बैठता है परमात्मा के अतिरिक्त कुछ और वस्तु का ज्ञान नहीं रह जाता है। सभी इन्द्रियाँ पूँजीभूत होकर अपने कार्य व्यापार को छोड़ परमात्मा में निमग्न हो जाती हैं। इसे ही फ़ना की अवस्था कहा जाता है।

डॉ. चन्द्रबली पांडेय ने इन स्थितियों का विवेचन विस्तृत रूप से किया है। उनके अनुसार – 'शरीयत से तरीकत भिन्न है तथापि उसमें भी क्रिया–पक्ष ही प्रधान है। तरीकत को चाहे तो तसव्वुफ की शरीयत कह सकते हैं। तरीकत पर चलने से मुआरिफ का आविर्भाव होता है। मुआरिफ की दशा में ज्ञान उत्पन्न होता है और वह मारीफत से हकीकत की अवस्था में पहुँच जाता है। हकीकत वास्तव में साधन नहीं अनुभूति की अवस्था है इस अनुभूति की उपलब्धि के लिए सालिक सारी योजना करता है। 'मुआरिफ अल्लाह की अनुकम्पा का प्रसाद है। सूफियों में ऐसे अनेक साधक हुए जिन्हें बिना कर्मकाण्ड व उपासना के प्रियतम का साक्षात अनायास ही हो गया। भगवतकृपा बिना शुद्ध आचरण संभव नहीं।

हिन्दु शास्त्रों में विभिन्न लोकों की चर्चा हुई है। नरलोक, देवलोक, मृत्युलोक, पाताललोक, ब्रह्मलोक, सिद्धलोक इत्यादि–इत्यादि। इसी प्रकार से सूफी मत में भी नासूत (नरलोक) अलकूत (देवलोक) जबरूत (ऐश्वर्यलोक) आहूत (माधुर्यलोक) की चर्चा हुई है। परमात्मा में लीन साधक अनुभूति करता हुआ अनहलक कह पड़ता है। उसकी यात्रा नासूत से लाहूत तक तय होती है। परमात्मा का दर्शन करते ही उसके प्रेम के लिए आतुर हो उठता है और नासूत में पहुँचकर फना हो जाता है।

सालिक अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जिन भावभूमियों को तय करता है। उनकी संख्या सात मानी गई है। इन सप्तभूमियों को साधक अपने प्रयत्न से प्राप्त करता है। किन्तु 'हाल' भावावस्था की उपलब्धि परमेश्वर की कृपा का फल है। इससे अहंभाव का नाश हो जाता है और प्रेमानन्द की प्राप्ति होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सूफी मत साधना और साहित्य – डॉ. रामपूजन तिवारी।
2. द मिस्टिकस ऑफ इस्लाम – निकलसन।
3. पद्मावत – मलिक मोहम्मद जायसी।
4. कुमरावत – अलीमुराद।
5. तवस्वुफ अथवा – सूफीमत – पं. चन्द्रबली पांडेय।

****

योग के परिपेक्ष्य में नाडी वर्णन- एक परिचय

डॉ. श्याम सुन्दर पाल *

प्रस्तावना – नाड़ी का शाब्दिक अर्थ है- धारा प्रवाह। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार- आत्मिक शरीर में 72 हजार नाडियॉ है। आत्म दृष्टि प्राप्त कर व्यक्ति प्रकाश धाम के रूप में देख सकता है। वर्तमान समय में नाड़ी का रूपांतर नस व तंत्रिका के रूप में किया गया है। यह शब्द उपर्युक्त नही है क्यो कि नाडी की रचना सूक्ष्म तत्वों से होती है और चक्रो की भॉति इनकी स्थिति भौतिक शरीर में नहीं है।

मानव शरीर की समस्त आंतरिक गतियों, उद्वेगों, संवेदनाओ, भावनाओं, आदि का प्रवाहित करने का काम ये नाडियॉ ही करती है। नाडियॉ वे सूक्ष्म नलिकाएँ है, जिससे प्राण शक्तियों का प्रवाह होता है।

विद्युत उत्पादन केन्द्र से तारों द्वारा विद्युत उप केन्द्रों को भेजी जाती है फिर ट्रान्सफार्मर के जरिए उसका वोल्टेज घटाकर उसे दूसरे कार्यो मे प्रयुक्त किया जाता है। यही सिद्धांत भौतिक शरीर और मन द्वारा ऊर्जा-उत्पादन पर भी लागू होता है। बस अंतर यह है कि बाहर विशेष तारों की सहायता से विद्युत को उपकेन्द्रों तक ले जाते है परंतु हमार शरीर के भीतर यह कार्य नाडियो द्वारा होता है।

पूरे शरीर में नाडियों का जाल बिछा हुआ है, परंतु नाडियॉ भौतिक शरीर में नही होता है। ये सूक्ष्म शरीर में पाई जाती है। जो प्राण ऊर्जा को पूरे शरीर में प्रभावित करती है।

हाल ही मे इस नाडी-जाल को स्नायुमंडल अथवा तंत्रिकातंत्र के साथ जोड़ा गया है, परंतु छांदोग्योपनिशद् और बृहदारण्यक उपनिशद् मे स्पश्ट रूप से कहा गया है कि शरीर के नाडी जाल की संरचना अत्यंत सूक्ष्म होती है।

शटचक्रो तथा कुंडलिनी के सिद्धांतो के पीछे नाड़ियों की ही भूमिका है। नाड़ी तथा चक्र का संबंध हमारे स्थूल शरीर से न होकर सूक्ष्म शरीर से है।वैसे इन सबकी साधना पहले स्थूल शरीर के माध्यम से शुरू अवश्य होती है परंतु सिद्धि सूक्ष्म शरीर की रचना एवं पूर्ण विकास की उपस्थिति मे ही संभव हो पाती है। अत: जब तक इनके बारे में सूक्ष्म अध्ययन नहीं कर लेगे तब भी आपके दूर होंगे। हमें इसकी पूरी आशा है।

नाड़ियों की संख्या – हमारे सूक्ष्म शरीर में स्थित नाडी -जाल इतना विस्तृत है कि योग विशयक ग्रंथों में उसकी संख्या की गणना में भी मतभेद पाया जाता है।

वशिष्ठ संहिता में **72000** नाड़ियों का उल्लेख मिलता है।

शिव संहिता में **साढ़े तीन लाख** नाड़ियों का वर्णन मिलता है।

प्रमुख नाड़ियाँ – किसी भी विद्युतीय धारामंडल के विद्युत- परिचालक के तीन तारो की आवश्यकता पड़ती है। जिन्हें धनात्मक, ऋणात्मक तक तटस्थ अथवा उदासीन कहते है। ठीक इसी प्रकार हमारे शरीर में भी ऊर्जा- संचार की व्यवस्था पाई जाती है। यह कार्य तीन विशेष नाड़ियों में से इन तीन नाड़ियों (इडा, पिगला, और सुषुम्ना) को ही मुख्य माना गया है तथा इन सभी नाड़ियों को मिलाकर कुल चौदह नाड़ियां प्रमुख है जो निम्न है-

1. सुषुम्ना	2. इडा	3. पिंगला
4. गांधारी	5. हस्तिजिह्वा	6. कुहू
7. सरस्वती	8. पूशा	9. शंखिनी
10. पयस्विनी	11. वारूणी	12. अलंबुशा
13. विश्वोदरा	14. यशस्विनी	

इन चौदह नाड़ियों मे से तीन नाडियॉ प्रमुख है-

1. इडा 2. पिंगला 3. सुषुम्ना

इन तीनो नाड़ियों का वर्णन हम अलग-अलग करेंगे। ये तीन नाड़ियां ही अन्य सभी नाड़ियों तथा शरीर के कार्यो को नियंत्रित करती है।

1. इडा नाड़ी – इडा बाई नासिका द्वारा प्रवाहित होती है। इडा नड़ी शीतलता का प्रतिक है। जिसे कई और नामों से जाना जाता है जैसे- चंद्र, शीत, कफ, अपान, रात्रि, शक्ति, जीव तामस आदि।

आधुनिक विज्ञान के मतानुसार बाई नासिका का ताप कम होता है और इस तरह यह तथ्य पुरानी यौगिक पद्धति को प्रमाणित करता है।

इडा चित्त शक्ति का स्त्रोत है। यह चित्त पूरे शरीर में प्रवाहित होकर अंग-प्रत्यंग की क्रिया-प्रक्रिया स्पंदन एवं पूरे स्थूल-सूक्ष्म एवं हेतुक क्रिया समुदाया का नियंत्रण करते है। इडा का उद्गम स्थान रीढ की हड्डी का अधोभाग 'मूलाधार चक्र' है तथा इसका अंतशीर्ष 'आज्ञाचक्र' है। मूलाधार से इडा बाई ओर बलखाती हुई बिना किसी को स्पर्श किए स्वाधिश्ठान, मणिपुर, अनाहद और विशुद्धि चक्रों को क्रमश: पार करते हुए अंतत: ऊपर आज्ञा चक्र मे पहुँचकर विलीन हो जाती है।

इडा नाड़ी के प्रवाह काल मे मस्तिष्क का दायॉ भाग क्रियाशील होता है। इडा चंद्र शक्ति या मनस शक्ति की प्रवाहिनी होती है। इडा, सुषुम्ना की उपनाड़ी है। मूलाधार के बाई ओर से निकलकर प्रत्येक चक्र मेसे वक्राकार बहते हुए आज्ञाचक्र के बाई ओर से इडा नाड़ी जाती है। इसका रंग नीला होता है।

2. पिगंला नाड़ी – पिंगला नाड़ी प्राण शक्ति प्रवाहिनी है। यह धनात्मक प्राण ऊर्जा प्रवाहित करती है तथा इसे सूर्य नाड़ी के नाम से भी जानते है क्योंकि इसकी ऊर्जा शरीर में जोश - खरोश उत्पन्न करती है। अर्थात शरीर को कठोर परिश्रम के लिए तैयार करती है। वह चेतना को बहिर्मुखी भी बनाती है। यह दाई नासिका द्वारा प्रवाहित होती है। इसका सीधा संबंध हमारे मेरूदंड की दाहिनी ओर स्थित अनुकंपी-नाडी संस्थान से होता है। पिंगला नाडी हृदय की धडकन को तेज करती है तथा शरीर में अतिरिक्त ताप उत्पन्न करती

* (योग) इंदिरा गॉधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र) भारत

है। इसलिए कहा जाता है कि पिंगला नाड़ी शक्ति तथा ऊष्णता प्रदान कर चित्त को बहिर्मुखी बनाने वाली होती है। पिंगला ऊष्णता की द्योतक होती है तथा इसे और कई नामों से जाना जाता है जैसे- सूर्य, ग्रीष्म, पित्त, प्राण, शिव, ब्रह्म, राजस आदि। दाई नासिका का ताप बाई नासिका से अधिक होता है और पुरानी यौगिक पद्धति को प्रमाणित करता है। पिंगला प्राण शक्ति का स्त्रोत है।

पिंगला का उद्गम मूलाधार चक्र के दाहिने पार्श्व से होता है। यह भी लहराती हुई तथा हर चक्र को पार करते हुए मेरूदंड के सहारे ऊपर उठाती है तथा दाहिने नासिका रंध्र के मूल में जहाँ आज्ञा चक्र है, समाप्त होती है। पिंगला मेरूदंड की दाहिनी ओर के समूचे शरीर को नियंत्रित और नियमित करती है। पिंगला नाड़ी के प्रवाह काल मे मस्तिष्क का बायॉ भाग क्रियाशील होता है। पिंगला नाड़ी का रंग लाल बताया जाता है।

3. सुषुम्ना नाड़ी- इडा, पिंगला के अलावा एक और प्रमुख नाडी है जिसे सुषुम्ना कहते है। यह रीढ़ की हड्डी के मध्य से प्रवाहित होती है। यह महत शक्ति को ले जाने वाली नाड़ी है। हम कह सकते है कि इडा, पिंगला स्थूल शक्ति का निर्माण करती है तथा सुषुम्ना सूक्ष्म शक्ति का निर्माण करती है। सुषुम्ना की शक्ति असीमित है। अत: हठयोग का प्रमुख उद्देश्य है इस सीमित शक्ति को असीम शक्ति के साथ जोड़ना।

ज्ब सुषुम्ना जाग्रत होती है, तो पूरा मस्तिष्क क्रियाशील हो जाता है। सुषुम्ना की सारी शक्ति जिसे हम कुंडलनी के नाम से जानते है, मूलाधार मे स्थित है। इसका प्रभाव किसी अन्य नाड़ी के द्वारा नहीं होता है। जब इडा व पिंगला एक साथ प्रवाहित होती है तब इनका ताप समाप्त हो जाता है तथा प्राण और चेतना का अतंर टूट जाता है। एक अवस्था समरूप हो जाती है तो कुंडलिनी स्वयं ही सुषुम्ना नाड़ी से उध्वारोहण कर आज्ञा चक्र में पहुँच जाती है।

कहा जाता है कि सुषुम्ना तमोगुणी नाड़ी समूहों से संबंधित है। किसी को भी सुषुम्ना को जागृत करने से पहले कुंडलिनी जागरण का प्रयास नही करना चाहिए।

सुषुम्ना नाड़ी का दूसरा नाम ब्रह्मनाडी भी है। सुषुम्ना नाड़ी चेतना का केन्द्र स्थान है। अर्थात समस्त ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों मे चेतना का संचार सुषुम्ना द्वारा ही होता है। इसका रंग चाँद जैसा होता है।

सुषुम्ना में ही मूलाधार से आरंभ होकर आज्ञा तक्र छ: चक्रो की स्थिति है। सुषुम्ना नाडी को तीन खंडो मे विभक्त किया गया है-

1. केन्द्र से मूलाधार चक्र या ब्रह्मग्रंथि तक।
2. ब्रह्मग्रंथि से विष्णुग्रंथि तक।
3. विष्णुग्रंथि से रूद्रग्रंथि तक।

हठयोग के ग्रंथो के अनुसार हमारे शरीर मे 72 हजार नाड़ियाँ है जो शरीर क्रिया- कलापो का नियंत्रण एवं नियमन करती है। जिसमे इडा, पिंगला तथा सुषुम्ना मुख्य नाड़ियाँ मानी गई है। इडा नाड़ी चंद्र शक्ति की प्रवाहिनी होती है। पिंगला सूर्य शक्ति की प्रवाहिनी होती है तथा सुषुम्ना रीढ़ की हड्डी के मध्य मे प्रवाहित होती है। इडा नाड़ी के प्रवाह से मस्तिष्क का दायाँ भाग तथा पिंगला क्रियाशील होती है, तो मस्तिष्क का बायाँ भाग काम करने लगता है तथा सुषुम्ना जाग्रत होती है, तो पूरा मस्तिष्क क्रियाशील हो जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वामी दिगम्बर जी- हठप्रदीपिका- कैवल्यधाम, स्वमी कुवल्यानंद मार्ग लोनावला पुणे महाराष्ट्र 2017
2. जयसवाल सीताराम भारतीय मनोविज्ञान आर्य बुक डिपो नई दिल्ली 1987
3. आत्रेय शांन्ति प्रकाश योग मनोविज्ञान काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी
4. भारद्धाज ईश्वर, मानव चेतना- सत्यम प्रकाशन हाउस दिल्ली 2011
5. शास्त्री गिरीजाशंकर - वशिष्ठ संहिता, चौखंभा प्रकाशन वाराणसी
6.- स्वामी ओमानंद तीर्थ पातंजलयोग प्रदीप गीता प्रेस गोरखपुर उ0प्र0 2065
7. स्वामी महेशानन्द एवं अन्य शिवसहिता कैवल्य धाम श्री मन्माधव योग मंन्दिर समिति लोनावला पुणे महाराष्ट्र 1999
8. गीता प्रेस गोरखपुर योगांक, गीता प्रेस गोरखपुर 2016
9. गीता प्रेस गोरखपुर योग वाशिष्ट 2016

****

देवात्मा के दर्शन में ईश्वर

डॉ. आशा चौधरी *

प्रस्तावना – शिवनारायण अग्निहोत्री का जन्म 1850 में कानपुर के पास के एक गांव में हुआ था। इनका बाल्यकाल का नाम शिवनारायण था जिसे उन्होंने बत्तीस वर्ष की आयु में बदलकर सत्यनारायण कर दिया था। रूड़की के थॉमसन इंजीनियरिंग कॉलेज से अपनी शिक्षा पूरी करके लाहौर में एक शासकीय स्कूल में नियुक्त हुए। कुछ समय बाद आप ब्रह्म समाज के सदस्य बने। आगे चल कर आपने देव समाज नामक एक आस्तिक विचारधारा वाली संस्था स्थापित की किंतु कुछ समय बाद इसका विकास एक निरीश्वरवादी संस्था के रूप में हुआ। अपने सद्गुणों के कारण देवात्मा के नाम से पहचाने गए। यही देवात्मा एक वे समकालीन दार्शनिक हैं जिनके विचारों में विशुद्ध प्रकृतिवादी चिंतन अपने उत्कृष्ट रूप में मौजूद है। उनका ईश्वर विचार भी इसी पर अवलंबित है।

अपनी पुस्तक 'मुझमें देव जीवन का विकास' में देवात्मा ने बतलाते हैं कि देव जीवन–व्रत ग्रहण करने के बाद ग्यारह वर्ष तक उनकी आत्मा में ईश्वर विश्वास कायम रहा। बारहवें वर्ष में वह अवस्था आई, जबकि उनके भीतर ईश्वर के अस्तित्व के विषय में कई प्रकार के संदेह उठने लगे। ज्यों–ज्यों वैज्ञानिक विधि के अनुसार वे अपने इस विश्वास की मीमांसा करने लगे, त्यों–त्यों उनका संदेह ईश्वर के अस्तित्व के विषय में दिनों–दिनों अधिक बढ़ने लगा और तमाम ऊहा–पोह से गुजरने के बाद अब उनका ईश्वर विश्वास चला गया। इस प्रकार हम यह जानते हैं कि आरंभ में वे ठेठ ईश्वरवादी थे। ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए उन्होंने 1889 में धर्म जीवन नामक अपने उर्दू पत्र में कुछ लेख भी लिखे थे। इन लेखों का संकलन उन्होंने 'खुदा की हस्ती का सुबूत' नाम से एक पुस्तक के रूप में भी किया था। ईश्वर को उन्होंने तीन प्रकार के प्रमाणों द्वारा सिद्ध करने का प्रयास किया था। वे यह थे –

1. भौतिक जगत में उसकी शक्ति का कार्य।
2. मनुष्य के शरीर में उसकी शक्ति का कार्य।
3. मनुष्य की आत्मा में उसकी शक्ति का कार्य।

इन तीनों प्रमाणों में ईश्वर की सत्ता सिद्ध किये जाने में उन्होंने माना कि उनसे बड़ी भूल हुई थी। वह भूल शक्ति–विषयक तत्वज्ञान और उसके संबंध में सिद्धांत निकालने में थी। वे मानते हैं कि ईश्वर–विषयक सिद्धांत में जो बहुत बड़ी भूल बहुत से चिंताशील लोगों में पाई जाती है वह है तर्क–विद्या मूलक भूल। अर्थात हम जिस बात को साक्षात प्रमाण से सिद्ध कर सकते हों, उसे असाक्षात प्रमाण अर्थात केवल अनुमान के द्वारा ठीक न समझ लें। आगे वे प्रश्न करते हैं कि क्या ऐसी किसी परीक्षा से किसी ऐसे ईश्वर या खुदा का सबूत मिलता, या मिल सकता है ? कदापि नहीं। इसीलिए देवात्मा के मुताबिक वास्तव में कोई ईश्वर या खुदा नहीं है !

ईश्वर मिथ्या कल्पना – वे मानते हैं कि 'ऐसे किसी ईश्वर की धारणा लोगों की केवल मिथ्या कल्पना और उनके मिथ्या संस्कार का फल है। दरअसल वह कुछ भी नहीं, और कहीं भी नहीं।'[1] वे ईश्वर की धारणा में विश्वास को केवल सर्वथा मिथ्या ही नहीं बताते वरन् बेहद नुकसानदायक भी मानते हैं। उनका मत है कि ईश्वर के पुजारी या भक्त कहलाने के अभिमानी लोग भी पापों में रत पाए जाते हैं। ईश्वर के उपासक अनेक पाप करते हैं। फिर ईश्वरोपासना का क्या अर्थ है ? वे केवल अपने संस्कारों के वशीभूत होकर अपने–अपने मतों पर अड़े रहते हैं। अपने ही मत को सत्य, अन्य के मत को यहाँ तक कि अन्य के ईश्वर को भी वे असत्य कहते हैं। इस प्रकार, ईश्वर के मानने वालों का यदि विश्लेषण किया जाए तो हम पाते हैं कि वे कल्पित मतों पर निर्भर करते हैं। ईश्वर–विषय पुस्तकें न जाने कितनी बिकती हैं किंतु उन्हें खरीद कर, पढ़कर भी समाज से चोरी, हत्या, डकैती, भ्रष्टाचार, प्रवंचना, घूस आदि तो बंद नहीं होते। बल्कि नए–नए तरीके विकसित होते चले जाते हैं। फिर क्या अर्थ रह जाता है ईश्वर तथा ऐसी पुस्तकों का ?

देवात्मा प्रश्न पूछते हैं कि यही पापी लोग जब दो माह के बच्चे थे क्या तब भी वे चोरी करते थे, पाप करते थे ? तब फिर बाद में उनमें पाप कहाँ से, कैसे उत्पन्न हो गए ? देवात्मा कहते है कि जब वे बच्चे थे, और कोई धर्म, मत आदि नहीं जानते थे, नहीं मानते थे तब वे उन पापों से बचे हुए थे। परंतु व्यस्क बढ़ने के साथ–साथ जहाँ वे इस या उस मजहब के आदमी कहलाने लगे वहाँ विविध प्रकार के पापों के कर्त्ता भी बन गए। उनका यह भी तर्क है कि फिर तुम्हारी धर्म पुस्तक ने तुम्हारे लिये क्या किया है ? बताओ कि तुम्हारे मत ने तुम्हारे लिये क्या किया ? तुम्हारी पूजा ने तुम्हारे लिये क्या किया ? तुम्हारे ऋषि, पैगम्बरों और पादरियों, भिक्षुकों, प्रचारकों और उपदेशकों ने क्या–क्या किया ? तुम्हारे नदियों के स्नान, तीर्थ–यात्रा जप, पाठ और होम ने क्या किया ? तुम्हारा मत और तुम्हारा मजहब, तुम्हारा पाठ और पूजन, तुम्हारा जप और तुम्हारा होम, तुम्हारे आत्मा को नीच गति से बचाने में कुछ सहायक नहीं होता, और हो भी नहीं सकता।'[2]

उनका स्पष्ट मत है कि ईश्वर भक्ति, ईश्वर विषयक विश्वास आदि से, पूजा, पाठ, जप और भजन, संध्या–प्रार्थना आदि से मानव की आंतरिक अवस्था में कुछ भी 'कल्याणकारी परिवर्तन' नहीं होता। धर्म या मजहब के नाम से मनुष्य की विचार विषयक जन्मजात सच्ची स्वाधीनता नष्ट की जाती रही है। बचपन से ही मनुष्य की कच्ची मिट्टी जैसे मनस में जैसा बीज बोया जाए, वह वैसा ही पौधा तैयार कर देता है। बड़े हो कर यह वृक्ष बन जाता है। देवात्मा कहते हैं कि बच्चे को उसके बचपन में ही बताया जाए कि ईश्वर नामक एक देवता है कि जो सब मनुष्यों और पशुओं तथा वृक्षों के आकारों को बनाता है, उसी ने सूर्य, चंद्र और पृथ्वी को बनाया है, वही उन्हें

* विभागाध्यक्ष (दर्शनशास्त्र) शासकीय जे. योगानंदम महाविद्यालय, रायपुर (छ. ग.) भारत

चला रहा है, तो बच्चा इन बातों को विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाए कि ईश्वर जब मनुष्यों से नाराज हो जाता है तब वह महामारी, दुर्भिक्ष (अकाल) आदि भेज देता है, इसे भी वह मान लेगा। इसी प्रकार वे मानते हैं कि यदि बच्चे के सामने बचपन से ही स्वर्ग-नर्क, परलोक आदि की बातें की जाएं तो वह उनका यकीन करना शुरू कर देता है। धीरे-धीरे ऐसी ही सैकड़ों प्रकार की बातों की शिक्षा पा कर करोड़ों लोग मिथ्या विश्वासों के इस प्रकार शिकार हो जाते हैं कि फिर वे कभी भी उनके महा हानिकारक असरों से निकलने के योग्य नहीं रहते। ईश्वर ऐसे ही लोगों के कारण अस्तित्वमान है।

वास्तव में वे मानते है कि एक पूर्णात्मा तथा मानव और प्राकृतिक हितों के लिए सर्वत्र: परिपूर्ण एवं सर्वव्यापी ईश्वर की सत्ता में विश्वास करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उनका दर्शन परंपरागामी नहीं है। उन्होंने वेद, उपनिषद आदि ग्रंथों को मान्य नहीं किया। किसी भी तरह का ईश्वरवाद, शंकर का ब्रह्मवाद, गीता का अवतारवाद, भाग्यवाद या नियतिवाद, कर्मकांड-मूर्तिपूजा, कर्म-सिद्धांत, पूर्वजन्म की अवधारणा, अनेक अन्य अंधविश्वासों पर आधारित सामाजिक, धार्मिक अनुष्ठान आदि को वे स्वीकार नहीं करते थे। वे रूढ़ियों के स्थान पर विज्ञान के महत्व को स्वीकार करते थे। अत: उनकी स्पष्ट धारणा थी कि 'विज्ञान विश्व की घटनाओं का वर्णन करने में ईश्वरीय शक्ति को कोई जगह नहीं देता जिससे स्पष्ट है कि विज्ञान प्रकृति को स्वयं पूर्ण मानता है। जब विश्व स्वयं पूर्ण है तो इसका कोई रचयिता नहीं हो सकता।'[3] देवात्मा मानते हैं कि प्रकृति से परे किसी प्राणी या तत्व का कोई अस्तित्व नहीं हो सकता। अत: वे ईश्वर या अन्य अलौकिक शक्तियों की धारणा को पूरी तरह मिथ्या मानते हैं।

विज्ञान की वस्तुपरक विधियों तथा अपनी तर्क बुद्धि के द्वारा किसी अलौकिक शक्ति के अस्तित्व को सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसी आधार पर वे ईश्वर तथा ईश्वरवाद का खंडन करते हैं। वे कहते हैं 'केवल प्रकृति ही एक यथार्थ सत्ता है। प्रत्येक वस्तु प्रकृति का ही भाग हैं। उसके अतिरिक्त अथवा उसे बाहर किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है; न भूतकाल में ऐसा था और न भविष्य में कभी ऐसा हो सकता है। किसी व्यक्ति के लिए यह विश्वास कराना झूठ के अतिरिक्त और कुछ नहीं है कि किसी निर्जीव या सजीव प्राणी का प्रकृति से बाहर अस्तित्व है।'[4] इस प्रकार देवात्मा का मत है कि 'हमारे सामने प्रकृति तथा ईश्वर इन दोनों में से किसी एक के चुनाव का प्रश्न ही नहीं है क्योंकि हम ये निश्चित रूप से जानते हैं कि वास्तव में प्रकृति के बाहर ईश्वर का अस्तित्व है ही नहीं। इस प्रकार देवात्मा निरीश्वरवाद में पूर्णत: विश्वास करते हैं, जो उनके प्रकृतिवाद का एक अनिवार्य परिणाम है।'[5]

उनके प्रकृतिवाद में ईश्वर या किसी अन्य अलौकिक शक्ति को इस विश्व की रचना के लिए आधार मानने की कोई आवश्यकता नहीं। इस विश्व की उत्पत्ति तथा इसका विकास प्राकृतिक कारणों से स्वत: ही होता है। अत: उनके दर्शन में ईश्वर के अस्तित्व की सिद्धि के लिए विश्व-रचना आदि संबंधी समस्त तर्क मिथ्या तथा निराधार माने जाते हैं। उनके मतानुसार यह जगत पूर्णत: प्राकृतिक है। इसमें विद्यमान समस्त प्राणी तथा वस्तुएं अपने आविर्भाव तथा विकास आदि के लिए प्राकृतिक नियमों पर ही निर्भर करती हैं। वास्तव में ईश्वर के लिये उनके दर्शन में कोई स्थान नहीं। वे अपने नीति संबंधी मत में भी ईश्वर को अनावश्यक ठहराते हैं। उनका निश्चित मत है कि मानव को अपने मोक्ष तथा विकास आदि के लिए अपने ही प्रयासों पर निर्भर करना होगा क्योंकि ईश्वर जैसी कोई अलौकिक शक्ति कहीं नहीं है। वे मानते हैं कि मानव अपनी तर्क बुद्धि तथा अपने अनुभवों द्वारा ही समस्त ज्ञान प्राप्त कर सकता है। वह अपना भाग्य निर्माता स्वयं है। अत: वे मनुष्य को इस बात के लिए प्रोत्साहित करते हैं कि उसे ईश्वर तथा परलोक आदि जैसी मिथ्या धारणाओं का त्याग करके अपने जीवन का विकास स्वयं करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्निहोत्री, एस.एन., मुझमें देव जीवन का विकास, पृ. 148
2. अग्निहोत्री, एस.एन., मुझमें देव जीवन का विकास, पृ. 271
3. कनल, एस.पी., निरीश्वरवाद एक अध्ययन, पृ. 25
4. अग्निहोत्री, एस.एन., देवशास्त्र खंड-1, पृ. 89, पृ. 73
5. वर्मा, वेद प्रकाश, दर्शन विवेचना, पृ. 271

****

संगीत चिकित्सा का उपयोग तनाव प्रबंधन में

डॉ. श्रीपाद आरोणकर *

शोध सारांश – संगीत चिकित्सा का तनाव प्रबंधन में बहुत अधिक उपयोग हो रहा है। धीमा संगीत न केवल सकारात्मकता को बढ़ाता है अपितु तनाव रहित कर जीवन के प्रति दृष्टिकोण में भी बदलाव लाता है। इस शोधपत्र में द्वितीयक साक्ष्यों के आधार पर इस विषय को समझाने का मेरा विनम्र प्रयास है।
शब्द कुंजी – म्यूजिक थेरेपी, संवेदना, तनाव, बैचेनी, मानसिक, अवसाद ।

प्रस्तावना – म्यूजिक थेरेपी क्या् है, यह कैसे काम करती है, किन–किन रोगों के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है, म्यूजिक थेरेपी से तनाव और मानसिक विकार से कैसा बचा जा सकता है, म्यूजिक थेरेपी के बारे में संपूर्ण जानकारी के लिए इस शोधपत्र में पढ़ें। संगीत मन को सुकून तो देता ही है, लेकिन अब कई स्वास्थ्य समस्याओं से राहत दिलाने में भी मददगार होता है, इस पद्धति को म्यूजिक थेरेपी कहते हैं। संगीत की स्वर लहरियों से मनोरंजन के तौर पर तो मन प्रसन्न होता है। साथ ही यह तनाव और कई मानसिक विकारों को दूर करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जैसे– जैसे व्यक्ति संगीत की स्वर लहरों में खोता है, उसका ध्यान दूसरी बातों से हटता जाता है और वह राहत महसूस करने लगता है। म्यूजिक थेरेपी अकेलेपन और तनाव को भी काफी हद तक कम करता है। इससे अवसाद दूर होता है और बेचैनी भी कम होती है। यह ध्यान और एकाग्रता को भी बढ़ाता है। इसके अलावा म्यूजिक थेरेपी से दर्द को भी दूर किया जा सकता है। जब एक बच्चे को एक सामान्य बच्चों के मुकाबले संवेदी जानकारी का उपयोग करने में और समझने में कठिनाई होती हैं, तो उसे सीखने में विकलांगता से पीड़ित कहा जाता है। हालांकि मानसिक तौर पर विकलांग बच्चों के लिए संगीत थेरेपी फायदेमंद सिद्ध हो सकती है।

संगीत हमारी आत्मा को एक अनोखा सुकून देता है और संगीत सुनने से तनाव भी कम होता है। हर व्यक्ति के लिए अलग अलग तरीके का संगीत सुकून देने वाला हो सकता है। जिस तरह का संगीत हमें सुनना पसन्द होता है, वो हमारा मनोरंजन करता है, लेकिन उस प्रकार का संगीत जिसे हम नहीं पसन्द करते हैं, उसको सुनने से तनाव बढ़ भी सकता है। संगीत हमारा मूड बदलकर हमारे स्ट्रैस लेवल को बहुत ही कम समय में बदल देता है। मान लें कि आपका आपरेशन हो रहा है और आप भारतीय राग सुन रहे हैं और इतने में एक सर्जन मुस्कराते हुए सर्जरी के लिए आता है। शायद आपका तनाव बहुत हद तक कम हो सकेगा।

संगीत थेरेपी का प्रयोग – जब हम संगीत सुनते हैं, तो हमारी नर्वस् रिलैक्सिंग मोड़ में चली जाती हैं और हम हर रोज के तनाव से कहीं दूर चले जाते हैं। सालों हुए शोधों से पता चला है कि संगीत का असर हमारे शरीर और मन दोनों पर ही होता है। बहुत सी दिल से जुड़ी बीमारियों का सिर्फ एक ही कारण है तनाव। तनाव के कारण ही आजकल के युवकों को बहुत ही कम उम्र में कई तरह की बीमारियां हो जाती हैं। आज हमारी जीवनशैली बहुत से तनाव और परेशानियों से घिरी हुई है। हर किसी के पास बहुत से काम हैं और इस भागदौड़ में तनाव के बारे में सोचने का भी किसी के पास समय नहीं। ऐसा पाया गया है कि संगीत से स्ट्रेस मांसपेशियों को आराम मिलता है, किसी भी प्रकार की सूजन कम होती है, ऐथलेटिक पर्फारमेंस अच्छी होती है और हृदय से जुड़े रोगों से भी राहत मिलती है। विदेशों में संगीत से थेरेपी बहुत ही आम है, जैसे आपरेशन थियेटर में सर्जरी के दौरान संगीत। आज अस्पतालों में म्युजिक को बढ़ावा दिया जा रहा है। कुछ डाक्टरों का ऐसा मानना है कि उन्हें आपरेशन करते समय आराम मिलता है लेकिन रिसचर्स का मानना है कि इससे मरीज को भी लाभ मिलता है।

ब्लड प्रेशर जो कि सर्जिकल प्रोसिजर से बढ़ जाता है उसे संगीत सुन कर कम किया जा सकता है और मरीज को स्वस्थ होने में भी कम समय लगता है। वो मरीज जो फास्ट म्युजिक सुन रहे थे, उनमें सर्कुलेशन का रेट बढ़ गया और उनकी तुलना में वो मरीज जो स्लो म्युजिक सुन रहे थे उनमें हृदय गति कम हुई। भारतीय रागा से हृदय गति में सबसे ज्यादा सुधार आता है। जैसे शरीर को स्वस्थ रखने के लिए खाने की जरूरत होती है, वैसे ही हमारी आत्मा को स्वस्थ रहने के लिए संगीत की जरूरत होती है। अगर आप पेट दर्द या सिर दर्द से तड़पते हुए अस्पताल पहुंचे और वहां पहुंचने पर डाक्टर दवा देने के बजाय आपको संगीत सुनाने लगे तो चौंके नहीं। शायद आपको विश्वास नहीं हो, लेकिन आने वाले समय में संगीत को कई बीमारियों के इलाज का कारगर नुस्खे के तौर पर इस्तेमाल में लाया जाने वाला है। विदेश के साथ साथ भारत के कई अस्पतालों में भी इसका इस्तेमाल किया जा रहा है। स्वास्थ्य पर संगीत के प्रभाव को लेकर अनेक देशों में हुए वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि मनपसंद संगीत सुनने से ब्लड प्रेशर में कमी आती है, दिल की धड़कन नियमित होती है, डिप्रेशन दूर होता है, बेचैनी में कम होती है और ध्यान केंद्रित करने की क्षमता बढ़ती है। आपरेशन के दौरान या उसके बाद दर्द निवारक दवाइयों की जरूरत कम होती है, कीमो थिरेपी के बाद उल्टी की शिकायत कम होती है, दर्द से राहत मिलती है और पार्किसन के रोगी के अंगों में स्थिरता आती है। संगीत चिकित्सा का इस्तेमाल प्रसव पीड़ा को कम करने के अलावा सिर दर्द और सर्दी, जुकाम जैसी रोजमर्रे की समस्याओं को दूर करने में भी हो रहा है। पश्चिमी देशों में संगीत का इस्तेमाल पार्किसन व अल्जाइमर जैसी खतरनाक बीमारियों के इलाज में भी होता है।

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) राजमाता सिंधिया शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

नई दिल्ली के इंद्रप्रस्थ अपोलो अस्पताल के बॉडी माइंड क्लीनिक में आने वाले मरीजों के इलाज के लिए संगीत चिकित्सा का भी इस्तेमाल किया जाता है। इस क्लीनिक के प्रमुख और वरिष्ठ होलिस्टिक चिकित्सा विशेषज्ञ डॉ. रविंद्र कुमार तुली का कहना है कि मानसिक रोगों के मरीजों पर संगीत का चमत्कारिक असर होता है। संगीत मैटाबाल्जिम को तेज करता है, मांसपेशियों की ऊर्जा बढ़ाता है, श्वसन प्रक्रिया को नियमित करता है और ब्लड प्रेशर पर भी सकारात्मक प्रभाव डालता है। दुनिया के अनेक देशों के साथ साथ भारत में भी संगीत को लेकर अनेक स्तरों पर अध्ययन–अनुसंधान हो रहे हैं। चेन्नई के अपोलो अस्पताल ने संगीत चिकित्सा पर एक साल का एक पाठ्यक्रम शुरू किया है। मुंबई के एक अस्पताल और नागपुर के डाक्टरों की एक टीम ने संगीत चिकित्सा के बारे में अलग–अलग प्रशंसनीय कार्य किए हैं। ड्यूटी के दौरान दिल के दौरे पड़ने के बढ़ रहे मामलों के मद्देनजर मुंबई पुलिस ने भी तनाव घटाने के लिए संगीत का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है। बड़ोदरा में किए गए अध्ययनों में पाया गया कि शास्त्रीय संगीत अनेक तरह की समस्याओं को दूर करने में सहायक है। डाक्टरों का मानना है कि संगीत का उन्मादी लोगों पर भी सकारात्मक असर पड़ता है। संगीत एक व्यायाम की तरह है, जिससे मन को सुकून तो मिलता है साथ ही यह कई प्रकार की बीमारियों के उपचार में भी सहायक है। अर्थराइटिस जैसी बीमारी के उपचार में आप संगीत थेरेपी का सहारा ले सकते हैं। संगीत सुनने से अर्थराइटिस के दौरान होने वाला दर्द भी कम हो जाता है। अगर आपको ऑस्टियोअर्थराइटिस और रूमेटाइड अर्थराइटिस से ग्रस्त हैं और इससे होने वाले दर्द को बर्दास्तस नहीं कर पाते हैं तो आपको संगीत थेरेपी आजमानी चाहिए। इस लेख में विस्तार से जानिये कैसे अर्थराइटिस के दर्द को कम करने में सहायक होता है संगीत।

निष्कर्ष – संगीत चिकित्सा न केवल तनाव अपितु दर्द निवारण में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। मस्तिष्क में विभिन्न आनंददायी हार्मोन्स का रिसाव होने से आदमी एकाग्रचित्त एवं आनंदित होता है। जो इस चिकित्सा पद्धति का मूलमंत्र है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री का अध्ययन एवं नादयोग का अभ्यास के आधार पर शोध पत्र प्रस्तुत हैं।

****

मथुरा कला में उत्कीर्ण यक्ष एवं नाग मूर्तियां

डॉ. सुदीप शर्मा *

प्रस्तावना – कुषाणकालीन मथुरा कला में नाग एवं यक्ष मूर्तियों का भी बड़ा समूह है, ये दोनों लोक धर्म यक्षमह एवं नागमह के नाम से प्रसिद्ध थे और इन मूर्तियों में नये–नये रूपों का भी संचार हुआ। मथुरा में यक्ष मूर्तियों के निर्माण का बहुत बड़ा केन्द्र स्थापित हुआ था और उसके अंतर्गत परखम यक्ष तथा बड़ोदा यक्ष जैसी पर्वतोपम मूर्तियां बनाई गई। यक्ष पूजा की परम्परा कुबेर मूर्तियों के रूप में आगे बढ़ी ओर उसी में अनेक आपानगोष्ठी के दृश्यों का निर्माण हुआ।

बाकस और डायोनिसस की पूजा का जो हुड़दंग यूनानियों में मचता था उसका प्रभाव मथुरा के बौद्ध धर्म पर भी पड़ा परन्तु यहां के भारतीय वातावरण में यह कुछ सौम्य बन गया। बाकस देवता का स्थान कुबेर ने ले लिया और कुबेर की आपानगोष्ठी के उभयदर्शन वाली लगभग आधी दर्जन मूर्तियां मथुरा से प्राप्त हुई हैं। **(चित्र संख्या–1, 2)** मथुरा कला शैली में वैश्रवण कुबेर की कई लम्बोदर मूर्तियां ऐसी मिली हैं जो किंकर या गुह्क मुद्रा में हैं, अर्थात दोनों हांथ भारवहन मुद्रा में ऊपर उठाए हैं। वे भरहुत, सांची और पश्चिमी भारत की गुफाओं में उत्कीर्ण किंकर मूर्तियों से मिलती है और थोड़े अंतर से उसी मूर्ति को कुबेर के रूप में परिवर्तित कर दिया गया,जो उसी प्रकार घटोदर, सुखासन में बैठा हुआ, प्रसन्नवदन, सोने का भारी कण्ठा पहने, एक हांथ में दानपात्र और दूसरे में थैली लिए हुए, किसी चिन्ता रहित और हँसतामुखी धनिक श्रेष्ठी की आकृति वाला ज्ञात होता है। यद्यपि बाल्मीकि रामायण में उसे 'एकाक्ष' कहा गया है।परन्तु इन मूर्तियों में उसकी यह विशेषता नहीं दिखलाई पड़ती है। ऐसी कुबेर मूर्तियां मथुरा कला की अपनी निजी देन हैं तथा मध्यभारत एवं गंधार दोनों जगह इनके सह मूर्तियों का अभाव है। इस मूर्ति को श्रेष्ठी या महाजन शैली की कह सकते हैं, और यह वास्तव में धनपति कुबेर की प्रतिकृति या प्रतिछवि बन पड़ी है। धनपति कुबेर का स्थान कैलाश पर है, जैसा कई आपानगोष्ठी मूर्तियों में दिखाया भी गया है तथा कैलाश के समीप बसी हुई अलकापुरी कुबेर की राजधानी कही गई है।

मथुरा में इन ठेठ भारतीय शैली की मूर्तियों के अतिरिक्त वे मूर्तियां भी हैं, जिनमें बाकस देवता की पानगोष्ठियों का दृश्य एक बड़े और मोटे शिलापट्ट के दोनों ओर दिखाया गया है और इन मूर्तियों की विशेषताएं निम्नवत हैं :–

- बड़े पत्थर के ढोके पर दोनों ओर मूर्तियां उकेरी गई हैं। जिनमें पानगोष्ठी और मदोन्मत्त व्यक्तियों का चित्रण है।
- इनमें प्रधान मूर्ति कैलास पर बैठे हुए कुबेर की है, जो भारतीय ढंग की सकच्छ धोती पहने हैं, इस मूर्ति के लक्षण शुद्ध भारतीय हैं, उन पर न तो यूनानी बाकस का प्रभाव है और न ही सिलेनस का।
- किंतु शिल्पियों को यह बात अवश्य ज्ञात होती थी कि इस प्रकार की मूर्तियों का सम्बन्ध यूनानी परंपरा से था क्योंकि पालिखेरा से प्राप्त मूर्ति में कुबेर के बाईं ओर खड़ी हुई स्त्री लम्बी आस्तीन की कुर्ती और नीचे पैरों तक का घाघरा एवं मोटे जूते पहने है, जो स्पष्टत: यूनानी ढंग के हैं।
- कुबेर के दाहिने हांथ में एक लम्बोतरा गोड़ेदार चषक है, जिसमें हत्था या मुष्टि लगी है।
- पालिखेरा की मूर्ति में एक व्यक्ति अंगूरों का गुच्छा लिए है, जिसका सम्बन्ध उदीच्य देशों से था।
- इन सभी मूर्तियों के मस्तक पर कटोरा है, पालिखेरा की मूर्ति में इस कटोरे का व्यास 16 इंच और गहराई 8 इंच है।

गोष्ठी–निरत वैश्रवण की पहली मूर्ति 1836 में कर्नलस्टेसी को प्राप्त हुई थी जो अब इंडियन म्यूजियम, कलकत्ता में सुरक्षित है, इसमें प्रधान मूर्ति कुबेर की है, जिसका पेट निकला हुआ तथा मदहोशी की दशा में पीछे को उलट रहा है और उसके मस्तक पर अंगूर की वेल का सहरा है तथा उसकी वेषभूषा भारतीय है परन्तु उसके पार्श्वचरों का वेश विदेशी है। **(चित्र संख्या–2)** । **पालिखेरा** से प्राप्त आपानगोष्ठी युक्त वैश्रवण मूर्ति – इसके सामने की ओर कैलास पर बैठे हुए कुबेर की घटोदर मूर्ति भारतीय धोती पहने हुए है और पीछे की ओर वही व्यक्ति मदोन्मत्ता असहाय दशा में अंकित है **(चित्र संख्या–1)** ।

महोली गांव में 1938 में मिला हुआ मदोन्मत्त मुद्रा में पानगोष्ठी का दृश्य – इसमें पूरी तरह भारतीय शैली का विकास हो गया था तथा यह भी दोनों ओर उकेरी गई है और मथुरा की जो निजी सर्वोत्तम रूपवती शैली थी उसकी पूर्णता महोली के इस दृश्य में चित्रित है। इस मूर्ति की माप 3 फुट 4 इंच x 2 फुट 6 इंच x 1 फुट 2 इंच है। और इस मूर्ति के ऊपर भी एक कटोरा रखा हुआ था, जो अब खण्डित हो गया है, यह पृष्ठ में उकेरे हुए एक वृक्ष के ऊपर रखा हुआ था। इसके अग्रभाग में चार मूर्तियां है, जिसमें बीच की स्त्री मूर्ति मदोन्मत्त मुद्रा में कुछ नीचे को झुकी हुई दिखाई गई है। जिसका बायां हांथ एक कुब्जिका के कंधे पर है, जो चषक लिए है और स्त्री के पीछे खड़ा हुआ उसका पति उसकी दाहिनी भुजा पकड़े उसे गिरने से संभाल रहा है तथा पृष्ठभूमि में खड़ी हुई आश्चर्य मुद्रा में एक बर्षधर मूर्ति है, जिसमें स्त्री और पुरूष दोनों के लक्षण हैं। **(चित्र संख्या–3)** और दूसरी ओर चार स्त्री पुरूष हर्षोल्लास से नृत्य कर रहे हैं। **(चित्र संख्या–4)** इस मूर्ति के सदृश और घिसी पिटी दूसरी मूर्ति महोली से आधा मील दक्षिण पूर्व **नरोली** गांव में 1922–23 में मिली थी, जो अब कलकत्ता के भारतीय संग्रहालय में है। इसके पृष्ठ भाग के दृश्य की यथावत अनुकृति एक पार्श्वस्तम्भ (मथुरा संग्र0 371) पर मिलती है, जो मथुरा के कंकाली टीले से 1914 में मिला था

*सहायक प्राध्यापक, नेट, पीएच0–डी0, चौधरी चन्दन सिंह महाविद्यालय, कन्नौज (उ.प्र.) भारत

और यह स्थान भी (कंकाली) महोली से लगभग दो मील मथुरा की तरफ है। इससे ज्ञात होता है कि **पालिखेरा, नरौली** और **महोली** – इन तीन गांवों के निवासी जो एक दूसरे से केवल एक मील के घेरे में थे, वैश्रवण कुबेर की पानगोष्ठी वाली मूर्तियों के बड़े प्रेमी थे और उनकी पूजा भी करते थे। महोली का नाम ही मधुपल्ली था अर्थात वह स्थान जहां मधुपान के देवता का केन्द्र हो। नरोली या नरपल्ली का 'नर' शब्द भी कुबेर के यक्षों का वाचक समझना चाहिए, जिसके कारण कुबेर को नरवाहन कहा जाता है। महोली के शिल्पी कला के सौष्ठव में इन सबसे आगे थे। यह उल्लेखनीय है कि महोली में पानगोष्ठी का दृश्य श्री वासुदेव शरण अग्रवाल को 1938 में एक विशालकाय बोधिसत्व मूर्ति के बिल्कुल निकट के चबूतरे पर मिला था। जिससे ज्ञात होता है कि कुबेर वैश्रवण पूजा और बोधिसत्व पूजा में परस्पर मेल हो गया था तथा कुछ दूसरी मूर्तियों में इन दो धार्मिक मान्यताओं का समन्वय और भी स्फुट रूप से प्रकट किया गया है। उनमें एक ओर कुबेर की बैठी हुई मूर्ति है, जिसके बाईं ओर हारीति की मूर्ति है तथा कुबेर के एक हांथ में पानपात्र और दूसरे में थैली है या दोनों के सामने मधु के दो बड़े कटोरे रखे हैं।[1]

ऐसा ज्ञात होता है कि बच्चों की अधिष्ठात्री देवी हारीति थी और धन के देवता कुबेर थे तथा इन दोनों की धार्मिक पूजा एक दूसरे के निकट आ गई थी। इस मान्यता की लोक प्रियता की सूचक वे मूर्तियां हैं जिनमें कुबेर और हारीति अलग-अलग बने हैं। ज्ञात होता है कि विकसित होती हुई कुबेर की धार्मिक मान्यता ने कई और पूजा विधियों को अपनी ओर खींच लिया। इनमें से एक सम्प्रदाय बाकस देवता का था, जिसमें पान गोष्ठियों का मुख्य स्थान था। मद्रक-यवनों में इन गोष्ठियों का अधिक प्रचार था जैसा कि महाभारत के द्रोणपर्व में आया है और इस प्रकार की पूजा मान्यता के साथ बौद्ध देवी हारीति एवं बाह्मण देवी भद्रा की धार्मिक परंपरा भी जुड़ गई और इन दोनों को कुबेर की पत्नी मान लिया गया।

नाग मूर्तियां – मथुरा शिल्प कला में नागमूर्तियों का भी महत्वपूर्ण स्थान है, जिसकी परंपरा शुंग कालीन भरहुत और सांची से चली आ रही थी। मथुरा में पूर्व काल से संकर्षण या बलराम की पूजा प्रचलित थी और उन्हीं के साथ नाग देवताओं की मान्यता भी मिल गई। बलराम की मूर्ति में एक हांथ में गदा और दूसरे हांथ में पान-पात्र दिखाया जाता था तथा बलराम की किन्हीं मूर्तियों में बनमाला भी रहती थी **(चित्र संख्या-5)**। और कुछ नागराज मूर्तियों में घुटनों तक लटकती हुई माला दिखाई जाती है, जैसे छड़गांव से प्राप्त महाकाय नागमूर्ति **(चित्र संख्या-6)**, जिसके दोनों पार्श्व में नागकुण्डल हैं तथा कटि प्रदेश में भारी फेंटा है, यह मूर्ति बड़ी बलशाली एवं दमखम वाली है और इसी क्रम में नाग देवताओं की एक छोटी मूर्ति दधिकर्ण नाग की है।

कुषाण काल में मथुरा नाग पूजा का बहुत बड़ा केन्द्र था। यहां से निकट 'सोंख' गांव में जर्मन-उत्खनकों को हाल ही में नाग मंदिर एवं नाग संस्कृति के प्रबल और प्रचुर प्रमाण प्राप्त हुए हैं।

कुषाण कालीन नाग प्रतिमाओं की विशेषताएँ अधोलिखित हैं –

- पुरूषाकार नाग के पीछे की ओर खड़े सर्प की कुण्डली दिखलाई जाती है, जिसमें सर्प की फण, छत्र के समान पुरूष के सिर पर छाया रहता है।
- पृष्ठ भाग पर अंकित किए गए सर्प के आभोग पर विभिन्न प्रकार के दानें बने रहते हैं और फणाटोप स्वास्तिक आदि मंगल चिन्हों से अलंकृत रहता है, साथ ही लपलपाने वाली नाग की जिव्हयाएँ भी प्रमुखता से अंकित की जाती है।[2]
- मस्तक पर सुशोभित फणाओं की संख्या नाग पुरूष या नाग स्त्री के सामाजिक स्तर पर निर्भर करती है। सामान्य नागों के केवल एक फणा रहती है, परन्तु इसके ऊपर तीन, पाँच या सात फणाओं का क्रम दिखलाई पड़ता है। साहित्य में शेष नाग के सहस्त्र फणाएं कही गई हैं।
- ध्यान भेद के अनुसार नाग के दो या चार हांथ होते हैं। नागों का जल से निकट सम्बन्ध है इसलिए उनके हांथ में घट तथा आसपास कमल भी दिखलाई पड़ते हैं। कुषाणकाल की कई नाग प्रतिमाएँ पुष्करिणियों के तटों पर ही स्थापित थीं।म
- सोंख के उत्खनन में एक विशेष प्रकार की नागमूर्ति मिली है, जिसमें पुरूषाकार नाग के मस्तक के पीछे नागफणा न दिखाकर उसका समूचा मुख ही नाग का दिखलाया गया है। इसके हांथ मे पोथी है। यह शिल्प खण्ड बहुत खण्डित होने के कारण इसकी निश्चित पहचान तो कठिन है, परन्तु शेषनाग का व्याकरण शास्त्र से निकट का सम्बन्ध सुप्रसिद्ध है। कुषाण काल के बाद की नाग प्रतिमाओं के मस्तक के पीछे वाली सर्पफणा को छोड़कर उपर्युक्त शेष विशेषताएँ नहीं प्राप्त होती हैं।

मथुरा कला की रचनात्मक प्रवृत्ति कुषाण सम्राटों के समय में बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। मथुरा की राजनीति, धर्म और संस्कृति में कुषाण सम्राटों का जो प्रभाव था, उसका अनुमान मथुरा जिले में शहर से नौ मील उत्तार के माट गांव में प्राप्त देवकुल से किया जा सकता है। इस टीले का नाम 'टोकरी-टीला' अर्थात् तुषार नामक शकों का स्थान था, जहां सम्राटों की मूर्तियां रखने का एक भवन था, जिसे प्राचीन भाषा में 'देवकुल' कहते थे।म यहां गांव में स्थित एक शिलालेख में देवकुल शब्द आया है और इस देवकुल में सम्राट वेमतक्ष्म (विमकडफिसेस), कनिष्क एवं चष्टन की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं परन्तु यहां पर इनके अतिरिक्त और भी कई राजाओं की मूर्तियां थी, जो अब खंडित हो गई हैं।

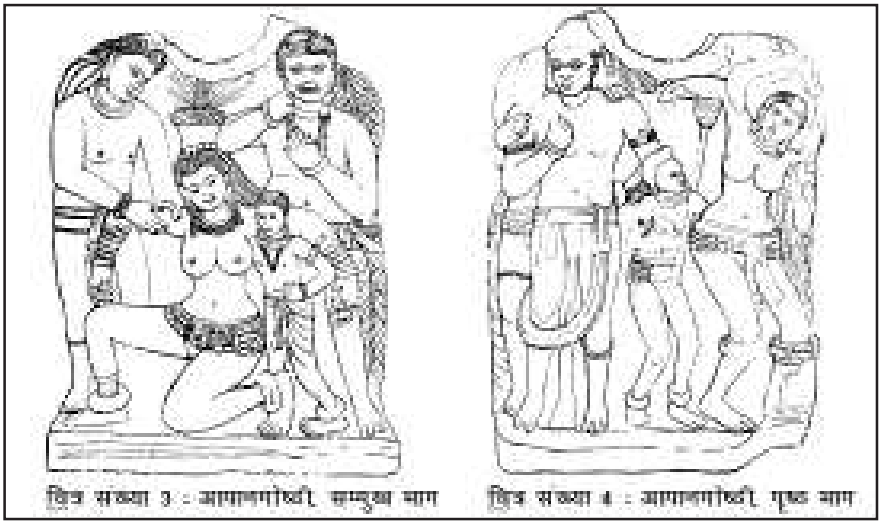
संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जोशी, एन0पी0, मथुरा की मूर्तिकला, मथुरा 1965
2. मुकर्जी, आर0 के0, प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति।
3. राय, निहाररंजन, भारतीय कला का अध्ययन।
4. उपाध्याय, भगवत शरण, भारतीय कला का इतिहास।
5. पुरी, बी0एन0, इंडिया अण्डर द कुशानाज़ बी0एन0, इंडिया अण्डर द कुशानाज़।
6. अग्रवाल, वासुदेव शरण, भारतीय कला, वाराणसी, 1970



चित्र संख्या 1 चित्र संख्या 2

आपानगोष्ठी दृश्य में वाकस की जगह कुबेर



चित्र संख्या 3 : आपानगोष्ठी, सम्मुख भाग चित्र संख्या 4 : आपानगोष्ठी, पृष्ठ भाग

महोली से प्राप्त फलक



चित्र संख्या 5 : कूकरगाँव से प्राप्त बलराम मूर्ति

चित्र संख्या 6 : छद्दगाँव से प्राप्त बलराम मूर्ति

विश्व की महानत् सभ्यताओं का पुरातात्त्विक प्रमाण है– कुम्भ अद्य पुरातन वैज्ञानिक है– कुंभकार महान मृदा संस्कृति के प्रवर्तक (जनक) कुम्भकार प्रजापति

डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति *



विश्व की अनेक सभ्यताओं की संस्कृति का ज्ञान हमें मिट्टी के कुम्भ (मृदभाण्ड) से होता है । मृदा संस्कृति के पुरातात्त्विक व ऐतिहासिक प्रमाण ही हमें हजारों वर्ष पुरानी कई सभ्यताओं का क्रमागत सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास का ज्ञान कराती है । जब हम मृदा संस्कृति को जानने का प्रयास करते है, तब हमें मेहरगढ़, हड़प्पा, सैंधव (सैधवा), मोहन जोदड़ों, कायथा, एवं आहड़–सभ्यता अथवा संस्कृति का प्रमाण हमें मिट्टी के (मृदभाङ) बर्तनों से मिलता है। जब हम मृदा संस्कृति के भौतिक अथवा पुरातात्त्विक प्रमाण मृद–पट्ट, निष्क, कलश (कुम्भ) मृदभाष, ईटें, मूर्ति, बर्तन, खेल–खिलौने आदि पर विचार करते है, तब हमें हमारी बुद्धि में उसके निर्माण की विधि, तकनीक, उपयोगिता, वैज्ञानिकता, संस्कृति, सामाजिक–आर्थिक व धार्मिक व्यवस्था आदि के बारे में कई–कई प्रश्न हमारे सामने आ खड़े होते है । अनन्त प्रश्नों के उत्तर में हमें हजारों वर्ष पूर्व के मिट्टी के कुम्भ, बर्तन, ईंटे, खेल–खिलौने आदि की प्राचीनता का ज्ञान हमें उसकी वैज्ञानिक जाँच – 'कार्बन–14 विधि' के द्वारा होता है । मिट्टी के बर्तनों की प्राचीनता की जाँच कर विभिन्न संस्कृति एवं सभ्यताओं के काल गणना खण्ड का निर्धारण या अनुमान किया जाता है । और परिणाम स्वरूप हमें हजारों वर्ष पुरानी मृदा संस्कृति का ज्ञान होता है । तथा कुम्भ, चाक एवं कुम्भकार उनके जनक के रुप में प्रमाणित होते है जो विश्व की महानतम मृदा संस्कृति का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पुरातात्त्विक एवं ऐतिहासिक साहित्य, दोनों स्रोतों में हड़प्पाई कुम्हार अथवा वैदिक कुम्हार का उल्लेख मिलता है । जिसमें कुम्हार चाक के माध्यम से सोम यज्ञ, वाजपेयी यज्ञ, अश्वमेघ यज्ञ व अन्य प्रकार के यज्ञों हेतु मिट्टी के पात्र ''उखा'' और ''महावीर'' पात्र बनाने व अग्नि चयन अनुष्ठान में इसका प्रयोग बताया गया है । मिट्टी की ईंटों का निर्माण अग्नि वेदी (यज्ञ) हेतु यजमान की ऊँचाई का चतुर्यांश, पंचमांश या अष्टमांश ज्यामिति गणित ज्ञान के द्वारा बताया गया है । जिससे स्पष्ट होता है कि वैदिक कुम्हार (हड़प्पाई कुम्हार) ज्ञानी, कुशल एवं मिट्टीकला के ज्ञाता 'आर्य' थे ।

अखण्ड भारत के पश्चिम–उत्तर में सिंधु, झेलम, चिनाब, काबुल, सतलज, व्यास उत्तर में गंगा–यमुना–सरस्वती मध्य में नर्मदा आदि नदियों के आसपास '' दक्ष कालीन सभ्यता'' विकसित अवस्था में थी जिसे इतिहासकारों ने हड़प्पा, मोहन जोदड़ो, सिंधु घाटी व गंगा (नदी) सभ्यता के नाम से संबोधित किया है। परन्तु भारत के गौरव भाग–1 नामक पुस्तक के अनुसार पृष्ठ क्रमांक 16 पर जहां काबुल नदी पश्चिम में आकर सिंधु नदी में मिलती है वहीं स्थान दक्ष देश (अजनाभ खण्ड) था जहां 3000 वर्ष पूर्व दक्षों ने संघ राज्य किया था ।

चीन देश के टेराकोटा म्युजियम में भी 3000 वर्ष पुरानी मृदा संस्कृति के पुरातात्त्विक प्रमाण मौजूद है, जिसमें सैनिक, रथ, घोड़े व घुड़सवार की मिट्टी की मूर्तियां है जो 'दक्ष' के संघ राज्य के समकालीन है। जो दक्ष राज्य की मृदा संस्कृति का समर्थन करती है क्योंकि रथ, घोड़े व घुड़सवार हिन्दू (सिंधू) संस्कृति का मुख्य आधार है ।

कुम्हार प्रजापति कर्म प्रधान व मेहनत करने वाली एक पुरातन आर्य जाति है । जिसका उल्लेख हमें वेदों, पुराणों आदि धर्म ग्रंथों में मिलता है । जो हमें प्रकृति के नियमों की समझ (अवधारणा) प्रदान कराती है जिस कारण हम मिट्टी के गुण, बर्तन निर्माण की विधि–तकनीक बर्तनों को पकाने के तरीकों व चाक (चक्र) निर्माण की विधि, चाक की गति व पृथ्वी के घुर्णन गति के समरूप चाक की घुर्णन गति के वैज्ञानिक ज्ञान से परिचित होते है । प्रकृति की यही अवधारणा धर्म एवं विज्ञान का आविष्कार कहलाती है । इसी कारण कुम्हारी चाक (चक्र) को वैज्ञानिक अविष्कार का जनक कहा जाता है तथा इसीलिए भी कुम्भकार को अद्य पुरातन वैज्ञानिक कहा ग़या है। कुम्भकार की सृजनात्मकता व कठिन मेहनत ही उसे प्रजापति का दर्जा दिलाती है ।

कुम्भकार शब्द का आशय –

' कुम्भ' का अर्थ – कलश, घड़ा, समूह से है । 'कार' शब्द का अर्थ– निर्माण करने वाला, बनाने वाला, या कारीगर से है ।'आर्य' शब्द का अर्थ– यज्ञकर्ता या वैदिक धर्म को धारण करने वाले समूह से है । इस प्रकार उक्त तीनों शब्दों को जोड़ने पर (कुम्भ + कार + आर्य) कुम्भ कार्य शब्द बना । जिसका अर्थ – कलश का निर्माण करने वाले 'यज्ञकर्ता' से है । इस प्रकार 'कुम्भका आर्य' मूल शब्द को 'कुम्भ कार्य' कहा गया । फिर 'कुम्भ कार्य' शब्द बना । फिर 'कुम्भार्य' शब्द का अप्रभंश होकर 'कुम्हार्य' शब्द बना और अन्त में 'कुम्हार्य' शब्द का अपभ्रंश होकर 'कुम्हार' शब्द बना दिया गया । इसी कुम्हार को दुनिया का सबसे पहला एवम् प्राचीनतम भारतीय शिल्पकार माना जाता है । जिन्होंने अपनी वैज्ञानिक बुद्धि से मिट्टी की विभिन्न आकृतियों में मानव उपयोग एवं देव कार्यों के उपयोग की वस्तुओं, बर्तनों, मूर्तियों एवम् कलाकृतियों का निर्माण किया है। स्कन्ध पुराण में उल्लेख मिलता है कि कार्तिक माह के बैकुंठ चतुर्दशी को गौतम ऋषि ने 'महर्षि कुम्भज ऋषि' के रूप में अवतार धारण कर जन्म लिया है । जिन्हें (सृष्टि चकं) चाक का जनक, विश्व के प्रथम वैज्ञानिक के रूप में आज भी याद किया जाता है । इस प्रकार स्पष्ट है कि 'कुम्भकार' एक प्राचीनतम 'आर्य' जाति के समूह का हिस्सा है ।

* स्कीम नं. 21, मकान नं. 10,ग्वालटोली, नीमच (म.प्र.) भारत

''कुम्भ की खोज एवम् कुम्भकार की उत्पत्ति''

प्राकृतिक उत्पत्ति –

पृथ्वी पर मनुष्य मानव का अस्तित्व लाखों वर्ष पूर्व से है, किन्तु



हमने इस बात पर कभी विचार (चिंतन) नहीं किया कि 'कुम्भ' शब्द का अर्थ क्या है ? 'कुम्भ' का निर्माण किसने एवम् कैसे किया ? 'कुम्भकार' जाति की उत्पत्ति कैसे हुई ? 'कुम्भकार' शब्द का क्या अर्थ है? प्रत्येक शुभ कार्य में 'कुम्भ' की स्थापना ही क्यों की जाती है ? आदि प्रश्नों का उत्तर जानने के लिए हमें निम्न उपनिषद् का अध्ययन करना होगा।

एक विद्धतापूर्ण चिन्तन के अनुसार जंगल के जानवर हाथी जब तालाब अथवा नदी में जलक्रीड़ा करके आते थे, तब उन जानवरों के शरीर पर काफी मात्रा में कीचड़ चिपक जाता था और जंगल में विचरण के दौरान वह कीचड़ सूखकर उनके शरीर से गिर जाता था । मिट्टी की कटोरानुमा एवं खपरानुमा यह आकृति जानवर के मस्तक, पेट और पीठ पर चिपकी मिट्टी से प्राप्त होत थी। इस मिट्टी के टुकत्रडे का आकार जानवर के शरीर के हिसाब से रहता था, जितना बड़ा जानवर होता, मिट्टी उतना ही बड़ा आकार पाती थी।

सौभाग्यवश यह मिट्टी का पात्र (आदिम मानव) मानव को मिल गया और वह उस मिट्टी के पात्र को अपनी झोपड़ी (निवास स्थान) में ले गया । जंगल में आकाश से बिजली गिरने के कारण अचानक आग लग गयी । जिस कारण मिट्टी का वह 'खुपरानुमा' टुकड़ा भी आग की चपेट में आने से आग पाकर पक कर लाल हो चुका था तथा मजबूती पा चुका था। जब बारिश होने पर जंगल की आग बुझी, तो वह मानव (आदिम मानव) अपने उस पूर्व निवास पर गया, तब उसे वहां उस मिट्टी के पात्र में पानी भरा हुआ मिला। इस प्रकार मिट्टी के पके पात्र में पानी संग्रह की क्षमता को देखकर मानव (आदिम मानव) ने मिट्टी के पात्र (बर्तन) बनाने का प्रारम्भिक प्राकृतिक ज्ञान प्राप्त कर लिया।

मानव ने चिन्तन मनन के द्वारा अनुमान (पता) लगाया कि इस (पात्र) बर्तन ने हाथी के माथे से अपना आकार ग्रहण किया है, इसलिये उसने इस पात्र का नाम हाथी के माथे के नाम पर ही 'कुम्भ' रख दिय। (हिन्दी शब्द कोष – 'कुम्भ' का अर्थ हाथी के माथे का बिचला भाग या केन्द्रीय भाग से है)। इस प्रकार कुम्भ की खोज करने वाले को 'कुम्भकार' के नाम से जाना जाने लगा।

वैदिक उत्पत्ति –



'कुम्भकार' ने उस पात्र को हाथी की कृपा मानकर वह उसकी पूजा–अर्चना करने लगा और इसके लिये उसने हाथी की मूर्ति प्रतीक रुप में बनाई। कालान्तर में इस हाथी की प्रतिमा को 'गणपति' नाम दिया गया । 'गण' का अर्थ– 'समूह', 'ढेर' या पानी के संग्रह से लिया जाता है । एवम् पति का अर्थ – स्वामी, प्रभु, अधिपति, ईश्वर आदि से है । इस प्रकार 'गण + पति' से गणपति शब्द बना जिसका अर्थ 'समूह का स्वामी' या समूह का पालन करने वाले 'परमात्मा' से है । इसी 'गणपति' को वेदों, उपनिषदों एवम् पुराणों में गणेश, गणपति, एकदन्त, गौरी पुत्र, गणराज, गणनाथ, रिद्धि–सिद्धि के दाता, विनायक, लम्बोदर, विघ्नहर्ता, गणाध्यक्ष गजानन आदि नामों से स्तुति की गई है । इसलिये प्रत्येक शुभ कार्यों में 'कुम्भ' की स्थापना, आराधना की जाती है। प्रजापति विवाह संस्कार पद्धति में कुम्हारी चाक की पूजा कुंभ या कलश को लाया जाता है।

पौराणिक उत्पत्ति –



मत्स्यपुराण एवम् शिवपुराण के अनुसार माता पार्वती ने अपने शरीर की मैल (अनुलेप) से एक चेतन बालक का निर्माण किया, (प्रथम मृदा संस्कृति का प्रमाण) जो सम्पूर्ण शुभ लक्षणों से संयुक्त सभी अंग सुन्दर एवं दोष रहित, महान बल–पराक्रम से सम्पन्न थे । पार्वती ने उस बालक को कहा कि तुम मेरे पुत्र 'गणेश' हो और आज से तुम मेरे द्वारपाल हो।

जब माता पार्वती स्नान के लिए गई तो उस समय वहां शिवशंकर आ गये। तब द्वार पर गणेशजी पहरा दे रहे थे। उन्होंने शिवशंकर को अन्दर नहीं जाने दिया अर्थात् द्वार पर रोक दिया एवम् दोनों में युद्ध हुआ तथा भगवान शिव ने बालक गणेश का सिर काट दिया, जब यह बात पार्वती को मालूम हुई तो वे क्रोधित हुईं और सभी देवताओं एवं शिव शंकर ने बालक गणेश के शरीर पर हाथी का मस्तक लगाकर उन्हें पुन: जीवित किया। एवम् माता जगदम्बा से क्षमा याचना की।

प्रथम पूज्य गणेश (कुम्भ)– एक बार की बात है जब कार्तिकेय एवं गणेश दोनों भाई खेल रहे थे और उस खेल में विजयी को लेकर दोनों भाईयों में झगड़ा हो गया। उस झगड़े को समाप्त करने के लिये माता पार्वती ने दोनों को समझाया और कहा कि जो इस पृथ्वी का चक्कर लगाकर पहले आऐगा, वहीं प्रथम पूज्य एवं विजयी होगा । कार्तिकेय की सवारी मोर थी और उन्होंने इस प्रतियोगिता को स्वीकार कर पृथ्वी की परिक्रमा पर चले गयें। परन्तु गणेश जी की सवारी चूहा थी और गणेश जी इस चुनौती को लेकर दुविधा में पड़ गये। लेकिन गणेश जी वेदों के ज्ञाता थे इसलिए गणेश ने बुद्धि का प्रयोग कर, अपने माता–पिता (शिव–पार्वती) के समक्ष कलश की स्थापना कर माता–पिता एवं कलश की परिक्रमा कर पृथ्वी की परिक्रमा के बराबर सिद्ध कर प्रथम पूज्य हुए। अर्थात् माता–पिता एवं कलश (कुम्भ) सृष्टि के बराबर होते हैं। तब से ही गणेश की पूजा कुम्भघट स्थापना के रुप में प्रारम्भ की गई।

शंकर एवम् माता पार्वती ने पुत्र गणेश का विवाह प्रजापति विश्वरूप की दिव्यरूप सम्पन्न एवम् सर्वांगशोभना दो सुन्दर कन्या 'सिद्धि' एवं 'बुद्धि' नामक पुत्रियों से किया। श्री गणेश को 'सिद्धि' नामक पत्नी से क्षेम (शुभ) और 'बुद्धि' नामक पत्नी से 'लाभ' नामक दो पुत्र प्राप्त हुए। जो पूरा परिवार आर्य संस्कृति में पूज्यनीय है। वैदिक काल से ही कुम्भकार (प्रजापति) पर्यावरण संस्कृति के संरक्षक का दायित्व निभा रहे हैं। और पर्यावरण प्रबंधन का धर्मवाद के पालनार्थ आज के युग में ही मृदा संस्कृति को आत्मसात कर मिट्टी के बर्तन, यज्ञ व वन सम्पदा को संरक्षित किये हुए है।

आधुनिक युग में मिट्टी के बर्तनों की उपयोगिता

आज के आधुनिक युग में भी विभिन्न जाति धर्म के लोगों द्वारा



मिट्टी के बर्तनों का उपयोग विभिन्न संस्कार, पूजा, विवाह, यज्ञ, त्यौहार (पर्व) आदि में किया जाता है। तथा खाना पकाने का पात्र, दही का मटका, पानी का मटका (कलश) चाय अथवा दूध पीने का बरवा (सकोरे), सुराही, दीपक (मिट्टी के दिये) आदि आज के युग में भी सभी के लिये उपयोगी है। सदियों से ही ग्रीष्म ऋतु में पानी के मटके की उपयोगिता सम्पूर्ण भारत में सभी जाति धर्म के लोगों द्वारा उपयोग किया जाता है आधुनिक विद्युत उपकरणों की तुलना

में पानी का मटका कम खर्च, कम लागत पर गुणवत्तायुक्त शीतल ठंडा जल उपलब्ध करवाते है। देशी मटके के पानी में 24 मिनर्लस उत्तम अवस्था में पाये जाते है जो पाचन तंत्र एवं बी.पी. (ब्लड प्रेशर) को सही रखता है। आयुर्वेद के ग्रंथ चरक संहिता, सुश्रुत संहिता,भेषज संहिता आदि ग्रंथों में 'जल वर्ग' अध्याय में जल के गुण-दोष, शुद्ध जल की पहचान, जल के निर्मलीकरण की विधि, जलपात्र रखने की विधि, ठंडा जल करने की विधि एवं जलपान विधि का उत्तम वर्णन हमें मिलता है। सबसे उत्तम जल आकाश का होता है। जो पृथ्वी पर गिरने के बाद उसके अनुरुप गुण-दोष वाला जल हो जाता है। परन्तु मिट्टी के कलश का उपयोग जल पात्र के रुप में करके हम कम लागत में अमृत के समान षड्गुणयुक्त जल को प्राप्त कर सकते हैं जो जल मिट्टी के कलश (मटके) के सम्पर्क से ही शीतल, स्वच्छ, शुभ्र, शुद्ध, निर्मल, हल्का व मधुर हो जाता है, क्योंकि मिट्टी के मटकों में या बर्तनों में ऑक्सीकरण की क्रिया जारी रहती है।

आधुनिक चिकित्सा, रसायन विज्ञान प्राकृतिक चिकित्सा एवं आयुर्वेद की दृष्टि से भी स्वस्थ जीवन हेतु मिट्टी के बर्तन का उपयोग उत्तम एवं मिट्टी के बर्तन में बना खाना संतुलित पौष्टिकता प्रदान करता है। आयुर्वेद एवं यज्ञ विज्ञान में भी मिट्टी के बर्तनों का उपयोग बताया गया है। इसी आधार पर अमृत माटी इंडिया जयपुर (राज.) ने एक शोध किया है जिसमें धातु के बर्तन, एल्युमिनियम और नॉन स्टिक बर्तनों (प्रेशर कूकर) में खाना पकाया गया एवं दूसरी और मिट्टी के बर्तन में खाना पकाया गया तो दोनों के रासायनिक घटकों के परिणाम चकित कर देने वाले थे।

तुलनात्मक अध्ययन

रासायनिक घटक	प्रेशर कुकर	मिट्टी के बर्तन
कलोरिज	274.76K/Cal.	311.6
कारबोहाइड्रेट	41.57gm	50.73gm
सोडियम	461.42mg	406.44mg
ड्रिक्टेरी फाईनर	9.64gm	16.64gm
प्रोटीन	10.19gm	13.08gm
विटामिन-ए	OIU	100.5IU
विटामिन-बी	1.73 mg	3.79mg
केलसियम	11.97mg	36.53mg
आयरन	2.75mg	3.81mg

उपरोक्त प्रकार से खाना पकाने पर जो रासायनिक टेस्ट प्रयोगशाला में करवाया गया है जिससे स्पष्ट है कि प्रेशर कूकर की तुलना में मिट्टी के बर्तनों का पका खाना ज्यादा पौष्टिक प्रदान करता है, विटामिन्स व मिनरल्स उत्प्रेरक का कार्य करते है जो भोजन को ऊर्जा में परिवर्तित कर अंगों के निर्माण में सहायक होते है।

शरीर को सुचारू रूप से चलाने के लिए कई प्रकार के कार्बो हाइड्रेट्स, प्रोटीन्स, विटामिन्स, खनिज, वसा, पानी व कई मेक्रो एवं माइक्रो (सूक्ष्म) न्यूट्रीएन्ट्स की आवश्यकता होती है जिसकी पूर्ति प्रकृति व मिट्टी के बर्तनों में पके खाने से सहज व सरल तरीके से हो जाती है इसके लिए सभी चिकित्सा विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय को शोध कर जनहित व स्वस्थ भारत के निर्माण में मिट्टी के बर्तनों की महत्ता को जग जाहिर करना चाहिए जो स्वस्थ व कुशल भारत के लिए अति आवश्यक है।

इसी प्रकार मिट्टी में 24 खनिज तत्व पाया जाता है जो मिट्टी के बर्तनों का उपयोग हम खाना बनाने आदि में करते है जिससे हमें 24 खनिज तत्व की पूर्ति उन मिट्टी के बर्तनों से सहज ही हो जाती है। वर्तमान में भी मानव शारीरिक दोषों के जिम्मेदार धातुओं एवं प्लास्टिक में संग्रहित खाद्य एवं पेय पदार्थ है जो मानव जीवन को धीमी आत्महत्या की ओर अग्रसर कर रहा है। जिससे मानव जीवन की औसत उम्र दिन-प्रतिदिन घटती जा रही है। जिस पर आज के वैज्ञानिकों को चिंतन एवं शोध करना चाहिए, तथा दिल्ली विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली को मिट्टी के बर्तनों के उपयोग व उसमें बने खाने के रसायनिक घटकों व पौष्टिकता का निरीक्षण-परीक्षण हेतु एक शाखा अलग से विश्वविद्यालयों में स्वास्थ्य विभाग के अंतर्गत खोला जाना चाहिए।

कौशल विकास की आवश्यकता – कुम्हारी उद्योग पूरे भारत में छोटे-बड़े घरेलू उद्योग के रुप में संचालित है जिसे आज 'कौशल विकास' की आवश्यकता है। प्रत्येक राज्य के 'माटी कला बोर्ड' यदि कुम्हारी उद्योग को 'कौशल विकास एवं आधुनिक उपकरण', व वित्तीय सहयोग उपलब्ध करवाते है तो देश में मिट्टी की कला के क्षेत्र में रोजगार, निर्यात, राष्ट्रीय आय, संस्कृति, स्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में वृद्धि होगी जो कि प्रत्येक सरकार का मुख्य उद्देश्य होता है। इसके द्वारा भारत के राष्ट्रीय लक्ष्य रोजगार व आर्थिक समानता के मुख्य उद्देश्य को भी प्राप्त किया जा सकता है। अत: माटी कला बोर्ड, निजी एवं शासकीय एजेंसियों को चाहिये कि कुम्हारी उद्योग को 'कौशल विकास' की सुविधा उपलब्ध करावे। जो वर्तमान में केन्द्र सरकार की मुख्य योजनाओं में सम्मिलित है। भारत सरकार को 'नीति आयोग' के द्वारा या केन्द्रीय माटी कला बोर्ड भारत सरकार का गठन कर माटी कला के विकास व कौशल विकास हेतु ध्यान देना चाहिए। जिससे देश में माटी कला का विकास हो सकेगा।

माटी कला में कौशल विकास के लाभ-

01. कुम्हारी उद्योग का कौशल विकास होने से संबंधित क्षेत्र में रोजगार की वृद्धि होगी।
02. कुम्हारी उद्योग का कौशल विकास होने से माटीकला के क्षेत्र का विस्तार एवं भारतीय संस्कृति का पोषण होगा।
03. आधुनिक तकनीकी के उपयोग से युवाओं में रोजगार की सम्भावनाओं का विकास होगा। जिससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी।
04. माटीकला का विकास होने से निर्यात की सम्भावना बढ़ेगी जिससे देश में विदेशी मुद्रा का भण्डार बढ़ेगा।
05. भारतीय संस्कृति के अनुरुप माटीकला का विकास होने से घरेलू बाजार में मिट्टी के बर्तनों, मूर्तियां एवं कलाकृति की मांग बढ़ेगी।
06. कला कृति का विकास होने से मिट्टी के बर्तनों का सही मूल्यांकन किया जाना आसान होगा।
07. भारत के पर्यटन क्षेत्र में इसे विशेष पहचान मिल सकेगी, जो भारतीय संस्कृति को अन्तर्राष्ट्रीय पहचान दिला सकेगा।
08. कौशल विकास के माध्यम से मिट्टी के बर्तन एवं मूर्तियों को आर्कषक एवं अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।
09. खाद्य एवं पेय पदार्थों में मिट्टी के बर्तनों का उपयोग कर उसकी गुणवत्ता एवं पौष्टिकता में वृद्धि की जा सकती है। जो मानव शरीर में संतुलन प्रदान कर रोग प्रतिरोध क्षमता का विकास करता है।

10. वैज्ञानिक एवं स्वास्थ्य विज्ञान की दृष्टि से भी मिट्टी के बर्तनों का उपयोग सही एवं शुद्ध माना गया है। माटी कला बोर्ड द्वारा इसका केटलॉग तैयार कर प्रचार किया जा सकता है । इसके लिये जिला स्तर पर खादी ग्रामद्योग बोर्ड का उपयोग किया जा सकता है।
11. भारत के विभिन्न हिस्सों में हाट बाजार एवं मेलों का आयोजन होता है जिसमें मिट्टी के बर्तनों एवं कला का प्रदर्शन कर इसकी मांग में वृद्धि की जा सकती है ।
12. मिट्टी के बर्तनों के उपयोग से भारतीय संस्कृति का पोषण होता है तथा दूषित खाद्य पदार्थों से मुक्ति मिलती है एवं पर्यावरण प्रदूषण से भी मुक्ति मिलती है । जो मृदा संस्कृति की मुख्य विशेषता है । प्राचीन भारत में दूध-दही की नदियां बहती थी, उसी देश में आज प्लास्टिक की बोतलों में पानी का विक्रय 20/-रुपये प्रति लीटर तक हो रहा है । जो पर्यावरण संकट के साथ-साथ उपहार स्वरूप बीमारियाँ भी दे रहा है। इससे बचने के लिये मिट्टे के मटके का पानी शुद्ध व स्वास्थ्यवर्द्धक है । प्लास्टिक की तुलना में मिट्टी से कोई पर्यावरण संकट भी पैदा नहीं होता है ।
13. देश के घरेलू साज-सज्जा के मिट्टी के समान की अच्छी मांग है । जिसे कौशल विकास कर पूर्ति की जा सकती है । एवं नये बाजार का निर्माण किया जा सकता है ।
14. दुनिया में समस्त बीमारियाँ खराब पेट के कारण पैदा होती है और स्वास्थ्य विज्ञान में पेट को सही रखने हेतु खाने पर ध्यान दिये जाने के साथ मिट्टी के मटके का पानी का पान भी पेट को सही रखने में सहायक होता है । जो पेट की नाभी के तापमान को संतुलित रखता है एवं पाचन तंत्र को सुदृढ़ बनाए रखने में सहायक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रजापति का तत्व दर्शन, लेखक- डॉ. ईश्वरलाल प्रजापति,नीमच ।
2. प्राचीन भारत का इतिहास-दिल्ली विश्वविद्यालय (हिन्दी)।
3. वेदकालीन समाज-डॉ. शिवदत्त ज्ञानी, उज्जैन।
4. पाणिनी कालीन भारतवर्ष-वासुदेवशरण अग्रवाल।
5. संस्कृत-साहित्य-कोष-डॉ. राजवंश सहाय 'हीरा'।
6. अमृत माटी इंडिया ट्रस्ट- जयपुर (राज.)।
7. महाराज दक्ष प्रजापति वरदिया (कुम्हार) समाज समिति, नीमच
8. भारत के गौरव-भाग-1, पृ.क्र. 17, सम्पादन-विनोद कुमार सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, वर्ष 2006
9. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान- आरोग्य सेवा प्रकाशन।
10. डॉ. पी.बी. काले, निदेशक-महात्मा गांधी ग्रामीण औद्योगिकरण संस्थान मगनवाड़ी वर्धा (महाराष्ट्र)।
11. डॉ. आर.के. प्रजापति, एम.वाय. अस्पताल, इन्दौर (म.प्र.)।
12. डॉ. पी.एन. राम, कानपुर (उ.प्र.), डॉ. राजकुमार आर्य, हरिद्वार (उत्तरांचल), जसपालसिंह खींवा, होशियरपुर, पंजाब।
13. राधेश्याम तेनगुरिया, हरबल प्रोडक्ट कंपनी, दिल्ली।

****

Diversity of Gastropods from Uran, Navi Mumbai West coast of India

Aamod N. Thakkar*

Abstract - Diversity of gastropod molluscs from muddy, sandy, rocky substrata and mangrove habitat were studied and gastropods were recorded during November 2013 to October 2014.The gastropods recorded were *Nerita oyrzyrum, Nerita Grayana,Trochus radiates, Umbonium vestarium, Turbo bruneus, Littorina scabra, Bursa spinosa, Tibia curta, Thais blanfordi, Turritela duplicate etc.* belonging to 6 order and 18 family. The productive habitat of Uran coast supports rich gastropod diversity. The data presented in this paper suggest that at present habitat of Uran coast is not under pollution stress. But the galloping development and rapid industrialization and urbanization may put pressure on ecological conditions of Uran coast and it needs continuous monitoring.
Key words - Gastropods, diversity, mangrove, west coast, Uran.

Introduction - Molluscs forms an important link in food chain from primary to tertiary level leading to fish production and also an edible source for coastal population. Besides, they are utilized for ornamental trade, pharmacological products and in the manufacture of lime and cement [1].In India the marine molluscs are recorded from the diverse habitats. They occur in different habitats such as mangroves, coral reef, rocky coasts, sandy beaches, sea grass beds and also at greater depth in the sea , They are more diverse and abundant in the rocky intertidal zone along the coast, sandy stones, intertidal flats and mangroves [2] .

In India, till today, 5070 species of molluscs have been recorded of which, 3370 species are from marine habitats [3]. Anthropogenic activities involving development projects have resulted in depletion of coastal resources, destruction of mangrove habitats, disruption of ecosystem processes and loss of biodiversity [4]. The gastropods have a significant ecological role to play in the mangrove ecosystems, also rocky habitats is suitable especially for gastropods. However very little information is available on the gastropod biodiversity of mangroves. Hence it is necessary to document the biodiversity of the group of threatened ecosystems. Extensive research on diversity of mollusc fauna on west coast has been carried out in India however data on gastropod diversity of Uran, District Raigad is not available; hence the present study is undertaken.

Materials And Methods

The study area - Geographically, Uran is located opposite to Coloba along the eastern shore of Mumbai harbour. On the west side, Uran is encircled by Arabian Sea. Sheva creek' (Lat. 18^0 50' 20" N and Long. 72^0 57' 5" E) encircles Uran from north side and is continuous with the Panvel creek and Thane creek. Dharamtar creek (Lat.18^0 50' 5" N and Long. 72^0 57' 10" E) covers Uran from south side and is continuous with the Karanja creek and Pen – Khopoli creek. Both creeks have rocky shore towards the seaward side whereas remaining part of the creeks is marshy and have moderate cover of mangroves with mud flats.

An international port called 'Jawaharlal Nehru Port Trust (JNPT)' was established in 1989 near the Sheva creek biggest container handling port in India, Nhava-Seva International Container Terminal (NSICT), Container Freight Stations (CFS) and all allied port related business etc. resulted in increased hauling operations in the creek. In addition to this onset of industries like Oil and Natural Gas Commission (ONGC), MSEB - Gas Turbine Power Station, Bharat Petroleum plant Container Freight Stations (CFS) etc., the area of Uran creek became the ground for hectic maritime activities. These activities have direct stress on coastal environment of Uran. Hence present study has been undertaken.

For present investigation, 2 sites were selected along the coastal line of Uran i. e. Sheva Creek and Karanja Creek. The selected sites were visited monthly from November 2013 to October 2014 for assessment of species diversity of gastropods.

Gastropods were hand-picked from the intertidal, sub tidal as well as from the seaward fringes of the mangroves and carried to the laboratory in icebox. Specimens were narcotized with powdered menthol to extend fully and killed by using 1% chloral hydrate. Animals were preserved in 5% seawater buffered formalin. For correct identification, standard keys of Menon et al [5], Apte [6] were followed.

Results And Discussion

Table 1 (see in last page)

Discussion - The diversity of gastropods at 2 sites of Uran

***Veer Wajekar Arts, Science and Commerce College, Mahalan Vibhag, Phunde, Uran Dist. Raigad (Mh.) INDIA**

Coast,Raigad district West coast varies significantly. During the study period 49 gastropod species belonging to 6 order and18 family were recorded. The characteristics of these ecosystems are the shallowness of the selected localities, relatively high temperature, low wave energy and the semi-enclosed nature of the habitat. Decomposed material of the plant litter from August onwards is an important component of nutrient cycling in wetlands and it harbors a large number of diverse species [7]. The lowest density was in the month of July because of monsoon season due to low salinity, the sensitive molluscs were unable to adjust the fluctuating osmotic balance quickly hence their mortality was high. After the month of July the mortality rate of gastropods decreased resulting increased density.

In the month of July, the salinity and temperature dropped down which made the condition adverse for the molluscs [8]. The population density was at its peak in the month of November 2013 during post monsoon period.Dumping of industrial effluents, untreated sewage and unchecked encroachment along the coastal line have resulted in deterioration of water quality and incidences of industrial pollution are common in creeks of Mumbai and Navi Mumbai [9] . Mollusk communities are good indicators of localized conditions[10], gastropods are generally benthos organism and they are regularly used as bio-indicators of aquatic health status.

Conclusion - High species diversity was found at both sites, it was due to good health of sediments and regular flushing of tides. The present study revealed that all recorded gastropods are indigenous species and have greater commercial value and biodiversity importance. The total number and type of molluscs probably is influenced by their habitat and geographical condition. Uran coast have suitable habitat to support large number of edible, commercial and ecologically important gastropod diversity. There is an urgent need for conservation and sustainable utilization of gastropod species.

References :-

1. Jaiswar, A. K. and B. G. Kulkarni, (2005). Conservation of Mollusc biodiversity from intertidal area of Mumbai coast. *J. Natcon*, 17(1): 93–105.
2. Ramakrishna and A. Dey, (2010) Annotated checklist of Indian Marine Molluscs (Cephalopoda, Bivalve and Scaphopoda) Part-1. Rec. Zool. Surv. India, Occ. Paper no., 320:1-357. (Published by the Director, Zool.Surv.India, Kolkata).
3. Subba Rao,N. V., (1991). Mollusca in Animal Resources of India (Zoological Survey of India, Calcutta), 125-147.
4. Vijay, V., R. S. Birader, A. B. Inamdar, G. Deshmukhe, S. Baji and M. Pikle, (2005). Mangrove mapping and change detection around Mumbai (Bombay) using remotely sensed data. *Indian Journal of Marine Sciences*, 34(3): 310–315.
5. Menon, P. K. B., A. K. Datta and D. Das Gupta, (1951). On the marine fauna of Gulf of Kutch Part II – Gastropoda. *J. Bombay Nat. Hist. Soc*. 8(2): 475–494.
6. Apte, D. A., (1988). The book of Indian shells. Bombay Natural History Society, Oxford University Press, India pp 115.
7. Thakur S., Yeragi S.G. and Yeragi S.S. (2012). Population Density and Biomass of Organisms in the Mangrove Region of Akshi Creek, Alibag Taluka, Raigad District Maharashtra. International Day for Marine Biological Diversity, Marine Biodiversity.
8. Patole,V.M. 2010.Ecology and biodiversity Mangroves in Mochemad Estuary of Vengurla, South Konkan, Maharashtra. Ph.D. Thesis,University of Mumbai.
9. Prabhakar R. Pawar, (2012) Molluscan diversity in mangrove ecosystem of Uran (Raigad), Navi Mumbai, Maharashtra, West coast of India. Bull. Environ. Pharmacol. Life Sci. Vol.1 (6):55-59
10. Rajendra G. Mavinkurve, Sandhya P. Shanbhag and N.A.Madhyastha. (2004) Non-Marine Molluscs of Western Ghats: A Status review. Zoos' Print Journal 19 (12):1708-1711.

Table 1: List of gastropods recorded at Uran, west coast, India, were from 6 order and 18 family as follows:

Order	Family	Species
Hypsogastropoda	Bursidae	1 *Bursa spinosa* (Lamarck 1816) 2 *Bursa lissostroma* (Smith, 1914) 3 *Bursa tuberculata* (Brodrip, 1833) 4 *Bursa elegans (*Sowerby, 1835)
Hypogastropoda	Naticidae	1 *Natica maculosa* (Lam., 1799) 2 *Natica picta* (Recluz, 1844)
Hypogastropida	Potamididae	1 *Telescopium telescopium* (Linn., 1758)
Neritimorpha	Nertidae	1 *Nerita oryzarum* (Recluz, 1841) 2 *Nerita squmulata* (Le Guillous, 1841) 3 *Nerita planspria* (Anton, 1839) 4 *Nerita grayana* (Recluz, 1843) 5 *Nerita albicilla* (Linnaeus, 1758)
Caenogastropoda	Strombidae	1 *Tibia curta* (Sowerby, 1842)
Caenogastropoda	Ficidae	1 *Ficus gracilis* (Sowerby, 1825)
Caenogastropoda	Nassariidae	1 *Nassarius stulatus* (Gmelin, 1791) 2 *Nassarius pullus* (Linnaeus, 1758) 3 *Nassarius jacsonianus* (Quoy & Gaimard, 1833) 4 *Nassarius vittatus* (Linnaeus, 1767)
Pulmonata	Siphonaridae	1 *Siphonaria laciniosa* (Linn., 1758)
Neogastropoda	Buccinadae	1 *Engina zea* (Melvill) 2 *Babylonia spirata* (Linnaeus, 1758) 3 *Cantharus spiralis* (Gray, 1846) 4 *Cancellaria costifera* (Sowerby, 1835)
Neogastropoda	Conidae	1 *Conus mutabilis* (Reeve, 1844)
Neogastropoda	Cypraeidae	1 *Erosaria lamarcki* (Gray, 1825)
Neogastropoda	Muricidae	1 *Murex adustus* (Lamarck, 1799) 2 *Murex tribulus* (Linnaeus, 1758) 3 *Ocinebra bombayana* (Melvill, 1893) 4 *Thais lacera* (Born, 1778) 5 *Thais tissoti* (Petit, 1852) 6 *Thais carinifera* (Lamarck, 1822) 7 *Thais sacellum* (Gmelin, 1791)
Neogastropoda	Onchidiidae	1 *Onchidium tigrinum* (Stoliczka, 1869) 2 *Onchidium tenerum* (Stoliczka, 1869)
Neogastropoda	Turridae	1 *Surcula javana* (Linnaeus, 1758) *2 Surcula amicta* (Smith, 1877) 3 *Clavus crassa* (Smith, 1888)
Neogastropoda	Littorinidae	1 *Littorina scabra* (Linnaeus, 1758) 2 *Littoria undulata* (Gray, 1839)
Archeogastropoda	Trochidae	1 *Trochus radiatus* (Gmelin, 1791) 2 *Trochus stellatus* (Gmelin, 1791) 3 *Umbonium vestarium* (Linnaeus) 4 *Trochus tentorium* (Gmelin, 1791) 5 *Euchelus atratus* (Gmelin, 1791)
Archeogastropoda	Turbinidae	1 *Turbo brunneus* (Roeding) 2 *Astrea stellata* (Gmelin, 1791)

****

Physical Parameters of Water Quality

Dr. Shobha Gupta*

Abstract - Since the industrial revolution in the late eighteenth century, the world has discovered new sources of pollution nearly every day. So, air and water can potentially become polluted everywhere. Little is known about changes in pollution rates. The increase in water-related diseases provides a real assessment of the degree of pollution in the environment. This paper summarizes physical parameters of water quality from an ecological perspective not only for humans but also for other living things. According to its quality, water can be classified into four types. Those four water quality types are discussed through an extensive review of their important common attributes including physical, chemical, and biological parameters. These water quality parameters are reviewed in terms of definition, sources, impacts, effects, and measuring methods.
Keywords- water quality, physical parameters, pH, turbity, temperature.

Introduction - Water is the second most important need for life to exist after air. As a result, water quality has been described extensively in the scientific literature. The most popular definition of water quality is "it is the physical, chemical, and biological characteristics of water" [1, 2]. Water quality is a measure of the condition of water relative to the requirements of one or more biotic species and/or to any human need or purpose [3, 4]. In this paper we will discuss the physical parameters of water quality.

Classification of water: Based on its source, water can be divided into ground water and surfacewater [5]. Both types of water can be exposed to contamination risks from agricultural, industrial, and domestic activities, which may include many types of pollutants such as heavy metals, pesticides, fertilizers, hazardous chemicals, and oils [6]. Water quality can be classified into four types—potable water, palatable water, contaminated (polluted) water, and infected water [7]. The most common scientific definitions of these types of water quality are as follows:

1. Potable water: It is safe to drink, pleasant to taste, and usable for domestic purposes [1, 7].
2. Palatable water: It is esthetically pleasing; it considers the presence of chemicals that do not cause a threat to human health [7].
3. Contaminated (polluted) water: It is that water containing unwanted physical, chemical, biological, or radiological substances, and it is unfit for drinking or domestic use [7].
4. Infected water: It is contaminated with pathogenic organism [7].

Physical parameters of water quality:

1. Turbidity
2. Temperature
3. Color
4. Taste and odor
5. Solids
6. Electrical conductivity (EC)

Turbidity: Turbidity is the cloudiness of water [8]. It is a measure of the ability of light to pass through water. It is caused by suspended material such as clay, silt, organic material, plankton, and other particulate materials in water [2].

Turbidity in drinking water is esthetically unacceptable, which makes the water look unappetizing. The impact of turbidity can be summarized in the following points:

1. It can increase the cost of water treatment for various uses [9].
2. The particulates can provide hiding places for harmful microorganisms and thereby shield them from the disinfection process [10].
3. Suspended materials can clog or damage fish gills, decreasing its resistance to diseases, reducing its growth rates, affecting egg and larval maturing, and affecting the efficiency of fish catching method [11,12].
4. Suspended particles provide adsorption media for heavy metals such as mercury, chromium, lead, cadmium, and many hazardous organic pollutants such as polychlorinated biphenyls (PCBs), polycyclic aromatic hydrocarbons (PAHs), and many pesticides [13].
5. The amount of available food is reduced [13] because higher turbidity raises water temperatures in light of the fact that suspended particles absorb more sun heat. Consequently, the concentration of the dissolved oxygen (DO) can be decreased since warm water carries less dissolved oxygen than cold water.

Turbidity is measured by an instrument called nephelometric turbidimeter, which expresses turbidity in

***Associate Professor (Chemistry) D.A.K. College, Moradabad (U.P.) INDIA**

terms of TU. A TU is equivalent to 1 mg/L of silica in suspension [8]. Turbidity more than 5 TU can be visible to the average person while turbidity in muddy water, it exceeds 100 TU [10]. Groundwater normally has very low turbidity because of the natural filtration that occurs as the water penetrates through the soil [14,15].

Temperature: Palatability, viscosity, solubility, odors, and chemical reactions are influenced by temperature [8]. Thereby, the sedimentation and chlorination processes and biological oxygen demand (BOD) are temperature dependent [15]. It also affects the biosorption process of the dissolved heavy metals in water [16, 17]. Most people find water at temperatures of 10–15°C most p alatable [8, 18].

Color: Materials decayed from organic matter, namely, vegetation and inorganic matter such as soil, stones, and rocks impart color to water, which is objectionable for esthetic reasons, not for health reasons [8, 19]. Color is measured by comparing the water sample with standard color solutions or colored glass disks [10]. One color unit is equivalent to the color produced by a 1 mg/L solution of platinum potassium chloroplatinate (K_2PtCl_6)) [8]. The color of a water sample can be reported as follows:

- Apparent color is the entire water sample color and consists of both dissolved and suspended components color [8].
- True color is measured after filtering the water sample to remove all suspended material [18].

Color is graded on scale of 0 (clear) to 70 color units. Pure water is colorless, which is equivalent to 0 color units [8].

Taste and odor: Taste and odor in water can be caused by foreign matter such as organic materials, inorganic compounds, or dissolved gasses [18]. These materials may come from natural, domestic, or agricultural sources [19]. The numerical value of odor or taste is determined quantitatively by measuring a volume of sample A and diluting it with a volume of sample B of an odor-free distilled water so that the odor of the resulting mixture is just detectable at a total mixture volume of 200 ml [18, 20]. The unit of odor or taste is expressed in terms of a threshold number as follows:

TON or TTN = (A + B) / A (1)

where TON is the threshold odor number and TTN is the threshold taste number

Solids: Solids occur in water either in solution or in suspension [20]. These two types of solids can be identified by using a glass fiber filter that the water sample passes through [20]. By definition, the suspended solids are retained on the top of the filter and the dissolved solids pass through the filter with the water [8]. If the filtered portion of the water sample is placed in a small dish and then evaporated, the solids remain as a residue. This material is usually called total dissolved solids or TDS [8].

Total solid (TS) = Total dissolved solid (TDS) + Total suspended solid (TSS) (2)

Water can be classified by the amount of TDS per liter as follows:

- freshwater: <1500 mg/L TDS;
- brackish water: 1500–5000 mg/L TDS;
- saline water: >5000 mg/L TDS.

The residue of TSS and TDS after heating to dryness for a defined period of time and at a specific temperature is defined as fixed solids. Volatile solids are those solids lost on ignition (heating to 550°C) [8]. These measures are helpful to the operators of the wastewater treatment plant because they roughly approximate the amount of organic matter existing in the total solids of wastewater, activated sludge, and industrial wastes [1, 20]. They are calculated as follows [8]:

- Total solids:

Total solids (mg / L) = [(TSA–TSB)] × 1000 / sample (mL) (3)

where TSA = weight of dried residue + dish in milligrams and TSB = weight of dish in milligrams.

- Total dissolved solids:

Total dissolved solids (mg / L) = [(TDSA – TDSB)] × 1000 / sample (mL) (4)

where TDSA = weight of dried residue + dish in milligrams and TDSB = weight of dish in milligrams.

- Total suspended solids:

Total suspended solids (mg / L) = [(TSSA – TSSB)] × 1000 / sample (mL) (5)

where TSSA = weight of dish and filter paper + dried residue and TSSB = weight of dish and filter paper in milligram.

- Fixed and volatile suspended solids:

Volatile suspended solids (mg / L) = [(VSSA – VSSB)] × 1000 / sample (mL) (6)

where VSSA = weight of residue + dish and filter before ignition, mg and VSSB = weight of residue + dish and filter after ignition, mg.

Electrical conductivity (EC): The electrical conductivity (EC) of water is a measure of the ability of a solution to carry or conduct an electrical current [22]. Since the electrical current is carried by ions in solution, the conductivity increases as the concentration [10] of ions increases. Therefore, it is one of the main parameters used to determine the suitability of water for irrigation and firefighting. Units of its measurement are as follows:

- U.S. units = micromhos/cm
- S.I. units = milliSiemens/m (mS/m) or dS/m (deciSiemens/m)

where (mS/m) = 10 umho/cm (1000 μS/cm = 1 dS/m). Pure water is not a good conductor of electricity [2, 10]. Typical conductivity of water is as follows:

- Ultra-pure water: 5.5 × 10-6d S/m;
- Drinking water: 0.005–0.05d S/m;
- Seawater: 5 dS/m.

The electrical conductivity can be used to estimate the TDS value of water as follows [8, 20]:

TDS (mg / L) E ≅ EC (dS / m or umho / cm) × (0.55–0.7) (7)

TDS can be used to estimate the ionic strength of water in the applications of groundwater recharging by treated wastewater [20]. The normal method of measurement is electrometric method [10].

Water quality requirements: Water quality requirements differ depending on the proposed used of water [18]. As reported by Tchobanoglous et al. [18], "water unsuitable for one use may be quite satisfactory for another and water may be considered acceptable for a particular use if water of better quality is not available." Water quality requirements should be agreed with the water quality standards, which are put down by the governmental agency and represent the legislation requirements. In general, there are three types of standards: in-stream, potable water, and wastewater effluent [18], each type has its own criteria by using the same methods of measurement. The World Health Organization (WHO) has established minimum standards for drinking water that all countries are recommended to meet [21].

Conclusion: The physical parameters of water quality are reviewed in terms of definition, sources, impacts, effects, and measuring methods. The classification of water according to its quality is also covered with a specific definition for each type.

References:-

1. Spellman FR. Handbook of Water and Wastewater Treatment Plant Operations. 3rd ed. Boca Raton: CRC Press; 2013
2. Alley ER. Water Quality Control Handbook. Vol. 2. New York: McGrawHill; 2007
3. Shah C. Which Physical, Chemical and Biological Parameters of Water Determine Its Quality?; 2017
4. Tchobanoglous G, Schroeder E. Water Quality: Characteristics, Modeling, Modification. 1985
5. Gray N. Water Technology. 3rd ed. London: CRC Press; 2017
6. Davis ML, Masten SJ. Principles of Environmental Engineering and Science. New York: McGraw-Hill; 2004
7. Chatterjee A. Water Supply Waste Disposal and Environmental Pollution Engineering (Including Odour, Noise and Air Pollution and its Control). 7th ed. Delhi: Khanna Publishers; 2001
8. APHA. Standard Methods for the Examination of Water and Wastewater. 21st ed. Washington, DC: American Public Health Association; 2005
9. Davis ML. Water and Wastewater Engineering—Design Principles and Practice. New York: McGraw-Hill; 2010
10. Edzwald JK. Water Quality and Treatment a Handbook on Drinking Water. New York: McGraw-Hill; 2010
11. Tarras-Wahlberg H, Harper D, Tarras-Wahlberg N. A first limnological description of Lake Kichiritith, Kenya: A possible reference site for the freshwater lakes of the Gregory Rift valley. South African Journal of Science. 2003;99:494-496
12. Kiprono SW. Fish Parasites and Fisheries Productivity in Relation to Exreme Flooding of Lake Baringo, Kenya [PhD]. Nairobi: Kenyatta University; 2017
13. Cole S, Codling I, Parr W, Zabel T, Nature E, Heritage SN. Guidelines for Managing Water Quality Impacts within UK European Marine Sites; 1999
14. Viessman W, Hammer MJ. Water Supply and Pollution Control. 7th ed. Upper Saddle River: New Jersey Pearson Prentice Hall; 2004
15. Spellman FR. The Drinking Water Handbook. 3rd ed. Boca Raton: CRC Press; 2017
16. Abbas SH, Ismail IM, Mostafa TM, Sulaymon AH. Biosorption of heavy metals: A review. Journal of Chemical Science and Technology. 2014;3:74-102
17. White C, Sayer J, Gadd G. Microbial solubilization and immobilization of toxic metals: Key biogeochemical processes for treatment of contamination. FEMS Microbiology Reviews. 1997;20:503-516
18. Tchobanoglous G, Peavy HS, Rowe DR. Environmental Engineering. New York: McGraw-Hill Interamericana; 1985
19. DeZuane J. Handbook of Drinking Water Quality. 2nd ed. New York: John Wiley & Sons; 1997
20. Tchobanoglous G, Burton FL, Stensel HD. Metcalf & Eddy Wastewater Engineering: Treatment and Reuse4th ed. New Delhi: Tata McGraw-Hill Limited; 2003
21. World Health Organization. Guidelines for Drinking-Water Q , Vol. 2, Health criteria and other supporting information. 1996

****

हिन्दी व्यंग्य में महिला व्यंग्यकारों की भूमिका

डॉ. सुनीता यादव*

प्रस्तावना – साहित्य मानव जीवन की अभिव्यक्ति है, व्यंग्य एक सहज अभिव्यक्ति है हर रचना में बीज रूप में व्यंग्य होता है। व्यंग्य साहित्य की परम्परा बहुत प्राचीन है। संस्कृत साहित्य से लेकर आजतक व्यंग्य की एक परिपुष्ट परम्परा मिलती है। डॉ. शैलजा माहेश्वरी के अनुसार 'व्यंग्य उपजीव्य होने वाले साहित्य की परम्परा बहुत प्रांचीन है। संस्कृत साहित्य सिद्ध साहित्य, भक्ति–रीति साहित्य में व्यंग्य की एक परिपुष्ट परम्परा मिलती है। चार्वाक और कबीर व्यंग्य के दो बिन्दु साहित्य इतिहास में दिखायी देते है। इन दोनों ने अपने सशक्त व्यंग्य द्धारा समाज का ऐसा शल्य कर्म किया जो समाज, संस्कृति में व्याप्त बुराई विसंगति रूपी सड़े हिस्से को काटकर फेक दिया।'[1]

हिन्दी में आधुनिक काल में प्रखर व्यंग्यकार के रूप में भारतेन्दु हरिष्चन्द्र के दर्शन होते है। उन्होनें अपने आस–पास की विविध सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक विसंगतियों को देखा परखा और उन पर तीखा प्रहार किया। अधुनिककाल में ही हमें व्यंग्य महिला व्यंग्यकारो की रचनाएँ प्राप्त होती है।

हिन्दी में नारी व्यंग्य लेखन– बीसवी सदी के छठे दशक के बाद हिन्दी साहित्य में कई नवीन विधाओं का आगमन हुआ वह भी अपने पूरे तेवर के साथ। उनमें से एक विधा व्यंग्य हैं। व्यंग्य ने अपनी पहचान बनाली है। इससे पूर्व वह हास्य के साथ अपने अस्तित्व को लिए था। 'हास्य और व्यंग्य दोनो विसंगति की संताने है। हास्य का जन्म पहले हुआ है इसलिए यह व्यंग्य का अग्रज है। इस कारण व्यंग्य को अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने में देर लगी।'[2] तत्कालीन समय में हास्यकारों में महिला व्यंगयकारो की काफी संख्या व्यंग्य रचनाएँ उपलब्ध है। उन्होनें अपनी प्रतिभा के बल पर श्रेष्ठ हास्य की सर्जना की है। डॉ. शैलेजा माहेश्वरी के अनुसार 'हास्य और व्यंग्य का यदि हम इतिहास देखे, तो महिलाओं की उपस्थिति ध्यानाकर्षक है महिलाओं के हास्य व्यंग्य लेखन को अनदेखा किया गया हैं ठीक वैसे ही जैसे हास्य–व्यंग्य विधा के साथ हुआ है। फिर भी इन्होनें आज अपनी पहचान बना ली।[3]

डॉ. शैलजा माहेश्वरी के अनुसार '1920 में सितम्बर की 'महिला दर्पण' पत्रिका में श्रीमती देवता देवी की हास्य रचना 'चुरिया क्या हुई' प्रकाशित हुई थी,।[3] हास्य के क्षेत्र की एक महिला के द्धारा लिखी हुई पहली रचना है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने इसे पहली हास्य महिला रचनाकार की हास्य रचना माना है।'[4]

श्रीमती कमला चौधरी की कई हास्य व्यंग्य कहानियॉ 1936–40 के बीच प्रकाशित हुई। इस दौर में अनेक व्यंग्य विनोदी रचनाएँ लिखी गयी। नाटक–एकाकी के क्षेत्र में विमला लूथरा द्धारा लिखित 'पचपन का फेर' (1957) जमीला कुरेशी द्धारा लिखित सरगम (1963) स्वरूप कुमारी बक्शी 'मेंम साहब का बैरा' (1965) और 'मैं मायके चली जाऊँगी' (1971) में अपनी कई हास्य एकांकियों को एकत्र किया है।इसी प्रकार शांता कुमारी जैन ने राग नम्बर (1972) में भी ..... एकांकी एकत्र किए है। आशा वर्मा ने आत्महत्या की दुकान (1983) के माध्यम से व्यंग्य–विनोद से भरपूर रंगमंचोचित नाटक उपस्थित किया है। डॉ. कुसुम कुमार ने व्यंग्य नाटको के क्षेत्र में ख्याति अर्जित की है। ओम क्रांति क्रांति (1978) एवं रावण लीला (1983) में उनकी नाटकीय व्यंग्य चेतना लक्षित होती है। इस क्रम में मृणाल पाण्डे के व्यंग्य नाटक जो राम रचि राखा (1983) का उल्लेख भी किया जा सकता है।

डॉ. सरोजनी प्रीतम – हिन्दी व्यंग्य को जिन महिलाओं ने अपना विशेष योगदान दिया है, उनमें डॉ. सरोजनी प्रीतम अग्रणी हैं। 'हंसिकाएँ' (1975,1982) में उनकी छोटी–छोटी व्यंग्य कविताएँ एकत्र हैं। यह सत्य है कि व्यंग्य एवं हास्य के क्षेत्र में डॉ. सरोजनी प्रीतम का नाम मुख्य रूप से आता है, जिन्होनें हंसिकाओं के माध्यम से एक कीर्तिमान स्थापित किया है। हॅसिकाओं के माध्यम से पत्र पत्रिकाओं एवं संकलनों में ही नहीं मंचीय हास्य कवि सम्मेलनों में भी उन्होनें अपना उल्लेखनीय स्थान बनाया हैं। उदा: अंशिक हडताल के स्थान पर ..... आशिक हड़ताल पर?। उन्होने लेखक से कहा ..... पुरस्कार की राशि मुझे दो।..... कुछ देर आदमी बनकर भी जीने दो।

सरोजनी प्रीतम ने गद्य में भी व्यंग्य लेखन किया है। 'आखिरी स्वयवर' (1983) उनकी व्यंग्य रचनाओं का एकमात्र प्रकाशित संकलन है। 'सुदामा का द्धारपाल दर्शन' रचना का उदाहरण द्रष्टव्य है। सुदामा अपनी गरीबी को दूर करने के लिए अपने मित्र श्रीकृष्ण के पास द्धारका जाने लगे, तब सुदामा की पत्नी से एक राज की बात बतायी श्री कृष्ण मिलने से पहले तुम्हें द्धारपाल के दर्शन होंगे। द्धारपाल दरवाजे के बाहर रहकर भी दरवाजे के भीतर की नीति जानते हैं। इसलिए 'सबसे पहले उन्हें उसे अच्छा अर्ध्य चढ़ाना होगा। द्धारपाल को अपनी यह घटिया चावल की पोटली मत दिखाना वरना वह तुम्हें बदल जाएगी और वह दर्शनार्थियों की भीड़ से हटकर आपको भीतर ले जाएगा।'[5]

लक्ष्मी और सरस्वती दोनों एक साथ नहीं रह सकती। सरस्वती का पुत्र अक्सर गरीब होता है और लक्ष्मीपुत्र अक्सर बुद्धिदार्थ विहीन होता है। इस बात को डॉ. सरोजनी प्रीतम ने इस पंक्तियों में लिखा है।

'लक्ष्मी कहे सरस्वती काहे करती रार'
'एक म्यान में रह सके कैसे दो तलवार'।[6]

सरोजनी प्रीतम ने अपनी रचनाओं में परिवर्तनकामी, प्रहारक व्यंग्यबाण

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, लाड़कुई, जिला सीहोर (म.प्र.) भारत

छोड़े हैं। उन्होनें छोटी-मोटी रचनाओं के साथ 'बिके हुए लोग' (1986) नामक व्यंग्य उपन्यास लिखा है। इस उपन्यास में उन्होनें धन के लोभी कवियों की मानसिकता का नकाब उतारा है। 'सनकी बाई शंकरी' (1991) उनका दूसरा उपन्यास है, जिसमें पारिवारिक वातावरण का रोचक चित्रण हुआ है।

सूर्यबाला- हिन्दी व्यंग्य के क्षेत्र में शिखरस्थ नाम है सूर्यबाला का। इनका व्यंग्य संग्रह है 'अजगर करै न चाकरी'(1986) सूर्यबाला के व्यंग्य के अहाते में महत्वपूर्ण चहलकदमी की है। सूर्यबाला ने राजनीतिक, समाज, परंपरा, परिवार, फिल्में, शैक्षणिक संस्था और साहित्यिक विद्रूपताओं की अंधी गलियों में दौड लगायी है। इनकी रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रकाओं में बिखरी पड़ी हैं। सभ्यता का नया रहस्य सूर्यबाला ने इन शब्दों में प्रकट किया है 'जिस कालोनी में जितने ज्यादा सभ्य, सुसंस्कृत और संपन्न लोग रहते हैं उसमें कुत्तों की संख्या उतनी ही ज्यादा होगी। यों भी संस्कृति, सभ्यता स्वभाव और आदतों की दृष्टि से मनुष्य जितना इस जीव का ऋणी है उतना और किसी जीव का नही।'[7]

सूर्यबाला ने हमारी मानसिकता को भी व्यंग्य का निशाना बनाया है। घर के बड़े आदमी किसी नयी चीज को छूने नहीं देते इस्तेमाल भी इस डर से, नहीं करने देते िकवह गंदी हो जाएगी अथवा टूट जाएगी। इस तथ्य को 'सोफा' के माध्यम से बताया है।

'हम सबको सख्त हिदायत कर दी गयी थी कि नए सोफे पर कोई बैठने न पाए कव्हर गंदा हो जाएगा, स्प्रिंग ढीले हो जाएँगें तथा पॉलिश की चमक जाती रहेगी..... फिर सोफा है किसके लिए? इसकी हमें जिज्ञासा थी। इसी 'सोफानामा' में व्यंग्य का यह गहरा पुट द्रष्टव्य है-

'रूई हम सोफे के लिए इंपोर्टेट चाहते थे पर पता चला कि रूई अपने ही देष में पैदा होती है। वहॉ हमारे सोफे की रूई हमारे अपने देश में ही खरीदनी पड़ रही है।'[8]

'फिल्मों के दो रूप होते हैं। एक होती है कला फिल्म, दूसरी होती है हिट फिल्म।' इन दोनों की विसंगतियों को सूर्यबाला ने अपनी रचनाअें में उभारा है-

'कला फिल्म के नाम पर दर्शकों को कचरागाड़ी का झुग्गियों का, मुर्गो की लड़ाई का, मक्खियों का दर्शन हमें क्लोजप में करना पड़ता है तो गरीबी के कारण वह कम कपड़ों में खलनायक के आदेश पर नाचती है। नायक पिटाई करता है और अंतत: भाई-भाई का और नायक-नायिका का मिलन हो जाता है।'[9]

स्नेहलता पाठक- हिन्दी व्यंग्य में महिलाओं में अगला नाम प्रमुख रूप से आता है, स्नेहलता पाठक का डॉ. स्नेहलता पाठक ने व्यंग्य के लिए मिथकों का इस्तेमाल पारंपरिक ढंग से किया है। जैसे 'द्रौपदी का सफरनामा, 'कलजुगी दुर्वासा', 'एक भगवान की वापसी', 'एकलव्य का अंगूठा', तिरस्का: पार्वती का आदि। द्रौपदी का सफरनामा रचना फैंटेसी शैली में है। पार्वती के साथ द्रौपदी हस्तिनापुर में आती है, वेशभूषा आधुनिका की कर लेती है। जैसे बाल कटवाकर, मिनी स्कर्ट पहन लेना, पैरों में नोकदार छह इंची एडी के सैंडिल पहन लेना ऐसे वेश में द्रौपदी को किसी ने भी नहीं पहचाना। इसी रचना में एक सजी-धजी स्त्री को देखकर सड़क चलते लोग जो फब्तियों कसते हैं उनका संजीव वर्णन हुआ है। क्योकि, व्यंग्यकार स्वयं महिला है। महिलाओं के जीवन की विडबनाओं को व्यंग्य के माध्यम से पहली बार स्नेहलता पाठक ने हमारे सामने रखी है।

जो महिलाऐ समाज के लिए कुछ कर सकती हैं। सांपत्तिक और बौद्धिक दोनों तरह की ताकत उनके पास है परन्तु वे महिलाओं के लिए कुछ नहीं करती जबकि महिला संगठन मौजूद हैं। महिला संगठनों में प्रमुख है 'महिला मंडल'। महिला मंडल में महिलाओं के लिए क्या होना चाहिए था पर क्या हो रहा है को 'महिला मंडलों के जरिए महिलाओं के जरिए' इस रचना में प्रकट किया है। लेखिका को एक बार 'अहल्या उद्धार महिला मंडल में जाने का मौका मिला।' 'वंडरफुल हाय कितनी सुन्दर दिख रही है। कहॉ से खरीदी यह नेकलस? महिला जबाब देती-बस अभी खरीदकर सीधी यहीं आ रही हूँ। कल मेरी बी. सी. निकली थी ना पॉच हजार की'।[10] जुगत की और बी.सी. वगैरह की बातें महिला मंडल में होती रहतीं हैं। जबकि महिला मंडल का कागम होना चाहिए नारी जीवन की विसंगतियों के खिलाफ आवाज बुलंद करने का जैसे कहीं महिला दहेज के कारण जलायी जा रही है, कहीं हवस की शिकार हो रही है, कहीं शो-पीस के रूप में घर में कैद है तो कहीं कोल्हू के बैल की तरही दुहरा दायित्व अदा कर रही है। फिल्मों और विज्ञापनों के माध्यम से नारियों को गुड़िया के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसके खिलाफ कोई महिला मंडल आवाज क्यों नहीं उठाता इस बात की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने में स्नेहलता पाठक सफल हुई हैं।

इस तरह के भोगे हुए लेखन और अनुभूति की व्यंग्य को आज आवश्यकता है। जब तक शोषित वर्ग कलम को हाथ में नहीं लेहगे तब तक शोषकों की मानसिकता में परिवर्तन आना मुश्किल है। घरेलू कामकाज में खपती, डूबती गृहिणी की पीड़ा को स्नेहलता पाठक ने अपनी रचनाओं के माध्यम से मुखरित किया हैं।

उषाबाला- अगली कड़ी की व्यंग्यकारो में आती है उषाबाला उनके प्रमुख व्यंग्य संग्रह है। 'युधिष्ठिर के बेटे' (1980) और 'कफनचोर का बेटा' (1673)। इनमें उषाबाला ने मध्यवर्गीय सोफोस्टि केटेड' समाज जीवन की विसंगतियों को आक्रोशात्मक ढंग से प्रस्तुत किया। 'फेअरवेल पार्टी', 'कॉल बेल', 'नाइट क्लब', 'वर की तलाश', 'उपहार' आदि रचनाएँ इस बात की पुष्टि करती हैं। हॉ नरक की जीत और कफनचोर का बेटा रचना में व्यंग्य के तेवर हमें दिखायी देते हैं। नरक की जीत रचना में कानून के हिमायती वकील, जज और पुलिस धरती से मरने के बाद सीधे स्वर्ग गए। इसलिए स्वर्ग की जायज बात भी कानूनी कार्यवाही की धमकी से नहीं हो पाती। 'नरकावसियों ने कहा, अजी कानूनी कार्यवाही से कौन डरता है। जब जी चाहे कर लो..... पृथ्वी के सारे वकील और जज तो हमारी तरफ हैं। तुम क्या खाक मुकदमा लड़ोगे'[11]

'कफनचोर का बेटा' रचना में हर बाप की इच्छा होती है कि बेटा सवाई निकले। बेटे से बाप अच्छा था ऐसा लोग कहें इस लालसा को कथ्य बनाया है। बुरा आदमी भी ऐसी ख्वाईश करने से नहीं चूकता। जैसे कफनचोर हमीदा की इच्छा थी कि मरने के बाद लोग उसे अच्छा कहे। इस इच्छा को बेटे अल्लादिया ने पूरा कर दिखाया।

'अमां, इस हरामजादे अल्लादिया से तो हमीदा लाख दर्जे अच्छा था। फक्त एक बार ही तो कफन चुराता। पर यह शैतान तो कफन भी कई बार चुराता है। एक लाश के ऊपर से और लाश की बेईज्जती भी करता है, सो अलग। हाय, हमीदा कितना अच्छा था।'[12]

अलका पाठक- अलका पाठक का एक व्यंग्य संग्रह 1660 में प्रकाशित हुआ 'किराए के लिए खाली है'। यह व्यंग्य संकल न उम्मीद बॅधाता है कि पुरूष व्यंग्कारों के समानांतर महिला व्यंग्यकार भी व्यंग्य को नया व्याकरण प्रदान करने में पीछे नहीं है। इसी तरह **डॉ. बानों सरताज** अपने नये खून से व्यंग्य का दमदार सर्जन कर रही है। 'मैं आभारी हूँ' (1673) संकलन में

महिला जीवन के विभिन्न कोणों को व्यंग्य के टॉर्च से प्रकाशित किया है। और एक नया जेहाद छेड़ा है। **कुसुम गुप्ता** के व्यंग्यों का संग्रह 'तहलका' 1660 भी इस क्रम में उल्लेखनीय है।

डॉ. रत्ना वर्मा का कोई व्यंग्य संकलन प्रकाशित नहीं हुआ है परंतु उनमें रवीन्द्रनाथ त्यागी के समान उपमाओं के सटीक प्रयोग द्वारा व्यंग्य निर्माण करने की अद्‌भुत शक्ति है।

उदा. – 'हमारी फिल्मी आंटी की बात करने की स्टाईल बिल्कुल रोहिणी हट्टंगडी की तरह है। कभी–कभी तो वे ललिता पवार की तरह अपनी ऑखें भी तरेरती है और लीला मिश्रा की तरह कोमल भी हो जाती हैं।'

अन्य प्रमुख महिला व्यंग्यकारों में प्रमुख है– डॉ. सरोजनी महिषी, सुभद्रा मिश्र, रेखा व्यास, अनिता दुबे, साधना उपाध्याय, गीता शॉ पुष्प, कमला सिंघवी, सुमन मेहरोत्रा आदि ने पत्र–पत्रिकाओं में अपनी व्यंग्य क्षमता का विलक्षण परिचय दिया है। महिला व्यंग्यकार संख्या में कम होकर भी इनकी रचनाए प्रहार और महत्व की दृष्टि से नगण्य नहीं हैं।

व्यंग्य–कर्म के साथ–साथ व्यंग्यालोचन के क्षेत्र को भी महिलाओं ने अपनाया है। जैसे डॉ. शोभारानी, डॉ. वीणा पुंज, डॉ. ज्ञानवती अरोड़ा, डॉ. सुधा जैन, डॉ. उषा शर्मा, डॉ. शशि मिश्रा, आदि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी व्यंग्य साहित्य में नारी – डॉ. शैलजा माहेश्वरी पृ0 09
2. वही पृ0 34
3. वही पृ0 34
4. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी–हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान – पृ0 55
5. डॉ. सरोजनी प्रीतम, आखिरी स्वयं पर – पृ0 16
6. हिन्दी व्यंग्य साहित्य में नारी–डॉ. शैलजा माहेश्वरी – पृ0 36
7. डॉ. सूर्यवाला–अजगर करे न चाकरी – पृ0 127
8. वही पृ0 127
9. वही पृ0 128
10. डॉ. स्नेहलता पाठक–दौपदी का सफर नामा – पृ0 39
11. उषावाला– कफनचोर का बेटा – पृ0 50
12. वही पृ0 74

****

Floriculture and Rose Cultivation in Pushkar Valley

Rajendra Singh*

Introduction - Floriculture is a fast growing industry in India, as per the National Horticulture Database published by National Horticulture Board, during 2016-17 the area under floriculture production in India was 306 thousand hectares with the production of 1699 thousand tonnes of loose flowers and 693 thousand tonnes of cut flowers. Indias total export of floriculture was Rs.475Crores in 2016-17. The majority of flower cultivators in India consider rose as the only flower for international trade, but there are other flowers too which can be ventured either jointly or individually. The increase in both area and trade is because of socio-economic factors such as changes in social values, environment, increase in population and living in the flats in cities, increase in standard of living, development of hotels and shopping centres and making beautiful flower items presented on different auspicious occasions. Now every big city has a well developed cut flower market dealing with loose flowers, cut flowers and cut greens.

The Pushkar valley has an old history of flower cultivation particularly rose farming because of world famous 'Brahma Temple' in Pushkar and shrine of Gareeb Nawaj Khwaja Moinuddin Chisti in Ajmer.

India has a long tradition of cultivating flowers. In most part of the country, flower growing is carried out on small holdings. However, commercial floriculture has assumed importance only in the recent past. It is estimated that about 70 thousand ha, is covered under flower crops for cut flowers. About 500 ha.climatically controlled green houses are available for growing quality flowers for export purposes.

In the recent past a good number of export- oriented floriculture units have been established in the country. By December 1998, more than 200 such units were approved to be set up, including 157 units having foreign collaboration and direct foreign investment. The total investment in this sector is approximately Rs. 1,000 million. Flowers exported, form these units are receiving consumers acceptance for high quality. A number of such export oriented units with green house production have been set up in clusters around Pune (Maharashtra), Banglore (Karnataka), Delhi and Hyderabad (Andhra Pradesh). Ornamental foliage plants of decorative value are also being exported in sizable quantity. The natural extracts of certain flowers have good demand and concentrates of jasmine, tuberose and rose are produced. Dried flowers and plants trade is comparatively new venture in India, gaining popularity. Presently, most of the dried products are exported to Germany, U.S.A., the Netherlands, the U.K., Italy and Japan. Such products constitute nearly 60% of India's exports of floriculture products at present.

Rose are symbol of beauty, fragrance and are used to convey the message of love. Roses are native of Himalaya regions, West Asia, China, Japan, Europe and North America. These are about 150 species but very few species have played a major role in evolving modern roses. The species are *Rosa gallica, R. damascena, R. Chinengis, R. foetida, R. gigantea, R. moschata, R. multiflora*and *R. wichuriana.*

Research Achievments:

1. Rose breeding has been receiving a lot of importance at the hands of professional nurserymen and government research institutes. The main objectives of rose improvement have been to envolve varieties with attractive flower colour, form and fragrance, flouriferousness, disease and pest resistance and their suitability for growing under sub-tropical conditions. According to Viraraghvan (1986), Shri B.K. Roychoudhary, a nurseryman in SanthalPargana was possibly the first Indian rose breeder who raised the variety named 'Dr. S.D. Mukherjee' in 1935. Rose breeding has received utmost importance in our country, and as a result about 545 rose varieties were evolved during last 5 decades. The late Dr. B.P. Pal, former Director, IARI, New Delhi, has been one of the well-known amateur rose breeders who took up rose breeding towards the end of the fifties. He identified the parents used in hybridization and systematisedbreeding procedures. His first rose variety 'Rose Sherbet' was released in 1962. It is highly fragrant with rose oil content of 0.003%. During his 27 years of rose breeding career (1962-1989), Dr. Pal evolved 105 varieties. His contribution to rose breeding has been the most significant in India, and it is also recognised abroad.

Scientific breeding of rose was initiated at the IARI in early sixties. The first IARI rose was released in 1968. Studies at the IARI to identify varieties of high male and female fertility helped in making successful crosses and evolving a large number of improved varieties. Studies on inheritance of characters have indicated that crosses among

***Department of Horticulture, Government College, Uniara, Tonk (Raj.) INDIA**

white or yellow-flowered varieties produced hybrids reassembling only one of the parents. A greenish white flowered variety crossed with one showed greenish white colour as dominant. Similarly, deep yellow was recessive to light yellow, and pink shade dominated over dark red colour. Critical evaluation of a large number of hybrid seedlings resulted in the development of 34 hybrid Tea (HT), 22 Floribunda, 1 Polyantha and 1 climber. The IARI rose variety 'Mohini' a hypertriploid, with its unusual flower colour of cholocate brown attracted the attention of roserians and nursery-men in India and abroad, and variety 'Mrinalini' appeared on one of our postage stamps. Several varieties have also been evolved through mutation or as bud sports of existing varieties.

2. In India, experimental evidences on the cultivation of flowers under protected cover is very meagre. At the CSIR complex, Palampur, an integrated standard FRP greenhouse was constructed in 1990 to undertake experimental work on ornamental crops. At the PAU Ludhiana, flowers of rose plants grown under modified growing environmental; using plastic cover during November-February were of high quality.

3. Two most important diseases affecting roses in the pushkar valley are the Powdery mildew (cause by *Sphaerothecapannosa*) and the black spot (caused by *Diplocarponrosae*). To control Powdery mildew Sulfex (0.2%)Karathane (0.05%) and Bavistin (0.10%) can be used effectively. In case of blackspot, the most effective treatments are Captan (0.2%) Dithane M-45 (0.2%) and Benlate (0.1%).

Insect damage of rose plants is generally through boring into flower buds, flowers, shoots and other plants. These cause stippling, curling, yellowing and falling of leaves by sucking cell sap.

Constraints in rose cultivation In the Pushkarvalley: The recent methods of propogation, standardized agrortechniques, protected cultivation, disease and pest management and post harvest management of flowers are not followed in the Pushkar valley.

In Pushkar valley 50 rose growers were selected randomly. On the basis of personal interview the following problems were identified which can be categorised in two groups.

(a) Problems related with the cultivation :

1. Lack of cut-flower varieties with attractive well formed flower on long stem.
2. Non-availability of quality planting material of exportable varieties.
3. Insufficient infrastructural facilities for rapidmultiplication of plants to meet therequirements of domestic and export trade.
4. Non-availability of greenhouse technology at low cost.
5. Absence of basic research programmes.
6. Absence of training programme in floriculture.
7. Inadequate modern tools and implements for floriculture.

(b) Problems related with the marketing:

1. Lack of information on post-harvest management.
2. Non-availability of organised as well as regulated market in the area.
3. Non-availability of cold storage facility.

Suggestions: After critically examining the problems and constraints faced by the rose growers, it seems pertinent to suggest some measures so that the socio-economic development of Pushkar valley may get a vast dimension. Since rose cultivation has a vast potential with respect to exports as well as huge domestic market. The following priorities need immediate attention:

1. To introduce popular export varieties from abroad, their maintenance and assessment, both in open and greenhouse should be promoted.
2. Rapid multiplication of elite planting material using the tissue-culture technology.
3. Use of tissue culture to conserve germplasm, develop disease free-planting material as togenerate new and novel variation throughsomacalonal variation.
4. Development of disease and insect-resistant attractive varieties, suited as cut-flower with long vase life.
5. Application of biotechnology for successful transfer of genes to evolve cultivation of rare colours like blue in rose.
6. Standardization of production technology including irrigation and fertilization technology.
7. Protected cultivation technology for cut- flower in computerised and climatically controlled green houses.
8. Post-harvest physiology and biochemical studies in rose should be done in the area.
9. Standardization of methods of post-harvesthanding of rose products including storage,packaging and transportation for domesticas well as export marketing should bedeveloped.
10. There is a need for the development of technology for production and extraction of essential oils from rose.
11. Adoption of integrated disease and pest management.
12. The rose growers should be well acquainted of the modern techniques in all respect. For this purpose extensive training programme should be organised from time to time in the area.

References:-

1. Chadha, K.L., 1986. Research on ornamental crops at the IIHR, In: omamental Horticulture in India, Eds. K.L. Chadha and B. Choudhary, ICAR, New Delhi P.P. 1-6.
2. Malik, R.S., 1980. Studies on production of rose for cut flowers.National, Seminar on Production technology for commercial Flower Crops, TNAU, Coimbatore.
3. Mukhopdhyay, A. and Banker, G.J. 1980. Study on performance of notching and bud take with some rootstocks of Roses. Lal Baugh 25(4): 59-63.
4. Mukhopdhyay, A. and Banker, G.J. and Shulda, K.S. 1980. A thornless rootstock of roses *Indian Hort.*: 25(1):1-2

5. Singh, B. and Dadlani, N.K. 1988. Research Highlights(1971-1985). All India coordinated Floriculture ImprovementProject AICFIP Tech. Bull. 1:21 PP.
6. Swarup; V. and Malik, R.S. 1974 Studies on the performance of rose varieties on different rootstock.*Indian J. Hort* 31-268.
7. Virarghavan, M.S., 1986 Rose In: ornamental Horticulture In India, Eds. Chadha,K.L. and Choudhary, B. ICAR Pub. New Delhi. PP-38-52.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018, Vol. I, Issue XXI

The Impact of the English Language on Employability (with a Specific Focus on Chhattisgarh)

Dr. Syed Saleem Aquil* Sabiha Aquil**

Abstract - Knowledge of English will be a passport to economic, social and educational advancement. This statement underscores the urgency of the issue in India's globalisation era. Due to economic changes, fiscal constraints exist: 'Recruitment in the public sector, which used to absorb most of the educated new entrants in the workforce, has almost reached a standstill. The number of public sector jobs in government and public enterprises has remained the same. The private sector hires only those with business/technical knowledge and a good command of the English language. If English is so important for India, then for future growth and development, it is crucial to evaluate the actual status of English in Chhattisgarh and study how the English language can play a vital role in employment and industrial, social and cultural change in this era.
Keywords: Globalization, Native Speakers, Information Technology Revolution, World in Transition.

Introduction : English has been steadily growing as the world's primary language for international communication. However, despite this expansion, there are indications that its global dominance may wane in the near future. Complex international, economic, technological, and cultural shifts could potentially erode English's position as the world market language. Yet, from 2000 to 2015, English has undeniably reigned as the market leader among all the world's languages, underscoring the potential consequences of its decline.

Chhattisgarh, a state rich in mineral resources and a skilled workforce, has been in existence for seventeen years. However, there are areas that require immediate attention, such as the need for rapid development and improved employability. The income percentage of the national population is a mere 2.11, and the per capita income in Chhattisgarh is Rs 53825. The gross fiscal deficit is a staggering 81.1 %, and the poverty rate is 39.93 %. These figures underscore the pressing need for action.

Facts regarding Chhattisgarh State: Chhattisgarh is the twenty-sixth state of the Indian Union; it was carved out from Madhya Pradesh and became a separate state of India on 1 November 2000. In ancient times, the region was known as Dakshin-Kausal. Sarabhpurias, Panduavanshi, Somvanshi, Kalchuri, and Nagvanshi rulers dominated this region between the sixth and twelfth centuries. Kalchuris ruled in Chhattisgarh from 980 to 1791 AD. With the advent of the British in 1845, Raipur gained prominence instead of the capital, Ratanpur. In 1904, Sambalpur was transferred to Odisha, and the estates of Sarguja were transferred from Bengal to Chhattisgarh.

1. Particulars Rank in India

Particulars	Rank in India
Population	17
Area	10
Density	27
Literacy	27
Sex ratio	06
Urban Population	07

2. Status of English in India

English is one of the two official languages of India, and it serves three purposes :

1. Provide a linguistic tool for administrative communication between the union and the state governments. Hindi is mainly spoken in north India.
2. It is a linguistic bridge between India and the world.
3. English is used in parliament, courts, media, journalism, education, etc. It has become the de facto standard for education, research, commerce, and, most recently, Internet communication.

Importance of English in Chhattisgarh: The language of an economically vital community is attractive to learn because of its business potential. For instance, [insert example here]. Knowledge of the language potentially opens up the market for producers to penetrate a market if they know the language of the potential customer.

English is not just a language, but a practical tool for business and technological support. It is the language of computers, and without it, connecting with the world through the Internet becomes a daunting task. Modern education is heavily reliant on English, with all professional courses, like medicine, engineering, management, etc., being taught in English. Therefore, the development of the state and the provision of opportunities for youth without knowledge of

* Asst. Professor, Kalyan P.G. College, Bhilai (C.G.) INDIA
** Research Scholar, Pt. Ravi Shankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA

English pose significant challenges that need immediate attention.

Literacy, Education and Employment in Chhattisgarh: India is a union of states and a union of territories. For administration, the country is divided into 29 states and seven centrally administered union territories, including the national capital territory De, hi. The literacy rate in Chhattisgarh is 71.3. Among males, it is 80.3, and in females, 60.2. However, the state's education and employability need to be more satisfactory. English, as a language, plays a vital role in providing good professional education and employment opportunities. Chhattisgarh comprises 168 statutory and 14 census towns, but are 20126 villages here. So, the difference between the rural and urban populations is enormous demographically.

Pattern of spoken language learning in Chhattisgarh: Chhattisgarhi is a language spoken in the Indian state of Chhattisgarh by 24 million people. There are two main languages spoken in Chhattisgarh: Hindi and Chhattisgarhi. Hindi is spoken only in urban areas, but most people who live in rural and urban areas use Chhattisgarhi in their day-to-day conversations. The scientific learning system is observing a child who knows their first language.

When a child is born, they can listen, and before starting to speak any language, they used to listen to the native or mother language. Whatever they hear, he starts speaking in that language only. In that language, they get input, and they give output. If they listen to Hindi or Chhattisgarhi, they only start using Hindi or Chhattisgarhi. When the child goes on listening and speaking the native language initially, they may make mistakes while speaking. So their peer group, like their parents or elders corr, their language, grammar, etc. Likewise, he rectifies the errors, and after some time, they use the correct language when they reach the age of four. When the child starts schooling, they learn to read and write the language.

Chronological Order of learning spoken language by the children:

There are four significant steps in learning a native language.



Standard of English in Education: The English language is taught in two different categories. Firstly, some schools offer English mediums. Most schools use the Hindi medium, and the Hindi language is considered a medium of instruction. When the children start to go to school, problems arise in the English-speaking environment. Only the children attend school and begin reading and writing in English. The subjects taught in schools include science, math, etc. Although the subjects are English, teachers' conversations are mainly in Hindi, except for a few schools. There is only one period of the English language in that period, only books reading, grammar, and writing in English. There is no period of conversation in English. When the children are accessible from the schools, they speak their native language like Chhattisgarhi or Hindi. The children go to their homes, and their parents and family speak their native language. Children move to play outside, and the other friends speak their native language, so only children learn to read and write in English in the schools.

The problem of unemployment due to English : The children keep on passing the primary and middle-level exams. Still, because they do not use English in their conversations, they need help understanding English correctly, so they cannot think in English. When they try to speak in English, other people need help understanding it, so their communication fails successfully. The only easy way to make other people understand is to use their native language.

Thus, the creative part of their writing in English needs to be improved; they become weak, and their thoughts need to be generated in English. When they go for higher education, the compulsory medium is English there, so they cannot understand and learn the contents because whatever knowledge is given to them through the books or the professors is in English. The children could be more comfortable with English. Although they read and write in English, they need to improve in English, so their subject knowledge becomes weak. They need to be fit for the group discussion and interviews. Most students fear English, so they do not even try to face the competitive exams because these exams are mainly in English. The students of Chhattisgarh miss the opportunities in multinational companies, call centres, Business Process Outsourcing (BPO), Knowledge Process Outsourcing (KPO), etc. So, the unemployment rate among educated youth is increasing day by day. Thousands of engineers, Managers and technical professionals are jobless in Chhattisgarh. The primary reason is not good command of the English language.

Conclusion: The state government should pay attention to the problems. Opening schools or colleges alone is not sufficient. These institutions are established to provide education and knowledge, but whatever knowledge is given, it must be user-friendly. However, the receivers of the knowledge are unable to understand the language, so they do not get the full advantages of education.

Suggestions:

1. A board of experts must study and analyze the problems.
2. English learning programs must be compulsory for the teachers so that they can teach and make the students learn the language.
3. If schools or colleges provide English-medium education, the students must speak English.
4. English conversation classes must be conducted.
5. Mock interviews and group discussions must be organized in schools and colleges.

References:-

1. Planning Commission, National Sample Survey Organisation, NSSO, govt. of India and Manorama Yearbook 2018, pages 554-563, Ready Reckoner: Malayala Manorama Press, Kottayam)
2. Pradana, F. R. (2021). Error Analysis of Applying Inflectional Morpheme in Descriptive Writing at Tenth Grade in SMK Negeri 14 Samarinda. https://core.ac.uk/download/386791760.pdf
3. About Chhattisgarh - Chhattisgarh Darshan. https://cgtotal.pald.in/AboutCgEngl
4. HISTORICAL INFORMATION OF CHHATTISGARH - travelfare.in. https://travelfare.in/historical-info-of-chhattisgarh/
5. Languages of Chhattisgarh. https://www.chhattisgarhtourism.co.in/languages-of-chhattisgarh.html
6. Positive Words That Start With G - Easy Guide 2022. https://ectipakistan.com/positive-words-that-start-with-g/
7. knowindia.gov.in/states-uts/chhattisgarh.php
8. Page 404, Manorama Yearbook 2018, Malayala Manorama Press, Kottayam)
9. Planning Commission, National Sample Survey Organisation, NSSO, govt. Of India and Manorama Yearbook 2018, pages 554-563, Ready Reckoner: Malayala Manorama Press, Kottayam)
10. Chhattisgarhi at Ethnologue (16th ed., 2009)

****

Role of Communication in the Success of Business

Dr. Syed Saleem Aquil* Sabiha Aquil**

Abstract - Establishing and maintaining effective communication channels is not just a good practice, it's a direct path to profitability for a business organization. Efficient communication is the key that unlocks the organization's ability to perform tasks effectively and drive profitability. Communication is often likened to the lifeblood of a business entity, as its absence can lead to failure. Therefore, prioritizing clear and effective communication is not just a suggestion, it's a necessity for the success of the organization**.**
Keywords: Exchanging Information, Encoding, Decoding, Transmission, Effective Communication.

Research Methodology: The research methodology section provides a concise overview of the current research. It is focused on fundamental or pure research aimed at expanding the knowledge base. The research is explanatory, seeking to generate new ideas and theories in human resource development and management**.**

Introduction: Business communication is an essential aspect of any organisation. It involves the exchange of information, ideas, and perceptions between different individuals or entities. This exchange between employees, customers, stakeholders, or other external parties can occur internally. For example, a well-structured email that clearly communicates a project update, a persuasive presentation that convinces stakeholders of a new strategy, or a respectful conversation that resolves a conflict are all examples of effective business communication.

Business communication, with its transformative power, involves the exchange of tangible materials, such as documents or products, as well as intangible elements, such as perceptions, understandings, and imaginative concepts. For example, communication may involve transmitting important data in a sales meeting, expressing a strategic vision by company leadership, or expressing creative ideas through marketing materials. The potential for creativity in these exchanges is limitless, inspiring new and exciting possibilities.

Moreover, communication, a versatile tool, can take on various forms, such as verbal discussions, written messages, visual presentations, and digital media. Each channel serves as a medium for communicating information, allowing for a seamless exchange of ideas and opinions within and outside the organisational structure. This versatility empowers individuals to adapt their communication style to different situations, fostering adaptability and a sense of empowerment.

Internal Communication in an Organisation

In an organisation, internal communication is crucial for various reasons:

1. Setting goals and Objectives: Communication ensures that all employees work towards common objectives, including financial results, product quality, market dominance, and customer satisfaction.

2. Making and Implementing Decisions: Effective communication is essential for collecting facts, evaluating alternatives, making decisions, and implementing them.

3. Appraisal: Communication is necessary for evaluating whether the desired outcomes are being achieved through the compilation of statistics.

4. Manufacturing the Products: Communication is vital for all stages of the product manufacturing process, from design to distribution.

5. Interaction between Employer & Employee: Communication facilitates the interaction between employers and employees by effectively informing and engaging both parties.

External Communication

1. Hiring process: A company advertises a vacancy, receives applications, conducts interviews, and offers jobs to successful candidates.

2. Customer interactions: Communication is essential for sales, advertising, credit checks, billing, and handling complaints.

3. Supplier and financier negotiations: Companies use written specifications to obtain supplies and services and negotiate with lenders for finance.

4. Investor information: Balance sheets, income statements, and ratio analysis inform investors about business performance.

5. Government interaction: Organizations fulfil government requirements and regulations through various documents and forms.

Process of Business Communication

* **Asst. Professor, Kalyan P.G. College, Bhilai (C.G.) INDIA**
** **Research Scholar, Pt. Ravi Shankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA**

Communication is the process of exchanging ideas and information between two individuals. It involves a sender conveying a message to a receiver and receiving a response. The process can be explained as follows:

1. Sender's thoughts: The communication process begins with the sender generating thoughts about a request, order, inquiry, production, or other relevant activity.

2. Encoding/Message: The sender encodes their thoughts into a message the receiver can understand. This involves converting the thoughts into a comprehensible form, such as writing a job application to express the desire for employment.

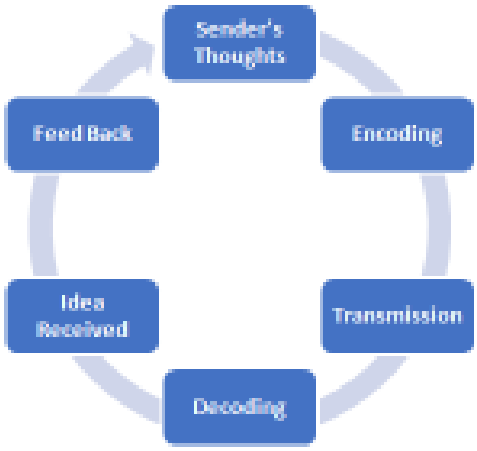
3. Transmission through media: After the message is encoded, it is carefully transmitted to the receiver through various mediums, such as electronic media (TV, email, radio) or print media (newspapers, magazines, letters), ensuring effective communication.

4. Noise and Barriers: During transmission, the sender may encounter barriers such as distractions, communication errors, or technical issues in the chosen medium, while the receiver may face obstacles such as poor reading ability or lack of concentration.

5. Decoding by Receiver: Upon receiving the message, the receiver decodes it to understand and interpret the sender's intended meaning, as in reading and comprehending a job application.

6. Idea Received: Once the decoding process is complete, the receiver understands the sender's original thought, such as the desire to communicate the need for employment.

7. Feedback: The communication process is completed when the receiver responds to the sender, whether with a positive, negative, or inquisitive reply, such as welcoming or regretting the job application.



Conclusion

Making Business Communication Effective

I. Planning Steps:

A. Knowing the Purpose of the Message
B. Visualizing the Reader (Receiver)
C. Choosing the Ideas to be Included
D. Getting All the Facts to Back Up the Ideas
E. Outlining and Organizing the Message

II. Knowing the Purpose of the Message:

A. Purpose Identification
B. Specific and General Purposes
C. Example of Collection Letter's Dual Purpose

III. Visualizing the Reader:

A. Adapting the Message to the Reader's Views
B. Understanding the Reader's Relationship, Position, Reading Level, Interests, Knowledge, Prejudices, and Unspoken Needs

IV. Choosing Ideas:

A. Selection of Ideas Based on the Message Being Communicated
B. Example: Welcome Letter to a Customer

V. Getting All the Facts:

A. T ypes of Facts and Figures
B. Necessity of Primary and Secondary Research for Collecting Required Data

Primary Research:

Any of the following research methods may collect primary research data.

a. Experimental Research Method: This seeks to determine whether a change in one factor causes a change in another.

b. Observational Research Method: This involves either human or mechanical viewing of the actions or results of hearing, touching, smelling, etc.

c. Survey Research Method: This requires the researcher to collect data from respondents through questionnaires.

d. Combination of the Various Research Methods: May also be used when any one of the above methods is not appropriate.

Secondary Research: Secondary research data may be collected from the following sources.

a. Company Publications: Newsletters, bulletins, brochures, pamphlets, handbooks, manuals and company records and reports.

b. Books: Relating to the topic under research.

c. Periodicals: Magazines, journals and newspapers published at regular intervals.

d. Other Sources: Radio and T.V. programmes, publications of other companies and professional associations.

Before writing a message, it is crucial to outline and organize it. There are four organizational plans to consider: direct request, good news, bad news, and persuasive request. The first two use the direct approach, while the last two use the indirect approach. After drafting the message, thorough revision and editing are necessary to ensure the coherence of ideas and correct any errors. Proofreading is essential before mailing the message to avoid any potential negative impact from uncorrected errors.5. Prior to composing a message; it is essential to outline and organize it, either on paper or mentally. Four distinct organizational plans are to consider: the direct request, good news, bad news, and persuasive request.

The first two employ the direct approach, while the latter utilizes the indirect approach.

Stress the need for thorough revision and editing of the draft. This meticulous process, scrutinizing it paragraph by paragraph, sentence by sentence, and word by word, ensures the coherence of ideas and helps in identifying any grammatical, punctuation, and spelling errors. When revising and editing the message, it is imperative to ensure that it aligns with all the principles of effective business communication.

Meticulous proofreading is vital once the revised and edited message has been typewritten. Prior to mailing it, the message should be reviewed by a responsible and reliable individual, as errors, if left uncorrected, can lead to a loss of goodwill, sales, and income and even pose a risk to lives.

References:-

1. Cronen, V., & Pearce, W. B. (1982). The coordinated management of meaning: A theory of communication. In F. E. Dance (Ed.), *Human communication theory* (pp. 61–89). New York, NY: Harper & Row.
2. Habermas, J. (1984). *The theory of communicative action* (Vol. 1, p. 100). Boston, MA: Beacon Press.
3. Leavitt, H., & Mueller, R. (1951). Some effects of feedback on communication. *Human Relations, 4*, 401–410.
4. McLean, S. (2003). *The basics of speech communication*. Boston, MA: Allyn & Bacon.
5. McLean, S. (2005). *The basics of interpersonal communication*. Boston, MA: Allyn & Bacon.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

बिलासपुर जिले में सविनय अवज्ञा आन्दोलन

डॉ. रीता बाजपेयी*

प्रस्तावना –बिलासपुर में राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना बहुत पहले से ही राष्ट्रीय जागृति और शरके प्रसार का कार्य आरंभ हो चुका था। इसके लिये यहाँ बुद्धि प्रकाश सभा, रीडिंग क्लब, बाटापारा क्लब, बंगाल–नागपुर रेल्वे इंस्टीट्यूट आदि संगठन अस्तित्व में आकर क्रियाशील हो तुझे थे, किन्तु बिलासपुर का राष्ट्रीय का राष्ट्रीय आंदोलन में सही तौर पर प्रवेश 20वीं सदी के आरंभ में ही हो सका। बिलासपुर जिले में राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख स्तंभ ई. राघवेन्द्र राव, कुंजबिहारी अग्निहोत्री, बैरिस्टर छेदीलाल ठाकुर थे। ठाकुर साहब बैरिस्टर की डिग्री इंग्लैण्ड से पास कर 1913 ई. में बिलासपुर आये, वे 'अकलतरा' के राजस्थानी सिसोदिया राजपूत परिवार के थे। उन्होंने जनता में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने हेतु 'रामलीला' को माध्यम बनाया किन्तु शीघ्र ही वे कांग्रेस से जुड गये और राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका का निर्वा किया।

ई. राघवेन्द्र राव अल्प आयु में ही कांग्रेस में भाग लिया था। 1907 के सूरत अधिवेशन में बिलासपुर का प्रतिनिधित्व किया। इस समय इनकी उम्र केवल 18 वर्ष की थी। राव साहब 1914 ई. में बैरिस्टरी पास कर स्वदेश लौटे। इनका परिवार आन्ध्रप्रदेश के कृष्णा जिले से ब्यापार के उद्देश्य से बिलासपुर आकर यहीं बस गये। बिलासपुर को इन्होंने अपनी कर्मभूमि बना लिया और वकालत त्यागकर सक्रिय राजनीति में आ गये। वे इंग्लैण्ड में 'इंडिया हाऊस' से सम्बद्ध रहे जिसकी स्थापना श्याम जी कृष्ण जी वर्मा ने 1905 में लंदन में की थी। राय साहब ने नवंबर 1915 में नरम एवं गरम दल के संयुक्त अधिवेशन में मध्यस्थ के रूप में कार्य किया। वे केवल 26 वर्ष की आयु में बिलासपुर नगर पालिकाओं के अध्यक्ष निर्वाचित हुए और कौंसिल का उपयोग राष्ट्रीय आंदोलन के प्रसार हेतु किया। साथ ही वे बिलासपुर जिला परिषद् के सचिव भी निर्वाचित हुए। इन्होने इन दिनों संस्था के कर्मचारियों का खादी पहनना अनिवार्य कर दिया। तिलक और गांधी जयंती पर छुट्टियाँ घोषित की गई। स्थानीय स्वायत्ता संस्थाओं के इमारतों पर राष्ट्रीरय झण्डा लहराने लगा। स्कूलों में 'वन्दे मातरम' का गीत गाया जाने लगा।

कुंज बिहारी अग्निहोत्री यहाँ स्थापित होमरूल की शाखा के माध्यम से जागृति के कार्य में संलग्न रहे। यदुनंदन प्रसाद वर्मा ने 'बाल समाज पुस्तकालय' एवं ठाकुर छेदीलाल ने 'सेवा समिति' बनाकर यहाँ के युवकों में राष्ट्रीय जागृति के संचार का कार्य किया। इस तरह गांधी युग के पूर्व से ही विलासपुर राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय हो चुका था। (1)

साइमन कमीशान, नेहरू रिपोर्ट, मध्य प्रांत व बरार में संवैधानिक संकट व बारडोली का सत्याग्रह क्रांतिकारियों के बढ़ते हुए कार्य से ऐसी घटनाएँ थी जिसने भारतीयों के मन में दिनोदिन ब्रिटिश सरकार के प्रति अविश्वास व आक्रोश और गांधी जी के आंदोलन कार्यक्रम में आस्था बढ़ाई। गांधी जी ने बहुत धैर्यपूर्वक रचनात्मक कार्यो के माध्यम से राष्ट्रीय भावना को जागृत रखा और बारडोली सत्याग्रह को आशीर्वाद देकर यह सिद्ध कर दिया कि समय आने पर वे फिर राष्ट्रव्यापी आंदोलन शुरू कर सकते हैं। कांग्रेस के भीतर श्री जवाहरलाल नेहरू व सुभाषचन्द्र बोस ने उग्रवादियों का नेतृत्व किया। ये दोनों यद्यपि कांग्रेस में थे और गांधी जी के शान्ति व अहिंसात्मक आंदोलन के समर्थक थे पर इनकी सहानुभूति क्रांतिकारियों के प्रति भी कम नहीं थी।

कलकत्ता में दिसंबर 1928 की कांग्रेस में उग्रवादियों ने काफी विवाद खड़ा किया और ब्रिटिश सरकार के प्रति अविश्वास को प्रमुख मुद्दा बनाया। 1928 से 1929 के दिसंबर तक का समय बहुत उत्तेजना का था। क्रांतिकारी काफी सक्रिय थे। सांडर्स की हत्या के बाद केन्द्रीय असेम्बली में बम का फुटना, इस बात का संकेत था कि क्रांतिकारी अपने मार्ग पर चल चुके हैं। ब्रिटेन की ओर से संवैधानिक सुधारों के आश्वासन भारतीयों को संतुष्ट करने में असमर्थ थे और गांधी जी व कांग्रेस को चुनौती जैसी थी कि वह कुछ करें।

ऐसी ही विकट परिस्थितियों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने आंदोलन को एक निश्चित दिशा देने के लिए लाहौर में अपना वार्षिक अधिवेशन किया। इस अधिवेशन का सभापतित्व युवा कांग्रेसी पं. जवाहरलाल नेहरू ने किया। 31 दिसंबर 1929 की मध्य रात्रि को इस अधिवेशन में अनेक प्रस्ताव पारित किये गये जिनमें मुख्य प्रस्ताव इस प्रकार थे। (2)

1. पूर्व स्वाधीनता का प्रस्ताव : 27 जनवरी 1930 प्रतिज्ञा विषय के रूप में मनाना।
2. कांग्रेस कार्यकर्ताओं को भावी निर्वाचनों में भाग न लेने से संबंधित प्रस्ताव।
3. कांग्रेस जनों का कौंसिल की सदस्यता से स्तीफा संबंधित प्रस्ताव।
4. सविनय अवज्ञा आंदोलन और कर बन्दी आंदोलन को पूरे देश में आरंभ करने के लिए कांग्रेस महासमिति को अधिकृत करने से संबंधित प्रस्ताव।
5. देशी रियासतों के नरेशों से नागरिक स्वतंत्रता प्रदान करने से संबंधित प्रस्तावा

छत्तीसगढ़ से लगभग 50 कांग्रेसी कार्यकर्ता एवं नेताओं ने इस कांग्रेस में भाग लिया था, जिनमें बिलासपुर से सर्वश्री डॉ. शिवदुलारे मिश्र, क्रांतिकुमार भारतीय, गजाधर साव और अमर सिंह सहगल आदि प्रमुख थे।

अधिवेशन में पारित पूर्ण स्वाधीनता के प्रस्ताव को जन–जन तक प्रचारित एवं प्रसारित किया गया, जिसमें 26 जनवरी 1930 को 'प्रतिज्ञा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

दिवस' और 'स्वाधीनता दिवस' के रूप में मनाना निश्चित किया गया। इसी क्रम में 26 जनवरी 1930 का दिन संपूर्ण देश में 'प्रतिज्ञा दिवस' के रूप में सोल्लास मनाया गया। छत्तीसगढ़ के प्रमुख स्थानों एवं ग्रामीण अंचलों में पूर्ण स्वाधीनता की प्रतिज्ञा की गई और इसे विशेष समारोह के रूप में आयोजित किया गया। इस अवसर पर राष्ट्रीय झण्डा फहराया गया। राष्ट्रीय गीत गाया गया और जन सभाओं में पूर्ण स्वाधीनता का संदेश सुनाया गया, जिसमें कहा गया था कि विश्व के अन्य स्वाधीन देशों के ही समान भारतीयों को भी स्वतंत्र होने का जन्मसिद्ध अधिकार है। ब्रिटिश शासन ने भारत को गुलाम बनाकर इसकी महान सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, आर्थिक और राजनैतिक परम्परा को नष्ट किया है। इसकी पुर्नप्राप्ति पूर्ण स्वाधीनता में ही निहित है। इस संदेश में ब्रिटिश साम्राज्य के द्वारा देश की आर्थिक बरबादी का भी पूर्ण उल्लेख था। जिसमें बताया गया था कि भारतीय नागरिक की आय 7 पैसे है जबकि उस पर कर का भारत 20% किसानों से ही लगान के रूप में वसूल किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस संदेश में ग्रामीण उद्योग धन्धों के नष्ट होने किसानों की बेरोजगारी अलाभकारी, व्यापार की विनिमय दर, राजनीतिक दृष्टि से भारतीय नागरिक का अपमान और शिक्षा का आत्मघाती स्वरूप जिसे ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों पर थोप रखा था आदि का विवरण दिया गया था। अंत में इस संदेश में आम भारतीय नागरिकों से ब्रिटिश सरकार के साथ सहयोग नहीं करने की अपील की गई थी।

इसी दिवस के संदर्भ में गांधीजी ने अपनी पत्रिका 'यंग इंडिया' 30 जनवरी 1930 के माध्यम से ब्रिटिश सरकार को चेतावनी देते हुए अग्रलिखित शर्ते स्वीकार करने को कहा। 'पूर्ण मद्यपान निषेध, विनिमय दर घटाकर एक शिलिंग चार पेन्स रखना, जमीन लगान आधा करना, शासन पर कौसिल का नियंत्रण, नमक कर की समाप्ति, सैनिक व्यय पर 50% की कमी करना, बड़ी नौकरियों के वेतन का आधा करना, विदेशी वस्त्र के आयात पर रोक, राजनैतिक बंदियों को मुक्त करना, खुफिया पुलिस उठा लिया जाना तथा आत्मरक्षा के लिए हथियार रखने की स्वीकृति प्रदान करना आदि थे।' गांधीजी ने लिखा कि ब्रिटिश सरकार द्वारा इन शर्तों के मानने पर भारतीय नागरिक सविनय अवज्ञा आंदोलन को बाध्य होगें, इस घोषणा का प्रभाव भारतीय जन मानस में शीघ्र देखा गया।

छत्तीसगढ़ में उन दिनों भीषण आर्थिक मन्दी थी और ग्रामीण अंचलों में दुर्भिक्ष का प्रकोप था। वस्तुओं की कीमतें आसमान छू रही थी। इससे जन-जन में भारी असंतोष व्याप्त था। इसी समय रायपुर में राष्ट्रीय सप्ताह के अंतिम दिन (13 अप्रेल 1930) को प्रान्तीय महाकौशल राजनीति परिषद् आहूत की गई जिसकी अध्यक्षत पं. जवाहरलाल नेहरू को करना था किन्तु उन्हें घिड़की नामक रेल्वे स्टेशन पर ही बन्दी बना लिया गया। इससे परिषद् की कार्यवाही 16 अप्रेल 1930 के लिये स्थगित की गई और इसकी अध्यक्षता सेठ गोविन्ददास ने की। उसी पंडाल में उसी दिन हिन्दुस्तानी सी.पी. यूथलीग का भी सम्मेलन रखा गया था। इस सम्मेलन को डी.पी. मिश्र ने सम्बोधित किया। इसके साथ ही तीसरा सम्मेलन सी. पी. हिन्दुस्तानी सेवादल का था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता सागर के वासुदेव सूबेदार ने की। सिवनी के डी. के. मेहता और घतीयतन लाल (रायपुर) ने 10,000 सेवादल के स्वयं सेवकों को तैयार करने का प्रस्ताव रखा, जिसे घनश्याम सिंह गुप्त ने समर्थन दिया। इस तरह उपर्युक्त तीन सम्मेलनों के माध्यम से छत्तीसगढ़ में सविनय अवज्ञा आंदोलन का मार्ग प्रशस्त हो गया। रायपुर नगर स्थित राजबांधा के मैदान में विशाल जनसमूह के समझ से गोविंददास, द्वारका प्रसाद मिश्र, महन्त लक्ष्मीनारायण दास, रविशंकर शुक्ल, गयाचरण त्रिवेदी ने नमक बनाकर नमक कानून भंग किया।

नमक कानून भंग का यह आंदोलन छत्तीसगढ़ में विभिन्न स्थानों में देखा गया। भाटापारा (जिला रायपुर) में उत्साही कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने भाटापारा बाजार चौक पर कुम्भाखान की मिट्टी लाकर उसे एक कडाह में पानी डालकर खौलाया और उससे जो नमक बना उसे नीलाम किया गया। उत्साही श्री सर्वेश्वर प्रसाद मिश्र ने उस नमक को 101 रूपये में खरीदा।

यद्यपि पुलिस इस दृश्य को देख रही थी किन्तु कोई बन्दी नहीं बनाया गया। प्रान्तीय महाकौशल राजनीतिक परिषद् के बाद दूसरे दिन (17 अप्रेल 1930) सेठ गोविन्ददास बिलासपुर आये और इनके सम्मान में नगर स्थित शनीचरी पड़ाव में सायं एक सार्वजनिक सभा की गई जिसमें विशाल जन समुदाय की उपस्थिति में 'सलाइन वाटर' से नमक बनाने का उपक्रम किया गया और नमक कानून भंग किया गया।

उक्त अवसर पर बैरिस्टर छेदीलाल, डॉ. शिव दुलारे मिश्र, श्री अमर सिंह सहगल एवं अन्य सत्याग्रहियों का उत्साह सराहनीय था। इसके बाद यह क्रम जिले के अन्य स्थानों में भी देखा गया।

मुंगेली (बिलासपुर) में पं. कालीचरण शुक्ल एवं पं. रामगोपाल तिवारी ने फोकटपारा स्थित नाले का पानी एवं मिट्टी (प्राय: नमकीन होता है) लाकर बाजार के मध्य चौक पर नमक बनाया गया। उपस्थित समुदाय के समझ ही इसकी नीलामी की गई, जिसे गंगाधर राव दीक्षित ने 50 रूपये देकर खरीद लिया। यहाँ भी किसी को बन्दी नहीं बनाया गया।

इसी तरह के उपक्रम धमतरी, दुर्ग आदि स्थानों पर सम्पादित हुए। शासन नमक कानून उल्लंघन की गतिविधियों को निकट से देख रहा था और इस आंदोलन को अधिक महत्व न देते हुए किसी भी व्यक्ति को बन्दी नहीं बनाया गया। फिर भी इस आंदोलन का अपना महत्व था। इसने लोगों में उत्साह पैदा किया और भावी आंदोलन की पृष्ठभूमि तैयार करने में मदद दी। लाहौर अधिवेशन के प्रस्तावों के अनुरूप छत्तीसगढ़ के विभिन्न रियासतों के नरेशों ने नागरिक स्वतंत्रता प्रदान करने की अपील की गई। इसी परिप्रेक्ष्य में राजनांदगांव एवं खैरागढ़ रियासत में प्रज्ञा मण्डल की स्थापना की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. त्रिपाठी, संजय एवं त्रिपाठी, श्रीमति चंदन : छत्तीसगढ़ बृहद् संदर्भ, पृष्ठ 372.
2. पट्टाभि, सीतारमैया बी. : कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ 284.
3. त्रिपाठी, संजय एवं त्रिपाठी, श्रीमति चंदन : छत्तीसगढ़ वृहद् संदर्भ, पृष्ठ 369.
4. मिश्र, डी.पी. : मध्य प्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, पृष्ठ 379.
5. गजेटियर ऑफ इंडिया, एम.पी. डिस्ट्रिक्ट, गजेटियर ऑफ दुर्ग, पृष्ठ 64.
6. शर्मा, ओमप्रकाश 'भारतीय राजनीतिक विचारधाराएँ', रस्तोगी पब्लिकेशन, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, शिवाजी रोड, मेरठ, पृष्ठ 336-340.
7. शर्मा, डॉ. रामगोपाल : छत्तीसगढ़ में रायपुर जिले में स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन, पृष्ठ 46- 47.
8. गांधीवादी योजना, पृष्ठ 42.

पूर्व मध्यकालीन भारत में सांस्कृतिक संघर्ष

प्रताप कुमार पाण्डेय*

शोध सारांश – प्राचीनकाल से ही भारत में सनातन धर्म रूपी सहिष्णुता और समभाव की गंगा बह रही थी। उत्तर वैदिककाल से राजपूत युग तक आते-आते उसमें अनेक विसंगतियां आ गई थी। इसी बीच इस्लाम ने अपनी धार्मिक कट्टरता से भारतीय सहिष्णुता के आकाश को विक्षुब्ध कर दिया। दोनों संस्कृतियों में परस्पर विरोधी तत्व विद्यमान थे। फलत: दोनों में कटु संघर्ष की शुरूआत हुई।

शब्द कुंजी – वर्ण व्यवस्था, संस्कृति, जिहाद, जजिया, धर्म परिवर्तन, दार-उल-हर्ब, दार-उल-इस्लाम, एकेश्वरवाद, सहिष्णूता, भक्ति-आन्दोलन, पुनर्जागरण, साम्प्रदायिकता, सुलह-ए-कुल।

प्रस्तावना – भारत ने प्राचीनकाल से मनुष्य ने मानव जीवन की चरम उपलब्धि के रूप में ईश्वर प्राप्ति, आत्म साक्षात्कार, मानवीय मूल्यों को ही अपना लक्ष्य बनाया। यहीं और केवल यहीं पर मानव हृदय इतना विस्तीर्ण हुआ कि उसने केबल मुनष्य जाति को ही नहीं वरन् पशु-पक्षी और वृक्ष-वनस्पति तक को अपनी आत्मीय भावनाओं में समेट लिया। सिन्धु सभ्यता तदनन्तर वैदिक सभ्यता, ऋग्वैदिक काल, उत्तरवैदिक काल, महाजनपदों का युग (600 इ.पू. से 400 ई.पू.) मौर्य युग (400ई.पू. से 200ई.पू.) इण्डो-ग्रीक, शक, पल्लव और कुषाणों का युग (200ई.पू.से 300ई), गुप्त युग (400ई से 500 तक) तथा वर्द्धन युग (500से 700 ईस्वी) तक हम सनातन हिन्दू धर्म और उसकी प्रतिक्रिया में उदित धर्मो (बौद्ध व जैन इन तीन धर्मों धर्मों का ही वर्चस्व-सा छाया देखते हैं। इसके पश्चात् राजपूतों का यशस्वी काल खण्ड रहा।

छठवीं शताब्दी में अरब के समाज में अंधविश्वास तथा जड़ता का बोलबाला था। वहां अनेक छोटे-छोटे राज्य थे, जो परस्पर संघर्षस्त थे। जिससे उनमें राजनैतिक व राष्ट्रीय एकता का सर्वथा अभाव था। इन विषम परिस्थितियों में 570 ई. में अरब के मक्का नगर में हजरत मोहम्मद साहब का जन्म हुआ। मोहम्मद साहब ने तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक बुराइयों के विरुद्ध सुधार का बीड़ा उठाया।

इस्लाम शब्द अरबी भाषा के 'सलम' शब्द से बना है। जिसका अर्थ है-अपने धर्म की आज्ञाओं का पालन करने वाला। इस्लाम के सिद्धान्त अत्यंत सरल एवं जटिलताओं से मुक्त है। इस्लाम के अनुसार विश्व का कर्ता और नियंता केवल एक ईश्वर है. जिसका न कोई साथी, न कोई बाप, बेटा, स्त्री आदि सम्बन्धी हैं।

इस्लाम धर्म अपने धार्मिक ग्रंथ श्कुरान पर पूर्ण विश्वास करता है तथा इसकी आयतों पर अपने जीवन उद्देश्य को आधारित करता है। 'कुरान' इस्लाम का आधारभूत ग्रंथ है।[1]

सर्वप्रथम 977 ईस्वी में सुबुक्तगीन ने भारत में आक्रमण किया. इसके पश्चात महमूद गजनवी ने भी 17 बार भारत में आक्रमण किया। भारत में स्थायी मुस्लिम साम्राज्य स्थापित करने का श्रेय मोहम्मद गोरी को मिला, जिसने तराइन के द्वितीय युद्ध (1192 ईस्वी) में पृथ्वीराज चौहान को परास्त कर भारत में मुस्लिम साम्राज्य की नींव डाली।[2]

साम्राज्य स्थापित करने के बाद, मुस्लिम शासकों ने अपने नव स्थापित राजय को स्थायित्व प्रदान करने के उद्देश्य से धर्म का सहारा लेकर 'दार-उल-हर्ब' को दार-उल-इस्लाम में परिवर्तित करने का प्रयास किया।[3] हिन्दु-मुस्लिम संघर्ष के युग की वास्तविक शुरुआत यहीं से हुई और एक ही कौम में रहने के बाद भी दोनों धर्म एक नहीं हो सके। सल्तनतकालीन शासकों में गुलाम वंश के 11 शासकों ने 1206 ई. से 1290 ई. तक शासन किया। इनमें कुतुबुद्दीन ऐबक (1206-1210 ई), आरामशाह (1210-1211 ई.), इल्तुतमिश (1211-1236 ई.) ने शासन किया।

रूकुनुद्दीन फिरोजशाह (1236 ई.) सुल्ताना रनिया (1236-1240), माराम शाह (1240-1242ई.), मसूदशाद (1242-1246 ई.), नासिरुद्दीन महमूद (1246-1266)। बलबन (1266-1286 ई.), कैकुबाद (1287-1289 ई.), कैमूर्स (1289-1290 ई.) का साम्राज्य काल सम्मिलित है। खिलजी वंश में जलालुद्दीन फिरोज खिलजी (1290-1296 ई.), अलाउद्दीन खिलजी, (1296-1316 ई.), शहाबुद्दीन उमर (1316 ई), कुतुबुद्दीन मुबारक शाय (1316-1320 ई.) नासिरूद्दीन खुसरो (1320ई) का शासन काल बिना जाता है।

तुगलक वंश में गयासुद्दीन तुगलक (1320-1325 ई.), मुहम्मद बिन तुगलक (1325-1351), फिरोजशाह तुगलक (1351-1388 ई.), तुगलकशाह द्वितीय (1388-1389 ई.), अबूबक (1389-1390 ई.), नासिरूद्दीन मुहम्मदशाह (1390-1394 ई.), और मुहम्मदशाह 1394-1412 ई.) ने साम्राज्य किया। इस वंश के वृक्ष को तैमूर के आक्रमण (1398 ई.) ने उखाड़ने में महती भूमिका निभाई।[4]

सैय्यद वंश में खिज खाँ सैय्यद (1414-1421 ई.), मुबारक शाह (1421-1434 ई.), मुहम्मद बिन फरीद (1434-1445 ई.) और अलाउद्दीन आलमशाह (1445-1451 ई ने शासन किया। बहलोल लोदी (1451-1489 ई.), सिंकदर लोदी (1489-1517 ई.), और इब्राहिम लोदी (1517-1526 ई.) सिंहासनारूढ़ हुये। सल्तनत युगीन शासकों ने भारतीय शासकों को अपने अधीन करने और साम्राज्य विस्तार के लिये निरंकुशता, बर्बरता और अत्याचार पूर्ण नीति अपनाई उन्होंने अपना प्रभाव

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) डी.एल.एस. स्नात. महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

बढ़ाने के लिये भारत की हिन्दू जनता को दोयम दर्जे की नागरिकता प्रदान की। उन्हें इस मुस्लिम राज्य में निवास करने के एवज में 'जजिया' नामक कर देना पड़ता था।

सुल्तान के अलाउद्दीन तो हिन्दुओं को दिल्ली सल्तनत के लिये एक भयानक खतय समझता था। हिन्दुओं के प्रति इस्लाम के प्रति इस्लाम के अनुसार किस प्रकार की नीति अपनाई जाये इस विषय में सुल्तान ने जब अपने काजी मुगी शा से परामर्श मांगा तब उसने सलाह दी थी कि 'जब कर वसूल करने वाला किसी हिन्दू से चांदी मांगे तो वह बिना कुछ सोचे-विचारे, आगा-पीछे किये उसे सोना दे दे. यदि कर वसूल करने वाला उसके मुंह में बुकना चाहे तो वह बिना किसी आपत्ति के मुँह खोल दे जिससे कि वह उसके मुंह में सरलता पूर्वक थूक दे।

इसी कड़ी में फिरोजशाह तुगलक इतिहास का पहला सुल्तान था जिसने ब्राहमणों पर भी जजिया कर लगाया था। [5] एलफिंस्टन ने इसे सल्तनत काल का अकबर कहा है। हमारे मत से तो यह उपमा देने पर अकबर का नाम कलंकित सा हो रहा है। इसने केवल अपने सुन्नी वर्ग के मुसलमानों का ही भला किया था। वस्तुत: यह सल्तनत युग का सर्वाधिक कट्टर, संकीर्ण, क्रूर ओर असहिष्णु धर्मान्ध सुल्तान था। उसने अपनी धार्मिक कट्टरता की भावना और साम्प्रदायिक संकीर्णता से प्रेरित होकर घृणित और विश्वसक कार्य किये तथा गैर मुस्लिम प्रजा पर नाना अत्याचार किये। इस संबंध में क्तुत: डॉ. ईश्वरी प्रसाद का मत ही ग्राह्य है कि 'फिरोज में उस विशाल हृदय तथा विस्तीर्ण मस्तिष्क वाले सम्राट (अकबर) की प्रतिभा का शतांश भी नहीं था, जिसने खर्वजनिक हितों के उच्च मंच से भी सम्प्रदायों और धर्मों के प्रति शांति, सद्भावना तथा सहिष्णुता का संदेश दिया'।[6]

1398 में हुये तैमूर के आक्रमण के समय नरसंहार, कूर रक्तपात और अनेक हृदय विदारक घटनाओं से दु:खी और नि:सहाय हिन्दुओं के मन में मुसलमानों के लिये घृणा व वैमनस्य उत्पन्न हो गया। यह पूर्ण और वैमनस्य दिन प्रतिदिन बढ़ता ही चला गया। इसके अतिरिक्त सल्तनत कालीन शासक हिन्दुओं के धर्म को भ्रष्ट करने के लिये, उनके गौरव को धूमिल करने के उद्देश्य से मंदिरों को तुड़वाकर कुछ को मस्जिद बनवाये और कुछ को पैरों तले रौंद कर अपमानित करने का पुरजोर प्रयत्न किये। राजकीय सेवाओं और प्रशासन में योग्यता का कोई मापदण्ड नहीं था सिर्फ जाति या नस्ल के आधार पर ही उच्च पदों को भरा जाता था। समस्त राज वैभव रीति रिवाज और परम्परायें इस्लामी ढंग पर आधारित थी इन मुस्लिम शासकों ने भारत की गौरवशाली उदार, समन्वयकारी शिक्षा पद्धति पर आधात कर उसका पूरी तरह से इस्लामी करण कर दिया, चूंकि सल्तनत कालीन शासक कुरान के सिद्धान्तों के अनुसार ही शासन करते थे अत: उन्होंने भारतीय नृत्य, चित्र और संगीत कला की समृद्ध परम्परा को पूरी तरह नष्ट कर दिया।

निष्कर्षत: हम देखते हैं कि इस काल में दोनों वर्गों के बीच अलगाव, घृणा, द्वेष, प्रतिद्वंदिता और वैमनस्यता की खाई निरंतर बढ़ती ही गयी पूर्ववर्ती मुस्लिम शासकों की इन्हीं रूढ़िवादी धर्मान्ध नीतियों के कारण भारतीय संस्कृति ने अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु संघर्ष के उस युग की शुरूआत की जो कालांतर में अकबर की उदार नीतियों से समाप्त हुई। इस काल में राजनीतिक सत्ताा संघर्ष तथा विन्दु-मुस्लिम सांस्कृतिक संपर्क का कार्य साथ-साथ चलता रहा। भक्ति आदीलन तथा मुस्लिम सूफी संतों के समन्वयवादी प्रयास मुख्य रूप से इस युग से ही प्रारंभ हो चले थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारद्वाज, दिनेशचंद्र मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पृ. 12
2. दिनकर, रामधारी सिंह संस्कृति के चार अध्याय 1956ब पू. 279
3. लुणिया बी. एन. प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, 1995 पृ. 268
4. मजूमदार, आर. सी. द्वारा संपादित हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ दि इंडियन पीपुल, भाग-4
5. श्रीवास्तव, आशीर्वादी लाल, **अकबर महान** पृष्ठ 72
6. प्रसाद, ईश्वरी शिल्ट्री ऑफ मिडियल इंडिया 1960 पू. 281

****

खिलचीपुर राज्य में कला एवं लोककला का ऐतिहासिक अध्ययन

प्रो. ओमप्रकाश गेहलोत*

प्रस्तावना – खिलचीपुर के स्थापत्य के नमूने खिलचीपुर के समस्त क्षेत्र में विभिन्न मंदिरों, मूर्तियों और किलों के रूप में देखा जा सकता है। इन निर्माणों में खिलचीपुर राज्य में स्थापत्यकला के बेजोड़ नमूने परिलक्षित होते है।

राव हटेसिंह ने खिलचीपुर शहर और नागरिकों की सुरक्षा हेतु नगर के चारों ओर शहरकोट का निमार्ण कार्य करवाया।[1]

फतेहसिंह ने सन् 1718 में शहरपना कोट को पक्का करवाया। आपने अगहन सुदी सप्तमी शनिवार सन् 1718 (वि.सं.1775) को राजमहल (किला निर्माण) का प्रारंभ करवाया। इस तथ्य का उल्लेख बड़वा की पोथी से सिद्ध होता है।[2] इसके साथ-साथ आपने रामचंद्र भगवान एवं नरसिंह भगवान के मंदिरो के निर्माण का कार्य भी सम्पन्न करवाया। खिलचीपुर राज्य में बहने वाली नदी पर आपने मसूरी बाँध का निर्माण कार्य करवाया।

दिवान राजा दिपसिंहजी ने सन् 1788 (वि.सं. 1845) में सोमवारिया नदी के किनारे पर अपने नाम से दीपगढ़ बसाया जहाँ पर उनके पुत्र कुंवर माधोसिंह के द्वारा प्रति सप्ताह सोमवार को हाट लगवाया। इनके शासनकाल में हनुमान मंदिर सेठ मंगनी राम के द्वारा बनवाया गया। साथ ही दीपसिंह की रानी ने गणेश मंदिर एवं नरसिंह मन्दिर का निर्माण कार्य करवाया।[3]

दिवान राजा दुर्जनसाल की रानी नवलकुंवर ने सन् 1823 (वि.सं.1880) नरसिंह भगवान के मन्दिर का निर्माण किले के सामने करवाया था। रानी चाँदकंवर ने भी किले के महल के सामने सन् 1839 (वि.सं.1896) में एक मन्दिर का निर्माण कार्य करवाया था।[4]

रघुनाथ मंदिर उत्तरभारतीय नागर शैली पर आधारित है। इस मंदिर का निर्माण खिलचीपुर के महल के सामने की ओर किया गया है। एक चबूतरे पर मंदिर का पूरा भाग बनाया गया है। मंदिर में उच्च शिखर बने हुए है। सम्पूर्ण मंदिर पर हिन्दू धर्म से संबंधित पौराणिक चित्रों को उकेरा गया है, जो मंदिर की सुंदरता को सजीव बनाने में बेजोड़ है।

दिवान महाराज शेरसिंह ने सन् 1845 (वि.सं.1902) में दो महलों का जिनमें एक पाँच मंजिला एवं दूसरा सात मंजिला था निर्माण कार्य करवाया। दिवान महाराज शेरसिंह ने सन् 1852 में नदी पुल के पार नर्मदेश्वर महादेव मन्दिर का निर्माण कार्य करवाया।[5]

महाराज की राणी बगतावरकंवर ने भी सन् 1876 (वि.सं. 1933) में भगवान कल्याणराई के मन्दिर का निर्माण कार्य करवाया।[6]

राव बहादुर अमरसिंह ने महल के चारों ओर सन् 1872 (वि.सं.1829) नगरकोट का निर्माण कार्य करवाया। आपने सन् 1873 (वि.सं.1930) में गाड़गंगा नदी के किनारे महल के पास घाट का निर्माण कार्य करवाया। इसी घाट के पास कंवरपदी महल का निर्माण करवाया। महल के अंदर निवास बाग लगाया। बाग के अन्दर संगमरमर द्वारा छत्री का निर्माण करवाकर उसमे येसुर महादेव भगवान की पंचमुखी मुर्ति का निर्माण कार्य सन् 1873 में करवाया।[7]

राव अमरसिंह एक महान निर्माता थे। फतेहबुर्ज शिलालेख के अनुसार चैत्र सुदि ग्यारस संवत् 1948 कां उन्होने खिलचीपुर की गड़गंगा नदी के किनारे पाँच मंजिले महलों का निर्माण कार्य करवाया। महाराज कुंवर भवानी सिंह ने पवित्र गड़गंगा नदी पर अपनी कविता के माध्यम से कहा है-

तहाँ से सिधारी गंगा शिव डिग त्रिवेणी है,
गाढ़ेश्वर शंभू जहाँ करत विलास है।
याते ही परियों है नाम आप हूँ का गड़-गंगा गंग है
प्रत्यक्ष वाको जग में उजास है।

राव बहादुर दीवान अमरसिंह द्वारा सन् 1874 (वि.सं.1931) में रातादेवी के मन्दिर का निर्माण खिलचीपुर गाँव से उत्तर दिशा में धरूऊ उंकारनाथ के रास्ते पर करवाया। राव बहादुर अमरसिंहजी ने सन् 1876 में महाराजाधिराज शेरसिंह का खिलचीपुर स्थित चारबाग चबुतरा पक्का करवाया। सन् 1885 (वि.सं. 1942) में अमरसिंह ने भोजपुर ग्राम में गढ़ का निर्माण कार्य करंवाया।[9]

तालाब पर नरसिंह भगवान के मन्दिर का निर्माण करवाया, राव बहादुर अमरसिंह ने खिलचीपुर में सन् 1892 (वि.सं.1949) ने नदी घाट पर महल की बुर्ज करवाई।[10]

रावबहादुर भवानीसिंह ने सन् 1902 (वि.सं.1959) हरीहर निवास बाग में श्रीनाथ भगवान का मन्दिर निर्माण करवाया। उस मन्दिर में श्रीनाथजी की गोद में गोवर्धननाथजी की मूर्ति को बैठाया।[11] आपने एक अन्य मन्दिर मोतिसुरजी महाराज का मन्दिर निर्मित करवाया।

भुवानीसागर के पास हरिहर निवास, गिरधरनिवास, राजबाग, कंवरपदी को बाग सहित चौतरफा बाग का निर्माण कार्य करवाया। राव बहादुर भवानीसिंह ने सन् 1901 (वि.सं.1958) में खिलचीपुर स्टेट में सड़क निर्माण का कार्य करवाया। राव बहादुर भवानीसिंह ने बीजगढ़ तालाब के पास बगीचे का निर्माण कार्य करवाया एवं वहाँ पर एक सुंदर कोठी व बंगले का निर्माण कार्य भी करवाया।[12]

दुर्जनसाल को इमारते बनवाने का बड़ा शौक था। उन्हाने नया महल बनवाया और पुराने महल का पुनर्निमाण करवाया। उन्होने सन् 1919 में विजयगढ़ में डेविस भवन का निर्माण कार्य करवाया टेनिस के खेल का आरंभ करवाया। अपने सन् 1917 में नरसिंह भगवान का मन्दिर एवं 1920 में शनिश्चर के मन्दिर की मरम्मत करवाई।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, नलखेड़ा, जिला आगर मालवा (म.प्र.) भारत

सन् 1935 (वि.सं.1992) में गाँव दण्ड में शिकार खेलने के लिए पक्की ओड़ी का निर्माण कार्य करवाया। सन् 1936 में खिलचीपुर बाग में 1 टेनिस कोर्ट का निर्माण कार्य करवाया।

रावबहादुर यशोधरसिंह ने सन् 1937 में विजयगढ़ कोठी व मेहमानघर के बीच एक बंगले का निर्माण कार्य करवाया। किले के अन्दर के महल की सजावट का कार्य किया गया। खिलचीपुर से भोजपुर होकर स्टेट की सरहद तक सड़क का निर्माण कार्य करवाया। नेश में एक मकान का निर्माण कार्य करवाया, जिसका नाम यराज रखा गया। [13]

मूर्तिकला – खिलचीपुर राज्य में गांधार, मथूरा, एलोरा, अजंता के रूप में मूर्तिनिर्माण के केंद्र तो नही मिलते परंतु विभिन्न मन्दिरों में मूर्तियों के विभिन्न रूप मिलते है।

खिलचीपुर में मुर्तिकला के नमूने समूचे खिलचीपुर के क्षेत्र में बने हुए मन्दिरों में देखे जा सकते है। ये मन्दिर प्रचीन नागर शैली में बने हुए है और उन मन्दिरो की दीवरों पर बनी हुई विभिन्न मर्तियों से इस कला की बारिकीयों को देखा जा सकता है। किले के सामने स्थित नरसिंह मन्दिर पर भगवान नरसिंह को हिरणाकश्यप का वध करते हुए दिखाया गया है। भगवान नरसिंह अपने नाखुनो से उसको चीर रहे है, पास में बालक प्रहलाद खड़ा दिखाया गया है। मुर्ति का निर्माण लाल बलुए पत्थर से किया गया है।

नरसिंह मन्दिर के पाश्र्व भाग में हनुमानजी की खड़ी मुर्ति स्थित है। यह मुर्ति सीधी खड़ी मुद्रा मे अपने आप मे अनूठी है और अप्रतिम है। यह मूर्ति भगवान वराह की है, पृथ्वी का उद्धार करने के पश्चात् का दृश्य को साकार करते हुए यह मूर्ति दिखाई गई है ।

किले के सामने के मन्दिर पर स्थित भगवान नरसिंह की मूर्ति जिसमें भगवान नरसिंह हिरणाकश्यप का वध कर रहे है और बालक प्रहलाद हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ा है।

नृत्यकला – भारतीय संस्कृति में नृत्यकला का विकास भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से माना जाता है। भारतीय समाज में प्रचलित नाट्यशास्त्र के अनुरूप खिलचीपुर राज्य में नृत्यकला का प्रसार था। जिस प्रकार नृत्यकला को अनेक भारतीय राज्यों ने प्रश्रय दिया था। उस प्रकार से तो खिलचीपुर के शासको की स्थिति तो नही थी, परंतु कला का स्थानीय रूप जनसामान्य में प्रचलित था, जो लोककलाकारों एवं बंजारों के द्धारा प्रस्तुत किया जाता था। राजपरिवार में शास्त्रीय नृत्य हेतु व्यवस्था के संबंध में जानकारी के स्रोत उपलबध नही है, परंतु राजपरिवार की महिलाओं हेतु निश्चित रूप से इसकी व्यवस्था रहती थी। साथ ही राजपरिवार की राजकुमारियों हेतु एवं उनके सर्वांगीण विकास के सबंध में व्यवस्था की जाती थी।

संगीतकला – भारतीय संगीत का आरंभ सामवेद से माना जाता है और सामवेद में ही संगीत के 7 सुरों की जानकारी प्राप्त होती है। संगीत के हिन्दूस्तानी और कर्नाटक दोनो शैली का प्रभाव भारतीय समाज में रहा है। खिलचीपुर राज्य में घराना संस्कृति के संबंध में तो जानकारी का अभाव है, परंतु संगीत की इन शैलियों का प्रभाव समाज में व्यापक रूप से रहा है । भक्तिकालीन समय में संत पीपा जो स्वयं इस वंश के प्रतापी शासक हुए है। उन्होने भी अपने साखी, शबद, ककहरा एवं चितावणी के माध्यम से अपनी वाणी को अभिव्यक्ति दी है। भक्तिकालीन समय में अनेक संतो द्धारा अपनी वाणी के प्रचार प्रसार में संगीत का प्रयोग किया है।

चित्रकला – खिलचीपुर राज्य में कला का उपयोगीतावादी रूप समस्त राज्य में दिखाई देता है। चित्रकला का रूप विभिन्न मन्दिरों की दिवारों पर और खिलचीपुर राज्य के किले की दिवारो पर देखा जा सकता है, जो बेलबूटों, खिलते हुए कमल एवं प्रकृतिक रूप से उनको देखा जा सकता है।

किले के पास के नरसिंह मंदिर पर मंदिर की गुंबद पर खिलते हुए कमल के फुलो को सुसज्जित कर उकेरा गया है, जो अपने आप में दिव्य और अनूठे प्रदर्शित हो रहे है। किले के सामने के मन्दिर में शीर्श गुंबजो को अनेक प्रकार की मानव आकृतियों और बेलबूटों से सजाया गया है जो सजीव जान पड़ती है ।

खिलचीपुर के किले के मुख्य द्धार का भितरी चित्र, जिसमें द्धार को कंगूरों से सजाया गया है।किले की बाहरी दिवार के स्तंभों का सुंदर चित्र, इन स्तंभों को विभिन्न आक्रतियों से सुसज्जित किया गया है। इनमें कला की बारिकियों का पूर्ण समावेश कर तत्कालीन कारीगरों ने चित्रकला का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

किले के अंदर स्थित चबूतरे पर चित्रकारी को विभिन्न रूपों में सजाया गया है। चबूतरें के चारों ओर कलाकारों ने अपनी कला की सजीव झांकी प्रस्तुत की है। यह चित्ताकर्षक और मनमोहक है। इन चित्रों को देखकर राजपरिवार का कला के प्रति लगाव देखा जा सकता है साथ ही आभास होता है कि तत्कालीन समय में विभिन्न शासकों के समय में चित्रकला को प्रश्रय दिया जाता था और उस समय के शासक कलाओं के पारखी थे।

स्थानीय लोककलाएं – खिलचीपुर के समस्त राज्य में स्थानीय स्तर पर लोककलाओं को छोटे-छोटे सामंतो जागीरदारों एवं स्थानीय महाजनों के द्धारा प्रश्रय दिया जाता था। राजपरिवार के द्धारा भी किसी न किसी रूप में विभिन्न प्रकार की कलाओ को न केवल सम्मानित करने का प्रयास किया जाता था, वरन उनको आगे बढ़ाने का कार्य भी किया जाता था।

लोक कलाओं का रूप ग्रामीण समुदय की महिलाओं के द्धारा मिट्टी की दीवारों पर बनाए गए चित्रों के रूप में देखे जा सकते थे। जिसमे महिलाओं के द्धारा मांडणा किया जाता था। जो विभिन्न पर्वो एवं त्यौहारों के अवसर पर देखे जा सकते थे। ये चित्त को सहज ही आकर्षित करते थे।

मांडणा – स्थानीय कुम्हार जाति के द्धारा मटकों, सुराहियों और अन्य पात्रों पर विभिन्न प्रकार की आक्रतियॉ भी लोककला के उत्कृष्ट नमूने के रूप में स्थानीय कला को प्रकट करती थी। इन वर्ग के व्यक्तियों के द्धारा अपनी उत्कृष्टता का प्रदर्शन किया जाता था।

स्थानीय बइई वर्ग की श्रेणीयों के द्धारा भी विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्यो पर कला का सुक्ष्म अंकन किया जाता था। कारीगरों के द्धारा विभिन्न लोकोपयोगी समाग्रीयों को विभिन्न प्रकार के चित्रों से सजाया जाता था, जिसकी जनसामान्य में बड़ी मांग रहती थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खिलचीपुर राज्य के बड़वा की हस्तलिखित पोथी पृष्ठ क्र13
2. चौहान कुल कल्पद्धम (चौहान राजपूत की शाखाओं का इतिहास एवं वंशवृक्ष) भाग-प्रथम लेखक-देसाई लल्लुभाई भीमभाई द्धितीय संस्करण 2005 प्रकाशक-राजस्थानी ग्रंथागार सोजती गेट, जोधपुर पृष्ठ संख्या 101,102
3. Survey of khichi chauhan history, Prof.A.H.Nijami and Raghunath singh kheechi Editer- khichi chauhan shodh sadhana P.O.Indroka via teori 342306 Jodhpur page no.303,304
4. खिलचीपुर रियासत के बड़वा की हस्त लिखित पोथी बड़वा -शेरसिंह

पृ.क्र.79/11
5. खिलचीपुर राज्य के बड़वा की हस्तलिखित पोथी पृष्ठ क्र18
6. Survey of khichi chauhan history, Prof.A.H.Nijami and Raghunathsingh kheechi Editer- khichi chauhan shodh sadhana P.O.Indroka via teori 342306 Jodhpur page no.305,306
7. Survey of khichi chauhan history, Prof.A.H.Nijami and Raghunath singh kheechi Editer- khichi chauhan shodh sadhana P.O.Indroka via teori 342306 Jodhpur page no.306
8. suevey of khechi chauhan history (with biographical notes) writer-prof.Akhtar hussain Nizami and Raghunath Singh kheechi Edited –TH.Gopal Singh kheechi & P.R.Purohit 1990 /kheechi Chauhan Shodh Sansthan p.o. Indroka , via Teori .342306 (Jodhpur) Page no.-306
9. खिलचीपुर राज्य के बड़वा की हस्तलिखित पोथी पृष्ठ क्र21
10. Survey of khichi chauhan history, Prof.A.H.Nijami and Raghunath singh kheechi Editer- khichi chauhan shodh sadhana P.O.Indroka via teori 342306 Jodhpur page no.307
11. खिलचीपुर रियासत के बड़वा की हस्त लिखित पोथी बड़वा –अर्जुनसिंह पृ.क्र.80/12
12. Survey of khichi chauhan history, Prof.A.H.Nijami and Raghunath singh kheechi Editer- khichi chauhan shodh sadhana P.O.Indroka via teori 342306 Jodhpur page no.307,308
13. खिलचीपुर रियासत के बड़वा की हस्त लिखित पोथी पृ. 22

****

जनजाति समाज में नाता प्रथा एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य

डॉ. विनीता लवानिया*

शोध सारांश – हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में विवाह संस्था एक धार्मिक संस्कार है एवं अन्य समाजों की तरह जनजातीय समाजों में भी विवाह संस्था पाई जाती है। राजस्थान की जनजातियों में जीवन साथी को चुनने के कई तरीके अपनाये जाते हैं उन्ही में से एक तरीका है 'नाता'। राजस्थान में वर्तमान में भी नाता प्रथा प्रचलन में है। इस प्रथा के अनुसार स्त्री और पुरुष बिना विवाह किये पंचायत की अनुमति से विवाहित युगल की तरह रह सकते हैं। कोई भी विवाहित पुरुष अपनी पत्नी से अलग होकर किसी अन्य महिला को एक निश्चित राशि देकर उसे पत्नी की तरह अपने साथ रख सकता है।प्रस्तुत शोध पत्र मीणा जनजाति समाज में नाता प्रथा की वर्तमान स्थिति के अध्ययन पर आधारित है। मीणा समाज में नाता प्रथा के वर्तमान स्वरुप के बारे में जानना, प्रभावित स्त्री की नाता के बाद परिवर्तित स्थिति एवं प्रस्थिति का पता लगाना तथा उसके पूर्व पति के बच्चों की स्थिति को समझने के उद्देश्यों तथा नाता प्रथा मीणा समाज में पुरुषों की तरफ झुकी हुई है, नाता प्रथा स्त्री को सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा देती है इसीलिए स्त्रियाँ विभिन्न समस्याओं के बाद भी इस प्रथा का विरोध नहीं कर रहीं आदि प्राक्कल्पनाओं को ध्यान में रख कर अध्ययन किया गया।

प्रस्तावना – विवाह एक ऐसी सार्वभौमिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्था है जो किसी ना किसी रूप में प्रत्येक समाज में पायी जाती है। समाज को निरंतरता प्रदान करने के मुख्य उद्देश्य कीं पूर्ति हेतु, स्त्री और पुरुष के लेंगिक संबंधों को कानून और प्रथाओं द्धारा नियमित करने एवं संतान उत्पत्ति कर कुछ निश्चित नियमों के अंतर्गत समाज को सम्पूर्णता प्रदान करना विवाह है। हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में विवाह एक धार्मिक संस्कार है जिसके माध्यम से व्यक्ति गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है और अपने व्यक्तित्व का परिष्कार करते हुए पूर्ण बनाता है। हिन्दू विवाह की पूरी क्रिया विधि धार्मिक होती है इस प्रक्रिया में विवाहित जीवन के समस्त दायित्व एवं कर्तव्यों का उल्लेख किया जाता है।

अन्य समाजों की तरह जनजातीय समाजों में भी विवाह संस्था पाई जाती है। जनजातीय समूह व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है जो निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करने वाले, सामान्य संस्कृति, विवाह एवं जीवनसाथी के चयन में अनोखी पद्धति का प्रयोग आदि लक्षण रखते हैं।जनजातीय समाजों में विवाह की अनुपम परम्पराएं पायी जाती हैं। भारत में ही नहीं अपितु विश्व की सभी जनजातियाँ इस दृष्टि से अन्य सभी समाजों, समुदायों से भिन्नता रखती हैं। जनजातियों में विवाह न केवल शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपितु सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उद्देश्यों के लिए किया जाता है किन्तु कुछ प्रथाएं ऐसी भी पायी जाती है जो विवाह के बिना भी परिवार की संरचना कर देती है। राजस्थान की जनजातियों में भी जीवन साथी को चुनने के कई तरीके अपनाये जाते हैं उन्ही में से एक तरीका है 'नाता'। राजस्थान में वर्तमान में भी नाता प्रथा प्रचलन में है। इस प्रथा के अनुसार स्त्री और पुरुष बिना विवाह किये पंचायत की अनुमति से विवाहित युगल की तरह रह सकते हैं। कोई भी विवाहित पुरुष अपनी पत्नी से अलग होकर किसी अन्य महिला को एक निश्चित राशि देकर उसे पत्नी की तरह अपने साथ रख सकता है।

जनजातीय समाजों में बहुत पहले से चली आ रही नाता प्रथा के स्वरुप को जब समाजशास्त्रियों द्धारा बारीकी से देखा गया तो एक पक्ष यह भी उभर कर आया कि यह अति आधुनिक समाजों के 'लिव इन रिलेशनशिप' से मिलता जुलता है। दोनों ही स्थितियों में स्त्री पुरुष स्वतंत्र सहमति से बिना विवाह किये एक साथ विवाहित युगल की तरह रह सकते है। पूर्व की वैवाहिक स्थिति का तथा नाता या लिव इन रिलेशनशिप के दौरान व्यवस्थाओं का उनके सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन पर समान प्रभाव देखा गया। सामान्यतौर पर देखा जाता है कि लिव इन रिलेशनशिप में अविवाहित स्त्री पुरुष ही रहते हैं और उनकी दोनों के मूल परिवारों से कोई अंत:क्रिया नहीं होती न ही वे किसी आर्थिक, पारिवारिक या सामाजिक दायित्वों को मानते हैं। अनिश्चित अवधि के लिए विवाहित युगल की तरह रहना उनकी प्राथमिकता होती है। स्त्री एवं पुरुष दोनों जब तक चाहें इस सम्बन्ध को बनाए रख सकते हैं किसी एक की असहमति होने पर यह सम्बन्ध भी नाता की तरह समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत शोध पत्र मीणा जनजाति समाज में नाता प्रथा की वर्तमान स्थिति के अध्ययन पर आधारित है इस हेतु पूर्वी राजस्थान क्षेत्र सेनाता प्रथा से प्रभावित स्त्रियों का उत्तरदाताओं के रूप में चयन किया गया। अध्ययन की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति का प्रयोग कर 50 स्त्रियाँ चुनी गयी जिसमें से 25 विधवा होने के पश्चात तथा 25 परित्यक्ता स्त्रियाँ नाता लायी गयीं थीं। मीणा समाज में नाता प्रथा के वर्तमान स्वरुप के बारे में जानना, प्रभावित स्त्री की नाता के बाद परिवर्तित स्थिति एवं प्रस्थिति का पता लगाना तथा उसके पूर्व पति के बच्चों की स्थिति को समझने के उद्देश्यों को ध्यान में रख कर यह अध्ययन किया गया। नाता प्रथा मीणा समाज में पुरुषों की तरफ झुकी हुई है, नाता प्रथा स्त्री को सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा देती है इसीलिए स्त्रियाँ विभिन्न समस्याओं के बाद भी इस प्रथा का विरोध नहीं कर रहीं आदि प्राक्कल्पनाओं का भी निर्माण किया गया।

राजस्थान में नाता प्रथा एक पुरानी प्रथा है जो ग्रामीण समाज की कई

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय कन्या महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

जातियों जनजातियों में पायी जाती है। मीना जनजाति में भी नाता प्रथा का प्रचलन है। इस प्रथा के लिए माना जाता है कि पति–पत्नी का वैवाहिक जीवन सामान्य न होने की स्थिति में अथवा विधवा और परित्यक्ता स्त्रियों को पुन: सामाजिक जीवन जीने के लिए मान्यता देते हुए, उनके सम्मान को बचाने के लिए आरम्भ की गयी होगी जो कि तत्कालीन समाज में व्यवस्था बनाये रखने के लिए आवश्यक रही होगी किन्तु आज भी जाति पंचायतें नाता प्रथा को सहमति देती हैं, नाता के लिए निर्धारित राशि का बंटवारा कराती हैं ,महिला के माता–पिता या पूर्व पति जिस पर भी बच्चों की जिम्मेदारी है उनका हिस्सा तय करती हैं।

शोध करने पर ज्ञात हुआ कि मीणा समाज में विधवा पुनर्विवाह को वैध माना जाता है। सामान्यतया परिवार के ही किसी सदस्य से विधवा का विवाह कर दिया जाता है जो कि बहुत संक्षेप में किया जाता है इसे पल्ले बांधना या नाता करना कहा जाता है इसमें पुरोहित की उपस्थिति आवश्यक नहीं मानी जाती मात्र भावी पति द्वारा स्त्री को चूड़ा पहनाया जाता है। तथ्यों से यह भी ज्ञात हुआ कि जब कोई स्त्री परिवार के बाहर नाता जाती है तो उसके पहले के ससुराल वाले यह दावा करते हैं कि हमने इसे रखा है , भोजन दिया है, कपड़े गहने दिए हैं और शादी पर खर्चा भी किया है इस सब के बदले में हर्जाना चाहिए तब स्त्री अपने नए ससुराल वालों से धन लेती है जिसे 'झगड़ा' कहते हैं और जो वह चुकाती है उसे 'हर्जाना' कहते हैं। विधवा का नाता होने की स्थिति में झगड़ा राशि उसका पिता लेता है। इस सबमें कोई औपचारिक रीति रिवाज नहीं करना पड़ता इसलिए गाँव के पञ्च मिलकर फैसला कर देते हैं। सामान्यतया झगडे की राशि में पंचों का भी हिस्सा होता है।

अध्ययन करने पर जो तथ्य सामने आये उनसे स्पष्ट हुआ कि नाता जाने वाली अधिकतर स्त्रियाँ 30 से 45 वर्ष की आयु की थी और 42 प्रतिशत स्त्रियाँ पहली पत्नी के जीवित होते हुए नाता गयी थीं। शिक्षा का अभाव एवं अपने अधिकारों के प्रति जागरूक न होने के कारण वे नाता जाने के बाद भी अपनी प्रत्येक आवश्यकता एवं निर्णय के लिए पूरी तरह अपने पति पर निर्भर हैं। अधिकांश उत्तरदाताओं ने बताया कि पूर्व के विवाह में उनके पिता ने विवाह में जो गहने दिए थे अब वे भी उनके पास नहीं हैं और झगडा राशि तो हर्जाना के रूप अदा कर दी गयी है इसलिए वे अब अपने पति पर पाई पाई के लिए निर्भर हैं। कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी थीं जो अपनी मर्जी से नाता गयीं और वे संतुष्ट हैं।उनका कहना था कि समाज में सम्मान से जीने के लिए किसी पुरुष का साथ होना जरूरी है चाहे वह नाते के कारण ही हो। नाते से पहले तथा बाद की पारिवारिक एवं सामाजिक प्रस्थिति के बारे में पूछने पर ज्ञात हुआ कि लगभग सभी स्त्रियाँ इस पक्ष को बहुत अधिक महत्त्व नहीं देती हैं।यद्यपि नाते में उनकी स्वतंत्र सहमति मानी जाती है किन्तु व्यावहारिकता में विधवा अथवा परित्यक्ता होने के कारण उनकी छिपी हुई मजबूरी भी दिखाई दी।

जो स्त्रियाँ अपने पूर्व विवाह की संतानों को स्वयं के माता पिता के पास या पूर्व पति के साथ छोड़ कर आई हैं उन्होंने बताया कि अक्सर उन्हें अपने बच्चों की याद आती है कुछ के बच्चे मिलने भी आते हैं जबकि 14 प्रतिशत स्त्रियाँ नाता के बाद अपने पूर्व विवाह की संतानों को देख भी नहीं सकी हैं, कारण वर्तमान परिवार में इस बात को लेकर कलह, झगड़ा और पति के दुर्व्यवहार की आशंका और डर बताया गया। इसके अतिरिक्त नाता आने वाली स्त्रियों के पति की पूर्व की पत्नियों से हुई संतानों की देखभाल का दायित्व उनका बना दिया जाता है। जिन परिवारों में पूर्व की विवाहित पत्नी साथ रहती है वहां स्थिति विपरीत है, बच्चों को नाता आई पत्नी से दूरी बना कर रखने के लिए कहा जाता है।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि एक ओर जहाँ मीणा समाज नाता प्रथा को वर्तमान में भी अपनाये हुए है और इससे प्रभावित स्त्रियाँ भी खुल कर इस प्रथा का विरोध नहीं कर रही वहीँ दूसरी ओर इस प्रथा के विकृत होते स्वरुप के कारण होने वाले सामाजिक विघटन को रोकने के लिए वर्तमान में किसी के पास कोई उपाय या नियंत्रण नहीं है। दोनों पक्षों की सहमति बनने से कानून का पक्ष भी कमजोर हो जाता है (चाहे एक पक्ष की सहमति अज्ञान या मजबूरीवश हो)।नाता प्रथा के नाम पर स्त्रियों का मोल लगाना, उनका कई कई बार सौदा करना, पंचों के फैसले को लागू करना और कोई कानूनी संरक्षण न मिल पाना स्त्रियों के शोषण के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इस प्रथा के कारण जनजाति समाज में स्त्री क्रय की वस्तु बन गयी है। कुछ स्थानों पर स्त्रियों की दलाली, पत्नी की अदला बदली, पैसों के लिए पत्नी को नाते भेज देना, स्वयं नाता कर नयी स्त्री लाने के लिए पत्नी को सदा के लिए मायके भेज देना ऐसे उदाहरण स्वयं स्त्रियों के द्वारा बताये गए जो किसी भी तरह लोकतान्त्रिक समाज में स्वतंत्रतापूर्वक जीने के मौलिक अधिकार का हनन है।अत: यह माना जा सकता है कि नाता प्रथा की वर्तमान तस्वीर स्त्री की गरिमा को ठेस पहुंचाने वाली, उनके मानवाधिकार के विरुद्ध, उनकी स्वतन्त्रता को समाप्त करने वाली, उनके स्वास्थ्य के प्रति पूर्णत: प्रतिकूल एवं उदासीन एक कुप्रथा बन कर रह गयी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कुमार, मिथिलेश ,2000 'जनजातीय समाज में शिक्षा और आधुनिकीकरण', क्लासिकल पब्लिकेशन कम्पनी, नयी दिल्ली।
2. रस्तोगी, अलका 2005 'आदिवासी सामाजिक संरचना एवं महिलाओं की प्रस्थिति', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर एवं नयी दिल्ली।
3. जैन, महावीर कुमार, 2017 'जनजातीय महिलाएं सामाजिक परिस्थिति एवं स्वास्थ्य', अंकुर प्रकाशन, उदयपुर।
4. कोठारी, सोनल राज 2017 'आदिवासियों के रीति रिवाजों का सामाजिक आर्थिक अध्ययन', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर एवं नयी दिल्ली।

****

वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

डॉ. दिलीप पीपाड़ा* डॉ. सुनिल कुमार दलाल**

शोध सारांश – वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाएँ, समाज और संस्कृतियाँ परस्पर जुड़कर एक वैश्विक प्रणाली का निर्माण करती हैं। 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद भारत ने वैश्विक अर्थव्यवस्था से स्वयं को जोड़ने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए। इसका प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों उद्योग, कृषि, सेवा, शिक्षा, रोजगार और विदेशी व्यापार पर गहराई से पड़ा। प्रस्तुत लेख मे वैश्वीकरण के भारत की आर्थिक वृद्धि, सामाजिक संरचना, आय असमानता, विदेशी निवेश और रोजगार पर प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण करने का प्रयास किया है। साथ ही यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि वैश्वीकरण ने भारत को कहाँ तक लाभान्वित किया और किन क्षेत्रों में इसकी सीमाएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।

प्रस्तावना – वैश्वीकरण शब्द 'ग्लोब या विश्व' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है सम्पूर्ण विश्व को एक आर्थिक और सांस्कृतिक इकाई के रूप में देखना। यह वह प्रक्रिया है जिसमें पूँजी, वस्तुएँ, तकनीक, सेवाएँ, विचार और मानव संसाधन सीमाओं के पार स्वतंत्र रूप से संचालित होते हैं। भारत में वैश्वीकरण का वास्तविक प्रारम्भ वर्ष 1991 में हुआ जब तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिंह राव और वित्त मंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने नई आर्थिक नीति लागू की। इसका उद्देश्य था भारतीय अर्थव्यवस्था को बंद और नियंत्रित व्यवस्था से मुक्त कर, खुली प्रतिस्पर्धात्मक वैश्विक अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर करना।

अध्ययन के उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारत में वैश्वीकरण की प्रक्रिया और उसके व्यापक आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करना है। विशेष रूप से यह शोध यह समझने का प्रयास करता है कि 1991 के बाद लागू उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीतियों ने भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना, उत्पादन प्रणाली, विदेशी निवेश, व्यापार संतुलन, रोजगार के अवसरों तथा सामाजिक–आर्थिक असमानताओं को किस प्रकार प्रभावित किया। इसके अतिरिक्त, अध्ययन का उद्देश्य यह भी है कि वैश्वीकरण से प्राप्त लाभों और उससे उत्पन्न चुनौतियों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाए, जिससे यह निर्धारित किया जा सके कि यह प्रक्रिया भारत के समावेशी और सतत आर्थिक विकास में कितनी सहायक सिद्ध हुई है।

अध्ययन की कार्यप्रणाली – यह अध्ययन मुख्यत: वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें विभिन्न द्वितीयक स्रोतों जैसे भारत सरकार के आर्थिक सर्वेक्षण, नीति आयोग, भारतीय रिजर्व बैंक, विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, और वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय की रिपोर्टों से प्राप्त आँकड़ों का उपयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त, संबंधित शोध पत्रों, पुस्तकों और पत्रिकाओं का भी अध्ययन किया गया है। अध्ययन में 1991 से 2010 की अवधि को आधार बनाते हुए वैश्वीकरण के आर्थिक, सामाजिक और नीतिगत प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। एकत्रित आँकड़ों को तुलनात्मक और प्रवृत्ति विश्लेषण की विधियों से व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है ताकि भारत की अर्थव्यवस्था पर वैश्वीकरण के वास्तविक प्रभावों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया जा सके।

भारत में वैश्वीकरण की पृष्ठभूमि – स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने आत्मनिर्भरता और समाजवादी मिश्रित अर्थव्यवस्था की नीति अपनाई, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र की प्रमुख भूमिका थी। परंतु 1980 के दशक के अंत तक देश गंभीर आर्थिक संकट में फँस गया विदेशी मुद्रा भंडार घटकर केवल कुछ सप्ताह के आयात के बराबर रह गया था और राजकोषीय घाटा तेजी से बढ़ने लगा था। इस संकट से उबरने के लिए भारत ने 1991 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक की सहायता ली तथा उनकी शर्तों के तहत नई आर्थिक नीति लागू की। इस नीति के तीन प्रमुख स्तंभ उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण थे। इसी के साथ भारत ने अपने व्यापार, निवेश और औद्योगिक नीतियों को विश्व बाजार के अनुरूप ढालना प्रारंभ किया। 1991 को इस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था में वैश्वीकरण की प्रक्रिया की औपचारिक शुरुआत माना जाता है, जिसने देश को बंद अर्थव्यवस्था से एक खुले और प्रतिस्पर्धी वैश्विक आर्थिक ढाँचे की ओर अग्रसर किया।

भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्वीकरण के प्रभाव– वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षैत्रों पर व्यापक प्रभाव पडा जिसे निम्न बिन्दूओं के अर्न्तगत बतलाया जा सकता है।

1. **औद्योगिक क्षेत्र पर प्रभाव –** वैश्वीकरण का भारतीय औद्योगिक क्षेत्र पर गहरा और बहुआयामी प्रभाव पड़ा है। 1991 के बाद जब भारत ने विदेशी निवेश और तकनीकी सहयोग के लिए अपने द्वार खोले, तो देश में बहुराष्ट्रीय कंपनियों का आगमन तेजी से बढ़ा। इससे औद्योगिक उत्पादन, प्रौद्योगिकी और प्रबंधन में आधुनिकता आई। सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार, ऑटोमोबाइल, इलेक्ट्रॉनिक्स, और उपभोक्ता वस्तुओं के क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति हुई। इससे औद्योगिक क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा और दक्षता दोनों बढ़ीं। हालांकि, छोटे और मध्यम उद्योगों को इस प्रतिस्पर्धा से कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, क्योंकि वे पूँजी, तकनीक और विपणन के मामले में

* अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत
** अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

पिछड़ गए। इस प्रकार वैश्वीकरण ने जहाँ भारत के औद्योगिक क्षेत्र को आधुनिक और विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाया, वहीं असमान औद्योगिक विकास और क्षेत्रीय विषमता जैसी नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न कीं।

2. कृषि क्षेत्र पर प्रभाव – वैश्वीकरण का भारतीय कृषि क्षेत्र पर मिला-जुला प्रभाव देखा गया है। एक ओर इसने कृषि को अंतरराष्ट्रीय बाजार से जोड़ा, जिससे बासमती चावल, मसालों, फलों और फूलों जैसे उत्पादों के निर्यात में वृद्धि हुई और किसानों को वैश्विक बाजारों तक पहुँच मिली। दूसरी ओर, विश्व व्यापार संगठन के समझौतों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रभाव ने भारतीय किसानों के लिए प्रतिस्पर्धा को कठिन बना दिया। उर्वरक, बीज और कीटनाशक जैसी आवश्यक वस्तुओं पर विदेशी कंपनियों का नियंत्रण बढ़ा, जिससे उत्पादन लागत में वृद्धि हुई। मूल्य अस्थिरता और बाजार की अनिश्चितता के कारण किसानों की आय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इसके अतिरिक्त, कृषि का व्यावसायीकरण तो बढ़ा, लेकिन स्थायित्व और पारंपरिक फसलों की विविधता में कमी आई। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने जहाँ भारतीय कृषि को अंतरराष्ट्रीय अवसर प्रदान किए, वहीं उसे आर्थिक जोखिमों और सामाजिक असुरक्षाओं के प्रति अधिक संवेदनशील भी बना दिया।

3. सेवा क्षेत्र पर प्रभाव – वैश्वीकरण ने भारतीय सेवा क्षेत्र को अभूतपूर्व गति प्रदान की है, जिससे यह देश की आर्थिक वृद्धि का प्रमुख आधार बन गया। 1991 के बाद सूचना प्रौद्योगिकी , बिजनेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग, वित्तीय सेवाएँ, दूरसंचार, पर्यटन और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में विदेशी निवेश और अंतरराष्ट्रीय सहयोग में तीव्र वृद्धि हुई। भारत विश्व स्तर पर सॉफ्टवेयर निर्यात का प्रमुख केंद्र बन गया, और बेंगलुरु, हैदराबाद, पुणे, गुड़गाँव जैसे शहर वैश्विक आईटी हब के रूप में विकसित हुए। सेवा क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद में योगदान बढ़कर काफी अधिक हो गया है। इससे शहरी रोजगार और आय के अवसरों में वृद्धि हुई, लेकिन ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच डिजिटल असमानता भी बढ़ी। कुल मिलाकर, वैश्वीकरण ने सेवा क्षेत्र को प्रतिस्पर्धात्मक, तकनीकी रूप से सक्षम और विश्व-स्तरीय बनाया, किंतु इसके लाभ समान रूप से सभी वर्गों तक नहीं पहुँच सका है।

4. विदेशी निवेश और व्यापार पर प्रभाव – वैश्वीकरण के पश्चात भारत में विदेशी निवेश और अंतरराष्ट्रीय व्यापार में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। 1991 में जहाँ प्रत्यक्ष विदेशी निवेश मात्र 129 मिलियन डॉलर था, वहीं 2010 तक यह बढ़कर लगभग 21 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया इस अवधि में व्यापार नीति को उदार बनाते हुए शुल्कों में कमी की गई, निर्यात प्रोत्साहन योजनाएँ शुरू की गईं, और भारतीय उद्योगों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार किया गया। इसके परिणामस्वरूप भारत का विदेशी व्यापार जीडीपी का काफी बडा हिस्सा बन गया। हालाँकि, बढ़ते आयात और चीन जैसे देशों के साथ व्यापार घाटा एक गंभीर चुनौती बना हुआ है। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने भारत को विश्व व्यापार प्रणाली से गहराई से जोड़ा, परंतु साथ ही व्यापार असंतुलन और निर्भरता की समस्याएँ भी उत्पन्न कीं।

5. रोजगार और श्रम बाजार पर प्रभाव – वैश्वीकरण का भारतीय रोजगार संरचना और श्रम बाजार पर गहरा प्रभाव पड़ा है। उदारीकरण के बाद सेवा क्षेत्र, विशेषकर सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार, बैंकिंग और खुदरा व्यापार में रोजगार के नए अवसर उत्पन्न हुए। कुशल और शिक्षित युवाओं के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्य करने की संभावनाएँ बढ़ीं। दूसरी ओर, पारंपरिक उद्योगों, हस्तशिल्प और असंगठित क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धा बढ़ने से रोजगार अस्थिर हुआ। 'गिग इकॉनॉमी' और अनुबंध आधारित नौकरियों का चलन बढ़ा, जिससे स्थायी रोजगार और सामाजिक सुरक्षा में कमी आई। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि पर निर्भर श्रमिकों को वैकल्पिक रोजगार के पर्याप्त अवसर नहीं मिल सके। परिणामस्वरूप, शहरी-ग्रामीण तथा कुशल-अकुशल श्रमिकों के बीच असमानता में वृद्धि हुई। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने रोजगार के क्षेत्र में गुणवत्ता और कौशल की माँग को तो बढ़ाया, किंतु समान और स्थायी रोजगार उपलब्ध कराने की चुनौती भी सामने रखी।

6. सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव – वैश्वीकरण ने भारतीय समाज और संस्कृति पर गहरा प्रभाव डाला है। एक ओर इसने संचार, सूचना और शिक्षा के माध्यम से भारतीय समाज को विश्व समुदाय से जोड़ा, जिससे लोगों की सोच, जीवनशैली और अवसरों का दायरा विस्तृत हुआ। आधुनिक तकनीक, इंटरनेट और वैश्विक मीडिया के प्रसार ने युवाओं को अंतरराष्ट्रीय संस्कृति, फैशन और उपभोक्ता मूल्यों से परिचित कराया। दूसरी ओर, पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से उपभोक्तावाद और भोगवादी प्रवृत्तियाँ बढ़ीं, जिससे पारंपरिक सामाजिक मूल्यों, परिवार व्यवस्था और स्थानीय संस्कृतियों पर दबाव पड़ा। शहरी और ग्रामीण समाज के बीच सांस्कृतिक अंतर गहराने लगा। यद्यपि वैश्वीकरण ने महिलाओं की भागीदारी, शिक्षा और सामाजिक चेतना में सकारात्मक परिवर्तन लाया, फिर भी यह सांस्कृतिक एकरूपता और स्थानीय परंपराओं के क्षरण की चिंता भी उत्पन्न करता है। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने भारतीय समाज को अधिक खुला और आधुनिक बनाया, किंतु उसकी सांस्कृतिक विविधता को नई चुनौतियों के समक्ष खड़ा कर दिया।

7. आय असमानता और क्षेत्रीय विषमता – वैश्वीकरण के दौर में भारत में आय असमानता और क्षेत्रीय विषमता में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है। आर्थिक सुधारों और बाजारोन्मुख नीतियों ने शहरी क्षेत्रों, विशेषकर महानगरों को तीव्र विकास की दिशा में अग्रसर किया, जबकि ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों की प्रगति अपेक्षाकृत धीमी रही। महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक और तमिलनाडु जैसे औद्योगिक राज्य वैश्वीकरण के लाभों का केंद्र बने, वहीं बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश और ओडिशा जैसे राज्य पीछे रह गए। यह असंतुलन न केवल आर्थिक अवसरों में असमानता को दर्शाता है, बल्कि सामाजिक तनाव और प्रवासन की समस्या को भी बढ़ाता है। अत: स्पष्ट है कि वैश्वीकरण ने जहाँ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को गति दी, वहीं क्षेत्रीय विकास में गहराती असमानताओं की चुनौती भी प्रस्तुत की।

वैश्वीकरण के सकारात्मक प्रभाव – वैश्वीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था को अनेक सकारात्मक दिशा-निर्देश और अवसर प्रदान किए हैं। 1991 के बाद भारत की आर्थिक वृद्धि दर में निरंतर सुधार हुआ, जिससे देश विश्व की सबसे तेजी से विकसित होती अर्थव्यवस्थाओं में शामिल हुआ। विदेशी निवेश, तकनीकी हस्तांतरण और अंतरराष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि से औद्योगिक उत्पादन और प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ी। सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार और सेवा क्षेत्र ने अभूतपूर्व प्रगति की, जिससे लाखों नए रोजगार सृजित हुए। उपभोक्ताओं को उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद और सेवाएँ सुलभ हुईं। विदेशी मुद्रा भंडार में उल्लेखनीय वृद्धि हुई और भारत की वैश्विक प्रतिष्ठा मजबूत हुई। इसके अतिरिक्त, वैश्वीकरण ने शिक्षा, विज्ञान और नवाचार को प्रोत्साहित किया, जिससे भारतीय प्रतिभाएँ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना सकीं। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने भारत को विश्व अर्थव्यवस्था का एक प्रभावशाली और सशक्त सहभागी बनने का अवसर प्रदान किया।

वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभाव – वैश्वीकरण के अनेक लाभों के साथ-साथ इसके कुछ नकारात्मक प्रभाव भी भारतीय अर्थव्यवस्था पर

गहराई से देखे गए हैं। विदेशी कंपनियों की प्रतिस्पर्धा के कारण लघु और कुटीर उद्योगों को अस्तित्व संकट का सामना करना पड़ा, जिससे पारंपरिक रोजगार के अवसर घटे। कृषि क्षेत्र में उत्पादन लागत बढ़ने और बाजार मूल्य में अस्थिरता के कारण किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर हुई। शहरी क्षेत्रों में समृद्ध वर्ग की आय तो बढ़ी, परंतु ग्रामीण और गरीब वर्ग पिछड़ता गया, जिससे आय असमानता में तीव्र वृद्धि हुई। वैश्वीकरण ने उपभोक्तावाद और भौतिकवादी प्रवृत्तियों को बढ़ावा दिया, जिससे सामाजिक मूल्यों और पर्यावरणीय संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। साथ ही, अस्थायी और अनुबंध आधारित रोजगार के कारण श्रमिकों की सुरक्षा और स्थिरता में कमी आई। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने जहाँ विकास की गति बढ़ाई, वहीं सामाजिक असमानता, सांस्कृतिक क्षरण और आर्थिक निर्भरता जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न कीं।

निष्कर्ष – वैश्वीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था को नई दिशा और गति प्रदान की है। इसके परिणामस्वरूप भारत ने विश्व बाजार में अपनी एक मजबूत पहचान बनाई और आर्थिक विकास, तकनीकी नवाचार, तथा विदेशी निवेश के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की। परंतु इसके साथ ही, इस प्रक्रिया ने असमानता, बेरोजगारी, और पारंपरिक उद्योगों के ह्रास जैसी गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न कीं। जहाँ एक ओर शहरी क्षेत्रों और उच्च कौशल वाले वर्ग को वैश्वीकरण के लाभ प्राप्त हुए, वहीं ग्रामीण एवं निम्न आय वर्ग इनसे वंचित रह गए। अत: यह आवश्यक है कि भारत 'संतुलित वैश्वीकरण' की नीति अपनाए जिसमें विकास के लाभ समाज के सभी वर्गों तक समान रूप से पहुँचें, स्थानीय उत्पादन और रोजगार को प्रोत्साहन मिले, तथा सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संतुलन के सिद्धांतों को प्राथमिकता दी जाए। तभी वैश्वीकरण वास्तविक अर्थों में भारत के समग्र और सतत आर्थिक विकास का माध्यम बन सकेगा।

सुझाव – वैश्वीकरण के प्रभावों को अधिक संतुलित और समावेशी बनाने के लिए आवश्यक है कि भारत कुछ ठोस नीतिगत कदम उठाए। सबसे पहले, ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में रोजगार सृजन तथा कौशल विकास पर विशेष ध्यान दिया जाए ताकि वैश्विक अर्थव्यवस्था के लाभ केवल शहरी वर्ग तक सीमित न रहें। लघु, कुटीर और कृषि–आधारित उद्योगों को तकनीकी और वित्तीय सहायता देकर उन्हें वैश्विक प्रतिस्पर्धा के योग्य बनाया जाए। सरकार को शिक्षा प्रणाली में तकनीकी और व्यावसायिक प्रशिक्षण को अधिक स्थान देना चाहिए ताकि युवाओं को बदलते रोजगार बाजार के अनुरूप तैयार किया जा सके। साथ ही, पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक सुरक्षा को आर्थिक नीतियों का अभिन्न अंग बनाया जाए। डिजिटल तकनीक के माध्यम से डिजिटल समावेशन को बढ़ावा दिया जाए ताकि ग्रामीण भारत भी वैश्विक विकास की धारा में समान रूप से भागीदारी कर सके। इस प्रकार, संतुलित नीतियों के माध्यम से वैश्वीकरण को भारत के समग्र और सतत विकास का साधन बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. भारत सरकार, आर्थिक सर्वेक्षण,विभिन्न वर्ष, वित्ता मंत्रालय, नई दिल्ली।
2. योजना आयोग के विभिन्न प्रकाशन ,भारत की पंचवर्षीय योजनाएँ (1951 से 2007), भारत सरकार, नई दिल्ली।
3. Government of India, (1991) Statement on Industrial Policy, Ministry of Industry, New Delhi.
4. Dr. Manmohan Singh (1993) Economic Reforms: Policies and Performance] Oxford University Press, New Delhi.
5. Dreze, Jean & Sen, Amartya (1995) India: Economic Development and Social Opportunity, Oxford University Press, New Delhi,
6. Joshi, Vijay & Little, I.M.D. (1996), India*s Economic Reforms (1991–2001), Oxford University Press, New Delhi.
7. World Bank (1997) India: Achievements and Challenges in Reducing Poverty, World Bank Report, Washington D.C.
8. Rangarajan, C. (2000) Structural Reforms in Indian Economy, Deep & Deep Publications, New Delhi.
9. Nayar, Baldev Raj (2001), Globalization and Nationalism: The Changing Balance in India*s Economic Policy (1950–2000]), Sage Publications, New Delhi.
10. Ahluwalia, Montek Singh (2002) Economic Reforms in India since 1991: Has Gradualism Worked Journal of Economic Perspectives Vol- 16 No- 3-
11. Bhagwati, Jagdish (2004), In Defense of Globalization, Oxford University Press, New York.
12. Frankel, Francine R. (2005) India's Political Economy (1947–2004) The Gradual Revolution] Oxford University Press, New Delhi-
13. Mishra, S.K. & Puri, V.K. (2008) Indian Economy: Its Development Experience, Himalaya Publishing House] Mumbai.

****

Profit with Purpose: The Rise of Sustainable Business Models

Dr. Ravindra Kumar Katewa* **Dr. Chandra Prakash Kulshreshtha****

Abstract - **Abstract:** Over the past three decades business thinking has shifted from viewing sustainability as a cost or compliance burden to treating it as a source of innovation, market differentiation and long-term value creation. This paper traces the intellectual and empirical evolution of "profit with purpose" business models from the triple bottom line and corporate social responsibility to Creating Shared Value, circular economy approaches and fully integrated sustainable business models. Drawing on seminal theoretical contributions and empirical studies up to 2017 and using firm-level and survey data (e.g., Unilever's brand performance, Nielsen consumer data, Management Science and McKinsey analyses), the paper synthesizes the mechanisms by which sustainability creates economic value, classifies archetypal sustainable business models, examines organizational enablers and constraints and assesses evidence on financial performance. The study concludes with implications for managers and policymakers and identifies productive avenues for future research.
Keywords: Sustainable business models, corporate sustainability, triple bottom line, creating shared value, circular economy, innovation, firm performance, consumer preferences.

Introduction - Sustainability has moved from the margins of corporate strategy into its mainstream. Once largely the preserve of non-profits and a few pioneering firms, environmental and social concerns are now embedded in strategic directives, investor screening, product design and core business models. Managers increasingly ask not whether sustainability is desirable but how it can be leveraged to create competitive advantage: how can firms do well while doing good in short, achieve profit with purpose?

This paper assembles and synthesizes the theoretical foundations, typologies and empirical evidence for sustainable business models as they stood in the literature and practice through 2017. It focuses on the mechanisms by which sustainability contributes to firm value, the different model archetypes firms deploy, organizational enablers and institutional drivers and the empirical findings on performance. The goal is to provide a single, cohesive treatment useful for researchers and practitioners seeking to understand the rise of sustainable business models and the evidence base for their financial and societal claims.

Theoretical foundations and intellectual lineage: Three intellectual streams underpin the contemporary discourse on sustainable business models.

Triple Bottom Line and stakeholder thinking: John Elkington's triple bottom line (people, planet, profit) provided an early and influential framing for integrating social and environmental goals into business performance measurement and strategy. TBL reframed corporate purpose beyond shareholder profit to include social equity and environmental stewardship, seeding debates about measurement, tradeoffs and integration.

Creating Shared Value: Porter and Kramer (2011) advanced Creating Shared Value (CSV), arguing that firms can reconceive products and markets, redefine productivity in the value chain, and build supportive industry clusters to simultaneously generate economic and social value. CSV shifted the debate toward embedding social purpose inside profit-seeking core activities rather than treating CSR as peripheral philanthropy. CSV has been influential in shaping managerial thinking about sustainable value creation.

Business model and innovation perspectives: Parallel to these normative frameworks, scholars began to analyze how sustainability requires changes to the components of a firm's business model value proposition, value chain architecture and revenue model thereby linking sustainability to business model innovation. Research by Boons and colleagues (2013) emphasized that sustainable innovation succeeds only when propositional, value chain and financial elements are reconfigured in concert.

Typology of sustainable business models: The literature and case practice reveal multiple archetypes. Below is a consolidated typology that captures distinct ways firms embed sustainability into value creation.

*Faculty Member, Dept of EAFM, Seth RNR Government College, Ramgarh Shekhawati (Sikar) (Raj.) INDIA
** Faculty Member, Dept of Business. Admn., Swami Vivekananda Government College, Khetri (Jhunjhunu) (Raj.) INDIA

Purpose-driven brand/mission models: Firms place sustainability at the core of brand identity and product proposition (e.g., Patagonia). These models often command premium pricing, engender strong customer loyalty, and trade lower volumes for higher margin and reputational capital.

Creating Shared Value models: CSV models (as described by Porter & Kramer) identify intersections between societal needs and firm capabilities (e.g., firms designing affordable healthcare, nutrition, or financial services) and monetize solutions that deliver measurable social benefits.

Resource-efficiency / operational models: Firms reduce costs and risks by improving resource efficiency and waste reduction across operations (energy, water, materials). Efficiency gains reduce variable costs and can become a source of competitive advantage (e.g., resource-efficient manufacturing).

Circular economy and product-life extension models: Circular models redesign product lifecycles to retain value (reuse, remanufacturing, take-back, leasing rather than selling). The circular economy reframes waste as a resource and can open new revenue streams (e.g., service/lease contracts). The Ellen MacArthur Foundation catalyzed attention to circular business models and the strategic opportunities they present.

Inclusive value chain and base-of-the-pyramid models: Firms restructure sourcing and supplier relations to include smallholders and disadvantaged communities, creating social impact while stabilizing supply and opening new market segments (e.g., sustainable sourcing programs).

Hybrid social enterprise and cross-subsidy models: Edges between for-profit and non-profit forms: firms use commercial activities to subsidize social programs or combine grant funding with commercial revenue to pursue a blended mission.

This typology is not mutually exclusive: many leading firms combine several archetypes (e.g., Unilever's sustainable brands combine purpose-driven positioning, supply-chain initiatives and operational efficiency).

Mechanisms linking sustainability to firm performance: Why and how does sustainability translate into economic value? Several mechanisms recur across empirical and conceptual studies:

1. Cost reduction and operational resilience — Resource efficiency and waste reduction lower input costs and buffer firms against commodity price volatility. (McKinsey evidence and corporate case studies document substantial savings from energy, materials and logistics improvements.)

2. Revenue growth via differentiated products and new markets — Sustainability appeals to value-conscious consumers and can access underserved market segments (CSV approaches create new demand). Consumer survey evidence indicates a growing willingness to pay for sustainable products.

3. Innovation and long-term competitiveness — Sustainability challenges catalyze process and product innovation, which can translate into new capabilities and first-mover advantages.

4. Reputation and risk reduction — Strong sustainability credentials reduce regulatory, litigation, and reputational risk, lowering cost of capital and protecting brand equity.

5. Employee engagement and human capital — Purposeful firms attract and retain talent, improving productivity and lowering turnover costs.

6. Access to capital and investor preference — Increasingly, investors consider ESG factors materially relevant; evidence by 2014–2016 showed growing investor attention to sustainability metrics and materiality.

These mechanisms often interact: for example, operational efficiency frees resources to invest in sustainable product innovation, which in turn strengthens reputation and customer loyalty.

Empirical evidence through 2017: A growing empirical literature encompassing firm-level matched sample studies, management case studies, consulting surveys and corporate disclosures attempted to quantify the relationship between sustainability and performance.

Firm-level performance studies: Eccles, Ioannou and Serafeim (2014) used matched samples to show that firms that voluntarily adopted robust sustainability practices exhibited different organizational processes (long-term orientation, integrated reporting) and delivered superior performance on multiple dimensions versus low-sustainability peers. Their work is often cited as foundational empirical support that sustainability correlates with better organizational outcomes.

Consulting and industry surveys: McKinsey's work ("Profits with Purpose") and other consultancy reports documented that sustainability could create substantial cost savings and new growth opportunities, and they provided frameworks to organize for sustainability to capture value. Such industry reports reinforced evidence from firm case studies that organizational design and strategy integration matter.

Consumer willingness to pay and market demand: Nielsen's 2015 Global Sustainability Report reported that 66% of global consumers claimed to be willing to pay more for sustainable brands a steady increase from prior years signaling a market demand pull for sustainable products. While survey intent does not equal behavior, these data supported managerial intuition that sustainability could be monetized through pricing and loyalty.

Corporates as proof points: Unilever and Patagonia: Unilever's Sustainable Living brands reportedly grew at twice the rate of other Unilever brands and accounted for half the company's growth in 2014, with continued faster growth into 2015 — a concrete corporate example of sustainability driving top-line performance when embedded in mainstream brands and product lines. ([Unilever][5]) Patagonia's long-standing culture and explicit environmental mission have been credited with strong brand loyalty and

premium positioning, though its strategy emphasizes mission over scaling at any cost.

Meta-analyses and caveats: While many studies report positive associations between sustainability practices and performance, causality is complex. Selection effects (successful firms can more easily adopt sustainability), context dependence (industry, country institutions) and potential tradeoffs (short-term costs, capital intensity) complicate generalization. The literature through 2017 emphasized the role of organizational change and alignment sustainability only pays off when integrated into strategy and operations rather than being a siloed activity.

Organizational enablers and constraints: Evidence and practitioner experience point to several recurring enablers:

1. Senior leadership commitment and purpose clarity. Clear purpose statements aligned with metrics and incentives drive integration.
2. Cross-functional integration. Sustainability must be embedded in product development, procurement, marketing and finance rather than siloed in CSR teams. McKinsey and HBR highlight organization design as critical.
3. Measurement and reporting. Integrated reporting, materiality analysis, and performance metrics enable accountability and investor communication. Eccles et al. stress how sustainability transforms processes.
4. Partnerships and ecosystem engagement. Addressing systemic social and environmental problems often requires multi-stakeholder partnerships (NGOs, governments, suppliers).
5. Business model experimentation and piloting. Firms that pilot new revenue models (leasing, take-back) and iterate fast learn the economics and consumer acceptance.
6. Constraints include regulatory uncertainty, misaligned short-term incentive structures (quarterly earnings pressure), measurement difficulties, and managerial capability gaps in systems thinking.

Policy and institutional context: The institutional environment shapes opportunities for sustainable business models. Regulatory frameworks (e.g., waste, emissions standards), public procurement policies, investor reporting requirements and consumer activism create both constraints and incentives. International initiatives and reports such as the Ellen MacArthur Foundation's circular economy framing and multi-stakeholder standards provided common language and frameworks that firms could adopt in strategy and design.

Data limitations and methodological considerations: This paper synthesizes a mixed body of evidence (surveys, company disclosures, matched sample academic studies, consultancy reports) rather than presenting new primary micro data. Key methodological cautions from the literature include:

Endogeneity and selection bias. Firms that adopt sustainability early may differ systematically from peers in unobserved ways (culture, capital access). Matched sample designs (Eccles et al.) help but cannot remove all bias.

Survey vs revealed preference. Consumer survey willingness-to-pay (e.g., Nielsen) may overstate actual behavior, though repeated survey trends are informative.

Time horizon. Many sustainability investments yield payoffs over longer horizons; short-term performance snapshots can mislead.

Heterogeneity. Industry, firm size and geography matter — results are not uniform across contexts.

Managerial implications: From the synthesis of theory and evidence up to 2017, several practical recommendations emerge:

1. Embed purpose in core strategy. Move beyond CSR project portfolios: redesign value propositions and revenue models so sustainability is central to what the firm offers the market (CSV approach).
2. Organize for integration. Create structures, incentives and metrics that align sustainability goals with commercial KPIs; cross-functional teams and senior accountability are essential.
3. Experiment with business model innovation. Pilot circular, service and inclusive models to learn economics and customer behavior before scaling. The Ellen MacArthur Foundation and other frameworks offer design patterns to test.
4. Measure materiality and communicate. Use materiality assessments, integrated reporting and clear performance indicators to communicate value to investors and stakeholders and to guide resource allocation.
5. Leverage partnerships. Collaborate across sectors to address systemic constraints (e.g., infrastructure for take-back, smallholder training) that single firms cannot fix alone.

Directions for future research : By 2017 the field had matured from descriptive CSR studies toward deeper questions about business model architectures, the boundaries of firm responsibility, and how systemic transitions (e.g., circular economy scaling) occur. Productive research avenues include:

Causal identification- Use quasi-experimental designs and longitudinal data to isolate causal impact of sustainability on firm performance.

Business model micro-economics- Study unit economics of circular and service models across sectors to map where these models are viable.

Institutional variation- Examine how legal and cultural contexts moderate the profitability of sustainable models.

Investor behavior and financialization- Investigate how ESG materiality assessments affect cost of capital and valuation in different markets.

Scaling mechanisms- Research how firms and ecosystems scale sustainable models from niche to mainstream.

Conclusion: At the present time literature and practitioner

evidence portray a clear trajectory: sustainability is not merely a reputational add-on but increasingly a domain of strategic innovation that can generate cost savings, growth, resilience and brand value provided firms reconfigure business models and organizational processes to capture these advantages. Landmark conceptual contributions (triple bottom line, CSV) and empirical work (matched sample studies, corporate performance disclosures) show both the promise and the pitfalls: sustainability creates value when integrated, measured and aligned with incentives; it is not a guaranteed shortcut to profit. As firms continue to experiment with circular systems, inclusive supply chains and purpose-driven strategies, the most successful will be those that treat sustainability as a source of strategy rather than a compliance chore.

References:-

1. Elkington, J. Enter the Triple Bottom Line
2. Porter, M. E., & Kramer, M. R. (2011). Creating Shared Value. Harvard Business Review.
3. Boons, F., &Luedke-Freund, F. (2013). Business Models for Sustainable Innovation: State of the Art and Steps Towards a Research Agenda.
4. Eccles, R. G., Ioannou, I., & Serafeim, G. (2014). The Impact of Corporate Sustainability on Organizational Processes and Performance. Management Science.
5. Nielsen (2015). Global Sustainability Report — Consumer willingness to pay for sustainable brands (66% in 2015).
6. McKinsey & Company (2014). Profits with Purpose: How organizing for sustainability can benefit the bottom line.
7. Unilever (2014–2016). Sustainable Living Brands reports / Strategic Report 2015. Evidence of faster growth for sustainable brands
8. Ellen MacArthur Foundation (2012). Towards the Circular Economy

****

सुमेलित जोड़े एवं प्रकृति प्रेम

डॉ. चक्रपाणि उपाध्याय*

प्रस्तावना – वर्ष 2003 से 2006 तक दक्षिणी राजस्थान के आदिवासी समुदायों में नृवंशविज्ञान संबंधी शोध किया गया, ताकि हर्बलिस्ट चिकित्सकों की ज्ञान प्रणाली, आस्था और विश्वास, जीवन शैली और कार्य सिद्धांतों की तुलना गैर-हर्बलिस्ट चिकित्सकों से की जा सके। उन्हें सावधानीपूर्वक मिलान किए गए जोड़ों के रूप में चुना गया था, जिनमें से प्रत्येक जोड़े की जनसांख्यिकीय जानकारी लगभग समान थी।

आँकड़ा संग्रह – साक्षात्कार आमतौर पर मेवाड़ी, जो उस क्षेत्र की एक राजस्थानी बोली और आम बोलचाल की भाषा है, में, अभयारण्य में बोली जाने वाली विशेष भीली या अन्य आदिवासी बोलियों में आयोजित किए जाते थे। साक्षात्कारकर्ताओं को लिखित सर्वेक्षण प्रोटोकॉल से विचलित न होने के लिए प्रशिक्षित किया गया था, हालाँकि क्षेत्र की परिस्थितियों को देखते हुए कुछ भिन्नताएँ अपरिहार्य थीं।

इससे हमें 190-आइटम वाले एक सर्वेक्षण को विकसित करने और उसकी सार्थक व्याख्या करने के लिए आवश्यक अंतर्दृष्टि मिली, जिसका उपयोग हमारे सूचनादाताओं के प्रकृति के साथ संबंधों का आकलन करने के लिए किया गया था। आयु, लिंग, शिक्षा, जनजातीय संबद्धता और भूमि स्वामित्व जैसी बुनियादी जनसांख्यिकीय जानकारी के अलावा, हमने इस सर्वेक्षण का उपयोग अपने उत्तारदाताओं की जंगल पर आर्थिक निर्भरता, जंगली पौधों, जानवरों और प्रकृति की आत्माओं से उनके संबंध, और पर्यावरणीय मूल्यों व चिंताओं से संबंधित आँकड़े एकत्र करने के लिए किया।

सुमेलित जोड़े – इस लेख में, हम अपने मूल सर्वेक्षण के एक उप-नमूने, हर्बलिस्टों (जिन्हें गुनी या गुनीजन कहा जाता है) के उत्तारों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। हर्बलिस्टों को उन व्यक्तियों के रूप में परिभाषित किया गया था जो हमारे सर्वेक्षण में सूचीबद्ध 12 विशिष्ट हर्बल उपचारों में से कम से कम 4 के ज्ञान का दावा करते हैं, जिनमें पेट की खराबी और दस्त से लेकर बिच्छू के डंक और रेबीज के इलाज तक शामिल थे। इस लेख में, हमने 71 हर्बलिस्टों की तुलना 71 गैर-हर्बलिस्टों से की, जिनका मिलान आयु, लिंग, जनजाति, शिक्षा, निवास स्थान और आर्थिक स्थिति के आधार पर किया गया। इससे 71 सुमेलित जोड़ों या कुल 142 व्यक्तियों का नमूना आकार प्राप्त हुआ।

सांख्यिकीय विश्लेषणों ने सुमेलित जोड़ों को विश्लेषण की इकाई मानकर आदिवासी हर्बलिस्टों और गैर-हर्बलिस्टों की प्रतिक्रियाओं की तुलना की। इसका उद्देश्य हर्बलिस्ट की स्थिति के प्रभाव की जाँच करना था, साथ ही उन विभिन्न जनसांख्यिकीय विशेषताओं को नियंत्रित करना था जिन पर हर्बलिस्ट चिकित्सक गैर-हर्बलिस्टों से भिन्न होते हैं।

परिणाम – हर्बलिस्टों और उनके सुमेलित जोड़ों के बीच सबसे महत्वपूर्ण अंतर जंगली पौधों से उनका संबंध है। हर्बलिस्ट, परिभाषा के अनुसार, पौधों की उपचार शक्ति को समझते हैं। हर्बलिस्टों द्वारा औषधीय जड़ी-बूटियों के सामान्य ज्ञान के साथ-साथ विशिष्ट हर्बल उपचारों से संबंधित प्रश्नों पर विशेष ज्ञान की रिपोर्ट करने की संभावना अधिक थी।

हर्बलिस्टों द्वारा अपने गैर-हर्बलिस्ट जोड़ों की तुलना में यह सोचने की संभावना अधिक थी कि पहाड़ सोचता है, मनुष्यों की तरह राय रखता है, और मनुष्यों से अधिक बुद्धिमान है। वे यह भी मानने की अधिक संभावना रखते थे कि खनन से पहाड़ को दर्द होता है, नदियों में कचरा और अपशिष्ट फेंकने से उन्हें परेशानी होती है, और यह कि वनाच्छादित पहाड़ संपत्ति से ज्यादा माता-पिता जैसा है।

लकड़बग्घा, भालू, साही और मृग सहित सभी जानवरों को देखे जाने की सूचना देने में हर्बलिस्टों ने अपने गैर-हर्बलिस्ट जोड़ों को पीछे छोड़ दिया। इन जंगली जानवरों के निशान देखने या सुनने की सूचना देने की संभावना भी उनमें अधिक थीकृउनके पदचिह्न, पंजों के निशान, पेड़ों पर पंजों के निशान (तेंदुए), उनकी पुकारें और चिल्लाहट, उनके मल और उनके गिरे हुए काँटों (साही) की सूचना देने की संभावना भी उनमें अधिक थी।

हर्बलिस्ट वन्यजीवों की जरूरतों और आदतों के बारे में अधिक जानकार थे। वे जंगली जानवरों की पूजा करने और उनसे संदेश प्राप्त करने की अधिक संभावना रखते थे। गुनी हर्बलिस्टों ने जंगल में आराम और सहजता का अनुभव किया और गैर-हर्बलिस्टों की तुलना में जंगल से कम डरते थे। हर्बलिस्टों ने शिकारी वन्यजीवों की रक्षा के लिए अधिक प्रतिबद्धता व्यक्त की।

हर्बलिस्टों ने पेड़ लगाने, पानी बचाने, वन अपराध की सूचना आरएफडी को देने जैसी संरक्षण प्रथाओं पर मिलान वाली जोड़ी के सदस्यों की तुलना में अधिक पर्यावरण-समर्थक प्रतिक्रियाएँ दीं। उनके कार्यों ने राज्य के संरक्षण एजेंडे के साथ संरेखण का संकेत दिया, जैसे आरएफडी कर्मचारियों के साथ सहयोग करना, वन्यजीव जनगणना में मदद करना और वन-संबंधी प्रशिक्षण में भाग लेना।

हर्बलिस्ट आमतौर पर गैर-हर्बलिस्टों की तुलना में गरीब थे। उनके पास साधारण घर, कम खेत, कम मवेशी या मुर्गियाँ थीं, और ज्यादातर के पास बीपीएल कार्ड था।

निष्कर्ष – फुलवारी के हर्बलिस्ट उस प्रकृति की रक्षा करते हैं जो उनके अपने अस्तित्व और कल्याण का आधार है और साथ ही उसमें पूरी तरह से घुली-मिली भी है। या, जैसा कि एक वृद्ध आदिवासी महिला ने स्पष्ट रूप से

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

कहा,'जब जंगल सूखता है, तो हमारे अपने शरीर भी सूख जाते हैं।' समय के साथ, हर्बलिस्टों का पहाड़ों से घनिष्ठ संबंधकृघंटों–घंटों की ट्रैकिंग, सावधानीपूर्वक औषधीय जड़ी–बूटियाँ और अन्य वनोपज इकट्ठा करना, और इस प्रक्रिया में सभी प्रकार के वन्यजीवों और प्राकृतिक अजूबों का सामनाकृने प्राकृतिक दुनिया के साथ एक विशेष गहराई और व्यापक बंधन स्थापित किया है। हर्बलिस्टों की वन संसाधनों पर आर्थिक निर्भरता, जीववादी विश्वदृष्टि, पौधों और वन पारिस्थितिकी की गहरी समझ, पेशेवर जनादेश और इस प्रकार जंगली जड़ों और जड़ी–बूटियों से दूसरों को ठीक करने की पहचान, और वन्यजीवों और जंगलों के साथ गहरे और स्थायी संबंध की भावना, कई स्तरों पर उनके लिए खुद को जंगलों से अलग करना मुश्किल बना देती है। इस प्रकार, हर्बलिस्टों के पर्यावरणीय विचार और व्यवहार को या तो अहंकारी या परोपकारी मानना तर्कसंगत नहीं हैरू ऐसी व्याख्या तभी सार्थक होती है जब किसी के व्यवहार का उद्देश्य स्वयं से काफी हद तक अलग और विशिष्ट माना जाता है, जो इस राजस्थानी संदर्भ में सच नहीं है। वास्तव में, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हर्बलिस्ट वन्यजीवों के प्रति कुछ खास तरह का व्यवहार नहीं करते, बल्कि उनके साथ एक साझा दुनिया में रहते हैं और साझा करते हैं।

आभार – लेखक स्नोडग्रास के नेतृत्व वाली व्यापक शोध टीम की सहायता के लिए आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने सुमेलित जोड़ों के साथ 4 वर्षों तक साक्षात्कार और अवलोकन किए। इस टीम के साथ काम करना एक मजेदार शोध अनुभव था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्नोडग्रास, जे.जी., शर्मा, एस.के., झाला, वाई.एस., लेसी, एम.जी., आडवाणी, एम., भार्गव, एन.के., उपाध्याय, सी. (2007)। स्वार्थ और परोपकारिता से परेरू एक भारतीय वन्यजीव अभयारण्य में हर्बलिस्ट और तेंदुआ भाई, वन्यजीवन के मानवीय आयाम, 12: 5, 375 –387.

****

बुंदेलखण्ड में अंग्रेजों का आगमन व नीतियाँ

डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख*

शोध सारांश – पेशवा तथा अप्पा साहब को संधि के तहत् घेरने के उपरांत मराठों से अंग्रेजों ने बुंदेलखण्ड हस्तगत कर लिया। इन बदली हुई परिस्थितियों और विदेशी शासकों का बुंदेलखण्ड वासियों ने प्रतिरोध नहीं किया क्योंकि वे शासकों के परिवर्तन को लेकर अभ्यस्त हो चुके थे पर यहाँ उन्होंने मराठा शासकों के कुशासन तथा इसके कारण पिण्डारियों द्वारा की जा रही लूटपाट से राहत को महसुस किया। बुंदेलखण्ड वासियों ने यहाँ इन विदेशी शासन से यह उम्मीद जरूर की कि अब ये नये प्रशासक उनकी जानमाल की रक्षा करेंगे और एक न्यायप्रिय शासन प्राणाली का आरंभ होगा, पर कालांतर में अंग्रेजी रवैये को लेकर रोष उत्पन्न होने लगा क्योंकि जनता द्वारा प्रशासनिक खामियों को बडी शिद्दत से महसूस किया गया।

प्रस्तावना – बुंदेलखण्ड का मराठा क्षेत्र अंग्रेजी सरकार को प्राप्त हो जाने के उपरांत वर्ष 1803 में अंग्रेजी सरकार द्वारा कैप्टन जॉन बैली को बुंदेलखण्ड का राजनीतिक एजेंट नियुक्त किया गया। इसने बुंदेलखण्ड में आते ही गैर मराठा राज्यों को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास किया। इस समय बुंदेलखण्ड के सभी छोटे बड़े राजाओं ने पतनोन्मुख मराठा सत्ता का त्याग कर नवेदित अंग्रेजी राजसत्ता से समझौता कर लिया।[1] अंग्रेजी सत्ता का खुले दिल से साथ देने के लिए सर्वप्रथम मराठों से रूष्ट बुंदेलखण्ड का भेदिया हिम्मत बहादुर आगे आया और अंग्रेजों को बुंदेलखण्ड में आगे बढ़ने में मार्गदर्शन देने के प्रस्ताव के साथ–साथ 1803 में अंग्रेज प्रतिनिधि ग्रेम मेर्सर से समझौता कर लिया। इसके अलावा बुंदेला राज्य में से चरखारी का राजा विजय बहादुर वह पहला शासक बना। जिसने अंग्रेजों के समक्ष आत्मसर्मपण करते हुए 1804 में संधि करके सनद प्राप्त की।

कालांतर में अंग्रेजी शासन द्वारा विजय बहादुर के प्राधिकृत क्षेत्रों की पुष्टि भी कर दी गई।[2] कंपनी सरकार द्वारा बुंदेलखण्ड में वर्ष 1803 से 1823 तक बुंदेलखड के सभी मराठा, शासकों, गैर मराठा राजाओं व जागीरदारों से अधीनता सूचक एवं वफादारी का इकरार कर लेने पर यहाँ अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर लिया गया। दूसरी ओर आंतरिक व बाहरी मामलों में उलझे यहाँ के राजाओं व जागीरदारों ने अपनी स्थिति को बनाए रखने व रक्षा की गारंटी के लिए बिना भूत भविष्य सोचे जो शर्ते अंग्रेजी सरकार ने उनके सामने रखी उन्हें स्वीकार कर लिया तथा कालांतर में अपनी यथास्थिति बनायें रखने के लालच में अपनी स्वतंत्रता और सार्वभौमिकता को अर्पण कर दिया।

अंग्रेजी गर्वनर लार्ड हेस्टिंग्ज ने अपने कार्यकाल में देशी राजाओं को लेकर अंग्रेजी नीति में परिवर्तन किया। उसके द्वारा अपनाई गई नीति को अधीनस्थ पृथककरण नीति कहा जाता है। इस नई नीति के द्वारा कंपनी सरकार जो पूर्व में राजाओं को सहयोग देती थी अब आदेश देने की स्थिति में आ गई। इन बदली हुई परिस्थिति में अब कंपनी सरकार द्वारा अपने सर्वोच्चता को प्रदर्शित करते हुए देशी राजाओं से इकरार किए गए।[3] इस नई नीति के तहत् जो इकरार किए गए उसमें मुख्य रूप से निम्न बिंदुओं को रखा गया जिसके अनुसार राजा अपने व्यय पर राज्य में एक सेना रखेगा जो आवश्यकता पड़ने पर कंपनी सरकार को सहायता देगी। राजा द्वारा किसी अन्य राजा से अनुबंध करना प्रतिबंधित कर दिया गया एवं इकरार करने के उपरांत राजा कंपनी सरकार के प्रति निष्ठावान रहेगा।

लार्ड एमहर्स्ट, लार्ड विलियम बैंटिक, सर चार्ल्स मेटकाफ, लार्ड आकालैण्ड आदि ने अपने कार्यकाल में अपनी सुविधानुसार देशी राज्यों के मामले में कभी हस्तक्षेप किया कभी अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया। उपरोक्त गर्वनरों में से वर्ष 1828 में आए गर्वनर जनरल लार्ड विलियम बैंटिक का कार्यकाल भारत के इतिहास में स्वतंत्रता व पाश्चात्यकरण की ओर मोड़ देने वाला साबित हुआ। अपने इन्हीं विचारों के साथ बैंटिक ने जनता के समक्ष तुलनात्मक सूत्र प्रारंभ किया जिसमें जनता अंग्रेजी व देशी शासन के मध्य अंतर को आंक सके। इस तरह की विभेदकारी नीति के माध्यम से अंग्रेजी सरकार ने देशी शासकों की आंतरिक व्यवस्थाओं पर अंगुली उठाकर साबित करने में सहायता देकर लाभ पहुँचाया परंतु कालांतर में इस नीति के परिणाम उनके लिए घातक साबित हुए। विलियम बैंटिक ने इसके अतिरिक्त अंग्रेजी प्रशासन को अधिक कुशल व जनहितकारी साबित करने की होढ में प्राचीन समय से चली आ रही भारतीय अर्थव्यवस्था पध्दति को भी तत्काल परिवर्तन कर दिया। भारत ग्राम प्रधान देश था और अभी तक यहाँ स्वशासन की पध्दति द्वारा ग्राम पंचायत के माध्यम से राज्य को अपना लगान मिलता रहता था और वह संतुष्ट हो जाता था, लेकिन लार्ड विलियम बैंटिक ने इस व्यवस्था में परिवर्तन कर अधिकार में लिए गए नयें जिलों में पहला काम आज्ञा पालन करवाने पर केन्द्रित करते हुयें भूमि का लगान नकदी में दिए जाने पर बल दिया। किसानों को इस परिवर्तित व्यवस्था से बहुत आघात लगा क्योंकि नकदी के रूप में उनके उत्पादनों का मूल्य तत्काल गिर गया। इस प्रकार एक निश्चित क्रम में उन पर बकाया लगान चढ़ता गया जिसका यह परिणाम हुआ कि वे लंबे समय तक चलने वाले दीवानी मामलों में उलझ गएं। इसके अतिरिक्त पट्टेदारी तथा भूमि सबंधी अधिकार भी हस्तांतरणीय

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) हाडारानी राजकीय महाविद्यालय, सलूम्बर, जिला उदयपुर (राज.) भारत

बना दिए गए।[4] लार्ड बैंटिक ने इस नीति के तहत् कर विमुक्त भूमि का अपहरण किया। इसी दौरान इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रांति ने भारत की दशा को और अधिक दिशा विहीन कर दिया। इस क्रांति के कारण अब अंग्रेजों को भारत में बनी सामग्री की इतनी आवष्यकता ना रही जितने की अपने माल को बाहर खपाने तथा कच्चे माल के आयात की।[5]

बुंदेलखण्ड के सागर नर्मदा क्षेत्र का इसी परिप्रेक्ष्य में 1834 में आर एम बर्ड ने दौरा किया और उनकी इस क्षेत्र पर की गई टिप्पणी से स्पष्ट हो जाता है कि भूमि के स्वामी विवशतापूर्वक संकट में डाले जाते थे और यदि कानूनी कार्यवाही कठोरता से लागू की जाती थी तो भूमिहीन हो जाते थे। अंग्रेजी शासनकाल के पहले दशक में और उसके बाद में इस क्षेत्र के बहुसंख्यक ताल्लुकेदार, ठाकुर और जमीनदार इसी का शिकार हुए थे।[6]

भारत में वर्ष 1837 में आए गर्वनर जनरल लार्ड आकालैण्ड ने अपनी विदेश नीति में हस्तक्षेप को हथियार बनाया, जिसका उसे फायदा होने के बजाए नुकसान अधिक हुआ। बहरहाल आकालैण्ड में भी साम्राज्यवादी पुट भरा हुआ था, उसने अपने विस्तार क्रम को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से देशी राजाओं द्वारा दत्तक लेने के अधिकार को अवैध घोषित कर दिया। बुंदेलखण्ड में इसका उदाहरण जालौन राज्य का प्राप्त होता है। जालौन में स्वर्गीय राजा बालाराव की विधवा लक्ष्मीबाई ने अल्पवयस्क राजा गोविंदराव की असामयिक मृत्यु हो जाने पर जालौन की गद्दी पर आसीन करने हेतु एक दत्तक पुत्र लेना चाहा परंतु गर्वनर जनरल आकालैण्ड ने उसकी एक न सुनी और जालौन राज्य का विलय अंग्रेजी राज्य में कर लिया।[7]

बुंदेलखण्ड में इसी परिप्रेक्ष्य में दूसरा उदाहरण मौधा राज्य का है। मौधा राज्य के शासक हिम्मत बहादुर का 1804 में स्वर्गवास हो गया उसके उपरांत उसकी विधवा पत्नि भी चल बसी ओर वर्ष 1840 में उसके पुत्र नरेन्द्र गिरी का भी निधन हो जाने पर कंपनी सरकार द्वारा उत्तराधिकारी का आभाव बतलाकर मौधा राज्य का विलय भी कंपनी राज्य में कर लिया गया।[8]

भारत में डलहौली का कार्यकाल साम्राज्य पिपास को पूरा करने में चरम पर पहुँच गया। उसके राज्यों की समाप्ति और जब्ती के सिध्दांत का अनाधिकृत उपयोग करते हुए डाक्ट्रिन ऑफ लैप्स के कुचक्र से संतारा, जैतपुर, संभलपुर, नागपुर तथा झाँसी राज्य अंग्रेजी अधिकार में कर लिए।[9]

यहाँ अंग्रेजों की नीति का उल्लेख करते समय यह बताना आवश्यक हो जाता है कि अंग्रेजों ने बुंदेलखण्ड में अपना राज्य स्थापित करने के उपरांत ओरछा, दतिया और समथर राज्यों से समानता के स्तर पर मित्रता संधियां की थीं इसके अतिरिक्त बुंदेलखण्ड के शेष राज्य और जागीरें सनदी रखी गई। प्राय: वह राज्य जो मराठों के अधीन से हो चुके थे। उनको सनद देकर अंग्रेजी सरकार ने बहाल किया था। वे ही सनदी कहलाएं। बुंदेलखण्ड में सरकार द्वारा छोटी जागीरों को भी उनके स्वतत्वों के विचार अथवा शांति स्थापना करने हेतु सनद देकर बहाल रखा था, परंतु सनद व संधि राज्यों में अंतर था। संधि वाले राज्य का सनदी वाले राज्यों की तुलना में अधिक मान व अधिकार था।[10] प्रत्येक स्वतंत्र राज्य अपने प्रबंधन के लिए आवश्यकतानुसार सेना रखता था, किसी-किसी राज्य में इंपीरियल सेना भी थी। जिसका प्रबंध अंग्रेजी नियमानुसार करना होता था। अंग्रेजी सरकार द्वारा जिलों पर नियंत्रण रखने के लियें छावनियों का गठन नौगाँव, सागर, झाँसी एवं जबलपुर में किया था, जिसमें तैनात सेनाएं अपने क्षेत्रों में सहायता देने के लिए सदैव तत्पर रहती थी।[11] इसके अतिरिक्त देशी राजाओं पर निगरानी रखने के लिए स्थानीय पोलिटिकन अथवा नैतिक अफसरों को नियुक्त किया गया था। इस तरह बुंदेलखण्ड का प्रषासनिक पुर्नगठन करने के उपरांत अंग्रेजी शासन का यहाँ आरंभ हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्नर ली, प्रोटेक्टिड प्रिंसिस ऑफ इंडिया, लंदन, पृष्ठ क्रमांक - 99
2. एचीसन सी.यू, क्लेक्शन ऑफ ट्रीटीज एंगेजमेन्टस एण्ड सनदूस, जिल्द पाँच, पृष्ठ क्रमांक - 132
3. वार्नर ली, प्रोटेक्टिड प्रिंसिस ऑफ इंडिया, लंदन, पृष्ठ क्रमांक - 94-95
4. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान भोपाल, पृष्ठ क्रमांक - 35
5. मजूमदार एण्ड राय चौधरी, एन एडवांस हिस्ट्री ऑफ इंडिया, लंदन, 1950, पृष्ठ क्रमांक - 141
6. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान भोपाल, पृष्ठ क्रमांक - 35
7. एचीसन सी.यू, क्लेक्शन ऑफ ट्रीटीज एंगेजमेन्टस एण्ड सनदूस, जिल्द पाँच, पृष्ठ क्रमांक - 141
8. त्रिपाठी डॉ काशीप्रसाद, बुंदेलखण्ड का वृहद इतिहास, (राजतंत्र से जनतंत्र), 2006, समय प्रकाशन, नईदिल्ली, पृष्ठ क्रमांक - 227
9. रिजवी सैद अतहर अब्बास, स्वतंत्र, दिल्ली, 1857, सूचना विभाग लखनउ, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ क्रमांक - 17
10. सिंह दिवान प्रतिपाल, बुंदेलखण्ड का इतिहास, भाग-1, छतरपुर, 1929, पृष्ठ क्रमांक - 240
11. सिंह दिवान प्रतिपाल, बुंदेलखण्ड का इतिहास, भाग-1, छतरपुर, 1929, पृष्ठ क्रमांक - 242

****

Effect of Agnihotra in A Yagya on High Energy Photon Intensity

Dr. Nira Talesra*

Introduction - The presence of high energy photons in atmospheric gamma rays, soft and hard X- rays can be detected using a scintillation detector. These are integral components of secondary cosmic rays produced by interaction of primary cosmic rays at the top of the troposphere.The characteristic spectrum of secondary photons is a signature of the abundance of the anthropologically intruded gases in the troposphere. The analysis of such characteristic spectrum reveals the details of these intruded gases.This technique is recognized as the recent tool to identify the abundance percentage of intruded gases in the lower atmosphere.

The Lakshchandi Yagya: A sacred Hindu worship ritual is to conduct yagya. The process enlists creation of a yagyakund in which the sacred fire is lit.Various roots, woods and herbs are offered to the agnikund with chanting of holy mantras [Sharma 2010]. A highly regarded type of Yagya is the Lakshchandi Yagya, performed by a large troupe of rishis (priests) over several days. It has one large kund, or typically several medium sized yagyakunds, lit in tandem. A Lakshchandiyagya was performed by a community of godly peoples over a massive scale atMahakaleshwar in Udaipur in 2011 and on a smaller scale in 2015near Fateh Sagar Lake. It was used,on the side, to find the constituent gases evolved during any Yagya and their impact on environmental factors. The results of the first study (2011) were confirmed by the second one (2015).

Agnikund (Altar): Burning of roots and herbs in the fire of Agnihotra contributes copious gas components in the lower atmosphere as pollutants. The gas components spread quickly in the troposphere because of the high temperature attained by them when roots and herbs are burnt with fats of high calorific values during Yagya.

The scientific dimensions involved in the Yagya are (i)reducing air pollution in environment, (ii) intruding gaseous phase of desired substances for specific benefits, and (iii) producing buoyancy and other aerodynamic effects for aerosols.

Of the various substances, added during homa, collectively called Samidha, wood contributes much of the calorific value. The most preferred woods are the chandan – sandal wood (Santalum album), palash (Butea frondosa) and aam – mango (Magnifera indica).

In addition to Samidha, various Havana-Samagrimay be offered in Yagna. They are of the following types:

1. Odoriferous substances to freshen up the environment and create positive effects, such as saffron, musk, jaiphul, javitri, camphor, cardamom and agar.
2. Healthy constituents that facilitate evolution of gas components like ghee (fat), til (Sesamum Indicum), milk, dry fruits, wheat, rice, barley, green gram, etc.
3. Sweet substances that create fumes in the surroundings, which stop pathogenic intrusion and preserve healthy climate. These consist of sugar, dried grapes, honey and dates.

Medicinal herbs,may be added, with other substances, for medical requirement. Some commonly medicinal herbs used in Yagya are giloya (Tinospora Cordifolia), brahmi (Bacopa Monnieri), shankhpushpi (ConvolvulePluricaulis), nagkesar (Messua Shoed), mulhati (Glycyrrhixaglabra Bois), red chandan (Pterocarpus Santalinus), baheda (TerminaliBelrica), sonth (Zingiber Officinale), harad (Terminalia Chebula), nagarmotha (Cyperus Rotundus), chirayta (Swertia Chirayta) [Singh 2002].

Experimental Set Up: To detect the low wavelength, high frequency atmospheric x-rays, a scintillation detector – Canberra make –was installed at about 50 feet from the site of yagya. The cosmic ray flux was incident on a NaI (Tl) crystal, 50 mm thick and 44.5 mm in diameter, optically coupled with photo multiplier tube (PMT) Model 2007P. The integral line was connected to a high tension voltage supply model 3102D of 1100 Volts DC. The negative signal of about 0.5 Volts was amplified to 5 Volts positive pulse using negative polarity of spectroscopic amplifier Model 2022. The signal was fed to multi channelanalyzer for acquisition and analysis. It has multi channel buffer of all 1024 energy channels. The entire integrated assembly was put into 2.5" lead shield with small opening allowing the pointed secondary gamma rays and disallowing the earth radioactivity background. This counter system was used to collect the counts as a function of time. The GENIE 2000 software was used for data acquisition, recording and

*Department of Physics, Government College, Nathdwara (Raj.) INDIA

analysis.Data before yagya, during yagya and after yagya were recorded and analysed.

Result: Total counts of high energy photons, were recorded on each day for one hour of observation. The total counts per hour were high before the start of yagya. As the yagya progressed, the total count of high energy photons suffered a sharp decline. Performance of yagya created a cover of pollutants in the lower atmosphere caused by substances burnt and vaporized in yagya causing blockage of high energy x-rays reaching the earth. This explains sharp decline in total count rate of high energy photons.

Conclusion: Religious practices, derived from ancient Vedic culture, are significant rituals that contributed in lowering cosmic ray pollution. The intensity of high energy photons declined during yagya and agnikund homa. This indicated that such anthropological activities, despite adding copius fumes, lower the overall pollutions levels and protect the endangered climate of the earth.

References :-

1. Sharma, Pt.Shriram Acharya, The Integrated Science of Yagna, compiled by Dr.Rajani Joshi, 2010, Publisher - Shantikunj, Haridwar.
2. Singh, N., Chauhan, S.V.S., Ethnobotany, 2002, 14, 73.

****

An Overview of Deficiency of Haemoglobin Among Youth

Vinita Rathore*

Abstract: Haemoglobin level of 284 students of SMB Government PG College, Nathdwara, Rajsamand was investigated during blood donation camp. Out of 284 students, 183 were girls and 101 were boys. Average haemoglobin level of boys was 11.80 ± 1.16 gm/dl and of girls was 10.06 ± 1.39 gm/dl. These results showed that none of the group showed adequate amount of haemoglobin, which is an alarming situation of anaemia among youth. This prompted me to write an overview of deficiency of haemoglobin among youth
Keywords: Haemoglobin, anaemia, dietary supplements.

Introduction - Haemoglobin (Hb) is a conjugated protein with two ingredients viz. haem and globin. The haem is an iron containing compound called protoporphyrins and globin belongs to class of proteins called globulins. Haemoglobin is present in red blood corpuscles (RBC). It plays important role in transportation of oxygen from lungs to tissues and transportation of carbon dioxide from tissues to back to lungs to be exhaled. It also behaves as a blood buffer.

Age, gender and medical history affect haemoglobin levels. In adults, the average haemoglobin level is slightly higher for males (13.5-17.5 gm / 100ml) than that for females (12.0-15.5 gm / 100ml). In adult males, haemoglobin less than 13.5 gm / 100ml and in adult females less than 12.0 gm / 100ml are usually regarded as Anaemia.

Deficiency of haemoglobin, due to lack of enough healthy RBC causes anaemia. It is a condition where the cells do not receive enough oxygen which is essential for cellular respiration and energy production. Anaemia leads to symptoms like fatigue, weakness, pale skin shortness of breath and dizziness.

In our body, normally loss of huge quantity of RBC occurs daily because of short life span of RBC (120 days). To keep the RBC count and haemoglobin level normal, sufficient number of RBCs must be produced daily. This generation of RBCs or erythrocytes is called erythropoiesis. Erythropoiesis begins in the 3rd week of intrauterine life and continues as long as person remains alive.

For erythropoiesis, vitamin B12, folic acid, pyridoxine, vitamin C and iron plays an important role.

Vitamin B12 cannot be synthesized by human body. It is obtained from food. Soil bacteria can synthesize vitamin B12. Animals feed on grass, thus acquire vitamin B12 and store them principally in the liver. All animal products are rich source of vitamin B12. Dietary deficiency of vitamin B12 is very rare but due to fault in its absorption by human intestine it leads to deficiency.

Folic acid is an erythropoietic vitamin. It cannot be synthesized by human body. We depend on external sources like food or medicinal form. Leafy vegetables and liver are a good source of folates.

Pyridoxine or vitamin B12 is involved in synthesis of haem part of haemoglobin. It is widely present in most of the foods of vegetable and animal origin.

Vitamin C (Ascorbic acid) cannot be synthesized by human body. Therefore, human beings are susceptible to vitamin C deficiency. Vitamin C reduces the food ferric iron into ferrous iron in stomach and thus facilitates iron absorption. It can be obtained from fresh citrus fruits like lemon and orange.

Iron is very important constituent for haem part of haemoglobin. In an adult total body iron is about 4gm of which nearly 70% of iron is present in haemoglobin alone. Life span of RBC is about 120 days. After 120 days the RBC dies and iron of haemoglobin is recycled to reutilize to form haemoglobin. But some iron is lost through desquamation of epithelial cells of intestine in feces. In females additional loss of iron occurs through menstrual flow, drainage by foetus during pregnancy and via breast milk during lactation. Additional iron is required during growth. All animal foods are excellent source of iron. Green vegetables are also good source of Iron. Vegetables contain phytic acid and phosphates which retard iron absorption. For proper absorption of iron through intestine vitamin C plays an important role.

From what has been stated, it can be concluded that for adequate amount of haemoglobin in blood smooth functioning of RBCs is required. There must be proper erythropoiesis and proper synthesis of haem as well as globin is necessary. For haem synthesis iron must be present in the food. For proper absorption of iron vitamin C

***Associate Professor (Zoology) SMB Government PG College, Nathdwara, Rajsamand (Raj.) INDIA**

must be included in the diet. Vitamin B12, folic acid and pyridoxine are important erythropoietic vitamins, should be included in adequate quantities in diet to overcome haemoglobin deficiency. It is advisable to use healthy diet and dietary supplements to improve haemoglobin levels among young generation.

Reference:-

1. Personal Research.

****

महाराजा शिवाजी राव होलकर का वैभव - ''दरिया-महल''

डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख*

प्रस्तावना - बड़वाह की मानचित्र में भौगोलिक स्थिति 22° 15'' उत्तर तथा 76° 02'' पूर्व हैं।मध्यप्रदेश की जीवन दायिनी पतित पावनी नर्मदा के उत्तर पूर्वी छोर पर मात्र 04 कि.मी. की दूरी पर स्थित हैं। उज्जैन-खण्डवा मीटर गेज रेल्वे लाईन यहॉ से गुजरती है।

प्रकृति ने अपने-वरदानों की बड़वाह को मुक्त-हस्त सौगात दी हैं। धीर गंभीर नर्मदा, चंचल, चपल उफनती पहाड़ी नदी चोरल एवं बड़ाली, वन्य प्राणियों से युक्त विन्ध्य पर्वत के पठार कल-कल करते झरने सरोवर, शान्ति सुरम्य वातावरण के साथ नर्मदा के मोक्षमार्गी उत्तर तट पर स्थित पौराणिक एवं अत्याधुनिक कई छोटे-बड़े आश्रमों एवं सिद्धमठों की श्रृंखला विद्यमान है।

बड़वाह नगर के पूर्व में चोरल नदी के पूर्वी तट मॉ जयंती का ख्याति प्राप्त मनोकामना पूर्ण करता प्राचीन मन्दिर हैं, वही नगर के मध्य भूत-भावन भगवान महादेव भोले का मंदिर नागेश्वर कुण्ड अपनी विशिष्ट संरचना के लिये प्रसिद्ध है, जिनका बड़वाह वासियों पर वरद् हस्त रहा है।

बड़वाह का प्राचीन नाम बाबुली खेड़ा, तत्पश्चात् जैतगढ़ या जैतपुरी भी रहा हैं। जैतगढ़ किले होने के अवशेष आज भी जंयति माता मंदिर के समीप विद्यमान हैं। सत्रहरवीं शताब्दी में तोमर वंश के राणा दुर्जनसाल ने 1646 ईस्वी में परगना जैतपुरी (बड़वाह) की जमीदारी मुगल सम्राट शारजहॉ के शासन काल में प्राप्त की थी।

1710-11 में राणा जयमल को मुगल सम्राट बहादुरशाह द्वारा परगना जैतपुरी के आस-पास का क्षैत्र उपहार स्वरूप दिया गया, जिसे उन्होनें **''बड़वाह''** के नाम से आबाद किया।

नगर के पूर्व में ''बड़ाली'' नदी के प्रवाहित होने से जैतपुरी, वर्तमान में बड़वाह नाम से जाना जा रहा है। एक अन्य मत के अनुसार बड़ अर्थात वट वृक्ष की अधिकता के कारण इस कस्बे का नाम बड़-वाह! हो गया।

दरिया महल, बड़वाह के पूर्व मे, उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवाहित होने वाली नर्मदा में समाहित चोरल नदी के पश्चिमी तट एवं बड़ाली नदी के पूर्वी दिशा पर निर्मित है। नदी को फारसी में दरिया कहा जाता हैं, चूंकि यह महल इसके किनारे स्थित हैं, इसलिए इसे दरिया-ए-महल कहा जाता था, जो कालान्तर में दरिया महल के नाम से विख्यात हो गया। इसका निर्माण होलकर शासक महाराजा शिवाजीराव (1886-1903) द्वारा बनवाया गया था। महाराजा, होलकर शासको में विख्यात भवन निर्माता थे। बड़वाह में नर्मदा नदी के उत्तरी तट पर **'नर्मदा-कोठी'** महल का निर्माण करवाया गया था।

दरियाव महल से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्य-

1. दरिया महल का निर्माण महाराजा शिवाजीराव होलकर ने अपनी निजी सम्पत्ति से करवाया था।
2. यह विश्राम स्थल (पेलेस) 750 मीटर लम्बा उत्तर से दक्षिण की ओर 123.21 एकड़ में चोरल घाटी के ऊपरी पठार पर स्थित आवसीय भवन था।
3. चोरल नदी की सर्पिल बहती धारा के साथ-साथ महल का निर्माण किया गया हैं, इसलिए सरल रेखा में न होकर घुमावदार हैं। यही कारण है कि पूरे महल को एक फोटोग्राफ में लेना असंभव था।
4. इस महल का निर्माण खुली नींव (ओपन फाउण्डेशन) पर स्थित लगभग 3 फीट ऊॅची कुर्सी पर किया गया हैं। नींव ''घटिया'' नामक स्थान के सेंड स्टोन पत्थरों से निर्मित हैं, जो अपनी मजबूती के लिए क्षेत्र में प्रसिद्ध हैं। खेड़ीघाट पर स्थित नर्मदा नदी पर ब्रिटिशकालीन मीटरग्रेज रेल्वे पुल भी इन्हीं पत्थरों से बनवाया गया हैं।
5. बड़वाह नगर की भूमी चूने की खदानों के लिये प्रसिद्ध रही हैं, इसी चूने का प्रयोग दरिया महल बनाने के लिये किया गया हैं। इसी चूने में सरस, बेलफल, सन, सुर्खी मिलाकर जुड़ाई के लिये मसाला (मार्टर) तैयार किया गया और रेत के साथ 2 : 1 में जुड़ाई एवं प्लास्टर का कार्य किया गया, इस हेतुईटों अथवा पत्थरों का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया गया हैं।
6. पूरे महल की छत जेक आर्च से निर्मित हैं। पैलेस भारतीय स्थापत्य कला का उत्कृष्ट एवं बेजोड़ नमूना है। महल की साज-सज्जा के लिये विलसियों का प्रयोग बहुतायत किया गया था, जो विदेशों से बुलवाई गई थी। जो एक शताब्दी से वैसे ही हैं (जस की तस)। महल के बाह्य स्वरूप की सजावट के लिये ज्यामिति की सरल रेखाओं का विभिन्न प्रकार से प्रयोग किया हैं, जो मुस्लिम स्थापत्य कला के प्रभाव को प्रदर्शित करती हैं।
7. दरिया महल की बाह्य दिवारें गहरे गेरूवें रंग से और इंगलिश विलसियों की सफेद रंग से पुताई होती चली आ रही है। प्रमुख महलों के मुख्य द्वार के बरामदों के सामने वाले दोनों स्तम्भों के पत्थर पर आकर्षक एवं कलात्मक नक्काशी की गई हैं।
8. इस महल में 198 कमरें सहित कुल पॉच महल बनें हुए है, महल

* व्याख्याता (इतिहास) हाडारानी राजकीय महाविद्यालय, सलूम्बर, जिला उदयपुर (राज.) भारत

द्विमंजिला हैं, जबकि शेष कक्ष भूतल पर अवस्थित हैं। इन पॉच महलों में उत्तर से दक्षिण की ओर प्रथम पेलेस का उपयोग शिकार के लिये ''गाला'' बॉधने एवं अन्य आखेट सम्बन्धित सामग्रियों को रखने के लिये किया जाता रहा हैं। रियासत कालीन आखेट विशेषज्ञ जनाब बाबू शिकारी के अनुसार लगभग 800 से 1000 वाट विद्युत बल्ब से महल को रोशन किया जाता था, जिसकी विद्युत आपूर्ति इंजन से की जाती थी।

द्वितीय महल का प्रयोग राजकीय अतिथियों एवं शिकार टोलियों के रहने हेतुकिया जाता था। तृतीय महल महारानी का निजी निवास स्थान था। जिसमें लगभग साढ़े छह फीट की आकर्षक बीन (सपेरे का वाद्ययंत्र) रखी हुई थी। चतुर्थ महल महाराजा का खास-महल था। जिसमें महफिलें एवं अन्य मनोरंजक गतिविधियॉ होती थी। पॉचवा महल राजकीय-सेवकों के लिये प्रयुक्त होता था, यह अकेला महल पत्थरों से निर्मित है, और वर्तमान में क्षतिग्रस्त हो चुका हैं। दरिया महल के ये पॉचों महल, के प्रथम एवं द्वितीय तल में 9-9 कमरें है। 198 कक्षों सहित मूलरूप से आपस मे जुड़े हुए थे। कक्ष क्रमांक 01 से प्रवेश करने पर भीतर ही भीतर कक्ष क्रमांक 198 कमरो में पहुॅचा जा सकता था। कक्षों का औसत क्षैत्रफल 20-30 है। साथ ही चार बड़े सभागृह थे। इस पेलेस मे लगभग 800 लकड़ी (सागवान) के दरवाजे हैं, जिन्हें बन्द करने के लिये डेढ़ फीट लम्बी पीतल की चटकनियॉ लगी हुई हैं। इस प्रकार महल की साज-सज्जा के कार्य हेतुसागवान जैसी मंहगी लकड़ी एवं धातु के रूप में पीतल का प्रयोग किया गया हैं।

9. दरिया महल को अपनी लम्बाई के कारण एशिया की सबसे लम्बें आवासीय भवन होने का गौरव प्राप्त हैं। अपनी वास्तु शिल्प एवं विशिष्ठ निर्माण शैली की यह ईमारत अद्वितीय हैं।
10. पेलेस के पीछे पूर्व की ओर चोरल की सुरम्य वनाच्छिद घाटियों को निहारने के लिये इतना ही विशाल-लम्बा बरामदा भी बनवाया गया था, जो आज भी वैसा ही हैं।
11. प्रत्येक महल में ऊपरी मंजिल पर पहुॅचने के लिए लकड़ी के घुमावदार सीढ़ियॉ हैं, जिन पर लकड़ी के ही रैलिंग हैं, किसी अन्य धातु का प्रयोग नहीं किया गया था। पीछे की ओर बरामदों में भी घुमावदार सीढ़ियॉ हैं। पीछे की ओर बरामदों में भी चमकदार धातु का गोल जीनें (चढ़ाव) बने हुए हैं, जिनसे छत पर पहुॅचा जा सकता हैं। उनकी पॉलिश इतनी शानदार हैं कि आज भी वे नवीन से प्रतीत होते हैं।
12. महल के पीछे पूर्व की ओर ढलान पर रमणीक, रख-रखाव युक्त बगीचा था। बाग की सुरक्षा (बंदरो से) हेतु लोहे की जॉली से भी कुछ भाग आच्छादित था। बगीचे के ऊपर संगमरमर के छोटे-छोटे अंलकृत छज्जे बने हुए थे। लगभग 60-65 वर्ष पूर्व तक यहॉ रख-रखाव होता था।
13. महल एवं बगीचे में पानी की आपूर्ति चोरल नदी से की जाती थी। नदी पर एक स्टॉप डेम भी निर्मित किया गया थां, जो आज भी देखा जा सकता हैं। महल के उपर 2000 गैलन की पानी की टंकियॉ बनाई गई थी। जिनसे पूरे महल में पाईप लाईन के द्वारा जल वितरण होता था, आज भी इन्हीं टंकियों का उपयोग किया जाता हैं। गर्म पानी के स्रोते हेतु बॉयलर की व्यवस्था भी थी।
14. महाराजा शिवाजीराव होल्कर को यह स्थान अत्यंत प्रिय था, अत: अपने अवकाश के क्षणों को वे यहॉ सुकून एवं शान्ति से जिया करते थे, उन्हें घूमने-फिरने एवं सैर-सपाटे करने का शौक था, ऐसा कहा जाता हैं, कि होलकर राज्य की द्वितीय राजधानी के रूप में इस महल को उपयोग किया जाता था। 31 जनवरी 1903 में महाराजा शिवाजीराव होलकर ने अपने एकमात्र अव्यस्क पुत्र तुकोजीराव तृतीय के पक्ष में गद्दी का परित्याग कर दिया। महाराजा को रूपयें चार लाख सालाना की दर से पेंशन देना तय हुआ, चूॅकि अभी महाराजा तुकोजीराव बालिग नहीं थे। अत: होलकर प्रशासन ''कान्सिल ऑफ रिजेन्सी'' के माध्यम से अंग्रेजों को मिल गया जो 1911 तक जारी रहा था। महाराजा शिवाजीराव ने सेवा निवृत्ति के पश्चात् अपना स्थायी निवास बड़वाह स्थित दरिया-महल को बनाया और मृत्यु पर्यन्त वे यहीं पर रहें (13.10.1908 ई.)।
15. महाराजा शिवाजीराव को अंग्रेजों ने ''विक्षिप्त मानसिकता वाला व्यक्ति'' घोषित किया गया था, उन्हें प्रशासन से बेदखल करना अंग्रेजों का कूटनीतिक षडयन्त्र था, अत: दरिया महल में रहते हुए महाराणा ने अंग्रेजों के विरूद्ध गोपनीय अभियान आरंभ किया। अन्य देशी राजाओं का ब्रिटिश विरोधी संघ बनाने हेतु कवायद में संलग्न हो गये। उन्होंनें कई स्थानों की गुप्त यात्राऍ की और अनेक लोगों से व्यक्तिगत पत्र-व्यवहार किया। उनके ब्रिटिश विरोधी रवैये को देखते हुए अंग्रेजी हुकुमत ने उन्हें दरिया-महल में लगभग नजर बन्द ही कर दिया था।
16. महाराजा तुकोजीराव तृतीय (1903-1926) एवं अंतिम शासक महाराजा यशवन्तराव होलकर (1926-1948) के भी प्रिय रिसोर्ट के रूप में दरिया महल शामिल था। उन्हें रालामण्डल-इन्दौर से भी यह स्थान अधिक आकर्षित करता था।
17. महाराजा के मुख्य आखेट सहायक बाबू शिकारी थे, जिनके पिता पिंटू शिकारी महाराजा तुकोजी राव तृतीय तथा दादा नईम शिकारी महाराजा शिवाजी राव के प्रमुख शिकार सहायक थे। इस प्रकार यह परिवार (बाबू शिकारी) अपनी तीन पीढ़ियों से होलकर शासकों के शिकार का सहभागी रहा था। जनाब बाबू शिकारी को शेर के शिकार के लिए ले जाने हेतुमहाराजा रू. 4प्रतिदिन के हिसाब से मेहनताना देते थे।
18. महाराज तुकोजीराव तृतीय एवं महारानी शर्मिष्ठा देवी की पुत्री सीताराजे का विवाह दरिया-महल से किया गया था, जिसमें आकर्षक विद्युत सज्जा की गई थी।
19. जनश्रुति यह भी हैं कि दरिया-महल से नर्मदा कोठी तक गुप्त सुंरग बनी हुई थी। नर्मदा तट (नावघाट खेड़ी) पर आज की **'रानी घाट'** बना हैं, जो होलकर परिवार की महिलाओं के निजी उपयोग हेतु आरक्षित था
20. होलकर रिसायत के विलयीकरण के बाद दरिया-महल ''राजकुमारी-उषाराजे ट्रस्ट'' से भारत सरकार ने 6 लाख रूपयें में अधिगृहित किया था।
21. नेशनल डिसिप्लीन स्कीम (एन.डी.एस.) का प्रशिक्षण केन्द्र यहॉ खोला गया, उसके बाद म.प्र. वन विभाग का प्रशिक्षण केन्द्र भी कुछ समय तक यहॉ रहा था।
22. 1 अगस्त 1968 को उठझऋने अपना रिक्रुट ट्रेनिंग सेंटर स्थापित

किया गया जिसका विधिवत उदघाटन 11 जुलाई 1969 को हुआ।

23. 1 अगस्त 1984 में केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल की प्रथम आरक्षित वाहिनी ने दरिया-महल को अधिगृहित किया। 1 अप्रैल 1985 से यहॉ पुरूष-महिला दोनों वर्गो हेतुरिक्रूट प्रशिक्षण केन्द्र भी स्थापित हो गया। 31.07.1999 तक यहॉ 27 पाठ्यक्रम चलाये जाते रहे हैं।
24. बदलते हुए परिदृष्य, आतंकवादी गतिविधियों आदि के कारण ''दरिया-महल'' का सी.आई.एस.एफ. केन्द्र अत्यंत संवेदनशील रहा हैं। सुरक्षा के पुख्ता इन्तजाम हैं। केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग ने ''दरिया-महल'' का रख-रखाव की अत्युत्तम व्यवस्था के द्वारा इसके मूल स्वरूप, शैली को बरकरार रखा हैं। दरिया-महल अपनी पूरी शान-ए-शौकत एवं बुलंदी से होलकर वंश की गौरव-गाथा एवं वैभवशाली इतिहास का सजीव प्रतीक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पश्चिम निमाड़ स्टेट गजेटियर - पृ. 432।
2. राणा परिवार,बड़वाह से प्राप्त जानकारी अनुसार, बी.एस.राठौर-बड़वाह एक सफर-पृ.24।
3. एल.सी.धारीवाल, इन्दौर स्टेट गजेटियर -पृ. 35, डॉ. एस. एन. यादव- संपादक-अपना इन्दौर-पृ. 162।
4. जनाब बाबूखॉ शिकारी से प्राप्त जानकारी अनुसार।
5. केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग के अभिलेखानुसार।
6. जनाब इकबाल मोहम्मद अली के कथानानुसार।
7. जनाब बाबूखॉ शिकारी से प्राप्त जानकारी अनुसार।
8. केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग के अभिलेखानुसार।
9. श्रीमदन सिंह सिकरवार की स्मृति से साभार।
10. डॉ. एस.एन.यादव-संपादक-अपना इन्दौर-पृ. 163।
11. जनाब बाबूखॉ शिकारी से प्राप्त जानकारी अनुसार।
12. श्री राणा राजेन्द्र सिंहजी तोमर की स्मृति से साभार।

****

याज्ञवल्क्य स्मृति में श्राद्ध विधि

डॉ. विद्या आचार्य *

प्रस्तावना – हिन्दू समाज में भाद्रपद पूर्णिमा से आश्विन शुक्ला अमावस्या तक श्राद्ध पक्ष माना जाता है। श्राद्ध का अभिप्राय है– तत्स्थानीय द्रव्य का मृतात्मा के उद्देश्य से श्रद्धापूर्वक त्याग करना। वह दो प्रकार का होता है– पार्वण एवं एकोद्दिष्ट। इनमें से जो तीन पुरुषों के उद्देश्य से किया जाता है वह 'पार्वण' तथा जो एक पुरुष के उद्देश्य से किया जाता है वह 'एकोद्दिष्ट' कहा जाता है। इनके पुन: तीन भेद किये गये हैं– नित्य, नैमित्तिक तथा काम्य। प्रतिदिन किया जाने वाला श्राद्ध 'नित्य श्राद्ध' कहा जाता है। प्रत्येक माह की अमावस्या तथा हेमन्त और शिशिर ऋतु के कृष्ण पक्ष की चारों अष्टमी तिथियों को किया जाने वाला श्राद्ध भी इसी के अन्तर्गत आता है। अनियत रूप से पुत्रजन्म इत्यादि अवसर पर किया जाने वाला श्राद्ध 'नैमित्तिक श्राद्ध' होता है। स्वर्गप्राप्ति आदि फल–कामना की दृष्टि से कृत्तिका आदि नक्षत्रों में तथा विशेष तिथियों पर किया जाने वाला श्राद्ध 'काम्य श्राद्ध' कहा गया है।

उपर्युक्त अवसर तथा तिथियों के अतिरिक्त भी श्राद्ध का प्रावधान याज्ञवल्क्य स्मृति में किया गया है। सूर्य के उत्तारायण एवं दक्षिणायन होने पर (मेष और तुला राशि पर सूर्य संक्रमण होने पर), व्यतीपात, गजछाया, चन्द्र एवं सूर्यग्रहण के समय तथा जब श्राद्ध करने की इच्छा हो तब श्राद्ध का काल होता है। यद्यपि ग्रहण के समय भोजन करने का निषेध होता है तथापि यह भोक्ता के लिए दोषकारक है, दाता के लिए तो अभ्युदय प्रदान करने वाला ही होता है।

स्मृतियों में श्राद्धकर्म में भोजन कराने योग्य ब्राह्मणों की पात्रता का भी विशेषरूपेण उल्लेख किया गया है। सभी वेदों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने वाले, श्रुति–अध्ययन संपन्न श्रोत्रिय, ब्रह्मज्ञानी, युवक, वेदार्थवित्ता, ज्येष्ठसाम नाम के साममंत्रों का तथा ऋग्वेद के 'त्रिमधु' मन्त्रों को प्रत्याचरण के साथ अध्ययन करने वाले एवं यजुर्वेद के 'त्रिसुपर्ण' मन्त्रों का नियम के साथ पारायण करने वाले ब्राह्मण श्राद्ध में निमन्त्रित करने योग्य होते हैं। इनके अतिरिक्त कर्मनिष्ठ, तपस्वी, पञ्चाग्नि का आधान करने वाले, ब्रह्मचारी, माता–पिता की सेवा करने वाले ब्राह्मण श्राद्ध में अक्षय फल के हेतु होते हैं। सम्बन्धियों में भागिनेय (बहिन का पुत्र), जामाता, श्वसुर, मामा, दौहित्र, शिष्य, अन्य सम्बन्धी तथा बान्धवों को निमन्त्रित करने का प्रावधान किया गया है। ऋत्विज, यजमान तथा यजुर्वेद के त्रिणाचिकेत का व्रत एवं अध्ययन करने वाले भी निमंत्रण–योग्य होते हैं। इसके विपरीत हर रोगी, अंगहीन, बढ़े हुए अंग वाला, काना, अवैतनिक अध्यापक, नपुंसक, कन्या पर दोषारोपण करने वाला, ब्रह्महत्या करने वाला, मित्रद्रोही, चुगलखोर तथा अन्यान्य शास्त्रविरुद्ध कर्म करने वाला, ये सभी श्राद्धकर्म में निषिद्ध होते हैं।

यद्यपि स्मृतियों द्वारा अनुशंसित प्रथम श्रेणी के ब्राह्मण आज दुर्लभप्राय हैं तथापि यथा–संभव श्रेष्ठता का ध्यान रखना आवश्यक है।

स्मृतियों में पार्वण श्राद्ध का विधि–निर्देश करते हुए कहा गया है कि श्राद्ध कर्म मध्यान्ह अथवा अपरान्ह काल में करना चाहिए– 'अपराह्णे समभ्यर्च्च स्वागतेनागतांस्तु तान्' (याज्ञ. स्मृति, 1/226)। दैव श्राद्ध में यथाशक्ति समसंख्या वाले और पित्र्य श्राद्ध में विषम संख्या में ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। ब्राह्मणों के बैठने की व्यवस्था दक्षिण की ओर झुके हुए स्थान पर की जावे तथा भोजन शुद्ध, आवृत हो और स्थान की पवित्रता भी ध्यातव्य है।

पार्वण श्राद्ध के अंगभूत वैश्वदेव श्राद्ध में दो ब्राह्मणों को उत्तराभिमुख करके बैठाना चाहिए अथवा विकल्प के रूप में वैश्वदेव एवं पित्र्य–स्थान में एक–एक ब्राह्मण को बैठाने का भी प्रावधान है। मातामह के श्राद्ध की भी यही विधि है। यदि पार्वण श्राद्ध में एक ही ब्राह्मण को भोजन कराया जाये तो उसका अंगभूत वैश्वदेव कर्म कैसे होगा? ऐसी स्थिति में वसिष्ठ मुनि ने कहा है कि बनाये गये भोजन का यथोचित भाग पात्र में निकालकर उसको देवता के अधीन कर देना चाहिए तत्पश्चात् श्राद्धकर्म प्रारम्भ करने योग्य है। अन्न की अग्नि में आहुति देनी चाहिए अथवा ब्रह्मचारी ब्राह्मण को प्रदान करना चाहिए–

यथैकं भोजयेच्छ्राद्धे दैवं तत्र कथं भवेत् ।
अन्नं पात्रे समुद्धृत्य सर्वस्य प्रकृतस्य च ।।
देवतायतने कृत्वा तत: श्राद्धं प्रवर्तयेत् ।
प्रास्येदन्नं तदग्नौ तु दद्याद्वा ब्रह्मचारिणे ।।(याज्ञ. स्मृति, 11/30–31)

वैश्वदेव कर्म के लिए ब्राह्मण को हाथ प्रक्षालनार्थ जल, बैठने के लिए कुश का आसन देकर उनकी आज्ञा से 'विश्वेदेवास आगत' (ऋ. 4/8/15) इत्यादि ऋचा द्वारा तथा 'आगच्छन्तु महाभागा:' इस स्मार्त मन्त्र से उनका आवाहन करे, तत्पश्चात् ब्राह्मणों के निकट भूमि पर जौ बिखेरकर पवित्र कुश से युक्त दो पात्रों में 'शं नो देवीरभिष्टये' (ऋ. 7/6/5/4) इत्यादि मंत्रोच्चारण के साथ जल–सिंचन करना चाहिए। 'यवो असि धान्यराजोऽसि' इत्यादि मन्त्र से उसमें यव तथा गन्ध, पुष्प आदि विर्निक्षिप्त करना चाहिए, तदनन्तर अर्घ्यपात्र को कुश में अन्तर्हित करके 'या दिव्या आप: पयसा' इत्यादि मंत्र के द्वारा ब्राह्मण के हाथ पर 'विश्वेदेवा इदं वोऽर्घ्यम्' (विश्वेदेवा यह आपका अर्घ्य है) इस प्रकार कहता हुआ अर्घ्य प्रदान करे। तदुपरान्त हस्त–प्रक्षालनार्थ जल देकर क्रमश: गन्ध, पुष्प, धूप, दीप आदि प्रदान करना चाहिए। वैश्वदेव के पश्चात् यज्ञोपवीत को दाहिने कंधे पर रखकर पितरों को बाईं ओर से दोहरे कुश देकर 'उशन्तस्त्वा निधीमहि' (ऋ. 7/6/

*सह–आचार्य (संस्कृत) सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा (राजसमंद) (राज.) भारत

22/2) ऋचा द्वारा पितरों का आह्वान करना चाहिए। ब्राह्मणों की आज्ञा से 'आयन्तु नः पितरः' इत्यादि मंत्र का जप करणीय है, तत्पश्चात् 'अपहता असुरा रक्षांसि' इत्यादि मंत्र-जप करते हुए ब्राह्मणों के चारों ओर तिल विकीर्ण करने चाहिए। इस समय यव से किये जाने वाले समस्त कर्म तिल से सम्पन्न करने चाहिए। अर्घ्य इत्यादि पूर्वोक्त विधि से ही करणीय है। ब्राह्मणों के हाथ में अर्घ्यदान करके उनके हाथ से गिरते हुए जल को विधिपूर्वक पितृ-पात्र में रोककर उस पात्र को 'पितृभ्यः स्थानमसि' इत्यादि मन्त्र से उलटा कर दे तथा उसके ऊपर अर्घ्यपात्र एवं कुश का पवित्र रखें।

अग्नि में आहुति देने के लिए घी से संयुक्त अन्न लेकर ब्राह्मणों से आज्ञा मांगनी चाहिए तथा उनके आदेशानुसार पितृयज्ञ के समान उस अन्न का अग्नि में हवन करना चाहिए। हवन से अवशिष्ट घृतार्द्र अन्न को एकान्त्रित होकर (पितृपात्रों में) अपनी सामर्थ्य के अनुसार बनवाये गये चाँदी के पात्रों में अथवा अन्य धातु के पात्रों में रखें (मिट्टी के पात्रों में नहीं रखना चाहिए), भोज्य पदार्थ पात्रों में रखने के पश्चात ष्पृथिवी ते पात्रंष इत्यादि मंत्र द्वारा पात्रों को अभिमन्त्रित करना चाहिए और 'इदं विष्णुर्विचक्रमे' आदि मन्त्रजाप करते हुए उस अन्न में ब्राह्मण के अंगूठे का स्पर्श कराना चाहिए। 'विश्वेभ्यो देवेभ्य इदमन्नं परिविष्टं परिवेष्यमाणं च तृप्तयेः' इस प्रकार जौ मिश्रित जल से देवताओं को निवेदन करके 'अमुक गोत्राय अमुकशर्मणे इदमन्नं परिविष्टं परिवेष्यमाणं च तृप्तयेः' इस प्रकार तिलमिश्रित जल से पितरों को निवेदन करना चाहिए।

'ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः' व्याहृतियों के साथ गायत्री मन्त्र का तथा 'मधु मधु मधु माता' आदि ऋचा के जप करने का प्रावधान किया गया है। ब्राह्मणों के तृप्त होने पर भोजन में बने हुए सभी प्रकार का अन्न लेकर उस अन्न को पितृस्थान के ब्राह्मण के आगे उच्छिष्ट के निकट तिलोदक पूर्वक प्रक्षिप्त करे तथा ब्राह्मण के हाथों पर थोड़ा जल प्रदान करे, तत्पश्चात् तिल के साथ सभी प्रकार का अन्न लेकर दक्षिणाभिमुख होकर उच्छिष्ट के निकट पिण्डपितृयज्ञ के समान ही पिण्डदान करना चाहिए। मातामह आदि के लिए भी विश्वदेव आह्वान से लेकर पिण्डदान-पर्यन्त इसी प्रकार के कर्म का प्रावधान किया गया है। तदनन्तर अपनी सामर्थ्य के अनुसार ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर उनसे स्वधावाचन की आज्ञा लेनी चाहिए। 'विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्' की कामना करते हुए 'हमारे कुल में हिरण्य इत्यादि के दाता अनेक होवें, अध्ययन-अध्यापन द्वारा वेद की और सन्तान की वृद्धि होवे। पितृ कर्म आदि में हमारी श्रद्धा कम न हो, स्वर्ण आदि दान देने योग्य वस्तुएं प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहें' इस प्रकार पितरों से प्रार्थना करनी चाहिए। प्रिय वचन कहकर प्रणाम करते हुए 'वाजे वाजेवत वाजिनो नः' (5/4/5/8) इस मन्त्र के साथ प्रसन्नचित होकर पितरों से प्रारम्भ करके विश्वेदेव तक का विसर्जन करना विहित है। पहले जिस अर्घ्यपात्र में ब्राह्मणों के हाथों से गिरा हुआ जल निषिष्ट किया गया था उस अर्घ्यपात्र का मुँह ऊपर करके ब्राह्मणों को विदा करे। उस रात्रि को श्राद्धकर्ता तथा भोक्ता ब्राह्मण दोनों को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

नैमित्तिक श्राद्धः इस श्राद्ध के अन्तर्गत पुत्रजन्म आदि प्रसन्नता के अवसर पर भी इसी प्रकार नान्दीमुख पितरों के लिए दाहिनी ओर से प्रारम्भ करके पूजन करना चाहिए। इसमें दही, बदरीफल मिश्रित पिण्डदान करने का तथा तिल से की जाने वाली क्रियाएँ जौ से करने का प्रावधान किया गया है।

एकोद्दिष्ट श्राद्धः एकोद्दिष्ट कर्म विश्वेदेव रहित एक अर्घ्यपात्र से तथा एक कुशपवित्र से किया जाता है। इसमें आवाहन और अग्नौकरण नहीं होता तथा दाहिने कंधे पर यज्ञोपवीत करके संपन्न किया जाता है।

सपिण्डीकरण के लिए गन्ध, जल और तिल से युक्त चार पात्र अर्घ्य के लिए बनाना विहित है। 'ये समाना समनसः' इत्यादि दो मन्त्रों के साथ प्रेतपात्र का जल पितृपात्रों में तीन भाग करके विसर्जित करना चाहिए। शेष कर्म पार्वण श्राद्ध के समान ही करने योग्य है। इसी को 'सपिण्डीकरण' कहते हैं। एकोद्दिष्ट कर्म स्त्री के लिए भी किया जाता है। जिस दिन का सपिण्डीकरण एक वर्ष की अवधि के पूर्व ही हुआ हो तो उसके लिए प्रतिदिन और प्रत्येक मास में एक वर्ष तक शक्ति के अनुसार एक घड़े जल के साथ अन्न ब्राह्मण को देना चाहिए। एकोद्दिष्ट कर्म एक वर्ष तक प्रतिमास मृत्यु की तिथि को तथा 9 तिवर्ष करने का प्रावधान किया गया है। प्रथम एकोद्दिष्ट कर्म मृत्यु के ग्यारहवें दिन होता है। मृत्युदिवस के ज्ञात नहीं होने पर अमावास्या को अथवा उसके श्रवण-दिवस को एकोद्दिष्ट कर्म करना चाहिए। पिण्डदान गाय, बकरा, ब्राह्मण को अग्नि अथवा जल में करना चाहिए।

श्राद्धकर्म के लिए मांसाहार की प्रस्तुति शास्त्र-सम्मत तथा विशेष फलदायी मानी गयी है। भाद्रपद मास की कृष्ण त्रयोदशी तथा मघा-नक्षत्र होने पर इनका पिण्डदान दाता के लिए अनन्त फलदायक होता है।

शास्त्र द्वारा मृत्यु प्राप्त लोगों के लिए चतुर्दशी के अतिरिक्त प्रतिपदा आदि सभी तिथियों को श्राद्ध किया जा सकता है। कृत्तिका से प्रारम्भ करके भरणी तक प्रत्येक नक्षत्र में श्राद्ध पूर्वक श्राद्ध करना अत्यन्त कल्याणकारक कहा गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

हिंदी की मार्क्सवादी आलोचना और डॉ. रामविलास शर्मा – 1

डॉ. अजय कुमार विन्द*

प्रस्तावना – डॉ. रामविलास शर्मा हिन्दी की मार्क्सवादी कही जाने वाली आलोचना के प्रतीक पुरुष हैं। किन्तु डॉ. शर्मा ने जिस दौर में लिखना प्रारम्भ किया था, उन दिनों मार्क्सवादी आलोचना को पगडंडी की शक्ल भी नहीं मिली थी।गरज यह कि साहित्य में जिस तीव्रता से नवीन प्रवृत्तियों और शैलियों का समावेश हो रहा था, उसमें प्रगति की आकांक्षा जिस प्रयोग–वैविध्य में उजागर हो रही थी, उसे अनदेखा करके आलोचना एक ठहरी हुई गतानुगतिक चीज ही हो सकती थी। व्यक्तित्व–वैशिष्ट्य के नाम पर व्यक्तिवाद के नए उत्थान के एक अभिशप्त मगर ऐतिहासिक दौर में डॉ. रामविलास शर्मा ने एक साथ अन्दर और बाहर के दोनों मोर्चों पर एक दबंग और विचारवान आलोचक की भूमिका का तत्परता से निर्वहन किया। उनमें साहस था, साधना का बल भी, हर तरह के लालच से अलग । उनमें झूठ को झूठ और सच को सच कहने का नैतिक तेज था, कभी घालमेल नहीं किया, न तो ऐसी बात ही की, जो समझ से परे हो। एक दृढ़ इरादे के साथ अपने समय की सत्ता की सर्वग्राही संस्कृति को उन्होंने विरोध के लिए चुना और जातीय साहित्य की अवधारणा विकसित की।

डॉ. रामविलास शर्मा अपनी सत्य–निष्ठा के कारण प्रारम्भ से ही अन्दर–बाहर के आक्रमणों से जूझते रहे। कई बार उनके मार्क्सवादी होने की बात उनका कद छोटा करने के उद्देश्य से भी कही जाती है। उन्हें कुण्ठित समाजशास्त्री, परम्परावादी, संकीर्णतावादी आदि उनके खेमे के लोगों ने ही कहा। इन आरोपों के आईने में डॉ. रामविलास शर्मा की आलोचना के अन्तर्विरोध बहुत बड़े लगते हैं। मुक्तिबोध से सम्बद्ध उनकी आलोचना को उतना भी महत्व नहीं दिया जाता, जितना कि छायावाद से सम्बद्ध आचार्य शुक्ल की आलोचना को दिया जाता है। दावे के साथ नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने सब कुछ मार्क्सवाद के अनुरूप ही लिखा है। कहीं वे मार्क्स और लेनिन के विचारों के साथ हैं तो कहीं त्रात्स्की के मत से सहमत भी। इनसे जगह–जगह उन्होंने असहमति भी व्यक्त की है। लेकिन सब मिलाकर डॉ.शर्मा की छवि एक दबंग मार्क्सवादी आलोचक की छवि है।

डॉ. रामविलास शर्मा ने साहित्यालोचन के साथ–साथ रचनात्मक लेखन भी किया है। वे एक अच्छे कवि भी थे। उनके लेखन की शुरुआत साहित्य–चर्चा से हुई, लेकिन ज्यों–ज्यों उनकी रचना–यात्रा आगे बढ़ी– इतिहास, समाजशास्त्र, दर्शन, संस्कृति, भाषा–विज्ञान, वेद आदि के क्षेत्र में उनका चिन्तन विस्तार पाता गया। शुरू के चार दशकों में (सन 41 से लेकर 78 तक) साहित्यालोचन पर उनका ध्यान अधिक रहा। इस दौर में ही भारतेंदु हरिश्चन्द्र, प्रेमचन्द, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, तुलसीदास, रामचन्द्र शुक्ल, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि से सम्बद्ध उनका आलोचना साहित्य अस्तित्व में आया। इसी दौर में उनकी 'सत्ता सत्तावन की राज्य–क्रांति', 'भाषा और समाज', 'भारत की भाषा–समस्या' जैसी ऐतिहासिक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। बाद में डॉ. शर्मा ने भाषा और संस्कृति को अपने चिन्तन का प्रमुख विषय बना लिया। 'भारत के प्राचीन भाषा परिवार और हिन्दी' (1979–81), 'भारत में अंग्रेजी– राज और मार्क्सवाद' (1982), 'इतिहास–दर्शन' (1995), 'भारतीय साहित्य की भूमिका' (1996), 'भारतीय नवजागरण और यूरोपय (1996), 'भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश' (1999), 'भारतीय सौन्दर्यबोध और तुलसीदास' (2001) जैसे ग्रन्थ हिन्दी के एक जाने–माने साहित्य–समालोचक ने लिखे हैं। फिर भी इतिहास, राजनीति, भाषा–विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र में काम करने वालों का ध्यान आकर्षित करने में सफल रहे।

डॉ. शर्मा ने महावीर प्रसाद द्विवेदी के विषय में लिखा है कि वे सीमित अर्थ में साहित्यकार नहीं हैं। उनका उद्देश्य हिन्दी प्रदेश में सामाजिक चेतना का विकास करना है। अपने इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए उन्होंने समाज–विज्ञान, प्रकृति–विज्ञान, दर्शन–शास्त्र और साहित्य इन सबके विकास का प्रयत्न किया है। यही बात डॉ. शर्मा के लिए भी कहा जा सकता है। उनका आलोचना–साहित्य व्यापक रूप में संस्कृति–विमर्श है। उसमें साहित्येतिहास–लेखन का प्रयास लक्षित है। 'हिन्दी जाति का साहित्य', 'लोक जागरण और हिन्दी साहित्य', 'भारतेंदु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा', 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण', 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना', 'प्रेमचन्द और उनका युग' जैसे ग्रन्थों को मिलाकर पढ़ा जाय तो आलोचना के भीतर इतिहास लेखन के उनके गम्भीर प्रयास का पता चलता है।जहाँ तक पिछले एक हजार वर्ष से अधिक के हिन्दी साहित्येतिहास का सवाल है तो कुल मिलाकर यह तीन–चार साहित्य–साधकों के परिश्रम का सुफल है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'आदिकाल' का उद्घाटन किया है तो आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'पूर्वमध्यकाल' पर विशेष रूप से लिखा है। 'उत्तर मध्यकाल' का साहित्य आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र की साधना स्थली है तो 'आधुनिक काल' खासतौर से 'भारतेंदु युग' को प्रकाश में लाने का मात्र श्रेय डॉ. शर्मा को मिलना चाहिए।

डॉ.शर्मा ने आदिकवि वाल्मीकि की 'रामायण' पर लिखा है और कालिदास के सौन्दर्य–बोध पर विस्तार से विचार किया है। भावमूर्ति भवभूति और लोकनायक तुलसीदास के साथ–साथ सूरदास पर भी उन्होंने गम्भीर विवेचन किया है। इन सभी पर डॉ.शर्मा ने जो विचार व्यक्त किया है वे हिन्दी–साहित्य की अमूल्य निधि हैं। आधुनिक साहित्य–साधकों में भारतेंदु, महावीर प्रसाद द्विवेदी, आचार्य शुक्ल, निराला, प्रेमचन्द को आज जिस रूप में देखा–समझा जाने लगा है, उसका सारा श्रेय डॉ.रामविलास शर्मा को ही मिलना चाहिए। शेक्सपियर के नाटकों, शेली, कीट्स और रवीन्द्रनाथ टैगोर की

* असि. प्रो. (हिन्दी) राजकीय महाविद्यालय, नानौता, सहारनपुर (उ.प्र.) भारत

कविताओं पर भी उन्होंने काफी श्रम किया है। उनका आलोचना-साहित्य काफी फैला हुआ है। उन्होंने अधिकांश उन लेखकों, कवियों पर लिखा है जो मार्क्सवादी नहीं हैं। लेकिन वे ऐसे लेखक हैं जो जनता की चित्तावृत्तियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐतिहासिक भौतिकवाद के समर्थ प्रवक्ता डॉ शर्मा जनपक्षधर लेखन के प्रवक्ता भी रहे हैं।

हिन्दी में मार्क्सवाद का महत्व सोवियत क्रान्ति के बाद की घटना है। डॉ. शर्मा और भी बाद में बल्कि पाँचवें दशक के आरम्भ में मार्क्सवाद के प्रभाव में आये। काव्यालोचन की शुरुआत उन्होंने निराला से की और कथा-साहित्य के सन्दर्भ में उन्होंने सबसे पहले प्रेमचन्द पर लिखा। परन्तु द्धान्तिक, व्यावहारिक और ऐतिहासिक आलोचना का जमकर अभ्यास उन्होंने भारतेंदु और उनके युग के साहित्य के सन्दर्भ में किया। भारतेंदु-युग का साहित्य उनके विचार-धारात्मक अध्ययन की आधार - सामग्री बना और जातीय - साहित्य की अवधारणा के निर्माण में भी उससे उन्हें पर्याप्त सहयोग मिला। डॉ. शर्मा ने एक भाषा-वैज्ञानिक के रूप में पं. किशोरीदास वाजपेयी के भाषा-वैज्ञानिक चिन्तन को आगे बढ़ाया है। भारतेंदु-युग के अध्ययन-क्षेत्र में उन्होंने हिन्दी भाषा की विकास परम्परा की समझ विकसित की है। भगवान सिंह कहते हैं कि- 'निराला' साहित्य के अनन्य साधक डॉ. रामविलास शर्मा के निधन ने निराला की काव्य-पंक्ति- 'रवि हुआ अस्त' को मानो मूर्त कर दिया। वस्तुत: डॉ. शर्मा के रूप में हिन्दी साहित्य का न सही, 'हिन्दी जाति' का तो सूर्य अस्त हो ही गया, यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं।[1] श्री सिंह ने डॉ.रामविलास शर्मा के महत्व को स्थापित करने के लिए टॉल्सटॉय के सम्बन्ध में किये गये राजेन्द्र यादव के कथन को उद्धृत किया हैकृ 'डॉ. शर्मा को स्मरण करते हुए याद आता है महान रूसी कहानीकार चेखव का महान रूसी कथाकार टॉल्सटॉय के सम्बन्ध में व्यक्त उद्गार 'टॉल्सटॉय के हृदय-परिवर्तन एवं करूणा-प्रेम वाले सिद्धान्त से असहमत होने के बावजूद चेखव ने मेनशिकोव को लिखे पत्र में स्वीकार किया था कि टॉल्सटॉय का यही सिद्धान्त कि सत्याग्रह करो, पाप का प्रतिकार मत करो, या उसके प्रतिकार के लिए स्वयं कष्ट उठाओ, अपने पर जब्र करो 'संयम से रहो- शाखालिन की यात्रा ने मेरी आँखें खोल दी और मुझे ऐसा लगा कि यह सब कितना झूठ है। इसका कदापि यह मतलब नहीं कि मैं टॉल्सटॉय से घृणा करता हूँ। टॉल्सटॉय मेरे पूज्य हैं। यों मैं नास्तिक हूँ लेकिन टॉल्सटॉय में मुझे आस्था है। सबसे बड़ी बात यह है कि साहित्य में जब तक टॉल्सटॉय हैं- तब तक लिखने में, लेखक कहलाने में गौरव है, अच्छा लगता है। वह आदमी चट्टान की तरह दृढ़ है-'जब तक जीवित है, साहित्य में कोई भी गन्दगी, कुरुचि और द्वेष-भावना पनप नहीं सकती। उसके बिना तो हम लोग बिना गड़रिये के भेड़ हो जायेंगे, हर चीज अव्यवस्थित हो जायेगी।' (औरों के बहाने कृ राजेन्द्र यादव, से उद्धृत)[2] डॉ. सिंह ने विश्वविख्यात टॉल्सटॉय से डॉ शर्मा की तुलना करते हुए कहा है- 'अपने कुछेक विचारों के कारण अरुचिकर लगने के बावजूद टॉल्सटॉय चेखव जैसे लेखकों के लिए प्रेरणा-पुंज थे, गौरव-स्तम्भ थे, ठीक वैसे ही डॉ.रामविलास शर्मा भी अपने कुछेक विचारों से कुछेक को दुखी करने के बावजूद हमारी पीढ़ी के हिन्दी प्रेमियों के लिए गौरव स्तम्भ थे, प्रेरणा-पुंज थे और रहेंगे।'[3]

डॉ. रामविलास शर्मा सच्चे अर्थ में हिन्दी-भाषा एवं साहित्य के साधक थे। हिन्दी की सेवा-साधना उन्होंने अर्थ-यश की लिप्सा से नहीं, अपितु एक निस्वार्थ, समर्पित, निष्ठावान भक्त एवं संघर्षशील योद्धा के रूप में की। वस्तुत: तीन खण्डों में 'निराला की साहित्य-साधना' नाम से लिखी निराला की जीवनी प्रकारान्तर से डॉ. शर्मा की अपनी साहित्य-साधना का भी प्रमाण है। क्योंकि 'घायल की गति घायल जानेय की तरह एक सच्चा साधक ही दूसरे साधक की साधना के मर्म का अनुभव कर सकता है। यह ठीक है कि उन्हें निराला की तरह विपन्न पारिवारिक एवं आर्थिक परिस्थितियों को झेलना नहीं पड़ा, लेकिन हिन्दी भाषा एवं साहित्य को उन्नत-सम्पन्न करने में उनकी निष्ठा एवं साधना भारतेंदु से लेकर अब तक के किसी हिन्दी लेखक से कम नहीं रही है। डॉ.शर्मा की पुस्तकों की संख्या बहुत अधिक है। परिमाण की दृष्टि से उनकी तुलना केवल राहुल सांकृत्यायन से की जा सकती है, लेकिन राजेन्द्र यादव कहते हैं - 'राहुल में हड़बड़ी है जबकि रामविलास शर्मा में एक ठहराव और गहराई है।'[4] राजेन्द्र यादव के कथन में सच्चाई है, 'डॉ. शर्मा का चाहे कोई निबंध हो या पुस्तक, वह गंभीर विवेचन से भरपूर है। अपने मत का प्रतिपादन करते हों या प्रतिपक्षी का प्रत्याख्यान, वे तथ्यों एवं तर्कों के अत्यन्त विस्तार में जाकर एक-एक पक्ष को उद्घाटित करते हैं।'

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कल के लिए : अंक -2,अप्रैल -जून 2002-सं. डॉ. जयनारायण, पृ. 67
2. वही, पृ. 67
3. वही, पृ. 67
4. हंस : जुलाई 2000 - सं. राजेन्द्र यादव, पृ. 9

****

An Overview of Nutrition, Health Services and Major Government Schemes in Banda, Uttar Pradesh

Dr. Manorama Yadav*

Introduction - Bundelkhand is a geographical and cultural region that spans across two states in India: Uttar Pradesh (UP) and Madhya Pradesh. In Uttar Pradesh, it comprises seven districts: Jhansi, Jalaun, Lalitpur, Hamirpur, Mahoba, Banda, and Chitrakoot.

The health status of this region is historically shaped by its unique challenges, including semi-arid climate, chronic water scarcity, and socio-economic hurdles. However, significant infrastructure developments have been made in recent years.

Banda is a city and a municipal board in Banda district in the state of Uttar Pradesh, India. Banda lies south of the Yamuna river in the Bundelkhand region. It is the administrative headquarters of Banda District. The town is well connected to major cities with railways and state highways. The town is near the right bank of the river Ken, 95 m. S. W. of Allahabad.

BANDAis the easternmost district of Bundelkhand. The division of the district into two has been done by splitting Banda district, tahsil and block-wise. Karwi and Mau Tahsils lying in the eastern and South-eastern direction comprising the Manikpur, Mau, Pahadi, Chitrakut and Ramnagar blocks from the present Chitrakut district.

There are four Tahsils namely Banda, Naraini, Baberu and Atarra comprising eight blocks of Badokhar-khurd, Jaspura, Tindwari, Naraini, Mahua, Baberu, Bisanda and Kamasinfrom the present district of Banda.

There are seventeen thanas namely Kotwali City, Kotwali Dehat, Mataundh, Tindwari, Pailani, Chilla, Naraini, Atarra, Girwa, Kalinjar, Badousa, Bisenda, Baberu, Kamasin, Fhateganj, Jaspura and Marka.

District Highlights –

1. 2011 Census District Banda ranks 53rd in terms of sspopulation in the state.
2. The percentage share of urban population in the district is 15.3 percent as Against 22.3 percent ofthepopulation in urban areas of the state.
3. Banda district has population density of 408 persons per sq. km., which isless than the state average 829 persons per sq. km.
4. Banda district ranks 67th in terms of sex ratio (863) which is lower than the state average (912) females for thousand males.
5. Banda district ranks 46th in literacy with 66.7 percent which is lower than the state average 67.7 percent.
6. There are only 37 uninhabited villages out of total 694 villages in the district.
7. Decadal growth rate of the district 19.8 is lower to the state average of 20.2 percent.
8. Banda tahsil has the highest number of inhabited villages 198 while Atarra tahsil has the lowest number (102) of inhabited villages.
9. The district has 8 towns. Neither any statutory town has been added, merged nor declassified after 2001 census.
10. There are 319,963 households in the district accounting for 1.0 percent of the total households in the state. The average size of households in the district is 5.6 persons.

Health status of Bundelkhand Banda UP: According to NSS (50th Round) 1993-94 data, UP Bundelkhand was the poorest region of the state, with close to 70% of the population living below the poverty line. However, by NSS (55th Round) 1999-2000 data, the figure dropped drastically to around 27%. Conclusions derived from the two surveys, including one that suggests incidence of poverty in UP overall fell from 41% to 31% in this period, are not taken seriously. The 'corrected' rate of incidence of poverty in rural and urban UP Bundelkhand, quoted in the 2003 Human Development Report- Uttar Pradesh, is around 38%.

Studying the survival practices of those who had stayed behind, the team found that some households mainly survived selling by minor forest produce and wood collected from the depleted forests; they earned on Rs.15-Rs 40 per day. Households with landholdings had generally leased them out to large farmers; in return, they earned up to Rs. 2,000 per year or an equivalent amount of grain. When asked what they ate, the general response of the Sahariyas was roti with salt and/ or chillis. At best, some families had roti and gur on some days.

The resultant poor nutritional status was reflected in haemoglobin levels ascertained of a small sample of 10 children and 3 adults. All the children and adults had haemoglobin much below normal levels.

Out ofthe 110 Sahariya households in village Dhamna,

*Assistant Professor (Home Science) Government Girls P.G. College, Banda (U.P.) INDIA

, only half had BPL or Antyodaya cards, which made them eligible to some quantity of subsidised or free foodgrains. BPL/Antyodaya card holders were receiving their quota of grain but even in the drought conditions, they were being overcharged by the public distribution system (PDS) license holder ('kotedar') to the extent of 30%.

The Government of India has a major programme, the National Rural Employment Guarantee Scheme (NREGS), to help rural households get minimum wages for 100 days a year. NREGS is particularly required during times of severe distress like drought, but in Dhamna, the team found, no Sahariya had got work under NREGS for more than eight days in 2007-2008. Worst affected were single women. None of the single women in Dhamna had BPL or Antyodaya cards. They had received NREGS job cards but none had got work though they had demanded it orally. It was not that no NREGS works being carried; the team visited a work site near the village where 180 people were employed. The workers included some children.

Coming to the overall food security situation in the surveyed villages of the three districts, the team observed that going by two major indicators, the body mass index (BMI) and the haemoglobin count, the surveyed population was 'severely malnourished'. Out of a total of 39 children studied, over 70% were found to be suffering from Grade II or Grade III low haemoglobin count, or anaemia. None of the children had a normal count. Among 23 adults studied, 96% had Grade II or Grade I anaemia. BMI studies of the same samples showed that only 15% of the children had normal or 'normal low' weight. Among adults, 60% had below normal BMI.

The majority of the surveyed population was thus in a highly vulnerable position.. 'Shocks' like lack of food in the household for a prolonged period, illness, including minor ailments such as unattended diarrhoea and neurobiological disorders could drive people 'to the verge of death'. This is what indeed happened in Bundelkhand in 2003-2007, according to several media reports on 'bhukmari' or deaths or suicides due to hunger.

A public interest writ petition filed by ABSSS in the Allahabad High Court in August 2007, drew attention to several such reported deaths. The petition also provided some details of four deaths reported in Nahari village of Naraini block of Banda district, which were investigated by an independent team of lawyers led by well-known Supreme Court lawyer Colin Gonsalves.

One of the victims Bhagwat Prasad Prajapati, 45, had owned a small plot of land, from which soil was excavated for making pots. The plot was grabbed by some 'dabangs' (village toughies). No action was taken by authorities. Bhagwat was left with no source of livelihood and did not even have a ration card to get PDS rations at subsidised rates. On July 29, 2006, he died leaving behind an aged father, wife and four children.

All the other victims were also marginal land holders. All had taken loans they could not repay and had been reduced to a state of absolute destitution. In all cases, neighbors' testified that the families had little or nothing to eat, because of crop failure and lack of income earning opportunities following the drought.

Officially, there was no case of 'hunger death' in Bundelkhand during the 2003-07 drought , and strictly speaking, this could have been a correct surmise. 'Hunger death' is extremely difficult to prove. The way it is understood in India, traces of not even a morsel of any kind of food should be found in the victim's digestive system during a postmortem to establish that cause of death was hunger. This condition is rarely met. As a result, governments deny any incidence of 'hunger death', and this was what happened in UP.

The denial ignores the commonsensical point that prolonged starvation or poor nourishment aggravates illnesses like TB, and leads to death. Instead of searching for morsels of food in dead bodies, a sensitive government would look at the larger issue of food insecurity, which leads to death.

Such sensitivity was displayed at least at the level of decision-making, in UP in 2007-2008. As an emergency relief measure, the state government ordered pradhans of villages in each of the region's district to store a quintal of rice and wheat, and use it to distribute it free among hungry people. Every hungry person was entitled to at least 15 kg of wheat free of cost, every month. The mid-day meal scheme of providing a wholesome cooked meal to schoolgoing children was extended to destitutes. They were also eligible for cooked evening meals during the winter and dry rations for the evening meal in other seasons, till such time as the drought conditions continued.

Urban poor face other severe health-related limitations. While anganwadis are far and few in rural areas of UP, they are almost non-existent in urban areas. According to an analysis of National Family Health Survey (1998-99) data, across UP less than 30% of children of age 12-23 months among the urban poor had received complete immunization.

The analysis also showed that around 30% of children of the urban poor reported diarrhea in the two weeks preceding the survey and around 20% of children suffered from acute respiratory condition, primarily pneumonia, due to pollution and highly congested living conditions Congested living conditions also aggravate TB among adults, and its high prevalence in urban slum areas of Bundelkhand has not received any special attention.

Public Health Facilities in Bundelkhand: By Government of India norms, one primary health centre (PHC) should serve a rural population 30,000 people. Roughly, that means there should be one PHC per 30 villages.

Census 2001 data showed that in both UP and MP and all Bundelkhand districts, the coverage was much poorer, with roughly one PHC per 50 villages in both UP Bundelkhand and MP Bundelkhand .

The poor coverage was also seen when one uses rural

population of a district as the criterion. Using Census 2001 population figures , one can see that one PHC served a rural population of more than 50,000 in all districts of the region except Chitrakoot and Chhatarpur. In Banda, one PHC served over 90,000 people - thrice the norm.

At the level of primary sub health centres (PSHCs), the situation was terrible in UP Bundelkhand. While the region should have had over 1000 such centres by norms of the National Rural Health Mission for the region (10 PSHCs per PHC) Another problem that has emerged due to high seasonal and annual migration is HIV-AIDS. High prevalence of HIV/AIDS cases has been detected in Lalitpur, Banda, Chitrakoot by the National Aids Control Organisation (NACO) and the Uttar Pradesh State Aids Control Society (Indian Express, May 18, 2008).BPL Survey (2002) data show that seasonal migration in Banda whereas 47%, but among in SC families percent of migration was 51%. Till December 2008, there was not a single anti retroviral treatment (ART) facility in the region.

Development Schemes of Special Relevance to Banda: Among the plethora of government poverty alleviation or social welfare schemes, a few are of particular relevance to backward regions. Also of relevance to Bundelkhand is the UP Bundelkhand Vikas Nidhi. Apart from the schemes discussed below briefly, districts get funds from the central and state finance commissions appointed every five years. While the central commission recommends distribution of revenue between the Union government and the states, including grants for urban local bodies and panchayati raj institutions, the state commission recommends devolution of state funds to panchayati raj institutions.

Integrated Child Integrated Child Development Services (ICDS) : ICDS seeks to provide supplementary nutrition, health care and pre-school education to children below the age of six. The programme also covers adolescent girls, pregnant women and nursing mothers. ICDS services are provided through centres known as anganwadis. Under a Supreme Court order of December 13, 2006, in the Right to Food case, in settlements that have at least 40 children under the age of six and no anganwadi, anganwadis should be set up within three months of rural communities and slum dwellers making such a demand.

Mid-day Meal Scheme : The Mid-day Meal scheme is the result of a November 28, 2001 order of the Supreme Court in the Right to Food case, directing state governments to provide cooked mid-day meals in all government and government-assisted primary schools. The meals should provide at least 300 calories and 8-12 gm of protein to each child, each day of school for a minimum of 200 days in a year. In drought-affected areas, mid-day meal should be supplied even during summer vacations.

Swarnajayanti Gram Swarozgar Yojana (SGSY): SGSY is meant to promote entrepreneurship among rural poor by organising them in self help groups (SHGs), and providing income-generating assets through a mix of bank credit and government subsidy, so that the poor rise above the poverty line. Loans and subsidies are given both to groups and individual members ('swarozgaris') of SHGs. Training, establishment of marketing linkages and infrastructure are also key elements of the scheme. The central government provides 70% of the funds for implementation of the scheme in a state; the state government is to provide the rest. Lead banks are responsible for identification of economic activities and disbursement of credit. At least 40% of swarozgaris are to be women and at least 50% of the beneficiary groups should be of SC/ST persons.

Indira Awas Yojana (IAY): IAY provides a grant of up to Rs 20,000 to scheduled caste and below poverty line (BPL) households for construction of houses, or improving kaccha dwelling units. Households have to be selected by gram sabhas.

Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) : SSA aims to provide useful and relevant elementary education for all children in the 6-14 years age-group, bridging social, regional and gender gaps, and with the participation of communities in management of schools. SSA also supports pre-school learning in ICDS and other centres. SSA provides funds for making the schooling system useful and absorbing; it also supplements resources for building elementary education infrastructure.

Total Sanitation Campaign (TSC) : TSC is a demand-driven programme that gives a cash incentives for construction of toilets by poor rural households and baby-friendly toilets in anganwadis. It also gives a 60% grant for construction of community toilets and toilets in schools; the rest of the money has to come from the state government and village communities. TSC provides an 80% grant to NGOs, panchayats and other agencies for setting up 'rural sanitary marts' or production centres (PCs) for manufacture and sale of low-cost materials required for construction of latrines, soakage and compost pits, vermi-composting, washing platforms, and other rural sanitation and hygiene hardware.

Accelerated Rural Water Supply Programme (ARWSP): ARWSP supplements efforts of state governments to provide safe drinking water in all rural habitations. Priority should be given to habitations with 'no safe source' of water, and inhabited largely by SC/ST groups. Panchayati Raj institutions have to be involved in selecting locations of supply points, spot sources, operation and maintenance and fixing of water tariff. The programme has various components, with varying percentage of grants from the central government.

Pradhan Mantri Gram Sadak Yojana (PMGSY): PMGSY provides 100% funds for constructing all-weather roads to unconnected habitations in rural areas. The scheme also funds construction of necessary culverts and drainage structures..

Rashtriya Krishi Vikas Yojana (RKVY) : RKVY, launched in 2007, provides 'additional central assistance' to Central government and state schemes related to agriculture. Among the projects funded by RKVY is region-specific

agriculture research and preparation of district agriculture plans, taking into account local needs and conditions.

Conclusion: In the above study it is concluded that malnutrition is still a major health problem in Bundelkhand region . Improving nutritional status of Bundelkhand requires a more direct, more focused, and more integrated strategy. Severe Chronic Malnutrition is generally an outcome of latent poverty, chronic food insecurity, poor feeding practices and protracted morbidities, but rarely a direct cause of mortality. In short, stunted children are hungry but not sick . Most common causes of malnutrition include faulty infant feeding practices, impaired utilization of nutrients due to infections and parasites, inadequate food and health security, poor environmental conditions .

Chronic malnutrition requires a far wider spectrum of programmatic interventions beyond clinical management. Multi-sectorial actions are needed to combat multi-dimensional deprivations. Simultaneously, there is an urgent need for promoting practices to improve the quality of local diets, improving child-feeding practices, reducing exposure to illnesses, and pediatric care services.

References:-

1. BPL SURVEY (2002)
2. WWW. Bundelkhand.Org
3. Poverty among SC and ST rural households in Bundelkhand
4. Public Health Facilities in Bundelkhand
5. Malnutrition in India From Wikipedia, the free encyclopedia (info) Food Insecurity in Bundelkhand , (World Bank, 2003)
6. [Urban Health Resource Centre, pp 39-43].
7. Overcoming Poverty and Hunger in Bundelkhand Uploaded by willyindia

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) Jan. To March 2018, Vol. I, Issue XXI

विखंडनवाद और सूफी प्रेमाख्यान: एक पुनर्पाठ (मध्यकालीन प्रेमाख्यानक काव्य का समीक्षात्मक अध्ययन)

डॉ. रमेश यादव*

शोध सारांश – यह शोध लेख मध्यकाल (पुराने समय) के सूफी प्रेम-काव्यों (जैसे पद्मावत) को एक नए नजरिए से समझने का प्रयास है। इस नजरिए को प्रसिद्ध विचारक जैक्स देरिदा का 'विखंडनवाद' कहा जाता है। आम तौर पर लोग यह मानते रहे हैं कि ये प्रेम-कहानियाँ केवल किसी एक धर्म का प्रचार करने के लिए लिखी गई थीं या केवल भगवान की भक्ति के साधारण नाटक थीं। लेकिन यह लेख बताता है कि यह सोच बहुत छोटी और अधूरी है। इस लेख में यह दिखाया गया है कि पुराने सूफी कवियों ने अपने समय में फैली ऊँच-नीच, कट्टरता और भेदभाव की सोच को बड़ी समझदारी से चुनौती दी थी। जैसे देरिदा कहते हैं कि समाज अक्सर चीजों को 'अच्छा बनाम बुरा' या 'हम बनाम वे' में बाँट देता है, वैसे ही इन सूफी काव्यों ने 'हिंदू-मुसलमान', 'सांसारिक-आध्यात्मिक' और 'स्त्री-पुरुष' के बीच की दूरियों को मिटाया। उन्होंने एक ऐसी संस्कृति बनाई जहाँ सभी मिलकर रह सकें।

इसके अलावा, इन कहानियों का कोई एक सीधा-साधा मतलब नहीं है, बल्कि इन्हें जितनी बार पढ़ा जाए, नए अर्थ सामने आते हैं। संक्षेप में कहें तो, सूफी कवियों ने केवल धार्मिक कविताएँ नहीं लिखीं, बल्कि समाज को जोड़ने और पुरानी संकीर्ण सोच को तोड़ने का बहुत बड़ा काम किया।

शब्द कुंजी – विखंडनवाद, जैक्स देरिदा, उत्तर-संरचनावाद, सूफी प्रेमाख्यानक काव्य, बाइनरी विरोधाभास, अंतर/विस्थापन, महावृत्तांत, सामाजिक एवं दार्शनिक केंद्रापसारकता, बहुलतावाद, सांस्कृतिक संकरत्व, लोक-चेतना, पाठ्य बहुलता।

प्रस्तावना – साहित्य को समझने के तरीके में बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में एक बड़ा बदलाव आया। विचारक जैक्स देरिदा ने 'विखंडनवाद' का सिद्धांत दिया। उनका मानना था कि समाज में किसी एक विचार या बात को हमेशा 'परम सत्य' मान लिया जाता है और बाकी विचारों को दबा दिया जाता है। देरिदा इस बनी-बनाई सोच को गलत मानते हैं।

देरिदा का कहना है कि किसी भी किताब, कहानी या कविता का केवल एक ही अंतिम मतलब नहीं हो सकता। समय और पढ़ने वाले के हिसाब से उसका अर्थ बदलता रहता है। उन्होंने इसे 'अर्थ का विस्थापन' (Differance) कहा- यानी किसी बात का मतलब कभी एक जगह नहीं ठहरता, वह आगे बढ़ता रहता है। उदाहरण के लिए, 'प्रेम' शब्द का मतलब हर इंसान और हर दौर के लिए अलग हो सकता है।

जब हम इस सोच के साथ भारत की प्रसिद्ध सूफी प्रेम-कहानियों (जैसे जायसी का पद्मावत, मंझन की मधुमालती) को देखते हैं, तो बहुत दिलचस्प बातें समझ आती हैं। पहले के इतिहासकार कहते थे कि ये रचनाएँ 'केवल इस्लाम का प्रचार' थीं या हिंदू-मुस्लिम का सीधा 'मिश्रण' थीं। लेकिन देरिदा की दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि इन रचनाओं ने अपने दौर की कड़वाहट और पुरानी रूढ़ियों को तोड़कर एक नया और खुला रास्ता दिखाया था।

बाइनरी विरोधाभासों का विखंडन: हिंदू-मुसलमान और लौकिक-अलौकिक द्वैत का अंत– जैक्स देरिदा कहते हैं कि इंसान अक्सर दुनिया को दो विरोधी हिस्सों में बाँटकर देखता है-जैसे 'अच्छा/बुरा', 'अपना/पराया', 'सच्चा/झूठा' या 'पुरुष/स्त्री'। इसमें हमेशा एक पक्ष को बड़ा और दूसरे को छोटा माना जाता है। विखंडनवाद का काम इस भेदभाव वाली सोच को मिटाना और दोनों के बीच की दीवार को गिराना है।

मध्यकालीन भारत में भी 'हिंदू बनाम मुसलमान' और 'सांसारिक जीवन बनाम ईश्वर भक्ति' को दो अलग और विरोधी ध्रुव माना जाता था। लेकिन सूफी काव्यों ने इन दो दीवारों को पूरी तरह ढहा दिया।

क) हिंदू-मुसलमान द्वैत का निरसन– अगर हम आँकड़े देखें, तो इस सूफी काव्य-परंपरा के 54 कवियों में से 37 कवि हिंदू थे। यह तथ्य ही इस पुरानी धारणा को गलत साबित कर देता है कि यह केवल एक धर्म विशेष का साहित्य था। मुस्लिम सूफी कवियों ने भी अपनी रचनाओं में भारतीय त्योहारों, लोक-कहानियों और प्रकृति का बहुत सुंदर वर्णन किया। जब जायसी लिखते हैं:

'ओ मैं जानि कवित अस कीन्हा। मकु यह रहे जगत मह चीन्हा।'

और शेख रहीम जब कहते हैं:

'सबका साथ रहीम के नांव रहे उजियारा।।'

तो वे किसी एक धर्म के दायरे में सिमट कर नहीं बोल रहे होते, बल्कि वे एक ऐसी साझी संस्कृति की बात कर रहे होते हैं जहाँ 'अपना' और 'पराया' का भेद खत्म हो जाता है। यहाँ 'हिंदू बनाम मुसलमान' का द्वंद्व पूरी तरह मिट जाता है।

ख) लौकिक और अलौकिक का विलीनीकरण– पुराने पंडितों और गुरुओं का मानना था कि ईश्वर को पाने के लिए गृहस्थ जीवन और संसार के प्रेम को छोड़ना पड़ेगा। लेकिन सूफी संतों ने कहा कि आम इंसान से सच्चा प्रेम करके ही ईश्वर को पाया जा सकता है। सांसारिक प्रेम ही ईश्वर तक पहुँचने की पहली सीढ़ी है। जायसी की यह पंक्ति इसी बात को आसान तरीके से समझाती है:

'मानुष प्रेम भयउ बैकुंठी। नाहिं त काह छार भरि मूठी।'

(अर्थात् मनुष्य का सच्चा प्रेम ही उसे स्वर्ग जैसी दिव्य अवस्था तक ले जाता है, वरना इंसान धूल की एक मुट्ठी से बढ़कर कुछ नहीं है)। इस प्रकार, सूफियों ने दिखाया कि दुनिया का प्रेम और ईश्वर का प्रेम अलग-अलग नहीं, बल्कि एक ही हैं।

* असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कैराना, शामली (उ.प्र.) भारत

महावृत्तांतों का विखंडन और लोक-चेतना- 'महावृत्तांत' उन बड़े नियमों, धार्मिक आदेशों या सरकारी फरमानों को कहते हैं जो समाज पर जबरन थोपे जाते हैं और जिन्हें बदलना मना होता है। मध्यकाल में संस्कृत के कठिन ग्रन्थ और राजाओं का दरबार ऐसे ही नियम तय करते थे।

1. सूफी साहित्य की सबसे बड़ी खासियत यह थी कि यह किसी राजा के दरबार में या इनाम पाने के लिए नहीं लिखा गया था। इन्होंने आम जनता की भाषा और सोच को अपनाकर बड़ी-बड़ी सत्ताओं को चुनौती दी।
2. आम बोली (अवधी) का प्रयोग: उस समय राजा और विद्वान संस्कृत या फारसी में लिखते थे, जो आम लोगों की समझ से बाहर थी। सूफियों ने जनता की बोली 'अवधी' में लिखकर यह साबित किया कि ज्ञान किसी खास भाषा का गुलाम नहीं है।
3. लोक-कहानियों को चुना: उन्होंने कठिन धार्मिक ग्रंथों के बजाय गाँव-देहात में सुनी जाने वाली लोक-कहानियों को अपनी कविताओं का आधार बनाया।
4. आम जनता का सम्मान: इन रचनाओं में किसान, कारीगर और साधारण लोग केंद्र में आए। इससे महल और दरबार की जगह आम जनता की संस्कृति मुख्य बन गई।

कथानक-रूढ़ियों का विखंडन एवं पाठ्य बहुलता- विखंडनवाद यह मानता है कि एक अच्छा पाठ वह है जो स्वयं के भीतर अंतर्विरोधों को छिपाए रखता है और पाठक को एकरेखीय अर्थ तक सीमित नहीं होने देता। इसे श्पाठ्य बहुलताश कहा जाता है। सूफी प्रेमाख्यानों ने कथा संगठन के स्तर पर भी विखंडन की इस प्रक्रिया को अपनाया है।

क) ऐतिहासिकता के बाड़े का टूटना- सूफी कवियों ने राजा-महाराजाओं के इतिहास (जैसे खिलजी और राजा रत्नसेन की कहानी) में अपनी तरफ से लोक-कल्पनाएँ और कहानियाँ मिला दीं। इससे इतिहास की शुष्क और बेजान सच्चाई एक सुंदर, रसीली और काल्पनिक लोक-कथा बन गई।

ख) पुरुष-सत्तात्मक साहित्यिक केंद्रों का विखंडन- पुराने समय में हमेशा पुरुषों (राजाओं या योद्धाओं) को ही मुख्य माना जाता था। लेकिन सूफी काव्यों की एक बहुत बड़ी बात यह है कि ज्यादातर किताबों के नाम नायिकाओं (स्त्रियों) के नाम पर रखे गएकृ जैसे पद्मावत (पद्मिनी), मृगावती, मधुमालती आदि। इससे पुरुष-प्रधान सोच को धक्का लगा और स्त्री को कहानी में मुख्य स्थान मिला।

बहु-स्तरीय अर्थ-संरचना और प्रतीकात्मकता- विखंडनवाद मानता है कि किसी अच्छी रचना का केवल एक अर्थ नहीं होता, उसमें अर्थ की कई परतें होती हैं। सूफी साहित्य इसका बेहतरीन उदाहरण है:

1. मत-प्रकाशक रचनाएं: (जैसे जायसी की अखरावट), जो सीधे सिद्धांतों की बात करती हैं।
2. शुद्ध प्रेमाख्यान-साहित्य: (जैसे पद्मावत, चित्रावली आदि), जहाँ कहानी ही मुख्य है।
3. विविध स्फुट काव्य: जो छोटे पदों में बिखरा हुआ है।

उदाहरण के लिए, पद्मावत को एक आम राजा-रानी की प्रेम-कहानी की तरह भी पढ़ा जा सकता है, और गहराई में जाएँ तो यह आत्मा और परमात्मा के मिलन की कहानी भी लगती है (जहाँ चित्तौड़ शरीर है, राजा मन है, और पद्मावती ईश्वर की प्रतीक हैं)।

पढ़ने वाला इंसान अपनी समझ के हिसाब से इसका अलग-अलग आनंद ले सकता है। किसी एक अर्थ को जबरन थोपा नहीं जा सकता, जो कि देरिदा के सिद्धांत के पूरी तरह अनुकूल है।

देरिदाई दृष्टि से सूफी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ- यदि हम आसान भाषा में समझें, तो सूफी काव्य में चार ऐसी बातें थीं जो पुरानी और कड़वी परंपराओं को तोड़ती थीं:

क) सामाजिक एवं धार्मिक केंद्रापसारकता- उस दौर में जात-पात और ऊँच-नीच बहुत ज्यादा थी। सूफी और संत कवियों ने (जो खुद जुलाहे, किसान या साधारण वर्ग से आते थे) इस ऊँच-नीच के विचार को सिरे से नकार दिया और 'इंसानियत' तथा 'आपसी भाईचारे' को सबसे ऊपर रखा।

ख) काम और प्रेम के द्वैत का निरसन- कट्टरपंथी लोग शारीरिक आकर्षण या सुंदरता के प्रेम को बुरा मानते थे। सूफियों ने कहा कि सुंदरता की तारीफ करना या उससे आकर्षित होना गलत नहीं है, वही आकर्षण आगे चलकर ईश्वर के प्रति गहरे प्रेम में बदल जाता है।

ग) शैतान और माया की द्वंद्वात्मक भूमिका- साधारण धर्मग्रंथों में शैतान या माया को केवल 'बुरा' माना जाता है। लेकिन पद्मावत जैसी रचनाओं में जो 'राघव चेतन' (बुराई या माया का प्रतीक) है, वह राजा को कठिनाइयों में डालता है। पर ध्यान से सोचें तो अगर वह बुराई न होती, तो राजा के सच्चे प्रेम की परीक्षा ही न हो पाती! यानी बुराई ने ही प्रेम को और महान और मजबूत बनाने में मदद की। यहाँ 'अच्छा' और 'बुरा' एक-दूसरे के पूरक बन जाते हैं।

घ) भारतीय एवं अभारतीय तत्वों का सामंजस्य और काव्य-रूपों का विखंडन- सूफियों ने फारसी लिखने के तरीके और भारतीय किस्सागोई के तरीके को आपस में मिला दिया। उन्होंने योग, सूफी विचारों और भारतीय दर्शन को ऐसा मिलाया कि कोई भी एक धर्म या सम्प्रदाय इस साहित्य पर अपना अकेला दावा नहीं ठोक सकता।

निष्कर्ष- निष्कर्ष के तौर पर, देरिदा के विखंडनवाद के चश्मे से देखने पर पता चलता है कि सूफी प्रेमाख्यान केवल पुरानी कविताएँ नहीं हैं, बल्कि वे अपने समय का एक बहुत बड़ा सामाजिक बदलाव लाने वाला आंदोलन थीं। इन कविताओं ने जात-पात, धर्म के झगड़ों, कठिन भाषाओं के अहंकार और पुरुषों के एकाधिकार को तोड़ा। उन्होंने एक ऐसी संस्कृति की नींव रखी जहाँ सब मिलकर रह सकें। इसलिए आज के दौर में भी इन रचनाओं को आसान और नए तरीके से समझना बहुत जरूरी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देरिदा, जैक्स (1976). ऑफ ग्रैमटोलॉजी, ट्रांस. गायत्री चक्रवर्ती स्पिवक, बाल्टीमोर: जॉन्स हॉपकिंस यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. जायसी, मलिक मुहम्मद. पद्मावत, संपादन: आचार्य रामचंद्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
3. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र (2005). त्रिवेणी (जायसी, सूर, तुलसी का आलोचनात्मक अध्ययन), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. द्विवेदी, हजारीप्रसाद. हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. उस्मान. चित्रावली, संपादन: जगन्मोहन वर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
6. कुतुबन. मृगावती, संपादन: डॉ. शिवगोपाल मिश्र, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज।
7. मंझन. मधुमालती, संपादन: माताप्रसाद गुप्त, मित्रा प्रकाशन, इलाहाबाद।

The Impact of Digitalization on Business Relationships: Transforming Communication, Trust, Collaboration, and Customer Engagement

Dr. Bhavna Sharma*

Abstract: Digitalization has become a major influence on how businesses establish, maintain, and strengthen relationships with customers, suppliers, employees, and other stakeholders. Digital tools—including customer relationship management (CRM) systems, cloud services, social media, data analytics, artificial intelligence (AI), and digital communication platforms—have changed the speed, reach, and character of business interaction. This conceptual paper examines digitalization's implications for communication, trust, collaboration, customer engagement, and long-term relationship quality. It synthesizes selected research on business-to-business relationships and digital relationship management and develops an analytical framework linking digital capabilities to relationship outcomes through information sharing, responsiveness, personalization, and perceived transparency. The paper also considers risks, including privacy concerns, cybersecurity, technology dependence, digital exclusion, information overload, and the weakening of interpersonal contact. Existing research suggests that digitalization can support cooperation and commitment, but its effects are not automatically positive: technology may also create uncertainty and undermine trust when implementation is opaque or poorly governed. The paper argues that relationship value depends on complementary organizational capabilities, responsible data practices, inclusive access, and human-centered service. It concludes with managerial recommendations and propositions for future empirical testing. As a conceptual study, it does not claim original survey findings or causal proof.

Keywords: Digitalization; business relationships; trust; collaboration; customer relationship management; digital transformation; engagement.

Introduction - Business relationships are strategic assets. They enable organizations to exchange information and resources, coordinate activities, reduce uncertainty, solve problems, and create value over time. Traditionally, such relationships were sustained through meetings, telephone conversations, personal networks, written correspondence, and repeated face-to-face contact. Digitalization has supplemented and, in some contexts, reconfigured these practices.

Digitalization refers here to the use and integration of digital technologies in organizational processes and interactions. It is broader than simply converting paper records into electronic files. Digital relationship practices include shared customer databases, online service channels, collaborative platforms, e-procurement, analytics-enabled decisions, and AI-supported customer management. These tools can improve availability and responsiveness, yet they may also introduce concerns about surveillance, data handling, automated errors, and impersonal communication.

Research available before 13 April 2018 provides foundations for examining how digital technologies affect business relationships. Relationship marketing theory emphasizes trust and commitment as central conditions for durable exchange (Morgan & Hunt, 1994). Digital business strategy research describes how digital technologies can become integral to organizational strategy and value creation (Bharadwaj et al., 2013). These perspectives make it important to examine not only whether firms digitize, but how digital capabilities are integrated into relationship practices.

Aim and Research Objectives: The aim of this paper is to analyze how digitalization influences the quality and sustainability of business relationships.

1. To examine the role of digital technologies in communication, information sharing, and coordination.
2. To assess how digitalization may influence trust, commitment, satisfaction, and customer engagement.
3. To identify organizational and ethical challenges associated with digital business interactions.
4. To propose practical strategies and research propositions for relationship-centered digital transformation.

Scope and Conceptual Definitions: The discussion covers both business-to-customer (B2C) and business-to-business (B2B) relationships. Business relationship quality

*Assistant Professor (Commerce) Wilsonia Degree College, Moradabad (U.P.) INDIA

is treated as a multidimensional concept that may include trust, commitment, satisfaction, cooperation, responsiveness, and perceived fairness. Digitalization is considered an organizational capability rather than a count of software tools. The analysis recognizes that impacts can vary by sector, firm size, relationship duration, customer expectations, and digital access.

Review of Related Literature

Digitalization and relational change: Digital business strategy scholarship highlights the growing integration of digital resources with business strategy and operating models (Bharadwaj et al., 2013). In relationship management, social CRM research suggests that social media technologies can contribute to customer relationship processes when supported by appropriate organizational capabilities (Trainor et al., 2014). Such benefits depend on compatible systems, clear responsibilities, and willingness to share relevant information.

Trust, uncertainty, and commitment: Trust and commitment are widely treated as key mediators of successful relationship marketing. Morgan and Hunt (1994) argue that commitment and trust foster cooperative relationship behaviors and help sustain exchange relationships. Applied to digital interactions, this perspective suggests that technology can facilitate cooperation, but uncertainty about data use, service reliability, or partner conduct may undermine relational confidence.

Digital capabilities and relationship management: Trainor et al. (2014) examined social media technology use in CRM and its relationship to customer relationship performance. Their work underscores that technology value depends on the integration of social media capabilities with customer relationship processes and organizational resources. Such findings should not be generalized across every industry or organization without further testing.

Research gap: The literature indicates meaningful potential and notable risks, but organizations still need practical guidance for balancing automation and relational care. Outcomes may differ between customer-facing transactions and complex interorganizational partnerships. This conceptual paper integrates communication, trust, collaboration, and engagement into one relationship-centered framework and identifies propositions for future investigation.

Research Methodology: This paper uses a conceptual, narrative literature-review approach, with its reference horizon limited to literature published on or before 13 April 2018. It draws on foundational scholarship on relationship marketing, digital business strategy, and social CRM. The material is organized thematically around relational mechanisms and risks. This is not a systematic review: no exhaustive database search, screening protocol, or quantitative synthesis was conducted. No primary survey or interview data were collected. Accordingly, the paper develops an interpretive framework and research propositions rather than reporting original empirical findings.

Conceptual Analysis and Discussion

Communication and responsiveness: Digital channels allow organizations to communicate across time and location, provide status updates, and maintain service records. A unified interaction history can reduce repetition and help staff respond consistently. However, an excess of messages, automated replies, or fragmented channels may create confusion. Organizations should establish channel ownership, response-time expectations, escalation paths, and accessible alternatives for people who cannot use digital tools.

Trust and transparency: Digital trust is supported when businesses explain what information they collect, why it is needed, how long it is retained, and with whom it is shared. Security controls and reliable service are essential, but trust also depends on understandable policies and accountable decisions. Personalization can make interactions more relevant, yet unexpected use of customer data may feel intrusive. Transparency, consent where required, and meaningful correction and complaint mechanisms should therefore accompany data-driven services.

Collaboration and value creation: Shared dashboards, electronic procurement, cloud collaboration, and integrated workflows can improve coordination among suppliers, distributors, and business customers. Better visibility may reduce duplicated effort and help partners jointly resolve issues. Yet platform dependence, incompatible systems, unequal bargaining power, and restricted data portability can create vulnerabilities. Collaboration agreements should clarify data ownership, access rights, service levels, security duties, and procedures for system changes or exit.

Customer engagement and personalization:CRM and analytics can help firms understand preferences and provide timely, relevant support. Digital self-service can offer convenience, while online communities and feedback mechanisms can make customers participants in product and service improvement. Nevertheless, engagement should not be reduced to clicks or message frequency. Relationship quality is better assessed through customer-perceived usefulness, fairness, satisfaction, retention, complaint resolution, and willingness to recommend.

Risks and unintended consequences:

1. Privacy and cybersecurity: breaches or opaque data practices can damage reputation and relationships.
2. Reduced human contact: fully automated service may frustrate customers facing complex or emotional problems.
3. Digital inequality: small firms, older users, rural communities, or people with disabilities may encounter access barriers.
4. Algorithmic bias and error: automated decisions may produce unfair or unexplained outcomes.
5. Technology dependence and cost: outages, vendor lock-in, integration burdens, and frequent upgrades can strain partners.
6. Information overload: excessive notifications and

dashboards can weaken attention and relationship quality.

Proposed Conceptual Framework: The paper proposes that organizational digital capabilities influence relationship outcomes through four principal mechanisms: (1) information quality and transparency, (2) responsiveness and service reliability, (3) collaboration and knowledge sharing, and (4) personalization and perceived value. Trust and relationship satisfaction are proposed as central relational mechanisms connecting these capabilities with commitment, loyalty, and continuity. Governance quality—including privacy protection, cybersecurity, inclusion, employee training, and human escalation—may strengthen or weaken these relationships.

Digital capabilities → Relational mechanisms → Relationship quality → Commitment / continuity

Contextual influences: sector, firm size, digital maturity, relationship duration, channel preference, and regulatory environment. This framework is proposed for future testing; the arrows represent theoretical expectations, not causal findings established by this paper.

Research Propositions:

1. P1: Higher-quality digital communication and information sharing are positively associated with perceived coordination and relationship satisfaction.
2. P2: Perceived transparency and responsible data governance are positively associated with trust in digital business relationships.
3. P3: Digital tools that support joint problem-solving and knowledge sharing are positively associated with cooperation and relationship commitment.
4. P4: Personalization is positively associated with engagement when customers perceive it as useful, fair, and privacy-respecting.
5. P5: Technology uncertainty, cybersecurity concerns, and poor integration weaken the positive association between digital capability and relationship quality.
6. P6: Access to human assistance and inclusive channel design strengthen the association between digital service quality and satisfaction.

Managerial Implications:

1. Start with relationship needs: identify friction points before selecting technology; do not digitize a weak process without redesigning it.
2. Build an integrated but proportionate CRM and communication environment, with accurate records and clear data ownership.
3. Adopt privacy-by-design and security-by-design practices, including access controls, retention rules, staff training, and incident response.
4. Keep human support available for sensitive, unusual, or unresolved issues; disclose when customers are interacting with automation.
5. Agree with business partners on interoperability, service levels, data access, cybersecurity responsibilities, and continuity plans.
6. Measure relational outcomes as well as efficiency: track satisfaction, trust, resolution quality, repeat engagement, retention, and partner feedback.
7. Provide accessible alternatives and training so that digital transformation does not exclude customers, employees, or smaller suppliers.

Conclusion: Digitalization is reshaping business relationships by changing how organizations communicate, coordinate, learn about stakeholders, and deliver value. Digital systems can make relationships more responsive, informed, and collaborative. However, technology adoption alone does not guarantee trust, loyalty, or stronger partnerships. Digital channels may introduce uncertainty, privacy concerns, impersonal experiences, and dependence on platforms. The central argument of this paper is that sustainable digital relationship management requires a balanced combination of technological capability and relational competence. Transparent data practices, dependable systems, employee capability, inclusive design, and human-centered service are therefore strategic necessities. The proposed framework and propositions provide a foundation for empirical research across industries and organizational sizes.

Limitations and Future Research: The paper is conceptual and based on a selective narrative review; it does not establish causal effects or provide new field evidence. Future research could test the proposed framework using surveys of customers and business partners, interviews with managers, or longitudinal case studies. Comparative studies could examine MSMEs and large firms, urban and rural markets, B2B and B2C settings, and the role of AI-enabled interaction. Validated measures of trust, relationship satisfaction, transparency, perceived intrusiveness, and commitment would help clarify which digital practices improve relationship outcomes and for whom.

References:-

1. Bharadwaj, A., El Sawy, O. A., Pavlou, P. A., & Venkatraman, N. (2013). Digital business strategy: Toward a next generation of insights. MIS Quarterly, 37(2), 471–482. https://doi.org/10.25300/MISQ/2013/37:2.3
2. Dwyer, F. R., Schurr, P. H., & Oh, S. (1987). Developing buyer-seller relationships. Journal of Marketing, 51(2), 11–27. https://doi.org/10.1177/002224298705100202
3. Morgan, R. M., & Hunt, S. D. (1994). The commitment-trust theory of relationship marketing. Journal of Marketing, 58(3), 20–38. https://doi.org/10.1177/002224299405800302
4. Trainor, K. J., Andzulis, J. M., Rapp, A., & Agnihotri, R. (2014). Social media technology usage and customer relationship performance: A capabilities-based examination of social CRM. Journal of Business Research, 67(6), 1201–1208. https://doi.org/10.1016/j.jbusres.2013.10.002
5. Chaffey, D., & Ellis-Chadwick, F. (2016). Digital marketing (6th ed.). Pearson.